कश्मीरी और हिन्दी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन

[सन् १३०० ई० — सन् १९२५ ई०]

(कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध)

लेखक

डॉ० जियालाल हण्डू

एम० ए० (संस्कृत तथा हिन्दी) पी-एच० डी०; पी० ई० एस०
स्नातकोत्तर हिन्दी-विभाग, गवर्नमेंट कालेज
होशियारपुर [पंजाब]

भारतीय ग्रन्थ निकेतन

१३३, लाजपतराय मार्केट, दिल्ली-११०००६

हण्डू, जियालाल.

कश्मीरी और हिन्दी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन। (सन् १३०० ई०-सन् १९२५ ई०). प्रथम संस्करण. दिल्ली, भारतीय ग्रन्थ निकेतन, १९७३.

१६, ५०४ पृ. २३ सेमी.

"कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच० डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध."

891.4309 0152 भा. ग्र. नि. ३२

प्रकाशक : भारतीय ग्रन्थ निकेतन,
१३३, लाजपतराय मार्केट,
दिल्ली-११०००६
आवरण शिल्पी : पाल बन्धु
प्रथम संस्करण : १९७३
मूल्य : ४५.००
मुद्रक : नटराज आर्ट प्रेस,
लाजपतराय मार्केट,
दिल्ली-११०००६

KASHMIRI AURA HINDI SUFI KAVYA KA TULNATAMAKA ADHYAYANA

भूमिका

'कश्मीरी और हिन्दी सूफी-काव्य का तुलनात्मक अध्ययन' मेरे शोध का विषय है। इस विषय तक पहुचने से पूर्व मैंने बहुत लम्बे भटकाओ का सामना किया है। सन् १९५५ ई० मे डा० हरदेव बाहरी के निर्देशन मे सब से पहले प्रयाग विश्वविद्यालय मे मैने 'हिन्दी और कश्मीरी के भक्ति-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन' आरम्भ किया था। दो-तीन महीनो के अनवरत श्रम के पश्चात् जब विषय कुछ स्पष्ट हुआ तो लगा कि इतने बड़े परिवेश को समेटना असम्भव है। इसी बीच अस्वास्थ्य ने कुछ ऐसा परेशान किया कि काम को जहा का तहा छोडकर मैने विराम ले लिया। प्रस्तुत विषय पर नियमित रूप से कार्यारम्भ सन् १९६३ ई० के पहले न कर सका।

इस प्रकार यद्यपि इस विशेष विषय पर काम सन् १९६३ ई० से प्रारम्भ होता है लेकिन इस तरफ पहुंचने की प्रक्रिया सन् १९५५ से ही चलती रही है और जाने-अनजाने, निरन्तर, एक दशाब्दी से अधिक तक मैं इस विषय से संपृक्त रहा हूं।

इस बीच मैंने क्या पाया और क्या नही पा सका इसका सारा लेखा प्रस्तुत प्रबन्ध मे मिलेगा। जो प्रबन्ध की सीमा के बाहर पडता है—प्रबन्ध से अतिरिक्त होने पर भी वही इसकी असली भूमिका है। अतः विशेष रूप से उसका और सामान्य रूप से प्रबन्ध मे विवेचित-विश्लेषित विषय का उल्लेख करना मुझे आवश्यक जान पडता है।

सन् १९५५ ई० से सन् १९६३ ई० के बीच अपने इस गहरे समुद्र-संतरण के काल मे ठोस भूमि का प्रथम स्पर्श मुझे आचार्य श्री, डॉ० विनयमोहन शर्मा की कृपा से मिला जब उन्होने कश्मीरी-हिन्दी के समग्र भक्तिकाव्य की अपेक्षा अपने को सूफी-काव्य तक ही सीमित करने का आदेश दिया। आरम्भ मे मुझे

यह विषय सीमित लगा था, किन्तु कश्मीर जाकर जब इस विषय पर मैंने सामग्री-संकलन का कार्य आरभ किया तो आचार्य जी के आदेश का महत्व समझ में आने लगा और आज जब प्रबन्ध को पूरा करके यह भूमिका लिखने बैठा हूं तो स्पष्ट अनुभव कर रहा हूं कि गुरु के बिना सचमुच ज्ञान नही होता ।

'कश्मीरी और हिन्दी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन' करते हुए मेरे सामने सदैव कुछ प्रश्न रहे है । सब से बड़ा प्रश्न कश्मीरी के सूफी-साहित्य को प्रकाश मे लाने का था । इस विषय मे मै ज्यो-ज्यो गहरे उतरता गया हू, त्यों-त्यों यह बात मेरे मन मे दृढमूल होती गई है कि कश्मीरी के इस महत्वपूर्ण-साहित्य को प्रकाश मे लाया जाना चाहिये ।

कश्मीरी के सूफी-काव्य पर अभी तक रंचमात्र भी शोधकार्य नही हुआ है। इस समय कश्मीर विश्वविद्यालय के अन्तर्गत फारसी के सूफी-काव्य पर कई शोधार्थी कार्य कर रहे है किन्तु कश्मीरी के सूफी-साहित्य पर अब भी किसी का ध्यान नही गया है । कहते है अपरिचय अवज्ञा का सब से बड़ा कारण है । मैंने अपने प्रबन्ध मे इस अपरिचय को मिटाने का भरसक प्रयास किया है । विश्वास है इससे अवज्ञा भी अवश्य मिटेगी तथा इस समृद्ध साहित्य की ओर विद्वानो तथा शोधार्थियो का ध्यान जाएगा । लोग इसकी ओर ध्यान दें, अपरिचय मिटे, अवज्ञा दूर हो, यही इस शोध-प्रबन्ध की मूल प्रेरणा रही है ।

कश्मीर मेरी जन्मभूमि है और कश्मीरी मातृभाषा । भाषा का रसास्वादन सहृदयो को आनन्दमग्न कर देता है । इस शोध-प्रबन्ध में मैंने कश्मीरी सूफी-साहित्य को प्रकाश में लाकर हिन्दी-सूफी साहित्य के समकक्ष एव सन्निकट लाने का प्रयास किया है । इस विषय पर शोध-कार्य करने के लिये जब मैं कश्मीर पहुचा तो सामग्री के सकलन मे मुझे अनेक कठिनाइयां समुपस्थित हुई । यह कार्य सर्वप्रथम अत्यन्त दुर्वह प्रतीत होने लगा क्योकि शोध-सम्बन्धी सामग्री की उपलब्धि के विषय मे यह शका बनी रही कि न जाने कश्मीरी सूफी साहित्य किस रूप एव मात्रा में प्राप्त होगा। जम्मू-कश्मीर कल्चरल अकादमी, श्रीनगर ने मुक्तक-काव्य के तीन सग्रह 'सूफी शअ्यिर' नाम से प्रकाशित किये हैं, इसके अतिरिक्त उन्होने कुछ मुक्तक कवियो के कविता-सग्रहो का भी प्रकाशन किया है। इस अकादमी ने मकबूल शाह क्रालवारी के 'गुलरेज़' प्रबन्ध काव्यो को भी प्रकाशित किया है । ये रचनायें तो प्राप्य थीं किन्तु प्रबन्ध काव्यो की इतनी कम सामग्री शोध के लिये पर्याप्त न थी । रिसर्च डिपार्टमेंट, श्रीनगर में भी कश्मीरी के कुछ सूफी प्रबन्ध काव्य अध्ययन के लिये मिले किन्तु सपूर्ण सामग्री

की उपलब्धि के लिये यत्र तत्र एव अन्यत्र भी प्रयत्न करना पडा । जो अनुपलब्ध प्रबन्धकाव्य मिले वे अधिकतर प्रकाशित ही थे, क्योंकि एक बार प्रकाशित होने के अनन्तर उनका पुन. प्रकाशन बन्द हो गया था । इन प्रकाशित प्रबन्ध-काव्यो की उपलब्धि के लिये मुझे कई स्थानो पर भटकना पडा । फारसी सूफी-कवियो के हस्तलिखित प्रबन्धकाव्य तथा सैफ-उद्-दीन के लुधियाना मे लिखित 'हियमाल' प्रबन्धकाव्य को मुझे रिसर्च डिपार्टमेंट मे ही देखने का अवसर मिला। इतना ही नही, कुछ कवियो के सम्बन्ध मे उत्पन्न भ्रांतियो के निराकरण के लिये मुझे उनके वर्तमान निवासस्थान पर जाकर उनके शिष्यो, पुत्र, पडौसियों अथवा सम्बन्धियों से मिलकर तथ्यों की जानकारी करनी पडी । इस भाति कुछ कवियो की जीवन एव काव्य सम्बन्धी भ्रांतियो को भी इस शोध-प्रबन्ध मे विश्लेषित रूप से प्रस्तुत किया गया है । यह सपूर्ण कार्य झाड-झखाड के मध्य एक नवीन मार्ग बनाने के समान था अत. उस मार्ग की खोज के लिये सुव्यवस्थित प्रयास करना पडा है ।

सामग्री का सकलन करते हुए जितने कश्मीरी प्रबन्धकाव्य मिले, उन सब का उपयोग इस शोध-प्रबन्ध मे किया गया है । प्रबन्धकाव्यो को वृहत् रूप से प्रस्तुत करने का मुख्य उद्देश्य यही रहा है कि इस विधा का सपूर्ण कश्मीरी सूफी-साहित्य विद्वानो के सम्मुख विचारार्थ रखा जाय । मुक्तक-काव्य अधिकतर सिद्धान्त निरूपण से युक्त है और इस प्रकार की सामग्री मुझे पर्याप्त रूप मे मिली किन्तु विस्तार भय के कारण केवल प्रमुख कवियो के मुक्तक-काव्य को ही इस मे स्थान दिया गया है ।

यह मनोरजक तथ्य है कि जब हिन्दी मे सूफी प्रबन्ध का प्रवाह बहुत कुछ क्षीण हो गया था, कश्मीर मे सूफी प्रबन्ध उसी समय जन्म ले रहा था । ऐसा क्यो है ? यह एक टेढ़ा प्रश्न था और इसे हल करने के लिये तुलनात्मक अध्ययन अनिवार्य था, मुझे विश्वास है कि प्रस्तुत प्रबन्ध मे, पहली बार इस प्रश्न को सुलझाने का मेरा प्रयास विद्वानो को पसन्द आएगा ।

इस शोध-प्रबन्ध के पाच अध्याय है, अन्त मे एक परिशिष्ट भी जोड़ा गया है जिसके अन्तर्गत कश्मीरी तथा हिन्दी के प्रबन्धकारों एवं मुक्तककारों का परिचय दिया गया है । प्रत्येक अध्याय की निजी मौलिकता है ।

पहला अध्याय शोध-प्रबन्ध की भूमिका प्रस्तुत करता है । इस मे आलोच्य-काल की राजनीतिक, सामाजिक तथा धार्मिक परिस्थितियों पर प्रकाश डाला गया है । कश्मीर तथा भारत की इन परिस्थितियो की तुलना करते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि इन की सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थितिया प्राय: असन्तोषजनक थी । बाह्य विधि-विधानों एव सामाजिक बन्धनों से तंग आई

हुई जनता किसी शान्तिदायक नवीन धर्म के लिये पहले से ही तैयार खडी थी। कश्मीर तथा भारत के राजनीतिक सम्बन्ध जब मुगलों के समय से दृढ हो गये तभी आदान-प्रदान की मात्रा भी बढ गई। सूफ़ीमत का विकास हजरत मुहम्मद के निधन के दो सौ वर्ष उपरान्त ही प्रारम्भ हुआ। वह अपनी यात्रा मे प्रस्थान करते हुए अरब से ईरान और वहा से कश्मीर तथा भारत मे प्रवेश पा गया। मुसलमानो की राजनीतिक विजय के साथ-साथ ही सूफीमत का प्रचार-प्रसार हुआ। कश्मीर तेरहवी शताब्दी मे मुसलमानो का एक उपनिवेश बन गया था। अतः सूफीमत को वहां अपने प्रचार के लिये उर्वरा भूमि मिली। सामाजिक एव धार्मिक क्षेत्र मे मानवतावाद के समर्थक सूफी सतो द्वारा न केवल कश्मीर अपितु भारत भी एक-साथ प्रभावित हुआ। कश्मीर तथा भारत मे प्रायः सूफी-संप्रदाय एक जैसे ही रहे किन्तु कश्मीर में 'ऋषि-सम्प्रदाय' अत्यन्त प्रमुख रहा। वह मौलिक रूप मे भारतीय रहा और इस सम्प्रदाय के कवि मूलतः हिन्दू-धर्म के उदात्ततम आदर्श मानवतावाद के समर्थक रहे। प्रेम तथा विश्वबंधुत्व की मधुर रागिनी का राग ही उन्होने अलापा है। इस सप्रदाय में हिन्दुओं के व्यावहारिक बाह्याचार एवं जीवन-पद्धति सुरक्षित रही तथा हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की प्रतिष्ठा हुई जिसका सम्यक् रूप आज भी अभिव्यजित होता रहता है। कश्मीर एवं भारत के सूफी-केन्द्रो में आदान-प्रदान होता रहा। सूफी-सिद्धान्तों एव उसकी दार्शनिक पृष्ठभूमि का विवेचन भी इस अध्याय में किया गया है।

दूसरे अध्याय में कश्मीरी और हिन्दी में उपलब्ध सूफी-साहित्य पर विचार किया गया है। यह साहित्य प्रबन्ध-काव्य तथा मुक्तक-काव्य दोनों में उपलब्ध है। कश्मीरी प्रबन्धकारों के संकलन के लिये अत्यन्त विकट खोज करनी पड़ी। कश्मीरी के प्रायः प्रत्येक उपलब्ध प्रबन्ध काव्य का प्रकाशन-समय अनुपलब्ध है किन्तु रचना-काल अधिकांश मे उपलब्ध है। यद्यपि कश्मीरी के बहुसंख्यक प्रबन्ध अधिकतर अभारतीय कथाओ की घटनाओं पर आधारित हैं किन्तु इस बात की उपेक्षा नही की जा सकती कि भारत के साथ घनिष्ठ सम्बन्धों के कारण किसी ने पजाब की लोककथा 'सोहनी मेयवाल' (सोहनी मोहीवाल) तथा किसी ने दक्षिण की कथा 'चन्द्रवदन' को भी अपनाया है। पीर अज़ीज़ अल्लाह हक्कानी ने भारत के इतिहासकारो द्वारा वर्णित किसी ऐतिहासिक घटना को अपनाकर उसे कल्पना का पुट देकर सूफी-सिद्धान्तो से समन्वित किया। फारसी की प्रधानता के कारण ही कश्मीर में सर्वप्रथम फारसी सूफी-काव्य की रचना हुई और उसके पश्चात् ही कश्मीरी में प्रबन्धकाव्य लिखे जाने लगे। कश्मीर की मुक्तक काव्यधारा चौदहवी शताब्दी से निरन्तर सन् १९२५ तक चलती रही। अब भी कई सफी मुक्तक कवि इसके साहित्य-कोष में

अभिवृद्धि कर रहे है। मुक्तक काव्य का परिचय भी इसी अध्याय के अन्तर्गत दिया गया है।

तीसरा अध्याय कश्मीरी और हिन्दी सूफी प्रबन्धकाव्यो का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। इस मे कश्मीरी और हिन्दी सूफी काव्यो के साम्य एव वैषम्य पर दृष्टिपात किया गया है। इसमें उनके प्रकार, मसनवी पद्धति, वस्तु-विकास, प्रासगिक कथाओ के समावेश, मूल-कथा के साथ सम्बन्ध, वर्ण्य विषय, पात्र एव उनके चरित्र-चित्रण प्रेम-परिपाक, रस एव कला-पक्ष आदि बातों पर प्रकाश डाला गया है। वस्तुतः कश्मीर के सूफी प्रवन्ध-काव्य फारसी मसनवी-पद्धति का अनुसरण करते है और भारतीय प्रबन्धकाव्य भी चरित-काव्यो की सर्ग-बद्ध शैली मे न होकर फारसी मसनवी के ढग पर रचे गये है। हिन्दी प्रेमाख्यानो के आरम्भ में कवि द्वारा वर्णित ईश्वर की वंदना, रसूल की प्रशसा, गुरु का उल्लेख तथा शाहेवक्त का गुणगान भारतीय प्रेमाख्यानो के मगलाचरण का स्मरण दिलाते है। अधिकतर कश्मीरी प्रबन्धकारो ने गुरु का उल्लेख नही किया है। शाहेवक्त की प्रशसा भी किसी ने नही की है। कठि-नाइयों को पार करके ही नायक-नायिका के मिलन में ही फलागम की पूर्ति होती है। अधिकाश कश्मीरी-सूफी प्रबन्धो में प्रासगिक कथा का समावेश नही है अपितु हिन्दी सूफी-काव्यों की अपेक्षा इन में प्रेम की अभिव्यजना अधिक स्पष्ट है। कश्मीरी कवियो ने षट्-ऋतु तथा बारहमासे का वर्णन भी नही किया है। इसके विपरीत हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान प्रायः अधिक विस्तार वाले है और उन में प्रायः प्रासंगिक कथाओं का भी समावेश हुआ है। कश्मीरी कवियों ने नायक की कठिनाइयों का वर्णन करते हुए प्रायः किसी 'बडे दरिया' को ही समुद्र माना है। वैषम्य की अपेक्षा साम्य की भावना दोनो प्रकार के प्रबन्धकाव्यो में अत्यधिक है।

हिन्दी सूफी प्रबन्ध-काव्य 'चदायन' की कथा की कुछ एक घटनाओ का साम्य 'रैणा व ज़ेबा' से है। इस मे 'चदायन' की चाद की भांति ही नायिका ज़ेबा अपने प्रेमी को भाग निकलने के लिये प्रेरित करती है। 'मधुमालती' की कथा का अधिकांश-भाग 'गुलरेज़' से साम्य रखता है। इस मे मुख्य और प्रासं-गिक कथा एक साथ चलती है। 'गुलरेज' तथा 'मधुमालती' की कथाओ में इतना साम्य है कि जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि दोनो काव्यो का आधार कोई अन्य रचना रही होगी अथवा मधुमालती का प्रभाव किसी न किसी रूप में 'गुलरेज' पर अवश्य पडा होगा। कश्मीरी प्रबन्धकाव्यो के अन्त मे हिन्दी-प्रबन्धों के अन्त की भाति उनके रूपक, समासोक्ति अथवा अन्योक्ति आदि का कोई संकेत नही मिलता।

कश्मीर का मुक्तक-काव्य अधिकतर सिद्धान्त-निरूपण से युक्त है। उस पर सतो का प्रभाव परिलक्षित होता है। कश्मीरी तथा हिन्दी का मुक्तक साहित्य बाह्याडम्बर, विधि-विधान तथा शरीयत आदि का खण्डन करता है। यद्यपि कश्मीर के कवि शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश)[1] और हिन्दी के जायसी[2] ने इसे कुछ मात्रा मे स्वीकार किया है।

चौथे अध्याय मे कश्मीरी और हिन्दी सूफी-मुक्तक काव्यो पर तुलनात्मक दृष्टि डाली गई है। इन दोनो प्रकार के कवियों ने सूफी-प्रबन्धकारो की भाति इस बात की चिन्ता न की कि साधक को पुरुष-रूप मे एव परमात्मा के नूर को नारी के सौंदर्य के रूप मे चित्रित किया जाय। उन्होने आत्मा को पुरुष रूप मे और कही सन्तो की भांति नारी रूप मे वर्णित किया है। उसका वर्णन जहा पुरुष रूप मे हुआ है, वहा भी परमात्मा पुरुष है और वह या तो मित्र है अथवा उपास्य-स्रष्टा। जहां पर आत्मा को नारी रूप मे अभिव्यक्त किया गया है, वहा परमात्मा प्रिय है। ईश्वर पुरुष है तथा आत्मा को सुहागिनी कहा गया है। दोनो प्रकार के कवियो ने सन्तो की भाति व्यावहारिक बाह्याडम्बर का खण्डन करके प्रभु का साक्षात्कार करने के लिए सच्चे प्रेम की महानता प्रकट की है।

कश्मीरी सूफी मुक्तक-काव्य मे हिन्दी की अपेक्षा सामाजिक जागरण एव राजनीतिक अत्याचार का भी एक-साथ वर्णन हुआ है। कश्मीरी का मुक्तक काव्य जहा गज़लों, गीतों, नज़्मो तथा नातो मे लिखा गया है वहा हिन्दी के अपने छन्द, अपने अलकार एव परम्परा थी। गजल के स्थान पर इन कवियो के सम्मुख आर्या, गाथाए दूहे का आदर्श था।

पाचवे अध्याय मे कश्मीरी तथा हिन्दी सूफी-कवियो के पारस्परिक आदान-प्रदान एव उनके मूलभूत कारणों को प्रस्तुत किया गया है। कुछ ऐसे मौलिक स्रोत है जिन का प्रभाव कश्मीरी एव हिन्दी के सूफी-काव्यो पर समान रूप से पडा है। ये स्रोत एक ओर तो फारसी का सूफी साहित्य है और दूसरी ओर शैव-तंत्र या योग-शास्त्र की साधनात्मक परम्परा। दोनो प्रकार के कवियों के सूफी-सिद्धान्त के प्रचार की सुसंगठित एक ही प्रकार की पद्धति थी। वे दोनो यात्राओं द्वारा अपने सिद्धान्तों का प्रसार-प्रचार करते थे। ये कवि अवश्य यात्रा के समय एक-दूसरे से किसी दरगाह या सूफी-केन्द्र पर मिला करते थे।

परिशिष्ट मे कश्मीरी तथा हिन्दी के सूफी प्रबन्धकारों एव मुक्तक कवियो का परिचय दिया गया है। कश्मीरी सूफी कवियो का परिचय कुछ विस्तार के

---

१ द्रष्टव्य—नूरनामा, सं० मुहम्मद अमीन कामिल, श्लोक ७०, पृ० १०५।

२. द्रष्टव्य—जायसी-ग्रन्थावली, स० डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६६४।

साथ दिया गया है और प्रचलित भ्रातियो के निराकरण का प्रयत्न किया गया है। हिन्दी-कवियो का परिचय प्रचलित मान्यताओ के आधार पर सक्षिप्त रूप मे प्रस्तुत किया गया है।

कश्मीरी के सूफी-साहित्य को समझने-समझाने के लिए इतिहास, धर्म, दर्शन एव साहित्य से सम्बद्ध तथ्यो का सकलन प्राय अधिकारी विद्वानो एव कृतियो से ही किया गया है किन्तु इन तथ्यो के आधार पर जो निष्कर्ष निकाले गये है वे मेरे अपने है। शोध की दिशा मे यह मेरा प्रथम व्यवस्थित प्रयास है अत त्रुटियो का रह जाना नितान्त स्वाभाविक है। यह शोध-प्रबन्ध अपने विषय का प्रथम ग्रन्थ तो है किन्तु अतिम ग्रन्थ नही है। यह तो केवल एक प्रयत्न मात्र है। मेरे शोध प्रबन्ध से अन्य शोधार्थी विद्वानो को यह प्रेरणा मिल सकती है कि कश्मीरी साहित्य के अनुसन्धान की ओर अधिकाधिक प्रवृत्त हों और हिन्दी-साहित्य के साथ उसके पारस्परिक आदान-प्रदान का अन्वेषण करे। कश्मीर और भारत का पारस्परिक सास्कृतिक सम्बन्ध प्राचीन काल से चला आ रहा है और वह भारत का ही अग रहा है किन्तु इस प्रकार के शोध-प्रबन्धो से वर्तमानकाल मे भी उन सम्बन्ध-सूत्रो को भी अभिव्यक्त होने एवं सास्कृतिक सम्बन्ध को और सुदृढ करने मे विशेष योगदान मिलेगा।

कह आया हूं कि इस विषय पर अपने जीवन का एक काफी बडा भाग मैं ने लगाया है। इस लम्बी कालावधि में प्रबन्ध को निर्बाध पूरा कराने मे अनेक आदरणीय, सहृदय एव आत्मीय व्यक्तियों का आशीर्वाद एव स्नेह साहाय्य मुझे मिला है। सूफी भक्तों की भाति मात्र भगवत्कृपा और भगवद् भक्ति को ही सब-कुछ नही मानते, परमतत्व की उपलब्धि के लिए वे साधक को और साधना के लिए मार्ग-प्रदर्शक गुरु को आवश्यक मानते है। परमात्मा गुरूणा गुरु है, पर सूफी-साधक के लिए पग-पग पर मार्ग-निर्देश करने वाले प्रत्यक्ष गुरु की अनिवार्य आवश्यकता रहती है।[१] 'गढ तस बांक जैसि तोरि काया'[२] को समझने के लिए परमेश्वर के अनुग्रह तथा गुरु के मार्ग-निर्देश दोनों की अनिवार्यता सूफी-साधना मे स्वीकृत है। अपने निर्देशक डॉ० छविनाथ त्रिपाठी में प्रत्यक्ष गुरु का रूप मुझे

---

१. बिनु गुरु पंथ न पाइअ, भूलै सोइ जो भेंट।
जोगी सिद्ध होइ तब, जब गोरख सों भेंट।
जायसी-ग्रन्थावली, स० डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २६३।

२. वही, पृ० २६५।

मिला है। प्रबन्ध का निर्देशन तो उन्होने किया ही है इसे आदि से अन्त तक बनाने-सवारने मे भी उनका निरन्तर योग मुझे मिला है। समय-समय पर यदि उनकी सहायता एव प्रोत्साहन न मिलता, तो सम्भव था कि मै हिम्मत हार कर बैठ जाता। अत स्पष्ट है कि प्रस्तुत प्रबन्ध की असल भूमिका आचार्य श्री, डॉ० विनय मोहन शर्मा तथा डॉ० छविनाथ त्रिपाठी ही है। मै तो उस बासुरी की भाति हू जिस मे इन्होने प्राण सचरित कर यथेच्छ स्वर परम्परा उत्पन्न की है। मै इनके सम्मुख श्रद्धावनत हूं और अपने इन गुरुजनों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के अतिरिक्त श्रद्धा की इस भाव की अभिव्यजना सभव ही नहीं है।

रिसर्च एव आरकाइव्ज के डायरेक्टर प्रो० पृथ्वीनाथ 'पुष्प' ने सामग्री-सकलन मे मेरी पर्याप्त सहायता की है। मै उनके आभार को शिरसा स्वीकार करता हू।

सब से बडा आभार मै उनका मानता हूं जिनकी कृतियो से मैंने सहायता ली है। उनके अभाव में सही दिशा पा सकना असम्भव था। जिनकी रचनाओं का इस सम्बन्ध मे मैंने बहुत उपयोग किया है उनमे आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, प० रामपूजन तिवारी तथा डॉ० सरला शुक्ल प्रमुख है। उनके प्रति अपना हार्दिक आदर एव आभार निवेदित करता हूँ।

श्री सुशील ने लगन के साथ इस शोध-प्रबन्ध को टकित किया है अतः उन्हे मै हृदय से धन्यवाद देता हूं।

अन्त मे, मै विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली का आभारी हूं, जिसने मुझे विषय सम्बन्धी पुस्तको के खरीदने तथा सामग्री सकलन के लिए अनुदान देकर कृतार्थ किया।

विदुषामनुचर .

जियालाल हण्डू

विषय निर्देशिका

पहला अध्याय

दूसरा अध्याय

तीसरा अध्याय

चौथा अध्याय

पाँचवाँ अध्याय

सहायक ग्रन्थ-सूची

पहला अध्याय

(१) आलोच्यकाल की राजनीतिक परिस्थिति

क—आलोच्यकाल में कश्मीर की राजनीतिक परिस्थिति

कश्मीर में इस्लाम का प्रभाव मुसलमान-राज्य के प्रतिष्ठापित होने से पूर्व ही अपना ज़ोर पकडता जा रहा था। शक्तिशाली ज़मीदारो तथा राजाओ के पारस्परिक आभ्यतरिक सघर्ष के कारण इस्लाम-धर्म का स्वागत होने के साथ-साथ उसका प्रचार भी बढ रहा था।[1] हिन्दू राजा निर्बल एव शक्तिहीन बनते जा रहे थे[2] और तभी चौदहवी शताब्दी के आरम्भ मे तुर्किस्तान के क्रूर और अत्याचारी तातार सरदार डुलचु[3] ने कश्मीर पर आक्रमण करके अप्रत्याशित अग्नि-

---

१. The propagation of the new creed was greatly felicitated, by the internal feuds among the rulers and the powerful landlords.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृथ्वी नाथ कौल (बामजई) मैट्रोपालिटन बुक क० (प्रा०) लि०, दिल्ली, प्रथम सस्करण (सन् १९६२ ई०), पृष्ठ २-६।

२. The Hindu kings had become incapable of their office.

कश्मीर, जे पी० फर्गूसन, सैनतौर प्रेस (सन् १९६१ ई०), पृष्ठ २९।

३. कश्मीर इतिहासकारो ने इसका नाम जुलचू दिया है, द्रष्टव्य-कशीर, प्रथम भाग, जी० एम० डी सूफी, यूनिवर्सिटी आफ पजाब, लाहौर (सन् १९४८ ई०), पृष्ठ ११७।

जे० सी० दत्त ने इसका नाम डलच दिया है, द्रष्टव्य-किंग्स आफ कश्मीर, (सस्कृत कृतियो का अनुवाद), लेखक द्वारा स्वय प्रकाशित (सन् १८९८ ई०), पृ० १६।

काण्ड तथा कत्ल के साथ-साथ लूट मार का आतक फैला दिया ।[१] अशक्त राजा सहदेव[२] ने बिना युद्ध किए उसे धन देकर प्रसन्न करना चाहा किन्तु सम्पत्ति की भूख उसे और आगे खीच लाई । वह यहाँ के शान्त वातावरण में अशान्ति का बीज बो गया । अन्त मे अपने मत्री रामचन्द्र के हाथो मे राज्य की सत्ता देकर सहदेव किश्तवार की और भाग गया ।[३] रामचन्द्र आतिथ्य-सत्कार मे विश्वास रखता था अत· उसने लद्दाख के निष्कासित राजकुमार रिंचन और स्वात से आए हुए मुसलमान यात्री शाहमीर को शरण दी ।

रिंचन ने रामचन्द्र के साथ विश्वासघात करके उसे मौत के घाट उतरवा दिया और स्वय को उसने कश्मीर का राजा घोषित किया । तदनन्तर उसने सूफी-सत बुलबुलशाह से दीक्षा लेकर इस्लाम-धर्म ग्रहण किया । बुलबुलशाह बग़-दाद मे पर्याप्त समय रहने के अनन्तर सहदेव के समय मे ही तुर्किस्तान से यहाँ आया हुआ था । रिंचन इस्लाम मतावलम्बी बनने के अनन्तर कश्मीर का प्रथम मुस-लमान शासक बना ।[४] उसने कश्मीर पर सदर-उद्-दीन के नाम से सन् १३२० ई० से सन् १३२३ ईस्वी तक राज्य किया । उसके पश्चात् शाहमीर ने सुल्तान शम्स-उद्-दीन के नाम से कश्मीर पर सन् १३३९ ईस्वी से सन् १३४२ ईस्वी तक राज्य किया । वह सुल्तान वश का प्रथम शासक था । कश्मीर की राजनीतिक परि-स्थिति को समझने के लिये सन् १३०० ईस्वी से सन् १९२५ ईस्वी तक के समय को निम्न-आधार पर विभाजित किया गया है :—

१. सुल्तानो का समय[५]—सन् १३२० ईस्वी से लेकर सन् १५५५ ईस्वी तक ।
२. चको का समय[६]—सन् १५६० ईस्वी से लेकर सन् १५८६ ईस्वी तक ।

---

१. At this time Kashmir witnessed an unprecedented Orgy of loot, arson, murder and rape, at the hand of an un-scruplus and cruel invader, Dulchu, a tater chief from Turkistan.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० २८७ ।

२. फर्गूसन महोदय ने इसका नाम सिन्ह देव दिया है । द्रष्टव्य कश्मीर, पृ० २९ ।

३. Sahdeva fled to Kishtwar leaving the affairs of the state in the hands of Ramchandra.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० २८७ ।

४. Rimchan was thus admitted to Islam and became the first muslim king of Kashmir.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० २८८ ।

५-६. द्रष्टव्य-कशीर, प्रथम भाग ।

३. मुगलो का समय[१]—सन् १५८६ ईस्वी से लेकर सन् १७५२ ईस्वी तक ।
४. अफगानो का समय[२]—सन् १७५२ ईस्वी से लेकर सन् १८१९ ईस्वी तक।
५ सिक्खो का समय[३]—सन् १८१९ ईस्वी से लेकर सन् १८४६ ईस्वी तक।
६. डोगरो का समय[४] (महाराजा प्रताप सिंह की मृत्यु तक)—सन् १८४६ ईस्वी से लेकर सन् १९२५ ईस्वी तक ।

शाहमीर के वश ने ही नही अपितु चको ने भी सुल्तान की पदवी ग्रहण की। उन्होने शाह, पादशाह तथा सुल्तान-ए-आजम जैसी अन्य उपाधिया भी धारण की,[५] इसी वश के दूसरे प्रसिद्ध सुल्तान शहाब-उद्-दीन (सन् १३५४ ईस्वी—सन् ७३ ईस्वी)ने यहा की आन्तरिक परिस्थिति का ही सुधार नही किया

१-२. द्रष्टव्य-कशीर, प्रथम भाग ।

३-४ द्रष्टव्य-ए हिस्ट्री आफ कश्मीर ।

इसी काल को जम्मू-कश्मीर यूनिवर्सिटी रिव्यू-जून १९६० के अक मे प्रो० जियालाल कौल ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है :

क—आरम्भिक काल (आरम्भ से सन् १५५५ ई० तक) यह काल शाहमीर के वश (सुल्तान) की राज्य-समाप्ति अथवा उस समय तक माना जाता है जब सुल्तान हबीबशाह को सिंहासन से उतारा गया और गाजी चक सिंहासनारूढ हुआ ।

ख—द्वितीय काल (सन् १५५५ ई० से १७५२ ई० तक) यह काल चको के समय मे उस समय तक माना जाता है जब कश्मीर पर अहमदशाह दुरानी ने आक्रमण किया और तत्पश्चात् मुगल राज्य की समाप्ति हुई ।

ग—तृतीय काल (सन् १७५२ ई० से सन् १९२५ ई० तक) यह एक ऐसी लम्बी अवधि है जिसे निम्नलिखित विभिन्न भागो मे विभक्त किया गया है ।

१. सन् १७५२ ई० से लेकर सन् १८४६ ई० तक-अफगानो के समय से लेकर डोगरा राज्य के प्रारम्भ तक ।

२. सन् १८४६ ई० से लेकर सन् १८८५ ई० तक-पहले दो डोगरा राजाओ-महाराजा गुलाब सिंह तथा महाराजा रणवीर सिंह का राजत्व काल ।

३. सन् १८८५ ई० से लेकर सन् १९२५ ई० तक महाराजा प्रतापसिंह का समय ।

५ All the rulers of the Shahmır and Chak dynastıes adopted the tıtle of Sultan. Other common tıtles were Shah, Padshah, and Sultan-i-Azam.

कश्मीर अण्डर दि सुल्तान्ज, महीब-उल-हसन, ईरानी, सोसाइटी, धर्मतल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता (१९५९), पृष्ठ १९५ ।

अपितु उसने कश्मीर की सीमाओ से दूर भी सफलतापूर्वक लडाईया लडी। उसकी सेना मे कश्मीर के चारो ओर की पहाडी जातियो के वीर सैनिक भर्ती हुए थे जिन्होने सिन्ध, पेशावर, तथा अफगानिस्तान पर चढाई की।[१] कश्मीर के इतिहासकारो का कथन है कि दिल्ली के सुल्तान फीरोजशाह तुगलक और सुल्तान शहाब-उद्-दीन का अनिर्णित युद्ध सतलुज नदी के तट पर हुआ। इसमे शहाब-उद्-दीन के पास पच्चास हजार घोडे तथा पच्चास हजार सैनिक थे। पीछे सन्धि हो जाने पर शहाब-उद्-दीन को कश्मीर से सरहिन्द तक प्रभुत्व मिल गया। इसके कई सैनिक पदाधिकारी, मत्री तथा उच्च पदाधिकारी भी हिन्दू थे। दो हिन्दू मन्त्रियो-कोट भट्ट तथा उदय श्री मे उसकी अपार श्रद्धा थी।[२] उसी के राजत्वकाल सन् १३७२ ईस्वी मे अमीर कबीर सैयद् अली हमदानी सात सौ सैयदो के साथ तैमूर के कोप से बचने के लिये फारस से कश्मीर आए और फिर धर्म-यात्रा के लिए मक्का चले गए।[३] वे बुखारा मे कश्मीर

---

१. He is remarkable for having waged war successfully from outside the boundaries of Kashmir as well as for managing efficiently the internal affairs of his country. The troops with which he conducted his compaigns against Sind, Peshawar and Afganistan were no doubt recruited from the Warlike tribes of the hills around Kashmir

—कश्मीर, फर्गूसन, पृ० ३१।

२. The Kashmir Historians have recorded Shihab-ud-din's invasion with his 50,000 horses and 50,000 soldiers, of Feroze–Tughlak's dominion. An indecisive battle between the forces of the Sultans of Delhi and Kashmir is said to have been fought on the bank of Satluj. A treaty followed accorded to which Shihab-ud-din was given a free hand in all the territories from Sirhind to Kashmir.

Most of Shihab-ud-Din's commanders, ministers and other high officials were Hindus. He put his confidence in his two Hindu ministers, Kota Bhatta and Udayshri.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० २६३।

३. Sayyid Ali Hamdani accompanied by 700 more Sayyids, left Persia to escape the tyrannical rule of Timur and entered Kashmir in 1372 A.D Sultan Shihab–ud–din was the reigning king... After which they left on a pilgrimage to Mecca.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४८३।

आए थे।[1]

सुल्तान कुतुब-उद्-दीन (सन् १३७३ ईस्वी-सन् १३८९ ईस्वी) एक योग्य कवि भी था। वह संस्कृति का संरक्षक था। उसी के राज्य में अमीर कबीर सैयद अली हमदानी दूसरी बार सन् १३७९ ईस्वी में कश्मीर पधारे और सुल्तान को सूफी-धर्म का मतावलम्बी बना दिया।[2] वे यहां केवल ढाई वर्ष रहे और सूफीमत का प्रचार करते रहे। कुतुब-उद्-दीन के समय कश्मीर में कई अकाल पड़े। जून-जुलाई के महीनों में अन्नाभाव खूब बढ़ता था। इन मासों में राजा तथा उसके मंत्री यज्ञ करते थे तथा पकाया हुआ भोजन भूखी जनता में बांट देते थे।[3] सैयद अली हमदानी ने कश्मीर की यात्रा फिर सन् १३८३ ईस्वी में तृतीय बार की किन्तु स्वास्थ्य के ठीक न होने से वापस चले गये।[4] वे ईरान के हमदान नामक स्थान के निवासी थे।

चौदहवीं शताब्दी के अन्त में सुल्तान सिकन्दर (सन् १३८३ ईस्वी—सन् १४१३ ईस्वी) का राज्य आरम्भ हुआ। कश्मीर के इतिहास में उसका स्थान वही है जो भारत के इतिहास में औरंगजेब का है। दोनों हिन्दुओं के मन्दिर तथा मूर्तियां नष्ट-भ्रष्ट करने के लिये कुख्यात हैं। कश्मीर में सिकन्दर को 'बुत शिकन' अर्थात् मूर्त्ति-भंजक के नाम से स्मरण किया जाता है।[5] तैमूर जब सन् ई० १३९८ में भारत पर आक्रमण करने के पश्चात् वापस लौटा तो सुल्तान सिकन्दर ने अपने पुत्र जैन-उल-आब्दीन के हाथ उसके प्रसन्नार्थ कई

---

१. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—कश्रशिरिह अदबअच तश्ररीख, अवतार-कृष्ण (रहबर, मर्कण्टाइल प्रेस, श्रीनगर, प्रथम भाग (सन् १९६५ ई०) पृ० ९४।

२. वही, पृष्ठ २९४-२९५।

३. वही, पृष्ठ २९५।

४. वही, पृष्ठ ४८३।

५. At the end of the 14th century there comes a ruler, Sikandar, who occupies in the annals of Kashmir the position of Aurangzeb in the history of India. Both are distinguished for their zeal in destroying the temples and images of the Hindus and on this account both have received the title of Iconoclast. Sikandar is popularly known as Butshikan, the Idol Breaker.

—कश्मीर, फर्गूसन, पृ० ३१।

प्रकार के उपहार समरकन्द भेजे ।[१] इस्लाम-धर्मावलम्बी बनाने के लिये उसने कई ब्राह्मणो का वध किया । कहा जाता है कि अन्त मे इकट्ठे किए गए यज्ञोपवीतो का वजन पाच हण्डरवैट (लगभग सात मन) था ।[२] उसी के समय ईरान से तैमूर के आतक के कारण अमीर कबीर सैयद अली हमदानी के पुत्र, सैयद मुहम्मद हमदानी के साथ तीन सौ सैयद कश्मीर पधारे । उस समय उसकी आयु बाईस वर्ष की थी ।[३] सुल्तान सिकन्दर ने सद्व्यवहारपूर्वक उनको रहने के लिए स्थान तथा जागीरे दी ।[४]

जब सिकन्दर का दूसरा पुत्र जैन-उल-आब्दीन (सन् १४२० ईस्वी—सन् ७० ईस्वी) कश्मीर का शासक बना तभी यहा के लोगो ने सुख की सास ली । उसकी तुलना सर्वप्रसिद्ध मुगल शासक अकबर से की जा सकती है जिसने प्रत्येक धर्म के प्रति उदारता से काम लिया । सर्वप्रथम उसका ध्यान जन-कल्याण की ओर गया । सम्पूर्ण कश्मीर घाटी के लिये उसने नहरो की योजना बनवाई जिनका उपयोग आज भी किया जा रहा है । कई पुलो का निर्माण किया तथा स्कूल खुलवाए ।[५] यद्यपि इस निर्माण-कार्य मे कैदियो से बेगार लिया गया, फिर भी वह अत्यन्त न्यायप्रिय था । सुल्तान सिकन्दर से पूर्व जो जजिया-कर

---

१. Sikanders son Zain-ul-Abdin went to Samarkand to give presents to Timur.
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० २६६ ।

२. So many Brahmans were killed that their sacred threads when collected weighed it is said, five hundred weight.
—कश्मीर, फर्गुसन, पृ० ३२ ।

३. ...and arrived in Kashmir with three hundred Sayyids when only twenty two years of age.
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४८५ ।

४. Sikandar treated them well and gave them land and Jagirs to settle on.
—वही, पृ० २६० ।

५. Zain-ul-Abdin has been compared with Akbar, the most illustrious of all the Mughal emperors, and the two undoubtedly resemble each other in their policy of toleration. He see the welfare of his country first. Irrigation was carefully planned for the whole valley and some of the canals which he had constructed are still in use to-day. Bridges were built and schools opened.
—कश्मीर, फर्गुसन, पृ० ३३ ।

शाहमीरियो द्वारा हिन्दुओ से प्राप्त किया जाता था उसे उसने कम कर दिया ।[1] उसने कई मन्दिरो की मरम्मत करवाई तथा हिन्दुओ को वापस कश्मीर बुलाकर उनके पुनर्वास मे सहायता भी दी ।[2] इतिहासकार जोनराज का कथन है, यद्यपि वह अत्यत दयालु था, फिर भी लोगो के हितार्थ उसने कभी भी दोषी होने पर अपने मत्री, मित्र या पुत्र तक को दण्ड देने मे सकोच नही किया ।[3] उसने उचित उपहार अपने राजदूतो द्वारा खुरासान, तुर्की, मिश्र तथा दिल्ली तक भिजवा दिए ।[4] उसके राज्य के अन्तिम दिनो में कश्मीर मे समय से पूर्व ही हिमपात हुआ तथा वितस्ता (झेलम) मे बाढ आई जो एक भयानक अकाल के उद्‌भव का कारण बनी । बाढ से बचने के लिये उसने अपनी राजधानी हारी-पर्वत के निकट बनाई और एक नया शहर-नवशहर-स्थापित हुआ ।[5]

जैन-उल-आब्दीन का राज्य कश्मीर में स्वर्णयुग से स्मरण किया जाता है ।[6] उस समय कश्मीर ने भारत के एक सुसम्पन्न भाग के रूप मे प्रसिद्धि प्राप्त की। उसकी मृत्यु के पश्चात् कश्मीर की राज्यसत्ता सैयदो के हाथ आई ।

१ Jazya was realised from the non-muslims by the shahmir rulers before Sultan Sikander. When Zain-ul-Abdin came to the throne he reduced the Jazya.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्तान, पृ० २१४-१५ ।

२. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य, तारीख रियासत जम्मू व कश्मीर, हसन शाह, कपूर ब्रदर्स, प्रथम सस्करण (सन् १९६३ ई०), पृ० २६ ।

३. 'Though the king was kind hearted', writes Jonaraj,' yet for the sake of his people he would not forgive even his son of minister or a friend if he were guilty.

—किग्स आफ कश्मीर, पृ० ८० ।

४. He sent ambassadors with adequate presents to the kings of Khurasan, Turkey, Egypt and Delhi.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ३०१ ।

५. Toward the end of his reign a severe famine occured in Kashmir due to an early fall of snow. He thought of shifting his capital city towards the high land round about the Hari Parbat hill. He founded Naushahar.

—वही, पृ० ३०७ ।

६ मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य-तारीख रियासत जम्मू व कश्मीर, पृ० ४१ ।

उन्होने जनसाधारण पर पर्याप्त अत्याचार किए।[१]

कश्मीर पर चको का शासन सन् ईस्वी १५६० से सन् ईस्वी १५८६ तक रहा। "राजा सहदेव के समय मे ही इस वश का प्रतिष्ठापक लकर चक दर्दिस्तान से आकर यहा एक ग्राम-त्रेहगाम-मे बस गया था। काज़ी चक इसके ही वश से सम्बन्धित था। अन्त मे काजी चक का पुत्र गाजी चक सन् १५६१ ईस्वा मे सुल्तान बना और सन् १५६३ ई० तक शासन करता रहा। वह शिया धर्मावलम्बी था। वह न्याय करते समय अपने सम्बन्धियो तक की परवाह नही करता था।[२] इसी वश के शामनकाल से कश्मीर मे शिया-सुन्नी के सघर्ष का समय आरम्भ होता है।[३]

सुल्तानो ने अपनी प्रजा तथा पदाधिकारियों के कार्य-कलाप का परिचय प्राप्त करने के लिये गुप्तचर रखे थे।[४] राजस्व के लिये आपके ये निम्नलिखित साधन अपनाए गए थे :

(क) खराज (ख) जज़िया कर (ग) जकात तथा चुगीकर (घ) विविध कर (ङ) नियमित भेट[५]।

---

१. Kashmir during the period following the death of Zain-ul-Abdin came under the political domination of the sayyids. To the common people they proved a source of misery and oppression.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ३१३।

२. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य, तारीख रियासत जम्मू व कश्मीर, पृ० ३५ (इसके लेखक ने चकों का समय सन् ई० १५५४ मे लेकर सन् ई० १५८६ तक बताया है तथा गाजी चक का शासन सन् ई० १५५४ से लेकर सन् ई० १५६३ तक माना है किन्तु पृथ्वीनाथ कौल ने अपनी पुस्तक "ए हिस्ट्री आफ कश्मीर" मे गाजी चक का शासन-काल सन् ई० १५६१ से लेकर सन् ई० १५६३ तक माना है, यहा उसी काल का उल्लेख किया गया है, द्रष्टव्य, पृ० ३४०)

मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य, मुख्तसर तारीख कश्मीर, एम० ए० पण्डित, मर्कण्टाइल प्रेस (अक्तूबर १९६२), पृ० १३२।

४. The sultans kept themselves informed of the activities of their subjects and officials by means of spies.

—कश्मीर अण्डरादि सुल्तान्ज, पृ० २०३।

५. The main heads of the revenue were. 1. Kharaj 2. Jazya 3. Zakat and Custom duty 4. other taxes 5. Assignments of Tribute.

—वही, पृ० २१३।

खराज हिन्दू-अहिन्दू दानो से प्राप्त किया जाता था। शाहमीर सुलतानो द्वारा 'हिन्दुओ से जजिया-कर लिया जाता था जिसे अन्त में अकबर ने बन्द कर दिया था।'' ज़कात मुसलमानो से प्राप्त किया जाता था। मुसलमान व्यापारी इसे देकर ही सीमा पार कर सकते थे। विवाह, भोज तथा उत्सवो के समय विविधकर और भेट आदि एकत्र किया जाता था।[२]

चको के पश्चात् कश्मीर मुगल-राज्य का अंग बना। आईन-ए-अकबरी में अबुल-फज़ल का कथन है कि जब मुगलो ने अपने समय में अपने राज्य के विस्तार, पुनर्गठन तथा पुनर्निर्माण आरम्भ किया उसी समय 'कश्मीर का सूबा' विशाल मुगल-साम्राज्य मे मिला लिया गया और जिससे उसकी शताब्दियो से चली आती हुई विलगता तथा तटस्थता समाप्त हो गई।[३] अकबर का राज्य कश्मीर पर उन्नीस वर्ष रहा। उसके राज्य (सन् १५८६ ई० से सन् १६०६ ई० तक) कश्मीर पर चार सूबेदारो ने शासन किया।[४] अकबर के समय में कश्मीर मे भयानक अकाल पडा और तभी हिन्दुओ को जजिया-कर से मुक्ति मिली। इससे पूर्व कश्मीर मिर्जा हैदर के अधीन था जिसने कन्नौज की पराजय के पश्चात् हुमायु की सहायता की थी। उसी के परामर्श तथा अनुज्ञा से मिर्जा हैदर सेना की एक छोटी टुकडी लेकर नवम्बर, १५४० मे कश्मीर आया था

---

१. When Akbar annexed Kashmir, it was being realised from the Hindus and was finally abolished by him.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्ताज़, पृ० २१४-१५।

२. The Zakat (poortax) was collected from the muslims. After the muslim merchant had paid the Zakat he was allowed to cross the frontier Fees were realised for such events as marriages, feasts and festivals.

—वही, पृ० २१५, २१६।

३ The Mughals ashered in an era of expansion, consolidation and construction. The subah of cashmere, records Abul Fazal in the AINE AKBARI, became part and parcel of the vast Mughal empire, and shook off the countries isolation and seclusion.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ३५६।

४. Akbars reign over Kashmir lasted for 19 years. During his reign Kashmir was ruled by four subedars.

—वही, पृ० ३५७।

और बिना किसी सघर्ष के उसने यहा का अधिकार अपने हाथ मे लिया था।[1] वह बाबर का चचेरा भाई था।[2]

जहागीर के समय मे उसके द्वारा नियुक्त किए गए गवर्नर इतिकाद खा ने लोगों पर कुछ अत्याचार किए। इसी प्रकार जब अहमद बेग गवर्नर था तभी सन् १६१५ ईस्वी मे यहा प्लेग की बीमारी फैल गई। कश्मीर घाटी मे लोग हज़ारों की सख्या मे मृत्यु के शिकार हुए।[3]

शाहजहा के सूबेदारो जफर खा तथा अलीमदीन खा ने जन-कल्याण के लिये भरसक प्रयत्न किये। इस बात का उल्लेख मिलता है कि अलीमदनि खा ने अकाल के समय पजाब से गेहूं मगवाया।[4]

औरगजेब का ध्यान कश्मीर के जन-कल्याण की ओर बहुत ही कम गया। भारत की भाति यहा भी हिन्दुओं पर काफी अत्याचार किए गए। वह अन्तिम मुगल शासक था। उसके उत्तराधिकारी अत्यन्त अशक्त थे और तभी सभी अधीन राज्य स्वतत्र हो गए। कश्मीर पर भी इसका प्रभाव पडना अवश्यम्भावी था, किन्तु सूबेदारो को स्वतन्त्रता घोषित करने की आज्ञा न मिली और तभी

---

१. The Mughal emperor whom he accompanied in his fight after the defeat of his forces at the battle of Kanauj. With the consent of Humayun, Mirza Haider entered Kashmir in Nov. 1540 with a small force, and meeting no resistence, took possession of the country.

—कश्मीर, फर्गूसन, पृ० ३५।

२. मध्ययुगीन भारत, पी० सरन, रणजीत प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स, दिल्ली, प्रथमावृत्ति, सन् १९६४ ईस्वी, पृ० ३३४।

३. It was during the governorship of Ahmed Beg in 1615 that an epidemic of plague broke out in a violent form. In a few days thousands of people died in the valley.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ३६४।

४. The subedars of Shah-Jahan, Zafar Khan and Ali Mardan Khan were much considerate and seemed genuinely to have worked for the welfare of the people. It is recorded of Ali Mardan Khan that in a time of famine, he imported grain from the Punjab.

—कश्मीर, फर्गूसन, पृ० ३८-३९।

सन् १७५२ ईस्वी मे कश्मीर पर अफगानो का राज्य स्थापित हो गया ।[१]

इस प्रकार मुगलो के बाद कश्मीर की राजनीतिक स्थिति और भी विप्लवकारी रही । अफगानो का शासन केवल सन् १७५२ ईस्वी से लेकर सन् १८१६ ईस्वी तक रहा । अफगानिस्तान के शासक अहमद शाह दुरानी के समय मे कश्मीर की राजधानी दिल्ली की अपेक्षा काबुल बनी । काबुल से आने वाले गवर्नरो को विदित था कि उनकी निवासावधि सक्षिप्त है अत उन्होने कश्मीरी जनता पर मनमाने अत्याचार करने आरम्भ किये और वे उनके भय से चू तक न कर सके । हिन्दुओ पर पुनः जजिया-कर लगाया गया । असद खा कश्मीरी पण्डितो के हाथो को पीछे से बाधकर डल झील मे डलवा देता था ।[२] अफगान-राज्य के ६७ वर्षों में कश्मीर मे निर्धनता, अपमान तथा गुलामी का दौर-दौरा रहा और तभी किसी कवि ने अपने उद्‌गारो को यों व्यक्त किया है ।

---

१. Aurangzeb who followed Shah-Jahan, was too much occupied elsewhere to give much attention to Kashmir but the persecution of Hindus which characterised his reign in India was also carried on in Kashmir. Aurangzeb was the last of the great Mughal rulers. His successors were weak rulers. The outlying parts of the empire began to declare their independence. This took place also in Kashmir, but the subedhars were not long allowed to enjoy their independence, for in 1752 Kashmir passed under the rule of Afghans.

—कश्मीर, फर्गूसन, पृ० ३९ ।

२. It was under Ahmad Shah Durrani, the ruler of Afganistan, that Kabul replaced Delhi as the centre of authority for Kashmir. The governors sent from Kabul well know that their tenure of office was insecure. In enforcing their authority they were aided by a natural ferocity before which the Kashmir is remained quelled and terrorised. The atrocities of Asad Khan included tying up Pandits by their hands back to back and throwing them into the lake. The hated Jazya, a tax on Hindus, was re-imposed.

—वही, पृ० ३९-४० ।

पुर सीदम अज खराब्ये गुलशन ज बागबान,
फगान कशीद कि अफगा खराब करन्द ।[१]

(मैंने माली से उद्यान के विनाश का कारण पूछा ।

एक लम्बा निःश्वास छोडकर उसने उत्तर दिया कि 'यह सब अफगान-राज की अनुकम्पा है ।')

अन्तिम अफगान गवर्नर ने पठान-सेना रखकर कश्मीर को पददलित किया ।

यगहसबड का कथन है कि अफगानो के पश्चात् राज्यसत्ता लेने वाले सिक्ख इतने बर्बर तथा अत्याचारी नही थे, किन्तु वे अवश्य कठोर तथा असस्कृत स्वामी थे ।[२]

कश्मीर पर रणजीतसिह ने सन् १८१६ ईस्वी मे विजय प्राप्त की । पहला सिक्ख गवर्नर मोतीराम था, जिसने मुस्लिम शासन के परिवर्तन के साथ ही गौवध बन्द करने की आज्ञा दी ।[३] इस काल मे कश्मीर पर कुल दस गवर्नरो ने शासन किया और फिर अग्रेजो ने इसे गुलाबसिह को हस्तान्तरित किया । जब गुलाबसिह महाराजा बनकर नवम्बर ९, १८४६ को श्रीनगर पहुचा, उस समय रियासत की दशा अत्यन्त दयनीय थी ।[४] इस प्रकार डोगरो का राज्य स्थापित हुआ । कश्मीरी-कवि बहाब परे (जन्म अगस्त ८, १८४६)[५] ने तत्कालीन सिक्ख

---

१. I enquired from the gardener the cause of the destruction of the garden, Drawing a deep sigh he replied 'It is Afghans who did it.'

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ३९१ ।

२. 'The Sikhs' observes young husband who succeeded the Afghans were not so barbarically cruel, but they were hard and rough masters.

—कश्मीर, यग हसबड, ए एण्ड सी ब्लैक सोहो सुकाइर, लन्दन (१९१७), पृ० १४२ ।

३. Moti Ram, the first governor, celebrated the change from muslim rule by forbidding the killing of cows.

—फर्गूसन, पृ० ४६ ।

४. On the 9th Nov 1846, Gulab Singh entered Srinagar as its ruler. The country was in a disturbed state.

—कश्मीर, फर्गूसन, पृ० ५५ ।

५. जन्म तिथि के लिये द्रष्टव्य-लेख आधुनिक कश्मीरी कविता-४, हरिकृष्ण कौल, मासिक-पत्रिका 'योजना', वर्ष ५, अक ४-५ (अप्रैल-मई १९६१), पृष्ठ १ ।

तथा डोगरा-शासन की राजनीतिक परिस्थिति का परिचय अत्यन्त करुणाजनक शब्दो मे देते हुए कहा है।

'सअरसिय वरियस सज़ोवुल बैयि शकदर कारदार।
असि व्यथ-च्यथ ग्रीसतिस जानस करान तिम लार-लार।[1]"

(सालभर सज़ावुल, शकदर तथा कारदार नाम के पदाधिकारी हम किसानो के परिश्रम का फल हडप करने के बाद भी हमे सताया करते हैं)

तथा—

"लेखह कअत्याह ज़ुल्म तथ बखतस सितमगर कअत्य अअस्य।
प्रथ सहअस हथ ज्यादह चअपल हून्य आसान सअत्य अअस्य।।[2]"

(कितना परिचय दू उस समय के अत्याचारो का। उस समय हर स्थान पर अत्याचारी दीखते थे। एक सिंह (राजा) के पीछे सौ से अधिक काटने वाले कुत्ते (सरकारी-पदाधिकारी) फिरा करते थे।

इसी प्रकार 'माछ तुलअर' (मधुमक्खी) मे ओवरसियर तथा मुखिया के सतापो मे सतप्त कृषक-पत्नी इन शब्दो मे अपने शोषरण का वर्णन करती है :

'सोन्त यलि मतुसअथी ग्रेस्यतन दिलास दिनि हय आव।
मोट्र्यन कथन एरा बरक ज़ालस वलनअ आय।।[3]

(वसन्त ऋतु मे टैक्स लेने वाले हम कृषको के पास किंचित्-मात्रा सान्त्वना देने आये। मधुर शब्द कहने के अनन्तर उन्होंने अपना स्वार्थ सिद्ध किया किन्तु हमे कष्ट-जाल मे फसा गए।

वहाबखार द्वारा रचित कविता 'माछतुलअर' (मधुमक्खी) में भी इसी प्रकार के शौषरण का चित्ररण हुआ है।[4]

---

१. वहाब परे, मही-उद्-दीन हाजनी, कल्चरल अकादमी, जम्मू व कश्मीर, पृ० २४।

२. वहाब परे, पृ० २६।

३. In the sprıng the tax gatheıers came to the farmers with soft encouragement, wıth sweet words dıd they fill theır bellıes, and enclosed them as ın a net.
हातिम्ज टेल्ज (कश्मीरी स्टोरीज़ एण्ड सागस, सम्पादक सर आर्ल स्टाइन तथा सर जार्ज ग्रियर्सन, लन्दन, जान मर्रे, अलबेमार्ल स्ट्रीट, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित (सन् १९२८ ई०), पृ० ६०।

४. माछतुलरे कर्यो ग्रावाह, कन भावतम वनै दास्तानाह। द्रष्टव्य-कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ३९९।

अमृतसर की सधि (सन् १८४६ ई०) होने के पश्चात् डोगरा राजाओं ने एक नई जागीरदारी-पद्धति को जन्म दिया। देश के कई भागो मे असन्तोष फैल गया। गाव मे पटवारी से लेकर तहसीलदार तक सारे राज्य कर्मचारी अत्याचार तथा लूट-मार करते थे।[१]

सन् १८५७ ई० मे गुलाब सिंह कि मृत्यु के अनन्तर उसका पुत्र रणवीरसिह महाराजा बना। तत्पश्चात् सन् १८८५ ई० मे उसकी मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र प्रतापसिह यहा का महाराजा बना और उसने सन् १९०५ ई० तक राज्य किया। उसने बाढो को रोकने, वितस्ता को गहरा करने तथा बाध आदि बनवाने की कई योजनाए अपनाईं।[२]

इस प्रकार आलोच्यकाल मे कश्मीर की राजनीतिक परिस्थिति अधिकतर ऊहापोहमय तथा अशान्त रही। कई शासको के राज्य-काल मे स्थिति निराशाजनक रही जबकि कतिपय राजाओं के शासन-काल मे जनता को सुखकी सास लेने का अवसर मिला। सुल्तान सिकन्दर चको, जहांगीर, औरगज़ेब तथा अफगानो आदि के समय कश्मीर पर न केवल पाशविक अत्याचार किए गए अपितु प्रकृति के प्रकोप के कारण जनता को दुर्भिक्ष के दुर्दिन भी देखने पडे। जैन-उल-आब्दीन तथा शाहजहा आदि ने जन-कल्याण के लिए भरसक प्रयत्न किए। ऐसे ही समय मे सूफी-सन्तों का आगमन कश्मीर मे हुआ। सूफी-सत बुलबुलशाह से प्रभावित होकर ही रिचन इस्लाम मतावलम्बी बना। अमीर कबीर सैयद अली हमदानी ने तीन बार कश्मीर की यात्रा की। उनके पुत्र सैयद मुहम्मद हमदानी का आगमन भी यहा सुल्तान सिकन्दर के समय मे हुआ। इन सूफ़ी सन्तों द्वारा प्रेम का सदेश सुनाया गया जिससे वहाँ की जनता को सान्त्वना व राहत मिली। इस प्रकार सूफी-सन्तो के लिए कश्मीर की दुखित व पीडित जनता के बीच प्रेम तथा करुणा के प्रसार के लिए पर्याप्त क्षेत्र था।

ख—आलोच्यकाल में भारत की राजनीतिक परिस्थिति

भारत में भी मुसलमानों के आक्रमण का मुख्य उद्देश्य लूट-मार, काफिरों को तग करना और इस देश की अतुल धन-सपत्ति को विदेश ले जाना तथा यहा

---

१. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य-मकबूल क्रालवारी, प्रो० हामदी कश्मीरी, कल्चरल अकादमी, जम्मू व कश्मीर, पृ० ६।

२. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य-तारीख रियासत जम्मू व कश्मीर, पृ०१०५।

के निवासियों को गुलाम बनाना था ।[१] राजनीतिक आधिपत्य जमाने के पश्चात् उनकी भाषा और धर्म का प्रचार भी हुआ और कुछ निरकुश शासको ने तलवार के बल से धर्म का प्रचार किया तथा यहा की राजनीति को उलट-पुलट डालने मे पाशविक बल की सहायता ली ।[२]

मुहम्मद गौरी के पश्चात दिल्ली का शासनाधिकार दास, खिलजी तथा तुगलक आदि वशों के हाथ मे रहा । भारत के इस विशाल भू-भाग पर इन राजाओं ने कई सौ वर्ष तक शासन किया, परन्तु वे किसी भी प्रकार की सुव्यवस्थित शासन-पद्धति स्थिर न कर सके । उन्होने अपनी चित्तवृत्ति के अनुसार राज्य किया और प्रजा को उनकी नीति स्वीकार करनी पडती थी । भारतीय इतिहास मे दास वश के नाम से प्रसिद्ध राजकुल का शासन उसके उत्तराधिकार की अव्यवस्था तथा सेनापति एव अमीरो के पारस्परिक द्वेष के कारण, केवल नाम-मात्र का शासन रहा ।[३]

मुगलो से पूर्व खिलजी तथा तुगलक वश ने सुल्तान की पदवी अपनाई । सभी मुसलमान बादशाहो की तरह खिलजी सुल्तान भी एक बडा साम्राज्य स्थापित करने की चेष्टा करते थे ।[४] अलाउद्दीन के समय मे जजिया भी राज्य की आय का एक मुख्य साधन था । जजिया का मौलिक उद्देश्य यह था कि उसके द्वारा हिन्दुओ आदि विधर्मियो का इतना निरादर व अपमान किया जाये कि वे अपनी हीन-अवस्था से तग आ जाये ।[५] साम्प्रदायिक कर जकात-केवल मुसलमानों से लिया जाता था । आगे चलकर हिंदुस्तान मे जकात हिंदू-मुसलमान दोनो से चुगी, आयात-कर तथा चराई-कर आदि के रूप में वसूल किया जाने लगा । इस्लामी कानून के अनुसार मुसलमानों से आयात कर हिंदुओं की अपेक्षा आधा जाता था ।[६] राज्य मे सुल्तान ही सर्वोच्च न्यायाधीश था[७] । सुल्तानो की

---

१. हिंदी भाषा और साहित्य, श्यामसुदरदास, इडियन प्रेस, प्रयाग, संशोधित सस्करण, संवत् १९९४ वि०, पृ० १७३ ।

२. वही, पृ० १७४ ।

३. जायसी के परवर्ती हिंदी-सूफी कवि और काव्य, डा० सरला शुक्ल, लखनऊ विश्वविद्यालय (स० २०१३ वि०), पृ० १४५ ।

४. मध्ययुगीन भारत, पी सरन पृ० २३६

५. मध्ययुगीन भारत, पी० सरन, पृ० २४३ ।

६. वही, पृ० २४४ ।

७. मध्ययुगीन भारत, पृ० २४५

सेना मे प्रायः हिंदुओ की तथा नव-मुस्लिमों की सख्या बहुत होती थी।[१] गुप्तचर विभाग को अलाउद्दीन ने पूरी तरह परिपक्व किया था और छोटे बड़े गुप्तचर बहुत-बडी सख्या मे नियुक्त किए थे।[२]

खिलजियो के पश्चात तुगलको का दिल्ली पर अधिकार हुआ। गयास-उद्-दीन तुगलक का उत्तराधिकारी मुहम्मद तुगलक ने, जो भारतीय इतिहास मे विक्षिप्त की उपाधि से विभूषित है, शासन-व्यवस्था से धार्मिक नेताओ, मुल्ला, मौलवियो का प्रभाव कम करना चाहा था। उसकी मृत्यु के बाद फीरोज शाह ने फिर कट्टर इस्लाम धर्म के अनुसार ही शासन-व्यवस्था करने का प्रयास किया।[३] कई मौकों पर यह पता चलते ही कि हिन्दू लोग मेलो मे जाने और वहा पर मन्दिरो में पूजा करते है, फीरोजशाह ने या तो अपने आदमी भेजकर या स्वयं जाकर उनके मदिरो को मिस्मार (नष्ट-भ्रष्ट) कराया और उनके नेताओं को पकडवा कर उन सबको कत्ल करवाया तथा बाकी लोगों को भी कडे दण्ड दिए। ब्राह्मणो से भी जजिया वसूल करने की आज्ञा निकाली।[४]

दिल्ली के शासको का सुल्तान की पदवी को अपनाना, राज्य-स्थापना के पश्चात् इस्लाम धर्म का प्रचार करना, राजस्व की आय के लिए हिन्दुओ से कई प्रकार के कर लेना, हिन्दुओ को सैनिक पदाधिकारी बनाना तथा गुप्तचर विभाग को परिपक्व रूप देना आदि कुछ एक ऐसी बाते है जिनका प्रभाव कश्मीर के मुस्लिम-शासको पर पडे बिना न रह सका।

तैमूर के निर्मम अत्याचार से सन् ई० १३९८ मे दिल्ली का शासन आतंकित हो उठा। उसने दिल्ली को खूब लूटा, हज़ारो नगरवासियो को तलवार के घाट उतारा और हज़ारो को पकड कर समरकन्द ले गया।[५] सिन्ध के प्रसिद्ध कवि शाह लतीफ के वशज तैमूर के आक्रमण के साथ भारत आए थे।[६]

बाबर ने दिल्ली पर सन् १५२६ ई० में आधिपत्य जमाया था। हुमायू का सारा समय अशान्ति में ही बीता। शेरशाह (सन् १५४१ ई० से सन् १५५५ ई०

१. वही, पृ० २३७।
२. वही, पृ० २४९।
३. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १४६।
४. मध्ययुगीन भारत, पृ० ३०८, ३०९।
५. वही, पृ० ३१३-३१४।
६. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १४४।

तक) के अल्पकालीन शासन मे भी सुख-शान्ति फैल गई। सुख की स्थापना के साथ-साथ पारस्परिक वैमनस्य भी मिट गया। जब मुसलमान शासकों और सेना-नायको ने देख लिया कि बल-प्रयोग द्वारा इस्लाम का प्रचार बहुत कुछ सभव नही दीखता, तब उस नई परिस्थिति मे उन्हें हिन्दुओं के प्रति अपनी नीति मे परिवर्तन करना पडा। जहा मूर्ति-पूजा के लिए उनके मन में इतनी घृणा थी, वहाँ अब व्यवहार मे उदारता लानी पड़ी। शासन-कार्य मे उन्होने हिन्दुओ की मदद लेनी शुरू की। जज़िया टैक्स वसूल करने के लिए ब्राह्मण नियुक्त किए गए। जज़िया टैक्स केवल उन के लिए था जो मुसलमान नही थे।[1] जायसी इसी काल के सूफी कवि है, जिनके काव्य मे इस सहृदयता का परिचय उपलब्ध होता है।[2]

मुगल सम्राट अकबर की उदार-नीति के कारण धर्म की अपेक्षा राजनीति को ही अधिक महत्व दिया गया। चौदहवी सदी के मध्य मे कश्मीर पर मुसलमानी सत्ता कायम हो गई थी।[3] जब अकबर के राज्य मे 'कश्मीर का सूबा' मुगल-साम्राज्य मे विलीन हुआ, उसके बाद उसमे काबुल और कन्धार शामिल कर लिए गए।[4] कहते है कि अकबर ने तीन बार कश्मीर की यात्रा की थी।[5] जहागीर के समय (सन् १६३० ईस्वी) में भारत मे एक भयानक अकाल पडा। शाहजहा के समय मे कन्धार छिन्न गया और भारत का अग न रहकर ईरान के कब्जे मे चला गया। शाहजहा के उसे पुनः जीतने के तीनो प्रयास असफल रहे।[6] सन् १६५८ ईस्वी मे औरगज़ेब मुगल-साम्राज्य का उत्तराधिकारी बना। उसने राज्याधिकार पाते ही नृशस तथा एक धर्मान्ध शासक की नीति घोषित कर दी। तीर्थ-स्थानो में अनेक सुन्दर मदिर तोडकर मस्जिदे बनने लगी। साम्राज्य के दृढ स्तम्भ राजपूतो पर अविश्वास और उनका अनादर होने लगा। परिणामस्वरूप देश मे अशान्ति व्याप्त हो गई और नई हलचल आरम्भ हो गई।[7] उसकी कट्टर-नीति और अग्रेज़ो की नीति-निपुणता ने शीघ्र ही मुस्लिम

---

१. सूफीमत साधना और साहित्य, प० रामपूजन तिवारी, ज्ञानमण्डल लि०, बनारस, प्रथम सस्करण, पृ० ४१६।
२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १४६।
३. मध्ययुगीन भारत, पृ० ३७६।
४. वही, पृ० ५३७।
५. वही, पृ० ५११।
६. द्रष्टव्य-मध्ययुगीन भारत, पृ० ६३।
७. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० १८४।

राज्य का पतन करा दिया ।[1]

मुगल-साम्राज्य का अग बन जाने पर कश्मीर के सुल्तानो की राजनीतिक स्वतत्रता समाप्त हुई और पार्थक्य मिट जाने पर भारत के साथ उसका सम्बन्ध दृढ हो गया। मुगल-शासको ने कश्मीर की नैसर्गिक सुन्दरता बढाने के लिए अनेक उद्यानो का निर्माण किया। सन् ईस्वी १५८६ में मुगल-शासन हो जाने से दिल्ली की कला का प्रभाव कश्मीरी कला पर पडना स्वाभाविक था।[2] मुगल-शासको ने कश्मीर के ब्राह्मणों का आदर-सत्कार किया और यातायात की कठिनाई दूर हो जाने के कारण उनको भारत में अपनी चातुरी प्रदर्शित करने का भी अत्यधिक अवसर मिला।[3]

कश्मीर के चक, मागरेय तथा डार आदि शासक-वशों से सम्बन्धित पदाधिकारियो को हटा दिया गया और उनके स्थान पर मुगल पदाधिकारी नियुक्त किए गए। स्थानीय सेना को भग कर दिया गया।[4]

औरंगज़ेब की मृत्यु सन् ईस्वी १७०७ मे होने के अनन्तर दिल्ली का केन्द्रीय शासन डावाडोल हो उठा। एक ओर महाराष्ट्र मे मराठो की शक्ति का उदय हुआ और दूसरी ओर पजाब मे सिक्खो का आतंक छा गया। रापूजतो ने मुगलो का साथ छोडना आरम्भ किया। दिल्ली का आधिपत्य अवध तथा बगाल के सूबेदारो ने अस्वीकृत किया और स्वतन्त्र नवाब बन बैठे। उन्होंने कर देना बन्द कर दिया। इसी समय विख्यात आक्रमणकारी नादिरशाह ने दिल्ली को रक्तरजित किया। उसने सम्पूर्ण देश मे आतक फैला दिया। उसके वापस लौट जाने पर मराठों ने सुअवसर पाकर लाहौर तक बढना आरम्भ किया और सारा उत्तरापथ उनके अधिकार मे आ गया। देश मे हिन्दू

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १४६।

२. With the advent of Mughal rule in 1586, Kashmir received the impact of art influences from Delhi.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५२४।

३. The Mughal emperors treated the Brahmans of Kashmir with great respect and with the opening up of the valley, they found a wider field for their talent.

—वही, पृ० ४९३।

४. The Kashmiri ruling families of Chaks, Magreys and Dars, had been replaced by Mughal officers and the local army disbanded.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४२४।

आधिपत्य प्रतिष्ठित होने लगा किन्तु विधि का विधान कुछ और ही था। गौरांग महाप्रभु ने सर्वप्रथम दक्षिण मे व्यापार छोडकर तलवार हाथ मे ली। प्लासी के प्रसिद्ध युद्ध (सन् १७५७ ईस्वी) मे सिराज-उद्-दौला को पराजय मिली और क्लाइव भारत मे ब्रटिश साम्राज्य की नीव डालने मे सफल हुआ। राजनीतिक दृष्टि से उस युद्ध का विशेष महत्त्व है। उसने अग्रेजो की प्रतिष्ठा को उच्च शिखर तक पहुचा दिया। इसके परिणामस्वरूप भारतवर्ष का सबसे धनी प्रान्त उसके प्रभुत्व मे आ गया।[1] मजूमदार आदि विद्वानो ने भी इस युद्ध को महत्व-पूर्ण बताया है।[2] सन् १७६४ ईस्वी मे बक्सर के युद्ध मे मुगल-सम्राट शाह आलम तथा बगाल एव अवध के नवाबों की सम्मिलित सेना को अंग्रेजों ने परास्त किया। जब उनकी इच्छा उत्तरापथ के एक विशालखण्ड पर अधिकार जमाने की थी तभी मराठो के प्रयत्न से शाह आलम दिल्ली के सिंहासन पर आसीन हुआ। उधर से हेस्टिंग्स ने बगाल में अंग्रेजी-शासन को सुदृढ बनाया और अवध को अपने पजे मे ले लिया। उधर से महादा जी सिंधिया के हटने से मराठे शक्तिहीन हुए और उत्तर-भारत मे उनकी शक्ति लार्ड वेलजेली के समय मे खण्डित हो गई। इतने मे ही सिक्खो ने रणजीतसिंह के नेतृत्व मे सघटित होना आरम्भ किया।

इस प्रकार कश्मीर सन् १८१९ ईस्वी में रणजीतसिंह के अधीन हुआ और पेशावर तक के प्रान्त उसके अधिकार मे आए। दिल्ली की इस राजनी-तिक उथल-पुथल से कश्मीर बच न पाया और कश्मीर मे सिक्खो का शासन सन् ईस्वी १८१९ तक चलता रहा। सिक्ख-साम्राज्य के अन्त हो जाने पर ब्रह्मपुत्र तथा सिन्ध नदियो के बीच का विशाल उत्तर भारत अंग्रेजो के हाथ मे आया।

देशी राजाओ के प्रति अंग्रेजों की नीति और ईसाई मत के प्रचार का फल यह हुआ कि सन् १८५७ ईस्वी मे भारतीयो की ओर से प्रबल विद्रोह की आग धधक उठी, परन्तु सघटन के अभाव और शक्ति की विशृंखलता के कारण विद्रोह सफल न हो सका। परिणामस्वरूप सन् १८५८ ईस्वी मे भारत ब्रिटिश

---

१ आधुनिक भारत (सन् १७४० ईस्वी—सन् १९४७ ईस्वी), डा० ईश्वरी प्रसाद, इडियन प्रेस, प्रयाग, (१९५०), पृ० ३९।

२ The battle of Plassey was, however, great turning point, not only in the political but also in the economic history of Bengal.

—एन एडवान्सड हिस्ट्री आफ इण्डिया, मजूमदार, रायचौधरी, कालीककर दत्त, (तृतीय भाग, सन् १९६० ई०) मैकमिलन एण्ड क०, न्यूयार्क, पृ० ८०६।

साम्राज्य मे मिला लिया गया और कपनी का राज्य उठ गया। उत्तरी और दक्षिणी भारत का भेद मिट गया और सारे देश मे एक प्रकार की शासन-नीति काम मे लाई जाने लगी।[१]

ग—राजनीतिक परिस्थितिः तुलना

सतत आक्रमण तथा आभ्यतरिक सघर्ष एव विश्रृखलता के कारण ही मुसलमानो की राज्य-स्थापना कश्मीर तथा भारत मे हुई। राज्य-प्राप्ति के पश्चात् इस्लाम का प्रचार ही उनका मुख्य उद्देश्य रहा। सन् ईस्वी १५८६ मे मुगल-राज्य मे सम्मिलित होने से पूर्व कश्मीर की अपनी स्वतन्त्र राजनीतिक सत्ता थी, वह पर्याप्त रूप मे स्वावलम्बी था।[२] यहा के सुल्तान दिल्ली के सुल्तानो के अधीन न थे। उनके पास सुरक्षा के लिये अपनी सेना भी थी। दिल्ली के सुल्तानो से वे यदा-कदा टक्कर भी लेते थे। वे उन्हीं की भाति ही हिन्दुओ पर जजिया कर लगाकर राजस्व की आय मे वृद्धि किया करते थे। दोनों स्थानो के सुल्तान धर्मान्ध थे यद्यपि उनमें से कुछ-एक मे धार्मिक-सहिष्णुता तथा उदारता के दर्शन होते है। इस्लाम मतावलम्बी होने पर भी उन्होने प्रायः हिन्दुओं को ही सैनिक पदाधिकारी बनाया था। दोनो ने अपने ज्ञान के लिये गुप्तचर विभाग को अत्यन्त सुदृढ रूप प्रदान किया था। स्वतन्त्र सत्ता होने पर भी कश्मीर के सुल्तान न केवल दिल्ली के सुल्तानो अपितु अपने पडोसियो से भी मैत्रीपूर्ण सबन्ध स्थापित करना चाहते थे, इसीलिये सुल्तान जैन-उल-आब्दीन ने अपने राजदूतो को उचित उपहार समेत खुरासान, तुर्की, मिश्र तथा दिल्ली भेजा था। भारत के साथ सम्बन्ध होने पर कश्मीर का भारतीय प्रभाव से अछूता रहना असम्भव था। तैमूर के आतक और आक्रमण के कारण कश्मीर तथा भारत दोनो स्थानो पर सूफी-संत पधारे थे।

मुगलों के आने से यहा का पार्थक्य मिट गया तथा स्थानीय सेना भग कर दी गयी। भारतीय प्रभाव यहा की कला के विभिन्न अगो पर पडने लगा। यहा जितने अकाल पड़े, मुगलों ने उसी समय जन-कल्याण के हितार्थ उनके दैन्य एव पीडन को मिटाने के लिए पर्याप्त सहायता दी तथा भारत से भी गेहूं भेजते

---

१. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० १८६।

२. The political isolation of Kashmir extending for centuries was, however, broken by the Mughal Conquest of the valley in 1586. Before that, Kashmir was an independent Kingdom self sufficient to a great extent.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४२६।

रहे। अंग्रेजो के विजयी होने पर उत्तरी तथा दक्षिणी भारत का सारा भेद मिट गया। कश्मीर गुलाब सिंह को हस्तातरित किया गया[1] और उस पर डोगरा शासन स्थापित हुआ।

कश्मीर की तटस्थता के हटने के साथ-साथ भारत के समीपवर्ती प्रान्तो की कथा-कहानियो, साहित्यिक परम्पराओं तथा कवियो का भी आदान-प्रदान आरम्भ हुआ। फलस्वरूप जिस प्रकार हिन्दू पण्डित एव विद्वान कश्मीर से इस मुस्लिम और परवर्ती अंग्रेजो के शासन-काल मे भी भारत मे जाते रहे, उसी प्रकार भारत के अन्य भागो से भी कवि, विद्वान तथा सूफी-सन्त कश्मीर मे पधारने लगे। इस प्रकार सास्कृतिक आदान-प्रदान उसी प्रकार पुनः आरम्भ हो गया जैसा प्राचीन भारत में था।

---

१. द्रष्टव्य-कशीर, द्वितीय भाग, पृ० ७६५।

(२) आलोच्यकाल की सामाजिक परिस्थिति

क—आलोच्यकाल में कश्मीर की सामाजिक परिस्थिति

शक्तिशाली जमीदारो तथा राजाओ के पारस्परिक सघर्ष के समय जब कश्मीर मे इस्लाम-धर्म का स्वागत हो रहा था, उस समय इन राजनीतिक परिस्थितियो के अतर्गत जन-साधारण की दशा अत्यन्त दयनीय एव करुणाजनक थी। राजाओ तथा जमीदारो के कारिन्दो द्वारा दिये गये असहनीय दुःख को सहन करने के अतिरिक्त जनता के पास और कोई चारा ही नही था। इसके परिणाम-स्वरूप सुव्यवस्थित खेती न होने के कारण भूमि बजर पडने लगी तथा जनता का सामान्य व्यापार भी ठप्प पड गया। उसका जीवन नीरस बन गया। प्रकृति के प्रकोप को वह उत्तरोत्तर पडने वाले अकाल, अग्निकाण्ड तथा भूकम्प आदि के रूप मे सहन करती रही जिनसे उसकी दशा निम्नतर होती चली गई। परम्परागत चली आने वाली सामाजिक रूढियो तथा राजनीतिक ढाचे से मुक्ति प्राप्त करने के लिए वह छटपटाती रहती थी। वह आकुल थी किसी भी ऐसे परिवर्तन का स्वागत करने के लिए जो उन मे पुनः आत्म-विश्वास भर सके[१]। महमूद गजनवी के

---

१. Under such a chaotic political conditions the fate of the common man was all but happy. He had to suffer from the repacities of the agents of the kings as well as those of the lords. His land remained uncultivated, he could not safely conduct his business and his very life was crushed out of him. Added to these were the natural calamities that came in quick succession, famine, earthquake and fires, which further reduced him to the abject position. Any departure, therefore, from his traditional but outdated social customs and political set up, which even a smallest measure, restored his confidence, was welcome to him.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० २८६-२८७।

असफल आक्रमण के पूरे तीन-सौ-पाच वर्ष पश्चात् जब कश्मीर के राजा इस्लाम मतावलम्बी बने, उस समय भी ब्राह्मण ऊचे पदो पर आसीन रहे, अतः उन्हे धर्म-परिवर्तन मे कोई लाभ प्रतीत नही हुआ।[१]

शाहमीर अथवा सुल्तान शम्स-उद्-दीन मे पूर्व कश्मीर की शक्ति को डुलचु के आक्रमण ने अस्त-व्यस्त किया था, अत. सर्व प्रथम उसने शान्ति-स्थापना के लिए प्रयत्न किये। अपने राज्य के अल्पकालीन तीन वर्षो मे उसने जनसाधारण की सामाजिक दशा को सुधारने के लिए महान प्रयास किये। उसके अनन्तर सुल्तान शहाब-उद्-दीन भी हिन्दुओ के प्रति काफी उदार रहा। चौदहवी शताब्दी के उत्तरार्ध मे कश्मीर मे इस्लाम के प्रसार पश्चात् लोक जीवन पर भारी प्रभाव पडा। पर्शिया तथा तुर्किस्तान के साथ उसके सबन्धो मे वृद्धि हुई और उन देशो से भारी सख्या मे मुसलमान आए जिन्होने यहा सामाजिक परिवर्तन लाने में पर्याप्त सहयोग दिया। फलतः इस्लाम के प्रचार एव प्रसार के कारण ब्राह्मणों की स्थिति तथा प्रभाव मे अन्तर पडने लगा और उनका स्थान सैयदों, उलेमाओ, पीरो तथा अन्य मुस्लिम धार्मिक-सम्प्रदायो ने ग्रहण किया।[२] ये सैयद सुल्तान शहाब-उद्-दीन के समय मे कश्मीर आए थे। स्वय अनपढ होने पर भी सुल्तान सिकन्दर ने विद्वानो का आदर-सत्कार किया। इस्लाम-धर्म का कट्टर अनुयायी होने के कारण उसने कश्मीर मे जुआ खेलना बन्द किया और नाच-गान तथा वाद्य-यन्त्रो का बजाना भी वर्जित घोषित किया। सभवतः वह प्रथम

---

१. Exactly three hundred and five years after Mahmud Ghazani's unsuccessful invasion, Islam attained the status of state religion in Kashmir. The administration remained as before in the hands if the traditional class, the Brahmans, for whom a change of religion presented no advantage.
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० २८८-२८९।

२ The spread of Islam in the Kashmir from the latter half of the fourteenth century onwards broght about a great transformation in the life of the People. The cultural contacts that were established with Persia and Turkistan and the influx of a large number of Muslims from those countries also affected profound social change. With the spread of Islam, the status and influence of the Brahmans gradually declined, for their place was taken by Sayyids, Ulema, Pirs and other groups among the Muslims.
—कश्मीर अण्डर दि सुल्ताज, पृ० २१९।

भारतीय राजा है जिसने हिन्दुओं मे प्रचलित सती-प्रथा को यहा बन्द करवा दिया।[१]

सुल्तान जैन-उल-आब्दीन को पादशाह महान् शासक की पदवी से विभूषित किया गया था। उसकी प्रशसा इस बात के लिए भी की जा सकती है कि उसने प्रत्येक वर्ग के साथ समता एव न्याय का व्यवहार करके लोगो की भौतिक समृद्धि मे काफी योगदान किया।[२]

कश्मीर मे प्रविष्ट सूफी-सन्त जनसाधारण मे विविध जातियो के मध्य विद्यमान खाई को पाटने मे महान् सहयोग प्रदान करते रहे, किन्तु आर्थिक तथा आचार-सम्बन्धी विभिन्नताओं के कारण उनका वास्तविक सामाजिक समता का उद्देश्य पूरा न हो सका।[३] ये सूफी-सन्त साधारण जीवन व्यतीत करते थे और जन-साधारण एव उनकी समस्याओ के समाधानार्थ ससार से सन्यास नही लेते थे। कुछ तो ग्रहस्थी होते थे और जाति के उन्नयत मे ही विश्वास रखतेथे। अत्यन्त निर्मल एव पवित्र जीवन व्यतीत करने के कारण साधारण जनता उन्हे आदर की दृष्टि से देखतो थी।[४] वृक्ष लगाना, पुलो का निर्माण करना, मार्ग

---

१. Althogh Sikandar does not seem to have been a well read man, he patronised literary men. He seems to have been a puritan and prohibited gambling, dancing and Playing of musical instruments. Sikandar is perhaps the first Indian King to have abolished the custom of Sati among Hindus.
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० २९७।

२. He ruled with such equality and justice and did so much to improve the material prosperity of the people that we cannot fail to admire him.
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० २९९।

३. The sufis tried to bridge the gulf between the different classes, but, owing to the economic disparities and functional differences, real social equality could not by achieved.
—कश्मीर अण्डर दि सुल्ताज़, पृ० २१९।

४. The led a life of simplicity, but they did not announce the world or isolate themselves from the people and their problems. On the Contrary, most of them led a normal life, had wives and children, and took an active interest in the affairs of the Community.
—कश्मीर अण्डर दी सुल्ताज़, पृ० २२२।

समतल बनाना तथा अकिंचनों की सेवा करना उनका परम उद्देश्य था।[१] इन सूफियो का प्रभाव सुल्तानो पर भी पडा था। ऐसा कहा गया है कि सुल्तान जैन-उल-आब्दीन के समय तक अधिकतर हिन्दुओ ने इस्लाम-धर्म ग्रहण कर लिया था। निम्न वर्गों मे चाण्डाल, डोम्ब तथा चमारो की गणना होती थी।[२] वे प्रहरी हुआ करते थे तथा युद्ध मे मरे हुए शवो अथवा मृत्यु-दण्ड पाने वालो को उठाने का नीच-कर्म भी किया करते थे।[३] कश्मीर मे दास-प्रथा नही थी क्योंकि यहा के लोग उसे घृणा की दृष्टि से देखते थे।

कश्मीर मे बडे-बडे जमींदार और जागीरदार अशक्त एव निर्बल सुल्तानो के समय में विद्रोह किया करते थे। हिन्दुओं तथा मुसलमानो मे कभी-कभी झगडे भी आरम्भ हुए जिससे यहा की शान्ति तथा समृद्धि को पर्याप्त क्षति पहुची।[४] केवल सुल्तान जैन उल-आब्दीन ही ऐसा अपवाद था जिसने नि शुल्क उच्च शिक्षा, खान-पान तथा पुस्तको को मुफ्त दिये जाने का प्रबन्ध किया। उसने हिन्दू-मुसलमान एव सबके लिए उन्नति के मार्ग खोले।[५] सुल्तानों के समय के अन्तर्जातीय विवाह-प्रथा के कुछ उदाहरण भी उपलब्ध होते है[६]

उसके शासन के अनन्तर कश्मीर मे साम्प्रदायिक झगडो ने फिर से सिर उठाया।[७] मुगल-काल मे लोगो पर तरह-तरह के कर लगा दिए गए जिनसे उनकी आर्थिक-अवस्था शोचनीय बन गई।[८] मिर्जा हैदर की तारीख-रशीदी,

---

१. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य, तारीख रियासत जम्मू व कश्मीर, पृ० ४५।

२. Originally Hindus, all of them had become Muslims by the time of Zain-ul-Abdin. At the lowest rung of ladder stood the chandals, dombas and chamars.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्तान्ज़, पृ० २२६।

३ They acted as watchmen and performed menial jobs like the removal of dead bodies of persons executed, or killed in war.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४३२।

४. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य, तारीख रियासत जम्मू व कश्मीर, पृ० ४०।

५. वही, पृ० २३।

६. We have instances of Inter marriages among Hindus and Muslims.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४६८।

७. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य, कअशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० ६६।

८. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य, तारीख रियासत जम्मू व कश्मीर, पृ ६०।

भाग २, रचना-काल सन् १५४३ ई० के अध्ययन से कश्मीर की जिस तत्कालीन सामाजिक दशा का चित्रण मिलता है, उससे केवल उच्चवर्ग तथा निम्न-वर्ग के अन्तर का आभास स्पष्टतया झलकता है। उसका कथन है कि श्रीनगर के आवास तथा भवन उच्च एव विशाल हैं। उनकी प्रत्येक मजिल मे विनिर्मित अन्तःपुर, बडे कमरे, बरामदे तथा मीनार इतने सुन्दर है कि प्रथम बार उनका दर्शन करते ही लोग चकित होकर प्रशसा से दातों तले अपनी अगुली दबाते है।[१] दातो तले अगुली दबाने वाले जन-साधारण के ये लोग कितनी दयनीय अवस्था मे रहे होगे, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। शराब पीने की प्रथा भी लोगो मे थी यद्यपि धार्मिक प्राणी उसे घृणा की दृष्टि से देखते थे।[२]

अफगानो तथा सिक्खो के शासन-काल मे कश्मीरी जनता पर बड़े अत्याचार हुए और वे भौतिक सुखो से वचित रखे गए।[३] इसके साथ ही लारेंस महोदय का कथन है कि पठानों के पतन को देखकर कश्मीर के सभी वर्गों ने सुख की साँस ली होगी। अधिक सुख किसानो ने अनुभव किया होगा, जिनका शोषण काबुल के लुटेरे सरदारो द्वारा होता रहा। मेरा सुझाव देने का यह तात्पर्य नही कि सिक्ख-शासन सुखप्रद अथवा अच्छा था, किन्तु प्रत्येक रूप में वह पठानो के शासन से उत्तम था।[४] सन् १८३६ ई० मे कश्मीर का पर्यटन करने वाले

---

१ The Houses and Buildings of Srinagar; Mirza continues, 'are high and extensive, each floor containing apartments, halls, galleries and towers, and their beauty is such that all who behold them for the first time, bite the finger of astonishment with the teeth of admiration'.

—कश्मीर, फर्गूसन, पृ० ३६।

२ Drinking of wine was popular although it was frowned upon by the Orthodox.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्ताज, पृ० २३०।

३. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य, तारीख रियासत जम्मू व कश्मीर, पृ० ८८।

४ 'It must have been' writes S Walter Lawrence, an intense relief to all classes in Kashmir to see downfall of the evil rule of the Pathans, and to the none was the relief greater than to the peasants, who had been cruelly fleeced by the rapacious sirdars of Kabul I do not mean to suggest that the Sikh rule was besign or good, but it was at any rate better than that of the Pathans.

—वैली आफ कश्मीर, लारेंस, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लदन (१८६५), पृ० १६८।

बी वी. ह्यूगल महोदय के कथनानुसार कश्मीर के सर्वप्रथम शासको ने जनता पर अमानुषिक अत्याचार करके उन्हे दण्ड दिया। किसी छोटे से दोष के दण्डस्वरूप उनके नाक-कान काट दिए जाते थे। अब कश्मीरी जनता पूर्व की अपेक्षा तुलानात्मक द्रष्टि मे उदार सरकार के कारण कुछ सतुष्ट थी।[१] महाराजा रणजीतसिंह के पुत्र शेरसिंह के कश्मीर मे गवर्धर होने के समय सन् १८३२ ई० मे एक भारी अकाल पडा जिसने कई लोग भूख मे मर गए और हजारो की सख्या मे वे पजाब की ओर भाग गए। यहां की जनसख्या आठ लाख से गिरकर केवल दो लाख रह गई।[२] कश्मीर मे समय-समय पर पड़ने वाले अकाल प्रकृति के प्रकोप ही माने जाते रहे।

सिक्ख-शासन के समय कश्मीर में जनसख्या तीन वर्गो मे विभक्त थी—पहला उच्च वर्ग, दूसरा मध्यम वर्ग तथा तीसरा निम्नवर्ग। धर्म-निरपेक्षिता के आधार पर उच्च-वर्ग मे सिक्ख सरदार, पूजीपति तथा कश्मीरी पण्डितो के कुछ परिवार थे। शेष कश्मीरी पण्डित साधारणतया मध्य-वर्ग मे सम्बन्ध रखते थे। निम्न-वर्ग मे कृषक तथा कुशल-अकुशल दोनो प्रकार के मजदूर थे।[३] इस समय तक जनता का ९/१० भाग मुसलमान बन चुका था। खाद्यान्नो मे साधारण जनता कम मात्रा में उत्पन्न होने वाले चावल के अतिरिक्त सिंघाडे का भी प्रयोग

---

१. The dreadful cruelties perpetrated by their earlier rules who, for the smallest offense, punished them into the loss of their noses and ears, make the poor Kashmirs well satisfied with their present comparatively mild government.
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५७३।

२. Thousands of people died from starvation and thousands migrated to the Punjab. The population of the valley was reduced from eight to two lakhs.
—वही, पृ० ५६८।

३. During the Sikh period there appear to have existed three classes of population—the upper, the middle and the lower. The upper class, irrespective of religion, was composed of Sikh sirdars, the wealthy Kar Khandars or Capitalists, and some families of the Kashmiri Pandits. Kashmiri Pandits in general formed the middle class while the lower class was formed of the peasantry, the skilled and unskilled labourers.
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५७५।

करती थी।[१] अपने निम्न जीवन-स्तर के कारण वास्तव मे लोगो की पोशाक तथा आवास सहित उनकी उपयोग की जाने वाली प्रत्येक वस्तु की उपलब्धि असन्तोषजनक थी।[२]

सुल्तान जैन-उल-आब्दीन के समय से जो बेगार की प्रथा प्रचलित थी, उसे रणजीत सिंह ने समाप्त किया किन्तु डोगरा-शासन में उसका प्रचार पुनः बढा। कवि वहाब परे (अगस्त ८, १८४६-सन् १९०९ ई०)[३] ने समकालीन सामाजिक दशा का चित्रण करते हुए कहा है कि जबरी कार्य लिए जाने के अत्याचार का क्या कहना, बेचारे कृषक गधो की भाति वर्ष-भर हाके जाते थे।[४] प्रत्येक प्राणी बिना भीतरी सफेद वस्त्र (पोछ) के मुनल का फ्यरन (एक लम्बा जामा) पहनता था। भीतरी सफेद वस्त्र का प्रयोग कुछ ही भाग्यशाली अफसर कर लेते थे।[५] प्रो० मही-उद्-दीन हाजनी का कथन है कि सन् १९०३ ई० की बाढ ने कश्मीर की दुर्दशा कर दी।[६]

हर्ष से पूर्व कश्मीर मे रेशमी वस्त्रो तथा पगडी का प्रचार था। 'बद्ध-पट्टान्व्यधात्' शब्द से उनके रेशमी कपडे पहने जाने की बात सिद्ध होती है।[७] पगडी के विषय मे कल्हण का कथन है कि हर्ष से पूर्व सभाभवन मे जगमगाने वाले अगणित दीपको की दीप्ति एव सभासदो की साफ-सुथरी पगडियो से वह

---

१. On account of the general low standard of life and the small production of rice, another principal article of food of the common people was the singhara.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर पृ० ५७९।

२. The dress of the people, their dwellings, in fact, their every article of necessity were far from desirable.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५८६।

३. प्रो० मही-उद्-दीन हाजनी के कथनानुसार कवि वहाब परे ने त्रेसठ वर्ष की आयु भोगी। कवि के निधन-काल के लिए द्रष्टव्य—वहाब परे, पृ० ६१।

४. कारह् बेगा रुक वने क्या ओस आसान शौर व शर,
ग्रीस्य पालआनी लदिथ वरीयस पियेठ्यन बन्द बअर खर

—वहाब परे, पृ० २६।

५. "पोछ रोम्तुय ओस हर कअसि मुनल आसान फ्यरन,
ओंस कअशुर पोछ बाजे अफसरन बख्तावरन।"—वही, पृ० २८।

६. वही, पृ० १०।

७. राजतरंगिणी, कल्हण, अनुवादक एवं सपादक, पांडेय रामतेज शास्त्री, पण्डित पुस्तकालय, काशी (सन् ई० १९६०), पृ० १५६।

राजसभा फणमण्डल पर चमकते हुए मणियो से शोभायमान् शेष-शय्या सरीखी दीखती थी।[१] स्वय हर्ष भी बहुत ऊची पगडी बाधता था जिस पर ऊचा मुकुट बधा रहता था।[२] स्पष्ट है कि हर्ष (राज्य-काल १०८६-११०१)[३] से पूर्व और उसके समय मे रेशमी वस्त्रो तथा पगडी का प्रचार बढ गया था। फ्यरन (एक लम्बा-जामा) पहनने की प्रथा कश्मीर मे सूफी-सन्तो तथा मुस्लिम धर्मावलम्बियो के प्रवेश से ही आरम्भ हुई थी जिसको वे अपने साथ फारस तथा मध्य-एशिया से लाये थे।[४] डोगरा-शासन तक पतलून का रिवाज चल पड़ा।[५]

चौदहवी शताब्दी के मध्य मे कश्मीर मे मुस्लिम-शासन के स्थापित होने के समय समाज मे नारियो की स्थिति मे कोई अन्तर नही आया : धीरे धीरे उच्च-वर्ग की स्त्रियो मे पर्दा डालने की प्रथा प्रचलित हुई तथा उन्होने पुरुषो से पृथक् रहने की प्रधानता दी।[६] ग्रामीण तथा नगरो मे रहने वाली स्त्रियो को घर की चारदीवारी मे रहना पसन्द नही आया अत वे बिना पर्दा डाले बाहर घूमती थी तथा खेतो मे, उद्यानो मे तथा घाटो पर अपने पति की सहायता करने मे दत्तचित्त रहती थी। उच्च घरानों की स्त्रिया शिक्षित होती थी किन्तु निम्न वर्गों की स्त्रिया अशिक्षित ही रहती थी। उनके विवाह का प्रबन्ध माता-पिता

---

१ विबभौ धवलोष्णीषा सभा दीप प्रभोज्ज्वला।
शेषशय्येव मणिभि· कृतालोका फणोद्भवे।—वही, पृ० १५०।

२. उत्तुगमुकुटानद्धविकटोष्णीषमण्डलः—वही, पृ० १४६।

३ द्रष्टव्य—ए हिस्ट्री आफ सम्कृत लिट्रेचर, ए० बी० कीथ, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, प्रथम सस्करण (१६२०), पृ० २३३।

४. With the coming of the Sufi saints and Muslim theologians from Persia and Central Asia, Kashmiris adopted the long robe.

—किंग्स आफ कश्मीर, पृ० २०७।

५ वओन्य छु दर कश्मीर पतलूनन बेयि कोठन रिवाज—मासिक-पत्रिका 'योजना' लेख 'आधुनिक कश्मीरी कविता-४' अप्रैल-मई १६६१ अंक, पृ० ३।

६ The advent of Muslim rule towards the middle of the 14th century did not produce an immediate change in the position of women in society. Slowly the purdah or seclusion of women became a common practice among the upper classes.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४६७।

द्वारा होता था। एक पति कई पत्नियो को रख सकता था।[१] कश्मीर की नारियो की सामाजिक दशा प्राय: फारस, तुर्किस्तान तथा भारत की नारियो के समान ही रही।[२]

आलोच्यकाल मे कश्मीर की सामाजिक-स्थिति एक जैसी रही। जमीदारो तथा जागीरदारो का सघर्ष अथ से इति तक चलता रहा। सूफी-सन्तों का प्रभाव सुल्तानो पर पडा किन्तु राजनीतिक उथल-पुथल व प्रभु-सत्ता के प्रति वे अधिकतर उदासीन ही रहे। अफगानो तथा सिक्खो के शासन-काल मे जनता भौतिक सुखों से वचित रही और उन्हे आर्थिक सुविधाए सुलभ न हो सकी। सामाजिक उत्थान का कार्य मदगति से होता रहा और समाज की निम्न स्तरीय जातियो को उपेक्षा की दृष्टि से देखा गया। सुल्तानो के समय मे ही व्यापार मे कई बाधाए समुपस्थित हुई और लोग सामाजिक रूढियो से मुक्ति पाने के लिये छटपटाते थे। इसके विपरीत भारत मे भौतिक सुखो तथा आर्थिक-समृद्धि के लिये सघर्ष चलता रहा और सन् १८३३ ई० के अनन्तर उन्हे देश के न्याय एव शासन का कुछ भाग दिया गया। सामाजिक अव्यवस्था के सुधार के कारण भी वहां नई चेतना एव जातीय जागरण का प्रादुर्भाव हुआ।

ख—आलोच्यकाल में भारत की सामाजिक परिस्थिति

सातवी शताब्दी तक भारत मे प्राचीन-काल की भाति मुख्यतया चार वर्ण थे।[३] राजपूतो के उत्थान-काल मे उस समय के प्रसिद्ध मुसलमान इतिहास-लेखक अलबैरूनी के अनुसार भारतवर्ष मे कश्मीर दिल्ली, सिन्ध, मालवा तथा कन्नौज आदि प्रसिद्ध राज्य स्थापित थे। समाज मे गोत्र, प्रवर आदि के अनुसार जाति-पाति के झगडे बढ रहे थे। चार वर्णों के स्थान पर अनेक उपजातिया हो गई थी जो परस्पर खान-पान और विचार आदि का सम्बन्ध नही रखती थी। बाल-विवाह की प्रथा थी, पर विधवा-विवाह का निषेध था। ब्राह्मण मद्यप नही थे। अन्त्यज आठ प्रकार के होते थे जिन मे पारस्परिक विवाह-

---

१. As regards education it seems to have been widely spread among the well to do ladies. The women of the lower classes, however were illiterate Marriages were arranged, as at present, by parents. Polygemy was practised.
—कश्मीर अण्डर दि सुल्तान्ज, पृ० २२७।

२. The position of women was the same as that of their sisters in Persia, Turkistan and India.
—कश्मीर अण्डर दी सुल्तांज, पृ० २२७।

३. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १४६।

सम्बन्ध होता था ।[१] इन अन्त्यजों मे धोबी, जुलाहे और चिडीमारों की भी गणना थी ।[२] उच्च-वर्ण इन्हे घृणा की दृष्टि से देखते थे, पर इस्लाम-धर्म के साथ-साथ समानता के सिद्धान्त का प्रचार हुआ और अन्त्यजो के प्रति उच्च वर्णों के व्यवहार मे भी परिवर्तन हुआ ।[३] ह्वेन्त्साग ने चार वर्णों के अतिरिक्त अन्य अनेक जातियो का वर्णन किया है । उसके अनुसार जन-समुदाय ने सुविधानुसार अनेक जातिया बना ली। इनकी सख्या अधिक थी तथा उनकी गणना चातुर्वर्ण्य के अन्तर्गत नही होती थी । गावो के बाहर रहने वाले कसाई, मछुआ, फासी देने वाले तथा मेहतर आदि को बलपूर्वक नगर से बाहर ही रखा जाता था । शूद्र वर्ण के अत्यधिक तिरस्कार के कारण उसमे विरोध की भावना उदय हुई ।[४]

मुसलमान अपने आक्रमण के समय ही अपने साथ भिन्न सामाजिक व्यवस्था तथा सस्कृति ले आये थे । हिन्दुओ को विजेता यवन नीची निगाह से देखते और उनका तिरस्कार करते थे । उच्च सरकारी पदो पर वे बहुत कम लिये जाते थे । हिन्दुओ का जान-माल तक अनिश्चित था । उनके साथ यवन-शासको की बहुत सहानुभूति थी । जीवन मे उन्हे सहारा ही किसका था ? वे शक्तिहीन तथा असघटित थे । यदि उन्हे कुछ आशा रह गई थी तो वह केवल लोकपालक, असुर-विनाशक, भक्तिभयहारी ईश्वर की अमोघ शक्ति-मात्र थी ।[५]

हिन्दू समाज के स्थूल रूप से इस समय तीन वर्ग हो गए ।

(१) राजन्य एव धनिक वर्ग, जो अपने रहन-सहन मे सुल्तानो की जीवन-चर्चा से प्रभावित था । भोग-विलास, ऐश्वर्य तथा वैभव में मग्न यह वर्ग चिन्ता विमुक्त था । अपने आश्रितो की इन्हे चिन्ता न थी । (२) साधारण जनवर्ग जो कारणवश मुस्लिम-समाज मे दीक्षित होने को बाध्य हो रहा था, कभी समाज मे उच्च स्थान पाने के लिये, कभी जजिया या राजदण्ड से मुक्त होने के लिये, कभी शासनाधिकार लिप्सा और कभी राजभय के कारण ये धन और बुद्धि से हीन, अपने समाज की रूढियो से त्रस्त प्राणी परधर्म भयावह होते हुए भी उसे अपनाने को बाध्य हो रहे थे । (३) तीसरे वर्ग मे वे पण्डित थे जो समाज की विश्रृखलता से भली-भांति परिचित थे और जाति-पांति, कर्मकाण्ड

---

१. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० १७६ ।
२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १५० ।
३. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० १७६ ।
४. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफ़ी कवि और काव्य, पृ० १५०-१५१ ।
५. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० १७८ ।

आदि की रूढिवादिता के दुष्परिणामो को समझ चुके थे। इनका प्रयास एक ओर तो इस विश्रृखलता एव स्तरहीनता की निन्दा करके समाज को उधर से विमुख करना था और दूसरी ओर पूजोपासना के क्षेत्र मे 'हरिभक्त' की कसौटी रखकर मनुष्य मे समानता स्थापित करना था।[१]

कट्टरता, धर्मान्धता तथा कुरीतियो के सघर्ष मे जिन सूफी-सन्तो का आविर्भाव हुआ उनका सम्बन्ध हिन्दू तथा मुसलमान दोनो समाजो से था। इस समय उलेमाओ का प्रभाव अधिक था। वे भारतीय सतो और धार्मिक व्यक्तियो का विरोध करते थे, तथा पूजोपासना की स्वतन्त्रता अपहरण करने के लिये सुल्तानो को प्रोत्साहित करते थे।[२] कट्टरपथी उलेमाओ, काजियो और मुल्लाओ के प्रतिकूल सूफी-साधक अत्यन्त उदार थे। इनकी भावधारा का आधार इश्क या प्रेम था। हृदय के धनी इन सूफियो का प्रभाव सामान्य जनता पर अधिक था।[३] आभिजात्य वर्ग इस प्रकार के साधुओ के ससर्ग मे अधिक नही आया। साधारण निम्नतर जातियो पर सूफियो का प्रचुर प्रभाव था, वैसे कुछ सूफियो का प्रभाव सुल्तानो पर भी था।[४] कश्मीर मे भी इन सूफी-सतो का अधिक मान-सम्मान इसी प्रकार था।

मुस्लिम-समाज मे हिन्दुओ का इतनी सख्या मे परिवर्तित होने के दो प्रधान कारण थे। एक तो हिन्दू-समाज के निम्न-स्तरीय समाज की शौचनीय अवस्था, और दूसरे इन सूफी-सतो की प्रेम-साधना। हिन्दू-समाज का निम्नतर व्यक्ति भी इस्लाम ग्रहण कर लेने के पश्चात् सभ्य समाज का सदस्य बन जाता था।[५] धन का ऊच-नीच की भावना मे ऊचा स्थान था। गावों का जीवन अपेक्षाकृत शान्तिपूर्ण था किन्तु कर, लगान और आर्थिक दीनता के कारण सदैव निराशा और दैन्य का परिचय मिलता है।

उत्तर मध्यकाल मे बगाल की दोहरी शासन-प्रणाली के साथ ही मराठों के उत्पात एव अग्रेजो की व्यापारिक नीति से उसकी और भी शौचनीय स्थिति हो गई। नए बन्दोबस्त से ज़मीदारो को धक्का लगा और किसानों पर कडाई से कर लेने की प्रथा चल निकली। इस तरह व्यापार और कृषि के चौपट हो जाने से जनता की आर्थिक दुरवस्था भीषण हो गई और बेकारी के कारण ठगी

---

१ जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १५३।
२. वही, पृ० १५२।
३. वही, पृ० १५४।
४. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १५५।
५. वही, पृ० १५५।

का आश्रय लिया जाने लगा। कार्नवालिस के समय से हिन्दुस्तानियो को बडी नौकरिया न दी जाने लगी क्योकि उसका विश्वास था कि हिन्दुस्तानी झूठे और घूसखोर होते है। सन् १८३३ ईस्वी (संवत् १८९०वि०) मे यह नीति कुछ बदली। शासन और न्याय का काम बहुत बढ जाने के कारण हिन्दुस्तानियो की सहायता लेना अनिवार्य हो गया। तभी से देश के शासन का कुछ अंश यहा के निवासियो को भी दिया जाने लगा।[1] लार्ड बैंटिक (सन् १८२८ ईस्वी—३५ ईस्वी) ने सामाजिक-सुधार करके सती-प्रथा को समाप्त किया। इसके पूर्व मुगल-सम्राट अकबर, पुर्तगाली गवर्नर एल्बुकर्क और पेशवा ने सती-प्रथा को बन्द करने का यत्न किया था।[2]

उस युग मे बंगाल के प्रसिद्ध राजा राम मोहन राय ने सामाजिक अव्यवस्था को सुधारने का भरसक प्रयत्न किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती के आन्दोलन के फलस्वरूप उत्तर भारत मे एक नवीन जातीय चेतना का अभ्युदय हुआ। तत्पश्चात् नेशनल काग्रेस की स्थापना हुई। रेल, तार तथा डाक आदि की सुविधाए बढी और समस्त भारत मे एक राष्ट्रीयता के भाव ने जन्म लिया।

ग—सामाजिक परिस्थितिः तुलना

भारत मे मुसलमानो का राज्य स्थापित हो जाने तक हिन्दुओ में चार वर्णो के अतिरिक्त अन्य कई उपजातियो का उद्भव हुआ था। कश्मीर मे मुसलमानो के आगमन तक केवल ब्राह्मण-वर्ग की ही प्रधानता रही क्योकि जाति-पाति की प्रथा यहा मुख्य रूप से प्रचलित न थी, यद्यपि ऊंच-नीच की भावना अवश्य विद्यमान थी। समय-समय पर आकर बसने वाली जातियो तथा ब्राह्मणो का संघर्ष अवश्य चलता रहा। चौदहवी शताब्दी मे इस्लाम-धर्म के प्रचार से पूर्व कश्मीर की सम्पूर्ण जनता ब्राह्मण नही थी। इन जातियो मे प्रमुख निषाद, खस, दरद, भोट, भिक्षसु, दामर, तान्त्रिन् आदि है जो केवल शासको को ही नही अपितु ब्राह्मणो को भी कष्ट पहुचाती रही।[3] ब्राह्मण अपने आपको उच्च-

---

१. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० १८५।

२. आधुनिक भारत, पृ० १६०।

३. Before the advent of Islam in the 14th century the population of Kashmir was not entirely Brahman. We find the names of several sects namely Nishads, Khashas, Darads, Bhauttas, Bhikshas, Damars, Tantrins, etc. Who constantly gave trouble not only to the rulers of the country but also to the Brahmans.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० १६।

वर्गीय तथा इन जातियों को निम्न-स्तरीय ही समझते रहे। कश्मीर में सर्वप्रथम यही जातिया सामाजिक रूढियो, राजनीतिक अशाति तथा अशान्तिपूर्ण जीवन से तग आकर इस्लाम मतावलम्बी बनी और ब्राह्मणों ने भी आतकित होकर इस्लाम-धर्म ग्रहण किया। भारत मे भी निम्न-वर्गीय एव उच्च-वर्गीय जातियों का पारस्परिक सघर्ष चलता रहा जिसके फलस्वरूप इस्लाम का प्रचार व प्रसार त गति से होता रहा। न कश्मीर के और न भारत के ही ब्राह्मण मद्यप थे। कश्मीर मे दास-प्रथा भी अप्रचलित रही।

मुसलमान उलेमाओ का प्रभाव दोनों स्थानो पर रहा और सूफी-सत धार्मिक कट्टरता तथा धर्मान्धता के कारण ही प्रेम-साधना का सदेश सुनाते रहे। नारियो की दशा वस्तुतः दोनो स्थानो पर समरूप रही। यद्यपि कश्मीर एवं भारत मे भौतिक सुख, आर्थिक सकट एव व्यापार की कतिपय कठिनाइया सामने आई किन्तु कश्मीर मे इनके सुधार की गति मद रही जबकि भारत मे उनके समाधान के लिये नवीन जागृति का अभ्युदय हुआ।

(३) आलोच्यकाल की धार्मिक परिस्थिति

क—आलोच्यकाल में कश्मीर की धार्मिक परिस्थिति

कश्मीर मे इस्लाम के प्रचार तथा प्रसार से पूर्व शैवमत तथा वैष्णव-धर्म का अत्यधिक प्रचार था। इसके विरोध मे जो आन्दोलन उठ खडे हुए वे इनकी दार्शनिकता तथा विधि-विधानों के प्रतिपक्षी थे। किसी सीमा तक ये आन्दोलन मूर्ति-पूजा, तीर्थाटन तथा बाह्याडम्बरो के खण्डन-मात्र थे और केवल हृदय की स्वच्छता तथा प्रभु-प्रेम एव उसके अनुग्रह पर अधिक बल देते थे। ऊँच-नीच के भेद-भाव को दूर करने के लिए भी ये आन्दोलन प्रयत्नशील रहे। इन ही कारणों से इन्हें जनता के सहारे इस्लाम-धर्म ने भी इन ही बातों का आश्रय लिया।[१]

इस्लाम को अपने आरम्भिक प्रसार काल में बौद्धमत की अपेक्षा शैवमत से सघर्ष करना पडा।[२] इस समय शैवमत अपनी प्रौढावस्था को प्राप्त हो चुका था जिसका प्रभाव लोगो के हृदयों पर गहरा पडा था।[३] इस समय तक बौद्धमत का पूर्णरूपेण ह्रास हो चुका था यद्यपि बाद की राजतरगिणियों में हमें बौद्ध भिक्षुओं तथा बिहारो का भी विवरण मिलता है।[४] शैवमत के सिद्धान्त ब्राह्मणो की अधीनता में विशेष विधि-विधानों तथा क्रिया-पद्धति के कारण

---

१. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य-कअशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० ६५।

२. कश्मीर अण्डर दि सुल्ताज़, पृ० २३४।

३. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य-शैवमतुक तअ तसव्वुफुक इम्तज़ाज, प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प की रेडियो कश्मीर से ८-६-६६ को प्रसारित वार्ता।

४. Buddhism had practically disappeared from the valley, though we find mention of Buddhist priests and Viharas in the later Rajtaranjinis.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४६४।

अपनी नीव दृढ बना चुके थे।[१] अभिनवगुप्त (सन् ९५० ई०—सन् १००० ई०)[२] के 'तन्त्रसार' से उस समय के शैव-मत के दार्शनिक तथा उपासनापरक तथ्यो का विशेष विवेचन उपलब्ध होता है। उस मे शिव की महिमा का गान है।[३] शैवमत के प्रकाण्ड पडित राजानक शितिकण्ठ (तेरहवी शताब्दी)[४] ने तत्कालीन दार्शनिक शैव-सिद्धान्तो का अपने ग्रन्थ 'महानयप्रकाश' मे उल्लेख किया है जिससे प्रचलित योग की अवस्थाओ तथा आध्यात्मिक मजिलो (सोपानो) का ज्ञान होता है,[५] किन्तु लोक-मान्य शैवमत भ्रातियो तथा विधि-विधानो का ही दर्शन-मात्र बनकर रह गया था और तभी ग्यारहवी शताब्दी मे ही कश्मीर की सामाजिक एव राजनीतिक विश्रृखलता के कारण वह जनता की आध्यात्मिक भूख मिटाने मे भी असमर्थ रहा।[६] तान्त्रिक-धर्म की प्रधानता हो चली थी। दार्शनिक मूल्यो से रहित मिथ्या विश्वास-पूर्ण इन तथ्यो का महत्व सामान्य जनता के लिए कम नही था। आत्मा-परमात्मा के मिलन की प्रेम-कथा के सिद्धान्त को रहस्यवाद का जामा पहनाना ही इसका मूलोद्देश्य था।[७] तन्त्र-शास्त्र को वेदो की तरह

---

१ The religious beliefs were pettified into-rigid saiva rites and rituals conducted under the supervision of Biahmans.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४९४।

२. स्थिति-काल के लिए द्रष्टव्य-हिन्दी-साहित्य का वृहत् इतिहास, डा० राजबली पाडेय, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, (सवत् २०१४ वि०), पृ० ५१८।

३. उपयजाल न शिव प्रकाशयेद्, घटेन किं न भाति सहस्त्रदीधिति :।
विवेचयन्नित्थमुदार दर्शन., स्वय प्रकाश शिवमाविशेत्क्षणात्॥
तन्त्रसार, अभिनवगुप्त, रिसर्च डिपार्टमेट जम्मू व कश्मीर सरकार (संवत् १९७४ वि०), द्वितीयमाह्निकम, पृ० ९।

४. स्थिति-काल के लिए द्रष्टव्य-कश्रशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० १३४।

५. अमाकलामलेव्यानु परावेन, सेतुकन्धमार्गे पविशेत,
अष्टि उदयु चन्दगलावेन, शाता कुलदेवी परिशेत। महानयप्रकाश, राजानक शितिकण्ठ, सपादक, महामहोपाध्याय प० मुकुन्द राम शास्त्री, प्रकाशक, जम्मू व कश्मीर सरकार (सन् १९१८ ई०), पृ० १००।

६. दि वर्ड आफ लल्ल, आर० सी० टेम्पुल, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, (सन् ई० १९२४), पृ० ९४।

७. Of no philosophical importance, but of great interest to the history of superstition, are the Tantras, the essence of which is to clothe in the garments of mysticism, the union of the soul with God or the absolute, the tenets of eroticism.

—ए हिस्ट्री आफ सम्स्कृत लिट्रेचर, पृ० ४८१।

अपौरुषेय कहा जा रहा था।[1] उस समय केवल भक्ति मे ज्ञान को अत्यधिक प्रधानता मिली हुई थी। योग तथा ज्ञान की क्रियाए जनसाधारण के लिए एक गोरखधन्धा बन रही थी। इसी कारण इस्लाम के सिद्धान्तो का यहा सूफियो द्वारा प्रचार हुआ जिसके लिए जनता पहले ही तैयार थी। शाहमीर की राज्य-प्राप्ति तक कश्मीर मे लोगो ने इस्लाम-धर्म ग्रहण किया था और चौदहवी शताब्दी के अन्त मे यहा पूर्ण-रूप से इस्लाम का प्रचार हो चुका था।[2]

कश्मीर मे इस्लाम-धर्म का प्रवेश मुस्लिम-शासन के स्थिर होने से पूर्व ही हो चुका था। निम्न जातियो को विधर्मी बनाया जा रहा था। ऊच-नीच के बधन का खण्डन इस्लाम द्वारा हो रहा था। ब्राह्मणो द्वारा प्रचारित कई विधि-विधानो को अब तक कई निम्न श्रेणियो ने तिलाजलि दे दी थी और इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था।[3]

इतिहासकार जोन राज ने जनता के धर्म-परिवर्तन के इस दुःख को इन शब्दो मे व्यक्त किया है, जैसे आधी वृक्षो को जड से उखाडती है और टिड्डी दल अनाज को समाप्त करता है, उसी प्रकार यवनो ने कश्मीर की परम्परा को समाप्त किया।[4] समय के साथ-साथ निम्न-स्तरीय जातियो ने परम्परा मे चली आने वाली विधियो का परित्याग किया तथा वे इस्लाम-धर्म की मतावलम्बी बन गई। इस्लाम ने हिन्दुओ के विधि-विधानो, विश्वासो, धार्मिक परम्पराओ, ऊँच-नीच की भावनाओ तथा मूर्ति-पूजा पर कुठाराघात किया। भारत मे भी

---

१. योजना, मासिक पत्रिका, जम्मू व कश्मीर सरकार, दिसम्बर, १९६०, पृ० १२।

२. The teachings of Islam as carried to Kashmir by the sufis found a ready response from the general populace. By the time Shahmir ascended the throne, there seems to have been a fairly strong Muslim community in Kashmir and by the end of the 14th century the adoption of Islam by the great mass of the population became an accomplished act

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४९२।

३. The lower castes gave up the performance of prescribed ceremonies, and accepted Islam

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५०१।

४. As the wind destroys the trees and the locusts the shalicrop, so did the Yavanas destroy the usages of Kashmir.

—किंग्स आफ कश्मीर, पृ० ५७।

इससे अधिक भिन्न स्थिति न रही। इतना होने पर भी इस्लाम-धर्म को स्वीकार्य करते हुए कुछ कश्मीरी हिन्दू सामाजिक कृत्य एव विवाहोत्सव प्राचीन परिपाटी से मनाते रहे। वे व्यथत्रुवाह् (वितस्ता त्रयोदशी), श्री पंचमी, गण-चक्र एवं चैत्र आदि सम्बन्धी उत्सवो को पूर्ववत् मनाते थे। कइयो ने मूर्ति-पूजा का भी परित्याग नही किया और प्राचीन धर्म-स्थानो की भी यात्रा करते रहे।[1]

सरकारी पदो पर आसीन रहने के कारण ब्राह्मणो ने इस्लाम के बढते हुए प्रचार का विरोध नही किया। इससे दोनो धर्म हिन्दू-धर्म तथा इस्लाम-धर्म एक दूसरे के सन्निकट आने लगे और सूफियो का प्रभाव बढता गया। नये मूल्यो का जन्म होता गया और पुरातन एव नवीन का सम्मिश्रण होने लगा। कुछ पूर्ववर्ती सुल्तानो ने मूर्ति-पूजा को समादृत किया। हिन्दू मुस्लिम सन्तों तथा मुसलमान हिन्दू सन्तो के प्रति आदर की भावना देखने लगे।[2]

सैयदो की धार्मिक-असहिष्णुता के कारण हिन्दुओ पर अत्याचार होते रहे। सुल्तान सिकन्दर ने कई मन्दिरो को धराशायी करवा दिया। सुल्तान सिकन्दर के मत्री सुहभट्ट ने भी हिन्दू-मन्दिरो को गिरवा दिया, यद्यपि वह इससे कुछ समय पूर्व ही मुसलमान बना था। हिन्दुओ को बलात् मुसलमान बनाया जाने लगा। उन्हे धर्म-परिवर्तन के लिये या विनिष्ट होने अथवा पलायन के लिये बाध्य किया जाता था। इस धार्मिक असहिष्णुता के प्रति सैयद मीर मुहम्मद हमदानी ने सुल्तान सिकन्दर को सचेत करके इस दुष्कर्म से बचाया।[3] परवर्ती सुल्तानो के समय में शिया, सुन्नी झगडा चलता रहा, लेकिन जैन-उल-आब्दीन ने ब्राह्मणों का सम्मान करते हुए हिन्दू-मुस्लिम उत्सवो मे समान रूप से भाग लिया।

---

१. They also continued to celebrate their festivals of Gana-Cakra, Vyathtruvah, Srı Pancami. Many of them did not totally give up idol worship and continued to have reverence for theır old places of worship and pilgrimage.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५०२।

२. The Hındus respected Muslim saınts, whıle the Muslıms looked upon Hindus Sadhus with reverence.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्ताज, पृ० २२४।

३. Of course Sayyıd Mir Mohammad Hamdani looked wıth dısfavour on the policy and it was on hıs advice that Sıkandar Changed it forthwıth.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४८५।

भारत की भाति कश्मीर मे भी वेदान्त तथा तसव्वुफ का मेल रहा। शैव-मत का प्रभाव कश्मीरी जनता पर दृढ रूप से पडा था, इसलिये राजनीतिक उथल-पुथल की अपेक्षा भी यहा की साधारण जनता ने दोनो सूफीमत व शैवमत को मानव कल्याण का उपयुक्त साधन समझा। उनकी समझ में आ गया कि परम शिव तथा अल्लाह्-अकबर एक ही स्वर का सगीत समुपस्थित करते हैं। सोऽहम्, शिवोऽहम् तथा अनल्हक एक ही शब्द के पर्याय है। एक ओर शैवमत के तथा दूसरी ओर सूफीमत के विभिन्न सम्प्रदाय दृष्टिगोचर हो रहे थे। दोनो का विश्वास कुछ सर्वमान्य तत्वो पर था जिनका प्रचार यहा के सूफी-सन्तों ने किया।[1] हिन्दू-धर्म से प्रभावित कश्मीर के इस्लामी ऋषियो ने संन्यास एव ब्रह्मचर्य-पालन के साथ-साथ वनो और गुफाओ मे तपस्या मे लीन होने, खाद्यान के लिये पशु-पक्षियो की हत्या न करने, वन्य सब्जियो पर निर्वाह करने तथा योग की क्रियाओ को महत्वपूर्ण स्थान दिया।[2]

मुगल शासको ने धार्मिक सहिष्णुता दिखाई। अकबर तथा जहागीर के समय कश्मीर-घाटी मे लगभग दो हज़ार ऋषि थे।[3] दाराशिकोह ने श्रीनगर मे सूफीमत के महाविद्यालय तथा एक वैधशाला का निर्माण कराया।[4] न केवल भारत मे अपितु कश्मीर मे भी औरगजेब की धार्मिक असहिष्णुता एक समान रही।

गुरु नानक देव ने भी कश्मीर की यात्रा की। उनके साथ हस्सू सुनार तथा सीहान छीपी भी थे। इस दल ने श्रीनगर (कश्मीर) में पहुच कर अपनी अमृत·

मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य-शैवमतुक त तसव्वुफुक इम्तज़ाज-रेडियो वार्ता।

२. The Islamic Rishis of Kashmir had been greatly influenced by the Hindu religion... withdrawing from the world, practising celebacy, undergoing penances in caves and jungles, refraining from killing birds ard animals for food or eating living on wild vegetables .. Endevourced to follow the Yogic practices of the Hindus.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५०२।

३. In the time of Akbar and Jahangir there were about 2,000 Rishis in the Valley.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्तांज़, पृ० २२।

४. Darashikoh, for instances established a college of sufism and also an observatory in Srinagar.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४७६।

वाणी का प्रचार किया।[१] मैकाल्फ महोदय का कथन है कि सिक्खो का एक शिष्ट-मण्डल गुरु अर्जुन देव से मिलने आया। उसने शिकायत की कि कश्मीर के पडित उन्हे उनकी वाणी का पाठ करने मे रोककर सस्कृत के ग्रन्थो का मनन करने तथा पूजा-विधि अपनाने के लिये बाध्य करते है। उनकी बात न मान ली जाने पर उन्हे निष्कासन की धमकी दी गई है।[२] ऐसा सुनकर गुरू अर्जुन देव ने माधो सोढी को गुरु-वाणी का प्रचार करने के लिये कश्मीर भेजा। सिक्खो के छठे गुरु श्री हरगोबिन्द भी यहा सन् १६४५ ई० मे पधारे थे। उन्होने इस्लाम मे दीक्षित कई हिन्दुओ का पुनरुद्धार किया।

अठारहवी तथा उन्नीसवी शताब्दी मे विद्यमान भेदभाव वाले साम्प्रदायिक आडम्बर के बीच कश्मीर के सूफी-कवि अपनी प्रेम-गाथाओ एव मुक्तक रचनाओ द्वारा आध्यात्मिक उल्लास का व्यापक सदेश प्रसारित करते रहे।

ख—आलोच्यकाल में भारत की धार्मिक परिस्थिति

भारत मे मुसलमानो के आक्रमणो के समय ब्राह्मणो मे शैव एव शाक्त आदि विभेद हो चले थे और क्षत्रियो मे तो आपस की छीना-झपटी लगी थी।[३] बौद्धमत विकृत होकर वज्रयान सप्रदाय के रूप मे देश के पूर्वी भागो मे बहुत दिनो से चला आ रहा था।[४] नाथपथी जोगी पच्छिमी भागो में रमते चले आ रहे थे।[५] सामान्य जनता की धर्म-भावना दबती चली जा रही थी और धर्म से

---

१. Guru Nanak was accompanied by Hassu, a smith, and Sihan, a Calico printer. The party went as far as Srinagar in Kashmir and made many converts.

—कशीर, द्वितीय भाग, पृ० ७००।

२. A Sikh deputation from Srinagar representing to Guru Arjan Dev said that the Pandits of Kashmir were advising them to discontinue the reading of his Hymns, and to turn their attention to Sanskrit sacred, compositions and Hindus worship. The Pandits otherwise threatened them to excommunicate them.

—कशीर, दूसरा भाग, पृ० ७०१।

३. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० १७०।

४. हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, नवा संस्करण (स० २००६ वि०), पृ० ७।

५. वही, पृ० ६०।

उसका हृदय हटता जा रहा था। शकराचार्य (सन् ई० ७८८-८२०) के प्रबल प्रहारो से बौद्ध-धर्म को अत्यधिक आघात पहुचा और वह अब तत्र, मत्र, तत्र की सिद्धियो के चक्र मे ही पडकर रह गया। उसने महायान, वज्रयान, सहजयान और मत्रयान आदि कई रूप धारण किये। इन सम्प्रदायो का व्यावहारिक पक्ष बडा ही अनिष्टकारी सिद्ध हुआ।[1] वह करामात का युग था। उन दिनो सिद्धो तान्त्रिको एव नाथपथियो का पूरा ज़ोर था।[2]

सिद्ध और नाथपथी जोगी बाहरी विधि-विधानो, तीर्थाटन तथा पर्व-स्नान आदि की निस्सारता का उपदेश दे रहे थे। वे जनता की दृष्टि मे आत्म-कल्याण के सच्चे कर्मो की ओर ले जाने की अपेक्षा उसे कर्मक्षेत्र से हटाने मे ही लगे हुए थे। अर्ध-शिक्षित एव अशिक्षित जनता पर उनकी बानियो का प्रभाव पड़ रहा था। नाथ-पथ कुडलिनी, इडा, पिंगला, सुषुम्णा आदि के सहारे 'अनहद' नाद सुनने की रीति को भी प्रस्तुत कर रहा था। सिद्ध वज्रयानी सप्रदाय से सम्बन्ध रखते थे और तान्त्रिक पथ के अनुयायी थे। योगी लोग शिव के आराधक थे।[3]

मुसलमानो के बढते हुए आतक ने जनता के साथ साहित्य को भी अस्थिर कर दिया था। ऐसे अनिश्चित काल मे हिन्दू जनता के हृदय मे जिस भय और आतक को स्थान मिल रहा था, वह उनके धर्म को जर्जरित कर रहा था। धर्म की रक्षा करने की शक्ति हिन्दुओ के पास रह ही नही गई थी।[4]

फलतः एक महान् धार्मिक आन्दोलन उठ खड़ा हुआ जिसका प्रभाव देश के कोने-कोने मे पड़ा। इस आन्दोलन को इतिहास मे वैष्णव आन्दोलन कहा जाता है।[5]

जगत्प्रसिद्ध शकराचार्य ने जिस अद्वैतवाद (ब्रह्म से विभिन्न कोई सत्ता नही है, जीव भी ब्रह्म ही है और जगत भी ब्रह्म ही है, माया ब्रह्म की ही शक्ति है जिसके कारण ब्रह्म और जीव का अभेद प्रतीत नही होता) का निरूपण प्रस्तुत किया वह भक्ति के सन्निकेश के उपयुक्त न था। भक्ति के मार्ग

---

१. हिन्दी साहित्य. युग और प्रवृत्तिया, शिवकुमार शर्मा, अशोक प्रकाशन, प्रथम सस्करण (सन् १९६२ ई०), पृ० १४।
२. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ४०७।
३. सूफीमत और हिन्दी सहित्य, डा० विमल कुमार जैन, हिन्दी अनुसन्धान परिषद्, दिल्ली विश्व विद्यालय दिल्ली (सन् १९५५ ई०), पृ० ८९।
४. हिन्दी सहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, डा० रामकुमार वर्मा, प्रकाशक, राम नारायणलाल, तृतीय सस्करण (सन् १९५४ ई०), पृ० १९१।
५. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० १७८।

को रामानुजाचार्य, निंबार्काचार्य, मध्वाचार्य तथा रामानन्द आदि महात्माओं ने प्रशस्त किया जिस मे तत्कालीन हिन्दू जनता की आस्था बढती गई। वैष्णव-धर्म के तत्कालीन विकास मे महाप्रभु चैतन्य तथा वल्लभाचार्य का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। चैतन्य का उपदेश-क्षेत्र बग-भूमि था और उनका प्रभाव भी बगाल मे ही अधिक पडा। चैतन्य की भक्ति प्रम और मोदमयी है। कर्म की जटिलता से वह दूर ही रही।[१]

राज्य-स्थापना के पश्चात् मुसलमानो तथा हिन्दुओ के परस्पर भावो और विचारो का आदान-प्रदान प्रारम्भ हो गया। मुसलमानो के एकेश्वरवाद और उदार भ्रातृभाव से हिन्दू बहुत कुछ प्रभावित हुए और उपासना के क्षेत्र मे अन्त्यजो को स्थान मिला।[२] जनता का ध्यान अनेक देवी देवताओ से हटा। देश मे सतो के एक नये दल का प्रादुर्भाव हुआ। उनकी सरलता एव भावो की उदारता से जनता प्रभावित हुई। हिन्दू और मुसलमानो पर उनकी वाणी का प्रभाव पडा। उनके उपदेश मानव-प्रकृति की करुणा एव निष्कपट वृत्तियो पर अवलम्बित थे। साथ ही उपासना के लिए इन सतो के निर्गुण ब्रह्म का आधार बना लिया था जिसके कारण जातीय, सास्कृतिक अथवा धार्मिक सघर्ष या मत-भेद की सभावना भी बहुत कम रह गई थी। इन सतों ने योग आदि की क्रियाओं का भी अपने सप्रदाय मे प्रचार किया परन्तु सामान्य जनता ने इनकी सरल शिक्षा और उदार-वृत्ति को ही अधिक ग्रहण किया।[३] सूफियों ने भारतीय अद्वैतवाद को अपने ढग से अपनाया और प्रेम-स्वरूप निराकार ईश्वर का प्रचार किया। इन पर योग का प्रभाव भी स्पष्ट है।[४]

'सूफी कवि उदार हृदय थे, अत उनके प्रेमाख्यानों में कट्टरता के कम दर्शन होते है। तत्कालीन प्रचलित धार्मिक सम्प्रदायो का प्रभाव उनपर स्पष्ट देख पड़ता है।[५] भारत मे जायसी जिस प्रेम-तत्व का प्रचार करता रहा, कश्मीर में वही कार्य शेख-नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) ने किया। अमीर खुसरो (१३ वीं शताब्दी) ने जिस पारस्परिक मेल-जोल का सूत्रपात्र किया था, कश्मीर में लल्लद्यद (लल्लेश्वरी) ने उसी आध्यात्मिक महानता का विकसित रूप प्रस्तुत किया।[६]

---

१. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० १८२।
२. वही, पृ० १७८।
३. वही, पृ० १८३।
४. हिन्दी साहित्य, युग और प्रवृत्तिया, पृ० ८७।
५. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १८०।
६. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य शैवमतुक तअ्रतसव्वुफुक इम्तज़ाज, रेडियो वार्ता।

हिन्दुओ और मुसलमानो को एक बनाने के लिए सिक्ख धर्म का प्रादुर्भाव हुआ था परन्तु मुसलमान शासको की सकीर्ण नीति के कारण मुसलमान सिक्खों के घोर विरोधी बन बैठे।[1] अंग्रेजो के साथ ही यहा ईसाई मत का प्रचार होने लगा। प्रकट रूप से उन्होने भारतीयो के धार्मिक विचारो पर कोई आघात नही किया, किन्तु विजेता की शक्ति का प्रभाव विजितो पर पडे बिना कैसे रह सकता था। लार्ड वैलजेली के समय मे बाइबल का अनुवाद सात देशी भाषाओ मे प्रकाशित किया गया। कलकत्ते मे एक बिशप तथा चार पादरियों की नियुक्ति हुई जिस के फलस्वरूप उनके द्वारा प्रकाशित पुस्तको मे प्रचार-कार्य बढा। अंग्रेजी शिक्षा का प्रचार धीरे-धीरे बढने लगा। हिन्दी को राज्याश्रय न मिल सका और उर्दू अदालती भाषा बन गई। अंग्रेजो के रहन-सहन और आचार-विचार का प्रभाव भारतीय जनता पर खूब पडा।

ग—धार्मिक परिस्थिति : तुलना

मुसलमानो के आगमन से पूर्व ही कश्मीर तथा भारत मे बौद्धधर्म की विकृति हो चुकी थी। कश्मीर मे शैवमत प्रौढावस्था को प्राप्त हुआ था तथा वहा तान्त्रिक साधनो का प्रचार बढ गया था। भारत मे सिद्धो तथा नाथो द्वारा तीर्थाटन, बाह्य विधि-विधान की क्रियाओ तथा पर्व-स्नान आदि की निस्सारता का उपदेश फैलाया जा रहा था। दोनो स्थानो की जनता का हृदय धर्म से हट रहा था। सूफी-सन्तो के आगमन के कारण कश्मीर मे शैवमत तथा तसव्वुफ का और भारत मे वेदान्त तथा तसव्वुफ का सम्मिश्रण हुआ और प्रेम तत्व का प्रचार बढ गया। कश्मीर और भारत में हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य के लिए संतवर्ग का प्रादुर्भाव हुआ। सूफी-सत सरल-जीवन व्यतीत करते थे और अपने प्रेमाख्यानो द्वारा हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य का प्रचार करते रहे। अमीर खुसरो ने इसका सूत्रपात भारत मे किया और कश्मीर मे लल्लद्यद (लल्लेश्वरी) ने आध्यात्मिक महानता का प्रकाश फैला दिया। जायसी की भाति ही कश्मीर मे शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) ने दोनो जातियो को प्रेम-सन्देश सुनाया। भारत मे भक्ति-आन्दोलन का प्रभाव प्रायः अठारवी शताब्दी तक रहा जब कि कश्मीर मे इसकी अक्षुण्ण धारा चौदहवी शताब्दी से बीसवी शताब्दी तक निरन्तर चलती रही।

मुगलो ने धार्मिक सहिष्णुता का परिचय दिया। सिक्ख गुरुओ ने भारत में ही नही अपितु कश्मीर मे भी अपनी अमृत-वाणी का प्रचार किया। अंग्रेजो के आगमन से ईसाई-मत का प्रचार बढने लगा। उनके आचार-विचार एव शिक्षा के प्रचार का प्रभाव न केवल भारत अपितु कश्मीर पर भी पड़ा।

---

१. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० १८५।

(४) सूफीमत का विकास

विद्वानों ने सूफीमत का व्यवहार मुस्लिम-रहस्यवाद के लिए किया है।[१] इस्लाम के रहस्यावादी (सूफी) नाम से प्रख्यात है और सूफियों के दर्शन को तसव्वुफ कहा गया है।[२] सूफीमत की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानो का गहरा मतभेद है। 'सूफी' शब्द की व्युत्पत्ति के विषय मे कुछ लोगो की धारणा है कि मदीना मे मस्जिद के सामने एक तुफ्फा (चबूतरा) था, उसी पर बैठने वाले फकीर सूफी कहलाए। दूसरे लोगो का विचार है कि सूफी शब्द के मूल में सफ (पक्ति) है। उनके अनुसार वे लोग सूफी कहलाए जो निर्णय के दिन पवित्र एव ईश्वर-भक्त होने के कारण अन्य व्यक्तियो से पृथक्-पक्ति में खड़े किए जायेगे।[३]

तीसरे दल की यह धारणा है कि 'सूफी' वस्तुतः स्वच्छ और पवित्र होते है, सफ़ा होने के कारण उनको सूफी कहते है। चौथे दल के विचार से सूफी-शब्द सोफिया (ज्ञान) का रूपान्तर है, ज्ञान के कारण ही उनको सूफी कहा जाता है, पर अधिकतर विद्वानो का मत है कि 'सूफी' शब्द वास्तव में सूफ (ऊन) से बना है।[४] अलबरूनी (जन्म काल सन् ई० ९७३) ने भी सूफी शब्द पर विचार किया है। 'सूफ' (ऊन के अर्थ में) शब्द से 'सूफ़ी' शब्द बना, यह मान्यता उसके समय मे थी। पर उसने वह मत प्रकट किया कि उच्चारण मे विकृति के

---

१. सूफीमत और हिन्दी साहित्य, पृ० १।

२. हिन्दी साहित्य कोश, भाग प्रथम, प्रधान सपादक, धीरेन्द्र वर्मा, वाराणसी, ज्ञानमण्डल लि० (द्वितीय सस्करण सवत २०२० वि०), पृ० ९३६।

३. सूफी मत और हिन्दी-साहित्य, पृ० १।

४. तसव्वुफ अथवा सूफीमत, चंद्रबली पाडे, सरस्वती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ० ४।

कारण 'सूफी' शब्द का व्यवहार 'सूफ' से किया जाने लगा।[१] आधुनिक काल के विद्वानो ने यह सिद्ध किया है कि वास्तव मे सूफी शब्द सूफ से बना है। ब्राउन महोदय का कथन है कि यह बिल्कुल निश्चित है कि सूफी शब्द की व्युत्पत्ति 'सूफ' (ऊन) से हुई जो फारसी शब्द है तथा जिसका अर्थ ऊन या पशमीना से है।[२] फारसी मे रहस्यवादी साधको को 'पशमीना पोश' (ऊन धारण करने वाला) कहा गया हैं। इससे भी इस मत की पुष्टि होती है। अनेक मुस्लिम आलिमो ने भी इसे स्वीकार किया है।[३] अह्ल सुफ्फाह, सफ्फे अव्वल, सोफिस्ता आदि से भी 'सूफी' शब्द के बनने की बात कही जाती है, लेकिन वे अधिकाश लोगो को मान्य नही।[४] अब 'सूफी' का प्रयोग मुस्लिम सत या फकीर के लिए ही नियत-सा हो गया है।[५] यह 'शब्द' मूलतः अरब और ईराक के उन व्यक्तियो को सूचित करता है जो मोटे ऊनी वस्त्रो का चोगा पहनते थे। इनका विरक्तों और सन्यासियो जैसा साधनापूर्ण जीवन था तथा कदाचित् इसी कारण ये लोग मुस्लिमों की अग्रिम पक्ति मे ठहराने के अधिकारी थे।[६] कुछ लोगो का कहना है कि सर्वप्रथम 'सूफी' शब्द का प्रयोग करने वाला अबू हाशिम सूफियान(मृत्यु सन् ७७७ ई० के लगभग) था। लुई मासिञो ने इस सम्बन्ध मे अबू हाशिम के समकालीन जाबिर इब्न हैयान का भी नाम लिया है। मासिञो ने माना है कि इसका प्रयोग अब्दक अल् सूफी ने (जिसकी मृत्यु सन् ८२५ ई० मे हुई थी) किया है। पहले व्यक्तियो के नाम के साथ यह शब्द जुडा हुआ मिलता है। लेकिन बाद मे चलकर व्यापक भाव से रहस्वादी साधको के लिए इसका प्रयोग होने लगा। आज भी इसी अर्थ मे इसका प्रयोग होता है।[७]

इस्लामी धर्म तथा शासन सम्बन्धी सस्थाओ के अध्यक्ष मुहम्मद का निधन

---

१. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, डा० श्याममनोहर पाडेय, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ० ४।
२. ए लिट्रेरी हिस्ट्री आफ पर्शियन लिट्रेचर इन मार्डन टाइम्ज़, (सन् १५०० ई०—सन् १६२४ ई०), ई० जी० ब्राउन, अनुवादक-एस० वहृज-उद्-दीन अहमद, उस्मानिया यूनिवर्सिटी, अजुमने तारीख उर्दू, दिल्ली (सन् ई० १६३६), पृ० ३४।
३. तसव्वुफ अथवा सूफीमत पृ० १।
४. हिन्दी साहित्य कोश, भाग १, पृ० ६३६।
५. तसव्वुफ अथवा सूफीमत, पृ० १।
६. हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तिया, पृ० १३५।
७. हिन्दी साहित्य कोश, भाग १, पृ० ६३६।

८ जून, ६३२ ई० को हुआ ।[१] उनका देहावसान हो जाने पर उनके उत्तराधिकारी खलीफाओ का युग आरम्भ हुआ और वे इस्लाम-धर्म का उत्तरोत्तर प्रचार करते गए तथा उनके प्रयत्नो द्वारा वह अरब देश से लेकर क्रमशः शाम, फिलिस्तीन मिस्र, ईरान, स्पेन एव तुर्किस्तान आदि देशों तक शीघ्र फैल गया ।[२] आरम्भिक चार खलीफा अर्थात् अब्बकर (मृ० ६३४ ई०), उमर (मृ ६४३ ई०), उसमान (मृ ६५५ ई०) एव अली (मृ० ६६६ ई०) अत्यन्त सीधे एव शान्त प्रकृति के थे । अली के अनन्तर आने वालो मे इस प्रकार की व्यक्तिगत विशेषताओ का प्रायः अभाव-सा दीखने लगा और वे धार्मिक-प्रचार से कही अधिक राज्य-विस्तार एव शासनाधिकार की प्राप्ति आदि बातो की ही ओर प्रवृत्त होते जान पडे । फलतः रसूल तथा उक्त प्रथम चार खलीफाओ के जीवन का आदर्श क्रमशः लुप्त होता गया और धर्म की भावना मे बाहरी बातो का भी समावेश होने लगा ।[३] मुहम्मद साहब के समय से ही लगभग ४५ व्यक्तियो ने मक्का मे अपने जीवन मे ध्यान-धारणा को ही सब कुछ समझ लिया था । अबुलफिदा नामक इतिहासकार कहता है कि ये महान् आत्माए 'अशाबी सफा' (धर्म-स्थान या पूजा-मदिर मे बैठने वाले) ही सूफी कहे जाते थे । वे वही रहते थे तथा मुहम्मद साहब के साथ भोजन आदि भी करते थे किन्तु उन्हे सूफी नाम से पुकारा जाना मुहम्मद साहब के निधन के दो सौ वर्ष पश्चात् ही प्रारम्भ हुआ ।[४]

सूफीमत का उद्भव तत्कालीन वातावरण की प्रतिक्रिया मे हुआ । जब कुरान शरीफ एव हदीस के आधार पर अनेक भाष्यो और विवृत्तियों की रचना होने लगी तथा काजियो के द्वारा उनके अनुसार न्याय-निर्णय भी कराये जाने लगे और तब अन्ध-विश्वास की मात्रा बढ गई ।[५] तभी सातवी शताब्दी का अन्त होते-होते सूफी-धर्म का जन्म हुआ ।[६] प्रारम्भ मे सूफीमत मे दर्शन का

---

१. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, डा० कमलकुल श्रेष्ठ, स० भवन, इलाहाबाद, नवीन सस्करण (सन् १९६२ ई०) पृ० ९३ ।
२. सूफी-काव्य-सग्रह, पं० परशुराम चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तृतीय सस्करण (शक १८८०) पृ० १६ ।
३. सूफी काव्य-सग्रह, प० परशुराम चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तृतीय सस्करण (शक १८८०) पृ० १६ ।
४. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २-३ ।
५. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २० ।
६. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० ९८ ।

प्रवेश नही था। इस्लाम एक प्रवृत्तिमूलक धर्म था। पहली बार इसमे कतिपय ऐसे व्यक्ति सामने आये जिन मे भक्ति का सन्निवेश हुआ। आत्मा का शुद्धीकरण प्रारम्भ हुआ।[१] उन्होने कुरान मे अपनी किसी बात का समर्थन न पाने पर हदीसो का हवाला दिया। राबिया मे सर्वप्रथम प्रेम-दर्शन का उदात्त-रूप सामने आया और वह कह उठी—खुदा के प्रेम ने मुझे इतना अभिभूत कर दिया है कि मेरे हृदय मे अन्य किसी के प्रति न तो प्रेम शेष रहा, न घृणा शेष रही।[२] उसने माधुर्य-भाव की स्थापना सूफीमत मे की।[३] शामी परम्परागत इश्क को सूफीमत ने अपना लिया।

जिस वासना, भावना या धारणा के आधार पर सूफीमत का प्रासाद खडा किया गया उसके मूल मे प्रेम का निवास है। प्रेम पर सूफियो का इतना व्यापक और गहरा अधिकार है कि लोग प्रेम को सूफीमत का पर्याय समझते है।[४] सूफीमत का प्रथम-युग तापसी जीवन का समय था। उस समय के सूफियो ने अपने सभी सिद्धान्तो का कुरान एव मुहम्मद साहब के जीवन से निकला हुआ बतलाया। जिक्र (स्मरण) का उल्लेख कुरान मे है। जेहाद (धार्मिक युद्ध) भी कुरान मे मिलता है जिसका साधारण अर्थ ईश्वरीय मार्ग के लिये प्रयत्न करना है। सूफी-सन्तो ने यह अर्थ लगाया कि पतनोन्मुख प्रवृत्तियो से लडना ही जेहाद है। प्रकृति की ऐकान्तिक गोद मे ही सूफीमत का विकास हो रहा था।[५] इस समय तक सूफीमत एव इस्लाम मे कोई विभेद नही माना जा रहा था।

द्वितीय युग का आरम्भ होने के समय तक भारतीय विचारधारा का प्रचार बढने के साथ-साथ सूफियो की मनोवृत्ति मे परिवर्तन दिखलाई पडने लगा। अब तक अब्बास वश वाले मुस्लिम शासक दमिश्क की अपेक्षा बगदाद को अपनी राजधानी बना चुके थे। उनके प्रसिद्ध मंत्री बरमक ने बौद्ध-मत तथा हिन्दू विचारो को प्रश्रय दिया। उनके बादशाह मामू ने अपने दरबार मे भिन्न-भिन्न धर्मों के प्रतिनिधियो को अध्यात्मक-विषयक प्रश्नो पर विचार-विनिमय करने के लिये उत्साहित किया, जिसका प्रभाव नव-विकसित सूफीमत के ऊपर भी बिना पडे नही रह सका और अनेक बातो पर तर्क-वितर्क करने की प्रणाली चल पडी।[६] इतना ही नही, इनके दूसरे बादशाह हॉर रशीद के राजत्वकाल से

१. मध्य-युगीन प्रेमाख्यान, पृ० ५।
२. वही, पृ० ५।
३. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ६।
४. तसव्वुफ अथवा सूफीमत, पृ ४।
५. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० १०६-१०७।
६. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २३।

कतिपय यूनानी दार्शनिको के प्रसिद्ध एव प्रमुख ग्रन्थो का अनुवाद-कार्य प्रारम्भ हुआ । साथ ही वेदान्त-दर्शन और बौद्ध दर्शन के अनुशीलन एव अध्ययन कर लिये जाने के कारण इस्लाम-धर्म के क्षेत्रो मे नितान्त नए विचार-स्रोतो का प्रवेश हुआ । इस समय ईरानी सस्कृति, ईसाइयो का भाव-योग तक प्लोटिनस का नव-अफलातूनी मतवाद भी अपना-अपना प्रभाव डालते दृष्टिगोचर हो रहे थे । इस सबके सम्मिश्रण व समन्वय द्वारा एक ऐसी विचारधारा की सृष्टि होती जा रही थी जो सनातन-इस्लामी-धर्म के भीतर एक प्रकार की क्राति ला देने की अभिव्यजिका थी ।[1] और तभी सूफी साधको का एक अपना पृथक मत "सूफीमत" के नाम से विकसित हो चला । उसके अन्तर्गत अनेक ऐसी बातो का भी समावेश होने लगा जो मूल इस्लाम-धर्म के प्रचलित सिद्धान्तो के अनुकूल नही समझी जा सकती थी ।[2]

इस समय के प्रसिद्ध सूफी जुलनून मिस्री, वायाजीद अल् बस्तामी, जुनैद, शिबली तथा मसूर वा हल्लाज है । जुलनून मिस्री (मृ० सन् ८५६ ईस्वी) के यूनानी चिन्तन-शैली के अनुसार बुद्धिवादी व्याख्या की प्रणाली प्रारम्भ की । वायज़ीद अल् बस्तामी (मृ० सन् ८७५ ई०) ने सर्वप्रथम बौद्धो के 'निर्वाण' की भौतिक 'फना' की धारणा प्रचलित की । बगदाद निवासी जुनैद (मृ० सन् ८८६ ई०) ने कहा कि 'तसव्वुफ ईश्वर द्वारा पुरुष मे व्यक्तित्व की समाहिति और ईश्वर तत्व की उद्बुद्धि का नाम है ।'[3] शिबली ने ईश्वर के अतिरिक्त अखिल विश्व के त्याग को तसव्वुफ कहा है ।[4] मसूर का हल्लाज (मृ० सन् ९२२ ई०) ने अपनी सर्वात्मवाद के प्रति आस्था द्वारा भारतीय वेदान-दर्शन के अद्वैत सिद्धान्त की ओर भी सभी का ध्यान अ कृष्ट कर दिया ।[5] उसने स्वय

---

१. सूफी काव्य-सग्रह, पृ० २४ ।

२. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, प० परशुराम चतुर्वेदी, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई, प्रथम सस्करण (जून १९६२), पृ० ३ ।

३. 'Tasawwuf' said Junayd, 'is this : that God should make the die from thyself and should make the live in Him.'

—सूफीमत और हिन्दी साहित्य, पृ० ४ ।

४. Abu Bakr Shibli has said : Tasawwuf is renunciation, i. e. guarding Oneself against seeing other than God in both the worlds.

—वही, पृ० ४ ।

५. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ३ ।

को सत्य कहा। वह 'अनल्हक' हो गया।[१]

सूफियो ने साधना मे मध्यस्थ की अनावश्यकता प्रतिपादित करके मुल्लाओ आदि धार्मिक व्यक्तियो की महत्ता को आघात पहुचाया। उन्होने शासको के ईश्वरीय प्रतिनिधि स्वरूप पर भी आघात किया। फल यह हुआ कि धर्म-सघ तथा राज्य-वर्ग दोनो ही इस स्वतन्त्र-चिन्तन के कारण उनके विरोधी हो गये। दोनो ने उनको दमन करने का प्रयत्न किया।

तृतीय युग मे अनेक ऐसे विद्वान हुए जिन्होने सूफीमत के मूलभूत सिद्धान्तो को अपने-अपने ढग से प्रतिपादित करने का प्रयत्न किया। इस युग के ग्रन्थकारो मे कालाबाधी (मृ० सन् ९९५ ई०) हुज्वेरी (मृ० सन् १०९२ ई०) एव गजाली (मृ० सन् ११११ ई०) के नाम विशेषतः उल्लेखनीय है। कालाबाधी ने सूफीमत का प्रकृत स्वरूप निर्णय का समानार्थक ग्रन्थ लिखा जिसके द्वारा उन्होने यह प्रतिपादित कर दिखाया कि विचारपूर्वक देखने पर यह मत मूल इस्लाम-धर्म का किसी प्रकार भी विरोधी नही है। अपितु उसी के सिद्धान्तो का पोषक है।[२] विचारक और साधक हुज्वेरी ने 'कश्फुल महजूब' (रहस्योद्घाटन) का प्रणयन किया। उनके प्रयास से कट्टर इस्लाम तथा सूफीमत का विरोध जाता रहा। गजाली ने अपने ग्रन्थ 'इह्याउल् उलूम' की रचना की। उसने यह बात सफलतापूर्वक सिद्ध की कि निर्धारित आध्यात्मिक जीवन का स्वरूप भी प्रचलित सूफीमत सम्बन्धी आदर्शों से किसी प्रकार अधिक भिन्न पडता प्रतीत नहीं होता।[३] अपने प्रयत्नो से उसने सूफीमत की क्रातिकारी विचारधाराओ को भी इस्लाम के अन्तर्गत महत्वपूर्ण स्थान दिया। बाद में इसका पर्याप्त प्रभाव पडा।

इसी युग मे सूफीमत के प्रचार मे फारसी के कई कवियो का प्रमुख हाथ रहा जिन मे से उमर ख्य्याम (मृ० सन् ११२३ ई०), सनाई (मृ० सन् ११३१ ई०), निजामी (मृ० सन् १२०३ ई०), अत्तार (मृ० सन् १२३० ई०), रूमी (मृ० सन् १२७३ ई०), सादी (मृ० सन् १२९१ ई०), शब्स्तिरी (मृ० सन् १३२०ई०), हाफिज (मृ० सन् १३९० ई०) तथा जामी (मृ० सन् १४९२ ई०) के नाम अग्रगण्य है।[४] इन प्रतिभाशाली लेखको ने फारसी मे मसनवियो तथा गजलों की रचना की। इन कवियो के द्वारा फारसी-साहित्य की अभिवृद्धि के

---

१. जायसी के परवर्ती सूफी-कवि और काव्य, पृ० १४
२. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २८।
३. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ३-४।
४. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० १८।

साथ-साथ सूफीमत का भी प्रचार हुआ। कश्मीरी तथा भारतीय दोनो सूफी-कवियों ने उनके ही आदर्शों से प्रभावित होकर प्रेमाख्यान परम्परा मे अपना विशिष्ट स्थान बना लिया। वस्तुतः तसव्वुफ को जो प्रगति करनी थी, वह तो हो चुकी और फिर सोलहवी शताब्दी के अन्तर्गत इसका अग्रिम विकास अवरुद्ध हो गया।[१]

कश्मीर तथा भारत मे सूफीमत की स्वतन्त्र उत्पत्ति नही हुई थी। सूफी दरवेश ही इसे पश्चिमी इस्लामी प्रान्तो से यहा पर ले आए। भारत मे सूफीमत के आने से पूर्व उसका इस्लाम धर्म-सघ से विरोध समाप्त हो गया था। अधिकांश सूफी 'बाशरा' हो गये थे।[२] मुसलमानो की राजनीतिक विजय के साथ-साथ धार्मिक विजय भी होती रही और तेरहवी तथा चौहदवी शताब्दी मे ये प्रचारक कश्मीर, दक्षिण भारत तथा बगाल आदि प्रदेशो तक फैल गए।[३]

सूफीमत की यात्रा मे हम तीन मुख्य प्रस्थान पाते है—१. अरब, २ ईरान ३. भारत। ये सूफीमत के प्रस्थान-त्रय कहे जा सकते है। इस मत ने अरब मे ज्ञानमार्ग सिखलाया, ईरान मे आध्यात्मिक प्रेम अथवा भक्ति-मार्ग की घोषणा की तथा भारत मे ज्ञान और भक्ति के आधार पर कर्म-मार्ग की प्रेरणा दी।[४]

यह विश्वास के साथ नही कहा जा सकता कि सर्वप्रथम भारत में कौन-सा सूफी-संत आया। बारहवी शताब्दी तक के सूफियो मे शेख इस्माइल, सैयद नाथरं शाह, शाह सुल्तान रूमी, अब्दुल्लाह, दातागजबख्श, नूर-उद्-दीन, बाबा आदिमशाह, मुहम्मद वली[५] आदि सत विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कहा जाता है कि ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती, ख्वाजा कुतुब-उद्-दीन काकी, बाबा फरीद-उद्-दीन आदि को यही पर आकर सत्य का आभास हुआ था।[६] डा० श्याम मनोहर पाडेय का कथन है कि भारत में सूफीमत का प्रवेश हुज्वेरी के आगमन

---

१. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य-सूफी शअ्रयिर, प्रथम भाग, मुहम्मद अमीन-कामिल, अकादमी आफ आर्टस, कल्चर एण्ड लेंग्वेजिज़, श्रीनगर (सन् ई० १९६४), पृ २४।

२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ १६।

३. वही, पृ० २०।

४. सूफीमत और हिन्दी साहित्य, पृ० २५७-२५८।

५. द्रष्टव्य-प्रेमाख्यान काव्य, पृ० १२१।

६. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २१।

के साथ हुआ। वह अफगानिस्तान के गजनी का रहने वाला था।[1] जनसाधारण के विश्वासानुसार सूफीमत के ये प्रथम आचार्य है जो भारत आए।[2]

सूफीमत का प्रसार भारत मे पूर्ण शान्ति तथा अहिंसा के सिद्धान्तों पर चलकर हुआ। उस समय सामन्त प्रथा से जर्जरित मध्ययुगीन भारत की धार्मिक, सामाजिक एव राजनीतिक विचारधारा सकुचित हो गई थी। कर्मकाण्ड की अधिकता, अधविश्वास का प्रचलन एव ब्राह्मण-धर्म की क्लिष्टता तत्कालीन विशेषताए थी। ऐसे ही समय जब सूफियों ने सर्वजनग्राह्य प्रेमभावना पर आधारित स्वमत का प्रचार किया तो अधिकाश जनता इनकी ओर आकृष्ट हुई।[3]

---

१. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ८।

२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २१।

३. वही, पृ० २७।

(५) सूफी सन्तों का कश्मीर में प्रवेश

मुस्लिम सतो तथा सिपाहियो ने जब अपना प्रथम चरण कश्मीर की धरती पर रखा, उनका स्वागत मित्र-भाव से हुआ। सिपाहियो को यहा के राजाओ ने अपनी सेना मे भर्ती कर लिया और सन्तो को अपना धर्म फैलाने की स्वतन्त्रता दी गई। समय की गति के साथ-साथ यहा के ब्राह्मणो ने इस्लाम के बढते हुए प्रचार का विरोध करना व्यर्थ समझा, अत· उन्होने सहनशक्ति तथा सहानुभूतिमय प्रवृत्ति को अपनाया। मुस्लिम-सन्तो ने हिन्दू योगियो का ससर्ग प्राप्त किया तथा पारस्परिक शास्त्रार्थ चलते रहे।[१] ऐसा प्रतीत होता है कि तेरहवी शताब्दी के अत तक कश्मीर मुसलमानो का एक उपनिवेश बन गया था।[२] नए धर्म के प्रचार एव प्रसार के लिये सौभाग्यवश यह भूमि अत्यधिक उर्वरा सिद्ध हुई। परवर्ती हिन्दू राजाओ के कुशासन के समय जनता सतप्त

---

१. When Muslim saints and soldiers first set foot on the Kashmir soil, they were received in a friendly manner. The soldiers were employed by the Kings in their armies, while saints were given complete freedom to preach their religion. However, in the course of time, realising the futility of opposition, they were compelled to adopt an attitude of tolerance and good will. Muslim mystics mixed freely with Hindu Yogis and held discussions with them.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्तांज, पृ० २३३।

२. It appears that already by the end of the 13th century there was a colony of Muslims in Kashmir.

—वही, पृ० २३५।

थी क्योकि व्यापार मन्द पड गया था तथा कृषि की दुरवस्था थी। इसके अतिरिक्त साधारण जनता प्रभुत्वशाली ब्राह्मणो द्वारा नियत बाहरी विधि-विधान की क्रियाओ से पिस रही थी। सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्र मे मानवतावाद के समर्थक सूफी-सतो द्वारा यहा के लोग प्रभावित हुए।[1] इन दिनो की राजनीतिक उथल-पुथल के कारण कश्मीर मे सूफियो द्वारा प्रचारित सूफीमत तथा शैवमत का सगम नए सामाजिक सास्कृतिक आदर्श का मूलभूत आधार बना।[2]

कश्मीर मे इस्लाम का प्रवेश उस समय हुआ जब इसमे तसव्वुफ ने पूर्णतया अपना स्थान बना लिया था। सूफी-सन्तो के द्वारा ही इसका यहा प्रवेश हुआ। ये सूफी-सत कश्मीर से बाहर किसी न किसी सम्प्रदाय-असम्प्रदाय मे सबन्धित थे। इस्लाम के प्रसार के साथ ही इन्होने सूफीमत का भी प्रचार किया। परिणाम यह हुआ कि कश्मीरियो की रग-रग मे तसव्वुफ का रक्त सचरित होने लगा। खानकाहो के क्रमिक-विकास तथा उनकी साधना जनसाधरणा की प्रिय वस्तु बन गई।[3] भारत मे सूफीमत का सर्वाधिक प्रचार ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती अजमेरी (सन् ११३८ ई०—सन् १२३६ ई०) के द्वारा बारहवी शताब्दी मे

---

१ Happily for the new religion it found a fertile soil there to grow and expand in. The people had been groaning under the misrule of the later Hindu rulers, when trade languished and agriculture was at a standstill. To add to their misery there were the crushing burdens of rites and rituals which the dominating Brahmans had laid upon the common man. The general mass of people did not, therefore, find it difficult to embrace the new faith as preached by the sufi dervishas who projected its social and religiou shumanism.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४२२।

२. The Kashmir of those days was tormented by a political crisis and new socio-cultural patterns were being forged by the inevitable contact of saiva philosophy with sufism as preached by the Muslim mystics.

—कश्मीरी लिट्रेचर, रीप्रिटेड फ्राम काण्टेम्पोरेरी इंडियन लिट्रेचर, प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प, रिसर्च एण्ड पब्लिकेशन डिपार्टमेंट (प्रकाशन तिथि अनुल्लिखित), पृ० ११४।

३. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य-सूफी शाअयिर, भाग प्रथम, पृ० ५१-५२।

हुआ। कश्मीर में यद्यपि चौदहवी मे इसका वेग प्रबल हो उठा तथापि ऐसा आभास होता है कि इससे पूर्व कश्मीर इसके माहात्म्य से बच न पाया होगा। चौदहवी शताब्दी मे इस्लाम का प्रचार कश्मीर मे खूब जोरो पर हुआ और इसी समय सूफीमत का विकास परिपूर्ण रूप से हुआ था।[१] यहा हिन्दू-धर्म की प्रधानता के कारण ब्राह्मणो मे भी ऐसे सन्त थे जो शैव तथा वेदान्त-शास्त्री थे। जिस रग मे सूफीमत कश्मीर मे पहुचा वह उसी रूप मे अमिश्रित नही रह सका। शैवमत का उस पर गहरा प्रभाव पडा।[२]

ऐतिहासिक आधार पर यह कहना उपयुक्त है कि यहा आने वाला सर्वप्रथम सूफी-सन्त बुलबुलशाह* था।[३] उसी के प्रयत्न से चौदहवी शताब्दी के आरम्भ मे रिंचन ने इस्लाम-धर्म ग्रहण किया। उसकी महानता के विषय मे दाऊद मश्कवाती ने अपनी रचना 'इसरार अल-अबरार'** मे कहा है—

"आकि दर राहे इल्लाही रोशन अज बदरे हलाल
बुलबुल बागे बलायत शाहबाज़ ला मिसाल
शदवह कश्मीर अव्वल अज़ दस्तिश दरख्ते दीन निहाल
शेख व मुर्शिद आरिफे हक हजरते बाबा बिलाल।"[४]

(जो प्राणी प्रभु-साधना के मार्ग में चन्द्रमा से भी अत्यधिक प्रकाशवान्, प्रभुता के उद्यान की बुलबुल तथा अनुपमेय शिकारी के समान है, उसी शेख गुरु, ज्ञानी तथा हज़ात बाबा बिलाल ने कश्मीर में अपने हाथों से धर्म-वृक्ष को हरा-भरा कर दिया)

इस प्रकार कश्मीर में इस्लाम का प्रवेश मध्य एशिया से हुआ। बुलबुलशाह ने राजा सहदेव के समय मे कश्मीर की पहली यात्रा की थी। वह सुहरवर्दी-सम्प्रदाय के खलीफा शाह नियामतुल्ला वली फर्सी का शिष्य था।[५] अपने प्रभावपूर्ण

---

१. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य-कश्रशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० १२६।

२. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य-फलसफस मज सोन मीरास-तसव्वुफ, डा० शम्स-उद्-दीन की १-६-६८ को रेडियो कश्मीर से प्रसारित वार्ता।

* कशीर, भाग प्रथम मे इसका नाम बिलाल दिया गया है। द्रष्टव्य पृ० ८५।

** इसकी हस्तलिखित प्रति रिसर्च डिपार्टमेट, श्रीनगर मे सुरक्षित है।

३. The first sufi of whom we have any record, to have entered Kashmır, was Bulbul Shah.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्ताज़, पृ० २३५।

४. कशीर, प्रथम भाग, पृ० ८५।

५. He was a discıple of Shah Niamatullah Walı Farsi, a Khalifa of the Suhrawardı tariq or school of sufis.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४८२।

व्यक्तित्व से उसने रिंचन के अतिरिक्त अन्य कइयो को भी इस्लाम-मतावलम्बी बना दिया। सन् १३२७ ई० मे उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके शिष्य मुल्ला अहमद ने सूफीमत का प्रचार किया और फिर शहाब-उद्-दीन के समय में उसकी इहलोक लीला समाप्त हुई।[1]

बुलबुलशाह के अनन्तर कश्मीर मे कई सूफी-सन्तो का आगमन हुआ जिन मे से बुखारा के सैयद जलाल-उद्-दीन तथा सैयद ताज-उद् दीन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। वे दोनो सुल्तान शहाब-उद्-दीन के समय मे यहा आये थे।[2] सुल्तान शहाब-उद्-दीन के समय मे आने वाले सूफी-सन्त अमीर कबीर सैयद अली हमदानी को विशेष स्थान प्राप्त है। उनका जन्म ईरान के हमदान नामक स्थान पर सोमवार, सन् १३१४ ई० को हुआ था। उन्होने अपने मामा सैयद अल्ला-उद्-दीन सिमनानी से इस्लाम-धर्म तथा तसव्वुफ के सम्बन्ध मे पर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया। वे सूफियो के कुब्रवी सप्रदाय से सम्बन्धित थे जिसके प्रवर्तक ख्वारिज्म के शेख नज्म-उद्-दीन कुब्र (सन् १२२१ ई०) थे।[3] अपनी विद्वत्ता, पवित्रता तथा भक्ति के कारण ही उन्होने कश्मीर के ३७,००० लोगो को इस्लाम-धर्म मे दीक्षित मिला।[4] उन्हे 'शाह हमदान' की पदवी से विभूषित

---

१. His lieutenant, Mulla Ahmad, carried on the mission till his death in the reign of Sultan Shahab-ud-din.

—वही, पृ० ४८२।

२. After Bulbul Shah came other sufis, like Sayyid Jalal-ud-din of Bukhara, Sayyid Taj-ud-din, who arrived in the reign of sultan Shàhab-ud-din.

—वही, पृ० ४८३।

३. . .was born on Monday, 1314 A D. at Hamdan in Iran. He studied Islamic Theology, acquired knowledge, and learnt Tasawwuf or the mysticism of sufis under the tution of Sayyid Ala-ud-din Simnani, who was his maternal uncle. He belonged to the Kubrawi order of sufis, followed by Shiekh Najm-ud-din Kubra of Khwarizm.

—कशीर, प्रथम भाग, पृ० ८५, ८६।

४. But the most prominent among the sufi missionaries was Sayyid Ali Hamdani who by his learning, piety or devotion, is said to have made 37,000 converts to Islam.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ०४८३।

किया गया।

सैयद अली हमदानी अपने समय का प्रौढ सूफी-सन्त था। सभवत अपनी स्वच्छद वाणी, धर्म तथा शाति-सदेश के कारण ही उन्हे तैमूर जैसे विजेता का कोप-भाजन बनना पडा होगा और तभी सात सौ सैयदो के साथ कश्मीर आने के लिये बाध्य हुआ होगा। इस बात की ओर मिर्जा अकमल-उद्-दीन कामिल बेग खान बदख्शी ने इन शब्दो मे सकेत किया है—

'गर न तैमूर शोर व शर करदे, के अमीर ऐन तरफ गुजर कर दे।'[1] (यदि तैमूर इस प्रकार आतक न फैलाता तो अमीर (अमीर कबीर सैयद अली-हमदानी) इस ओर (कश्मीर) कैसे आ जाता।)

उन्होने कश्मीर की यात्रा तीन बार की। सूफी कवि हाजी मह-उद्-दीन 'मिसकीन' (सन् १८५२ ई०—सन् १९२३ ई०) ने अपने प्रबन्ध-काव्य 'यूसुफ-जुलेखा' मे उनका गौरव-गान इन शब्दो मे किया है :

'दीन क्यन अमरन हुन्द सु बअनी, छिस दयान बअनी मुसलमानी,
कअरअन तलकीन लल्ल देवानस, वन्तह बेदाद शाह हमदानस'
नाव छुस पाय बोडअ अमीर कबीर, शाह हमदाद रहबर कश्मीर।[2]

(कश्मीर के पथ-प्रदर्शक तथा प्रसिद्ध नाम वाले श्रेष्ठ अमीर कबीर अली हमदानी सभी धर्मो के सिद्धान्तो के मतावलम्बी हैं किन्तु वे इस्लाम-धर्म के प्रवर्त्तक माने जाते है। उन्होने योगिनी लल्लेश्वरी (लल्लद्यद) को (अपने शास्त्रार्थ से) विश्वस्त किया तथा 'शाह हमदान' की उपाधि पाई।)

यहा उनके सम्पर्क मे शैव मतानुयायिनी लल्लेश्वरी (लल्लद्यद) तथा सूफी-ऋषि शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) आये।[3] इस्लामी तसव्वुफ तथा योग का परस्पर सम्मिश्रण हुआ। विचारो का आदान-प्रदान भी हुआ। शैवमत प्रभावित तसव्वुफ की कुछ पक्तिया इस प्रकार हैं—

'योत यथ जन्मस केह छु लारुन, दारने दारुन सू हम सू'[4]

---

१. कशीर, प्रथम भाग, पृ० ९६।

२. 'यूसुफ जुलेखा' (कलान), हाजी मही-उद् दीन 'मिसकीन' (सरायबली), गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, श्रीनगर (सन् १९६४ ई०), पृ० ५।

३. He came in contact with the popular Saiva teacher Lalleshwari and the great sufi saint Sheikh Nur-ud-din
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४८४।

४. सूफी शअयिर, दूसरा भाग, मुहम्मद अमीन कामिल, अकादमी आफ आर्टस, कलचर एण्ड लेंग्वेजिज, श्रीनगर (सन् १९६५ ई०), शाह गफूर, पृ० ९५।

(इस जन्म मे कोई सारभूत वस्तु ग्राह्य नही, अतः हे प्राणी ! सोऽह्‌ के ध्यान मे अन्तर्लीन हो जा।)

इसके अनन्तर कश्मीर मे अमीर कबीर मीर अली हमदानी के पुत्र मीर मुहम्मद हमदानी का आगमन सन्‌ १३९४ ई० में तीन-सौ सैयदो के साथ हुआ। उसने सुल्तान सिकन्दर को, हिन्दुओ के मन्दिर तथा मूर्तिया तोडने से रोका। जो हिन्दू इस्लाम-धर्म ग्रहण कर चुके थे, वे तथा उनके अगुआ हिन्दू दार्शनिकता तथा प्रचलित विचार-पद्धति का परित्याग न कर सके, जिसके परिणामस्वरूप कश्मीर मे सूफियो के एक नवीन सम्प्रदाय-इस्लामी ऋषि-का प्रादुर्भाव हुआ। जनसाधारण पर इनके विचारो तथा धार्मिक उपदेशों का गहन प्रभाव पडा जिससे एक-दूसरे धर्म के प्रति सहिष्णुता का भाव बढा एव ईश्वर मे आस्था दृढ होती चली गयी।[१] इनको ऋषि, बाबा, साधु आदि नामो से भी सम्बोधित किया जाता था और इनसे ही इस्लाम-धर्म का प्रचार बढा।[२] कश्मीर मे तसव्वुफ के आन्दोलन का प्रमुख उद्देश्य जनसाधारण मे आध्यात्मिकता के भावो का उन्नयन करके धर्म को सरल व सहज रूप प्रदान करना था। रहन-सहन के साधारण नियमो का प्रचार करके तथा मनोमालिन्य को मिटाकर एक-दूसरे के प्रति शुद्ध व्यवहार की भावना को जगाना था।[३]

बुद्धिवाद के घुप अन्धेरे मे अध्यात्म की अमर ज्योति लेकर ही लल्लेश्वरी (लल्लद्यद चौदहवी शताब्दी) कश्मीरी-साहित्य मे उतर आई।[४] उसकी दृष्टि

---

१. The converts and through them their leaders, were unable to resist the Hindu philosophy and trend of thought. This resulted in the emergence of a remarkable school or order of Sufis in Kashmir the Islamic Rishis, who wielded enormous influence on the religious and philosophical benefits of the people, and moulded their mind and set up, the ideal of religious toleration and abiding faith in the grace of God.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४८६।

२. These Muslim Mystics, well known as Rishis or Babas, or hermits, considerably furthered the spread of Islam.

—कशीर, प्रथम भाग, पृ० ९६।

३. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य-कश्रशिरिह आदबश्रव तश्ररीख, पृ० ९५।

४. कश्मीरी भाषा और साहित्य-लेख, 'चतुर्दश भाषा-निबन्धावली' प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प, बिहार राष्ट्र-भाषा परिषद्, पटना-३ (सन्‌ १९५७ ई०), पृ० ४।

में हिन्दू-मुस्लिम एक थे। उसके पश्चात् शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश-सन् १३७७ ई०—सन् १४३८ ई०) की वाणी में ज्ञान, सदाचार तथा भक्ति द्वारा आध्यात्मिक एवं आधिभौतिक सतुलन की प्रेरणा से सवलित गूज प्रस्फुटित हुई। लल्लेश्वरी तथा शेख नूर-उद्-दीन की इस पद्धति को उनके पश्चात् आने वाले सूफी-कवियों जैसे स्वच्छ-काल, शाहगफूर, महमूद गामी, नगमा साहब, रहमान डार, वहाब खार, शम्स फकीर, अहमद बटवारी, शाहकलन्दर, असद परे, वाज़ह-महमूद तथा अहमद राह आदि ने गत्यात्मक रूप प्रदान किया और सूफी भावधारा प्रवाहित होती रही।

(६) कश्मीर तथा भारत के सूफी सम्प्रदाय

कश्मीर के सूफी सम्प्रदाय

कश्मीर मे निम्नलिखित सात सूफी सम्प्रदायों की प्रधानता रही : (१) कादिरिया, (२) सुहरवर्दिया, (३) कुब्रविया, (४) नक्शवदिया, (५) चिश्तिया, (६) नूरबख्शिया तथा (७) ऋषिया (ऋषि सम्प्रदाय) ।

इन मे से प्रथम पांच सम्प्रदायो का आगमन फारस तथा तुर्किस्तान से हुआ जबकि ऋषि-सम्प्रदाय का प्रार्दुभाव कश्मीर मे ही हुआ ।[1] कादिरिया सम्प्रदाय के प्रमुख मुल्लाशाह का प्रचार क्षेत्र कश्मीर रहा ।[2] इसके साथ ही समस्त उत्तरी-भारत विशेषकर कश्मीर सैयद मुहम्मद गौस की प्रभुता के सामने श्रद्धा-पूर्वक ननमस्तक रहा । गौस कादिरी सम्प्रदाय के आदि प्रवर्तक शेख़ अब्दुल कादिर जीलानी का वंशज था ।[3] इस सम्प्रदाय ने विशेषतः इसी (शेख़ अब्दुल कादिर जीलानी) की प्रशंसा अपने प्रबन्ध-काव्यों में की है ।[4]

सुहरवर्दिया सम्प्रदाय के अतर्गत कई उप-सप्रदाय हुए जिनकी शाखाए चलती रही । कश्मीर मे सूफीमत के प्रथम प्रचारक बुलबुलशाह सुहरवर्दी सम्प्रदाय से ही सम्बन्ध रखता था वह सुहरवर्दी सम्प्रदाय के खलीफा शाह नियामतुल्ला वलीफर्सी का शिष्य था जिसको प्रवर्त्तन शेख शहाब-उद्-दीन सुहरवर्दी

---

१. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य-मुख्तसर तारीख कश्मीर, पृ० १२५ ।

२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २४ ।

३. हिन्दी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० ३०५ ।

४. द्रष्टव्य-लैला मजनू, कबीर लौन, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, श्रीनगर (सन् १९६२ ई०), पृ० ३ ।

ने किया था ।[१]

कुब्रविया सम्प्रदाय से सम्बन्धित कश्मीरी सूफी कवियो ने अपने ग्रन्थारम्भ में अमीर कबीर सैयद अली हमदानी की प्रशसा की है । कश्मीर की तीन बार यात्रा करने वाले सैयद अली हमदानी कुब्रवी सम्प्रदाय से ही सम्बन्धित था किन्तु अवतार कृष्ण रहबर का कथन है कि वह नक्शबन्द सप्रदाय से सम्बन्ध रखता था । उसके उपदेशों से यहा के ऋषि तथा योगी इतने प्रभावित हुए कि ऋषियो, दर्वेशो तथा फकीरो के एक नए सप्रदाय का उद्भव हुआ जिन्होने इस युग में आध्यात्मिक सदेश का मधुर स्वर सुनाया ।[२] अवतार कृष्ण रहबर का यह मत मान्य एव उपयुक्त प्रतीत नही होता क्योकि प्राय: कश्मीरी सूफी-कवियो ने अमीर कबीर सैयद अला हमदानी को कुब्रवी सम्प्रदाय से ही सम्बन्धित दिखाया है ।[३] कुब्रविया सम्प्रदाय के विषय मे विद्वानो का मतैक्य नही है । कुब्रविया तथा फिरदौसिया सप्रदायो को समान एव सुहरवर्दिया सम्प्रदाय के अतर्गत मानते हुए कहा गया है कि शेख नज्म-उद्-दीन कुब्र (मृ० सन् १२२१ ई०) के पश्चात् कुब्रविया : (फिरदौसिया) वश की स्थापना हुई । इसे 'वली त्रास' से भी सबोधित किया जाता है ।[४] अबुल-फजल ने फिरदौसिया को पृथक् सम्प्रदाय माना है ।[५] यह भी कहा गया है कि कुब्रवी सम्प्रदाय सुहरवर्दिया की एक शाखा है ।[६]

-- --

१. Disciple of Shah Namatullah Wali Farsi, a Khalifa of the Subrawardi tariq or school of sufis founded originally by Shiekh Shihab-ud-din Suhrawardi.
—कशीर, प्रथम भाग, पृ० ८२ ।

२. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य-कअशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० १२७, १२८ ।

३. द्रष्टव्य (१) यूसुफ जुलेखा (हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' सरायबली) गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगंज बाजार, श्रीनगर, पृ० ५ ।
(२) रैणा व जेबा (शम्स-उद्-दीन हैरत), गुलाम मुहम्मद-नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगंज बाजार, श्रीनगर, पृ० ३ ।
(३) मुमताज बनजीर (अजीज अल्लाह हक्कानी), गुलाम मुहम्मद-नूर मुहम्मद, महाराज रणवीर गज बाजार, श्रीनगर, पृ० ३ ।

४. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य, सूफी शअयिर, प्रथम भाग, पृ० ४२ ।

५. सूफीमत और हिन्दी साहित्य, पृ० ८२ ।

६. The Kubrawis are a branch of the Subrawardi Sufis.
—कशीर, प्रथम भाग, पृ० ८९ ।

नक्शकदिया सप्रदाय ने आदि प्रवर्त्तक ख्वाजा बहा-उद्-दीन नक्शबन्द को मान्यता दी है। नक्शबदी सम्प्रदाय के विषय मे कहा गया है कि वे असाम्प्रदायिक मुसलमान थे जिनका विश्वास यह था कि इहलोक के जीवन में कष्ट उठाने पर ही पारलौकिक जीवन सुधारा जा सकता है। इस सम्प्रदाय की विचारधारा का स्वरूप लल्लेश्वरी (लल्लद्यद) के परम्परागत सिद्धान्तो को सामने रखकर समझा जा सकता है।[१]

चिश्तिया सम्प्रदाय भी कश्मीर के सूफी सम्प्रदायो मे सब से अधिक प्रसिद्ध रहा। नूर बख्शिया सम्प्रदाय का प्रवर्त्तक कोहिस्तान मे उत्पन्न मुहम्मद बी० अब्दुल्ला (जन्म सन् १३९३ ई०) था। अपनी शिक्षा समाप्त करके वह खलतान के ख्वाजा इशाक का शिष्य बना जो स्वय सैयद अली हमदानी का शिष्य था। ख्वाजा इशाक ने ही उसे नूरबख्श की उपाधि से सम्मानित किया। कश्मीर मे नूर-बख्शिया सम्प्रदाय के प्रवर्तन का श्रेय कुण्ड ग्राम के शम्स-उद्-दीन को ही है।[२]

लल्लेश्वरी (लल्लद्यद) द्वारा समर्थित 'ऋषि-सम्प्रदाय' के प्रवर्त्तक शेख-नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) के इस सम्प्रदाय मे हिन्दू मुसलमान दोनो प्रकार के ऋषि सम्मिलित थे जिन्हे कश्मीरी जनता बिना किसी भेद-भाव के आदर करती थी।[३]

---

१. The Nakshbandis were unorthodox Muhamadans, that a life could be purchased by the sacrifice of another life and an occasion acted on this doctrine, which partly explains legendery of Lalla herself.

—दि वर्ड आफ लल्ल, पृ० ५।

२. The founder of the Nur-bakshiya was Sayyid Mohammad B. Abdulla, who was born in 1393 A. D. After finishing his education he became the disciple of Khawaja Ishaq of Khatan, who was himself a disciple of Sayyid Ali Hamdani. Khawaja Ishaq gave him the title of Nurbaksh and conferred upon him the mantle of Sayyid Ali Hamdani. The Nur Bakhshia sect in Kashmir was introduced by Shams-ud-din who was born in the village of Kund.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्ताज, पृ० २८४-२८५।

३. Nund Rishi founded on order of Rishis, and it is noteworthy that the order had members from amongst Hindus & Muslims and commanded the respect and homage of all Kashmiris irrespective of their caste and creed.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४८८।

ज्ञात होता है कि योंश-साहित्य की परम्परा कम से कम सोलहवीं शती तक जारी रही होगी।[१] इसी परम्परा मे आने वाले सभी सन्तों को 'इस्लामी ऋषि' की सज्ञा दी गई। इस्लाम के सिद्धान्तों तथा शैवमत की अनुयायिनी होने के कारण इस सम्प्रदाय के अन्तर्गत आने वाली लल्लेश्वरी (लल्लद्यद) ने जाति-भेद का खण्डन करके मूर्ति-पूजा की व्यर्थता प्रकट की थी।[२] कतिपय सूफी-कवि एक से अधिक सूफी सम्प्रदायों से भी सम्बन्धित थे। इस ओर पीर अजीज हक्कानी ने संकेत किया है।[३]

भारत के सूफी सम्प्रदाय

'आईने-अकबरी' मे अबुल फजल ने अपने समय के चौदह सूफी सम्प्रदायो का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार है :

चिश्ती, सुहरवर्दी, हबीजी, तफूरी, करर्वी, सकती, जुनेदी, काजरूनी, तूसी, फिरदौसी, जैदी, इत्यादी, अधमी और हुबेरी। इनकी अनेक शाखाए फैली।[४]

भारत में आने वाले सूफी सम्प्रदायो मे चिश्तिया, नक्शबंदिया, कादिरिया, तथा सुहरवर्दी आदि चार सम्प्रदाय ही प्रमुख रहे है यद्यपि हुज्वैरी ने अपने ग्रन्थ मे बारह सूफी सम्प्रदायो का उल्लेख किया है।[५]

चिश्तिया सम्प्रदाय का इतिहास ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती से ही प्रारम्भ होता है। इस सम्प्रदाय की दो अन्य शाखाए थीं। ख्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया ने औलिया नामक एक स्वतन्त्र सप्रदाय बनाया जिसका केन्द्र बदायू बना। शेख-अलाउल अली अहमद साबिर ने चिश्तिया सम्प्रदाय मे साबिरी नामक एक नई शाखा स्थापित की। अमीर खुसरो ख्वाजा निजामुद्दीन औलिया के ही शिष्य थे।[६]

---

१. कश्मीरी भाषा और साहित्य पृ० ७।

२. She denounced the caste system and criticised idolotory as a useless and even silly work.

—दि वर्ड आफ लल्ल, पृ० १६६।

३. कादिरी छुस गुलाम हलकह बगोश, राह कुब्री में रहबरी लो लो।
सुहरावर्दी व चश्त्युक इरशाद, छुम बराह कलन्दरी लो लो॥

—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० २६।

४. सूफीमत और हिन्दी साहित्य, पृ० ८३।

५. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २१।

६. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ६।

नक्शबन्दिया और कादिरिया का प्रचार इस दे । मे सोलहवी शताब्दी के अन्त मे हुआ । टी० डब्ल्यू आरनोल्ड के अनुसार शेख अहमद फारूकी सिरहिन्दी ने जो सन् १६२५ ई० मे मृत्यु को प्राप्त हुए, इस (नक्शबन्दी सम्प्रदाय) को भारत में चलाया था ।[1] यहा कादिरी सप्रदाय के आदि प्रवर्त्तक बगदाद के शेख अब्दुल कादिर जीलानी (सन् १०७८ ई०—सन् ११६६ ई०) थे ।[2]

सुहरवर्दिया सम्प्रदाय के प्रथम नेता सिन्ध मे आकर बसे थे, अतः सिन्ध से लेकर मुलतान तक का प्रदेश ग्यारहवी शताब्दी से ही सूफीमत का केन्द्र रहा है । इस सम्प्रदाय के अनेक सत हुए जिन्होने सिन्ध, पजाब, गुजरात, बिहार और बगाल आदि प्रान्तो मे सूफीमत का प्रचार किया ।[3] ये सभी सम्प्रदाय कट्टरपथी नही थे । उदारता और हृदय की विशालता इन मे कूट-कूट कर भरी हुई थी । अनुभव-सचय के लिए ये विविध स्थानो का भ्रमण करते थे और विद्वानों से भेट करते थे ।[4]

कश्मीर का विशिष्ट सूफी सम्प्रदाय

उपर्युक्त विवेचन से ज्ञात होता है कि कश्मीर तथा भारत मे प्रमुख सम्प्रदाय प्रायः समान रहे यद्यपि कश्मीर मे इस्लामी ऋषि-सम्प्रदाय की अपनी स्थानीय विशेषतः रही जो धार्मिक बाह्य विधि-विधानो का विरोधी होकर आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने के मत मे था ।[5] इस में हृदय की विशालता परिपूर्ण रूप में विद्यमान थी और यह सप्रदाय भी प्रमुख रूप से प्रेम तथा आदर्श का स्वर मुखरित करता रहा । यों तो सभी सूफी सप्रदाय हिन्दू-मुस्लिम एकता और पारस्परिक मानव-प्रेम के प्रचारक थे, किन्तु सूफियों के सपूर्ण सम्प्रदाय मूलतः विदेशी ही थे । कश्मीर का 'ऋषिया' इस्लामी ऋषि सम्प्रदाय जहा मौलिक रूप मे भारतीय रहा वहा उसका नामकरण भी 'ऋषि'

---

१. सूफीमत और हिन्दी साहित्य, पृ० ८६ ।
२. हिन्दी का आलोचनात्मक इतिहास, पृ० ३०५ ।
३. वही, पृ० ८५ ।
४. जायसी और उनका पद्मावत, प्रा० लेखक डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, लेखक दान बहादुर पाठक व जीवन प्रकाश जोशी, हिन्दी साहित्य संसार, नई सड़क, दिल्ली, प्रथम सस्करण (सन् १९५६ ई०), पृ० ४४ ।
५. नूरनामा, शेख नूर-उद्-दीन, संपादक, मुहम्मद अमीन कामिल, जम्मू व कश्मीर अकादमी आफ आर्टस व कल्चर एण्ड लेंग्वेजिज, श्रीनगर, पृ० २७ ।

शब्द के ही आधार पर हुआ। वस्तुतः हिन्दू-धर्म के उदात्ततम आदर्श मानवता-वाद के समर्थक रहे हैं। प्रेम और विश्वबधुत्व की वृत्ति ही उसमे प्रमुख रही है, पर उसे इस्लामी राज्य मे उसी के समकक्ष प्रेम तथा मानवता की भावना सूफियो के सन्देश मे उपलब्ध हुई। उसे लल्लेश्वरी (लल्लद्यद) का समर्थन प्राप्त था। फलत' यह सम्प्रदाय अन्य सम्प्रदायो की अपेक्षा कश्मीर के हिन्दुओ मे अधिक लोकप्रिय सिद्ध हुआ। इस सम्प्रदाय मे व्यावहारिक रूप मे हिन्दुओ के बाह्याचार और जीवन-पद्धति सुरक्षित रही तथा हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की वह मनोरम प्रतिष्ठा हुई जिसका रूप आज भी अभिव्यजित होता रहता है। इसने कश्मीरी जीवन-पद्धति को और हिन्दू एव मुसलमानो के पारस्परिक सम्बन्ध को सर्वाधिक प्रभावित किया।

(७) कश्मीर तथा भारत के अन्य सूफी केन्द्र

कश्मीर के सूफी-केन्द्र

तसव्वुफ की आध्यात्मिक धारा के प्रवाहित होते ही कश्मीर मे खानकारों की स्थापना हुई और अमीर कबीर सैयद अली हमदानी (शाह हदमान) के समय मे यह परम्परा अधिक बल पकडती गई। तदनन्तर ऋषियों की जियारतो का भी निर्माण हुआ। यही खानकाहें तथा जियारते फारसी की शिक्षा-दीक्षा के केन्द्र बन गए। यह शिक्षा अधिकतर धार्मिक हुआ करती थी। प्रत्येक खानकाह, जियारत और मस्जिद आरम्भ से ही एक मदरसा भी थी। अब कुछ राजकीय मदरसे भी खुल गये। फारसी भाषा शाहमीर के राजत्व-काल (सन् १३३६ ई०—सन् १३४२ ई०) से पूर्व ही कश्मीर मे प्रवेश पा चुकी थी जिसके प्रसार से सस्कृत-भाषा का क्षेत्र सकुचित हो गया।[१] अमीर कबीर सैयद अली हमदानी ने अल्ला-उद्-दीन पुरा को अपना सूफी-केन्द्र बनाया था। उस समय वहा एक मदिर था जहा सुल्तान तथा उसकी मुस्लिम प्रजा प्रायः आया करती थी।[२] यही पर उन्होने फारसी-काव्य मे सूफी-सबोधन-गीत लिखे जो अपनी उच्चता के कारण जीवन तथा धर्म के उदार मानवतावादी दृष्टिकोण से परिपूर्ण थे।

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य-कश्मीरी ज़बान और शायरी, द्वितीय भाग, अब्दुल अहद आज़ाद, जम्मू एण्ड कश्मीर, अकादमी आफ आर्टस व कल्चर एण्ड लेंग्वेजिज़, श्रीनगर (सन् १९६२ ई०), पृ० ४७।

२. In Alla-ud-din Pura, where Hamdani with his followers was lodged, for instance, there was a temple which was visited every morning both by the Sultan and his Muslim subjects.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४८४।

शेख नूर-उद्-दीन (नुंदर्योश) के समय कैमुह (तहसील कुलगांव) एक प्रतिष्ठित सूफी-केन्द्र था। जब अमीर कबीर सैयद अली हमदानी तथा लल्लेश्वरी (लल्लद्यद) का साक्षात्कार हुआ तब वे दोनों कैमुह की तरफ रवाना हुए।[१] सैयद अली हमदानी के दिवंगत हो जाने पर उनका पुत्र सैयद मीर मुहम्मद हमदानी, शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) से मिलने कैमुह आये।[२] यहीं पर नुंदर्योश ने 'नूरनामा' की रचना की। यहां वे अपने शिष्यों के एक बडे समुदाय के साथ रहा करते थे—जिन में दोनो स्त्री एवं पुरुष सम्मिलित थे।[३] इनमें से बाबा बाम-उद्-दीन, हज़रत ज़ैन-उद्-दीन, बाबा लतीफ-उद्-दीन तथा बाबा नसर-उद्-दीन आदि उनके चार प्रमुख शिष्य थे। इन चार शिष्यो मे हज़रत-ज़ैन-उद्-दीन की ज़ियारत ऐशमुकाम में पहलगाव जाने वाली सड़क से पाच सौ फीट की ऊंचाई पर एक पर्वत-खण्ड के ऊपर स्थित है।[४] प्रत्येक गांव या प्रान्त में उस स्थान पर जियारत होती थी, जहां कोई ऋषि अपनी तपस्या में लीन रहता था। शेख नूर-उद्-दीन (नुंदर्योश) के वास के कारण चरार शरीफ तथा द्रयगाम आदि भी महत्वपूर्ण सूफी-केन्द्र रहे।

चरार शरीफ के विषय मे कवि वली अल्लाह मतो ने 'ह्यिमाल'[५] तथा कबीर लोन ने लैलामजनू[६] आदि प्रबन्ध काव्यों मे इसकी प्रशसा की है।

मुगलों ने कश्मीरी भाषा तथा साहित्य के प्रति द्वेष-पूर्ण नीति अपनाई।[७]

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य-कश्मीरी ज़बान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० १५१।

२. वही पृ० १७७।

३. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य-कअशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० १७१।

४. The Ziarat at Aish Mukam, perched on the scrap of a hill 500 feet above the Pahalgam road, was built in memory of Baba Zain-ud-din, one of the four disciples of Sheikh Nur-ud-din.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४८८, ५३६।

५. मदीनुक युन गच्छहुन आमद शुद चरार ह्यिमाल, गुलाम मुहम्मदनूर मुहम्मद श्रीनगर द्वारा प्रकाशित, पृ० ११।

६. 'वअतित शाम बो द्रायोस सदवये, वअतित प्योस मंज चरार'

—पृ० ८।

७. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य-कअशिर शअयरी (सन् १३३५ ई०—सन् १६५८ ई० तक) प्रो० मही-उद्-दीन हाजनी, साहित्य अकादमी, दिल्ली, पृ० १३।

अभी तक सूफी-कवि कश्मीरी भाषा में अपनी मुक्तक रचनाओ द्वारा आध्यात्मिकता का सन्देश दे रहे थे किन्तु उनके आते ही फारसी-भाषा मे सूफी-काव्यों की रचना होने लगी और कश्मीरी सूफी-काव्य न्यून ही लिखे गए। फारसी सूफी कवि मुल्ला मुहसिन फानी (सन् १६१५ ई०—सन् १६७१ ई०) ने कुतुबदीन पुर (वर्तमान गुरगारी मुहल्ला) की उस खानकाह मे अपना एकान्त जीवन बिताया जो दाराशिकोह ने वितस्ता के तट पर निर्मित की थी। यही पर उसने सन् १६४५ ई० मे 'दबिस्तान-ए-मजाहिब' की रचना की।[१] यह सूफी-केन्द्र अत्यन्त प्रसिद्ध रहा।

डलीपुर (काबडारा) भी एक प्रसिद्ध सूफी-केन्द्र रहा है। 'लैला-मजनू' के रचयिता अब्दुल कबीर लोन (सन् १८७५ ई०—सन् १९४० ई०) ने अपने घर में एक सत्र खोला था। समद बजाज, सिकन्दर तथा अहदजरगर उनके प्रसिद्ध शिष्य रहे जिन में से अब केवल अहदजरगर सूफी-काव्य में अभिवृद्धि कर रहा है। उनका निवास डलीपुर के निकट डागरपुर मे है। आज से पच्चीस वर्ष पूर्व उन्होने कश्मीरी भाषा मे 'गुल सनोबर' नामक एक सूफी प्रबन्ध-काव्य की रचना की जो अभी भी उनके पास अप्रकाशित रूप में सुरक्षित है।[२]

भारत के अन्य सूफी-केन्द्र

ईसा की तेरहवी और चौदहवी शताब्दी मे मुस्लिम धर्म प्रचारकों और सूफियो का पूरा ज़ोर देश के कई भागो मे रहा। पजाब, कश्मीर, डेक्कन तथा देश के पूर्वी भागों मे उन दो शताब्दियों में इनका कार्य पूरे जोश के साथ हुआ।[३] कश्मीर के अतिरिक्त आरम्भ से ही धर्म-प्रचारक तथा सूफी-सन्त सिन्ध और पजाब मे आते रहे। मुसलमानों के आक्रमण सिन्ध और पजाब में ही सर्वप्रथम होते रहे, और इसी कारण वहीं की भाषाओ में सूफी काव्य की रचना

---

१. He took to a life of seclusion in a monastry built by Dara Shikoh on the river bank at Kutab-din-Pura (present Gurgari Mohalla). Here in 1645 A. D. he wrote his Dabistan-e-Mazahib.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५११।

२. सूफी शअयिर, (तृतीय भाग), संपादक, मुहम्मद अमीन कामिल, जम्मू व कश्मीर अकादमी आफ आर्टस, कल्चर एण्ड लेंग्वेजिज, श्रीनगर (सन् १९६५ ई०), पृ० ७४।

३. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ४०९।

भी सर्वप्रथम आरम्भ हुई ।[१] पजाब के सूफी-साधक आरम्भ मे अपने काव्य की रचना फारसी भाषा मे उसी परम्परा तथा आदर्श के अनुसार करते थे ।[२] दिल्ली, मुलतान, उलमऊ, आगरा, जौनपुर फारसी साहित्य के अच्छे केन्द्र थे जहा न केवल मुस्लिम धर्म और परम्परा का अध्ययन होता था बल्कि फारसी के सूफी कवियो का भी अध्ययन होता था ।[३] फीरोजशाह तुगलक के समय मे ऐसे कई नए मदरसे कायम हुए ।

सर्वप्रथम सूफी-साधको का आगमन सिन्ध मे ही आरम्भ हुआ । सिन्ध के सूफी-साधक शेख भावल दीन, शेख फरीद गज, तथा शेख मखदूम जलाल-उद्-दीन से प्रभावित थे जो उसमान शाह के साथ बगदाद से चले आये थे । कश्मीर के सूफीमत के प्रवर्त्तक बुलबुलशाह भी बगदाद मे पर्याप्त समय रहे थे । सिन्ध मे सूफीमत के प्रथम प्रवर्त्तक उस्मान शाह थे । उस्मान शाह का जन्म सन् १३१८ ई० मे अफगानिस्तान मे पारबन्द* नामक शहर में हुआ था और सन् १३५० ई० मे बगदाद से वे सिन्ध के लिये चले गये ।[४] धीरे-धीरे ये सूफी-साधक उत्तरी-भारत के अन्य भागो मे फैल गये ।

हिन्दी सूफी-प्रेमाख्यानो के निर्माण के दो प्रमुख केन्द्र रहे हैं । उत्तर भारतीय हिन्दी प्रेमाख्यानों की सर्जनाए मुख्य रूप से जौनपुर प्रदेश या जौनपुर सरकार के अन्तर्गत हुई है । कडा, डलमऊ, अवध, सडीला, जफराबाद, जौनपुर, बिहार आदि उसी के अधीन थे । चुनार, जायस आदि भी जौनपुर-राज्य से सम्बद्ध थे ।[५]

फीरोजपुर तुगलक ने दिल्ली के अतिरिक्त डलमऊ मे भी एक बडा मदरसा कायम किया ।[६] उत्तर प्रदेश (वर्तमान जिला रायबरेली) के डलमऊ गाव मे मौलाना दाऊद के हृदय में फारसी पढने की प्रवृत्ति जगी और उसने एक ऐसी रचना प्रस्तुत करने का सकल्प किया जिसके द्वारा न केवल हिन्दू तथा मुस्लिम

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १३१ ।

२. वही, पृ० ११५ ।

३. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ११ ।

*डा० सरलाशुक्ल ने इस स्थान का नाम परबन्द दिया है, द्रष्टव्य-जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १३२ ।

४. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ४१५ ।

५. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, डा० शिवसहाय पाठक, ग्रन्थम्, रामबाग, कानपुर (नवम्बर १९६४), पृ० ४८६ ।

६. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ११ ।

जनता के बिगड़ते हुए पारस्परिक सम्बन्ध को सुधारने मे सहायता मिले प्रत्युत् जिसके आधार पर अपने सूफीमत की मान्यताओ का प्रचार भी सभव हो सके। उसने वहां की पूर्व प्रचलित लोरक और चदा की प्रेमकहानी के लोक-गीतात्मक कथानक को ही अपनी रचना का आधार बनाया।[1]

दक्षिण भारत और डेक्कन में भी यह धर्म-प्रचार का कार्य करता रहा।[2] दक्खिनी हिन्दी के सर्वप्रथम ग्रन्थकार ख्वाजा बन्दानवाज़ गेसूराज मुहम्मद हुसैनी (सन् १३१८ ई०—सन् १४२२ ई०) है। इनके पिता सैयद यूसुफ धर्म के प्रचारार्थ ही दक्षिण की ओर आये थे।[3] दक्खिनी हिन्दी के सभी कवि दरबारी रहे है।[4]

इन केन्द्रों का पारस्परिक सम्बन्ध

कश्मीरी सूफी-केन्द्रो की स्थापना या तो पश्चिमी-क्षेत्रो से आने वाले सूफी-सन्तो के द्वारा की गई अथवा स्वय कश्मीर स्थित सूफियो के द्वारा। इन कश्मीरी-सूफी केन्द्रो का जौनपुर राज्य मे स्थित विविध सूफी-केन्द्रो के साथ कोई सम्बन्ध या सम्पर्क था अथवा नही, इसके सम्बन्ध मे कोई प्रमाण उपलब्ध नही हुआ। अकबर से पहले तक तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि उन मे किसी प्रकार का सम्पर्क नही था क्योकि जहा जौनपुर राज्य के केन्द्रो मे स्थानीय भाषाओ मे सूफी-काव्यो की कई रचनाए उपलब्ध होती हैं, वहा उसी परिमाण मे कश्मीर मे सूफी-काव्यो की उपलब्धि नही होती। जिन कश्मीर स्थित सूफी-कवियो ने कोई सूफी रचना प्रस्तुत भी की है, वे फारसी मे ही हैं। इससे स्पष्ट है कि जौनपुर राज्य के केन्द्र के सूफी-कवियो ने जनभाषा को जिस प्रकार साहित्य का माध्यम बनाया, उस प्रवृत्ति का कश्मीर मे लम्बे समय तक अभाव रहा। इसके दो मुख्य कारण थे। पहला यह कि कश्मीर के शासक मुसलमान थे। वे फारसी का प्रयोग करते थे और उच्च वर्गीय हिन्दुओ तथा इन मुसलमान शासको की पारस्परिक दूरी अधिक नही थी, जैसी दूरी जौनपुर के मुसलमान शासको और उस क्षेत्र की हिन्दू प्रजा के बीच थी। इस कारण कश्मीर के सूफी-कवियो को फारसी मे अपनी विचारधारा को प्रस्तुत करके भी वैसा अटपटा न लगता होगा जैसा जौनपुर की हिन्दू प्रजा के बीच फारसी के प्रयोग का लगता।

१. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ११६।
२. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ४१८।
३. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १३३।
४. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृ० ४८६।

दूसरा कारण सपर्क के अभाव का है। जिस समय यातायात के साधन अधिक बढ़ गए उस समय कश्मीर में और उत्तर प्रदेश के सूफी-केन्द्रो का सम्बन्ध स्वाभाविक रूप से स्थापित हो गया और यह अकबर के राज्यकाल मे हुआ। इसलिये इस काल में इन दो केन्द्रों के आदान-प्रदान की मात्रा अधिक है, किन्तु उस समय मुग़लो के अधिकार मे न रहने के कारण कश्मीर-स्थित सूफी-कवियो या केन्द्र के साधको का उत्तर-प्रदेश के केन्द्रो की ओर आवागमन राजनीतिक कारणों से सभव न हुआ होगा, अतः सपर्क के अभाव का यह दूसरा कारण अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा होगा।

(८) सूफी-सिद्धान्तों का संक्षिप्त परिचय तथा दार्शनिक पृष्ठभूमि

सूफी-सिद्धान्तों का संक्षिप्त परिचय

सूफी-धर्म का मूल इस्लाम को एक गहरा धर्म मानने में है[१], अतः सूफी-मत इस्लाम-धर्म का ही एक अंग है।[२] सनातन-पथ इस्लाम की नांई सूफी भी अपने सिद्धान्तो और क्रियाओं की परीक्षा कुरान और हदीस को ही दृष्टि मे रखकर करते है, लेकिन सूफीमत इस्लाम के सिद्धान्तो और कुरान के वचनो का अर्थ वैसा नहीं करते जैसा कि सनातन-पंथी इस्लाम को मान्य है। सूफी अक्षरार्थ पर उतना नही जाते जितना उसकी आध्यात्मिक एवं रहस्यवादी व्याख्या पर।[३] उनके सिद्धान्त बहुत-कुछ व्यक्तिगत, आध्यात्मिक तथा रहस्य-वादी अनुभूति पर आधारित हैं। भिन्न-भिन्न देशों और उनके महापुरुषों का प्रभाव निरन्तर पडते रहने के कारण, इस मे कई बाह्य बातों का भी समावेश हो गया है और इसके मौलिक सिद्धान्तो एवं साधनाओं तक में बहुत-कुछ मत-भेद आ गया है।[४]

सूफीमत के प्रारम्भिक काल से ही कुछ साधकों में रहस्यवादी प्रवृत्तियों का आभास मिलता है यद्यपि उस समय के सूफी साधक अधिकतर फकीरी एवं ऐकान्तिक जीवन ही व्यतीत करते थे। प्रारम्भिक काल में इस्लाम-धर्म के बहु-सख्यक अनुयायियो मे संन्यास जीवन बिताने की जो प्रवृत्ति देखी जाती है उसमें

---

१. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० ६८।

२. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ३३।

३. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० १-२।

४. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० ३३।

परमात्मा का भय तथा कुरान के वचनो का बहुत-बडा हाथ है।[१] ज्यो-ज्यो सूफीमत का विकास होता गया एव उस मे रहस्यवादी प्रवृत्तियों का समावेश होने लगा, त्यो-त्यो इन विधि-विधानो के उद्देश्य में परिवर्तन ने स्थान लिया और पहले के साधन केवल साधन-मात्र बनकर रह गये।

ईरान में इस्लाम के प्रवेश के अनन्तर मानी धर्म किसी न किसी रूप मे बना रहा। यह बौद्ध-धर्म का सस्करण-मात्र था और इसने बाद के मतवादो और विचारधाराओ को किसी न किसी रूप मे प्रभावित किया है।[२] प्रारम्भ मे जव सूफियों के मत का प्रचार हुआ था तब उन्हे अनेक प्रकार के अत्याचार सहने पडे थे। जीव और जगत् को भी ब्रह्म मान लेने के कारण वे प्रकृति के अणु-अणु में उसी चेतन-सत्ता का साक्षात्कार करते और भाव-मग्न होते थे। मुसलमानों के खुदा तो बिहिश्त के निवासी, मनुष्यो के निर्माता और नाशवान् होते हुए भी निराकार निर्लेप रहे, पर सूफियो के नवीन सम्प्रदाय मे प्रेम की इतनी प्रधानता हुई कि सृष्टि के रोम-रोम मे उन्हे आनन्द की झलक देख पडने लगी। जब सर्वत्र ब्रह्म है, तब बुत मे भी ब्रह्म का होना अनिवार्य है।[३]

सूफियों की धारणा यह है कि मानव इस संसार में परमात्मा से विमुक्त है और उसके साथ पूर्ण आत्मीयता का अनुभव करना ही उसके जीवन का अन्तिम लक्ष्य होना चाहिये। अल् हुज्वेरी का कथन है कि परमात्मा के प्रति प्रत्येक मानव के हृदय में जो विकास होता है वह सर्वप्रथम उसके लिये श्रद्धा के रूप में पाया जाता है। यही क्रमशः व्यापक बनता चला जाता है तथा प्रेमी साधक को उस समय तक शान्ति उपलब्ध नही होती जब तक कि उसे पा नहीं लेता। उसके लिये बेचैन होकर वह तडपने लगता है। वह प्रत्येक सासारिक विषय की ओर से अनासक्त बन जाता है और केवल प्रेमी के ही नियमो का परिपालन करके परमात्मा का पूर्ण परिचय प्राप्त करता है।[४] एकान्त-सेवन सूफी-साधना की प्रिय वस्तु बन गई और सनातन पन्थी इस्लाम के बाह्याचार (नमाज़, हज, रोजा, जकात आदि) पर बल डालने की अपेक्षा उसमे आन्तरिक पवित्रता को ही प्रमुखता दी गई है। परमात्मा और मनुष्य के बीच रागात्मक

---

१. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० २८।

२. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० १२२।

३. हिन्दी भाषा और साहित्य, पृ० २८६।

४. कश्फ-उल-महजूब, निकल्सन महोदय द्वारा अनूदित, सन् १९११ मे लन्दन में प्रकाशित, पृ० ३०७-३०८।

सम्बन्ध सूफीमत की विशेपता है ।[१]

सूफियो की एक कहावत है कि 'अल मजाजो कतरतुल हकीकी' अर्थात् मजाज हकीकत का पुल है ।[२] इस वात की पुष्टि अधिकतर फारसी साहित्य मे होती है जहा यह कहा गया है कि सासारिक प्रेम के मार्ग पर चलकर ईश्वरीय प्रेम को प्राप्त किया जा सकता है । अब्नुल अरबी (मृ० सन् १२४० ई०) ने स्त्री प्रेम को ईश्वरीय प्रेम बताया है ।[३] उसके अनुसार लौकिक प्रेम भी ईश्वरीय प्रेम की भाति है । उसने नारी के प्रेम को भी ईश्वरीय प्रेम की तरह ही पवित्र माना है । मौलाना रूमी ने एक स्थान पर कहा है 'स्त्री ईश्वरीय किरण है । वह सासारिक प्रेमिका नही है । वह निर्माता है, निर्मित नही ।'[४] इस प्रकार मौलाना रूमी ने स्पष्ट रूप से कहने का प्रयत्न किया है कि सासारिक प्रेम ईश्वरीय प्रेम नही है तथा जब तक आत्मा की शुद्धि नही होती, ईश्वरीय प्रेम सभव नही । वह इस बात को भी स्वीकार करता है कि सूरत तथा रग पर आधारित प्रेम अत मे खोखला प्रमाणित होता है ।[५] जामी ने अपने प्रेमाख्यान 'यूसुफ-जुलेखा' मे कहा है कि प्रेम द्वारा ही अपने स्व से मुक्ति प्राप्त हो सकती है । युवावस्था मे विचार सासारिक प्रेम की ओर झुकते है । यही सासारिक प्रेम ईश्वरीय प्रेम मे बदल जाता है । यह प्रारम्भिक वर्णमाला है, इसके बाद हम ईश्वरीय ससार को ग्रहण करते है और उसके सहारे उसका चिंतन करते है ।[६] उसने यह बात स्वीकार की है कि इश्क मजाजी मे और इश्क हकीकी में कोई वास्तविक अतर नही है जिस कारण, पहला दूसरे तक पहुचने का स्वाभाविक सोपान भी बन सकता है ।[७]

इस प्रेम का उदय जब साधक के हृदय मे होता है, उस समय विरह के कारण सपूर्ण सासारिक वस्तुएं उसके लिये तुच्छ हो जाती है । इमाम गज़ाली ने लिखा है अल्लाह सत्तर हजार पर्दों के भीतर है जिसमें से कुछ प्रकाशमय

१. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ३७९ ।

२. मध्युगीन प्रेमाख्यान, पृ० १९ ।

३. वही, पृ० १९ ।

४. वही, पृ० १९ ।

५. 'इश्क हाये कज पैये रंगे बुवद ।
इश्क न बुवद आकबद नगे बुवद ।'
—मौलाना रूम, जगदीश चन्द्र वाचस्पति, कलकत्ता, पृ० २१६ ।

६. यूसुफ-जुलेखा, आर० टी० एच० ग्रिफथ, लंदन, पृ० २४ ।

७. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ८-९ ।

और कुछ अन्धकारमय है और यदि वह उन आवरणों को हटा लेवे तो जिस किसी की दृष्टि उस पर पड़ेगी वह उसके प्रखर प्रकाश द्वारा दग्ध हो जायेगा।[१] साधक परमेश्वर के समक्ष पहुचते-पहुचते अपने सभी भौतिक एव ऐन्द्रिय गुणों मे रहित हो जाता है। उसके मार्ग की अन्तिम मजिल प्रेम और मारिफ (ज्ञान) है जिसके द्वारा साधक परमात्मा के दर्शन करने एव एकमेक होने में सफलता प्राप्त करता है। उस समय साधक की आत्मा का परमात्मा मे लय हो जाता है जिसे सूफी 'फना' कहते है।

सूफियो ने आध्यात्मिक जीवन को एक यात्रा (सफर) माना है। उसे सप्त सोपानो से अग्रसार होना पडता है जो केवल प्राथमिक दशा को ही सूचित करते है। इन्हें अतिक्रांत कर साधक को फिर चार प्रकार के अन्य सोपानो को भी लाघना पडता है जो इन से अधिक उच्चस्तर पर विद्यमान है।[२] ये सात सोपान—अनुताप, आत्मसंयम, वैराग्य, दरिद्रता, धैर्य, ईश्वर-विश्वास तथा सतोष है। जब सालिक (साधक) सप्तम सोपान पर पहुचता है, वह शान्त-भाव को प्राप्त हो जाता है और उसी के आधार पर वह अतीद्रिय आध्यात्मिक ज्ञान का अधिकारी बन जाता है।

इन सात सोपानो के अतिंक्रमण के अनन्तर साधक साधना करते हुए आगे के चतुर्विध सोपानो—मारिफत, प्रेम, वज्द (उन्मादना) तथा वस्ल (ईश्वर मिलन) को प्राप्त होता है। मारिफत में गहरी अनुभूति का अश धारण करके जब साधक भावापन्न हो उठता है, उस आवेशावस्था मे ही वास्तविक 'प्रेम' की अभिव्यंजना होती है। तदनन्तर उन्मादना (वज्द) अथवा समाधि के पश्चात् साधक वस्ल (ईश्वर मिलन) के सोपान पर पहुंच जाता है। सूफियो ने इन सोपानों का नाम 'मुकामात' रखा है। उनका विश्वास है कि उन पर पहुंचना केवल साधक के ही प्रयत्नो पर निर्भर करता है। साधको की चार मजिले हुआ करती हैं। इसके अतिरिक्त जो साधना की चार अवस्थाए होती है, उन्हें 'हाल' कहा जाता है।

पहली अवस्था 'नासूत' है जिससे तात्पर्य मनुष्य की प्रकृत-अवस्था से है। इसमें साधक 'शरीयत' या इस्लामी धर्म-शास्त्रों का अनुसरण करता है। दूसरी अवस्था 'मलकूत' है जिस मे वह पवित्रता का सहारा लेकर 'तरीकत' वा उपासना की ओर प्रवृत्त हो जाता है। तीसरी अवस्था 'जबरूत' आती है जिस मे वह आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त करता है तथा सालिक से मारिफ बनता है। यही

१. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० ४३।
२. वही, पृ० ४३।

मज़िल मारिफत की है। अत में साधक 'लाहूत' की दशा तक पहुचता है जहा पर वह आत्मज्ञाननिष्ठ हो जाता है और उसे 'हकीकत' अथवा सत्य की उपलब्धि होती है। इन दशाओं को कुछ लोगो ने क्रमशः नरलोक, देवलोक, ऐश्वर्य लोक एव माधुर्य लोक के रूपों मे भी स्वीकार किया है।[१]

सूफियों की यात्रा का विवरण निम्नाकित निर्दशिका से कुछ अधिक सरलतापूर्वक समझा जा सकता है :

क्रम सख्या	अवस्था	लोक	यात्रा की सज्ञा	मुकामात		
				प्रारम्भ	मध्य	अन्त
१.	शरीयत	नासूत	मोमिन	अब्द	—	इश्क
२.	तरीकत	मलकूत	सालिक	इश्क	जहद	म्वारिफ
३.	मरिफत	जबरूत	आरिफ	म्वारिफ	वज्द	हकीक
४.	हकीकत	लाहूत	हक	हकीक	वस्ल	फना

कुछ लोग अन्तिम अवस्था 'बका' (अवस्थिति) मानते है, जो 'फ़ना' (निर्वाण) के पश्चात् प्राप्त होती है।[२]

सूफी-साधको का यह भी सिद्धान्त है कि 'जब तक वह वर्तमान शरीर' धारण किए हुए रहता है तब तक उसके शरीर का मुख्य काम यह होना चाहिये कि वह वहदानिया (परमात्मा के एकत्व) का ध्यान करता रहे, उसके नामो का स्मरण (जिक्र) करता रहे और वैसा करते हुए तरीका अर्थात् सूफियों द्वारा निर्धारित आध्यात्मिक मार्ग पर अग्रसर होता रहे।[३] जिक्र के अतिरिक्त मुराकबा (ध्यान) की भी क्रिया है। बाद में सूफियो ने देखा कि भावाविष्टावस्था केवल ज़िक्र (स्मरण) ध्यान आदि से ही नही उत्पन्न होती बल्कि नृत्य, सगीत आदि से भी होती है। नृत्य आदि का सम्मिलित नाम 'समा' से प्रकट किया जा सकता है।[४]

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ४६।

२. जायसी और उनका पद्मावत, पृ० १४७-१४८।

३. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ३६३।

४. वही, पृ० ३७२।

सूफियो के 'जिक्र' की क्रियाओ की समानता बहुत-कुछ योग के प्राणायाम तथा ध्यान आदि से है। 'जिक्र' मे साधक को ध्यानस्थ होकर बैठना पडता है। इसके द्वारा साधक नाना प्रकार के साधनाओ द्वारा कुडलिनी शक्ति को उद्बुद्ध करके नाना चक्रों का भेदन करता है। योग के छः चक्रो को 'लतायफी सित्ता' कहा गया है। इन चक्रो के नाम मुलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धारव्य, आज्ञा है।[1]

सूफियो का सिद्धान्त है कि परमात्मा का अनवरत स्मरण तथा अभ्यास करने के लिये साधक को किसी पीर या गुरु की शरण लेनी पडती है। वह अपने पीर या गुरु की आज्ञा के पालन की शपथ ग्रहण करता है और अपने को उसका मुरीद स्वीकार करता है।[2] पीर या गुरु के अतिरिक्त साधक औलिया की भी उपासना करता है। उनका यह सिद्धान्त है कि वह इमाम (गुरु) के हाथो मे अपने को शव की नाई छोड दे।[3] गुरुवाद का यह प्रवेश बाद की चीज़ है और इसकी प्रेरणा देने वाला भारतवर्ष ही रहा है।[4]

सूफी-सिद्धान्तो के अनुसार अक्ल (बुद्धि) के मार्ग को ग्रहण करने की अपेक्षा श्रद्धा एव विश्वास का प्रशस्त पथ ही अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती ने कहा है कि 'ऐ मुईन। अक्ल की आख से दोस्त का हुस्न न देख। तू मजनू की आख से लैला के हुस्न को देख।'[5]

सूफी-सिद्धान्तों का लक्ष्य-साम्य

प्रायः सभी भारतीय दर्शनो का मूलोद्देश्य त्रिविध तापो से मुक्ति प्राप्त कर परम-आनन्द की उपलब्धि करना ही रहा है। सूफी-साधकों का अन्तिम लक्ष्य सासारिक जीवन व्यतीत करते हुए भी इसके विविध तापो से निस्तार पाकर

---

१. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ३८६।

२. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ४७-४८।

३. 'परीक्ष्य लोकान्कर्मचितान्ब्राह्मणो निर्वेद मायान्नास्त्यकृतः कृतेन।
तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्॥'
—मुण्डोकपनिषद् (१-२-१२)

४. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ३८५।

५. मुईन बचश्मे खिरद हुस्ने दोस्त न नुमायद।
बबी बदीये मजनूं जमाले लैला रा। दीवान, ख्वाजा ग़रीब नेवाज, संग्रहकर्ता, मुस्लिम अहमद निज़ामी, उर्दू बाज़ार, जामा मस्जिद, देहली, पृ० २४।

ईश्वरीय मिलन जैसे सर्वश्रेष्ठ आनन्द की उपलब्धि करना था। इस दृष्टि से दार्शनिक लक्ष्य मे दोनो मे कोई विशेष अन्तर प्रतीत नही होता। साधना की पद्धति-मात्र भिन्न है जैसा कि विविध भारतीय दार्शनिक पथो मे भी दिखाई पडता है। यही कारण है कि इस लक्ष्य-साम्य ने सूफियो को भारतीय-दर्शन विशेषत. अद्वैत के अधिक समीप खडा कर दिया और अद्वैत की प्रतिष्ठा तो भारतीय जन-मानस मे पहले से ही चली आ रही थी। अतः प्रेम और मानवता का प्रसार करने वाले ये सूफी-साधक भारतीय जनता के लिये अपरिचित नही अपितु अपने से लगे।

दार्शनिक पृष्ठभूमि

सूफीमत की विचारधारा पर इस्लामेतर धर्मो का भी बहुत-कुछ प्रभाव पड गया है।[1] उनकी चिन्तन-पद्धति का विकास चाहे जिस रूप मे हुआ हो परन्तु उसका स्वरूप सदा इस्लामी रहा।[2] उनकी दार्शनिकता का मूल-आधार कुरान रहा और उसी के वाक्यो की नवीन व्याख्याए सूफी-चिन्तकों ने उपस्थित की। उन्होने कुरान के सकेतो के आधार पर ही नवीन उद्भावनाओ को भी प्रस्तुत किया। कही भी कुरान अथवा इस्लाम का विरोध करने का प्रयत्न नहीं किया गया तथा उसी के क्रोड मे सूफीमत की दार्शनिक विचारधारा पल्लवित हुई। इतना होने पर भी विभिन्न देशो तथा महापुरुषो के निरन्तर प्रभाव के कारण इसमें जो बाह्य बाते समाविष्ट हुई उनसे इसके मौलिक सिद्धान्तो में बहुत-कुछ मतभेद आ गया है और तभी सभी सूफी-कवि ईश्वर जगत् तथा मानव से सम्बन्धित दार्शनिक प्रश्नो के उत्तर देने मे मतैक्य नही हैं। उनकी धार्मिक साधना विचारधारा मे भी इसी कारण विभिन्नता के दर्शन होते है।

ईश्वर तत्व तथा उसका स्वरूप

ईश्वर तत्व के सम्बन्ध मे मुस्लिम-दार्शनिक-विचार के प्रधानतः तीन वर्ग बने हुए है। सब से पहला वर्ग 'इजादिया' उन लोगो का है जो ईश्वर का अस्तित्व जगत् मे पृथक् मानते है और इस बात मे विश्वास करते है कि उसने इस सृष्टि को कुछ नही, अथवा शून्य से उत्पन्न किया। इस मत को हम शुद्ध 'एकेश्वरवाद' कह सकते है।[3] यह इस्लाम-धर्म की मूल विचारधारा के अनुकूल

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ३४।
२. जायसी के परवर्ती सूफी-क व और काव्य, पृ० ३०।
३. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० ३४।

है और उस मे सभी प्रकार के मुस्लिम विश्वास रखते है। इस्लाम के कट्टर सिद्धान्तो के अनुसार परमात्मा अज्ञेय, अलौकिक तथा सृष्टि से अतीत और परे है। इस सिद्धान्त के अनुसार परमात्मा एक है और उसके सिवा दूसरा कोई नही है। वह सर्वशक्तिमान् है। अपने जैसा वह आप है। परमात्मा तथा अन्य व्यक्तियों के बीच दूसरा कोई नही है। वह अवतार नही लेता,[1] क्योंकि बहुदेव-वाद को इस्लाम मे कोई स्थान नही है। वह एकरस है तथा उसके ऐश्वर्य, सौंदर्य तथा पूर्णता का ज्ञान उपासकों को अनन्य भक्ति के द्वारा होता है। जो लोग अपने आपको खोकर परमात्मा की विभूति का अनुभव करते है, उन पर ही परमात्मा की कृपा होती है तथा वे मस्तमौला बन जाते है। वह ईश्वर इस सृष्टि का कर्ता, सहारक एव रक्षक सभी-कुछ है। उसकी इच्छा प्रधान है। वह सृष्टि-कर्ता होते हुए भी नियमो मे परे है, शाश्वत है।[2] मनुष्य उससे भयान्वित हो श्रद्धावनत हो सकता है, उससे प्रेम नही कर सकता। अल्लाह ने सृष्टि-निर्माण 'कुन' शब्द कहने मात्र से, मिट्टी से किया।[3]

दूसरा वर्ग 'शुहूदिया' लोगो का है जिनका यह विश्वास है कि ईश्वर इस जगत् से परे है, किन्तु उसकी सभी बाते इसमे किसी दर्पण के भीतर प्रति-बिम्ब की भाति, दीख पडती है। इस वर्ग के सिद्धान्त को हम एक प्रकार के 'सर्वात्मवाद' की सज्ञा दे सकते है।[4] उनका विचार है कि यह सृष्टि सत्य नही है तथा परमात्मा एवं सृष्टि मे अश-अंशी का सम्बन्ध न होकर केवल बिम्ब-प्रतिबिम्ब का सम्बन्ध है। जैसे दर्पण मे प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है, उसी प्रकार इस सृष्टि मे उस ईश्वर का प्रतिबिम्ब पड रहा है। सूर्य और सूर्य के प्रतिबिम्ब का जो सम्बन्ध है, वह शुहूदिया वालो को मान्य है। ईश्वर एक है और वह इस नामरूपात्मक जगत् मे प्रतिबिम्बित हो रहा है।[5] अधिकाश सूफी-कवियो ने ईश्वर और सृष्टि के इसी बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव का प्रदर्शन अपने काव्यो में किया है। सूर्य की नाई वह परमसत्ता है जिसे हम परमात्मा कहते हैं। जिस प्रकार जल मे सूर्य का प्रतिबिम्ब झलकता है, उसी प्रकार इस दृश्य-मान जगत् में उस परमात्मा का नूर प्रतिबिम्बित होता है, इसलिये सूफी-साधक उस प्रतिबिम्ब या सासारिक नूर (सौदर्य) का आश्रय ग्रहण कर उस

१. सूफीमत साधना और साहित्य, प० रामपूजन तिवारी, पृ० १५।
२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३०, ३१।
३. वही, पृ० ३५।
४. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ३४।
५. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३७।

परमात्मा के अलौकिक एव दिव्य नूर (सौंदर्य) तक पहुचने का प्रयत्न करते है। परमात्मा सब वस्तुओ के भीतर है तथा मानव-आत्मा का सार है।[१]

तीसरा वर्ग उन लोगो का है जो 'वुजूदिया' कहलाते है। उनका कथन है कि ईश्वर के अतिरिक्त, वास्तव मे, अन्य कोई वस्तु नही है। वही एकमात्र सत्ता है और विश्व की अन्य जितनी भी वस्तुए है उन्हें हम 'हम अस्त' (वही सब कुछ है) के अनुसार उसी का रूप समझ सकते है। इस वर्ग के लिये हम एकात्मवादी अथवा एकतत्ववादी का नाम प्रयोग मे ला सकते है।[२] सूर्य एव सूर्य की किरण का जो सम्बन्ध है वह 'वजूदिया' विचारवालो को मान्य है।[३] वे उस एक तत्व को ही उस सृष्टि-रूप मे प्रसारित मानते है, उनके अनुसार यह जगत् भी केवल प्रतिबिम्ब या आभास-मात्र नही है। इस मे ईश्वर के गुणों का समावेश है किन्तु फिर भी यह जगत् वही नही है। ससार उसका अवतरण होने के कारण सत्य है, किन्तु साथ ही उसी का रूप नही है। सृष्टि और परमेश्वर मे कुछ अन्तर अवश्य है।[४]

ईश्वर के गुणादि के अनुसार भी सूफियो ने वर्णन करते समय मतभेद प्रकट किया है। कुरान का एकेश्वरवाद, एकदेववाद है। अल्लाह वह है जिसके अतिरिक्त और कोई देवता नही है।[५] इस पैगम्बरी एकेश्वरवाद मे केवल एक देव की सत्ता पर विश्वास करके उसी को मानवीय कल्पना के श्रेष्ठ गुणो तथा आदर्शो का पुंज माना गया है। कुरान के शब्द तनज्जुल-अवतरण (Transition in descent) के अनुसार अल्लाह की सगुण रूप में अवतारणा मान्य हुई। इब्न अरबी हल्लाज एव जामी प्रभृति सूफियो का कहना है कि ईश्वर केवल शुद्ध स्वरूप अथवा सत्ता-मात्र, निर्गुण एवं निर्विशेष है। यह उसका अभिव्यक्त रूप है जो अपूर्व और अवर्णनीय है तथा जिसे निरपेक्ष (Absolute) भी कह सकते हैं। उस परमात्मा का इनके अनुसार, एक अन्य रूप भी है जो सगुण और

---

१. God is imminent in all things and is the essence of every human soul.
—एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका, भाग XXIII, आर० आर० फिलण्ट, दसवा सस्करण, पृ० २४२।

२. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ३४-३५।

३. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३७।

४. वही, पृ० ३६।

५. हुवल्ला हुल्लजीद लाइलाहा इल्ललाहू आलमुवलगैब वशशहादते दुर्वरे-हमानुर्र रहीम—कुरान, अध्याय ५९ की आयत।

सविशेष है तथा जिसे ही वास्तव मे, हम ईश्वर (God) भी कह सकते है।[1] उदारचेता सूफियो ने अपने ग्रन्थारम्भ मे 'इजादिया' मत का परिचय दिया किन्तु आगे अपनी कथा के अन्तर्गत उन्होने सर्वात्मवाद एव अद्वैतवाद से समता रखने वाले विचारो को ही अभिव्यक्ति दी है कश्मीर के इस्लामी ऋषियो तथा सूफी-सन्तो पर पडी वेदान्त एव कश्मीरी शैवमत दोनो की प्रतिच्छाया परिलक्षित होती है।[2]

ईश्वर और जगत्

इस विषय मे सूफियों के पाच प्रकार के मत दीख पडते है कि ईश्वर जगल्लीन है अथवा इस दृश्यमान जगत् से नितान्त परे है। अधिकाश सूफी-कवियो का इस मत पर विश्वास है कि ईश्वर जगत् से परे रहकर भी उसी मे लीन है। ईश्वर जगत् मे व्याप्त है, किन्तु सीमा-बद्ध नही है।[3] 'कश्फ-उल-महजूब' के रचयिता हुज्वेरी ईश्वर और जगत् के पृथक् अस्तित्व का समर्थक है। मौलाना रूमी को ईश्वर के स्वरूप का चितन करने के लिए अन्तर अथवा बाह्य जैसे शब्दो का प्रयोग अच्छा नही लगता। उसकी दृष्टि में बाहर-भीतर शब्दों का प्रयोग केवल भौतिक पदार्थों के लिए ही किया जा सकता है। उसका कथन है कि ईश्वर इस जगत् में एक साथ ही भीतर तथा बाहर रह सकता है। जामी ने अपने ग्रन्थ 'लावेह' में परमतत्व को दो रूपो मे व्यक्त माना है। प्रथम अन्तः में व्यक्त तथा दूसरा बाह्य में व्यक्त, जब ईश्वर कोई मूर्त रूप धारण कर लेता है।

ईश्वर और जीव

सूफियो ने जीव के विषय मे अद्वैत को ही अपनाया है। उनका कथन है कि जीव और ब्रह्म मे वस्तुतः कोई भेद नही है क्योंकि जीव ब्रह्म का ही अश है। इन्सान के वास्तविक स्वरूप तथा परमात्मतत्व मे कोई अन्तर न मानते हुए सूफी-साधको का यह विश्वास है कि ब्रह्माण्ड तथा पिण्ड मे ईश्वर की चेतना वर्तमान है। मूलतः परमात्मा एव आत्मा मे कोई विभेद नही है। यह भिन्नता केवल व्यावहारिक है वास्तविक नही। सूफियो के अनुसार मानव

१. सूफी-काव्य सग्रह, पृ० ३६।
२. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य—'फलसफस मज सोन मीरास,' डा० शम्स-उद्-दीन की १-६-६६ को रेडियो कश्मीर से प्रसारित वार्ता।
३. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३४।

के शरीर मे ईश्वर का पूर्ण प्रतिरूप है । जगत् उसकी केवल आंशिक छवि है ।[१]

सृष्टि-तत्व

सृष्टि के सम्बन्ध मे सभी इस्लामी चिन्तको का एक मत है। केवल इस अनेकान्त सृष्टि का वही एक स्रष्टा है। वह अल्लाह पहले अकेला था। उस समय उस के सौदर्य तथा विभूति पर आत्म-विभोर होने वाला कोई नही था। उसके मन मे जब अपने अनन्त सौदर्य एव अनन्त विभूति को आत्म-प्रकाशन करने की उत्कट इच्छा उत्पन्न हुई तभी सृष्टि का आविर्भाव हुआ। 'मै एक छिपा हुआ खजाना था' फिर मैन इच्छा की कि लोग मुझे जाने ।[२] अतः विश्व की सृष्टि इस प्रकार, ईश्वर के स्वतः स्फूर्त एव अपरिमेय आनन्द का एक मूर्त विकास-मात्र है ।[३] उसके एक शब्द 'कुन' (प्रकाश हो) मे सृष्टि-रचना हुई। सारा स्वर्ग तथा भूतल छः दिनो मे निर्मित हुआ। मिट्टी से मानव की रचना हुई और उसमे रूह फेक दी गई। जीली ने कहा है कि 'सृष्टि की सपूर्ण वस्तुए उसकी पूर्णता के कारण है तथा उसी के दिए हुए नाम से नामवाली है ।[४]

सूफी कवियो ने सृष्टि के विविध उपकरणो तथा प्रकृति के स्वरूपो का वर्णन करके उस परमसत्ता के स्रष्टारूप का वर्णन किया है । अल्लाह को परम सौन्दर्य रूप मानते हुए जामी ने कहा है—वह अल्लाह प्रेम चाहता था और प्रेम से ही प्रभावित होकर उसने अपने मुख का आदर्श लिया और उस मे अपना रूप स्वय व्यक्त किया ।[५] वह प्रभु सब मे व्याप्त है और प्रत्येक वस्तु एव स्थान में विद्यमान है ।[६]

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी-कवि और काव्य, पृ० ६८ ।

२. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० २५२ ।

३. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ३७।

४. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ३८१ ।
तुलना के लिये द्रष्टव्य-यथा सौम्येकेन मृत्पिण्डे न सर्व मृन्मय
विज्ञात स्याद्वाचारम्भण विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम् ।
—छान्दोग्योपनिषत्, षष्ठोध्याय, प्रथम खण्ड, मत्र ४ ।

५. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ५६ ।

६. God is diffused over all his creatures, and exists everywhere and in everything.
—दि वर्ड आफ लल्ल, पृ० ६ ।

माया

ऐसे प्रश्न दार्शनिकों तथा चिन्तकों के सम्मुख सदैव रहे है कि नामरूपात्मक जगत् सत्य है अथवा मिथ्या, नित्य है अथवा अनित्य ? बौद्ध-दर्शन की दृष्टि मे सब-कुछ अनित्य है और उसी की परिस्थति शून्यवाद मे हुई । ईसाइयों ने भी बौद्धमत के समान शून्य द्वारा ही सृष्टि की उत्पत्ति मानी है। 'शैवमत के अनुसार यह सृष्टि उसी प्रकार नित्य है जैसे स्रष्टा तथा शक्ति । यह सृष्टि उस स्रष्टा मे उद्भूत होने के कारण नित्य एव सत्य है । यह उसकी आत्माभिव्यक्ति है जिसकी रचना उसने अपनी शक्ति से की है।[1] वेदान्त जहा नामरूपात्मक सत्ता को मिथ्या मानता है, वहां शैवमत इसे नित्य रूप मे ग्रहण करता है । सूफी-काव्यों की विचारधारा सृष्टि के सत्य अथवा मिथ्या होने के विषय मे दो रूपो मे विराजमान है। बिना इस आधार-सत्ता के सृष्टि की उत्पत्ति असभव है । यह एक सत्ता ही ससार का उत्पादन तथा निमित्त कारण है अतः इसके बाहर और कोई सत्ता नही ।[2] जामी का कथन है कि इस सृष्टि का प्रसार उसी से हुआ है और अन्त में यह उसी मे समा जायगी ।[3] इस प्रकार सृष्टि के नित्यत्व के सम्बन्ध मे सूफी विचारकों ने सदा उस परमसत्ता को ही पारमार्थिक सत्य स्वीकार किया है । सूफियो ने माया की कल्पना विद्या-माया के रूप में नही की तथा माया का सत्स्वरूप इन्हे मान्य नही है। उन्होंने जहा कही भी माया का वर्णन किया है, वहा केवल उन्होने इद्रियगत विषय भोगो के आकर्षण तथा उनके दुष्प्रभाव का ही वर्णन किया है । सयोगरूपिणी

---

१. The creation is just like its creator, very real. Shaivism also holds that the universe is manifestation of God Himself brought about by His (Swantanra Shakti) motivating power.

—द्रष्टव्य—कश्मीर शैवइज्म, लक्ष्मण जू द्वारा १०-६-६५ की रेडियो कश्मीर से प्रसारित वार्ता। तथा

'स्वेच्छया स्वभित्तौ विश्वमुन्मीलयति'—प्रत्यभिज्ञाहृदयम् ।

क्षेमेन्द्र, निरीक्षक जी० श्री निवासमूर्ति (अग्रेजी अनुवाद), अद्या ग्रथालय (सन् १९३८ ई०), सूत्र २, पृ० ४४ ।

२. सूफीमत और हिन्दी साहित्य पृ० १७४ ।

३. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ५७ ।

तथा—यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति । यत्प्रयन्त्यभिसविशन्ति ।

तद्विजिज्ञास्व, तद् ब्रह्मेति—तैत्तरीयोपनिषद्, भृगुवल्ली, प्रथम अनुवाद मंत्र ।

माया के प्रलोभन मे पडकर भोग की कामना मे मानव योग का त्याग कर देते हैं।[1] मनुष्य पचेन्द्रिय भोगों के वश मे पडकर पथभ्रष्ट होता है। विषय-वासनात्मक रूप उसे बटमारो की भांति ठगते हैं।

इस माया की कल्पना दो रूपों मे हुई है। प्रथम शरीर या काया के अन्तर्गत वर्तमान 'नफ्स' (वासनापूर्ण आत्मपक्ष) और द्वितीय बाह्य जगत् का आकर्षण। इन दोनो के प्रति आकर्षित न होकर ही मानव अपने परम लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है क्योंकि संसार का सारा ऐश्वर्य एवं सुख मिथ्या है। असत् की ओर आकर्षित होने वाला पछताता है और केवल सत के मार्ग पर चलने वाला सालिक (साधक) माया से परे रहकर ही सुख का भाजन बन जाता है। इन साधको ने सृष्टि की नश्वरता का वर्णन इस हेतु किया है कि इसके प्रति विरक्ति उत्पन्न हो और परमार्थ-चिन्तन मे ध्यान लग जाय।[2]

मानव-तत्व

सूफियो का यह विचार है कि जीवन का परम लक्ष्य मानव की पूर्णता है। पूर्ण मानव (अल् इसानुल कामिल) के प्रश्न को सर्व प्रथम सूफी-कवि इब्न अरबी ने महत्व दिया था। उसका कथन है कि पूर्ण मानव सृष्टि का चरमोत्कर्ष है, उसी में ईश्वर के स्वरूप की पूर्ण अभिव्यक्ति होती है।[3] मानव-शरीर में अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी के अतिरिक्त 'नफस' या 'अह्' का भी समाहार है किन्तु आकाश तत्व का अभाव है। 'नफस' तथा 'रूह्' के अतिरिक्त उसमें अक़्ल का भी निवास है। वे पूर्ण-मानव उसे मानते है जो सांसारिक सुख, वैभव, सपति, ऐश्वर्य का परित्याग करके 'हक' से मिलने का प्रयत्न करते हैं। नफस के प्रति आकर्षित न होने वाला ही पूर्ण मानव की पदवी प्राप्त करता है। लगभग प्रत्येक सूफी प्रेमकथा का नायक पूर्ण मानव बनने का प्रयत्न करता है। जिली के अनुसार मुहम्मद सर्वश्रेष्ठ पूर्ण मानव है और इसी कारण मुहम्मदीय ज्ञान (अल् हकीकतुल मुहम्मदिया) का विशेष महत्व है।[4]

---

१. 'तासों माया के वस बहुतै लोग।
जोग न चाहै कीन्हो, चाहै भोग॥' —अनुराग बांसुरी, नूर मुहम्मद, हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग (सवत् २००२ वि०), पृ० १३१।

२. जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी-कवि और काव्य, पृ० ६३।

३. वही, पृ० ६६।

४. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ४०।

वह ईश्वर की अभिव्यक्ति नहीं, स्वय ब्रह्म-स्वरूप है। उनके एव परमेश्वर के बीच कोई सेवक-सेव्य सम्बन्ध नही और न कोई उपासक एव उपास्य का ही भाव रह जाता है। वह जगत् का धर्म गुरु न होकर ज्ञानगुरु हुआ करता है।[1] सूफी-कवियो ने मुहम्मद साहब की सत्ता 'नूर' रूप मे स्वीकार की है। वे उनके प्रिय तारक, रक्षक एव आदर्श हुए। उन्हे साधु पुरुष भी पूर्ण मानव के रूप मे मान्य हैं। वे उन्हे 'पीर' या 'वली' कहते हैं। उनके लिए दृश्य तथा अदृश्य जगत् में कोई अन्तर नही है। रूमी ने स्पष्ट शब्दों मे कहा है कि 'प्रत्येक मानव ईश्वर के सपर्क मे आकर उसका साक्षात्-कार कर सकता है। नबी की सहायता अपेक्षित नही है और न किसी मध्यस्थ के बल पर आशा करके उसे आध्यात्मिक साधना मे प्रवृत्त होना चाहिए। हा, पीर अथवा सद्गुरु के प्रति पूर्ण श्रद्धा रखते हुए उससे सकेत लेना तथा आध्यात्मिक जीवन के लिए उसका आदर्श ग्रहण करना आवश्यक माना जा सकता है।[2] कश्मीर के कतिपय सूफी-कवियो ने केवल एक गुरु से नही अपितु कई गुरुओ से दीक्षा ली थी। एक गुरु अपने ज्ञान एव अधिकार-क्षेत्र से अपने शिष्य को परिचित कराने के पश्चात् उसे ज्ञान-सोपान पर आगे बढाने के लिए किसी अन्य अधिकारी गुरु के पास भेजने में कभी हिचकिचाहट नही करता था। तभी ज्ञान प्राप्त करने वाला शिष्य एक के अनन्तर दूसरे ज्ञान-क्षेत्र मे लब्ध प्रतिष्ठित गुरु से शिक्षा ग्रहण करता था।[3] हिन्दी के कई सूफी-कवियो मे भी इस प्रवृति के दर्शन होते हैं। कई सूफी-कवियो ने पूर्ण-मानव को अवतार रूप मे भी स्वीकार किया है किन्तु इसके साथ अधिकाश सहमत नही है।

जीवन का लक्ष्य

दृश्यमान जगत् से परे परमसत्य की खोज ही सूफी-कवियो का लक्ष्य है। कुरान मे यह बात वर्णित है कि जीवन का उद्देश्य तभी सफल हो जाता है जब उसके नियमो का पालन किया जाय एव मुहम्मद साहब को रसूल मानकर ईश्वर के एकत्व मे विश्वास दृढ किया जाय। हुज्वेरी का कथन है कि परमात्मा का भक्त उसके अनुग्रह को देखकर उससे प्रेम किये बिना नही रह सकता और जब वह प्रेम करने लगता है तब वह उस परमात्मा का अतरग

१. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ४०।

२. वही, पृ० ४१।

३. 'आमोदार्थी : यथा भृग: पुष्पात् पुष्पान्तरं व्रजेत्।
विज्ञानार्थी तथा शिष्यो गुरोर्गुर्वन्तर व्रजेत्।' —तंत्रसार, पृ० १२५।

हो जाता है क्योकि प्रियतम के भय मे पार्थक्य है और अतरगता मे एकत्व है ।[१] सूफियो का विश्वास है कि वास्तव मे 'अहत्व' का विलयन ही 'फना' एव परमात्मा के चिन्तन एव ध्यान धारण मे मन लगाना ही 'बक़ा' है ।[२] उन्होने आत्मा तथा ब्रह्म मे वस्तुतः कोई भेद नही माना है । ससार ईश्वर का अचित पक्ष है और जीवात्मा उसका चित्तपक्ष बन्धन है अतः जीव का ससार से तात्विक सम्बन्ध नही है । भ्रम ही बधन है । इस भ्रम के निवारण होने पर ही जीवात्मा शरीर-बन्धन से मुक्त होकर मृत्यु को पार करता है और अमर पद प्राप्त करता है ।[३] सूफियो की यह दार्शनिकता, विचारधारा और साधना-पथ की अभिव्यजना प्राय. सभी सूफी-काव्यो मे समान रूप से दिखाई देती है ।

---

१. कश्फ-उल्-महजूब, पृ० ३७६-३७७ ।

२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ७३ ।

३. सूफीमत और हिन्दी साहित्य, पृ० १७० ।

दूसरा अध्याय

कश्मीरी तथा हिन्दी में उपलब्ध सूफी-साहित्य

(१) प्रबन्धात्मक रचनाएं

सूफियों के काव्य को विवेच्य विषय के अनुसार दो भागों मे बाटा जा सकता है— प्रथम प्रबन्ध अथवा मसनवी ढग पर लिखित काव्य जिस में अन्योक्तियो तथा प्रतीकों की व्याख्या की गई है और दूसरा मुक्तक काव्य जिस मे रुबाइयों, गजलों, दोहों, मुक्तक पदो अथवा बख्रो के माध्यम से सूफी-साधको ने अपने भावों को अभिव्यक्ति दी है। शुद्ध व्यक्तिगत प्रेम के प्रतीकात्मक वर्णन की परम्परा, ईरान देश के प्रभाव एव फारसी के माध्यम से सूफी-साहित्य की विशेषता बन गई।[1] फारसी मे मसनवी की रचना सनाई तथा अत्तार ने की किन्तु मौलाना रूमी का स्थान इस तरह की काव्य-पद्धति मे सर्वोच्च है। अपनी मसनवी के आरम्भ मे मौलाना रूमी ने सनाई (सन् ११३१ ई०) की प्रशंसा की है। उसका कथन है कि अत्तार रूह है और सनाई उसकी दो आंखे और मैं तो सनाई और अत्तार के पैरो के समान हूं।[2] सादी को छोड़कर फारसी का प्रत्येक कवि सूफी था।

सूफी प्रबन्धकाव्यों की रचना कश्मीरी मे अठारहवी शताब्दी के उत्तरार्ध में होने लगी किन्तु उस समय यहा चतुर्दिक् फारसी भाषा का आधिपत्य था। स्थानीय कवि फारसी मसनवियों को आनन्दपूर्वक पढते थे जिन से प्रभावित होकर उन के भावों की पुनरभिव्यक्ति कश्मीरी भाषा मे हुई। उसी समय

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १२६।

२. वही, पृ० १२६।

कश्मीरी-साहित्य मे सूफी-प्रबन्धकाव्यो का प्रवेश हुआ।[१] महमूद गामी (सन् १७६५ ई०—सन् १८५५ ई०) ने कश्मीरी प्रबन्ध-काव्य को फारसी प्रेमाख्यानों की डगर पर डाल दिया।[२] कश्मीरी-सूफी-प्रबन्धकाव्यो की यह परम्परा उद्भूत होकर सन् १९२५ ई० तक विकसित होती रही और प्रायः इस काल (सन् १७७५ ई०—सन् १९२५ ई०) को 'दुत्रायल काल' (कल्पित आश्चर्यमयी कथाओ तथा सूफी-प्रेमाख्यानो का द्विधाकाल) के नाम मे अभिहित किया गया है।[३] ग्रियर्सन महोदय ने सन् १८०० ई० से सन् १९०० ई० तक के काल का नामकरण कश्मीरी-साहित्य मे भक्तिकाल के नाम से किया है।[४] प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प ने सन् १७५० ई० से सन् १९०० ई० तक के समय को प्रेमाख्यानकाल माना है।[५] कश्मीरी-साहित्य मे सूफी-प्रेमाख्यान परम्परा का उद्भव उस समय हुआ जब हिन्दी-साहित्य मे वह पतनोन्मुख हो रही थी किन्तु मुक्तक-काव्य चौदहवी शताब्दी से ही रचित होने लगा था जिसकी अविच्छिन्न धारा सन् १९२५ ई० तक प्रवाहित होती रही और जबकि अब भी कुछ सूफी-कवि इसके साहित्य-कोष मे अभिवृद्धि कर रहे है।

कश्मीरी-साहित्य में सन् १३३९ ई० से सन् १७६५ ई० तक सूफी-प्रबन्धकाव्यो का अभाव रहा जबकि भारत मे उनका प्रणयन प्रचुर मात्रा मे हुआ। उस युग मे कश्मीर में सूफी-काव्यों के अभाव का प्रमुख कारण फारसी की प्रधानता है। कश्मीर मे फारसी भाषा का प्रवेश इस्लाम-धर्म के साथ ही हुआ होगा लेकिन उसके एक सौ वर्ष के अनन्तर सुल्तान सिकन्दर तथा सुल्तान जैन-उल-आब्दीन के समय मे एशिया की इस मधुर साहित्यिक भाषा को जन-साधारण ने खूब अपनाया।[६] मुगलो के आगमन से पूर्व कश्मीर के कवियों ने

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—'शीराजा', द्विमासिक पत्रिका, लेख—कश्मीरी जबान की मसनविया, गुलाम नबी ख्याल, जिल्द १, सख्या ४, जम्मू एण्ड कश्मीरी अकादमी आफ आर्ट्स, कल्चर एण्ड लेग्वेजिज, सपादक जियालाल कौल, हसन-शाह, रामनाथ शास्त्री, पृ० ६५।
२. कश्मीरी भाषा और साहित्य—लेख, पृ० १८।
३. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—कअशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० ७८।
४. लिग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया, द्वितीय खण्ड, तृतीय भाग, पृ० २३३।
५. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—कअशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० ६८।
६. The Persian language may be said to have entered Kashmir with the advent of Islam. But it was about a century later during the reign of Sultan Sikandar and Sultan Zain-ul-Abdin that the sweet literary language of Asia acquired general adoption.

—कशीर, दूसरा भाग, पृ० ४४७।

ईरान के कवियों की भाति फारसी कविताए लिखने मे खूब नकल की। उस समय कश्मीर मे शेख याकूब सर्फी तथा बाबा दाऊद खाकी जैसे विख्यात-नामा फारसी सूफी-प्रबन्धकार हुए। सरकारी भाषा बनने पर फारसी बहुमान्य रूप धारण कर गई तथा कश्मीरी कवियो ने भी युग की धारा में प्रवाहित होकर फारसी भाषा में ही प्रबन्ध-काव्यो की रचना की और तभी सस्कृत कवियो को युग के साथ बदलना पडा।[१]

जब हिन्दी में सूफी प्रबन्ध-काव्यो की रचना हो रही थी, उस समय कश्मीर में फारसी मसनविया लिखने का प्रचार था। याकूब सर्फी (जन्म सन् १५२१ ई०) ने 'पजगज' की रचना की जिसमे लैला-मजनू, यूसुफ-जुलेखा, वामीक अज़रा, मगाज़ी-उल्-नबी तथा मुकामाते-मुर्शिद आदि पाच मसनविया सग्रहीत है।[२] बाबा दाऊद खाक़ी (जन्म सन् १५२१ ई०) ने भी कई सूफी रचनाएं लिखी। मुगल तथा अफगान-काल मे मुल्ला मुहसिन फानी, मुल्ला ताहिर गनाई अशाई, औजी कश्मीरी तथा ख्वाजा हबीब अल्लाह हुब्बी ने सूफी-साहित्य की रचना फारसी-भाषा मे की।[३] इस काल (मुगल तथा अफगान) मे कश्मीरी-प्रतिभा फारसी-साहित्य के द्वारा पल्लवित हुई।[४]

महमूद गामी (सन् १७६५ ई०—सन् १८६६ ई०) ने जब कश्मीरी सूफी प्रेमाख्यानों का सूत्रपात किया, उस समय यहा अफगानो का शासन था। फारसी सास्कृतिक अभिव्यक्ति का माध्यम तथा राजभाषा थी। उसका प्रचार महाराजा प्रताप सिंह के राजत्वकाल (सन् १८८५ ई०—सन् १९२५ ई०) तक होता रहा, जबकि उसका स्थान उर्दू एव अग्रेजी ने ग्रहण किया।[५]

---

१. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—कअशिर शअयरी, भूमिका पृ० ८।
२. 'पजगज' की हस्तलिखित प्रति रिसर्च डिपार्टमेंट, श्रीनगर मे सुरक्षित है। साइज़ १३ इच ८.इच।
३. विशेष विवरण के लिये द्रष्टव्य—कशीर, दूसरा भाग, पृ० ४५७-४७४।
४. The Mughal and Afghan period saw the flowering of the Kashmiri talent in Persian Literature.
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५१३।
५. The Persian lingered on as the language of cultural expression and administration down to the time of Maharaja Partap Singh (1855-1925) when Urdu and English took over from it.
तारीख-ए-हसन, चौथा भाग (पर्शियन पोएट्स इन कश्मीर) सग्रहकर्ता, पीर-गुलाम-हसन खुयहामा, सपादक, प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प, रिसर्च एण्ड पब्लिकेशन डिपार्टमेंट जम्मू एण्ड कश्मीर, श्रीनगर, प्रथम सस्करण (सन् १९६१ ई०), भूमिका, पृ० ११।

सूफी प्रेमाख्यानों का अधिकांश रूप फारसी में लिखा हुआ मिलता है और उसी की काव्य-परम्परा का उस पर प्रभाव है।[1] कश्मीर तथा भारत में वे ही सूफी-प्रबन्धकारो के मूलाधार रहे। हिन्दी मे उनका प्रणयन कश्मीर की अपेक्षा पहले हुआ। भारत मे अधिकाश सूफी-कवियों ने अपने निवास-स्थान में बोली जाने वाली जनसाधारण की भाषा में वही की प्रचलित कथाओ का आधार ले, अपने मत का प्रतिपादन और प्रेम का प्रचार किया।[2] कश्मीरी में जो प्रेमाख्यान उपलब्ध हैं, वे अधिकांश रूप में फारसी, पजाबी, अरबी तथा उर्दू आदि के कुशल रूपान्तर हैं। इसी काल (सन् १७७५ ई०—सन् १८८५ ई०) मे फारसी पुस्तको के जो अनुवाद कश्मीरी मे हुए उनमे अत्यधिक सरसता भरी हुई है।[3] ऐसा विदित होता है कि वे रचनाए फारसी कथाओ पर आधारित केवल अनुवाद-मात्र ही नही हैं, अपितु उनकी विषय-वस्तु कवियों की उर्वरा कल्पना तथा मौलिक उद्भावना से सवलित भी है। राज्याश्रय-हीन कतिपय कश्मीरी-सूफी प्रबन्धकारों ने कश्मीर में प्रचलित कथाओं को भी प्रेम-साधना का आधार बनाया।

(क) कश्मीरी में उपलब्ध प्रमुख प्रबन्धात्मक रचनाएं

कश्मीरी में उपलब्ध प्रमुख सूफ़ी-प्रबन्धकाव्य काल-क्रमानुसार इस प्रकार है :—

क्रम संख्या	प्रबन्धकाव्य	रचना-काल[4]	कवि
१.	लैला-मजनू	समय अनुल्लिखित	महमूद गामी
२.	शीरी खुसरो	सन् ११९९ हि० (सन् १७८४ ई०)	वही

१. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ५२५।
२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १३२।
३. कअशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० ७२।
४. हिजरी तथा सन् ईस्वी के लिये द्रष्टव्य-अंजुमने तारीक-ए-उर्दू सिरीज़ नं० १२२—कम्परेटिव टेबुल्ज़ आफ हिजरी एण्ड क्रिश्चयन डेट्स, संपादक, ए० एम० खालिदी, अंजुमने तारीक-ए-उर्दू (इंडिया), देहली (सन् १९३९ ई०)।

३.	यूसुफ जुलेखा	समय अनुल्लिखित	वही
४.	हारुन-रशीद	सन् १२५८ हि० (सन् १८४२ ई०)	वही
५.	हियमाल	समय अनुल्लिखित	वली अल्लाह मतो
६.	बहराम व गुल अन्दाम	सन् १२७० हि० (सन् १८५३ ई०)	सदीक अल्लाह
७.	वामीक-अज़रा	सन् १२७१ हि० (सन् १७५४ ई०)	सैफ-उद्-दीन तारबली
८.	हियमाल	सन् १२८० हि० (सन् १८६३ ई०)	वही
९.	गुलरेज़	सन् १२८६ हि० (सन् १८६९ ई०)	मकबूल शाह क्रालवारी
१०.	तोतह (तोता)	समय अनुल्लिखित	वहाब खार
११.	लैला-मजनूं	सन् १२८६ हि० (सन् १८६९ ई०)	पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' योरखुशीपुर
१२.	ज़ेबा-निगार	सन् १२९३ हि० (सन् १८७६ ई०)	वही
१३.	सोहनी मेयवाल[1]	सन् १३०५ हि० (सन् १८८७ ई०)	वही
१४.	चद्रवदन	सन् १३२० हि० (सन् १९०२ ई०)	पीर अज़ीज अल्लाह हक्कानी
१५.	मुमताज़ बेनज़ीर	समय अनुल्लिखित	वही
१६.	यूसुफ-जुलेखा	सन् १३२७ हि० (सन् १९०९ ई०)	हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' सरायबली
१७.	गुलनूर-गुलरेज़	सन् १३३२ हि० (सन् १९१३ ई०)	वही
१८.	रेणा व ज़ेबा	सन् १३४० हि० (सन् १९२१ ई०)	शम्स उद्-दीन हैरत

१. पंजाबी मे इस कथा का नाम 'सोहनी मोहीवाल' है।

१९.	लैला मजनूं	समय अनुल्लिखित	कबीर लोन

(ख) हिन्दी में उपलब्ध प्रमुख प्रबन्धात्मक रचनाएं

१.	चंदायन	सन् ७८१ हि० (सन् १३७९ ई०)	मौलाना दाऊद
२.	मृगावती	सन् ९०९ हि० (सन् १५०३ ई०)	कुतबन
३.	पद्मावत	सन् ९४७ हि० (सन् १५४० ई०)	मलिक मुहम्मद जायसी
४.	मधुमालती	सन् ९५२ हि० (सन् १५४५ ई०)	मंझन
५.	चित्रावली	सन् १०२२ हि० (सन् १६१३ ई०)	उसमान
६.	ज्ञानदीप	सन् १०२६ हि० (सन् १६१६ ई०)	शेख़ नबी
७.	पुहुपावती	सन् ११३८ हि० (सन् १७२५ ई०)	हुसैन अली
८.	हंस जवाहिर	सन् ११४९ हि० (सन् १७३६ ई०)	कासिम शाह
९.	इंद्रावती	सन् ११५७ हि० (सन् १७४४ ई०)	नूरमुहम्मद
१०.	अनुराग बांसुरी	सन् ११५८ हि० (सन् १७६४ ई०)	वही
११.	यूसुफ-जुलेखा	सन् १२०५ हि० (सन् १७९० ई०)	निसार
१२.	प्रेम चिनगारी	सन् १२२४ हि० (मन् १८०९ ई०)	शाह-नजफ-अली-सलोनी

(क) कश्मीरी में उपलब्ध सूफी काव्यों का परिचय[१]

१—लैला मजनूं[२]

कथा सारांश—अरब देश के रूपवान तथा प्रेमी कैस नामक युवक को चटशाला (कश्मीरी-चाटहाल) मे पढने के लिए भेजा गया। वहा लैला नाम की एक अत्यन्त सुन्दर बाला पढती थी। हूर की भांति सौदर्यशालिनी लैला पर कैस (मजनू) आसक्त हुआ। वे दोनों एक-दूसरे की तरफ देखते, यहा तक कि साक्षात्दर्शन से उनका पारस्परिक प्रेम उत्तरोत्तर विकसित होता गया। वह उसे देखकर उन्मत्त हो उठता और सुध-बुध खो बैठता। यह देखकर तथाकथित एक रक्षक मजनू को मारने के लिए हाथ में तलवार लेकर पीछे दौडा किन्तु प्रेमी मजनू पर वार करने की अपेक्षा उसका हाथ रुक गया जिसे देखकर वह विस्मित हुआ। मजनूं सदा अपने प्रेम का वृत्तान्त अपने सहपाठियो को सुनाया करता था। सहपाठियो ने यह बात लैला की माता को जाकर कही। उसने अपने सभी कपडे फाड डाले और लैला के चटशाला से वापस आने पर डराते धमकाते हुए यह कहा कि यदि तुम्हारे इस प्रेम की बात का पता पिता को चल जायेगा तो वह तेरे शरीर के टुकडे-टुकडे कर डालेगा। लैला अपने प्रेम पर अडिग रही और उसने किसी भी प्रकार का दण्ड भुगतना स्वीकार किया। लैला का चटशाला जाना बन्द करा दिया गया और वह अपने प्रेमी के वियोग मे विलाप करने लगी। वह कहती कि वियोगाग्नि ने मेरे शरीर को भस्म कर डाला है, जरा चुपके से आकर दर्शन तो दे जा।[३]

उधर मजनू भी लैला के वियोग मे इधर-उधर घूमने लगा। लैला-लैला पुकार कर वह एक बार प्रेमिका के द्वार पर जाकर गिर पड़ा। उसका सिर फट गया। वह कहने लगा कि यह कैसी विडम्बना! बीच मैदान में मार्ग खो गया। मजनूं फकीर के वेष मे लैला के द्वार पर फिर आया। फकीर को भिक्षा देने का बहाना बनाकर वह बाहर आई और दोनो का साक्षात्कार हुआ। लैला के प्रेम को देखकर सारा कबीला रुष्ट हुआ और उन्होंने पत्थर मार-मार कर मजनू का शरीर क्षत-विक्षत कर दिया। यह सूचना मजनू के पिता सैयद मीर को मिली और वह विकल पुत्र को घर ले आया। वहा उसकी मा भी उसके प्रेम की अतिशयता देखकर चकित हुई। मजनू एक भेड बनकर भेडो मे छिप गया जिन्हें गडरिया लैला के घर ले जा रहा था। वहा लैला अपने प्रेमी मजनूं

---

१. कवियो के साहित्यिक परिचय के लिये द्रष्टव्य—परिशिष्ट

२. लैला मजनूं; महमूद गामी, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद महाराज, रणवीरगज बाजार, श्रीनगर, कश्मीर, प्रति प्रयुक्त।

३. सूर गोम ब्रदनस दूर के नारो, चूरि पग्रठ्य हावतम यारो पान।
—लैला मजनूं, पृ० ३।

को देखकर सतुष्ट हुई। सैयद मीर ने लैला के पिता से अपने पुत्र के विवाह की बात छेड़ी। लैला का पिता इस शर्त पर विवाह करना मान गया कि मजनू अपना पागलपन छोड़ दे। पिता सैयद मीर ने यह बात स्वीकार की। जब मजनू दूल्हा बनकर लैला के घर पहुंचा, उसने फिर अपने पागलपन का परिचय दिया। काजी यह देखकर रुष्ट एव क्रुद्ध हुए। मजनू वहा से भागकर नज्द पर्वत पर चला गया। एक रात लैला ऊट पर बैठकर उसे मिलने गई। वहा मजनू का सिर उसने अपनी जांघ पर रख लिया। अन्त मे मजनू उसे घर तक छोड़ने आया।

एक दिन लैला ने स्वप्न मे मजनू का प्राणान्त देखा। तत्पश्चात् उसने मजनू की चरण-धूलि अपने ललाट पर लगाई और मर गई। यह सुनकर मजनू दौडकर आया और लैला की कब्र का आलिगन करके स्वय भी इस ससार से मुक्त हो गया।

कथा का आधार तथा संगठन

महमूद गामी ने जिस समय कश्मीरी मे लैला मजनू' की रचना की, उसके पूर्व निज़ामी, जामी तथा सूफी-प्रबन्धकार याकूब सर्फी की फारसी 'लैला-मजनू' नामक कृतिया विद्यमान थी और वे ही इसके आदर्श बनी। निज़ामी के 'लैला-मजनू' की भाति ही गामी के 'लैला-मजनू' मे प्रेम-साधना है क्योंकि दोनों का विश्वास प्रम की नित्यता मे था।[1] पिता सैयद मीर द्वारा मजनू को काबा ले जाने वाला निज़ामी का कथा-प्रसग गामी ने अपनाया नही है। वास्तव में जामी के 'लैला-मजनू' का ही रूपान्तर गामी का 'लैला-मजनू' है।

इस प्रेम-कथा के आरम्भ से पूर्व कवि ने हम्द, निर्गुण-ईश्वर तथा हज़रत मुहम्मद का सक्षिप्त परिचय दिया है।[2] गामी ने ऊंट का वर्णन किया है किन्तु रेगिस्तान का नही जैसा कि जामी ने किया है।[3] याकूब-सर्फी के लैला-मजनू

---

१. इश्के के न इश्क जावेदानीस्त बाजी चये शहबते जवानीस्त।
—लैला-मजनू, निज़ामी, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, पृ० ३०। तथा
इश्क बअजी छनह् कअमाह सरसरी, इश्क परछ्वी अज सरे ताप ते हरी।
—लैला-मजनू, गामी, पृ० ७।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।

३. One day the simoon that blows at moon tide rose scorching the mountain and the plain, the desert, with its flying sand and pebbles, was a chafing dirt full of sparkling linbers, serpents thrashed about in all directions, like hairs that have been flung in a fire.
—क्लासिकल पर्शियन लिट्रेचर, जार्ज एलन, म्यूजियम स्ट्रीट, लदन (सन् १९५८ ई०) पृ० ४४८।

मे अध्यापक द्वारा मजनू को दी गई शिक्षा तथा उसका अन्धा भिखारी बनकर लैला को देखने जाना आदि बाते गामी के 'लैला-मजनूं' में उपलब्ध नहीं। याकूब सर्फी के लैला-मजनू मे वियोगी मजनू अपने पिता से कह रहा है :—

हक पिदर अस्त अके पिसर रा, हक़ पिसर अस्त हम पिदर रा।[1]

(यदि पिता को अपने पुत्र पर कोई अधिकार है तो पुत्र का भी पिता पर कोई अधिकार है।)

ऐसा प्रेमोपदेश गामी के 'लैला-मजनूं' मे भी मिलता है जहां मजनू अपने पिता को इश्क की महिमा का परिचय देता है।[2] यद्यपि गामी के लैला-मजनूं मे पूर्ववर्ती सभी कथा-प्रसगों का समावेश नही है, फिर भी भेड़ बनकर लैला के घर जाना उसकी प्रायः अपनी विशेषता है। पूर्ववर्ती सूफी-कवियो की विचारधारा के आधार पर उसका कथा-सगठन अत्यन्त सुव्यवस्थित बन पडा है। मजनू मे प्रेम की निश्चलता, प्रेम-मार्ग की कठिनाइयों का सहन करना तथा प्रेम को सर्वस्व मानना आदि बाते सूफी-सिद्धान्तों के अनुकूल है। यहां उसकी एकनिष्ठता तथा आत्मसमर्पण की भावना ही प्रधान है। लैला का भी वासनाहीन प्रेम एक आदर्श है। कथा मे वर्णन-विस्तार नही है जिस में महमूद गामी ने लैला को अविवाहिता दिखाकर उसके सगठन में सहयोग दिया है। कथा का घटनास्थल अरब है और अन्य पूर्ववर्ती सूफी-काव्यो की भांति इसका कथानक वियोगान्त है।

प्रेम-पद्धति

'लैला-मजनू' में प्रेम का उद्भव साक्षात-दर्शन से उद्भूत होता है। नायक-नायिका के मिलन का आरम्भ चटशाला मे होता है। दोनों का प्रेम उदित होकर इतना पुष्ट बन जाता है कि वे एक-दूसरे के बिना नहीं रह सकते और चिर-प्रेमी बने रहने का निश्चय करते है। मजनूं तथा लैला की प्रेम-साधना निजामी, जामी तथा याकूब सर्फी की भाति अशरीरी है जो वासना-रहित है। इस सफल सूफी-प्रेमाख्यान में मजनू की आकुलता, तडप तथा चीख-पुकार का चित्रण होते हुए भी कही पर ऐन्द्रियता नही है। लैला का रूप सौदर्य अनुपम है।[3] इस प्रेमाख्यान में गामी ने 'लैला-मजनूं' के चटशाला में

१. 'पंजगज़' लैला-मजनूं, पृ० २७।

२. करअह क्याह इश्क चूरस मोल मौजी, दिलस छुम चूर चामुत सूर मली
—लैला-मजनूं, गामी, पृ० १०।

३. दपान अअस्य छा परी किनि जन्तअच हूर-लैला-मजनू, पृ० २।

मिलन और उनके केवल वियोग-पक्ष के ही चित्रण को मुख्य स्थान दिया है। लैला का विवाह अन्य किसी प्राणी से नही होता। जब भी मजनूं अपनी प्रेमिका से मिलता है अथवा वह मिलने आती है, उस समय कभी भी मर्यादा का अतिक्रमण नहीं होता। दोनों का प्रेम युगपत साक्षात-दर्शन से हुआ है अतः उस में पवित्रता है, शिकायत नहीं।

प्रेम-तत्व

महमूद गामी ने कहा है कि जो मंसूर बनना चाहे वह क्यो न प्रेमाग्नि में तपकर अपने कांसी जैसे जीवन को स्वर्णमय बना ले जिसका मूल्य अत्यधिक है।[1] मजनू का प्रेम मंसूर की भाति पवित्र था। जन्म से ही उसका हृदय प्रेम-पीडा से विकल था। न तो मजनू ही और न लैला ही प्रेम-साधना की विघ्न-बाधाओं से डरते थे। साथ ही न तो मजनू पर पत्थर फेके जाने का कोई प्रभाव पढ़ता है और न माता की धमकी का प्रभाव ही लैला पर पड़ता अपितु इसमे उन दोनों का प्रेम और अधिक उद्दीप्त हो उठता है। प्रेम की उच्चता का वर्णन गामी ने कई स्थानो पर किया है। उसने कहा है कि इस प्रेम ने ही फरहाद तथा मजनूं की दुर्गति कर दी।[2] फकीर बनकर ही वह लैला को प्राप्त करना चाहता है। इस ग्रन्थ के अन्त में कवि ने कहा है कि 'हे महमूद! सुन, प्रेम की अवस्था मे क्या होता है। इश्क-मजाजी का प्रकटीकरण इश्क-हकीक़ी मे हुआ।[3]

रस—'लैला-मजनू, में रसराज शृंगार के वियोग पक्ष का राज्य है।' इसमें करुण-रस का भी समावेश है।[4]

विप्रलम्भ शृंगार

सूफियों की साधना में विरह का अत्यन्त महत्व रहा है। गामी का विरह

---

१. नारस मज़बाग वसि मसूर

× × ×

सग्तल अअविध म्वोल छु स्वनअस—वही, पृ० ९।

२. इश्क दादी फरहादस क्या संपुन, इश्क वादी मजनू रोटअ कोह वतन। वही, पृ० ७।

३. बोज़ महमूद क्या गयि, इश्क बअज़ी, हकीकत द्राव जअहिर अज़ मिज़अजी—वही, पृ० १४।

४. शर्बत कअम्य चौवुक दामअह कलवाल मते, कफ़न कअम्य चे वोलनय जामअ-कओडनय नालमते—वही, १३।

वर्णन हृदयस्पर्शी बन पड़ा है। मजनू तथा लैला पृथक होते है। माता अपनी पुत्री लैला को घर की चारदीवारी मे बन्द करती है। वह मजनू के लिए इस प्रकार सयम-पूर्ण विरह-प्रदर्शन करती है :

लअल गजिसो चानि अमारे, शाहमारह मति मजनूनो,
यूर्य यितमो वारह-वारह, कति रोटुलम जगल त गारह।[१]

(नाग के समान है मेरे पागल मजनू। मैं लैला तुम्हारे वियोग मे विकल हूं। तुम मेरी ओर धीरे-धीरे आओ। तुमने किस जगल तथा गुफा का आश्रय लिया।)

गामी के इस प्रेम तत्व पर इस्लामी ऋषियो का प्रभाव पड़ा हुआ है जो कन्दराओ मे तपस्या करने के लिये चले जाते थे। इसके साथ ही मजनू भी मर्यादा का पालन करते हुए विरह का प्रकटीकरण करता है। वह लैला के लिये अश्रु-धारा के बदले खून बहाता है।[२] वह अपनी माता के वात्सल्य की तनिक भी परवाह नही करता जब वह कहती है कि आंखो की रोशनी पुत्र के बिना संसार में कोई मार्ग-प्रदर्शक नही,[३] उस समय वह इस ओर तनिक भी ध्यान नही देता, जिस मजनू को सौंदर्य के देवता ने अपना चोला पहना दिया था, वह इन सासारिक बन्धनों मे कैसे फंस जाता।[४]

संयोग श्रृंगार

गामी का सयोग-श्रृंगार संयमित है।[५] लैला-मजनू' में संयोग-चित्रण तीन स्थलों पर उपलब्ध है—प्रथम चटशाला मे,[६] दूसरा भेड़ बनकर मिलने के समय।[७] और तीसरा लैला का नज्द-वन मे आकर मजनू से मिलने के समय।[८] इन सयोगो मे आत्मा-परमात्मा की रहस्यात्मक-मिलन की अनुभूति का आभास स्पष्ट रूप से झलकता है। मूर्छित हुए मजनू से लैला कह रही है :

---

१. लैला-मंजनू, पृ० ११।
२. अछ्यन छम जून लअज्यमअच खून पकान—वही, पृ० ६।
३. न पोत्रस गाश रअस्यतिस वत ना हावान, वही, पृ० ६।
४. छअनिक तस कामदेवन जामह नअली, वही, पृ० ६।
५. कोठिस प्यठ कलअ ह्यतुनस लोग वदने,
तसहं अनद्यनं लौल ज़ख्मन लोग कशने।—वही, पृ० ६।
६. द्रष्टव्य—लैला मजनू, पृ० २।
७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० १२।

व वुछतो पान आयस शो चानि शोकह,
वअदह सोरुय मे अअविथ च चौलुक ।[1]

(मै स्वय आकर्षित होकर तुम्हारे पास उपस्थित हुई हूं। तुम अपनी प्रेयसी लैला को दिये गये वचन मे मुड़कर भाग क्यों गए।)

जामी से प्रभावित होने के कारण कवि ने कही पर भी सम्भोग का वर्णन नही किया है।

२—शीरीं-खुसरो[2]

कथा-सारांश—नौशेरवा के पौत्र सासानी सम्राट् खुसरो परवेज़ के पास उसका मित्र शाहपुर आकर कहने लगा कि आर्मन नगर के राजा की पुत्री महीन बानो इतनी रूपवती है मानो स्वर्ग की अप्सरा हो। अपनी मधुरता के कारण ही वह 'शीरी' नाम से प्रसिद्ध है। यह सुनकर राजकुमार खुसरो उस पर मुग्ध हो गया। खुसरो के आदेशानुसार शाहपुर ने आर्मन की ओर प्रस्थान किया। वहा जाकर उसने शीरी के उद्यान मे कुण्ड के किनारे वाले वृक्ष पर खुसरो का चित्र टाग दिया। कुछ समय पश्चात् अपनी सखियो को साथ लेकर शीरी वहा टहलने आई। शाहपुर फ़कीर बनकर उसके सन्निकट आया। उसने एकान्त मे खुसरो के रूप-सौंदर्य का वर्णन उसके सामने किया। उसने खुसरो के शीरी पर आसक्त होने की बात भी जताई। तदनन्तर शाहपुर ने उसे खुसरो की मुद्रिका अभिज्ञान के रूप मे दी। शीरी के हृदय मे भी खुसरो के प्रति प्रेम का उदय हुआ और वह शाहपुर के साथ उससे मिलने चली। मार्ग मे चलते-चलते जब वे एक वन मे पहुचे तो वहा शीरी कुण्ड मे स्नान करने उतरी। उधर से शिकार खेलते हुए खुसरो भी आ पहुचा और वह उस परम सुन्दरी को देखकर अत्यन्त मोहित हुआ। दोनो के हृदय मे प्रेम का अकुर फूट पड़ा। उन दोनो का विवाह हो गया और उनका जीवन मिलन-सुख की अनुभूति करते हुए व्यतीत होने लगा। शीरी को यह सब-कुछ पसन्द न आया और तभी खुसरो ने रोम के राजा की पुत्री मरियम से विवाह कर लिया। शीरी चिन्तित होकर प्रलाप करने लगी। खुसरो ने शाहपुर के हाथ शीरी को सूचना भेजी कि वह मरियम की अपेक्षा मुझे अधिक प्रिय है।

शीरी के लिये दूध की धारा बहाने के लिये उसने शाहपुर को आज्ञा दी

---

१. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३।

२. 'शीरी-खुसरो', महमूद गामी, प्रकाशन गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, रणवीरगंज बाज़ार, श्रीनगर कश्मीर, प्रति प्रयुक्त।

कि वह किसी ऐसे शिल्पी को लाये जो बेसतून-पर्वत काटकर होज़ बनावे ताकि दूध की धारा आ सके। इस कार्य के लिये शिल्पी फरहाद समुपस्थित हुआ। शीरी ने उसे किये जाने वाले कार्य के प्रति सजग किया। फरहाद ने ज्यो ही उसका दर्शन किया, वह मूर्छित होकर नीचे गिर पडा। शीरी ने उसे सहारा देकर अपने हाथो से ऊपर उठाया। खुसरो को यह सूचना मिली कि फरहाद का प्रेम शीरी के साथ हुआ है तथा वह उसकी सामने रखी मूर्ति से प्रेरणा प्राप्त करके होज बनाने मे लीन है। शीरी का भी फरहाद के प्रति अगाध प्रेम था तथा फरहाद दिन-रात उसी के गीत गाता रहता था। खुसरो ने फरहाद को अपने निकट बुलाया। प्रश्नोत्तर करते हुए खुसरो को ज्ञात हुआ कि वह शीरी मे गहन रूप मे अनुरक्त है। फरहाद मे कहा गया कि यदि वह नदी लाने मे सफल हुआ, तब उसे शीरी प्राप्त हो जायेगी। वह पूर्ण मनोयोग के साथ कार्य मे जुट गया। चिरकाल तक शीरी उसे मिलने नहीं आई और वह चिन्तित रहने लगा, एक समय वह घोडे पर बैठकर उससे मिलने आई। उसने कहा मेरे पापों को क्षमा करो, मैने यू ही तुम्हारी परीक्षा लेनी चाही।[1] उसी समय शीरी का घोडा दम तोड गया। फरहाद मरे हुए घोडे तथा शीरी को कन्धे पर उठाकर अपने घर छोड़ आया।

पर्वत को काटकर सफलता प्राप्त करने के अनन्तर खुसरो ने यह अपवाद फैला दिया कि शीरी मर चुकी है। यह सुनते ही फरहाद का विलाप करते-करते प्राणान्त हो गया। शीरी वियोग-सतप्त होकर फरहाद से मिलने आई। उसे मरा देखकर वह कहने लगी कि हे फरहाद! मै तुम्हारी हूं और मेरी-तुम्हारी वचनबद्धता कयामत तक जीवित रहेगी। तू प्रतीक्षा कर।[2] शीरी ने उसकी कब्र पर एक मज़ार बनवा डाला। फरहाद की मृत्यु पर शीरी को काफी दुःख हुआ और उधर से मरियम भी मर गई। शीरी-खुसरो प्रसन्न होकर रहने लगे किन्तु अन्त में खुसरो परवेज़ की हत्या हो जाने के बाद शीरी ने आत्महत्या कर ली।

कथा का आधार तथा संगठन

इस प्रबन्ध-काव्य से पूर्व निजामी ने 'खुसरो-शीरी', 'लैला-मजनू', 'मखजनुल आसार,' 'हफ्त पैकर' तथा 'इस्कंदर नामा' आदि मसनवियो की रचना की

---

१. गुनाह बख्शुम करियोमय इम्तिहानाह, शीरी-खुसरो, पृ० १०।

२. वलो फरहादह छु वादा ता कयामत, बो चअनी छस वलेकिन प्रार तामत।
—वही, पृ० ११।

थी। निज़ामी ने खुसरो-शीरी की सामग्री अपने पूर्व के एक इतिहासकार तबेरी से सकलित की है।[१] निज़ामी की फारसी मसनवी खुसरो-शीरी के आधार पर ही महमूद गामी ने अपने प्रबन्ध-काव्य 'शीरी-खुसरो' की रचना की और इस ओर कवि ने स्वयं निम्नलिखित पक्तियो मे सकेत दिया है :

वनै शीरी खुसरो इश्क फरहाद, छु फरमावान निजामी वाति मानुन।[२]
(मैं शीरी-फरहाद के प्रेम का वर्णन करूगा और जो कुछ निजामी ने कहा उसे ही मान्यता दी जानी चाहिये।)

पूर्ववर्ती निजामी के विषय मे उसने और भी कहा है :

हजारा रहमत हक बर निज़ामी, गुलाम दर गहश महमूद गामी।[३]
(निजामी सहस्त्र रहमतो का अधिकारी है और मै महमूद गामी उसका ही सेवक हू)

प्रेम-कथा का प्रारम्भ करने से पूर्व कवि ने हम्द, निर्गुण-महिमा तथा हजरत मुहम्मद की प्रशसा की है।[४] कथा-सगठन मे निज़ामी से अधिक अन्तर प्रतीत नही होता। इस रचना मे कवि का ध्यान सूफी-सिद्धान्तो की ओर रहा है। खुसरो पहले राजकुमार फिर प्रेमी और अन्त मे शीरी का पति है। फरहाद के प्रेम का चित्रण अथ से इति तक प्रेम के रूप मे ही हुआ है। वह शीरी पर आसक्त होता है एव सच्चे साधक की भाति साधना-पथ पर अग्रसर होता है। शीरी उसको साध्य तथा प्राण है।[५] कवि ने उसका मूल नाम महीन बानो रखा है और वह अपने मधुर स्वभाव एव सौदर्य के कारण शीरी नाम से प्रसिद्ध होती है। सूफियाने रग मे रगे फरहाद की संपूर्ण आशाएं, आकाक्षाए तथा क्रियाए केवल एक केन्द्रबिन्दु पर स्थित है जिसे वह नफ़्स पर विजय प्राप्त करके पाना चाहता है। खुसरो केवल सासारिक नायक है किन्तु फरहाद एक सच्चा साधक है। शीरी स्वय फरहाद की परीक्षा लेती है और अन्त मे ऐसी धृष्टता के लिये क्षमा-याचना भी करती है। महमूद गामी की यह कथा दुखान्त है और इस मे घटनाओ का बाहुल्य नही है।

---

१. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० २६।
२. शीरी-खुसरो, पृ० २।
३. वही, पृ० १६।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।
५. वनन मज छुय वनान तअरीफ शीरीं, गज़ल हा सुय वनन तसनीफ शीरी।
—वही, पृ० ६।

प्रेम-पद्धति

विवाह से पूर्व इस मे कवि ने दाम्पत्य-प्रेम-आविर्भाव का वर्णन गुण-श्रवण से किया है। सासानी सम्राट् खुसरो के हृदय में एक अज्ञात सुन्दरी (महीन-बानो) के रूप-लावण्य का वर्णन सुनते ही प्रीति की उद्भावना होती है। अपने मित्र शाहपुर द्वारा अपनी मुद्रिका शीरी तक भिजवाना उसके प्रेम की उत्कटता को प्रकट करता है, किन्तु उसका यह प्रेम साधक का न होकर एक सांसारिक प्राणी का है। दोनो के प्रथम मिलन के सम्भोग का चित्रण गामी ने अन्य सूफी कवियों की भांति अनावृत रति के रूप मे नही किया है। गुण-श्रवण से प्रेम-भावना का उदय होने के पश्चात् ही खुसरो के मन मे शीरी को देखने की अभिलाषा उत्पन्न होती है। इस पूर्व राग की प्रधानता के कारण खुसरो का विवाह शीरी के साथ होता है किन्तु प्रेम की एकनिष्ठता का अभाव उस मे परिलक्षित होता है और तभी वह मरियम के साथ भी विवाह करता है।

फरहाद तथा शीरी का प्रेम साक्षात्-दर्शन से होता है। प्रथम मिलन के समय शीरी का दर्शन करते ही फरहाद उसके सौंदर्य को देखकर उसी प्रकार मूर्छित होता है जैसे पद्मावती को देखकर रत्नसेन मूर्छित हुआ था।[1] फरहाद के प्रेम मे एकनिष्ठता, उच्चता तथा स्थिरता भरी पडी है। शीरी अपने प्रेमी फरहाद की मृत्यु से अवश्य दु'खी होती है किन्तु उसकी मनोदशा मे कोई अन्तर नही आता। वह अपने पति खुसरो के मारे जाने के पश्चात् ही आत्म-हत्या करती है। फरहाद के प्रति इस उपेक्षा का कारण न निजामी के 'खुसरो शीरी' और न गामी के 'शीरी-खुसरो' मे ही उपलब्ध है।

प्रेम-तत्व

'शीरी-खुसरो' मे अन्य सूफी-काव्यो की भाति कही-कही पर प्रेम लौकिक रूप मे और कही लोक-बन्धन से परे प्रकट होता है। शीरी-अन्धकार मे सूर्य के समान है, वह सुबल पुष्पों मे गेंदे एव गुलाब की भाति है। हिरण भी उस

---

१. पथर प्यव डेशवुनवुय बेखबर गवा, शीरी-खुसरो, पृ० ६ तथा
परा भाँति गोरख का चेला जिउ तन छाडि सरग कह खेला,
किंगरी गहे जु हुत वैरागी, मरतिहु बार उहै धुनि लागी।
—जायसी ग्रन्थावली, सपादक डा० माताप्रसाद गुप्त,
हिन्दुस्तान अकादमी, उत्तर प्रदेश, इलाहबाद (प्रथम सस्करण, सन् १९५१ ई०) पृ० २५१।

के नेत्र देखकर लज्जित होता है। यंबरज़ल (नर्गिस) का पुष्प भी उसके नेत्रों को देखकर मुर्भा जाता है।[1] फरहाद ऐसी ही रूपवती शीरी का प्रेमी है और वह प्रेम-पथ पर चलकर जीवन का मोह नही करता। वह पूर्ण साधक है और तभी विस्मित हो कर खुसरो पूछता है कि हे फरहाद' बता, कि तुम मानव हो अथवा देव-पुत्र।[2] फरहाद अपने आपको साधक मानकर एक स्थल पर शीरी से कहता है कि वह केवल एक साधक है और वही उसकी परमात्मा है।[3] कवि ने प्रेम में शराब जैसी मस्ती मानी है।[4]

रूप-सौंदर्य-वर्णन

सूफी प्रेमाख्यानो का आधार रूप तथा प्रेम ही है। इन में प्रसगवश रूप-वर्णन बहुत आता है। नायिका का नख-शिख वर्णन परम्परानुसार है। शीरी के सौदर्य का अलौकिक वर्णन करते हुए कवि का कथन है :

'बदनियाजन छि आमअच जनतअच हूर।[5]

(मानो अकृपालु को स्वर्ग की परी मिली हो।)

उसके रूप का वर्णन कई स्थलो पर हुआ है। खुसरो ने उसके विषय में गुण-श्रवण इस प्रकार सुना था :

ड्यकअस प्यठ मुकश तस क्या ओस शूबान,
नतअह यति आफताबाह रोजे रोशन।[6]

(उसके मस्तक पर लटका टीका (अलकार-विशेष) यों शोभायमान है जैसे तेजस्वी सूर्य हो।)

---

१. गटि मज जन खौतुमुत आफताबा, न त मज सुंबलन जाफ़अर गुलाबा। तसहअज चश्म यामत हिरण डेशन, सु सुअरमअह नाज़ डीशिथ तिमति क्रेशन तन छि वन रटित यिम हिरण हागल, यबरज़ल चश्म डीशिथ गयिब्यमार—शीरी-खुसरो, पृ० २।

२. दोपुन तअम्य देव छा या आदमी ज़ाद—शीरी-खुसरो, पृ० ६।

३. वो छुस बन्दह चह छक वरहक खुदा म्योन—वही, पृ० ६।

४. यि मस्ती छयनह वुछमअच जाह शराबस, इज़ा शूबिया सज़ा अत इज़तेराबस—वही, पृ० ७।

५. यि मस्ती छयनह वुछमअच जाह शराबस, इज़ा शूबिया सज़ा अत इज़तेराबस—वही, पृ० २।

६. वही, पृ० २।

उसकी समानता तोता बातो मे नही कर सकता। केश नाग है तथा रूप चमकती हुई बिजली। वह ऐसी प्रतीत होती है मानो कोई परी जीवधारियो मे सुशोभित हो।[1] वह रूप मे अद्वितीय थी और तभी उसे देखते ही फरहाद पृथ्वी पर गिर पडा।

विप्रलम्भ शृंगार

इस प्रबन्धकाव्य मे दो बार वियोग का वर्णन हुआ है। प्रथम उस समय जब खुसरो मरियम से विवाह करके शीरी की उपेक्षा करता है,[2] और दूसरा उस समय जब दोनों-खुसरो-शीरी एक दूसरे से पृथक् होते है।[3] शीरी की मृत्यु का अपवाद सुनकर फरहाद का वियोग भी दर्शनीय है :

'यि कअम्य कअछिम यि कम्य कअरनम जुदअई।[4]

(मेरी यह जुदाई किसने चाही। किसने वास्तव मे मेरी यह जुदाई की।)

इसी भांति प्रेमी फरहाद की मृत्यु पर शीरी की विह्वलता का वर्णन भी कवि ने किया है :

'च़े रोस्तुय रात न दोह क्या करय बो।[5]

(तुम्हारे बिना मुझे रात-दिन का आराम सब भूल गया है। भला बताओ, मैं अब क्या करू।

३—यूसुफ जुलेखा[6]

कथा-सारांश—पश्चिम देश के तैमूस नामक राजा की एक पुत्री थी, नाम था जुलेखा। वह पूर्णिमा के चन्द्रमा की भाति सौदर्य मे अद्वितीय थी। उसने एक बार स्वप्न मे एक सुन्दर युवक के दर्शन किये। वह उस पर आसक्त हुई। दूसरी रात को उसने उसे पुनः देखा। तीसरी रात्रि जब उसने फिर दर्शन दिए तो जुलेखा ने उसका परिचय पूछा। युवक ने अपने विषय मे बताते हुए कहा कि वह मिस्र के राजा का वजीर है तथा उसका नाम अजीज है। प्रात: जागते

---

१. परी रुख मंज़ मनुष्यन अअस शूबान, वही, पृ० ४।
२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० १५।
४. वही, पृ० ११।
५. शीरी खुसरो, पृ० ११।
६. यूसुफ जुलेखा, महमूद गामी, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद महाराज रणवीरगंज बाज़ार, श्रीनगर, कश्मीर, प्रति प्रयुक्त।

ही जुलेखा ने उस युवक की प्राप्ति के लिए वस्त्र फाड डाले तथा आसुओ के बदले खून बहाया। सभी दाइया उसके समीप आ गई। अपने पिता से भी उसने स्वप्न के विषय मे कहा। शाह तैमून ने अजीज के पास एक दूत भेजा। जुलेखा के लिए वह भी अपने प्राणो को न्योछावर करने के लिए तत्पर था जिसकी सूचना पाकर जुलेखा अत्यन्त हर्षित हुई। उसका विवाह अज़ीज़ के साथ निश्चित हुआ। तदनन्तर जुलेखा स्वय सजधज कर उसे मिलने के लिए मिस्र की ओर आई किन्तु तम्बू के भीतर अज़ीज़ को देखते ही उसे निराशा हुई। वह स्वप्न वाले प्रेमी को न देखकर मूर्छित हुई। उसने कहा कि यह वह युवक नही है जिसने उसे स्वप्न मे दर्शन दिये है तथा जिसकी वियोगाग्नि उसे सता रही है। उसी समय यह आकाश-वाणी हुई कि तू चिन्ता मत कर, तुम्हे प्रेमी के पास पहुचा दिया जायगा। इस प्रकार कुछ आशा बन्ध जाने पर वह अपने पति अजीज़ के घर पहुंची।

यूसुफ के पिता का नाम याकूब था जिसकी सात पत्नियो के बारह पुत्र थे। इन सब में से यूसुफ अत्यन्त सुन्दर था। शैशवावस्था मे ही उसकी माता का देहावसान हो गया था और फूफी ने उसका पालन-पोषण किया था। वह अपने पिता याकूब को अत्यन्त प्रिय था। एक रात को वह स्वप्न मे इस प्रकार अन्तर्लीन हुआ जैसे जल के भीतर चन्द्रमा भास्वमान हो। उसने देखा कि ग्यारह तारो के साथ सूर्य तथा चन्द्रमा उसे अभिवादन कर रहे हैं। जागने पर उसने अपने पिता याकूब को स्वप्न का रहस्य बताया। उसने यूसुफ को सम-झाया कि वह अपने सौतेले भाइयो को इस स्वप्न के विषय मे कुछ न बता दे। सौतेले भाई किसी न किसी भाति यह वात सुनकर व्याकुल हुए। वे यूसुफ को मारने का विचार सोचने लगे। पिता के पास जाकर उन सब ने कहा कि वे यूसुफ का मन बहलाने के लिए उसे किसी उद्यान मे ले जाना चाहते हैं। अपने साथ ले जाकर उन्होने उसे इतना पीटा मानो कमल को दलित किया गया हो। उन्होने उसे एक अन्ध-कूप मे धक्का देकर गिरा दिया। उसके भाई प्रतिदिन यह देखने आते कि वह जीवित है अथवा मर गया है। तीन दिवस व्यतीत होने पर कोई सौदागर उस ओर आया। जल निकाले जाने वाले बर्तन के साथ यूसुफ भी बाहर निकल आया। सौतेले भाइयों ने यह देख-कर सौदागर से कहा कि यह उनका गुलाम है। दिनभर बेकार बैठने के कारण ही उन्होने उसे अन्धकूप मे डाला था। सौदागर ने यूसुफ को सेवक के रूप में खरीदा। सौतेले भाइयों ने पिता याकूब को यूसुफ का खून-भरा फ्यरन (लम्बा जामा) दिखाकर झूठ-मूठ कह दिया कि उसे वन मे भेडिया खा गया। अपने प्रिय पुत्र का यह दुःखद समाचार सुनकर याकूब विलाप करने लगा। वह पक्षियों से

याकूब का हाल पूछने लगा। इस प्रकार रोते-रोते वह पुत्र-शोक मे अन्धा हो गया।

सौदागर उसे मिस्र ले आया। तीन दिन तक छिपाने के बाद वह उसे बेचने के लिए बाजार मे निकला। जब जुलेखा ने आकर उसे देखा तो उसके नेत्रों से अश्रुधारा फूट पडी। वह अपने चित्तचोर को पहचान गई।

यूसुफ को खरीदने के लिए कई ग्राहक आए किन्तु जुलेखा ने उसे सौदागर से मुंह मागे दाम पर खरीद लिया। खरीद लिए जाने के अनन्तर जुलेखा ने यूसुफ को अपनी सम्पूर्ण व्यथापूर्ण प्रेम-कहानी सुनाई। वजीर अजीज ने यूसुफ को जुलेखा के पास गुलाम के रूप मे रखा था, अतः वह प्रसन्न थी। एक दिन यूसुफ अपनी प्रेमिका जुलेखा के सौंदर्य से विमोहित होकर जब उसकी ओर बढा, तभी मन मे कुछ सोचकर वह वापस लौट आया। जुलेखा ने उसका कुर्ता पकडा जो हाथ मे फट कर रह गया। इतने मे ही वहा द्वार पर अज़ीज़ उपस्थित हुआ। निराश जुलेखा ने यूसुफ को दण्ड दिए जाने की शिकायत की। कुर्ता पीछे से फट गया था अत: जुलेखा को ही अपराधिनी माना गया। सारे नगर मे उसके दुश्चरित्रा होने का अपवाद फैल गया। जुलेखा के द्वारा नगर की अनेकों स्त्रियो को निमत्रित किया गया। उन सबने यूसुफ के सामने जब सेब काटने का प्रयास किया तो उसके सौदर्य से अभिभूत नारियों ने अपनी-अपनी अगुली काट डाली। वे अत्यन्त लज्जित हुई और उन्होंने जुलेखा से क्षमा याचना की। इस प्रकार जुलेखा ने अपने निर्दोष होने का प्रमाण दिया।

तभी दोष के अपराध मे यूसुफ को कारागार मे डाल दिया गया जहा वह सात वर्ष तक रहा। एक रात राजा ने स्वप्न देखा। स्वप्न-फल जानने के लिए राजा ने यूसुफ को बुलवाया। यूसुफ ने स्वप्न का अक्षरशः फल बताया। उसके कथनानुसार प्रथम सात वर्षों मे अन्न का पर्याप्त उत्पादन हुआ और बाद के सात वर्षों मे सूखा पड़ा। इससे कई पशु मर गए तथा अनेक लोग काल-कवलित हुए। भय के कारण राजा की मृत्यु हुई और यूसुफ राजा बना।

अकाल के समय यूसुफ के अन्य दस सौतेले भाई मिस्र आए। बारहें भाई को भेडिया खा चुका था। यूसुफ उन्हे पहचान गया। एक भाई द्वारा अपना कुर्ता भिजवाकर उसने पिता याकूब को नेत्र-ज्योति पुनः पहुचाई। उधर से वियोगिनी जुलेखा भी अपने प्रेमी यूसुफ के विरह मे नेत्र-ज्योति खो बैठी किन्तु यूसुफ से मिलने पर वह पुनः अत्यधिक रूपवती एवं लावण्यमयी युवती बन गई। उसके दर्शन करते ही वह अपनी मजिल प्राप्त कर गई। पिता याकूब की मृत्यु के नौ वर्ष पश्चात् यूसुफ भी परमधाम को सिधारा। यह सुनकर जुलेखा तीन दिन तक मूछित रही। उसने शोक गीत (मर्सिया) द्वारा अपनी व्यथा प्रकट

की। अन्त मे यूसुफ की कबर के साथ आलिंगन करके प्रेमपरायणा जुलेखा ने भी अपना शरीर त्याग दिया।

कथा का आधार तथा संगठन

महमूद गामी के प्रबन्ध-काव्य के दो आधार इस प्रकार हैं :

(क) कुरान मे वर्णित कथा का आधार, तथा

(ख) जामी की 'यूसुफ जुलेखा' का आधार।

(क) कुरान में वर्णित कथा का आधार

कुरान की 'सूरए यूसुफ मक्की हकू' १२ आयत १११ में यह कथा वर्णित है।[१] उस में इस कथा का 'अहसन अलकिसस' से नामकरण किया गया है।[२] कुरान तथा गामी के 'यूसुफ-जुलेखा' की कथा मे पर्याप्त साम्य है। कुरान की भाति ही गामी ने जुलेखा के रूप-सौदर्य, यौवनागमन, यूसुफ के लिए सर्वस्वत्याग कर तपस्या तथा गृहस्थ-जीवन आदि की बातो का उल्लेख नही किया है। इसी प्रकार दोनों कुरान तथा गामी की 'यूसुफ-जुलेखा' मे कारागार में अन्य दो कैदियो की प्रासगिक कथा तथा उन्हे बहुदेवोपासना की अपेक्षा ईश्वरोपासना करने का सुझाव आदि की नही है। गामी की प्रवृति आरम्भ से ही सूफीमत की ओर झुकी हुई थी। अपने एकमात्र पुत्र (सुल्तान गामी) के वियोग-दु:ख ने ही उसे सासारिक सुखों से विमुख कर दिया था।[३] तभी इस रचना मे इश्क हकीकी का प्रमुख प्रभाव परिलक्षित होता है।[४] कुरान की भाति ही इसमें जुलेखा का परकीया स्वरूप ही सामने आता है तथा यूसुफ को सर्वत्र वैरागी तथा निस्पृह दिखलाने का प्रयत्न किया गया है।

(ख) जामी की 'यूसुफ-जुलेखा' का प्रभाव

कवि की रचना मे जामी कृत 'यूसुफ जुलेखा' का भी पूर्ण प्रभाव दीख पड़ता

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी-कवि और काव्य, पृ० ५१३।

२. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य—महमूद गामी, गुलाम नबी ख्याल, जम्मू एण्ड कश्मीर अकादमी आफ आर्ट्स, कल्चर एण्ड लेग्वेजिज, श्रीनगर, (जनवरी, १९६४) भूमिका, पृ० २०।

३. महमूदस दग्रोद पनुन याद प्यव, महमूद वुछतग्रह दुनिया बे वफा, यूसुफ-जुलेखा, पृ० १९।

४. आशको सूरतपरस्तो रोजिनो, सूरअति निशि असअल माने बोजतो,

है । पहले इसे जामी ने लिखा और फिर कश्मीरी मे उसे महमूद गामी ने उल्लिखित किया ।[1] इसकी रचना करने मे उसे जामी से ही प्रेरणा मिली ।[2] यूसुफ-जुलेखा को जामी ने हजाज छन्द मे सन् १४८३ ई० में लिखा था । इसका कथानक जोजफ तथा पोतिफर की पत्नी पर आधारित है जिसे कुरान के सूरए १२ मे वर्णित किया गया है । जामी ने इसी प्रेम-कथा को ईश्वरोन्मुख प्रेम से सम्बद्ध किया, जैसी कि फारसी कवियों की प्रथा थी ।[3] यूसुफ ही जोजफ है तथा जुलेखा ही पोतिफर की पत्नी है ।[4] जामी का पूर्णतः अनुकरण न करते हुए गामी ने इसे चार बह्रो मे लिखा तथा बीच-बीच मे गजलों की भी रचना की ।[5] अंत में यूसुफ से जुलेखा का विवाह गामी ने जामी की भाति नही दिखाया है । ऐसा विदित होता है कि गामी फारसी-साहित्य का अच्छा ज्ञाता था ।

इस काव्य का कथा-सगठन अन्य सूफी-प्रेमाख्यानो की भाति है । कथा में प्रसंगों के अनुसार फारसी मे शीर्षक दिये गये है । इस मे नायिका की प्रेम-भावना का वर्णन प्रचुरता मे किया गया है । कथा के आरम्भ मे कवि ने हम्द के अनन्तर ही तैमूस राजा की पुत्री जुलेखा का परिचय दिया है । कुरान तथा जामी की कथा को कल्पना से समन्वित करके ही गामी ने उसे प्रस्तुत किया । उसने कुरान की भांति ही यूसुफ के प्रेमी स्वभाव तथा जुलेखा से उसके विवाह एव सतान की चर्चा नही की है । नायक यूसुफ को कवि ने नबी रूप मे ही चित्रित किया है ।[6] और उस में धीर प्रशात के साथ धीर ललित भावो का उन्मेष नही किया गया है । प्रत्येक ढंग से जुलेखा-यूसुफ को अपना बनाने का यथासम्भव प्रयास

---

१. दर जुलेखा अनिव यि हजरत जामियन, वनिव यि कअशिर पअठ्य महमूद गअमियन —वही, पृ० ६ ।

२. शीरजा, जुलाई (१९६२), पृ०६६ ।

३. Yusuf Zulekha was composed in 1483 in hajaz metre. The poem is based on the story of Joseph and Potiphar's wife as told in Sura xii of the Koran, a romantic theme (Jami gives it a mystical twist) which was favourite with Persian authors.

—क्लासिकल पर्शियन लिट्रेचर, पृ० ४४२ ।

४. Yusuf is Joseph and Zulekha is potiphar's wife.

—हालिम्ज टेल्ज, पृ० ३३ ।

५. गजल के लिये द्रष्टव्य—यूसुफ-जुलेखा, पृ० ३, १०, १२, १६ ।

६. ओस यूसुफ खासह माशूके खुदा, यार समित आय पुश्रुक मकवास, वही, पृ० १८ ।

करती है। दास रूप में होने के समय यूसुफ की सच्चरित्रता तथा जुलेखा के प्रगाढ प्रेम का ही परिचय मिलता है। यूसुफ के प्रेम के लिये जुलेखा वज़ीर अजीज के साथ विवाह करती है तथा उसी के लिये ही मिस्र देश मे हुई निन्दा को सहन करती है। इस मे इश्क मजाजी के स्थान पर इश्क हकीकी की स्थापना की गई है। ससार की नश्वरता[१] तथा यूसुफ-जुलेखा के परमधाम सिधारे जाने के साथ ही इस दुःखान्त कथा की इति हो जाती है।

प्रेम-पद्धति

'यूसुफ-जुलेखा' का नायक यूसुफ ईश्वरीय ग्रामों तथा सौदर्य का प्रतीक है।[२] स्वप्न मे उसके सौदर्य को देखकर नायिका जुलेखा उस पर मोहित होती है। यहा प्रियतम को प्राप्त करने का प्रयत्न नायिका की ओर से होता है। वह कठिन प्रयत्न करके मिस्र पहुचती है।[३] वह लोक-लाज की परवाह न करके उसके दर्शन के लिये तरसती तथा तडपती है।[४]

जब से वह उसे स्वप्न मे देखती है तभी से उसके हृदय मे आश्चर्य तथा महानता से मिश्रित भावना जन्म लेती है। ऐसी सुन्दर तथा विमुग्धकारी मूर्ति अदृश्य हो जाने पर उसकी आकुलता बढ जाती है तथा वह सम्पूर्ण कार्य-कलापो से विमुख होकर उसकी तलाश मे तन्मय हो जाती है।[५]

सौदर्य के प्रगाढ परिचय के लिये वह उस सुख-स्वप्न का तीन बार अनुभव करती है। तीसरे स्वप्न मे वह उसका परिचय प्राप्त करती है,[६] और तभी

---

१. क्याह् अनियात अस यत दुनियास नाहकह्, तोरह् दोपहस कुल नफ़्स जायकह्।—वही, पृ० १८।

२. माहरवीन यूसफन यलि त्रअव गाह्, सारि वअय दोप छुनअह् जुलेखायि राह्, खी यूसुफ डेशवुनवुय गयि मरिथ, इश्कह् शमशीर जन गयि पारह् करिता। —वही, पृ० १३।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३।

४. बाक त्रअवअन खाक मोलुन चाक दितुन जामनअय, जअजनस बो गअजनस बोलअजनस पामअनय—वही, पृ० २।

५. गयि बेदार माह् रुखसार हा खुदाया छुम कते,
तबअहलेमच मारह् दारे सबलेमच प्यठ वते, यूसुफ-जुलेखा, पृ० २।

६. त्रेयमि ख्वाबह् आव प्रछहोनस नाव दअयसह् क्याह् चे छुय, मिसरस अन्दर जाग्य छमतह् छुस अज़ीज़ मिसरे बुय। —वही, पृ० २।

सजधज कर उसे मिलने का उपक्रम करती है।[१] आरम्भ से ही जुलेखा का प्रेम उसे निर्दिष्ट मार्ग की ओर अग्रसर करता है। मार्ग मे तम्बू में ठहरे वजीर को देखकर जब उस का भ्रम मिट जाता है, वह यूसुफ के साक्षात्कार के लिये प्रयत्न-मय रहती है। वज़ीर अजीज़ की पत्नी होकर भी वह यसुफ को तन, मन तथा वचन से चाहती है।[२] उसका प्रेम एकान्तिक है। इस मे जुलेखा का प्रेमी स्वरूप उमडकर आया है जबकि यूसुफ का व्यवहार अत्यन्त मर्यादित है।

प्रेम-तत्व—कवि ने प्रेम को वन्दनीय मानकर कहा है कि उसके सुमधुर स्वर का श्रवण प्राणी को अवश्य कुछ देर के लिये करना चाहिये।[३] प्रेम की तरग मे बहकर प्राणी व्याकुल होता है और उसे सर्वत्र उसी का सौंदर्य दृष्टि-गोचर होता है।[४] वास्तव मे यह सम्पूर्ण ससार ही प्रेम-तत्व से उत्पन्न हुआ है:

इश्कह सअत्यन सोरुय आलम पअदअह गव।[५]

(प्रेम-तत्व से ही सारी सृष्टि की उत्पत्ति हुई।)

सच्चे साधक को निर्दिष्ट-पथ पर पहुचाने के लिये अनुकूल आकाश-वाणी भी होती है:

तति बथित वअति वअचअय आय तस गअबी खबर,
पाक थअवित वातनावोत निशिह यारस गम पअ बर।[६]

(वहा से चलकर जब वह प्रस्थान करने लगी तो यह आकाश-वाणी हुई कि तुम्हे पवित्र रखकर ही अपने उन्मत्त प्रेमी के पास पहुचा दिया जायेगा। अतः चिन्ता की कोई बात नही है।)

साधक अपने प्रिय को आखों मे बसाने के पश्चात् अन्य किसी को उन मे स्थान नही देता। यूसुफ का दर्शन करके ही जुलेखा को तृप्ति मिलती है और

---

१. साज़ त सामान करिथ पानह द्रायस नाजनीन, वअच मिसरस अज़ीज़ ब्रोठ ह्यत लाल व नगीना—वही, पृ० ३।

२. मस्तानह चेय प्यअठ छस बो जुलेखा, कमज़ोर छस ज़ार बोजतम म्योनुय—वही, पृ० १०।

३. 'रोज़ दमाह सोज़ इश्कुक बोज़ ऐ मर्दे खुदा'—वही, पृ० २।

४. होश ड़अजमअच इश्कह जोश आबगायि, ताब तस केह रूद न बेताब गयि। चश्मअह रिवान महव सपुन तस वुछान, आरह रयेस्तुय मार ज़ुल्फ छम बुछाना—वही, पृ० ८।

५. वही, पृ० १७।

६. वही, पृ० ३।

वह कह उठती है कि वह अपनी मंजिल पर पहुच गई है :

चआनि दर्शनह मअत्य वअचअस रजिलस,
चोनुय दर्शुन छुम दर्शन क्रेश नस ।[1]

(तुम्हारे दर्शन द्वारा ही मैं अपनी मंजिल पर पहुच गई। तुम्हारा दर्शन पाकर अब तुम्हारे दर्शन के लिये ही यह वियोग सता रहा है ।)

यही अवस्था 'फना' (निर्वाण) की है जब जीव उस परमात्मा मे अन्तर्लीन होता है ।[2]

ईश्वरोन्मुख प्रेम

इस काव्य मे कथा लौकिक पक्ष से अलौकिक पक्ष की ओर अग्रसर होती है। प्रियतम के सौदर्य के आधार पर ही ईश्वर की कल्पना कर ली गई है ।[3] याकूब का प्रेम की ओर होकर भी ईश्वरोन्मुख है तथा यूसुफ ईश्वर की सुन्दर सृष्टि का प्रमाण है ।[4] दु खी जुलेखा इसी यूसुफ के सौ र्य पर विमोहित होती है ।[5] जब प्राणी को ससार अपने भोग-विलासो की ओर आकर्षित करता है उस समय 'नफ्स' (वासनापूर्ण आत्मपक्ष) का दमन ही उसे ईश्वरोन्मुख बना देता है ।[6]

जुलेखा ससार की सपूर्ण वस्तुओ को अस्थिर मानकर ही अनन्त शाश्वत ईश्वर के प्रेम मे मग्न हो जाती है। उसके बिना यह यौवन ही व्यर्थ है ।[7] इस काव्य मे जुलेखा मे ईश्वर-अश की कल्पना नही की गई है।

---

१. यमुफ जुलेखा, पृ० १७ ।
२. पानह वुनी वारह कोरुक नालमोत—वही, पृ० १७ ।
३. ओस यूसुफ खास माशूके खुदा, यार समित आइ पुशरअक मकबरस—यूसुफ-जुलेखा, पृ० १८ ।
४. खबर करदन हजरते यसुफ, युथय न वनक फाश स्यठाह छुइ मुज्रिर —वही, पृ० १८ ।
५. च सिवा कअसि सअत्यन दिल लोगुम नह,
च सिवा वन मे काचाह यार छुमनह, वही, पृ० १० ।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० १८ ।
७. माल दौलत लाल खोतह मिच्छ अज़ीज़,
आसिहे मे दर वगल चअय दिलबरह ।
नअतह छुनिसअय यावनस बो क्या करह,
कुफ त्रोवुम-दीन प्रोवुम चोनति । —वही, पृ० १७ ।

वियोग-पक्ष

इस काव्य में वियोग-पक्ष दो स्थानो पर उपलब्ध है—प्रथम यूसुफ तथा याकूब का वियोग तथा द्वितीय यूसुफ तथा जुलेखा का वियोग। यूसुफ के भेडिया द्वारा खाए जाने की सूचना अपने पुत्रो से ही पा कर याकूब अत्यन्त व्याकुल हो जाता है। वह पक्षियो से उसके विषय मे पूछता रहता है।[१] आर्त-स्वर मे पुकार-पुकार कर वह कह उठता है कि हे यूसुफ ! जिसने तुम्हे मार डाला, क्या उसका हृदय इतना कठोर था। क्या उसे तुम्हारे ऊपर तनिक भी दया नहीं आई।[२] मेरे पुत्र। मैं तुम पर बलिहारी होता हूं।[३] विलाप करते-करते वह अपने नयनो की ज्योति खो बैठता है। पुत्र-शोक उसके लिये असह्य रूप धारण करता है।

याकूब भक्त है और यूसुफ ईश्वर का अंश है। उनके मध्य उपास्य तथा उपासक का प्रेम है, पुत्र एव पिता का नही, याकूब का वात्सल्य ही हृदय-विदारक है। यूसुफ भी अपने पिता के प्रति जागरूक है। वह उसके नेत्रो को ज्योति-लाभ प्रदान करता है।

इस मे यूसुफ तथा जुलेखा का प्रेम प्रधान है। वह प्रेम मे विह्वल होकर अपने प्रियतम की प्राप्ति के लिये वस्त्र फाड डालती है, यत्र-तत्र भागती फिरती है, तथा रक्त के आसू भी बहाती है।[४]

रस—इस काव्य मे वात्सल्य, शृगार तथा करुण-रस की अभिव्यक्ति हुई है। वात्सल्य का परिपाक याकूब के विरह-वर्णन मे हुआ है।[५] जुलेखा तथा यूसुफ के प्रेम मे शृंगार[६] तथा यूसुफ के परमधाम सिधारे जाने के समय जुलेखा का शोक-गीत (मर्सिया) करुण-रस का उद्रेक करता है।[७]

४—हारुन रशीद[८]

कथा-सारांश—मिस्र के राजा का नाम हारुन रशीद था। वह अत्यन्त

---

१. शेच्छ अअचहान जानवरन, म्योन यूसुफ डियूठोन न सो—वही, पृ० ६।
२. म्यानि यारो हा यूसफो, कति प्रारै हा यूसफो, कअम्य चेह लोयुय तस आयोव ना आर, नन्दबाने खूबसूरहा।—वही, पृ० :-७।
३. जान वन्दअप जिगर यितम—वही, पृ० ६।
४. बाक त्रावान हाक मोलुन चाक दितुन जामनअय,
खून हारान पान मारान कअसि हुन्द परवाह नह।—वही, पृ० २।
५. द्रष्टव्य—यूसुफ, जुलेखा, पृ० ७।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ११।
७. द्रष्टव्य—वही, पृ० १६।
८. हारुन रशी, महमूद गामी प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगज बाजार, श्रीनगर।

दयावान था। पुत्राभाव के कारण सम्पूर्ण ससार उसे असार दिखाई देता था। कुछ समय पश्चात् उसके यहां चन्द्रमा के समान एक सुन्दर बालक ने जन्म लिया। उसका नाम अब्दुल अज़ीज़ रखा गया। चार वर्ष की आयु मे उसे चटशाला मे पढने भेज दिया गया। कुरान का अध्ययन करते हुए एक दिन उस्ताद ने उसे कहा कि ईश्वर के पथ पर चलने वाला ही सच्चा ज्ञानी है। उसने यह भी कहा कि ससार नाशवान है और यहा जो प्राणी परमात्म-तत्व के साथ तादात्म्य स्थापित नहीं कर पाता, वह सासारिक अग्नि मे जल जाता है।[1] उस आरिफ (ज्ञानी) ने 'फना' तथा 'बका' का उपदेश ग्रहण करते ही गुदडी पहनी। अज्ञान के मिट जाने पर उसने सासारिक सुखो को तिलाजलि दी। वह आनन्द-प्राप्ति के लिए यात्रा मे प्रवृत्त हुआ। राजा की आज्ञानुसार उसे वापस बुलाया गया। जोगी बने हुए अब्दुल अज़ीज़ को यह भेष त्याग देने का परामर्श दिया किन्तु उसने उत्तर देते हुए कहा कि इस प्रकार के मार्ग पर चलने से शैतान का भय नहीं रहता। उस स्थान पर ऊपर आकाश मे एक पछी उड रहा था। जोगी अब्दुल अजीज़ ने अपने पिता से कहा कि हे पिता! आपके प्रभुत्व को तभी स्वीकार कर सकता हूं जब यह पक्षी आपके हाथ पर आकर बैठ जाये। भला राजा से यह बात कैसे सभव हो सकती थी। जब स्वय अब्दुल अज़ीज ने अपना हाथ फैलाया, तत्क्षण वह पक्षी नीचे आकर उसके हाथ पर बैठ गया। इस कौतुक को देखकर सभी सभासद आह्लादित हुए। जोगी अब्दुल अजीज वहां से निकलकर बसरा के मार्ग पर चल पडा। वह एक ऐसे स्थान पर पहुंचा जहा मार्ग में भवन-निर्माण हो रहा था। अब्दुल अजीज़ ने वहां अपने आपको कार्य करने के लिये प्रस्तुत किया। आमर नामक दयालु राज ने उसकी बात स्वीकृत की और वह कार्य में जुट गया। छः दिन तक वह लगातार कार्य करता रहा किन्तु सातवें दिन नही आ सका। इस पर आमर नामक राज की चिन्ता बढी और वह उसे ढूढने निकला। उसे एक स्थान पर भस्माविष्ट अब्दुल अज़ीज़ मिला। वहा उसने आमर राज को अपने ससार-त्याग की सपूर्ण कथा सुनाई। अपना सारा परिचय देने के अनन्तर अब्दुल अज़ीज का प्राणान्त हुआ। राज ने उस स्थान पर उसकी कबर बनवाई और तत्पश्चात् उसने उसके पिता को सूचना दी, पिता अपने पुत्र की कबर पर आकर आठ-आठ आसू बहाने लगा।

---

१. यिमनअह मोकलन तिम छि सअरी अहलनार, ज़ोन तअम्य दुनिया छु फअनी दूर कर।—वही, पृ० ५।

कथा का आधार तथा संगठन

इस कथा का आधार मिस्र तथा बसरा है गामी ने यह प्रबन्ध-काव्य निज़ामी के आदर्श को सामने रखकर लिखा।[१] इसमे कवि ने ससार की असारता,[२] प्रेम की अनन्यता[३] जैसे सूफी सिद्धान्तो को अपनाया है। शैतान,[४] फना[५] तथा बका[६] का वर्णन करते हुए कवि ने जोगी अब्दुल अजीज को परिपूर्ण साधक के रूप मे चित्रित किया है।[७] हारुन-रशीद को चिरकाल के अनन्तर पुत्रोत्पति होती है और ज्ञान की उत्पत्ति पर वह सासारिक बन्धनों से दूर हट जाता है।[८] उस्ताद-शिष्य सवाद,[९] पिता-पुत्र-सवाद[१०] तथा अब्दुल-अजीज एव राज का सवाद[११] आदि सभी सासारिक असारता की भावना से पूर्ण है। कथानक अन्य सूफी-काव्यो की भाति वियोगान्त है।

प्रेम-तत्व

अब्दुल अजीज़ के प्रेम मे एकनिष्ठता है और वह गुण श्रवण द्वारा ही सासारिक बधनो से विरक्त होकर प्रभु के सौदर्य को देखने के लिए लालायित हो

---

१. 'रहमत हक बर निजामी शद नसीब, छुनबा महमूद गामी हम करीब,' हारुन रशीद, पृ० १६।
२. 'मग्ज़ माने याम बूजुन दर फना, दर फना तअम्य प्वोर गोडयन हम्दोसना' —वही, पृ० ५।
३. खिरकह् वओल मे बाव क्याह् गो हम मलूल, खिरकह् आमुत अज़ खुदाव अज रसूल —वही, पृ० ६।
४. खिरकह् पोशन निशि शैतान दूर चओल—वही, पृ० ६।
५. 'अज़ फना लोबनय बका तअम्य अअरिफन, जिन्दह् पानम जामहनअय-कओरनयकफ़न' —वही, पृ० ५।
६. 'दर फना छोवुक बक़ा आसिअक नमूद, नाबकार दुनिया छुनह चओर पायदार' —वही, पृ० १६।
७. वथरअनि मेंचिह फओलाह् वओथरित, शान्द कने सेरिह कअन्याह् शान्द दित —वही, पृ० १२।
८. ताज ज़रीन पुरंगीन त्रोवुन कलाह, कन्ह टोप थोवुन बसीर बहर आलह- —वही, पृ० ५।
९. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४-५।
१०. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७-८।
११. द्रष्टव्य—पृ०, ११।

उठता है। 'पद्मावत' के रत्नसेन की भाति ही वह जोगी बनकर घर से निकल जाता है। वह कन्था धारण करता है। इसमे नायिका को कोई स्थान नही दिया गया है अपितु अल्लाह के सौदर्य की प्राप्ति के लिए ही साधक अब्दुल अज़ीज़ प्रयत्नमय रहता है।[1] प्रेम के विषय में महमूद गामी का कथन है :

'इश्क बाज़ी नारह ज़ालुन ज़िदअह पान,
आशकव सख्ती तुजी दर ऐ जहान।[2]

(प्रेम का अर्थ है जीवित ही अपने-आपको अग्नि मे जलाना, इसीलिए प्रेमियो को ससार में अत्यन्त कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।)

अब्दुल अज़ीज़ साधक की भाति भस्म मलकर, कन्था पहनकर, धरती पर सोकर तथा सिर के नीचे ईंट या पत्थर रखकर जीवन-यापन करता है।[3]

भाषा

कवि ने इस प्रबन्ध-काव्य मे उर्दू की कतिपय पंक्तियों के द्वारा भी अपनी भावाभिव्यक्ति की है :

किस ने कहा तुझ को छोड तू ममुल्कत, वास्ते क्या क्यो हुआ जोगी सिफत,
किसने बताया यह तुझे रस्ता बताओ, उठ शताबी बाप अपना पास आओ,
आह भी लाज़िम तुझे या क्या किया। पादशाही तू कहो क्यों छोड़ दिया
ज़ोर से मुख मुख रज़ा से मुंह मोड़ लिया, देखकर सरदार जब हैरान हुआ।[4]

उर्दू की इन पंक्तियों की रचना अत्यन्त शिथिल प्रतीत होती हैं।

५—हियमाल[5]

कथा-सारांश—कश्मीर में बलपूर नाम का एक स्थान है जहां बलवीर नामक एक राजा राज्य करता था। उसकी एक पुत्री थी, नाम था हियमाल। उस रा के समय मे एक निर्धन फकीर अपनी पत्नी से तग आया हुआ था। वह बेचारा निस्सतान भी था। अपने घर से निकलने के अनन्तर वह किसी वन के कुण्ड

तरक दुनिया करनुय ओशुम नसीब, बहर अल्लाह दोस्त ये लोगुम हबीब,
—वही, पृ० ११।

२. वही, पृ० २।

३. तरक दुनिया करनुय ओसुम नसीब, बहर अल्लाह दोस्त ये लोगुम हबीब, द्रष्टव्य—वही, पृ० १२।

४. वही, पृ० ६।

५. हियमाल वली अल्लाह मतो, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगंज बाज़ार, श्रीनगर कश्मीर, प्रति प्रयुक्त।

(नाग)[1] के किनारे पहुचकर अपना झोला सिर के नीचे रखकर विश्राम करने बैठा। इस कुण्ड का जल निर्मल था। उसमे विविध प्रकार के पुष्प खिले हुए थे। कुछ समय पश्चात् उस कुण्ड से एक साप निकलकर उसके झोले मे घुस आया। साप को झोले मे छिपाकर वह पत्नी के पास पहुंचा। उसकी यह इच्छा थी कि साप डक मारकर उसकी पत्नी का प्राणान्त करे। पति ने अपनी पत्नी को झोला पकड़वाया और वह उसे हाथ मे लेकर कमरे के भीतर चली गई। बाहर से उसके पति ने द्वार बन्द कर लिया। उसकी पत्नी उस झोले को खोलकर अत्यन्त विस्मित हुई। वह साप एक सुन्दर राजकुमार के रूप में परिवर्तित होकर झोले मे से बाहर आया। वह अत्यन्त उल्लसित हुई। अपने पति को बार-बार पुकार कर उसने उसे भीतर आने के लिए कहा किन्तु वह पत्नी के कथन पर विश्वास न कर सका। विश्वस्त किए जाने पर जब वह अन्दर आया तो वह भी उस आकस्मिक घटना से चकित हुआ। वह राजकुमार सूर्य की भाति प्रज्वलित हो रहा था तथा उसके रूप-परिवर्तन के साथ ही फकीर की सपूर्ण निर्धनता मिट गई थी। उसे दोनो माता-पिता की भाति प्रेम करते रहे। पूछने पर उसने अपना नाम नागराय बता दिया। पाताल मे होने वाले समाना नगर का वह राजा था जहा उसका भव्य राज्य-प्रासाद भी था। वहाँ परियों का राजा होने पर भी वह मन से अशान्त था क्योंकि उसका हियमाल के प्रति पूर्व राग था जिसकी प्राप्ति के लिये ही वह पाताल से बाहर निकल पडा था। 'वह मानव न होकर परीज़ाद था।'[2] राजसी भोग-विलास को तिलांजलि देकर ही वह वहाँ पहुंच चुका था।

नागराय प्रति दिन शिकार को जाता। एक दिन अपने साथियो से विलग होकर वह मृग के पीछे भागते हुए राजा बलवीर के उद्यान मे पहुचा जहा उसने निर्मल जल का कुण्ड देखा। उस उद्यान मे टहलते हुए उसे रूप-यौवना हियमाल के दर्शन हुए। उसे देखते ही वह पृथ्वी पर गिर पडा जैसे उसे किसी शिकारी ने तीर मारा हो। हियमाल भी उस पर आसक्त हुई और साक्षात्-दर्शन से दोनों प्रेम-बन्धन में बन्ध गए। दोनो ने एक-दूसरे का परिचय प्राप्त किया और पुनः पृथक् हुए। वियोगावस्था मे वे दोनो ने एक दूसरे को पत्र लिखते रहे। अन्त मे दोनों का विवाह हुआ और वे राज-प्रासाद में रहने लगे।

एक दिन नागराय सैर को निकला था। पीछे से उसकी परियां पाताल से

---

१. कश्मीरी में 'नाग' का अर्थ कुण्ड (Spring) के रूप मे भी व्यवहृत होता है।

२. 'बो आदम छुसनअह ज़ात परी छम'—हियमाल, पृ० १५।

बाहर आकर उसे ढूढते-ढूंढते वलपूर नामक स्थान पर पहुची। वे नागराय के वियोग मे सतप्त थी। वे वस्तुए बेच-बेचकर नागराय का पता लगा रही थी। उन्होने हियमाल को कभी पुष्प और कभी बर्तन बेचे। लौटने पर नागराय ने इन वस्तुओ को पहचान लिया और उसने हियमाल को भविष्य मे ऐसी वस्तुए खरीदने की मनाही की। अन्त मे बातो-बातो मे पाताल-परियो को हियमाल से नागराय के रहस्य का परिचय मिला। वे प्रसन्न हुई। उन्होने हियमाल को नागराय की वास्तविकता का आभास दिया। उन्होने कहा कि वह मूल रूप मे एक नाग (साप) है अत. वह उससे इस बात की परीक्षा ले। हियमाल के विवश करने पर जब नागराय ने अपनी जाति दिखलाने का वचन दिया तो वह दूध के एक बर्तन मे उतरा जहा वह गायब हुआ। वास्तव मे पाताल-परियो ने दूध के एक बर्तन मे से उसे नीचे अपनी ओर खीचा। प्रवचिता हियमाल वियोग से तडपने लगी।

एक दिन एक फकीर ने हियमाल की करुण-गाथा सुनकर उसे कुण्ड से निकलने वाले एक सर्प की गाथा सुनाई। हियमाल उसी फकीर के साथ उस सर्प को देखने चली। वास्तव में वह सर्प नागराय ही था। दोनो का पुर्नमिलन हुआ। वह हियमाल को अपने साथ पाताल ले गया। वहा वह गुलरग तथा अन्य परियो के साथ रहने लगी। एक दिन हियमाल ने गर्म शर्बत ठण्डी करने के लिए रख छोडी थी जिस मे सभी सर्प-शिशु गिर-गिर कर मर गए। परियो ने क्रोधित होकर हियमाल की दुर्गति कर दी। नागराय उसे पाताल से बाहर ले जाकर एव तट पर अकेली छोड़कर कही चला गया। एक सौदागर का पुत्र दुखिनी हियमाल को अपने साथ ले गया। एक दिन नागराय सर्प के रूप मे हियमाल से मिलने आ रहा था कि उस सौदागर-पुत्र ने उसे मार डाला। पता चल जाने पर हियमाल पर वज्रपात हुआ और अन्त मे वह उसके साथ सती हो गई।

कथा का आधार तथा सगठन

कवि वली अल्लाह मतो ने अपने प्रबन्ध-काव्य के लिए कश्मीर की प्रचलित लोककथा को अपनाया। निज़ामी तथा जामी ने विदेशी कथानको के प्रति उपेक्षा-भाव दिखलाते हुए भी उसने महमूद गामी की प्रशसा की है।[1] 'हियमाल'

---

१. हदीस इश्क मेदान्द निज़ामी, सलाई आश्कात शद कार जामी,
बरूह शा हजारा रहमतुल्लाह तिमन ते वन दपन यिम, फ़ज़ल अल्लाह।
× × ×
खसूसन कअशिरियन मज मर्द नामी, छु कम क़्याह ऐ जमा महमूद गामी
—हियमाल, पृ० ५।

की इस कथा को सर्वप्रथम सदर-उद्-दीन ने फारसी-रूप प्रदान किया था जिसकी प्रशसा कवि ने की है।[१]

कवि ने कथारम्भ के पूर्व हम्द,[२] नात,[३] निर्गुण परमात्मा की प्रशसा एव उसके महत्व[४] तथा अपने पीर[५] का वर्णन किया है। इसके साथ ही उसने 'नफ़्स' की बुराइयो का वर्णन करके[६] हज़रत मुहम्मद अथवा रसूल से उसकी निवृति के लिये प्रार्थना की है।[७] इस 'नफ्स' को सांसारिक प्रलोभनो के रूप मे स्वीकार करते हुए उसने कहा है कि नारी, पुत्र व सभी सासारिक प्राणी हमारे शरीर के शत्रु है।[८] कथा के आरम्भ में प्रस्तावना के रूप मे उसने प्रेम तथा विरह की चर्चा करके पुस्तक रचना का कारण भी प्रस्तुत किया है। तत्पश्चात् शालीनतापूर्ण अपना परिचय दे कर उसने जिक्र,[९] शैतान[१०] तथा गुरु का वर्णन[११] किया है। शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) की महिमा[१२] का गान करने के पश्चात् उसने कथारम्भ किया है।

---

१. सअ कअरमअच सदरदीनन फारसी पअठ्य, छि कअत्याह् आशक हक रब सअन्ध टअठ्य, अअछहअनी गोस सदर-उद्-दीन मरहूम, बुर्जगाह् आलिमाह् अक कोरुम मोलूमा—वही, पृ० ५

२. हियमाल, द्रष्टव्य, पृ० २।

३. वही, द्रष्टव्य, पृ० ३-५।

४. वही, द्रष्टव्य, पृ० ४।

५. छु मखदूमे खुदा दर मुल्क कश्मीर, शहशाह शहान दर मुल्क कश्मीर, बो तम्यअसअय छुस दपान छुक पीर म्योनुय, तमना छुम दपमना छुक चह म्योनुय—वही, पृ० ६।

६. छु नफ़्स बार गअलिब तअलिब नान, ज़न व फरज़न्दअ व अखवान दुश्मने जान। —हियमाल, पृ० १।

७. मुहम्मद मुस्तफ़ा महबूब अल्लाह, मुहम्मद मुस्तफ़ा मतलूब अल्लाह —वही, पृ० १।

८. वही, द्रष्टव्य, पृ० १।

९. जिक्रह् हअन्दिह् पवअहयुस फिक्रिह् मंज़ स्वोनअये दरियाह् वहदतअ मंज़ दिथि बम। वही, पृ० ६।

१०. छु बे पीरन करान गुमराह शैतान —वही, पृ० ६।

११. छु पीरी हाअवी राह मुहम्मद—वही, पृ० ६।

१२. 'छि शाहसअय सान शेख उल-आलमस नूर, करान करी उमरिह ओस बादर दबासोज़'—वही, पृ० ११।

रूप, प्रेम तथा विरह को चिरन्तन साथ मानकर कवि कथा का आरम्भ करता है। कथारम्भ करते हुए उसने पत्नी द्वारा प्रताडित फकीर के दुःखो का वर्णन करने के अनन्तर राजकुमार नागराय का चित्रण किया है जिसके रूप-परिवर्तन पर उसकी सपूर्ण निर्धनता मिट जाती है।[१] इस मे नागराय की हियमाल से साक्षात् दर्शन करने के अनन्तर दानो की वियोगावस्था का वर्णन किया गया है। कथा अन्य सूफी-काव्यो की भाति दुःखान्त है। हियमाल तथा नागराय के विवाहोपरान्त उनके गार्हस्थ्य-जीवन की झाकी प्रस्तुत की गई है।[२] सौदागर-पुत्र द्वारा नागराय के मारे जाने के अनन्तर हियमाल सती हो जाती है।[३] इस मे कवि ने कश्मीर मे प्रचलित सुखान्त लोक-कथा के कई अशो को अपनाया नही है।[४]

प्रेम-पद्धति

इस मे कवि ने प्रेम का आविर्भाव साक्षात्-दर्शन से कराया है।[५] प्रेमोदय सर्वप्रथम नागराय के हृदय मे होता है और फिर हियमाल के हृदय में। हियमाल का प्रथम-दर्शन करते ही नागराय मूर्छित हो जाता है।[६] प्रथम दर्शन के अनन्तर जब दोनो की वियोगावस्था तीव्र हो उठती है तब वे एक-दूसरे को पत्र लिखने लगते है।[७] प्रेम के पुष्ट होने पर दोनों का विवाह हो जाता है।[८]

सतप्त पाताल-परियां नागराय को ढूढने निकलती है। वास्तव मे कवि ने पाताल-परियों का प्रेम सासारिक रूप मे[९] तथा हियमाल-नागराय के प्रेम को

---

१. वही, द्रष्टव्य, पृ० १३।
२. वही, द्रष्टव्य, पृ० ३७।
३. सपुन तस नआगरायस सअन्य सूर, सु सुराह सूर हो तस सूर मसूर
—वही, पृ० ६८।
४. प्रचलित लोककथा के लिये द्रष्टव्य—दलीलअह, सग्रहकर्ता, पुष्कर भान तथा अख्तर मही-उद्-दीन, कथा 'हियमाल नागराय', पृ० २६-४७।
५. 'ब्रमदहोशी वुछन तिम अक अकिस कुन, सुअताकस प्यठ यि अन्दर बाम कुनजन'—वही, पृ० १८।
६. 'वसित प्यअव जमीन अज दस्ते सैयाद,' हियमाल, पृ० १८।
७. हियमाल, द्रष्टव्य, पृ० २२-२८।
८. वही, द्रष्टव्य, पृ० ३५।
९. छु आखिरकार परियन बेवफाई, पतव यिछ आशनअई छुँ जुदअई।
वही, पृ० ३८।

अलौकिक रूप में चित्रित किया है।[1] उन दोनों का प्रेम आत्मा-परमात्मा का विशुद्ध प्रेम है।[2] हियमाल के प्रेम का विकास कवि ने स्वभाविक रूप में प्रदर्शित किया है। नागराय उसका सच्चा साधक है जो संपूर्ण वैभवत्याग कर उसकी प्राप्ति का इच्छुक है।[3]

विप्रलम्भ शृंगार

यह वियोगान्त सूफी-काव्य है। हियमाल अपने प्रेमी नागराय का दर्शन के अनन्तर अपनी मा से कह रही है कि ऐसा लगता है जैसे उसके हृदय को कोई लुटेरा लूट गया हो अथवा कोई मधुराभाषी कबूतर उसे अपना रूप दिखाकर उड गया हो।[4] नागराय भी उसके वियोग मे अत्यन्त व्याकुल होकर कहती है कि मुझे केवल हियमाल को देखने की ही अभिलाषा है।[5]

कवि ने विरह-वर्णन करते हुए कहा है कि 'दो प्रेमियो का वियोग अत्यन्त कठिन होता है। ज्ञानी की इस पृथक्ता के कारण दुर्दशा होती है' प्रेमियो की परस्पर जुदाई का अर्थ है। जीवित ही नरक की आग मे जल मरना।[6] विरहाग्नि से विदग्ध प्रेमी-प्रेमिका केवल परस्पर पत्र ही नही लिखते अपितु गज़ल भी गाते रहते है।[7]

अन्य-प्रसंग

कवि ने इस में नारी-निन्दा की है जो सासारिक बन्धनो की ओर प्रवृत्त

---

१. 'छि प्रग प्यठग्र दपान तस कुन हियमाल, चय मियोनुय त बो चग्रनी,' वही, पृ० ३५।

२. यिकन दर उमग्रर या वर नार नेरी, तिमन अड्यजन ति मग्ररिथग्रय नार नेरी, वही, पृ० ६७।

३. वली युथ हियमग्रली आशनाई, दिई ना जलवह तम्यसग्रय छि ब्रकाई, पृ० १६।

४. 'दिलस गारत करित गव लूटरा, जन वतह ओस बोल बुनवुय कोतरा जन, —वही, पृ० २०।

५. 'मैं हियमाग्रलि हुन्दुय आरज़ूँ छुम—वही, पृ० ५७।

६. छु दूरियर बग्रोड़ छु मुश्किल दग्रोन जुदाई, कयामत अरिफन निश हो जुदग्रई जिन्दह पग्रनी यार यारन, चटुन तुलनाह खटन पान गई है। जुदाई बग्रड खसूसन यग्रोद करी यार, जुदाई हो छु ज़िंदह दोज़खुन नार, —वही, पृ० ५७।

७. द्रष्टव्य—हियमाल, पृ० २१, २५, २७, २६, ३१, ३६, ३७।

करती है।[1] यह नारी धनवान-निर्धन सब को कष्टमय जीवन व्यतीत कराने पर विवश करती है।[2] इसके अतिरिक्त इस में फकीर की महिमा[3] तथा ज़िक्र[4] का भी वर्णन है। जीवन को क्षणिक मानकर तथा सूफी-सिद्धान्तों का परिपालन करते हुए उस ने हृदय को सचेत करके अल्लाह का स्मरण करने की प्रेरणा दी है।[5]

नारी-चरित्र का वर्णन करते हुए कवि ने स्थानीय उपमानों का प्रयोग किया है। शुभ लच्छना एव पतिव्रता नारी पति के लिये छायादार चिनार के समान है:

अकिस आशियन छि आसान शिहिज बूनी।[6]

किन्तु दुःशीला नारी सदा कुत्ते की भाति दुःखदायिनी होती है:

बेइस औ औ करान बरतलअच हूनी।[7]

६—बहराम व गुल अन्दाम[8]

कथा-सारांश—रोम नगर मे किशोर नाम का एक प्रसिद्ध राजा राज्य करता था। उसकी दयाशीलता तथा न्यायप्रियता की सभी प्रशसा किया करते थे। वह निस्सतान था। कुछ समय अनन्तर उसके घर एक पुत्र-रत्न की उत्पत्ति हुई जिसका नाम बहराम रखा गया। सभी विद्याओं में पारगत बहराम मल्ल-युद्ध मे भी अद्वितीय गिना जाने लगा। पिता से आज्ञा लेकर वह एक दिन दूर जगल में शिकार खेलने गया जहां उसने एक सिंह को चारों खाने चित्त लिटा दिया। तत्पश्चात् एक हिरण का पीछा करते हुए वह एक पर्वत के निकट

---

१. 'अकिस आशियन्य तुलअर जन टओपअह लायान, नियबरिमी मतलब खोद साज वायान—हियमाल, पृ० १६।

२. करीमा ऐ रहीमा छुस बो पअरी, चे निश्च हअरान गदा व शाह सअरी —वही, पृ० १५।

३. वही, पृ० ७।

४. वही, पृ० ९।

५. करतअह दिल आगाह परतअह अल्लाह, फेरवुन छुय शाह परतअह अल्लाह। —वही, पृ० ५०।

६. वही, पृ० १६।

७. वही, पृ० १६।

८. बहराम व गुल अन्दाम, मौलवी सदीक अल्लाह, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूरमुहम्मद, महाराज रणवीरगज बाजार, श्रीनगर, कश्मीर, प्रति प्रयुक्त।

पहुचा। सूर्योदय हो चुका था अतः उसने इधर-उधर विश्राम के लिये अपनी नजर दौडाई। उस पर्वत के ऊपर उसने एक गुंबद देखा। वह वहा पहुंचा। उस गुबद का भीतरी भाग सगमरमर का बना हुआ था तथा वहां मच पर एक दिव्य पुरुष बैठा था जिसका नाम बुड था। बुड ने बहराम को चीन की राजकुमारी गुल अन्दाम के सौदर्य से परिचित कराया जिसका श्रवण करते ही वह मूर्छित हो कर नीचे गिर पडा। होश आने पर बहराम ने अपनी प्रेमिका को प्राप्त करने का दृढ सकल्प किया।

मार्ग में उसे देवो से युद्ध करना पड़ा। सैफूर देव और उसके भाइयों को उस ने पछाड दिया। सैफूर ने बहराम से क्षमा-याचना की। सभी देव एवं उनके अमीर उसके चरणो पर आ गिरे। उधर भू-गर्भ-गुफा में एक देव ने रूह अफ़जा नामक एक युवती को बदिनी बनाया था। सैफूर के कहने पर बहराम उस युवती को मुक्त करने में सफल हुआ अतः उसका सम्मान अत्यधिक बढ गया। आगे चल कर उसने उस सौदागर को एक लुटेरे से बचाया जिसके जहाज़ में वह यात्रा कर रहा था। तत्पश्चात् वह घोड़े पर सवार होकर गुल अन्दाम को प्राप्त करने के लिये चीन की ओर बढा।

बहराम अपनी प्रेमिका गुल अन्दाम की प्राप्ति के लिये जोगी बना। जब उसने वास्तविक रूप में उसका साक्षात्-दर्शन किया, उसी समय वह पृथ्वी पर गिर पडा क्योंकि वह अभी कच्चा साधक था।[1] दौलत नामक एक दाई बहराम की मुद्रिका लेकर गुल अन्दाम के पास महल मे ले आई और उसने उसे बहराम के राजकुमार होने का परिचय दिया। बहराम ने एक पत्र भी भेजा जिसे पढ़कर उसका हृदय प्रेम-विह्वल हो उठा। उसने परीक्षा लेने के हेतु यह भी लिखा कि यदि राजकुमार है, तो इतनी व्याकुलता क्यों? उसने बहराम को यह भी सूचित किया कि उसे प्राप्त करना मानो तलवार की धार पर चलना है तथा ऐसा करते हुए उसकी दुर्गति होगी। बहराम इस प्रकार के भय से नही डरा जिसके परिणाम-स्वरूप गुल अन्दाम का मन द्रवीभूत हुआ।

उधर से बहराम के पिता को पुत्र की चिन्ता सताने लगी। उसके पिता को बुड ने बताया कि वह चीन की राजकुमारी को प्राप्त करने के लिये गया हुआ है। अन्त में राजा किशोर ने वहा अपने वज़ीर एव अमीर को भेजा। बहराम तथा गुल अन्दाम का विवाह हो गया।

कथा संगठन

अन्य सूफी प्रेमाख्यानों की भाति इसका कथारम्भ निर्गुण ब्रह्म की महिमा,

---

१. वसित पियव डेशनुवुय बेखबर गव, गुल अन्दामे नज़र कअर संइ बहराम
कोरुन खन्दअह ख्यालाह छुस दिलस खाम—गुल अन्दाम, पृ० १०।

मुहम्मद साहब एव उनके चार मित्रों के गुण-गान के अनन्तर हुआ है।[१] कथा को प्रसगानुकूल शीर्षको के अन्दर बाटा गया है और इसका कथानक पूर्ण रूप से काल्पनिक है। कवि ने घटनास्थलो के लिये रोम, नखजीर तथा चीन आदि देशो को चुना है किन्तु इन स्थलो के निवासी पात्रो का नामकरण भारतीय ही है। इन दूर देशो के नामो के द्वारा कवि ने केवल चमत्कार तथा कुतूहल की सृष्टि की है।

कथा की घटनाओ का वर्णन कुछ नवीन प्रतीत नही होता। राजा का पुत्राभाव.[२] पुत्रोत्पत्ति[३] मार्ग की कठिनाइया,[४] ससार की निस्सारता,[५] शाश्वत-मिलन की महिमा[६] आदि बातें इस में सयोजित की गई है। इस शाश्वत मिलन की लालसा मे वियोग को विशेष स्थान दिया गया है।

प्रेम-पद्धति

इस में गुण-श्रवण से प्रेम का आविर्भाव होता है। नायक-नायिका परस्पर मिलने के अनन्तर एक-दूसरे से प्रेम करते हैं। पहले तो नायक अपनी नायिका का दर्शन करते ही मूर्छित हो जाता है किन्तु अन्त मे वह उसी के प्रेम मे पागल हो उठता है। दोनो एक-दूसरे को पत्र लिखते है और अन्त में नायक-नायिका का सयोग हो जाने पर काव्य की समाप्ति होती है।

इस काव्य मे वीरता,[७] यात्रा[८] तथा युद्ध[९] आदि के प्रसंग आए है। गुल अन्दाम की प्राप्ति के लिये बहराम जोगी बनता है। दोनों का मिलन आत्मा-परमात्मा के तादात्म्य के रूप में दिखाया गया है।

प्रेम-तत्व

सूफी प्रेमाख्यानों का प्रेम कही लौकिक तथा कहीं लोक बन्धन से परे चित्रित किया जाता है। गुल अन्दाम के विरह में पीड़ित बहराम जोगी बनकर कठिनाइयो को पार करता हुआ आगे बढता है। वह शरीर पर भस्म मलता है तथा कन्था पहनता है। प्रेमिका का प्रेम उसे साधना-पथ पर अग्रसर करता है।[१०]

---

१. वही, पृ० २।
२. वही, पृ० २।
३. वही, पृ० २।
४. वही, पृ० ६-९।
५. वही, पृ० १०।
६. बहराम व गुल अन्दाम, पृ० १५।
७. वही, पृ० ३।
८. वही, पृ० ६-१०।
९. वही, पृ० ७-८।
१०. वज़ीनो शाहज़ादन लओग सअनियास, वोलुन जन्दाह मलुन तअभ्य सूरतअ सास। क्व रुन तस खानदारस गुर हवालअह, वदन गव दागे दिल हमचो लाल।—वही, पृ० १०।

प्रेमिका के प्रेम मे वह परिपूर्ण रूप से खो जाता है ।[१] गुल अन्दाम उसे पत्र द्वारा उपदेश देती है कि वह सहनशक्ति से काम ले, ताकि शैतान विघ्न न डाल सके ।[२]

प्रेम-पथ का पथिक अपने जीवन का मोह त्याग कर अग्रसर होता है। उसे तब तक विश्राम नही मिलता जब तक उसे प्रिय की प्राप्ति न हो। प्रेम उत्पन्न होने पर हृदय का धैर्य मिट जाता है और आतुरता बढती है । इसी कारण प्रेमिका गुल-अन्दाम अपने प्रेमी बहराम को एक ओर सहनशक्ति का उपदेश देती है तथा दूसरी ओर अपने पिता को स्व-प्रेम से परिचित कराती है ।[३]

इस प्रेम-भाव की विहृलता सदा बढती ही जाती है । संसार की असारता को दृष्टि में रखकर कवि ने केवल ईश्वर-प्रेम को ही उत्तम मानते हुए कहा है :

'जि दुनिया छियोग्रन च़ेह युद छुग्रय यारह सुन्द ज़ोक'[४]

(यदि तुम्हारे मन मे प्रियतम को प्राप्त करने की अभिलाषा है, तो इस ससार के असार मान ले ।)

बहराम अपनी प्रेमिका की प्राप्ति के लिए प्राणो तक को निछावर करना चाहता है और किसी भी प्रकार के भय से भयभीत नही होता ।

रस—रस की दृष्टि से इस प्रबन्धकाव्य मे वियोग-पक्ष का प्राधान्य है किन्तु अन्त सुखान्त है । इसमें कवि ने सयोग-शृगार का विशद वर्णन नही किया है । गुलअन्दाम के वियोग से सतप्त बहराम अत्यन्त आतुर दीखता है और कठिनाइयों को पार करके ही उसका मिलन नायिका से होता है। जब तक उसे प्रेमिका की प्राप्ति नही होती । उसका शरीर प्रेमाग्नि में जलता रहता है ।[५]

नख-शिख वर्णन

'जहां रूप तंह प्रेम' सूफी-काव्यों का सिद्धान्त है इस काव्य में गुलअन्दाम के रूप का वर्णन दो स्थानों पर हुआ है । प्रथम उस समय जब वयोवृद्ध बुड़

---

१. खबर क्या छिअय बो कुस छुह क्याह नीयत आम, बो चअनी इश्क सअत्यन गोस गुमनाम । —वही, पृ० १२ ।

२. बसख्ती सब्र करहनुय छुय सियठाह जान, बोद तै जील करदन कार शैतान —वही, पृ० १४ ।

३. ये छुम शहजादअह सुन्द दर्दे मोहब्बत, कबूल यदवी करुम बो लारह तस पतह । —वही, पृ० १५ ।

४. —वही, पृ० १० ।

५. बोछुस दग्रोदमुत ज़ि नार यार जानसोज, तसुन्द दग्रोद छुम गोमुत सनित मे। —वही, पृ० ११ ।

गुलअन्दाम के सौदर्य का वर्णन बहराम के सामने करता है[1] तथा दूसरा उस समय जब वह स्वयं उसके सौदर्य को देखकर मूछित होता है।[2] उसके मुख पर तिल दिन मे शाम की भाति चमकता है।[3] कवि ने उसके दान्तो, वक्षस्थल, भुजाओ, हाथो तथा नाखूनों आदि का भी वर्णन किया है।[4] इस रूप का दर्शन करके प्राणी को तृप्ति नही होती अपितु वह मूर्छित ही हो जाता है।[5]

७—वामीक-अज़रा[6]

कथा-सारांश—यमन के राजा का गुणशील तथा एकमात्र पुत्र वामीक था। एक बार सेना-सहित शिकार खेलते हुए वह रोम की ओर जा लगा। वह मकबा-पर्वत के निकट पहुंचा जिसके पास ही एक सुरम्य उद्यान था। मकबा के राजा सुहेल की अत्यन्त सुन्दर कन्या थी, जिसका नाम था अज़रा। उसने राजकुमार वामीक को खिडकी से देखा। दोनो एक-दूसरे को देखकर प्रेम के वशीभूत हुए। अज़रा को वियोगाग्नि सताने लगी। वह मिलन के लिए तड़पने लगी। उधर से वामीक भी मजनू की भाति उसके लिए पागल होकर रोने लगा। यह सूचना वामीक के पिता को मिली और तत्काल ही उसने वहां अपने दूत भेजे। उन्होने राजकुमार को संन्यासी के वेष में देखा। वामीक तथा अज़रा की प्रेम-कथा सर्वत्र फैल गई।

वामीक के पिता ने मक़बा पर आक्रमण किया किन्तु पराजित हुआ। वह युद्ध में मारा गया। उसकी मृत्यु के अनन्तर वामीक का चचेरा भाई बहमन यमन के सिंहासन पर बैठा। राज्य से वचित वामीक जोगी बनकर अज़रा के लिए पर्वतों पर घूमता रहा। एक रात सुहेल ने उसे पकड़वा लिया तथा उसके पैरों मे बेडिया डलवा दी। वहा से मुक्ति पाने के अनन्तर वह पुनः पर्वत-कंदराओं मे चला गया। सौभाग्यवश उसे वहा अज़रा का गुरु मिला जिसका नाम मौसूल था। उस के प्रेम की अतिशयता से वह अत्यन्त द्रवीभूत हुआ, अतः उसने

---

१. बहराम व गुल अन्दाम, पृ० ४।
२. वही; पृ० १०।
३. रूखअस प्यठ फाल तअम्यसुन्द याम डयूठुम, अजअयिब ज़न दोहस मंज़ शाम डियूठुम,—वही, पृ० ४।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५।
५. 'तसुन्द रुख डेशिवुनबुय गोस बेहोश'—वही, पृ० ५।
६. वामीक अज़रा, मीर मुहम्मद सैफ़-उद्-दीन मंतकी, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, [महाराज रणवीरगञ्ज बाजार, श्रीनगर, कश्मीर, प्रति प्रयुक्त।

वामीक को अजरा से मिलाने का वचन दिया ।

वियोग-सतप्ता अज़रा बीमार हुई । हकीम को दिखाने का बहाना करके मौसूल उसे वामीक के पास पर्वत-कन्दरा मे ले आया । वहा दोनो वामीक तथा अजरा ने एक दूसरे के सौदर्य का पान किया । नयनो के झपकने का क्षण भी उनके लिए पर्वत-सदृश भाराक्रान्त प्रतीत हुआ ।[1] उसने वामीक को सुझाव दिया कि वह चमन लौटकर बहमन की सहायता प्राप्त करके मकबा तथा इस्तक्रा पर आक्रमण करे । अजरा द्वारा दिये गये इस तर्क को वामीक ने सहर्ष स्वीकार किया । बहमन ने मकबा पर आक्रमण किया और सुहेल पराजित हुआ । दुर्भाग्य से कमर नामक एक सैनिक अजरा पर आसक्त हुआ और वह उसे भगाकर अपने साथ ले गया । उसके साथ विवाह करने के लिए वह अज़रा के माता-पिता की स्वीकृति चाहता था जिस पर वे राजी न हुए । अभी अजरा को कमर से मुक्ति मिली ही थी कि बहमन ने सुहेल को पत्र लिखकर उसकी माग की । बहमन को असतुष्ट न करने के अभिप्राय से सुहेल ने अपनी पुत्री अजरा को उसके पास भेज दिया किन्तु वहा वह वामीक के ही वियोग मे तडपती रही । अज़रा ने बहमन का सारा अनुनय-विनय ठुकरा दिया । अन्त मे उसकी एक-निष्ठता से प्रभावित बहमन उसके चरणों पर गिर पडा । अजरा का विवाह उस-की इच्छानुसार वामीक के साथ हो गया ।

वामीक एकान्त-प्रेमी बन गया । बहमन ने उसे आधा राज्य भी दे दिया । रोम का राजा अशीर वामीक का मित्र बना । उसके आतिथ्य-सत्कार मे वामीक ने कभी न्यूनता न रहने दी । परिणाम यह निकला कि वह अज़रा पर मोहित हुआ । उसने अजरा की प्राप्ति के लिए वामीक को मार डाला किन्तु अपने प्रिय-तम की मृत्यु पर वह आत्महत्या कर बैठी । दोनो 'वामीक तथा अजरा' को एक ही स्थान पर दफन किया गया ।

कथा का आधार तथा संगठन

सैफ-उद्-दीन के प्रबन्ध काव्य 'वामीक अज़रा' का कथानक निज़ामी तथा याकूब सर्फी के आधार पर सगठित हुआ है । स्वय याकूब सर्फी ने निज़ामी के विषय में यह कहा है कि 'यदि निजामी मेरी भाति उथल-पुथल से पूर्ण वाता-वरण देखता तो वह कभी भी ऐसे काव्य की रचना करने में समर्थ न होता ।'[2]

---

१. 'दिलस प्यठ कोह् तिमन अच्छ टीठ हुन्द चेरे' । वामीक अजरा, पृ० १३ ।

२. निज़ामी रा कि हर्गिज़ हैच करदी, बदल न निशस्त बोद अज़ गर्म व सर्दी —पंजगज (वामीक अज़रा), पृ० ४८ ।

कवि सैफ-उद्-दीन का याकूब सर्फी की ओर सकेत करना यही प्रदर्शित करता है कि वह इस कथानक के लिये उसका ऋणी है ।[१] कवि ने निजामी के अतिरिक्त जामी के प्रति भी कृतज्ञता प्रकट की है ।[२] याकूब सर्फी के 'वामीक-अजरा' कथा का आरम्भ निर्गुण-महिमा, अमीर कबीर सैयद अली हमदानी के प्रति श्रद्धाभाव, प्रेम की महानता तथा 'साकी नामा' के अनन्तर होता है ।[३] उसने कथारम्भ मे सुहेल को निस्सतान भी दिखाया है जो किसी फकीर के चादर प्राप्त करने के अनन्तर ही पुत्रोत्पत्ति का वरदान प्राप्त करता है ।[४] सैफ-उद्-दीन के 'वामीक-अज़रा' का कथानक याकूब सर्फी के 'वामीक अजरा' के इन प्रसगो को छोडकर प्राय: एक जैसा ही है । दोनो के काव्यो में प्रेम-तत्व का एक ही स्वरूप लक्षित होता है ।[५]

कथारम्भ से पूर्व सैफ-उद्-दीन ने निर्गुण ईश्वर के प्रति विनय[६] तथा निज़ामी एव ज़ामी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के अनन्तर हज़रत रसूल अक्रम की प्रशसा मे एक नात लिखी है ।[७] तदनन्तर प्रेम की महत्ता पर प्रकाश डालकर[८] ग्रन्थ-रचना का कारण प्रस्तुत करते हुए उसने कश्मीरी फारसी सूफी-कवि याकूब सर्फी का भी उल्लेख किया है ।[९] गुरु की महिमा का गान कथारम्भ मे ही किया गया है ।[१०] आत्मपरिचय काव्य के अन्त मे दिया गया है ।[११]

'वामीक अज़रा' के कथानक को दो भागो मे बाटा जा सकता है । पहला भाग वामीक तथा अज़रा के प्रथम दर्शन से लेकर उनके विवाह तक तथा दूसरा भाग उन के विवाह के अनन्तर वामीक के मारे जाने एव अज़रा की आत्महत्या

---

१. 'छु फरमावान जिनाबे शेख सर्फी, महीत इश्क व अरफान दर शगरफ़ी' —वामीक अजरा, मीर सैफ०, पृ० ४ ।

२. निजामे हम्द बख्शूत चून निजामी, बजामे नाते फिरतस मस चू जामी । —याकूब सर्फी, पृ० ३ ।

३. द्रष्टव्य—पजगज (वामीक अजरा), पृ० १-६ ।

४. द्रष्टव्य—वही, पृ० १०-१४ ।

५. छु फरमावान जनाब शेख सर्फी, महीन इश्क व अरफान दर शकर फी । —वामीक अजरा, सैफ-उद्-दीन पृ० ४ ।

६. वामीक अजरा, सैफ-उद्-दीन, पृ० २ ।

७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४ ।

८. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३ ।

९. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४ ।

१०. 'वलौ उस्तादह द्रौन मज छुक च्अह मअहरम, वअनी छुम पेश ग़म तअ ऐश मातम—वही पृ० १२ ।

११. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३६ ।

तक लिया जा सकता है। प्रथम भाग मे कवि ने सांसारिक बधनो में फंसे हुए प्राणी की ईश्वर के प्रति विरति तथा कन्दराओ में ध्यान-अवस्थित जोगी के ईश्वर-भजन की महिमा प्रकट की है। ईश्वर भक्त को दिन के समय कोई देख नहीं पाता और इसी कारण वामीक दिन को कन्दराओं का आश्रय लेकर रात-भर पागलों की भाति घूमता-फिरता है।[1] वास्तव मे प्रेम साधना पर चलने वाले साधक को अपने प्रिय के बिना किसी अन्य का ध्यान नही रहता। दोनों का एक-दूसरे का वियोग सताता रहता है। प्रेमी-जन का वैद्य केवल प्रभु है जो आध्यात्मिक रोग को चुटकी भर में अपने दर्शन से मिटा देता है।[2] गुरु की चर्चा सहायक रूप में हुई है। प्रेमिका की प्राप्ति के लिए युद्ध करना आवश्यक है।[3]

दूसरे भाग की कथा का सगठन कुछ-कुछ 'पद्मावत' से मिलता है जो दुःखान्त है। वामीक तथा अजरा के मिलन के अनन्तर वामीक के मित्र राजा अशीर का अज़रा पर आसक्त होकर उसे प्राप्त करना अलाउद्दीन द्वारा पद्मावती को प्राप्त किए जाने वाले प्रयास के समान दीखता है। दोनो विवाहिता नारियो पर मोहित होते है। अशीर के हृदय मे छिपी कुत्सित भावना से अवगत हुए बिना वामीक उसका आतिथ्य-सत्कार उसी रूप मे करता है जैसा रत्नसेन ने अलाउद्दीन का किया था। दोनों प्रबन्ध-काव्यो के अन्त मे नायिका अपने-अपने पति के साथ आत्महत्या करती है।

वामीक के प्रेम में एकनिष्ठता, दृढता तथा सत्यता है। वह अज़रा की प्राप्ति के लिए गुफा में ध्यानमग्न हो जाता है।[4] कथा में वामीक-अजरा का संयोग-शृंगार असयित नही है।[5]

प्रेम-पद्धति

'वामीक अजरा' में नायक-नायिका का प्रेम साक्षात्-दर्शन से उद्भूत होता

---

१. सु वामीक दर कोहिस्तान गव, ब शब क्रेशन दोहस काह न डेशान,
गही पर शहर चू दी वान्ह, गही दर वादी व वीरानह फैरान।
—वही, पृ० ११।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० १४।

४. गोफाह डीठअन कुहस प्यठ तीर तर तंग, छयफा ह्यत बियूठ तति जन लाल दर संग—वामीक अज़रा, पृ० १२।

५. सु दोह यत मंज बन्यक माशूक सुन्द दीद, सईदन आशकन हुअंज सुअय छि बअड़ ईद, सु दोह यत मंज दिलन छुइ वस्ले ग़म सोज़, खुशी हुन्द फसले गुल सुइ असल नव रोज़। —वही, पृ० २६।

है । सर्वप्रथम प्रेम का प्रादुर्भाव नायिका के हृदय मे होता है[1] जो खिड़की से देखकर नायक के सौदर्य पर मोहित होती है ।[2] उसके अनन्तर वियोगावस्था का आरभ होता है । उनका स्वाभाविक प्रेम अखण्ड है जिस में रहस्यात्मकता के दर्शन होते हैं । ईश्वर का विरह सूफियो की सम्पत्ति है और यह आत्मा उसके उत्पन्न होते ही उस प्रभु के लिऐ व्याकुल होती है । इस प्रकार नायक अपनी प्रेमिका अजरा की प्राप्ति के लिए जोगी बन जाता है ।[3] इससे द्रवीभूत होकर अजरा उससे मिलने आती है । उसके सामने आकर वह करुणाजनक शब्दो मे प्रार्थना करती हुई रोती भी है । वियोगावस्था से उत्पन्न दशा का वर्णन भी वह उसके सम्मुख करती है ।[4] कवि ने इस विरह को प्रेम की अतिशयता के रूप मे चित्रित किया है । प्रेम-सम्बन्ध मे कोई अमर्यादा नही है और सामाजिक आधारपरही दोनों का विवाह सम्पन्न होता है ।[5] सदाचार के आदर्श का उल्लघन कही भी नही हुआ है। दोनो मिलकर एक हो जाते है ।[6]

दूसरा भाग वियोगान्त है जिस मे अज़रा की एकनिष्ठता का परिचय पद्मावती के प्रेम के समान ही मिलता है ।

तुलुन अज़ खाक़ व खून वामीक अज़रा, बमा तम शोर मुहशर ओस बरपा।
+ + +
बयक कबर अक अकिस हमदोश थोवुन, बहम हमराज़ व हम आगोश सोवुना[7]

विप्रलम्भ शृंगार

'वामीक अजरा' में विरह की प्रधानता है । साक्षात्-दर्शन के अनन्तर ही अज़रा का हृदय विरहाग्नि से दग्ध होने लगता है ।[8] वामीक भी सासारिक-

---

१. बयक दीदन कडित नियूक अख अकिस दिल —वही, पृ० ७।

२. तअमी वुछ दारिह किन्य शहज़ादह अज़दूर, कौरुन आज़ाद दिल शहज़ादह मखमूरा— वही, पृ० ७ ।

३. वनान रातस करान ओस जामअह पारअह, ज़ि गय बर सीनअह छावान सगे खारअह—वही, पृ० ११

४. द्रष्टव्य—वामीक अज़रा, पृ० १३ ।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ० २५-२६ ।

६. दोअय त्रअवित ज़अह शह बाहम अकुय गय —वही, पृ० २५ ।
तुलना करे—अजब बाश नियाज़ हर दो जानिब, अजबतर आंकि नाज़ अज़ हर दो जानिब ।—पजगज (वामीक अज़रा), पृ०, २६ ।

७. वही, पृ० ३३ ।

८. वलो माशूकह गोमो ज़ोक चोनुय, मे चानी शोकह छुम तैशोक चोनुय —वामीक अज़रा, पृ० ७ ।

बन्धनों के प्रति उपेक्षा-भाव प्रदर्शित करता है।[१] इस मे नायक-नायिका के रुदन एवं कृशता का वर्णन किया गया है। आसुओ की झडी तथा शरीर की रक्तमय उष्णता का वर्णन फारसी-काव्य की परम्परा है, जो इस मे भी विद्यमान है।[२] विवाह-पूर्व विरह वामीक को तलवार की भाति चीर रहा है।[३] इस विरहावस्था मे नायक यही चाहता है कि नायिका उसे कभी न भूल बैठे। उसके कदमों पर अपना सिर न्योछावर करने की भी उसकी अभिलाषा है।[४] वामीक के विरह में अजरा बीमार पड जाती है और इस मे कवि ने विप्रलम्भ-शृगार का चित्रण ईश्वरोन्मुख के लिए किया है।[५]

नख-शिख वर्णन

कवि सैफ-उद्-दीन ने नायिका के अग-प्रत्यग का वर्णन किया है। केश, नेत्र, भौहें, मुख, मस्तक, होठ, दात, जिह्वा, ठोडी, गर्दन, वक्षस्थल, भुजाए आदि का सौदर्य-वर्णन उसने सरल एव स्वभाविक ढग पर किया है।[६] नायिका के मुख का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है जैसे वह सरोवर मे खिला ताज़ा कमल हो।[७] गर्दन के षिषय मे उसने कहा है मानो चादी के ऊपर मोती तथा सोना प्रदीप्त हो उठा हो।[८]

सामाजिक तत्व

इस में विवाह का अर्थ सुख माना गया है। वर एव कन्या का मतैक्य ही जीवन में वास्तविक प्रसन्नता लाता है।[९] विवाह के समय मुनादी करवाना, सैनिकों एवं सम्बन्धियों को निमत्रित किया जाना तथा दीपावली के अवसर पर

---

१. खबर गयि पादशाहस पेशवा द्रास, वुछुन शाहजादह लग्रगित इश्कह सनियास —वही, पृ० ८।

२. वदन हरदम बदन ओसुस पुर अज़ खून—वही, पृ० ८।

३. फराकअच स्राक लग्रइत दिल कुतुरथम—वही, पृ० ९।

४. प्यमन चोन खाक खग्रोरतल कर प्यमय याद—वही, पृ० ९।

५. मज़ाज़ुक इश्कह थोव सूरत परस्ती, हकीकत मैनियुक गव ज़ोक व मस्ती। —वही, पृ० ३७।

६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४-६।

७. ज़री ताकीन सरस मंज़ ताजग्रह पम्पोश—वही, पृ० ५।

८. शुबन क्याह जन रग्रोपस प्यठ मग्रोख्तह तग्रह स्वोन—वही, पृ० ६।

९. निकाह द्रन त्रन सपुन अकदे मुहब्बत, करुन ज़ग्रहिर तिहुन्द अकदे निहानी —वही, पृ० २४।

घर सजाना आदि बाते इस मे वर्णित है ।[1] विवाह पर दहेज दिये जाने का भी उल्लेख इस मे हुआ है ।[2]

८—हियमाल[3]

कथा सारांश—स्वर्ग के उद्यान कश्मीर मे किसी कुण्ड के किनारे एक फ़कीर भस्म मलकर एव छाछ, साग तथा जडी-बूटी खाकर निर्वाह किया करता था। एक दिन उसके थैले मे एक सांप घुस आया। वह उस नाग को थैले मे बन्द करके घर की ओर आया। उसे पत्नी सदा तग किया करती थी। वह यह सोच-कर घर आया कि थैले से निकला नाग बाहर आते ही उसकी पत्नी की इहलोक लीला समाप्त करेगा। पत्नी थैले को लेकर जब भीतर कमरे मे प्रविष्ट हुई, उसके पति ने बाहर से द्वार बन्द किया। थैले का खुलना ही था कि उस मे से वह नाग एक राजकुमार के रूप मे बाहर आया। सारा घर उसके प्रकाश से प्रज्वलित हो उठा तथा वह घर ऋद्धि-सिद्धि से सपूर्ण बन गया। पत्नी के आग्रह पर फकीर भीतर आया और वह भी इस आश्चर्यजनक घटना से विस्मित हुआ। पूछने पर राजकुमार ने अपना नाम नाग-अर्जुन बताया जो पूर्वराग के कारण हियमाल के लिये व्याकुल था। फकीर ने उसे समझाया कि वास्तव में इश्क मजाजी से इश्क हकीकी ही सर्वोत्तम है।

एक दिन शिकार खेलते-खेलते नाग-अर्जुन कश्मीर के एक सुन्दर स्थान पर पहुंचा जिसका नाम बलपूर था। वहा के राजा बलवीर की पुत्री हियमाल सौंदर्य में बिजली के समान रूपवती थी। दोनो की आखे चार हुईं। तदनन्तर नाग-अर्जुन के पत्र को प्राप्त कर हियमाल ने उसे प्रेम का अधिकारी न मानते हुए कच्चा प्रेमी बताया। नाग-अर्जुन ने प्रत्युतर में प्रगाढ प्रेम का परिचय दिया। हियमाल भी उसके प्रेम की अतिशयता से द्रवीभूत हो वियोगाग्नि मे जलने लगी। दोनो के प्रेम-पत्र एक दूसरे की ओर आने लगे। अन्त मे दोनो का विवाह

---

१. द्रष्टव्य—वही, पृ० २४।

२. स्यठाह सन्दूक गहअनअक्य सअत्य दितिहस—वही, पृ० १७।

३. कवि सैफ़-उद्-दीन की 'हियमाल' अभी तक अप्रकाशित है। इस की एक हस्तलिखित प्रति रिसर्च-विभाग, लालमण्डी, श्रीनगर (कश्मीर) में सुरक्षित है। कवि ने इसे लुधियाना (पंजाब) में लिखा था जैसा कि इसके मुख-पृष्ठ पर लिखा गया है—दर शहर लुधियाना फी सन् १२८० हि० (सन् १८६३ ई०) तसनीफ करदहसाइज ८ इंच, ६ इंच कुल पृ० १७४, पुस्तक-संख्या नं० ११२७, प्रति प्रयुक्त ।

हुआ । उधर से नाग-अर्जुन की पूर्व पत्निओं ने उसे ढूढना आरम्भ किया । हियमाल को झांसे मे लाकर उन्होने उसे नाग-अर्जुन की जाति की परीक्षा लेने के लिये बाधित किया । इस प्रकार वे अपने पति नाग-अर्जुन को वापस पाताल ले जाने मे सफल हुईं ।

नाग-अर्जन प्रतिदिन हियमाल को देखने निकलता । एक दरवेश के द्वारा हियमाल उसे पुनः प्राप्ति मे सफल हुई । नाग-अर्जुन उसे पाताल ले गया । वहा हियमाल द्वारा बनाई गई शर्बत मे नागिनो के शिशु गिर कर मर गए । प्रधान महिषी गुलरग के कथनानुसार हियमाल को पाताल के बाहर तट पर फेका गया । एक सौदागर ने उसे वहा से उठाकर विवाह के लिए विवश किया किन्तु उसने उसका प्रस्ताव अस्वीकार किया । एक समय वियोगी नाग-अर्जन सर्प का रूप धारण करके जब अपनी प्रेमिका से मिलने आया, उसी समय अनजाने में सौदागर ने उसे मार डाला । विलपनी तथा कलपती हियमाल पता लग जाने पर उसके शव के साथ सती हो गई ।

कथा का आधार तथा संगठन

सैफ-उद्-दीन की कथा का आधार अपने पूर्ववर्ती कवियों द्वारा रचित 'हियमाल' ही रही है । सैफ-उद्-दीन की हियमाल मे वली अल्लाह् मतो की 'हियमाल' से कुछ अधिक अन्तर प्रतीत नही होता । केवल नायक का नाम जहां मतों ने नागराय को दिया है, वहा सैफ-उद्-दीन ने उसका नाम नाग-अर्जन दिया है । मतों द्वारा दिया गया नायक का नागराय कश्मीरी लोक-कथा के बिल्कुल अनुरूप है ।[1] सैफ-उद्-दीन का कथन है कि सदर-उद्-दीन द्वारा फारसी मे रचित मसनवी 'हियमाल' की भाति उसकी 'हियमाल' में अधिक रसात्मकता रही है ।[2] यह मसनवी सैफ-उद्-दीन ने वली अल्लाह् मतो के उत्तर मे लुधियाना (पजाब) मे लिखी ।[3] पूर्ववर्ती कवियो की भाति ही इसका कथानक वियोगान्त है यद्यपि प्रचलित लोककथा सुखान्त है ।

यह प्रबन्ध काव्य तेरह सर्गों में विभाजित है । सर्वप्रथम इसमे कश्मीर की

---

१. द्रष्टव्य—दलीलह, पृ० २६ ।

२. युथुय तस फारसी नज़्मस छु मेछ्यर, यमिस रस कअशिरियुक अज़मस छु जेछर ।—पृ० २ ।

३. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, द्वितीय भाग, —पृ० ३०४ ।

हियमाल तथा देव पुत्र नाग-अर्जुन के पूर्व-राग का वर्णन हुआ है।[1] उनके इश्क-हकीकी[2] के पश्चात् कवि ने इस कथानक के पूर्व आलेख्य का वर्णन करते हुए सदर-उद्-दीन तथा वली अल्लाह मतो की ओर सकेत किया है। सदर-उद्-दीन ने फारसी में हियमाल की रचना की थी और उसी के आधार पर वली अल्लाह मतों ने कश्मीरी-भाषा मे इसे सूफी प्रबन्धकाव्य का रूप प्रदान किया था।[3] तदनन्तर कवि ने निर्गुण-ईश्वर की प्रार्थना के पश्चात् कथारम्भ किया है।[4] काव्य के अन्त में उसने कहा है कि इस का शाब्दिक अर्थ मैं क्या कहूं, इसका तो और ही कुछ अर्थ है।[5] काव्य के अन्त मे कवि ने हज़रत मुहम्मद का वर्णन करके आत्मपरिचय दिया है।[6]

प्रेम-पद्धति

नायक-नायिका का प्रेम पूर्व-राग के अनन्तर साक्षात्-दर्शन से आरम्भ होता है। उनका मिलन चिरकाल तक नही होता और दोनो पुनः एक दूसरे से वियुक्त हो जाते हैं। नाग-अर्जुन के मारे जाने के अनन्तर वह उसके शव के साथ ही सती हो जाती है।[7]

प्रेम-तत्व

इसमें नायक-नायिका के प्रेम को कवि ने आरम्भ से ही इश्क-हकीकी माना है।[8] काव्य के अन्त में भी इस बात की पुष्टि की गई है।[9] आरम्भ में नाग-अर्जुन

---

१. छु हमदुक लाल पेशे अहल दिलमाल, बहाल बकाल फिरदोसअच हियमाल, ब इज़अते नियते सैयद मीर सुहबत, बलज़ते अर्जुन अंजीर जन्नता —हियमाल, सैफ-उद्-दीन, पृ० १।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० १।

३. सु सदर मौलवी कअर मसनवी नज़्म, बदरै पहलवी तस मुहतवी अज़्म, सपुन वाइज़ दिही आज़िम सो जाज़िम, वली अल्लाह तम्युक नाज़िम मुतर्जिम —वही, पृ० २।

४. द्रष्टव्य—वही, पृ० २-३।

५. बसन अते मुहतवी इछ मसनवी कुस, वनै न माने लफ़्ज़ी नौवुय छुस —वही, पृ० ८५।

६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८३, ८५।

७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७७-८०।

८. हकीक़ी यस न हुअसिल बा नियाज़स, तरीकी तस छु दिन दुल प्यठ मज़ाजस —वही, पृ० ८५।

९. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८५।

फकीर से मिलते ही अपने भ्रमण का कारण तथा हियमाल के साथ होने वाले पूर्व-राग की बात भी सुना देता है जिसके लिए उसने संपूर्ण सांसारिक सुखों तथा भोग-विलासों को तिलांजलि दे दी है ।[१] कवि ने कथारम्भ मे इस बात का भी उल्लेख किया है कि जिस प्राणी के हृदय मे प्रभु-प्रेम नही, उसके लिये अभ्यास-रहित कुरान का अध्ययन करना व्यर्थ है ।[२] जिसके हृदय मे प्रभु-प्रेम समा जाता है, उसके हृदय को इश्क-कटारी सदा चीरती रहती है ।[३] वह अपनी प्रेमिका के सौंदर्य रूपी प्रकाश का पतंगा बन जाता है । वह उसके लिए पागल हो उठता है क्योंकि वही उसकी सर्वस्व होती है ।[४] सांसारिक बन्धनों मे न फंसकर वह माया से सदा दूर रहता है ।[५] प्रभु सदा अपने साधक की प्रेम अभी कच्चा है ।[६] अपने प्रेम एवं भक्ति पर दृढ रहने वाला साधक प्रेम को आग का सागर तथा आंसुओं को ही उसका जल मानता है ।[७] प्रेम-पथ पर चलने वाला साधक कभी कठिनाइयों से नही घबराता । नाग-अर्जन फकीर बनकर सम्पूर्ण सांसारिक प्रलोभनों को तिलांजलि दे देता है और तभी ईश्वर-कृपा के साथ ही उसका तादात्म्य हियमाल के साथ विवाह के रूप मे होता है ।[८] पति की मृत्यु पर वह भी सती हो जाती है ।

विप्रलम्भ शृंगार

विरह की उष्णता ही प्रेमी-प्रेमिका का जीवन है क्योंकि इसकी आग सुलगकर फिर शान्त नही होती । सूफी-साधक इसी अग्नि में पडकर अपनी परीक्षा देता है । हियमाल अपने प्रेमी नाग-अर्जन के वियोग मे कहती है :

> चोलुक कओत मारहमोत मे नारह तोत गोम,
> सु मोत लोत मारह बन होत आमारअह दित गोम ।[९]

---

१. द्रष्टव्य—हियमाल, पृ० १ ।
२. वुरन कुरान परुन बे मश्क बस कूठ—वही, पृ० १ ।
३. दितुम इश्क कटअरी जख्मकअरी, ह्यतम बर दिल चह पअरी कर चह यअरी ।
४. चह शमा-ए-खानअह बो परवानअह आसा,
परी चह पानह बो दीवानअह आस्या ।—वही, पृ० १४ ।
५. कतियुक छुइ राज शूबन शीरह क्याह ताज,
दिमय बो बाज न्यूथम दिल नकाराज—वही, पृ० १४ ।
६. फक्त इल्ज़ाम इश्कुक आस छुइ खाम—वही, पृ० २० ।
७. छु इश्क आतशो समुन्दर, वश छि अशाक—वही, पृ० २८ ।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३५ ।
९. द्रष्टव्य—हियमाल, ४४ ।

(मुझ मे आग की चिनगारी फेकते हुए वियोगावस्था को बढाने वाला वह मेरा उन्मत्त प्रेमी कहा भाग गया।)

नाग-अर्जन के वियोग मे हियमाल मुर्छा जाती है। साक्षात् दर्शन होते ही प्रेमी की दृष्टि मे बिंध नायिका अपने प्रेमी की दूरी सहन नहीं कर सकती।[१] दोनो हीर-राझे की भाति प्रेम से विह्वल हो जाते हैं।[२] विवाह-पूर्व जब हियमाल को उसके दर्शन नहीं होते। वह वियोग मे तडपने लगती है और श्रावण-मास उसके लिए पोषमास बन जाता है।[३] विवाहोपरान्त हियमाल अपने प्रेमी नाग-अर्जुन को अपने दुःख से परिचित करके अपनी मर्मव्यथा भी करुणापूर्ण शब्दो में कहती है।[४]

हियमाल के लिए नाग-अर्जुन के पाताल चले जाने का दुःख असह्य बन जाता है जिस पर उसकी विरह-वेदना तीव्र हो उठती है।[५] हियमाल को पाताल चले जाने पर जब गुलरग का आक्रोश सहन करना पडता है, उस समय वह बेचारी अपना खाना-पीना तक त्याग देती है।[६] वह चन्द्रमा की भांति क्षीण हो जाती है।[७] अपने प्रिय का वियोग सहन करने मे असमर्थ हियमाल अन्त मे सती हो जाती है।

संयोग-शृंगार

कवि के सयोग-शृगार में अश्लीलता नही है। वर्णनात्मकता के अभाव के कारण भावात्मक मिलन का चित्रण अनुपम है। दोनो के विवाह के समय सुशीला दासिया मिलन-गीत गाती है तथा नायक की मनौती करती है।[८] विवाहोपरान्त नाग-अर्जुन अपनी प्रेमिका से कहता है कि 'मैं गुल और तुम बुलबुल हो, मैं

---

१. सु दिलबर प्योस कअतिल अज़ नज़र गौस, यि दूरिअर गोस मुश्किल शोर व शर तोस—वही, पृ० १७।

२. दअप्योमय हीर राझह् अक अकिस गीर—वही, पृ० १८।

३. हियमाले गअमुत कोह छुस त्रैयुम दोह, दिल हाले जोन्द दोह श्रावणस पोह—वही, पृ० ३१।

४. द्रष्टव्य—पृ० ३४।

५. मत्यो चोलहम चह् त्रअविथ मे तम्बलअवित, मन्यो डोलथम दुखअवित स्वोख मे हअवित —हियमाल, पृ० ४५।

६. मे तस रअोस्त आब चओन केह् स्यओन छु मन महजूर—वही, पृ० ७१।

७. सो यअज्यमअच् जून लअज्यमअच् दअरअह आस—वही, पृ० ७०।

८. कनीज़ा बातमीज़ा बस बनवान, अज़ीज़ा क्याह् लज़ीज़ा तस मनवान —वही, पृ० ३३।

बुल-बुल और तुम गुल हो।[1]

नख-शिख-वर्णन

नायिका के नख-शिख-वर्णन में सजीवता है। कवि ह्यिमाल के सौदर्य का वर्णन करके कहता है कि वह सुन्दरता के अग्निकरण, चमकती बिजली तथा स्वच्छ दुग्धधारा के समान भासमान हो रही है।[2] इस प्रकार उसके सौदर्य का वर्णन नख से शिख तक किया गया है।[3] उसकी ठोड़ी की उपमा उसने कश्मीरी सेब अथवा बिह्री फल से दी है।[4] उसके माथे की बिन्दी को उसने अत्यन्त आकर्षक बताया है।[5] चलते हुए वह पुष्प-फर्श पर मोती भी बिखेर देती है।[6]

९—गुलरेज़

कथा सारांश—नख्शबी नगर मे तैफ़ूर नाम का एक अत्यन्त दयालु, विद्वान तथा प्रजावत्सल राजा राज्य किया था। ऋद्धि-सिद्धि सम्पन्न होने पर भी वह संतान के अभाव के कारण सदा दु:खी रहा करता था। परमात्मा ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की और उसके घर एक सुन्दर बालक ने जन्म लिया। उसका नाम मासूम शाह रखा गया। बाल्यकाल से ही वह सभी विद्याओ एव कलाओ मे पारगत हुआ। चौदह वर्ष का होने पर वह अत्यन्त सुन्दर युवक बना। चग सितार, सतूर तथा नबाब आदि का कला प्रेमी होने के नाते वह सभाए रचाता और उन में विशेष रुचि लेता था। एक दिन ऐसी ही सभा मे बैठे-बैठे उसकी दृष्टि एक दर्शनीय पक्षी पर पडी। उसे पकड़ने के लिये वह अत्यन्त आकुल हो

---

१. च़ ह मे बुलबुल बो गुल, च़ह गुल बो बुलबुल—वही, पृ० ३४।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० १०।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ९-१३।
४. ज़िनखदा सेबे जन्नत या बिही तस—वही, पृ० १२।
५. बोजुल ट्योक क्या जबर त ज़ीन दिलबर—वही, पृ० १०।
६. पकअन मोख्तह छअकन प्यठ पोश फर्शन—वही, पृ० १३।
७. (क) गुलरेज़, मक़बूल शाह क्रालवारी, संपादक मुहम्मद यूसुफ टेंग, प्रकाशक, जम्मू एण्ड कश्मीर अकादमी आफ आर्टस, कल्चर एण्ड लेंग्वेजिज़ (सन् १९६५ ई०), प्रति प्रयुक्त। तथा
(ख) गुलरेज, मक़बूल शाह क्रालवारी, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद महाराज रणबीरगंज बाजार, श्रीनगर, कश्मीर, प्रकाशन-स्थान—अली प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली, प्रति प्रयुक्त।

उठा। उस पक्षी के पकड़े जाने के अनन्तर वह सदा उसी के पिंजरे की ओर देखता रहता था। कुछ समय अनन्तर पक्षी ने अपना खाना-पीना छोड दिया जिससे राजकुमार अत्यन्त चिन्तित हुआ। उसकी चिता देख कर एक दिन उस पक्षी ने मानवोचित वाणी मे राजकुमार को चिन्तामुक्त होने की प्रार्थना की। उस पक्षी से भी मासूम शाह ने अनशन का कारण बतलाने तथा स्व-वृत्तान्त सुनाने की विनय की। दयार्द्र होकर उस पक्षी ने राजकुमार से कहा कि वास्तव मे पिता मशहूरशाह तथा माता गुलबदन की पुत्री नौशलब है। अपने पक्षी बन जाने का कारण वह राजकुमार को इस प्रकार बतलाती है :

तुर्किस्तान के शाह बहगर के सुन्दर पुत्र का नाम अजबमलिक है। एक दिन उस (अजबमलिक) के सामने किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति ने मेरे (नौशलब) रूप-सौदर्य का वर्णन किया। गुण-श्रवण से ही वह मुझ पर आसक्त हुआ। वह वियोगावस्था के कारण बीमार हुआ। राजा ने उसकी चिकित्सा के लिये वैद्य बुलवाये किन्तु सब व्यर्थ। भला प्रेम-पीडा मे सतप्त प्रेमी को इष्ट के दर्शन बिना सुख कैसे सुख मिल सकता है। अजबमलिक अपने मित्र रासख को साथ लेकर मेरी प्राप्ति के लिये बैत अलमा टापू की ओर निकल पड़ा जहां मैं माता-पिता के साथ रहा करती थी। कई प्रकार की कठिनाइयों को सहन करते हुए वे दोनो आगे बढे। एक दिन जब वे समुद्र-यात्रा कर रहे थे, उसकी नौका तूफान के कारण खडित हो गई। अजबमलिक अपने मित्र रासख से अलग होकर नौका के एक तख्ते का सहारा लेकर सागर-तट पर पहुच गया। भूखा एव श्रांत अजबमलिक एक ऐसे विजन स्थान पर पहुंचा जहां उसकी दृष्टि एक प्रासाद पर पडी। इस के भीतर जाकर उसकी दृष्टि एक लावण्यमयी युवती पर पड गई जिसे वहा एक भूत ने बदिनी बनाया था। उस सुन्दरी का नाम नाज़मस्त था। नाज़मस्त ने अजबमलिक की सपूर्ण करुण गाथा सुनकर कहा कि वह नौशलब मेरी सखी है। यह सुनकर अजबमलिक प्रफुल्लित हुआ और उसने एक ही तीर से भूत को मारकर नाज़मस्त को उसके चगुल से मुक्त किया। दोनों बहरीन आए जहां नाज़मस्त का पिता सिपाह-सालार राज्य करता था। अपनी पुत्री को देखते ही सिपाह-सालार अत्यन्त प्रसन्न हुआ। अजबमलिक का मित्र रासख भी वहीं पहुच गया था। दोनों मित्र एक-दूसरे को यहां देखकर अत्यन्त हर्षित हुए। तत्पश्चात् वह नाज़मस्त उस अजबमलिक को मेरे पास लाने मे सहायक सिद्ध हुई। जब मैं अपने प्रेमी अजबमलिक के साथ उद्यान में गई, वहां प्रेम-वार्त्ता के पश्चात् हम दोनों सो गए। ढूंढते-ढूढते मेरी माता वहां आ पहुंची। यह दृश्य देखकर वह अत्यंन्त क्रोधित हुई और उसने अजबमलिक को वहा. से उठवाकर तुर्किस्तान के किसी अज्ञात स्थान पर फेंकवा दिया तथा निद्रावस्था में मुझे भी

घर पहुंचाया गया। वहा मुझे अपने प्रेमी की वियोगाग्नि सताने लगी। मेरे उद्वेग एवं प्रलाप से क्रुद्ध माता ने मत्र फूककर मुझे पक्षी बना दिया और आज तक मुझे इस रूप मे दस वर्ष हो गए हैं। मैंने अपने प्रेमी अजबमलिक को ढूंढने का भरसक प्रयत्न किया किन्तु वह मुझे कही भी न मिला।

पक्षी बनी हुई नौशलब की यह करुणाजनक कथा सुनकर मासूमशाह अत्यन्त विस्मित हुआ। वह पिंजरे मे बन्द उस पक्षी को साथ लेकर मशहूर शाह के पास पहुंचा। पुत्री के वियोग से सतप्त गुलबदन ने अब अपनी भूल पर पश्चात्ताप किया। मासूमशाह के उपकार से वह कृतकृत्य हुई। उसने मत्र पढकर नौशलब को पुनः पूर्व जैसा सौदर्य प्रदान किया। वह मासूमशाह को अपना दामाद बनाने की इच्छुक थी, किन्तु सभी बातो का परिज्ञान होने के कारण उसने यह प्रस्ताव अस्वीकार किया। अजबमलिक का पता लगाया गया और उसका विवाह नौशलब के साथ हुआ। मासूमशाह का विवाह नाजमस्त के साथ तथा उसके मित्र रासख का विवाह नाज़मस्त की छोटी बहिन मस्तनाज के साथ हुआ। अन्त मे सब ने अपने-अपने नगर की ओर प्रस्थान किया।

कथा का आधार तथा संगठन

मकबूल शाह की 'गुलरेज़' ज़िया-उद्-दीन नख्शबी की रचना का सफल अनुवाद है। 'नख्शबी की गुलरेज' मे गद्य-पद्य दोनों का प्रयोग हुआ है। उसमें ग्रन्थारम्भ की भूमिका पद्य मे तथा कथा का आरम्भ गद्य मे किया गया है।[१] मकबूलशाह ने अनुवाद करते हुए आधिकारिक कथा का कोई अग छोडा नही है किन्तु प्रासगिक कथाओं मे से उसने कुछ एक को ही अपनाया है।[२] कही-कही मकबूलशाह ने केवल सफलता-पूर्वक अनुवाद ही नही किया है अपितु अपनी नवीन उद्भावना तथा प्रतिभा के बल पर घटनाओ को मनोरजक एव सरस बनाने का भी प्रयत्न किया है।[३]

फारसी-साहित्य मे इस कथा का कोई साहित्यिक महत्व नही। ऐतिहासिक न होकर यह केवल एक काल्पनिक कथा है जिसे ज़िया-उद्-दीन ने लिपिबद्ध किया।[४] मकबूल शाह ने धार्मिक स्थलों की रचना करके इसे फारसी गुलरेज़ से

---

१. गुलरेज़, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० २४।

२. वही, पृ० २८।

३. वही, पृ० ३०।

४. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, तीसरा भाग, पृ० ६१।

अत्यधिक महत्वपूर्ण बनाया। प्रतिभा के बल पर ही उसने इसमे दो सौ सत्ताईस गजलो का भी समावेश किया है।[1]

कवि ने 'गुलरेज' प्रबन्ध-काव्य का आरम्भ हम्द वनात,[2] हजरत मखदूम हम्जा की प्रशसा[3] तथा कथा का आधार[4] बताने के अनन्तर किया है। प्रत्येक प्रसग को परम्परानुसार तत्सम्बन्धी कश्मीरी शीर्षक के अन्तर्गत बांधा गया है। इस काव्य मे आधिकारिक कथा के साथ-साथ प्रासगिक कथा का भी समावेश है। नायक-नायिका तथा उपनायक-उपनायिका की घटनाओ के आधार पर ही इस काव्य का कलेवर बुना गया है। अजबमलिक तथा नौशलब के आधिकारिक कथा-सूत्र के अतिरिक्त मामूमशाह तथा नाजमस्त की सहकारी कथावस्तु को भी जोड दिया गया है। वास्तव मे दोनो कथाए समानन्तर रूप से उत्तरोत्तर बढ़ती चली गई है। नायक तथा उपनायक दोनो की सच्ची सहानुभूति तथा नि.स्वार्थ प्रेम-भावना आदर्श-स्वरूप प्रतीत होती है।

गुलबदन का अपनी पुत्री नौशलब को पक्षी बनाना[5] तथा उसे पुनः पूर्व रूप प्रदान करना[6] कुछ एक ऐसी घटनाये है, जिन से काव्य की कथा को गति मिल गई है। इस मे नायक (अजब-मलिक) का प्रेम नौशलब के गुण-श्रवण से ही उद्भूत होता है,[7] और फिर दोनो प्रथम-दर्शन मे ही एक-दूसरे पर आसक्त होते है।[8] मिलन से पूर्व नायक अजबमलिक की कठिनाइयों तथा प्रयास से सूफी-साधक की साधना का परिचय मिलता है।[9] मिलन के अनन्तर वियोग, दर्शनाभिलाषा, प्रेम की तीव्रता तथा शाश्वत तादात्म्य की भावना नायक के हृदय मे सर्वदा जगी रहती है और कथा मे यति के स्थान पर गतिमयता की प्राजंलता स्पष्ट रूप से

१. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—शीराजा, द्विमासिक पत्रिका, जुलाई, सन् १९६२ ई०, पृ० ६९।
२. द्रष्टव्य, गुलरेज़, संपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ५३।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५३-५४।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५४।
५. द्रष्टव्य—वही पृ० १८२।
६. बुते मेहर व सुपन बर शक्ले असली, तिछअय गयि यिछ परीज़ाद अस असली, ब शफकत तग रअट्य तअम्य माजि दरबर, दितुन बूसह स्यठह वर रोये दुख्तर।—वही, पृ० १९८।
७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७७-७८।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० १५०।
९. द्रष्टव्य—वही, पृ० १०७-१४३।

परिलक्षित होती है। नाजमस्त तथा मासूमशाह का प्रेम भी शाश्वत है।[१] बदिनी नाज़मस्त के सौन्दर्य का वर्णन कवि ने समुचित ढग से किया है[२] और उसके प्रति अजब्रमलिक के हृदय मे सहृदयता के भावो का प्रस्फुटन होता है, कुत्सित वासना का नही।[३] नाज़मस्त भी अजबमलिक की करुण-गाथा से विचलित होकर उसे सहायता देने के लिए तैयार हो जाती है।[४] इस भाति नायक नायिका तथा उपनायक-उपनायिका की घटनाओ से सवलित काव्य पाठक की जिज्ञासा एव कौतूहल-भावना को जगाता है। इस काव्य की कथा सुखान्त है जिसके अन्त मे नायक-नायिका, उपनायक-उपनायिका तथा रासख-मस्तनाज का परस्पर विवाह होता है।[५]

सहृदय कवि मकबूल का यह वृहत्-आकार-काव्य वर्णनात्मक है और इसमे विरह तथा प्रेम के वर्णन मे रहस्यात्मक अनुभूति के दर्शन होते है। काव्य की समाप्ति पर इश्क-मजाजी को इश्क-हकीकी का रूप मानते हुए कवि ने पापों के प्रायश्चित के लिये क्षमा-याचना की है।[६]

प्रेम-पद्धति

'गुलरेज़' की प्रेम-पद्धति स्वाभाविक एव परम्परागत है। गुण-श्रवण के अनन्तर ही नायक-नायिका का मिलन उद्यान मे होता है।[७] किन्तु माता द्वारा नौशलब को पक्षी बनाये जाने के अनन्तर पुनः प्रेमी वियुक्त होकर वियोगाग्नि मे जलता रहता है।[८] इस काव्य मे फारसी मसनवियो की भाति ही वस्त्र फाडने की

---

१. द्रष्टव्य—गुलरेज़. पृ० २३२-२३३।

२ द्रष्टव्य—वही, पृ० ११७, ११८।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ११९।

४. दितुस नमि वअदह् कअनेनस अहद-ओ पैमान, मुलाकातस बहर माह् आसि इवान।—वही, पृ० १२७।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ० २३३-२३४।

६. मजअजी अक्स दरअसल हकीकत, बूद दर माने अहले तरीकत,

× ×

इलाही हाव मक़बूलस राहे रास्त, फिरुस दिल अज कुजई लागु सुइ रास्त।
—गुलरेज़, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० २३८।

७. दोशवय अज़ खिरह् बेगानह् सपनी, शराबे शोक च्यथ मस्तानह् सपनी, तिथय गयि शाद ग़म मओठ प्रोन बिल्कुल, खुशी यिछ़ बुलबुलस डोशिथ गछान गुल।—वही पृ० १६८।

८. परी देवानह् कोरथस मे जबीनह्, इयमना बहर अल्लाह मे जबीनह्
—वही, पृ० १७६।

स्थिति उपस्थित हुई है। प्रेम-रोग की अवस्था मे अजबमलिक वस्त्र फाड डालता है।[1] उसकी एकनिष्ठता तथा सदाचार सराहनीय है क्योकि नौशलब के सौदर्य को देखकर उसका मन अस्थिर नही हो उठता। इसी भाति मासूमशाह भी अजबमलिक के समान ही सदाचारपूर्ण है। वह नौशलब की माता के वचनो से प्रलोभित होकर उसका दामाद बन जाने के प्रस्ताव को ठुकरा देता है।[2] अपनी चारित्रिक दृढता के कारण ही वह नाजमस्त की प्राप्ति के प्रयत्न मे लीन रहता है और किसी भी प्रकार से विचलित नही होता। काव्य मे प्रतिनायक के अभाव के कारण इस मे सतीत्व अथवा मृत्यु आदि की चर्चा का समावेश नही है।

रस—गुलरेज मे रसराज शृगार के दो पक्षो 'विप्रलम्भ तथा सयोग' का विशद चित्रण हुआ है।

विप्रलम्भ शृंगार

सूफियो की साधना मे विरह का अतीव महत्त्व है। इस काव्य मे अजबमलिक तथा नौशलब का वियोग दर्शनीय है। अजबमलिक का यह वियोग गुण-श्रवण से प्रेमिका के मिलन तक तथा नौशलब का पक्षी बन जाने से प्रेमी के साथ विवाह होने तक चित्रित किया गया है। प्रौढ व्यक्ति से नौशलब के अनुपम सौदर्य का[3] वर्णन सुनते ही नायक अजबमलिक इस प्रकार विलपने लगता है जैसे गर्म कड़ाई मे गिर गया हो।[4] प्रेम विह्वल अजबमलिक को वज़ीर स्त्रियो की स्वार्थपरता, कुटिलता, कृतघ्नता तथा विश्वासघात आदि के उदाहरण देते हुए प्रेम-पथ में व्यवधान डालना चाहता है, किन्तु एकनिष्ठ प्रेमी उठाये गए कदम को पुन: पीछे नही हटाना चाहता।[5] वह अपने पिता के

---

१. हकीम यलि शाहजादस ओह कुन, च़टित जामअह रटिथ मातम सु ड्यू ठुन।
—वही, पृ० ८७।

२. ज़ि चश्म गैर अज़ तामथ छि मस्तूर, दओपुस तअम्य तोरअह यिछ कथ छुम नह मजूर, यि छुम ख्वाहर बअह छुस अम्य सुन्द बरादर, करस कथ नज़रे बंद ज़ानन चू मादर—वही, पृ० २०२।

३. छे यथ वक्तस अन्दर दर मुल्के दुनिया, निगारे गुल रुख माशूके ज़ेबा, ब आलम छुनह वुनक्यन कांह तिसअनी, बनेमअच तस छि हुस्नअच मेहरबानी।—वही, पृ० ७१।

४. वदान तीच़ तावि मंज़ जन छरठ दिवान ओस।—वही, पृ० ७९।

५. दग़ाबअज़ी ज़नानन हुन्द छु करतूत, ज़ि मकरे ज़न गच्छान दाना ति फरतूत, इवान छनह ज़ांह ति अज़ ज़न आशनअई, बग़ैर अज़ बेवाफअई व दगअई।—गुलरेज़, संपादक, मुहम्मद यूसुफ टेंग, ९५।

सामने भी वियोग की इस बात को स्वीकार करता है ।[१] नौशलब के दर्शन के लिये उसका हृदय तडप उठता है और वह अत्यन्त विकल होता है ।[२] सागर मे नौका के डूब जाने के अनन्तर वह निराश होकर कहता है :

कावअह् यितमो नितमो तस ना ख्वदायस आवो,
इश्कअह् वावह् आवलन्सअय मज मे बओड मो नावो ।[३]

(हे कौए ! तू आकर मेरा शिकवा उस अनीश्वर तक पहुचा दे । प्रेम की आधी ने मेरी नौका को भवर मे फसा दिया है ।

नाजमस्त से मिलने पर वह अपनी समस्त कठिनाइयो का वर्णन उसके सामने करता है । प्रेमिका नौशलब की प्राप्ति के लिए उसने जो मैदान तथा वन छान मारे थे, उनका उल्लेख भी किए बिना वह नही रह सकता ।[४] नौशलब से मिलन के अवसर पर जब अजबमलिक निंद्रावस्था मे विलग किया जाता है और वह भी माता द्वारा पक्षी बना दी जाती है, तभी नायक-नायिका का वियोग द्विगुणीभूत होता है ।

संयोग शृंगार

मकबूल शाह की 'गुलरेज़' मे अश्लीलता के नाममात्र भी दर्शन नही होते । इस मे सयोग-शृ गार का वर्णन दो बार हुआ है । प्रथम बार नौशलब एव अजबमलिक उद्यान मे मिलते है और वही सो जाते है । प्रेमी-प्रेमिका के इस मिलन मे कही भी अश्लीलता नही आई है और कवि ने उनके इस सुख को साधारण, सरल तथा स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत किया है ।[५] द्वितीय बार उनका मिलन विवाह के समय होता है ।[६] उनके प्रथम-मिलन के समय प्रकृति भी प्रसन्न-मुद्रा मे उनका साथ देती है और आह्लादित होकर कवि कहता है कि यदि

---

१. कोरुस लाचार इश्कअन छुम न तकसीर,
मे लेखित दर अजल यी ओस तकदीर ।—गुलरेज़, पृ० १०३ ।
२. जिगर छुम तशनयि दिल बेताब, करारे जान व दिल नायाब—वही, पृ० ११० ।
३. —वही, पृ० ११३ ।
४. छण्डुम मअदान त जगल दरी सोय, मुले ठ्यूठुम न अजतां आदमी रोय —वही, पृ० ११६ ।
५. मयकी तअसीरनअय दियुत मस्तिये जोश, चअटअन्य ह्योथी डूरि डूरै वस्लकी पोश ।—वही, पृ० १६८ ।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० २२३-२३० ।

पृथ्वी पर कही स्वर्ग है तो वह यही है, यही है, यही है।[१] द्वितीय बार के मिलन के विषय मे कवि ने कहा है कि जो मजाजी के पुल को पार करके आगे बढता है वही हकीकत तक पहुच पाता है।[२] अन्य सूफी-काव्यो की भाति इसमे भी नायक अजबमलिक नायिका नौशलब का दर्शन करके मूर्छित हो जाता है।[३]

रूप-सौन्दर्य वर्णन

सूफी काव्यो मे प्रेम को उद्भासित करने के लिए रूप तथा सौंदर्य का वर्णन किया जाता है। इस काव्य में रूप का वर्णन परम्परागत ढग से हुआ है। नायिका के रूप-सौन्दर्य के वर्णन मे रहस्य-भावना का उद्रेक है। अजबमलिक व नौशलब का विवाह इश्क मजाजी न होकर इश्क-हकीकी था।[४] नौशलब का यथागुण तथा रूप भी है। इस काव्य मे नौशलब को ही गुलरेज की सज्ञा दी गई है जिससे तात्पर्य है—प्रत्येक स्थान पर पुष्प-वर्षा करने वाली। वास्तव मे वही अपने सौदर्य रूपी पुष्पो के लावण्य से सबको मुग्ध करती है। पक्षी रूप मे भी उसका सौदर्य कम आकर्षण नही।[५] मासूमशाह उसे देखते ही बेचैन हो उठता है क्योकि उसका दर्शन मनमोहक है।[६] प्रौढ-पुरुष के द्वारा ही अजबमलिक ने नौशलब के केश, मुख, मस्तका, भौहे, नेत्र, चितवन, ठोडी, गर्दन, वक्षास्थल, भुजाए तथा हाथ आदि के सौदर्य का वर्णन श्रवण किया था।[७] इन

---

१. अगर फिरदौस बर रूए जमी अस्त, हमी अस्त व हमी अस्त व हमी अस्त।
—गुलरेज, पृ० १४८।

२. मजाजस नाव पुल थोवमुत बुजर्गव, तरी अमि कअदलग्रह युस सुबहखर गव,
× × ×
मजाजी अक्स दर असल हकीकत, बूद दर माने अहले तरीकत।—वही, पृ० २३८।

३. वुछुन तअम्य याम म्योनुय रोय गुलफाम, ब जुल्फै मन मु जन लओग मुर्ग दरदाम, पथर प्यव सख्त गव बे होश यअचकाल, ब बालीन ब्रीठसस बाजाह व अजलाल—वही पृ० १५६।

४. वलेकिन फ़र्क बोज ऐ मर्द हुशियार, मजाजी जान गुल हकीकत जान गुलजार
—गुलरेज, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० २३७।

५. गुलन मंज यिछ़ गुलाबस ताजह रोअय, तिछअय तस जानवारन मज निकोई।
वही, पृ० ६०।

६ ज़ि इश्के मुर्ग गव शहजादह बेहोश, ब मजलिस वोथ ज़िहर जअनिब स्यठाह जोश।—वही, पृ० ६०।

७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७०-७७।

की अगों-प्रत्यगो का वर्णन सुनकर वह उस सुन्दरी पर आसक्त हुआ ।

नाजमस्त के रूप तथा सौदर्य का वर्णन भी इस मे विशेष-रूप से हुआ है ।[१] प्रथम-दर्शन मे ही उसके सौदर्य को देखकर अजबमलिक इस भ्रम मे पड़ गया था कि न जाने वह परी है अथवा स्वर्ग की कोई अप्सरा ।[२]

१०—तोतह् (तोता)[३]

कथा-सारांश—एक ईश्वर-भक्त फकीर के पास एक तोता था जिसे राजा ने खरीद लिया। राजा उसके चुगने के लिए मोती ढूढने जगल मे गया। पीछे से तोता अंतःपुर में रखा गया। एक दूत ने आकर राजा को जगल मे बता दिया कि तोता मार डाला गया। राजा ने वापस आकर क्रोधित हो अपनी रानी को खजर से मार डाला। वास्तव मे दूत की बात असत्य थी और मूल रूप मे तोता जीवित था। रानी के मारे जाने का सारा दोष तोते के सिर मढ दिया गया। सभासद उसके विरोधी हो गए और उन्होने मिलकर राजा से प्रार्थना की कि वह तोते को मृत्यु-दण्ड दे। बेचारा तोता असमजस मे पड गया। उसने राजा से अनुनय-विनय करते हुए कहा कि उसे केवल एक दिन के लिए स्वच्छद छोड दिया जाय ताकि वह वन मे जाकर सेर करके आत्मतुष्टि प्राप्त कर सके। राजा ने उसकी इस विनय को स्वीकार कर लिया।

तोता उडते-उडते संगीन शहर पहुंचा। वहा की राजकुमारी का नाम जेबा था। उसके सौदर्य को देखकर वह अत्यन्त आह्लादित हुआ। उसने मन मे इसके राजा से मिलन कराने की कामना की। प्रत्यक्ष रूप मे उसने राजकुमारी जेबा से कहा कि वह उस का विवाह अपने राजा से कराने आया है। इतना कहने के अनन्तर वह पुनः राजा के पास उड आया।

जेबा के रूप-सौंदर्य का वर्णन सुनकर राजा मूर्छित हुआ। गुण-श्रवण से ही उसे प्रेमाग्नि सताने लगी। उसने कठिनाइयो को पार करके तोते के पथ-प्रदर्शन द्वारा सगीन शहर मे प्रवेश किया। वहा राजकुमारी जेबा के साथ राजा

---

१. द्रष्टव्य—गुलरेज़, पृ० ११७-११८।

२. वुरुन तस थोद तुलुन अज रोअय पुरनूर, गिरव गव छा परी या जत-अच हूर। वही, पृ० ११७।

३. तोतह् (तोता), वहाब खार, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगंज बाजार, श्रीनगर, कश्मीर। इसकी प्रति रिसर्च डिपार्टमेंट लाल मडी, श्रीनगर, कश्मीर मे उपलब्ध है। पुस्तक क्रम संख्या नं० २६९, प्रति प्रयुक्त।

का विवाह हुआ। राजा ने उसके साथ अपने नगर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग मे समुद्र यात्रा करते हुए उसका जहाज़ टूट गया। एक तख्ते का आश्रय लेने वाले बहते हुए राजा को एक पक्षी (यागअर पअछिन)[1] ने ऊपर उठाकर तट पर फेक दिया। राजकुमारी ज़ेबा किसी अन्य स्थान पर पहुच गई। तदनन्तर तोता, राजा तथा वज़ीर आदि के कष्टो का वर्णन किया गया है।

कथा का संगठन

वहाब खार का लघु प्रबन्ध तोतह (तोता) एक मात्र ऐसा प्रबन्धकाव्य है जिस मे न तो अनेक घटनाओ का समावेश हुआ है और न उसमे वर्णन-विस्तार ही उपलब्ध होता है। एक अत्यन्त छोटी एव सक्षिप्त कथा इसमे सश्लिष्ट है किन्तु तोता इसका मुख्य पात्र है। 'पद्मावत' के हीरामन तोते की भाति यह भी एक राजा के हाथ बिकता है।[2] नागमती और हीरामन तोते की भाति ही उस राजा की रानी से इस तोते का भी विवाद होता है और अन्त मे वह भी राजा को एक नई सुन्दर रानी को प्राप्त करने को प्रेरणा देता है जिसका निवासस्थान सगीन-शहर मे है।[3] लघुकाव्य होने के कारण ही इसकी कथा सकेतात्मक अधिक है। नायिका से विवाह करके लौटते समय तोते की मृत्यु होती है और परकाय-प्रवेश द्वारा राजा और तोता अन्त में एक साथ कबर के भीतर चले जाते हैं।[4]

इस लघु प्रबन्ध मे रत्नसेन की भाति ही राजा साधक है। पद्मावती की भाति ही प्रेमिका ज़ेबा ईश्वर और दोनो में तोता गुरु है। कवि ने इस बात का कई बार कथन किया है कि जिस ईश्वर का सौदर्य साक्षात् दिखाई दे रहा है, वह सर्वव्यापक है।[5] साधक का कल्याण इसी मे है कि वह उसमे ध्यानमग्न हो जाये।

---

१. 'यागअर पअछिन' एक बहुत बडा काल्पनिक पक्षी है जो मानव को अपने पजों मे उठाकर मीलो तक ले जाता है। यह पक्षी कभी नायक की सहायता करता है और कभी उसकी कठिनाइयो मे वृद्धि करता है। सब कुछ इस पक्षी की आवश्यकताओं के अनुसार होता है।—मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—शीराज़ा, द्विमासिक पत्रिका, जुलाई, १९६२, पृ० २८।

२. दमाह रूज़ित पअदाह गोस खरीदार, दोयुम नौशेरवा पअदहज़न गव। —तोतह, पृ० ३।

३. वही, द्रष्टव्य—पृ० ५, ६।

४. वही, द्रष्टव्य—पृ० ११-१३।

५. लछ नाव छुय, हर शायि बीनाह, बोज़ वफ़ादअरी उका—तोतह, पृ० ११।

युसअय दीदन सु हर शाये, तस कोनह् वनअह् वोलजार[1]
(दृश्यमान ईश्वर सर्वव्यापक है । उसी के चरणो मे बैठकर क्यो न विनय की जाय ।)

११—लैला-मजनू[2]

कथा-सारांश—अरब मे सैयद आमर नाम का एक धनवान तथा विद्वान पुरुष रहा करता था । पुत्राभाव के कारण दु.खी रहकर वह सदा दान दिया करता था । कुछ समय अनन्तर उसके घर एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम कैस रखा गया । आयु के साथ-साथ वह सौदर्यशाली बनता गया । विद्याध्ययन के लिए उसे चटशाला (कश्मीरी चाटहाल) भेज दिया गया जहा उसकी दृष्टि लैला नामक एक अत्यन्त रूपवती लडकी पर पडी । वह नर्गिस पुष्प पर मोहित होने वाले भ्रमर की भाति उस पर मोहित हुआ ।[3] लैला भी उस पर मुग्ध हुई और इस प्रकार दोनो साक्षात्-दर्शन के द्वारा प्रेम-पाश मे बन्धकर व्याकुल रहने लगे। सहपाठियो को उन दोनो के प्रेम-बन्धन का जब समाचार मिला, उसी समय उन्होने यह अपवाद सारे नगर में फैला दिया । मृगनयनी लैला के लिए आसुओ के बदले खून बहाने वाला कैस प्रेम-विह्वलता के कारण मजनू के नाम से प्रसिद्ध हुआ । यह बात ज्ञात होने पर लैला के माता-पिता लज्जित हुए और उन्होंने लैला का चटशाला जाना बन्द कर दिया । उसके वियोग मे मजनू दिन को रोता रहता और रात्रि-भर जागता रहता था ।[4] लैला भी अपने प्रेमी मजनू के वियोग मे तडपती रहती थी । उन्माद से भरा मजनू अपनी प्रेमिका से मिलने आता किन्तु निराश होकर द्वार को चूम कर वहा से लौटता था । वह नज्द वन मे घूमता रहता और पवन-दूत से प्रार्थना करता कि वह उसकी वियोगावस्था को प्रेमिका तक पहुंचा दे । पुत्र की प्रेम-विह्वलता से चिन्तित आमर लैला के पिता के पास उन दोनो के विवाह का प्रस्ताव लेकर गया तो ठुकराया गया । मजनू की प्रेमाग्नि और अधिक भडक उठी । उसने वस्त्र फाड डाले तथा उसी समय

---

१. सूफी शाअयिर, दूसरा भाग, पृ० १७३ ।

२. लैला मजनूं, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' योरखुशीपुर, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगज बाजार, श्रीनगर, कश्मीर, प्रति प्रयुक्त ।

३. न तह यंबअरजल बोम्बुर ज़ि मुशताक—वही, पृ० ६ ।

४. दोहस रिवान-शबस बेदार आसान—लैला-मजनू, पृ० १० ।

वायु-वेग से वन की राह ली ।[1] वह लैला-लैला पुकारता हुआ इधर-उधर घूमने लगा ।

मजनू की विरह-व्यथा से सब का हृदय विदीर्ण होता था । एक दिन लैला के वियोग मे वह मूर्छित हुआ और उसे घर लाया गया । पिता उसे अपने साथ हज करने के लिए कावा ले गया । वहा पहुंचकर भी उसने लैला का ही वरदान मागा । पिता अपने पुत्र की एकनिष्ठता से अत्यन्त द्रवीभूत हुआ ।

वहा से आकर मजनू अपनी प्रेमिका के विरह मे गली-गली घूमने लगा । उसकी प्रेमिका लैला भी वियोग के कारण कृश होती चली जा रही थी । इस अपवाद से बचने के लिये लैला के कबीले ने मजनू को मारना चाहा । पिता आमर यह सूचना पाते ही पुत्र को घर ले आया । उसने मजनू को कई सासारिक प्रलोभन दिए किन्तु उसने पुनः नज्द वन की राह ली । वहा शिकार पर आए हुए राजा नौफल की दृष्टि उस पर पडी और वह उसकी करुणावस्था देखकर विह्वल हो उठा । सहायता का वचन देकर वह मजनू को महल मे ले आया । नौफल ने अपने वचनानुसार लैला के कबीले पर आक्रमण किया किन्तु पहली बार परास्त होने के पश्चात् दूसरी बार वह विजयी हुआ । नौफल ने विजित लैला के पिता से उसकी पुत्री की माग की । ऐसा करना वह एक शर्त पर मान गया कि यदि वह लैला को ग्रहण करने के पश्चात् अपने किसी दास या सेवक को बख्श नही देगा । इस बात पर नौफल निरुत्तर हो गया अतः मजनू का उद्देश्य पूरा न हो सका । नौफल सेना-सहित वापस चला आया किन्तु निस्सहाय मजनू वही प्रेमिका से मिलन की बाट जोहता रहा ।

लैला भी प्रिय के वियोग मे तडपती रहती । वह कौए को दूत बनाकर प्रेमी के पास भेजकर अपनी विरहावस्था का परिचय देना चाहती थी ।[2] तत्पश्चात् उसका विवाह इब्न सलाम के साथ हुआ । वहां उसने अपनी सच्चरित्रता की सुरक्षा की । मजनू नज्दवन मे जाकर प्रेमिक लैला के लिए तडपता रहा । पिता आमर वहां उसे मिलने आया किन्तु सासारिक बन्धनो मे फस जाने से उसने इन्कार कर दिया ।

लैला के पति इब्न सलाम की मृत्यु हुई । मजनू अपने मित्र जैद के साथ लैला से मिलने आया । दोनो एक-दूसरे को देखते ही मूर्छित हुए ।[3] चेतनावस्था आने

---

१. हका अनुनस तिथुय जामन दितुन चाक़, रौटुन राह जगल वाव जन चओल —वही, पृ० १७ ।

२. कावअह वन्तो यारस आवह, आमह तावह जअजनस तन—लैला-मजनू, पृ० ४१ ।

३. दोशवय बेहोश बे ह्यस तान्य इम रूज़्य—वही पृ० ७४ ।

पर दोनो का प्रेमालाप हुआ और मजनू पुन वहा से प्रसन्न होकर चला गया। मित्र जैद अपने मित्र मजनू की इस प्रकार प्रेम-विह्वलता देखकर अत्यन्त चकित हुआ। लैला की मृत्यु का झूठा समाचार पाते ही मजनू का प्राणान्त हुआ। अन्त मे उसकी प्रेमिका लैला भी परमधाम को सिधार गई। दोनो की कबरे एक-साथ बना दी गई।

कथा का आधार तथा संगठन

'मिसकीन' से पूर्व फारसी कवियो जैसे निजामी, जामी, याकूब सर्फी तथा कश्मीरी कवि महमूद गामी ने 'लैला मजनू' की रचना की थी। कवि ने स्वय इस बात की ओर सकेत किया है कि उसने निजामी की 'लैला-मजनू' के आधार पर ही अपने इस काव्य का प्रणयन किया।[1] निजामी की भाति ही 'मिसकीन' को वर्णनात्मक रचना 'लैला-मजनू' सूफी विचारधारा का प्रौढ ग्रन्थ है। निजामी का कथन है कि 'मजनू जब तक जीवित रहा, वह इश्क का बोझ उठाए पुष्प की भांति उसकी शीतल वायु से प्रसन्न रहा।'[2] इसमे भी निज़ामी के काव्य की भाति ही प्रेम के माध्यम से 'इश्क हकीकी' स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है।

निज़ामी की लैला हाड-मास की सजीव प्रतिमा न होकर ससार को रोशन करने वाली प्रात: है।[3] मजनू की एकनिष्ठता तथा आत्मसमर्पण की भावना आदर्श-स्वरूप है और उसकी मृत्यु को निजामी ने 'बाग तथा बोस्ता' कहा है एवं उसे प्रिय के यहा जाने का मार्ग भी कहा है।[4] कवि 'मिसकीन' ने अपने कथानक का आधार तथा सगठन उसी के आधार पर अपनाया है। ग्रन्थारम्भ मे हम्द,[5] ईश्वर महिमा,[6] हजरत मुहम्मद की प्रशसा एव उसके चार मित्रो का

---

१. मे लोगुय पीर व शेर निजामी, सु छुय सर खेस दास्तान नामी, सु छुम रग्रवी तसुन्द तसनीफ नाल्हक, बर हवस सद हजारान रहमते हक़, मुका-बिल तम्यसुन्दअय तसनीफ अनुमय, तवंय मूजुब यि कअशिर पअठ्य वनुमय। —लैला-मजनू, पृ० ८३।

२. इश्के के न इश्क जावेदानीस्त, बाज़ी चये शहबते जवानीस्त,

× ×

ता ज़िदा ब इश्क बार कश बूद, चू गुल ब नसीमे इश्क खुशबूद।
—लैला-मजनू, निज़ामी, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, पृ० ३०।

३. लैला न के सुबह गेती अफ़रोज—लैला-मजनू, निजामी, पृ० २६

४. वही, पृ० ४।

५. लैला मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० १।

६. वही, पृ० १।

वर्णन,[1] प्रेम-महिमा[2] तथा निजामी की प्रशसा की गई है ।[3] निजामी की भाति ही इस काव्य की कथा का सम्बन्ध भी अरब से है। कथा-सगठन मे पूर्ववर्ती कवि निज़ामी की 'लैला मजनू' से कोई अन्तर प्रतीत नही होता । पवन-दूत की कल्पना,[4] काबा मे मजनू द्वारा लैला का ही वरदान मागना[5] तथा इब्न सलाम से लैला का विवाह[6] आदि प्रसग निजामी की भाति ही इब्न सलाम को सांसारिक प्राणी तथा मजनू को साधक रूप मे चित्रित किया है ।[7] लैला तथा मजनू दोनों मृत्यु का वरण करते है ।[8] निज़ामी की इस दशा को 'मिसकीन' की भाति ही बगदाद के फज़ली ने भी अपनाया ।[9] पूर्ववर्ती कथानको की भाति 'मिसकीन' के 'लैला-मजनू' का कथानक भी वियोगान्त है ।

प्रेम-पद्धति

निजामी की भाति ही इस मे प्रेमी-प्रेमिका का प्रेम साक्षात्-दर्शन से उद्भूत होता है ।[10] नायक-नायिका बाल्यकाल मे ही चटशाला मे मिलते हैं और प्रेम का बीजाकुर उनके हृदय मे फूट पड़ता है । अपवाद फैल जाने के कारण जब वे मिल नही पाते, उस समय दोनो को वियोगाग्नि जलाती रहती है ।[11] वास्तव मे बाल्यकाल मे ही रूप तथा गुण-सम्पन्न प्राणी स्वभावतः एक-दूसरे की ओर आकृष्ट होते है । यही आकर्षण रति-रूप में परिणत होकर दृढ बन जाता है ।

---

१. लैला-मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० १ ।
२. वही, पृ० १ ।
३. वही, पृ० १ ।
४. कि ऐ बादे सबाल्लाह सपुन तेज़, मे छुयना, दोदमुतन दिल आमअह तावह, गछिइत तस लअलि वन्तस म्यानि आवह, गछित दामानअह रटयस म्यानि बापता—वही, पृ० १४ ।
५. द्रष्टव्य—वही, पृ० २१-२४ ।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४६ ।
७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४८ ।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८०-८१ ।
९. ऐ लिट्रेरी हिस्ट्री आफ पर्शिया, दूसरा भाग, ई० जे० ब्राउन, यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, पृ० ४०६ ।
१०. बयकदीदन दओशवअन्य सब्र न आराम, सपुन गुम कोरुख इश्कुन मंद्यन्यन शाम—लैला-मजनू, पृ० ६ ।
११. लैला-मजनूं, वही, पृ० ११-१४ ।

मजनू अपनी प्रेमिका लैला की प्राप्ति के लिए अपने प्राणो तक का उत्सर्ग करने से पीछे नही रहता। लैला को जब घर से बाहर जान की आज्ञा नही मिलती, वह विरह-कष्ट से अत्यन्त पीडित एव क्षीण बन जाती है।[1] दोनो का जीवन अधिकतर वियोग मे ही व्यतीत होता है। दोनो 'लैला एव मजनू' अपने अपने माता-पिता की शिक्षा की उपेक्षा करके प्रेम-ज्योति को बुझने नही देते।

मजनू तथा लैला का प्रेम उस समय भी अत्यन्त तीव्र हो उठता है जब नौफल की सहायता रग नही लाती। इब्न सलाम की मृत्यु के पश्चात् मित्र जैद मजनू को लैला के दर्शन कराने मे सफल होता है।[2] इस काव्य मे प्रेमी-प्रेमिका का मिलन केवल इसी स्थान पर दिखाया गया है। इस समय भी जब वे एक-दूसरे का दर्शन करते है, वे मूर्छित होते है।[3] इस प्रकार सयोग भी वियोग मे ही परिवर्तित होता है।

दोनो का प्रेम चटशाला मे पढने के कारण साहचर्य जन्य कहा जा सकता है जिस मे किसी भी प्रकार का विकार अथवा मासलता प्रतीत नही होती, लैला की मृत्यु का दु खद समाचार ही मजनू के प्राणान्त का कारण बन जाता है और लैला भी अपने प्रेमी मजनू के ही वियोग मे प्राणो का उत्सर्ग करती है।

प्रेम-तत्व

प्रेमोपासक होने के नाते 'मिसकीन' के काव्य 'लैला मजनू' मे प्रत्येक स्थल पर प्रेम व्यजना के दर्शन होते है। यह प्रेम कही लौकिक तथा कही अलौकिक प्रतीत होता है, प्रेम पथिक अपने जीवन का मोह न करके सर्वस्व त्याग देता है। लैला भी शरीर पर भस्म मलकर ससार से भागने की इच्छा प्रकट करती है।[4] सच्चा साधक ससार के प्रलोभनों मे नही फसता। वह किसी नारी के क्षणिक-सौंदर्य मे भी अपना हृदय नही खो बैठता है।[5] वह एकनिष्ठ एव दृढ-प्रतिज्ञ

---

१. वनान परदस अन्दर दरदुक फसानह,
सो लज्यमअच जालह गज्यमअच् काल जन-जून। वही, पृ० २७।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७४।

३. पथर बेहोश प्यव बे सब्र व आराम,
दओशवय बेहोश व ह्यस तान्य इम रूद्य—वही, पृ० ७४।

४. दपान छियस आईनह पानस मलअह सूर, खफह जिगरस छुनम ओन्मुत चलह दूर—लैला-मजनू, पृ० ११।

५. नसीहत बोज सअनी पअदअह गर गोश, छि मरज़ी सअन्य यत इकरार तत थाव, चह अज दिल लअल हुन्दुय नाव मशराव, तसन्दी खओतह नार-याह नाज़नीना—वही, पृ० १६।

होकर केवल अपनी लक्ष्य-प्राप्ति के लिए ही अग्रसर होता है। प्रेम के इस भाव को प्राप्त करने के लिए प्रेमी अधीर हो उठता है, तथा उस पर मन्त्र, तन्त्र तथा औषधि आदि का कोई प्रभाव नही पडता।[1]

विप्रलम्भ शृंगार

इस काव्य मे कवि ने अत्यन्त सरल एवं स्वाभाविक शब्दो मे हृदय की पीडा का वर्णन किया है। इस मे भारतीय परम्परा के अनुसार वियोग की पीडा का प्रदर्शन केवल नायिका लैला[2] द्वारा ही नही अपितु नायक मजनू द्वारा भी प्रदर्शित किया जाता है।[3] प्रथम दर्शन के अनन्तर ही दोनो अपना धैर्य तथा विश्राम खो बैठने है।[4] सपूर्ण काव्य का कलेवर विप्रलम्भ शृगार के ताने बाने से किया गया है और उस मे केवल एकाध बार ही सयोग का चित्रण मिलता है।[5] कवि ने काव्यशास्त्रीय आधार पर वियोगावस्था की दसो दशाओ जैसे अभिलाषा, चिन्ता, गुण कथा, स्मृति, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, जडता तथा मरण का वर्णन किया है जैसे :

अभिलाषा—तमन्ना छुम रटित नालमति बो, नरि दअरित लरि बो पान सावह[6] (अभिलाषा है कि मै उसे आलिंगन करके अपनी बाहु नीचे रखकर अपने पास सुलाऊ।)

चिन्ता—न्यन्द्र रातस जओलहछमनअह यिवानये, वस त वासह छम पामह-दिवान मे[7] (चिन्ता के कारण आख लगती ही नही, अग-प्रत्यग मुझे व्यग्य देकर कोस रहा है।)

गुणकथन—चे रोस्तुय गुलबदन दिल छुम मे पुर नार।[8]

---

१. तसअन्दी दादि वारयाहु गव आवारअह, इलाज चारअह इश्कस केह ति लओग नह, दवा अमि दादिकुय कअसि तोगनह, दरी उम्मीद सअरअस जिंदगअनी—वही, पृ० ५१।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ११, २७, २८, ४१, ६१।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३१, ३४, ८०।

४. बयक दीदन दओशव अन्य सब्र व आराम, सपुन गुम करिख इश्कुन मन्च्य-न्यन शाम—वही, पृ० ९।

५. द्रष्टव्य—लैला-मजनूं, पृ० ७५।

६. वही, पृ० १५।

७. वही, पृ० ११।

८. वही, पृ० ६१।

(दर्शनीय प्रेमिके ! तुम्हारे बिना मेरा यह हृदय अग्नि से भरा पडा है ।)

स्मृति—बो मजनू छुस दजान दर नार हमरत सो लग्रला छम कते बा ऐश अशरत[१] (मै मजनू यहा प्रेमाग्नि मे जल रह हूं। लैला के स्मरण से मेरा बुरा हाल हो रहा है। न जाने वह कहा अपने सुख में लीन होगी ।

उद्वेग—हक अनुतस तिथुय जामन दितुन चाक, वोदुन कोताह जि गम रोयस मलुन खाक ।[२] (उद्वेग के कारण उसने वस्त्र फाड डाले। वह बहुत रोया तथा उसने अपने शरीर पर भस्म मल दिया ।

प्रलाप—रिवान नाल्ह वदान अज दर्द अन्ददअह ।[३]
(वह अश्रुधारा बहाता था तथा प्रेमाग्नि के कारण प्रलाप करता था ।)

उन्माद—करन तस लअलि हुज़ अय शक्ल नाबूद, निशस्त थोवुन पनुन तस्वीर मौजूद ।[४] (उसने अपनी तथा लैला की दो आकृतिया बना डाली । उन्माद के कारण उसने लैला की आकृति को मिटा दिया और अपनी आकृति रहने दी । कारण, दो का एक मे तादात्म्य देखने के लिये।)

व्याधि—पकान ओसुय सु हि तोत जन ओस बेमार ।[५]
(वह यो चलता था जैसे कोई व्याधि-ग्रस्त हो ।)

जड़ता—वुछित तस कुन करान शर ओस पानस
　　　　तसल्ली क्या दिवान गमनाक जानस ।[६]

(जड़ता के कारण वह यों ही उसके सूखे शरीर को देखकर अपनी अभिलाषा पूर्ण करके दुःखी मन को तसल्ली देता था ।)

मरण—मरुन बेहतर करअन्य न बेवफाई, जअरुन न यार सुन्द दागे वफाई ।[७]
(अपने प्रेमी के उपकार की कृतज्ञता प्रदर्शित करने के लिए मरना श्रेयस्कर है किन्तु जीवित रहकर कृतघ्न बनकर उचित नही ।)

लैला तथा मजनू इसी वियोग के कारण एक-दूसरे से पृथक् होकर प्राण त्याग देते हैं । प्राणान्त के अनन्तर ही उनका मिलन होता है जो इश्क हकीकी कहा जा सकता है ।[८]

---

१. वही, पृ० २१ ।　　　　　२. वही, पृ० १७।
३. लैला-मजनू, 'मिसकीन', पृ० १४ ।　　　　　४. वही, पृ० ५५ ।
५. वही, पृ० १४ ।　　　　　६. वही, पृ० ७० ।
७. वही, पृ० ८१ ।
८. तिमन दओन छुय नह सओरुन जाह, हकीकत छुय युहोय गव किस्सह कोताह
　—वही, पृ० ८२ ।

रूप-सौंदर्य वर्णन

इस प्रबन्ध काव्य मे कवि ने लैला के अग-प्रत्यग का मयमित रूप-वर्णन किया है। उसने लैला को अप्सरा मान लिया है।[1] कवि ने उसके केश, मस्तक, बिन्दी, नेत्र, भौहे, ठोडी एव उस पर पड़े गड्डे आदि का वर्णन किया है।[2] कवि ने उसे सौदर्य की लता के रूप मे चित्रित किया है।[3]

१२-ज़ेबा निगार[4]

कथा-सारांश—हुसन-आबाद नगर मे ज्योतिष-विशारद एक ब्राह्मण रहा करता था। सतान-सुख से वचित होने के कारण वह मदिर मे जाकर ईश्वर से पुत्रोत्पत्ति के लिए प्रार्थना किया करता था। कुछ समय पश्चात् उसके यहा एक पुत्री ने जन्म लिया। उसकी जन्मकुण्डली देखते ही उसकी सपूर्ण प्रसन्नता निराशा मे परिवर्तित हुई क्योकि ग्रहो के अनुसार उसका विवाह एक विधर्मी मुसलमान के साथ लिखा बदा था। भविष्य की इस अपकीर्ति तथा अपमान से बचने के लिए ब्राह्मण ने बालिका को रात के समय एक सदूक मे बन्द करके नदी मे बहा दिया और प्रातः उसी नगर के बीच रहने वाले एक निस्सतान रजक ने उसे उठा लिया। मुसलमान रजक-दम्पत्ति ने उसे पालन-पोषण किया। तत्पश्चात् आयु के साथ-साथ वह एक अनुपमेय सौदर्यशालिनी युवती बन गयी। उसका नाम जेबा रखा गया।

गेज नगर के मुसलमान राजा के कई पुत्रो मे से चतुर्दश वर्षीय निगार अत्यंत वीर तथा योद्धा था। ज़ेबा के रूप-सौदर्य का गुण-श्रवण करते ही वह प्रेम-पीडा से विह्वल हो उठा। उसकी अभिलाषा प्रेमिका की प्राप्ति के लिए प्रदीप्त हो उठी। मत्र, जंत्र और औषधि आदि के उपचार का उस पर तनिक भी प्रभाव न पडा। कुछ समय अनन्तर गेज नगर में अकाल पड़ा। गेहूं तथा जौ भी मिलना कठिन हो गया। लोग भूखों मरने लगे। क्षुधातुर जनता ने राजा के पास जाकर प्रार्थना की कि वे अपनी प्राण-रक्षा के लिए हुसन-आबाद जाने का

---

१. तिमन मज खास कूराह नाज़नीन आस, फिरिशतह खोपर यरोमह जबीन आस—वही, पृ० ५।

२. द्रष्टव्य—वही पृ० ८-१०।

३. फऔली जन हुस्नची पोश थअर ज़न—वही, पृ० ८।

४. ज़ेबा निगार, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' योरखुशीपुर, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगंज बाज़ार, श्रीनगर, (कश्मीर), प्रति प्रयुक्त।

निश्चय कर चुके है अतः राजकुमार निगार को उनके साथ पथ-प्रदर्शक के रूप में भेज दिया जाय। राजा की आज्ञानुसार राजकुमार निगार उनके साथ चला गया। पहली मञ्जिल तय करने के पश्चात् राजकुमार निगार कारवा के साथ एक मरुस्थल मे पहुचा। निगार वियोगाग्नि से तडप रहा था अतः उसने साधारण वस्त्र पहनने आरम्भ किए क्योकि स्वप्न मे उसे आभास हुआ था कि वैभव तथा प्रेम का कोई पारस्परिक सम्बन्ध नही। हुसन-आबाद पहुचने पर उसने कारवां को नदी-तट पर स्थित एक सराय मे ठहरा दिया और स्वय प्रेमिका के उद्यान की ओर अग्रसर हुआ।

हुसन-आबाद मे सौदर्यशाली राजकुमार के आगमन की सूचना पहले ही पहुंच चुकी थी। यहा आकर राजकुमार निगार अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसने जेबा के पास अपना एक दूत भेजा जिससे उसका हृदय भी प्रेमाग्नि से विह्वल हो उठा। वह घोडे पर बैठकर निगार को ढूढने निकली। एक बाग मे पहुचकर वह उसके मध्य बने एक हौज़ मे स्नान करने के लिए उतर पडी। उसके भू-भग से क्षत प्रेमी निगार कुछ दूरी पर मूछित होकर गिर पडा। जेबा भी उसके अपरिमित सौदर्य को देखकर अचेत हुई और फिर दोनो एक-दूसरे की ओर स्नेह-भरी निगाहो से देखने लगे।

इसके अनन्तर वे एक-दूसरे से विलग हुए। वियोगाग्नि मे तडपने वाला निगार अपनी प्रेमिका के द्वार पर गया तथा उसका चुम्बन किया। निगार ने ज़ेबा को देखने के बहाने एक तीर वृक्ष पर बैठे पक्षी की ओर साधकर प्रेमिका के प्रागंण मे फेका। तीर की तलाश मे भीतर जाकर प्रेमी निगार तथा प्रेमिका ज़ेबा का पुनः साक्षात्कार हुआ। निगार का आत्म-परिचय पाकर जेबा अत्यन्त प्रभावित हुई। वे अनमने भाव से एक-दूसरे से विलग हुए। निगार ने एक बुद्धिमती प्रौढा के हाथ ज़ेबा के पास अपनी प्रेम-विह्वलता का सन्देश भेजा। जेबा भी निगार से मिलने के लिए अधीर हो उठी।

प्रेमी निगार ने अपनी प्रेमिका ज़ेबा के पोषित पिता रजक के पास कई उपहार भेजे जिन्हें प्राप्त करके वह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। ज़ेबा के प्रति निगार के प्रेम का परिचय पाकर रजक उसकी परीक्षा लेने के लिए तैयार हुआ। निगार से कहा गया कि वह मैले कपडो की गठरी सिर पर लादकर नदी पर धो डाला करे और उन्हे इस प्रकार धो दे कि ग्राहको से किसी भी प्रकार की शिकायत न आ जाये। अपनी प्रेमिका ज़ेबा के लिए राज्य तक छोड़ने को तैयार निगार ने यह शर्त सहर्ष स्वीकार की। फरहाद की भाति वह अपनी शर्त की पूर्ति मे सफल हुआ जिस पर ज़ेबा अत्यन्त प्रफुल्लित हुई। दोनो का विवाह हुआ और निगार घर जमाई बनाकर वही रहने लगा। अपनी मञ्ज़िल पर पहुंचकर निगार अत्यन्त

प्रसन्न हुआ।

प्रेमी निगार के लिए जेबा काबा के समान जीवन का ध्येय थी। उसकी प्राप्ति के अनन्तर उसने कारवा को वापस गैंज लौट जाने की अनुमति दी। स्वय वही ठहर जाने का निश्चय बताकर उसने उनके ही हाथ मे अपने पिता को एक पत्र भेजा। उसका पिता इस पत्र को पाकर अत्यन्त दुखित हुआ। अपने पुत्र को वापस लाने के लिए उसने कई उपाय सोचे। अन्त मे राजा ने यह सारा कार्य-भार उसके एक मित्र ऐयार पर डाल दिया। वह ऐयार अन्य ऐयारो के साथ हुसन-आबाद पहुचा। रात्रि को घर मे प्रवेश करके उन्होने प्रेमी-प्रेमिका को प्रेमालाप करते देखा। जब जेबा व निगार सो गए, उसी समय वह ऐयार मित्र कुछ सुघाने के अनन्तर निगार को मूर्छित करके वापस गैंज लाने मे सफल हुआ। जागने पर प्रिय-विरहिता ज़ेबा सूर्य जैसे अपने प्रकाशवान प्रेमी के लिए सतप्त हो उठी। निगार को खोजने मे असमर्थ ज़ेबा ने अन्त मे अपने प्राण एक घाटी मे त्याग दिये। उधर से ऐयारो द्वारा विलग किया गया निगार भी घर से भाग कर प्रेमिका की तलाश में निकला। वह ज़ेबा की कबर के पास पहुचकर विलाप करने लगा।[1] उसी समय जेबा की कबर मे जीवित उतरकर उसने भी अपने प्राण त्याग दिये। इस प्रकार इश्क हकीकी द्वारा उसने सदा के लिये पुनर्जन्म से मुक्ति पाई।[2] दोनो एक ही कबर मे समाधिस्थ हुए।

प्रेम का आधार तथा संगठन

'मिसकीन' के इस काव्य से पूर्व कश्मीर सूफी कवि रसूलमीर शाह आबादी ने 'ज़ेबा-निगार' नामक एक प्रबन्ध-काव्य लिखा था जिसके विषय मे स्वय 'मिस-कीन' ने अपनी रचना के अन्त मे उल्लेख भी किया है। रसूल मीर का यह प्रबन्धकाव्य अभी तक अनुपलब्ध है।[3] ऐसा प्रतीत होता है कवि 'मिसकीन' तथा उसके पूर्ववर्ती कवि रसूल मीर का कथा-स्रोत कोई समान आधार ही रहा होगा।

---

१. प्याला मौत ने क्योकर पिलाया, कजा ने खाक मे कब का सुलाया।
कदम मेरा नही चलता अगाहा, इसी जज़बे ने मोडान्दा बिछाहा।
—ज़ेबा-निगार, पृ० ८२।

२. छु वओन्य ज़िन्दह मअरुन छुकनअह दुबारअह,
हकीकत गव यहोय कन थाव वारअह।—वही, पृ० ८४।

३. सु मीर शाह आबअदी दर ज़मानअह, सपुन अव्वल बहर सु इश्तहाराह,
हबाब इश्के ओ ज़ेबा निगारा, तसुन्द तसनीफ नओन केंह गव न दर आम।
—ज़ेबा-निगार, पृ० ८६।

'मिसकीन' के प्रबन्धकाव्य 'जेबा निगार' की कथा का आरम्भ हम्द व नात,[१] ईश्वर-वन्दना,[२] हज़रत मुहम्मद तथा उसके चार मीतो की प्रशसा[३] तथा पीर की महानता[४] का उल्लेख करने के अनन्तर हुआ है। कवि ने काव्य के घटनास्थल के लिये हुसन-आबाद तथा गैज नामक दो स्थानो को चुना है। 'हुसन-आबाद कोई सुन्दर सीमा नगर था जो अभी-अभी नया ही बस गया था।[५] जेबा के सौदर्य-वर्णन मे प्रयुक्त पक्ति 'बखूबी इश्क माशूकाने कश्मीर'[६] से स्पष्ट विदित होता है कि वह कश्मीर का ही सीमा प्रान्त रहा होगा। गैज के दूरस्थ स्थान का वर्णन कवि ने चमत्कार तथा कौतूहल की दृष्टि से किया है जहा से आने वाले नायक को मार्ग की कठिनाइयो का काफी सामना करना पडा। गैज नामक स्थान की कल्पना चीन मे की गई है।[७]

कथा की घटनाओ के संगठन मे अन्य सूफी-काव्यो से विशेष अन्तर प्रतीत नही होता। ब्राह्मण का पुत्राभाव उसके घर पुत्रोत्पत्ति,[८] जन्मकुण्डली,[९] प्रेमोत्पत्ति,[१०] मार्ग की कठिनाइया,[११] प्रौढा द्वारा सहायता,[१२] जीवन की असारता,[१३] संसार की क्षणभगुरता[१४] तथा शाश्वत मिलन[१५] की सयोजना इस काव्य मे भलीभाति हुई है। आध्यात्मिक साधक निगार का कोई प्रतिपक्षी लौकिक नायक नहीं

---

१. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।
२. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० २, ३।
४. द्रष्टव्य—जेबा निगार—वही, पृ० ३।
५. छु हुसन आबाद शअराह दर हदे सुन्द, स्यठाह पुर फैज़ दर हर नौवय आबाद—वही, पृ० ४।
६. वही, पृ० ७।
७. सु आमुत वअलनअह ज़ालस आहवी चीन—वही, पृ० ८।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५।
९. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५।
१०. कुछान मस्त अक अकिस कुन आशनअई, सपुन यकसान दुओय बिल्कुल जुदअई। वही, पृ० ३१।
११. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६२।
१२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३५।
१३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८३।
१४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६०।
१५. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८४।

दिखाया गया है, केवल सासारिक प्रलोभनों मे प्रवृत्त करने के लिए उसके पिता का प्रयास ही यदा-कदा चलता रहता है ।[१] प्रथम-मिलन के अवसर पर नायक निगार दूर से ही स्नाता नायिका के दर्शन करके मूर्छित हो जाता है ।[२] विवाह हो जाने पर उनका मिलन होता है किन्तु ऐयारो द्वारा निगार के विलग किए जाने के कारण शीघ्र ही दोनो प्रेमी एव प्रेमिका विरहाग्नि मे तपने लगते हैं । इसलिए यह एक वियोगान्त काव्य बन गया है और इश्क मजाजी ने ही इश्क-हकीकी का रूप धारण किया है ।[३] निगार एक-रूप होकर तादात्म्य द्वारा वसल प्राप्त करके अपना जीवन सफल बना देता है ।[४]

इस मे घटनाओ की सबद्ध शृखला के साथ मार्मिक स्थलो का वर्णन[५] तथा बीच-बीच मे गजलो का समावेश भी हुआ है ।[६] इसमे कथा के प्रसगो का संकेत फारसी शीर्षकों के अन्तर्गत दिया गया है ।

प्रेम पद्धति

इस मे कवि ने प्रेम का आरम्भ, रूप-सौंदर्य के गुण-श्रवण से कराया है ।[७] नायक-नायिका का एक-दूसरे की ओर आकृष्ट होने के अनन्तर साक्षात्-दर्शन होता है[८] और उनका प्रेम परिपक्व रूप धारण करता है । वे विवाह-बन्धन में बन्ध जाते हैं ।[९] दाम्पत्य-प्रेम की केवल सक्षिप्त-सी झांकी इस में सम्भोग के रूप में उपलब्ध है ।[१०] दोनो का प्रेम इश्क-मजाज़ी न होकर इश्क हकीक़ी[११] है क्योंकि प्रेम

---

१. द्रष्टव्य—ज़ेबा निगार, पृ० ७६ ।

२. वसित प्यव बर जमीन बेहोश गश गोस—वही, पृ० ३० ।

३. हकीकत गव यहोय कन थाव वारग्रह—वही, पृ० ८४ ।

४. सपुन तिम पानवअन्य दर इश्क फ़ानी, कोरुक हुअसिल वसाले नावदअनी,
लोबुक गंज बकाई ता कयामत, सलामत रूद अज़ रंज मलामता ।
—वही, पृ० ८४ ।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ० १५, ४८ ।

६. द्रष्टव्य—वही, पृ० १५, १६, १८, २०, २५, ३१, ३८, ३९, ४३, ४५, ४६, ४७, ५०, ५५, ५९, ६७, ६८, ६९, ७०, ७३, ७५, ७६, ८१

७. यि कथ तस शाहज़ादस वअच् दर गोश,
चओलुस सब्र व करार अज़ दिल डोलुस होश ।—वही, पृ० १४ ।

८. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३० ।

९. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५२-५४ ।

१०. ज़ेबा, निगार, पृ० ५७ ।

११. फोलुस यार सुन्दुय तस वसलुकुय बाग़, गओड़न अज़ शौक गुल दीदन सपुन मस्त—वही, पृ० ५७ ।

से अभिप्राय उपकारी मित्र की तलाश है ।[1]

विप्रलम्भ श्रृंगार

अन्य सूफी प्रेमाख्यानो की भांति 'जेबा निगार' मे विरह को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इसके हृदयस्पर्शी दृश्य विरह-वर्णन से पूर्ण है। यह विरह केवल नायक के हृदय में ही उत्पन्न नही होता,[2] अपितु नायिका भी इस के वशीभूत होकर अपने प्रेमी के साथ तादात्म्य स्थापित करने के लिए विकल हो उठती है ।[3] रूप-सौंदर्य का वर्णन सुनते ही निगार की विह्लता बढ जाती है। उसका प्रेम-रोग वैद्यों की औषधियों के उपचार से शात नही होता ।[4] प्रेम-रोग के शमन के लिये ही नायक निगार प्रेमिका की तलाश मे जा निकलता है। उद्यान मे दूर से ही उसकी आकर्षक चित्तवन के दृष्टिपात से मुग्ध होकर वह भूमि पर गिर पडना है। यहा तक नायक-नायिका का मिलन केवल साक्षात् दर्शन तक ही सीमित है। जब तक वह प्रागण मे प्रेमिका के पुनः साक्षात्-दर्शन से कृतार्थ नही होता, उसका वियोग उत्तरोत्तर बढता चला जाता है।[5] वह सन्यासी का वेष धारण करके[6] सासारिक प्रलोभनो से किंचित्-मात्र भी प्रलोभित नही होता। आत्मोत्सर्ग करने के लिए तैयार निगार अपनी प्रेमिका के द्वार पर चुबन करके आत्म-सन्तोष प्राप्त करता है तथा वही जडवत् खडा भी रहता है।[7] उसके पुष्प जैसे कोमल शरीर को वियोग की अग्नि भस्म कर देती है।[8] उधर से जेबा भी

---

१. मुहब्बत गव वफअई दोस्त छारुन—वही, पृ० ३४ ।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० १६-२६ ।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४३-५१ ।

४. हकीमन पादशाहन नाद दोवुन, मरज तम्यसुन्द तिमन अथि आज़मोवुन।
हकीमव याम वुछ तस नब्ज़ पुर जोश, सपुन नादान सिफ़त बे अकल व बेहोश।
—वही, पृ० १७ ।

५. ह्योतुन तअम्य आगनस मंज तीर छारुन, ब तीर गमजह ह्योत ज़ेबायि मारुन, वुछान गअय अक अकिस रूज़ित मुकअबिल, बतेग़ इश्वह आशक कोरनह बिस्मिल ।—ज़ेबा निगार पृ० ३३ ।

६. कबा त्रअवित लिबास सादगी प्राव, ख्यालशाही व शहज़ादगी प्राव
—वही, पृ० २३ ।

७. दितुन तत बूसअह ब्रादस कुन थअवअन थर,
ज़ि हुअबत तत बरस तल रूज़िथअय गव—वही, पृ० ३२ ।

८. सु दूरयर पोश पानस नार जन प्योस, दोपुन आखिर इद्गरयर चाल कोताह
—वही, पृ० ३५ ।

जुलेखा की भाति उससे मिलन के लिए आतुर दिखाई देती है :

जुलेखा जन चे पत गअमअच गिरिफ्तार[1]

(मानो जुलेखा तुम्हारे ऊपर प्रेम-विह्वल हो उठी हो)

क्षणिक सयोग के पश्चात् पिता का वात्सल्य प्रेमी-प्रेमिका के लिए पुनः वियोग का कारण बन जाता है।[2] इस वियोग को जेबा सहन नही कर सकती और उसका प्राणान्त हो जाता है।[3] निगार भी उसी की कबर मे प्रवेश करके अपने प्राण त्याग देता है।[4]

संयोग श्रृंगार

इस प्रबन्ध-काव्य में नायका-नायिका के विवाह के समय प्रकृति का उल्लासमय रूप चित्रित किया गया है।[5] सयोग-श्रृ गार में सभोग का चित्रण करके कवि ने उस मे अधिक अश्लीलता नही आने दी है अपितु उसे इश्क हकीकी मान कर एकमेक की भावना के रूप मे अपनाया गया है।[6] यह सयोग-श्रृ गार अचिर ही रहता है क्योकि नायक निगार को ऐयार नायिका से पृथक् करने मे सकोच नही करते।

रूप-सौदर्य-वर्णन

इसमे नायिका के सौदर्य का उल्लेख करते हुए कवि ने कहा है कि वह अत्यन्त रूपवती बाला थी तथा उसकी प्रसिद्धि सारे ससार मे व्याप्त हो चुकी थी।[7] इश्क-पेचान तथा नाग के समान उसके केश. अत्यन्त शोभायमान थे।[8] उसका मस्तक, भौहें नेत्र तथा कमर आदि अग विशेष रूप से मुग्धकारी थे।[9] नेत्रो तथा भौहो, की सयुक्त शोभा को उसने पत्तों से संवलित बादाम के साथ उपमा

---

१. वही, पृ० ३७।

२. द्रष्टव्य—जेबा निगार, पृ० ६२-६५।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७८।

४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८४।

५. निशातस ऐशकिस फसले बहार आयोव, मुबारक असल मतलब बसले यार आयोक—वही, पृ० ५२।

६. दोअय अअवित मय यकसान क्याह च्योक—जेबा निगार, पृ० ५८।

७. तसुन्दअय हुस्न क्या वोत शोर आलम—वही, पृ० ७।

८. छु खोतमुत पानह मारस इश्क पेचान, तत शहमार सर्वस पान खारन, —वही, पृ० ७।

९. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७-१२।

दी है ।[1] अपने अनुपम सौंदर्य के कारण वह बिल्कुल परी लगती थी ।[2]

नायिका के रूप-सौदर्य का वर्णन करने के लिए कवि ने उपमा,[3] रूपक,[4] उत्प्रेक्षा,[5] अतिशयोक्ति[6] आदि कई अलकारो का आश्रय लिया है ।

१३—सोहनी मेंयवाल[7]

कथा सारांश—बलख मे मिर्जा अली बेग नामक एक दानवीर सौदागर रहा करता था । निस्सन्तान होने के कारण वह फकीरों को प्रसन्न करके उनसे आशीर्वाद प्राप्तकरता था । एक बार गुफा मे निवास करने वाले एक फकीर ने उसे पुत्रोत्पत्ति का वरदान देते हुए कहा कि तुम्हारा पुत्र चौदह वर्ष का हो जाने पर प्रेमाग्नि मे जल उठेगा । नौ मास व्यतीत होने पर उसके यहा सूर्य जैसा देदीप्यमान पुत्र उत्पन्न हुआ । प्रसन्नचित्त सौदागर ने उसका नाम इज्जतबेग रखा । जब वह पाच वर्ष का हुआ उसे पढने के लिए मकतब मे डाला गया । वह चौदह कलाओं में पारगत हो गया । एक दिन इज्जतबेग के हृदय मे दिल्ली जाने की धुन सवार हुई । अनिच्छा होते हुए भी पिता ने कुछ माल तथा साथी देकर उसे विदा किया । दिल्ली पहुंचकर शाहजहा ने उसका पर्याप्त मान-सम्मान किया । तत्पश्चात् वहा से वह लाहौर आया और वहा कुछ समय रहने के अनन्तर गुजरात पहुचा । वहा एक सराय मे रहते हुए उसने उस नगर के एक कलाविद् एव निपुण कुम्हार की प्रशसा सुनी । कुछ पात्र मगवाने के अभिप्राय से उसने अपने सेवक को उसके पास भेजा । वहा सेवक कुम्हार की पुत्री सोहनी के दर्शन करके पृथ्वी पर मूर्छित होकर गिर पड़ा । वहा से लौटने पर जब इज्जतबेग ने उसके मुख से सोहनी के

---

१. ज़अह चश्म त बुमअह डीशिथ मे याद आम, ज़अह बादाम चश्म अब्र व बर्ग बादाम—वही, पृ० ८ ।

२. निगाराह् खओश बयानाह् मह जबीनाह्, परी सूरत सो बिल्कुल गर्क दर नूर—वही, पृ० ७ ।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० १०, पक्ति ४३ ।

४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७, पक्ति २१ ।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८, पक्ति १-६ ।

६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८, पंक्ति ४३-४४ ।

७. सोहनी मेयवाल, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' योरखुशीपुर, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगंज बाजार, श्रीनगर, कश्मीर प्रकाशन-स्थान—दीन मुहम्मदी प्रेस, लाहौर, द्वितीय आवृत्ति, प्रति प्रयुक्त ।

रूप-सौंदर्य का श्रवण किया, वह तत्काल उस पर आसक्त हुआ। वह उसी सेवक को साथ लेकर सोहनी के अनुपम सौंदर्य का दर्शन करने के लिए कुम्हार के घर पहुंचा। नायक इज्ज़तबेग उसका प्रथम-दर्शन करते ही मूर्छित हुआ, किन्तु अपने पैर के फिसल जाने का बहाना करके उसने कुम्हार के सामने बात को टालकर वास्तविकता प्रकट न होने दी।

अब इज्जतबेग सोहनी से मिलने के लिये उसके घर प्रति प्रातः जाता। वियोग की एक घडी उसे एक कल्प के समान प्रतीत होती। उस नगर मे चिरकाल रहने के कारण वह निर्धन बना अतः उसके सभी साथी उसे छोड़कर चले गये। अकेला इज्जतबेग अन्य कोई उपाय न देख कर कुम्हार के घर मे ही मेंयवाल के नाम से दास बनकर रहने लगा। इस भाति उसे अपनी प्रेमिका से मिलने का अवसर सदा प्राप्त होता था। एक दिन मेयवाल ने अपनी प्रेमिका सोहनी के सम्मुख स्व-प्रेम का बखान किया जिससे द्रवीभूत हो वह भी उसके प्रेम-पाश में बध गई। उनका द्वैतभाव मिट गया तथा उनमे एकत्व स्थापित हुआ।[1]

यह बात विदित हो जाने पर सोहनी की माता को अत्यन्त दुःख हुआ। मेयवाल को बुरा-भला कहकर उसने उसे अपने घर से निकाल दिया। अपनी प्रेमिका से विलग होकर मेयवाल विलाप करते हुए वन मे पहुंच गया। सोहनी अपने प्रेम में अटल व अडिग रहकर माता से प्रताड़ित होने पर भी निर्भीक रही। वह विवाह हो जाने पर भी अपनी पवित्रता को सुरक्षित रखने मे सफल रही।

सोहनी की सखी मेयवाल का पत्र लेकर आई जिसे पढकर नायिका की विरह-व्यथा और अधिक बढ गई। इसी प्रकार सोहनी का करुणाजनक पत्र भी प्रत्युत्तर में मेयवाल को मिला। नायक मेयवाल ने अपनी प्रेमिका की प्राप्ति के लिये सन्यासी का वेष धारण किया तथा शरीर पर भस्म मला। सोहनी की स्मृति मे लीन मेंयवाल वही एक नदी के तट पर रहने लगा जहां सोहनी प्रत्येक रात एक घडे पर बैठ कर नदी को पार करके उसे मिलने आती थी। एक दिन रहस्य खुल जाने पर उसकी देवरानी ने नदी तट पर उस पक्के घडे के स्थान पर कच्चा घडा रख दिया। जब प्रेम-विह्वला सोहनी अपने नियमित समय पर अपने प्रेमी से मिलने के लिए आई तो कच्चे घड़े को देखकर वह अत्यन्त खिन्न हुई। इस समय नदी मे बाढ़ आई हुई थी अतः प्रेमी से मिलने के

१. द्वय त्रअवअक सपुन यकता सरासर,
बमाने क अलिबत दग्रोत जुव कुनुय ओस—सोहनी मेंयवाल, पृ० २०।

लिये नदी को पार करना कुछ कठिन-सा था। अन्य कोई उपाय न देखकर उसने मेयवाल से मिलने के लिये कच्चे घड़े पर ही बैठकर नदी को पार करने का निश्चय किया। ज्यो-ज्यो वह जलधारा मे आगे बढती गई उस घडे की मिट्टी पिघलती चली गई। बहती हुई सोहनी अपने प्रिय को पुकार-पुकार कर जीवन की अन्तिम घडिया गिनने लगी। अपनी प्रेमिका की इस दशा का परिज्ञान हो जाने पर मेयवाल भी उसी के साथ डूबकर प्राण त्याग कर गया। उन दोनों के शव एक-साथ किनारे के साथ लगे। इस समय वे आलिगन-बद्ध थे। दोनो 'बका' (अवस्थान) की दशा को प्राप्त हो गए।

कथा का आधार तथा संगठन

कवि 'मिसकीन' ने 'सोहनी मेयवाल' मे उसके आधार की ओर सकेत करते हुए कहा है कि इस कहानी का प्रचार पजाबी भाषा मे था,[1] किन्तु इसी काव्य के अन्त मे उसका यह भी कथन है कि यह कथा सर्वप्रथम हिन्दी-भाषा मे ही गाई गई थी।[2] इस भाति कवि ने इस काव्य के आधार की मान्यता स्वीकार की है अतः उसने पजाबी अथवा हिन्दी के कथानक से ही इसका स्रोत ग्रहण किया होगा। वास्तव मे कवि अपने मुरीदो से मिलने के लिये पंजाब आया-जाया करता था, अत: वह इस कथा से अपरिचित न रहा होगा। तत्पश्चात् वह भी इसके माध्यम से ही कश्मीरी भाषा में सूफी-सिद्धान्तो का प्रतिपादन करने में सफल हुआ।[3]

इस प्रबन्ध-काव्य का आरम्भ कवि ने हम्द,[4] ईश्वर-वन्दना,[5] हजरत-मुहम्मद एवं उसके चार मित्रों की प्रशंसा,[6] शफी उल्मन्द नवीन की महत्ता[7] तथा पुस्तक का आधार बताने[8] के अनन्तर किया है। प्रसगो के अनुसार इस काव्य की कथा

---

१. ब पंजाबी जबान ओन्मुत बतालीफ—सोहनी मेंयवाल, पृ० ३।
२. छु ल्योरमुत वल्लुक ज़ाते पाकन, यि कोर्मुत साहिबन अक कस्सअह मरकूम, पहव दर हिन्दी ज़बान दर असलुक मज़ूम, तिथअय पअठ्यन सरासर कस्सह कोताह—वही, पृ० ४७।
३. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, तृतीय भाग, पृ० ३७६।
४. सोहनी मेंयवाल, पृ० २।
५. वही, पृ० २।
६. वही, पृ० २।
७. वही, पृ० २।
८. हम्द तस खअलिकस यम्य दर दो आलम, ज़ि खलक़त खास कओर ईजाद आलम—सोहनी मेंयवाल, पृ० २।

को शीर्षको के अन्तर्गत बाट दिया गया है ।

एक हदीस मे वर्णित है कि खुदा ने अपने स्वरूप के अनुरूप ही मनुष्य की रचना की। कवि 'मिसकीन' ने भी हम्द मे ऐसे ही भाव-साम्य को प्रकट किया है।[१] शरीयत के मार्ग का वर्णन करते हुए कवि ने इस्लाम-धर्म के साधन चतुष्टय-सलात, जकात, सौम तथा नमाज़ का भी उल्लेख किया है और इस प्रकार मिर्जा अली बेग ज़क़ात देकर ही फकीरो से पुत्रोत्पत्ति का आशीर्वाद प्राप्त करना चाहता है,[२] सोहनी का कुम्हार पिता सदा नमाज पढता रहता है।[३]

सभी बातो का सगठन इस काव्य मे सूफी-सिद्धान्तो के अनुसार हुआ है। इसमे मेयवाल अलौकिक साधक है[४] किन्तु सोहनी का पति लौकिक उत्तराधिकार पूर्ण व्यक्ति है।[५] प्रेमी मेयवाल कठिनाइयों तथा दु.खो को सहन करके ही अपनी प्रेमिका सोहनी को प्राप्ति की कामना करता है। इस काव्य में सयोग-शृगार का वर्णन कही भी विस्तार से नही हुआ है अपितु इस में वियोग ही सर्वत्र प्रधान है। यह काव्य वियोगान्त है।

इस काव्य मे सखी आदि पात्र सहायक रूप मे आए है।[६] नायक का नाम प्रचलित आधार पर न होकर 'मोहीवाल' के स्थान पर 'मेयवाल' दिया गया है।

विप्रलम्भ शृंगार

नायिका को ईश्वरीय सौंदर्य का प्रतीक मानकर कवि ने पूर्वानुराग की भी चर्चा की है।[७] साधक एव साध्य, एक-दूसरे से मिलने के लिए सदा तत्पर एव

---

१. हम्द तस खअलिकस यम्य दर दो आलम, जि खलकत खास कओर ईजाद आलम—सोहनी मेयवाल, पृ० २।

२. रछ्यन क्याह मुफलिसन हुन्द दिल बा एहसान, बज़रपअशी अथ तस अब्रे नेसान—वही, पृ० ३।

३. वुछुक कुम्यार मशगूल नमाज़ ओस, बदल बा हक़ सु दर अजजो निमाज़ ओस—सोहनी मेयवाल, पृ० १६।

४. कोरुन तअम्य खासअह पानस शक्ले संन्यास,
छअनुन तअम्य रेश कअसित बेयि मोलुन सास—वही, पृ० ३३।

५. जि कौम ख्वेशतस जोनुक सु दर खोर, कोरुक तस सअत्य कथ अम्यसअंज मुकरर मुयस्सर खान्दरुक सामानह सअरी, करित कर है यनि वअलि च तैयारी—वही, पृ० २५।

६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३०, ३२।

७. च् योदअ मअशरोवथस यार कदीमी, मे छुम बर वअदह खुद मुस्तकीमी —वही, पृ० २६।

उत्सुक दिखाई देते हैं और इसी कारण विप्रलम्भ शृंगार के अन्तर्गत मेयवाल तथा सोहनी के विरह-वर्णन को प्रधानता दी गई है। सोहनी जहा अलौकिक सौदर्य से पूर्ण है,[१] वहां मेंयवाल भी स्वर्ग से ही पृथ्वी पर उतरा हुआ एक सच्चा साधक है।[२]

इस विरह का आरम्भ उस समय होता है जब नायक मेंयवाल सेवक के मुख से अपनी प्रेमिका सोहनी के रूप-सौदर्य का वर्णन सुनता है। वह दास स्वय भी सोहनी का दर्शन करके मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पडा था।[३] विरह की उत्पत्ति के अनन्तर नायक मेयवाल के हृदय मे नायिका सोहनी से मिलन की इच्छा उत्पन्न होती है और यही से यह प्रयास आरम्भ होता है। वह किसी न किसी बहाने उससे मिलने का मार्ग खोजता ही रहता है। प्रथम-दर्शन करते ही वह भी मूर्छित होकर गिर पड़ता है।[४] न ही उसे शरीर की सुध रहती है और न ही उसे किसी प्रकार मन का धैर्य ही रहता है। प्रेमाग्नि से वह अत्यन्त क्षीण एव रुग्ण बन जाता है।[५] प्रेम की अतिशयता के कारण उसके लिए श्रावण-मास पौष-मास बन जाता है।[६] वह प्रेमिका के विरह के कारण ही उद्वेग-पूर्ण बन जाता है।[७]

परम्परागत वर्णन के अनुसार कवि ने वैद्यो तथा औषधियो का भी वर्णन किया है, परन्तु प्रेम-रोग मे कोई भी औषधि काम नही देती।[८] इस प्रकार नायक मेयवाल का प्रेम-रोग असाध्य बन जाता है। इसी भाति नायिका सोहनी भी अप्रत्याशित वियोग से दुःखी होकर अपने प्रेमी को एक करुणापूर्ण पत्र मे अपनी विरह-वेदना का परिचय देती है।[९] उस वियोग में प्रत्येक वस्तु दुःखद

---

१. स्व दर जिल्दे बशर ज़न जन्तअच हूर—वही, पृ० ८।

२. मुल्के आस्मानअह् वोथमुत बर ज़मीन ओस—वही, पृ० ५।

३. सपुन मुश्ताक तस कुन लओग वुछने, बयक दीदन सपुन बेहोश सरमस्त —सोहनी मेंयवाल, पृ० ७।

४. वुछुस यामत तसुन्दुय खी विलकश, सपुन बेहोश तामत प्योस गश —वही, पृ० ११।

५. ज़ि दर्दे इश्क सपुन सख्त बेमार, ब सुर्खी रग रोव तस अर्गवान ओस, —वही, पृ० १२।

६. तमिस अज़ इश्क गोमुत श्रावनस पोह—वही, पृ० १६।

७. द्रष्टव्य—पृ० २६।

८. चरिवअय बेमारयव मज़ गव सु ईरह, सु शीरअह च्योन तमिस कअफी सपुन न—वही, पृ० १३।

९. करार छुम नह छ्यस आवारअह, गअमअ च, आमारअह चानि वारयाह मार गमअच—वही, पृ० ३१।

प्रतीत होती है ।[1] उसका शरीर अस्वस्थ हो जाता है तथा वह फकीरो के वस्त्र पहनती है ।[2] विरह का यह वर्णन लोक-विरोधी न होकर परम्परागत है । इसके द्वारा हृदय के सहज उद्गारो का चित्रण हुआ है ।

प्रेम-तत्व तथा आध्यात्मिकता

इस काव्य के प्रत्येक स्थल पर प्रेम-तत्व की अभिव्यजना हुई है । ईश्वर ने अपने सौदर्य के प्रकाशन के साथ ही ससार की उत्पत्ति की[3], किन्तु वही स्वय प्रेमी भी है तथा प्रेमिका भी है ।[4] ससार मे व्याप्त ईश्वर का गुण तथा सौदर्य मानव मे विशेषरूप से परिलक्षित होता है । एक हदीस मे यह कहा गया है कि अल्लाह ने मानव की रचना अपने सौदर्य के स्वय दर्शन के हेतु की । कवि ने इसी सिद्धान्त के आधार पर अपने प्रबन्ध-काव्य 'सोहनी मेयवाल' मे कहा कि वह अल्लाह अपने सौदर्य को देखने के लिए स्वय खरीदार बन कर निकला । उसने कभी यूसुफ और कभी जुलेखा का रूप धारण किया ।[5] इस सपूर्ण संसार मे उसी का सौदर्य समाया हुआ है ।[6] जगत् की उत्पत्ति प्रेम के कारण हुई तथा प्रेम की सर्वप्रथम उत्पत्ति अल्लाह के हृदय में ही उद्भूत हुई ।[7]

इसी प्रेम और सौदर्य का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है । रूप ही प्रेम का जनक है और तभी इस काव्य में मेंयवाल के हृदय में रूप के गुण-श्रवण से ही प्रेमोत्पत्ति होती है । यह प्रेम अनायास ही उत्पन्न होता है । इसके सामने साधक या प्रेमी सासारिक बन्धनों को तुच्छ समझता है क्योंकि 'प्रेम ऐसा शिकारी है जो प्रेमी को सदा बेंधता रहता है ।[8] इश्क-हकीकी के सामने इश्क मजाजी का कोई महत्व नहीं । जब साधक के हृदय में प्रेम की पीर उत्पन्न होती है, वह अपना विश्राम खो बैठता है ।[9] विरह-व्यथा के कारण मेयवाल न किसी से

---

१. गोमुत छुम शह नशीन मानन्दे जिन्दान, यि मखमल तकियअह संगीनतर जसिन्दान—वही, पृ० ३१ ।

२. फकीरानअह लिबासुक हाल कअरज़ी, छसै बेमार गम बर बिस्तरे मर्ग —वही, पृ० ३२ ।

३. जि खलकत खास कअौर ईजाद आदम—वही, पृ० २ ।

४. छु आशक पानअह त पानय छु माशूक—वही, पृ० २ ।

५. सोहनी मेंयवाल, पृ० २ ।

६. तसुन्दी हुसह ससारस छि मिन्नत—वही, पृ० १० ।

७. दितुन दूकान इश्कुन द्राव बाजार—वही, पृ० २ ।

८. न ज़ोनुम जाग ह्यत छुम इश्कअह सैयाद—सोहनी मेयवाल, पृ० १४ ।

९. यि बूजित ताजरस बेताब गव दिल, ग़माह दर ऐन शादी प्योस मुश्किल —वही, पृ० ११ ।

बोलना है और न ही उसके नेत्रो के सामने अपनी प्रेमिका के बिना किसी अन्य का चित्र ही समुपस्थित होता है । इसी कारण वह अपने सेवक से यह प्रार्थना करता है कि वह उसे प्रेमिका तक पहुचा दे ।[१]

प्रेमिका सोहनी की प्राप्ति के लिए ही मेयवाल राजसी ठाठबाठ छोड़कर साधु-वेश धारण करता है ।[२] विरह के कारण ही उसके नेत्रो से आसुओ के बदले खून का दरिया प्रवाहित होता है ।[३] मेयवाल अपनी प्रेमिका सोहनी के साथ जन्म-जन्मान्तर का सम्बन्ध मानते हुए उसकी प्राप्ति के लिए प्रलयमय दिखाई देता है । सोहनी भी साधक के प्रति सहानुभूति रखकर वैवाहिक बन्धन के कारण कलुषित नही होती वरन् पवित्रता का परिचय देकर विरह मे तडपती रहती है ।[४] उसकी दुविधा तथा शका मिट जाती है तथा साधक के साथ तादात्म्य स्थापित करने के लिए वह दृढ निश्चय एव एकनिष्ठता को अपना लेती है । एक-साथ मरन का वरण करने के समय वे केवल एक प्राण और दो शरीर प्रतीत होते है । उनका द्वैतभाव मिट जाता है[५] और साधक फना (निर्वाण) होकर बका (अवस्थिति) की अवस्था को प्राप्त होता है ।[६] शुद्ध हृदय मे प्रेम का प्रादुर्भाव होने से आत्मा-परमात्मा का मिलन सभव है । इश्क मजाजी की अन्तिम सीमा ही इश्क-हकीकी है ।[७]

रूप-सौंदर्य-वर्णन

नायिका सोहनी के रूप-सौदर्य का वर्णन इस काव्य मे नख से शिख तक किया गया है । उसकी भोंहों, नेत्रो, होठ, ठोडी, वक्षस्थल, भुजाओ, नाभि, कमर एव पैरों में पड़े पायलों आदि का वर्णन कवि ने अत्यन्त मनोहारी ढग से

---

१. थवुम मिन्नत चह तस निश वातनावुम, मे तस दिलदारअह सुन्द दीदार हावुम—वही, पृ० ११ ।

२. उरूसानअह लिबासस कोरुम पारअह, मौलुम मे सास पानस गोम खारअह ।—वही पृ० ३१ ।

३. अछ्यव किन्य ताजरस पओोक खूने दरिया—वही, पृ० १८ ।

४. द्रष्टव्य—वही, पृ० २५, ३२, ४३ ।

५. मरित ति अक अकिस प्यठ के फिदा तिम—वही, पृ० ४७ ।

६. बक़ा लओबनय शोक ओ सपुन फान—वही, पृ० ४५ ।

७. मजाजुक इन्तिहा वुन गओयनह मोलूम,
बकोले अज हकीक़ी शोक महरूम—वही, पृ० ४१ ।

किया है।[1] रूप मे वह स्वर्ग की अप्सरा के समान है।[2] पूर्णिमा के चन्द्र की भाति देदीप्यमान सोहनी के मस्तक का तिलक डिठौने की भाति चमक रहा है।[3] सपूर्ण ससार मे उसी का सौदर्य समाया हुआ है। इसके रूप की प्रज्वलित आभा पर मोहित होने वाला साधक मेयवाल भ्रमर की भाति अपना सर्वस्व खो बैठता है।[4] उसकी प्राप्ति के लिए वह व्याकुल हो उठता है। वह केवल सोहनी के ध्यान मे ही लीन रहता है।

१४—चन्द्र वदन[5]

कथा-सारांश—पट्टन नगर के हिन्दू राजा का नाम राजा रग था। बिजली के समान प्रभायुक्त उसकी पुत्री चद्रवदन नख से शिख तक रूपवती थी। उसके सौदर्य का दर्शन करके अप्सराए भी विमोहित होती थी। एक चित्रकार ने उसका एक सुन्दर चित्र बनाया था जिसे हाथ मे लेकर वह प्रत्येक घर एव गली-कूचे मे घूमता रहता था। मैयार नाम का एक सौदागर उस चित्र का दर्शन करते ही चन्द्रवदन पर आसक्त होकर पृथ्वी पर मूर्छित हो, गिर पडा। चेतनता आने पर उसने चित्रकार से उस युवती का पता पूछा। चित्रकार ने उसे प्रेमिका चन्द्र-वदन के निवास-स्थान के विषय मे सब-कुछ बताते हुए यह कहा कि वह (चित्र-कार) भी उसे उस तक पहुचाने मे सहायता प्रदान करेगा। मार्ग की कठिनाइयो और उसकी प्राप्ति के प्रयत्न मे असफल साधकों के सम्बन्ध मे भी चित्रकार ने उसे भली-भाति परिचित किया। तत्पश्चात् नायक मैयार एव चित्रकार दोनों पट्टन नगर पहुचे जहा नायिका चन्द्रवदन मन्दिर मे पूजा करने जा रही थी। सन्यासी का वेष धारण करने वाले मैयार को चद्रवदन ने यह कहकर खूब प्रता-डित किया कि एक हिन्दू तथा मुसलमान का तादात्म्य होना असम्भव-सा है।[6]

---

१. द्रष्टव्य—सोहनी मेयवाल, पृ० ८-१०।

२. वनुन ह्योतुनस छि क्रालस खास अक कूर, स्व दर जिल्दे बशर जन जन्तअचहूर—वही, पृ० ८।

३. ड्यकस प्यठ टिकह तस क्याह चश्मे-बद्-दूर—वही, पृ० ८।

४. दज़न कमि हालअह शमस प्यठ छु पोपुर, सु बेपरवा बहुस्न ख्वद छु मग-रूर—वही, पृ० १२।

५. चन्द्र वदन, पीर अज़ीज अल्लाह हक्कानी, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगज बाज़ार, श्रीनगर, कश्मीर, प्रति प्रयुक्त।

६. हिअन्दय दीनअह छस राजसअंज कूर, छुम मअलि सुन्द नाव मशहूर—चन्द्रवदन, पृ० ५।

यह सुनकर प्रेम-पथ पर चलने वाले मैयार ने कहा कि 'साधना के पथ पर चलने वाले का हिन्दू अथवा मुसलमान के रूप में भेद-भाव कैसा, साधक तो केवल प्रिय से एकमेक होने की ही इच्छा रखता है।[१] चन्द्रवदन के उपेक्षा-भाव को देखकर मैयार का हृदय टूट गया और उसने पर्वत की गुफा मे शरण ली। वहां से एक दयालु राजा मैयार को अपने नगर ले आया जहा उसकी भेट पुनः चित्रकार के साथ हुई। मैयार की सभी बाते सुनकर उस राजा ने पट्टन नगर पर आक्रमण किया। इस समय साथ जाने वाले प्रेमी मैयार ने पुनः मन्दिर जाती हुई चन्द्रवदन का दर्शन किया। नायक की विरह-वेदना से द्रवित चन्द्र-वदन प्रकट रूप मे कठोर रही। बेचारा मैयार मिलन के अभाव के कारण परमधाम को सिधार गया। उसकी अर्थी (ताबूत) प्रेमिका के द्वार से उठाए जाने पर भी न उठी। बिना प्रेमिका का दर्शन किए वह अर्थी टस से मस न हुई। अन्त मे मैयार के शव को दर्शन देने के अनन्तर नायिका चन्द्रवदन पुनः अपने महल मे चली गई। अत मे प्रेमी मैयार के प्रेम की अतिशयता के कारण उसने भी अपने प्राण त्याग दिए। जब अर्थी की चादर उठाई गई तो उस मे दोनों—प्रेमी तथा प्रेमिका—एक साथ कफन मे लिपटे हुए थे। यह दृश्य देख-कर सभी उपस्थित व्यक्ति विस्मित हुए।

कथा का आधार तथा संगठन

इस काव्य का आधार बीजापुर के दक्षिणी कवि मुकीमी द्वारा लिखित 'चन्द्रवदन व महियार' (रचनाकाल सन् १६२७ ईस्वी) प्रतीत होता है।[२] इसमे 'लैला-मजनूं' की भाति कवि ने विरह का वर्णन अत्यधिक किया है।[३]

कथा का सगठन अन्य सूफी-काव्यो की भाति ही हुआ है।[४] हम्द, निर्गुण ईश्वर की महिमा,[५] सृष्टि-रचना,[६] तथा प्रेम की महत्ता[७] के अनन्तर ही कथा का आरम्भ हुआ है। कथानक के शीर्षक प्रसगो में बाट दिये गये हैं। इस काव्य में

---

१. अज़ दीन ख्वोद बेगानअह, नै ह्योन्द नै मुसलमान—वही, पृ० ५।
२. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ८६।
३. सर ताजअह नओन दाव मजनून, मस्तानह बी खान जमानह—चन्द्रवदन, पृ० ५।
४. वही, पृ० २।
५. वही, पृ० २।
६. वही, पृ० २।
७. वही, पृ० २।

कोई विरोधी तत्व नही है तथा नायक एव नायिका के मिलन में कोई प्रतिनायक भी बाधक नही है। इस मे पट्टन नगर के राजा की पुत्री चद्रवदन तथा मैयार के विरह एव शाश्वत मिलन का वर्णन है। कथा वियोगान्त है। लौकिक मिलन की अपेक्षा नायक-नायिका का अलौकिक मिलन ही कवि को अभीष्ट है।[1]

प्रेम-पद्धति

प्रेम का आरम्भ कवि ने चित्र-दर्शन से कराया है। चित्रकार द्वारा बनाए गए चित्र को देखकर ही नायक मैयार विमुग्ध होकर प्रेम-पथ पर अग्रसर होता है।[2] चित्र-दर्शन के अनन्तर ही साक्षात् दर्शन द्वारा नायक-नायिका एक दूसरे से मिलते है। इसमे नायिका की उपलब्धि का प्रयास नायक की ओर से होता है जो सच्चा साधक है।[3]

प्रेम-तत्व

इस काव्य मे प्रेम अलौकिक और लोक बधन से परे प्रतीत होता है।[4] प्रेमिका के प्रेम मे नायक अपना धर्म तक छोड देता है। सच्चा साधक उसकी सकुचित सीमा मे बधना नही चाहता।[5] नायक अपनी नायिका से मिलन के लिए जीवन के प्रति मोह नही रखता अपितु निर्भीक होकर प्रत्येक कठिनाई को सहन करते हुए अग्रसर होता है।[6]

विप्रलम्भ शृंगार

विरह के उत्पन्न होने पर मैयार अपनी प्रेमिका के अतिरिक्त किसी अन्य का चिन्तन नही करता। उसका विरह नायिका की उपेक्षा के कारण अधिक व्यापक बन जाता है।[7] नायक बार-बार नायिका का आंचल पकड़ने का प्रयत्न

---

१. यस सोज इश्कुन दिलस, सुइ वाति यत मज़िलस,
जायाह छअनअह ग़अफिलन, इश्कस कओत सना पलन—वही, पृ० १६।

. गव याम तस ज़ेरे नज़र, तस्वीर आन माह पेकर, बर खाक ध्यव खसअह च्वेश, अज ज़ख्म ज़ानानह दिलरेश—वही, पृ० ४।

३. मेय रओय लओब नेब नामुक, लओग जोश तस राम रामुक—वही, पृ० ५।

४. दओप आशकन तस ऐ यार, नओन हाव पनुन दीदार, कड़ खंजर दिल-बरानह, बर खंजर दीवानह।—वही, पृ० १०।

५. हियेजयानि वलुथस माये, दीन त्रोवुम चानि माये—वही, पृ० १०।

६. दर राह सूरत बन्दर, गअय कुश्तह कम कम गन्दर, गअमअत्य छि अज बादि बेदाद, चेय ही कअत्याह बर्बाद।—वही, पृ० ४।

७. बूज़ित वओद मियारन, लओग खूने जिगर हारुन—वही, पृ० ५।

करता है।[1] किन्तु वह द्रवीभूत होकर भी प्रकट रूप मे कोई सहानुभूति नही दिखलाती। बेचारा विरही नायक बीमार पड जाता है। नायक के परम धाम सिधारे जाने पर नायिका भी विरहावस्था के कारण प्राण त्याग देती है। दोनो लैला-मजनू की भाति एक-साथ पारलौकिक मिलन मे बध जाते है:

इश्कुन वियोनम्र छुइ माने, लम्रल तह मजनू जाने।[2]
(प्रेम का अर्थ कुछ और ही है जिसे केवल लैला-मजनू ही जान सकते है।)

इस काव्य मे सयोग का वर्णन कही भी नही हुआ है।

ईश्वरोन्मुख प्रेम

नायिका का सौंदर्य ही ईश्वर का नूर है जिससे विमोहित होकर नायक मैयार उपलब्ध करने का प्रयत्न करता है।[3] वह सन्यासी बनकर ही उसको प्राप्त करने का प्रयत्न करता है[4] क्योकि प्रेम-कथा का पथिक जाति अथवा वर्गभेद की उलझनों मे नही पडता। सच्चा साधक ही ईश्वर-दर्शन करने मे सफल होता है।[5]

१५—मुमताज़ बेनज़ीर[6]

कथा-सारांश—भारत मे बुलन्द इकबाल नामक किसी राजा के सात पुत्र थे जिस मे मे मुमताज अत्यन्त सुन्दर, सुशील, शालीन तथा दूरदर्शी था। अपने अन्य छः भाइयों की भाति वह विवाहित नही था। सर्वप्रथम उसने अद्वितीय सुन्दरी बेनजीर का गुण-श्रवण किया और तत्पश्चात् उसके चित्र का दर्शन करते ही वह उद्विगन

---

१. लारान दर बुतखानह, म्यार ओस दिल खस्तह, दामान रोटुन तसति, काय माहे हिमायू फर—वही, पृ० ८।

२. बेमार बेकस तम्रह मुज़तिर, आदाय तम्रम्यसम्रज़ वुछतम्रह —चन्द्रवदन, पृ० ६।

३. सरम्रह कर हर मोख हर छुय, गम्रोर मोख परमीश्वर छुय—वही, पृ० ३।

४. संन्यास वुदास छुत कर, रिन्दानह छुस इश्कह कम्राफिर,
अज़ दीन ख्वोद बेगानह, नै हियोन्द नै मुसलमान—वही, पृ० ५।

५. चन्द्रवदन तम्रह मैयार, खुसपम्रदम्रह दर अक कफन, चीदम्रह यक रुह व दो तन, अकि थरि फम्रोलिमम्रत्य जम्रह गुल—वही, पृ० १५।

६. मुमताज़ बेनज़ीर, पीर अज़ीज़ अल्लाह हक्कानी, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगंज बाज़ार, श्रीनगर, कश्मीर। प्रकाशन-स्थान, नूर मुहम्मदी प्रेस व कोहेनूर प्रेस, अमीराकदल, श्रीनगर, सन् १३७६ हि०, प्रति प्रयुक्त।

हो उठा । प्रेमाग्नि से उत्पन्न विरह के कारण उसका शरीर केसर की भांति पीला पड गया । अपनी प्रेमिका की प्राप्ति के लिए वह मार्ग की कठिनाइयो से अविचलित होकर गावो, नगरो, मरुस्थलो तथा नदियो आदि को पार करता हुआ आगे बढा । एक बार नदी को पार करते हुए प्रतिकूल वायु के कारण नौका के खंडित हो जाने पर उसका साथी वज़ीर पुत्र दमसाज़ उससे बिछुड गया । वे दोनों पृथक्-पृथक् स्थानो पर पहुंच गए । मुमताज़ ने तट पर पहुंचकर एक सुन्दर उद्यान के मध्य बने भवन मे किसी प्रौढ पुरुष के दर्शन किए जिसका नाम जैन-उल-आबदीन था । वह देवों का पीर था । उसने मुमताज़ की सहायता की और उसे प्रेमिका बेनज़ीर के नगर में पहुंचा दिया । प्रथम दर्शन मे ही नायक मुमताज़ तथा नायिका बेनजीर एक-दूसरे पर आसक्त हुए । नायिका बेनज़ीर ने वस्ल (ईश्वर मिलन) से पूर्व उसे पांच शर्ते पूरी करने की बात कह दी जिनकी पूर्ति के बिना उन दोनों का विवाह (शाश्वत मिलन) असम्भव था । प्रेमी मुमताज नायिका बेनजीर द्वारा प्रस्तुत प्रत्येक शर्त पूरी करने के लिए तैयार हुआ । पहली शर्त नर्तकी महासुन्दर परी को प्राप्त करने की थी । दूसरी शर्त यह थी कि राजारानी के साथ उसकी सुन्दर पालकी को हस्तगत किया जाय । तीसरी शर्त यह थी कि जहांबानों की प्राप्ति के साथ उसका मनमोहक पलंग भी साथ लाया जाए । चौथी शर्त यह थी कि खुर्शीद परी का सुन्दर तम्बू अधिकृत किया जाए तथा पांचवी शर्त यह थी कि किसी देव द्वारा बन्दिनी बनाई गई उसकी मासी रानी चन्द्र को मुक्त किया जाय ।

विरहाग्नि से संतप्त मुमताज़ इन शर्तो की पूर्ति के लिए मार्ग की कठिनाइयों को सहन करता हुआ आगे बढा । साधना-पथ पर अग्रसर होते हुए सर्वप्रथम वह बहुत-सी कठिनाइयों को झेलने के अनन्तर गंधर्व सेन की पुत्री महासुन्दर परी के पास पहुचा । वह प्रथम-दर्शन मे ही मुमताज़ पर आसक्त हुई । अपने प्रेम के इस रहस्य को छिपाकर वह इन्द्र के पास नृत्य तथा गान के लिए जाती रही । महासुन्दर परी की सखी रूज अफ़रोज़ भी मुमताज़ के सौंदर्य पर मोहित हुई और उसने उसे वासनात्मक प्रेम के लिए प्रेरित करना चाहा किन्तु अपने अभीष्ट में असफल होकर उसने आत्महत्या की । जब इन्द्र तथा गंधर्वसेन को नायक मुमताज़ तथा महासुन्दर परी के पारस्परिक प्रेम की रहस्य-भावना का पता चला, उन्होने दोनों के विवाह की आज्ञा दी । पहली मंजिल प्राप्त कर मुमताज़ को आशा बंध गई और वह महासुन्दर परी को रानी बेनज़ीर के पास ले आया ।

उधर से वज़ीर पुत्र दमसाज़ भी नौका दुर्घटना के अनन्तर एक ऐसे स्थान पर पहुंचा था जहा वज़ीर बख्तियार की पुत्री मिहिर अंगेज़ का साक्षात्-दर्शन करके वह उसके प्रेम-पाश में बंध गया था । अपनी वीरता के आधार पर ही

उसका विवाह मिहिर अगेज़ के साथ हुआ। उधर से मुमताज भी दूसरी शर्त की पूर्ति के लिए राजारानी के पास पहुचा। वे भी साक्षात्-दर्शन से एक-दूसरे के प्रति आकर्षित हुए। विरहानुभूति के अनन्तर उन दोनो का विवाह हुआ, अतः दूसरी मजिल पार करके नायक मुमताज़ राजारानी को पालकी-समेत नायिका बेनजीर के पास ले आया। इसी भाति वह जहाबानो-सहित उसका पलग तथा ख़ुर्शीद-सहित उसका तम्बू भी हस्तगत करने मे सफल हुआ। देव के चगुल से भी उसने रानी चन्द्र को छुडाया और अन्त मे मुमताज़ एव बेनज़ीर दोनो विवाह के रूप मे वस्ल प्राप्त करने मे सफल हुए।

कथा का आधार तथा संगठन

हक्कानी के काव्य 'मुमताज-बेनजीर' का आधार एक ऐसी कथा है जिसे पहले भारत के इतिहासकारो मे वर्णित किया था।[१] इस आधार पर इस काव्य का कथानक ऐतिहासिक है किन्तु कवि की मौलिक उद्भावनाओ तथा सूफी-सिद्धान्तों के परिपालन के कारण इस मे कई काल्पनिक प्रासगिक कथाओ को भी स्थान दिया गया है। इतिहास तथा कल्पना के समन्वय के कारण यह काव्य अत्यन्त सरस बन पड़ा है। इस काव्य मे हरियाणा के हिसार नगर की चर्चा हुई है[२] तथा भारत की भी प्रशसा की गई है।[३]

इस बृहत् आकार वाले प्रबन्धकाव्य के छः भाग है,[४] जिनका सीधा सम्बन्ध नायक मुमताज़ तथा उसकी प्रेमिका बेनज़ीर के साथ है। ये छः भाग उन छः मजिलो के प्रतीक हैं जिन्हे साधक को ईश्वर के साथ तादात्म्य स्थापित करने के लिए पार करना पडता है। प्रत्येक भाग की अपनी-अपनी विशेषता है। कवि का स्वय कथन है कि पहला रहस्य भाग, दूसरा प्रायश्चित भाग, तीसरा वृतान्त

---

१. वलो हा बज्मे इश्कह नव नियाज़अह, वनै इश्कुक फसानह ताज़ह ताज़ह, यि वीरीन किस्सह नव शीरी ज़बानो, महकक हिन्द क्यव तअरीख दानअव
—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० ५।

२. दर गर्द हिसार गव करान गत, कनि आसअ दज़ान ओंठ त पत
—वही, पृ० ८०।

३. हिन्दस मे वतन बजाह इजलाल, शाहस छि दपान बुलन्द इक़बाल
—वही, पृ० ६०।

४. द्रष्टव्य—मुमताज़ बेनज़ीर, प्रथम भाग, पृ० १-६६। द्वितीय भाग, पृ० ६६-१११। तृतीय भाग, पृ० ११२-१३५। चतुर्थ भाग, पृ० १३६-१६५। पंचम भाग, पृ० १६६-२३५। षष्ठ भाग, पृ० २३६-२५५।

भाग, चौथा एकान्त भाग, पाचवा सम्बन्ध भाग तथा छठा ईश्वर-मिलन भाग है।[१] प्रथम-भाग मे कवि ने कथारम्भ से पूर्व विनय,[२] नात,[३] हजरत मुहम्मद की प्रशसा,[४] अमीर कबीर सैयद अली हमदानी की सर्वश्रेष्ठता,[५] इश्क हकीकी की महिमा[६] तथा 'वस्ल' की अनिवार्यता[७] पर प्रकाश डाला गया है। इस भाग में मुमताज बेनजीर मिलन, मुमताज-महासुन्दर परी-विवाह तथा बेनज़ीर के पास महासुन्दर परी-आगमन का वर्णन है। वासनात्मक प्रेम के प्रयास मे असफल रूज अफरोज की आत्महत्या का मार्मिक चित्रण भी इस भाग में हुआ है। दूसरे भाग मे कथारम्भ प्रभु-प्रार्थना,[८] सृष्टि-रचना एव उसका विलय,[९] रसूल की महत्ता,[१०] शरीयत-तरीकत, हकीकत के पथ-प्रदर्शक पीर शेख सैयद अब्दुल कादिर जीलानी की प्रशसा[११] के बाद हुआ है। इस भाग में वज़ीर पुत्र दमसाज़ का मिहिर अगेज के साथ तथा मुमताज का राजारानी के साथ विवाह होने का वर्णन है। तीसरे भाग की कथा का आरम्भ प्रभु-महिमा[१२] तथा हजरत मुहम्मद एवं उसके चार मित्रो की प्रशंसा[१३] के अनन्तर ही होता है। इस भाग

---

१. ग्वोडुक हिस्सह छु दर अफसानये राज़, महासुन्दर परी माशूक इन्द्राज़,
दोम हिस्सह ज़ि मिहिर अगेज़ दमसाज, मुस्कातअह गुहर हाये मानी,
जि तख्त जर तख्वत राजरअनी, छु त्रेयमिस मज जहान बानोयुन्द हाल,
ज़ाजनाईस ता शहज़ादह अहवाल, छु च्रिम हिस्सह बरज्यस खिलत,
मुअलक खानये खुर्शीद तलअत, ज़ि रअनी चन्द्र छुय पअचिम रिसालह,
सअह मल्कये बे नजीरस मासि खालह, शेयिम हिस्सह परक दर असल ऐन राज़,
अंजाम शराइत वस्ल मुमताज़, शमूने तख्त रानी सहर एजाज़,
—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० ४।

२. द्रष्टव्य—मुमताज बेनज़ीर, पृ० २।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।

४. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३।

६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४।

७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४।

८. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६९।

९. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६९।

१०. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६९।

११. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७०।

१२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ११२।

१३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ११२।

मे मुमताज तथा जहाबानो का विवाह सम्पन्न कराया गया है । चौथे भाग की कथा का आरम्भ भी इसी प्रकार प्रभु-महिमा[१] उसके नूर[२] तथा नात[३] के पश्चात् हुआ है । पचम भाग की कथा नात,[४] मखदूम सुल्तान शेख हम्जा की महिमा[५] तथा ईश्वर के नूर के वर्णन[६] के अनन्तर हुआ है । छठे भाग में मुमताज एव बेनज़ीर के विवाह अथवा वस्ल (ईश्वर मिलन) का वर्णन हुआ है ।

इस प्रबन्धकाव्य के प्रत्येक भाग के प्रसगो को शीर्षकों के अन्तर्गत बाट दिया गया है । इसमे स्थान-स्थान पर गजलो का समावेश हुआ है ।[७] युद्धो का वर्णन भी कही-कही हुआ है ।[८] कथा सयोगान्त है ।

प्रेम-पद्धति

इस प्रवन्धकाव्य की आधिकारिक कथा मुमताज तथा बेनजीर के मिलन से सम्वन्ध रखती है जिस मे नायक मुमताज गुण-श्रवण[९] के अनन्तर ही चित्र-दर्शन द्वारा नायिका बेनजीर पर मोहित होता है ।[१०] मुमताज के हृदय मे यथारूप चिन्ता, अभिलाषा, उन्माद तथा उद्वेग का जन्म होता है । कठिनाइयो को पार[११] करके ही वह अपनी प्रेमिका बेनजीर के साक्षात्-दर्शन करने मे सफल होता है ।[१२] शेष कथा भागो की प्रासगिक कथाओं मे भी नायक मुमताज अन्य उप-नायिकाओ

---

१. द्रष्टव्य—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० १३६ ।
२. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३६ ।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३६ ।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३६ ।
५. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३६ ।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० १६७ ।
७. द्रष्टव्य—वही, पृ० २६, ४६, ७४, ६२, १३६, १५७ ।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० १४३-१४७, २१६-२२४ ।
९. यनअ बूज़ुम कअनअ माशूक सुन्द नाव, तअनअ वोतुम जि आह ख्वौद करान वाव ।—वही, पृ० ८ ।
१०. मुशाहृदह आशकन यलि कओर सु तस्वीर, निगारीन सूरत खुर्शीद तनवीर, सपुन बेहोश डीशित सूरते यार, परी रुखसारनअय कओर नक्शे दीवार ।—वही, पृ० ११ ।
११. दोहस रातस पकान ओस अक जहाज़ाह, वुछान आस्य मोजे दरिया ताज़ह ताज़ह—वही, पृ० १३ ।
१२. बयक दीदन बुछुस दिल मार इश्कन, करस दर सीनअह मज़िल नार इश्कन—वही, पृ० २१ ।

'महासुन्दर परी, राजारानी तथा जहाबानो' के प्रति ग्रासक्त होता है। उपनायक दमसाज तथा मिहिर अगेज साक्षात् दर्शन द्वारा ही एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते है।[1]

प्रेम-तत्व

अन्य सूफी-कवियो की भाति कवि ने इश्क-मजाजी की अपेक्षा इश्क-हकीकी को साधक के लिए परमोपयोगी माना है।[2] इश्क-हकीकी से ही ईश्वर-मिलन (वस्ल) सभव हो सकता है।[3] साधक का हृदय प्रेमाग्नि से जलने के समय विरह से घनीभूत हो उठता है।[4] साधक अपने वस्त्रो को फाड डालता है तथा विरह के उन्माद से उद्विग्न हो उठता है।[5] मार्ग की कठिनाइयो की परवाह न करते हुए वह अपने प्रिय की तलाश मे आगे बढकर जल-स्थल को एक कर देता है। सासारिक प्रलोभनो को छोडकर वह जोगी का वेश धारण कर लेता है।[6] क्योकि प्रेम का चुभा तीर उसे विकल कर देता है।[7] मार्ग की कठिनाइयो को झेलने वाला मुमताज अपनी प्रेमिका बेनज़ीर से मिलन के लिए यथासम्भव प्रयत्न करके अपनी एकनिष्ठता का परिचय देता है। वस्ल के लिए वह अपनी प्रेमिका की प्रत्येक शर्त पूरी करने के लिए तन-मन की बाज़ी लगा देता है।[8] कभी उसका

---

१. गवयाम दो-चार दअोन निगारन, नियुव सब्र व करार शौक नारन।
—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० ७२।

२. सनी ना सोज़ सौदअई मजअजी, बनी नाता हकीकत कारसअज़ी—वही, पृ० ४।

३. टअोलुक यचकाल योदवी दूरिरुक रज़, लअोबुक आखिर वसालिकि पूरिरुक गज—वही, पृ० २५२।

४. तचरअ नारअ फराकन तेज़ कोरनस, असर इश्कुन मचर अगेज़ कोननस
—वही, पृ० ६।

५. फरारी दर्द यार बेकरारी, ड़अोलुस आराम व आव व ख्वाब व राहत,
× × ×
गरेबान शकेबस पारअह पारअह, करान गव नालअह हर सो बाल यारस।
—वही, पृ० ११।

६. लिबासे फकर पोशद साहबे ताज, दोपुन दर ज़ौक दिलबर बस मे दर खोर,
—वही, पृ० ६।

७. दोह अकि शाहज़ादन बोबनस हाल, मे इश्कनि तीरनअय कअोर सीनह गरबाल—वही, पृ० ८।

८. बज़अहिर असअस वसलअच इन्तेज़अरी,
तवय आमादअह गव शहज़ादअह मुमताज़,
बनाजी दिलरुबअई अोस जानबाज़,
बराये शर्त सअनी अोस बेताब।—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० ६६।

साथी छूट जाता है[१] और कभी उसे देवों की सहायता लेनी पडती है।[२] मंज़िलो को पार करके ही साधक मुमताज़ पूर्णता की ओर अग्रसर होता है।

जहा सौदर्य है वही प्रेम है, देवी विभूति प्रेम का आधार लेकर ही साधक उस साध्य से अपनी अभिन्नता मानकर उसके साथ वस्ल प्राप्त करना चाहता है। गुरु की कृपा मे ही साधक शरीयत, तरीकत, मारिफत आदि अवस्थाओ को पार करके हकीकत की सिद्धीवस्था को प्राप्त करता है।[३] मुमताज प्रेम की सफलता के लिए ही धैर्य एव दृढ निश्चय का परिचय देता है। लक्ष्य के दूर होने पर भी प्राप्ति का दृढ-निश्चय उसे उत्साही बना देता है। तदनन्तर विवाह के रूप में 'वस्ल' (ईश्वर-मिलन) की प्राप्ति होती है।[४]

विप्रलम्भ शृंगार

अन्य सूफी-प्रेमाख्यानों की भाति इस में नायक-नायिका के विप्रलम्भ की प्रधानता है। प्रासगिक कथाओ मे भी इसका समावेश है। नाम एवं गुण-श्रवण के अनन्तर नायिका बेनज़ीर के चित्र का दर्शन करते ही नायक मुमताज के हृदय मे वस्ल की अभिलाषा के साथ ही विरहाग्नि उत्पन्न होती है। वह अपनी प्रेमिका के विरह में अपना हृदय खो बैठता है।[५] बेनज़ीर के दर्शन के अनन्तर उसके शर्तों को सुनकर वह और भी उद्विग्न हो उठता है किन्तु वस्ल के सामने उन्हें तुच्छ मानता है। वह अपनी प्रेमिका से पृथक्त्व तथा विरह को अपने जीवन का काल मानता है।[६] प्रेमिका के इस बिछुडने के कारण वह आंसुओ के बदले खून बहाता है।[७] नायिका बेनज़ीर भी अपने प्रेमी मुमताज के लिए विरहाकुल होती है। नायक द्वारा प्रथम शर्त की पूर्ति किए जाने के समय वह अत्यन्त

---

१. द्रष्टव्य—वही, पृ० १४।
२. द्रष्टव्य—वही, पृ० १५।
३. सुइ रहबर मुयबर शरीयत, सुइ मुनफहर मुयशर तरीकत,
सुइ बागे हकीकतुक कुनुय गुल, याने बजहा सु शेख फी-उल्कल—वही, पृ० ७०
४. खयअली गअय मै वस्लुक च्यवान जाम—वही, पृ० २५१।
५. पुरअह स्वोख यनअह नओव रुख हअवित मे न्यूनम चूरि दिल, दूरिह थोवनम शोरअह पानअह दूरिरुक आजार ति।—मुमताज़ बेनजीर, पृ० १२।
६. हरित प्यअमअह तअह मरित गच्छअह दर फराकत—वही, पृ० २०।
७. स्यठाह यलि आशकन कअर अजज़ोजारी, नबाचअरी होरुन क्याह खून जअरी—वही, पृ० २१।

चिन्तित हो उठती है :

प्यअमअच दर ताब व तब वा चश्म तुर आब,
गअमअच दरमान्दअह मुज़तिर बेखोर व ख्वाब ।[1]

(वह विरह के कारण व्याकुल होकर नेत्रो के निलय मे नीर छिपाये बैठी थी। वह चिन्तित एव दुखी थी । निराश्रित होने के कारण वह स्वप्नो के ससार मे खो गई ।)

विरहाग्नि को हृदय मे धारण करके मुमताज शर्तो की पूर्ति के लिये निकल पडता है ।[2] वह मार्ग की कठिनाइयो तथा प्रिय की स्मृति मे कई बार मूर्छित भी हो जाता है ।[3] इतना होने पर भी वह सच्चे साधक की भाति साहस नही खो बैठता ।

संयोग-शृंगार

इस सूफी-प्रेमाख्यान मे सयोग का चित्रण आधिकारिक कथा तथा प्रासगिक कथाओ मे भी हुआ है । वासनात्मक प्रिय की अपेक्षा निर्मल, पवित्र, शाश्वत एव दृढ प्रेम को ही उत्तम व श्रेष्ठ माना गया है ।[4] रूह अफरोज़ वासनात्मक प्रेम के पश्चाताप की अग्नि मे जलकर ही आत्महत्या करती है ।[5] मुमताज़ तथा बेनजीर का सयोग-शृगार अत्यत सयमित, शालीन तथा पवित्र है ।[6] महासुन्दर परी और नायक का सयोग-शृगार भी उच्च एव अलौकिक है ।[7]

काव्य के अन्त में नायक मुमताज़ तथा नायिका बेनज़ीर का मिलन वस्ल के अतिरिक्त और कुछ नही है :

---

१. वही, पृ० २९ ।

२. बराहे इश्क बअजी द्राव मुमताज, फराकुक साज़ व सामान ह्यत गुमनाम
—मुमताज बेनजीर, पृ० ३० ।

३. दिल बेमार ह्यत प्योमुत सु बेहोश, गुले रुखसार गोमुत ज़ैफरान पोश
—वही, पृ० ३१ ।

४. ब इश्के शहवती युस आसि मुरदार, सु खूनरेज़ी करान छुय आखिरकार
—वही, पृ० ४९ ।

५ द्रष्टव्य—वही, पृ० ५२ ।

६ स्वखन ना गुफ्ती रग्रोट अस्मतुक पास—वही, पृ० २५२ ।

७. यि अचनी ख्वोशनसीबी आयि दरकार,
चअह वअचअक ख्वोश नसीबस आखिरकार—वही, पृ० ६२ ।

वली दर तुमतराक इज़रतग्ररी,
बज़ग्रहिर ग्रास वस्लग्रच तैयग्ररी ।[१]

(वास्तव में वियोग का सारा समय प्रकट रूप मे वस्ल की प्रतीक्षा का ही एक ग्राधार था ।)

ईश्वरोन्मुख प्रेम

प्रेमिका बेनज़ीर के ग्राकर्षक सौदर्य के प्रति ग्राकर्षिक होने वाले साधक को वस्ल के लिये तलवार को धार पर चलना पड़ता है ।[२] प्रेम-साधना मे ग्रपरिपक्व साधक को उसके दर्शन दुर्लभ है ।[३] जिस साधक पर उसकी कृपा होती है उसी के लोक-परलोक के सभी दु ख मिट जाते हैं ।[४] उसके ग्रलौकिक प्रेम को हृदय मे धारण करने वाला साधक कभी भी भूलता भटकता नही । उसके लिये इश्क मजाजी तुच्छ है । गुरु की कृपा द्वारा ही उस परमसत्ता से एकमेव सभव है । इसी कारण उसकी सौदर्यमयी सत्ता की प्राप्ति के लिये साधक मुमताज़ कठिनाइयों को पार करके ग्रग्रसर होता है ।

रूप-सौन्दर्य वर्णन

इस काव्य मे रानी बेनज़ीर के रूप-वर्णन के ग्रतिरिक्त प्रासगिक कथाग्रो के ग्रन्तर्गत ग्राने वाली उप-नायिकाग्रो के सौदर्य का भी वर्णन हुग्रा है ।[५] रानी बेनज़ीर के सौंदर्य का वर्णन परम्परागत ग्राधार पर नख मे शिख तक हुग्रा है ।[६] सौदर्य में ग्रनुपमेय होने के कारण ही वह बेनजीर है ग्रौर उसके सौदर्य पर सहस्रों प्रेमी मोहित हो चुके है ।[७] मुमताज़ ही इस सौंदर्य की प्राप्ति का सच्चा साधक है । वह भी ग्रपूर्व सौदर्य से युक्त है ग्रौर तभी महासुन्दर परी उस पर

---

१. मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० २५१ ।
२. वली दुशवारतर छुइ वस्ल ग्रान यार, तमी कग्ररमग्रत्यछि ग्रज़ ताम सासग्रह बग्रद्य मार—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० १० ।
३. च् वस्लुक छुइ ख्याल खाम दर दिल,
यि मतलब जांह मे निशि सपनी न हग्रसिल—वही, पृ० २० ।
४. यमिस प्यठ फ़ज़ल खास बग्ररी, तमिस दग्रोन ग्रालमन गम कासि सग्ररी —वही, पृ० २३ ।
५. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७१, ६५, १२० ।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ९, १० ।
७. तमी कग्ररमग्रत्य छि ग्रज़ ताम सास बग्रद्य मार—वही, पृ० १० ।

आसक्त होती है ।[1] उसे मुमताज 'नूर अली नूर' रूप मे प्रतिभासित होता है ।[2] उसकी सखी रूज अफरोज़ भी मुमताज के अलौकिक रूप को देखकर उस पर विमोहित होती है किन्तु उसकी आसक्ति अलौकिक न होकर लौकिक है ।

१६—यूसुफ ज़ुलेखा[3]

कथा-सारांश—हजरत याकूब के बारह पुत्रो मे से अलौकिक सौदर्यशाली यूसुफ एक था । बाल्यकाल मे ही माता के काल-कवलित हो जाने के कारण वह अपने पिता का अत्यन्त प्रिय पुत्र बना जिसे देखकर उसके अन्य ग्यारह सौतेले भाई जलने लगे । यूसुफ का पालन-पोषण उसकी फूफी ने अपने घर ले जाकर किया और पिता याकूब उसके वियोग के कारण सदा तडपता रहता । पिता ने यूसुफ को फूफी के घर से बुलवाया । उसके दर्शन-मात्र से ही वह प्रफुल्लित हो उठा । अपने सौदर्य के कारण ही यूसुफ सारे ससार में प्रसिद्ध हो गया ।

परिचय देश के राजा तैमूस की पुत्री का नाम ज़ुलेखा था । सौदर्य मे अद्वितीय वह बाला स्वर्ग की अप्सरा जैसी प्रतीत होती थी, सात वर्ष की आयु मे ही उसने लगातार तीन रात स्वप्न में यूसुफ के दर्शन किए । तीसरी रात को स्वप्न देखते हुए उसने अपने प्रेमी से उसका पता पूछा । उसे यह ज्ञात हुआ कि वह मिस्र के राजा का वज़ीर अज़ीज़ है । ज़ुलेखा ने अपने पिता से स्व-प्रेम का रहस्योद्‌घाटन किया और तत्पश्चात् प्रेमी से मिलने के लिये मिस्र की ओर आई । वज़ीर का दर्शन करते ही उसके नेत्रों से आंसुओं के बदले रक्त की बूदे गिरने लगी । इस मृगतृष्णा की अतृप्त वितृष्णा से उसका हृदय चिन्ताकुल हो उठा । यह वह युवक नही था जिसका दर्शन उसने स्वप्न में किया था । अजीज़ की पत्नी के रूप में वैवाहिक बन्धन निभाते हुए उसे मिस्र में ही रहना पडा । इस प्रकार कई वर्ष व्यतीत हुए किन्तु अपने प्रेमी यूसुफ के अभाव में उसे सम्पूर्ण प्रकृति नीरस दिखाई देती थी ।

एक रात यूसुफ ने स्वप्न मे ग्यारह तारकों के साथ सूर्य तथा चंद्रमा को अपने प्रति अभिवादन करते देखा । उसने अपने पिता को इस रहस्य से परिचित

---

१. अपुन बर सूरते असल सु मुमताज़, परी शँदा तमिस गअयि डेशवुनवुय—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० ३३ ।

२. तिथुय चअह ति छुक मे निश नूर अली नूर—वही, पृ० ५६ ।

३. यूसुफ ज़ुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', सराबली, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगज बाज़ार, श्रीनगर, कश्मीर, प्रति प्रयुक्त ।

किया किन्तु अपने सौतेले भाइयो से इसे गुप्त रखा। सौतेले भाइयो ने यह रहस्य किसी न किसी रूप में जान लेने पर यूसुफ को मारने की युक्तिया सोची। मरुस्थल में ले जाकर वे उसे अन्धकूप मे गिराकर घर लौटे। उन्होने प्रसिद्ध कर दिया कि उसे भेडिया खा गया। पिता याकूब शोकाकुल होकर रोते-रोते अन्धा हो गया।

मरुस्थल से जाने वाले एक कारवा के सौदागर के आदमियो ने यूसुफ को अन्धकूप से बाहर निकाला। सौतेले भाइयो ने तत्काल वहा पहुचकर यूसुफ को अपना दास बताते हुए सौदागर के हाथ बेचा। कारवा के साथ यूसुफ मिस्र पहुचा जहा जुलेखा के कथनानुसार उसे खरीदा गया और वह दास बनकर वजीर अज़ीज़ के घर रहा। अपने प्रेमी का दर्शन करके जुलेखा अत्यन्त प्रसन्न हुई। स्वामी-भक्त तथा प्रभु-भक्त यूसुफ ने वहा रहकर अपनी सच्चरित्रता एव पवित्रता का परिचय दिया। जुलेखा ने एक बार प्रेम की अतिशयता के कारण भागते हुए यूसुफ का कुर्ता पीछे से पकडा जो फट गया। निर्दोष यूसुफ को ही जुलेखा के कथन पर अज़ीज़ ने दोषी ठहराया किन्तु नगर-भर मे जुलेखा की ही अपकीर्ति फैल गई। जुलेखा ने अपने आपको युक्तिपूर्वक निर्दोष सिद्ध करने के लिये उन नारियो को बुलवाकर काटने के लिये कुछ फल दिये। यूसुफ के सौंदर्य के वशीभूत उन नारियो ने अपने ही हाथ छुरी से काट डाले। इस प्रकार अपने आपको निर्दोष सिद्ध करके जुलेखा ने अपकीर्त्ति से बचने का प्रयत्न किया। बेचारा यूसुफ कारागार मे डाल दिया गया। जुलेखा प्रति रात्रि को उसे वहा मिलने जाती। अपनी प्रेम-विह्वलता का वरदान वह सदा उसके सामने किया करती थी।

कारागार मे यूसुफ ने दो कैदियो को स्वप्न-फल बता दिया उसके स्वप्न-फल की भविष्यवाणी के अनुरूप ही एक कैदी राजा का कृपा-पात्र बना और दूसरा काल-कवलित हुआ। राजा ने भी एक बार स्वप्न देखा, इसलिये कृपा-पात्र बने कैदी के कथानुसार यूसुफ को उसका फल बताने के लिये बुलवाया गया। यूसुफ के कथनानुसार ही उस नगर में पहले सात वर्ष अन्न का पर्याप्त उत्पादन हुआ और बाद के सात वर्षों मे सूखा पड़ा। राजा ने उस स्वप्नफल को सुनकर यूसुफ के कहने पर ही प्रथम सात वर्षो मे उत्पन्न हुए अन्न को दुर्भिक्ष के सात वर्षों के लिये भण्डारो मे सुरक्षित रखा था। उसकी भविष्यवाणी को शतश सिद्ध देखने वाले राजा ने यूसुफ को राज्य का उत्तराधिकार सौप दिया। इसी बीच वजीर अज़ीज़ की भी मृत्यु हुई। यूसुफ के समय दुर्भिक्ष के दिनों मे लोगो को किसी भी प्रकार का दुःख अनुभव नही हुआ।

जुलेखा वियोगाग्नि से विह्वल हो रही थी। प्रिय की प्राप्ति के लिये पूज्य

मूर्त्ति को भी उसने अपनी असफलता के परिणाम स्वरूप तोड़ डाला। दीवानी होकर वह इधर-उधर घूमने लगी। विरह के कारण वह वृद्धा भी बन गई। जब यूसुफ के साथ उसका साक्षात्कार हुआ, वह पुनः सौंदर्य को प्राप्त करके युवती बन गई। दोनो विवाह-बधन मे वध गए।

दुर्भिक्ष के दिनो मे वहा आए हुए भाइयो को उसने काफी अनाज दिया। अपने पिता याकूब को एक वस्त्र भिजाकर उसने उसे पुनः नयन-ज्योति प्राप्त करवाई। यूसुफ का पता पाकर जब उसका पिता याकूब ऊट पर बैठकर उससे मिलने मिस्र आया, उस समय मार्ग मे ही उसकी इहलोक लीला समाप्त हुई। उसके स्वागत को निकला यूसुफ भी पिता के शोक से खिन्न होकर परमधाम को सिधार गया। जुलेखा का भी अपने प्रिय के वियोग मे कवर पर पहुचकर प्राणान्त हो गया।

कथा का आधार तथा संगठन

इस काव्य के चार आधार हैं :

१—कुरान में वर्णित कथा, २—जामी की यूसुफ-जुलेखा,
३—गामी की यूसुफ-जुलेखा तथा ४—कश्मीर मे प्रचलित कथा।

१—कुरान में वर्णित कथा

कुरान की 'सूरए यूसफ मक्की रुकू' १२ आयत १११ के अनुसार इस काव्य में प्रारम्भ से लेकर याकूब की नेत्र-ज्योति की प्राप्ति तक की कथा एक जैसी है। कवि ने अपनी मौलिक उद्भावना के आधार पर 'यूसुफ जुलेखा' मे कुछ ऐसी बातों का वर्णन किया है, जो कुरान मे वर्णित नही हैं। इस मे जुलेखा के जिस स्वप्न,[1] नखशिख,[2] यौवन,[3] विरह,[4] अज़ीज़ के साथ उसका विवाह,[5] सौदर्य-हीनता[6] तथा गार्हस्थ्य-जीवन[7] की झांकी प्रस्तुत की गई है, वह कुरान में नहीं

१. द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, पृ० १२-१८।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० १०-११। ३. द्रष्टव्य—वही, पृ० १२।

४. द्रष्टव्य—वही, पृ० २०-२३, ४४-४८, ७६-७८।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ० १६।

६. बुडेमअच् गाश रअछ् गअमअच सअह् अबतर, हटेमअच् तअ बुडेमअच् दिलस शर—वही, पृ० ५७।

७. तिमन दअोन यलि यकसान पूर सअंपन, च़्वान मस लोलकी यकजान सअंपन—वही, पृ० ६०।

है । यूसुफ तथा ज़ुलेखा के निधन का वृत्तान्त भी कुरान में नही मिलता ।[१] इन सभी बातो के समाविष्ट किए जाने का एकमात्र कारण यही है कि 'इश्क-हकीकी' की प्रधानता को ही प्रकट करना चाहता है ।[२] पहले परकीया तदुपरान्त अज़ीज़ की मृत्यु के पश्चात् स्वकीया के रूप मे ज़ुलेखा का चरित्र हमारे सम्मुख आता है । इतना अवश्य है कि कुरान की भाति दो कैदियो को यूसुफ द्वारा स्वप्न-फल बताया जाने वाला प्रसग इस मे आया है ।[३]

२—जामी की 'यूसुफ ज़ुलेखा'

'मिसकीन' पर जामी का प्रभाव परिलक्षित होता है जिसे स्वय कवि ने अपने इस प्रबन्ध-काव्य मे स्वीकार किया है ।[४] ज़ुलेखा के मिलन,[५] विवाह तथा गार्हस्थ्य-जीवन मे दाम्पत्य-प्रेम का चित्रण कवि ने उसी के आधार पर किया है ।

३—गामी की 'यूसुफ ज़ुलेखा'

'मिसकीन' ने अपने पूर्ववर्ती कवि गामी की 'यूसुफ ज़ुलेखा' का अध्ययन किया था ।[६] उसी की भाति इस काव्य मे नायिका ज़ुलेखा के नख-शिख तथा स्वप्न आदि का वर्णन हुआ है । गामी की अपेक्षा 'मिसकीन' की 'यूसुफ ज़ुलेखा' अधिक वर्णनात्मक है अतः इस मे कई ऐसे प्रसग है जो गामी की लघु आकार वाली 'यूसुफ ज़ुलेखा' वाली कृति मे उपलब्ध नही है । दोनो काव्यो में यूसुफ को नबी मानकर प्रशसा की गई है जो सदा अपनी सच्चरित्रता का दृढ परिचय देता है । उसे हज़रत[७] तथा अली-उल-सलम[८] भी कहा गया है ।

---

१. परित अल्लाह मरित गअछि ताम बाहक, तमी ति गवनह ख्वोश दुनियअई नासाज—वही, पृ० ७८ ।
२. तमिस अदअह छुयनअह दुबारअह मयरुन ज़ाह, हकीकत ज़ान ई गव किस्सह कोताह—वही, पृ० ७६ ।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५४, ५५ ।
४. छु वओन्मुत जामियन अम्यसुन्द स्रापा, छु है पउरमुत तअ वुछ अन्दर ज़ुलेखा—यूसुफ ज़ुलेखा, पृ० १२ ।
५. अज़ीज़स कुन दपन अन्तन बकअमत, बजल्दी ऐ गुलाम नेक सीरत—वही, पृ० ३२ ।
६. वओन महमूद गअमियन मुख्तसर पअठ्य, परान तत रात दोह छी रब्ब सअन्य—वही, पृ० ५ ।
७. द्रष्टव्य—वही, पृ० १५ ।
८. द्रष्टव्य—वही पृ० ४४ ।

४—कश्मीर में प्रचलित कथा

यूसुफ जुलेखा' की यह कथा किसी न किसी रूप मे कश्मीर मे प्रचलित रही है।[1] इस मे बताया गया है कि जब यूसुफ ने अपनी प्रेमिका जुलेखा के महल मे उस की यवनिका-आवेष्टित पूज्य गृह-मूर्ति को देखा तो उसके मन मे सन्देह हुआ क्योकि पर्दा डालने का भाव था—गृह-मूर्ति से छिप कर पाप क्रीड़ा करना।[2] ऐसी अपरम्परागत भावना से सशंकित यूसुफ ने पूछा था :

'अति क्याह थोवुत असि कोनअह होवुत,
दोपनस छुम ख्वदा यार बोजक ना।'[3]

(यूसुफ ने पूछा—इस यवनिका के नीचे क्या छिपा हुआ है। जुलेखा ने उत्तर दिया—यह मेरा प्रभु है जो इसके नीचे छिपा हुआ है। मेरे प्रिय! क्या मेरी बात अब भी नही मानोगे।)

वह पुनः कहता है—'खुदा गव सुइ मन पनने कस द्वय,
शोलन छु शमा यार बोजक ना।'[4]

(यूसुफ ने कहा कि वास्तव मे एक ही ईश्वर है। द्वैत-भाव का यह विभेद अपने मन से बाहर निकाल कर फेंक दे।)

कवि 'मिसकीन' ने अपने काव्य 'यूसुफ जुलेखा में जिन मिलन-सुख के चित्रों का चित्रण किया है, उसका प्रभाव कश्मीर की इसी प्रचलित कथा के आधार पर समझा जा सकता है। जुलेखा ने अपनी किसी प्रौढा दाई के द्वारा अपने महल मे नायक यूसुफ के कुछ चित्र भित्ति-पट पर अंकित करवाए। ये मिलन-सुख के चित्र केवल यूसुफ को वशीभूत करने के लिए ही बनवाये गए थे।[5] यूसुफ उन

---

१. द्रष्टव्य—हातिम्ज़ टेल्ज़ (कश्मीरी स्टोरीज़ एण्ड सांग्स), पृ० ३३।

२. When Zuleikha tempts Joseph she puts a veil before the image of her household idol, that it may not become aware of her Unchastity. This arouses Joseph's suspicions.
—वही, पृ० ३३, पाद टिप्पणी।

३. Yusuf—'On what hast thou put a veil? What hast thou displayed to us?'
Zuleikha—'It is my God (that I have veiled), wilt thou not hear, O beloved.' —हातिम्ज़ टेल्ज़, पृ० ३३।

४. Yusuf—'There is but One God. Cast from thy mind the belief of dualism.' —हातिम्ज़ टेल्ज़, पृ० ३३।

५. सु यूसुफ तअ जुलेखा बिलमुकअब्लि, बनोवुन अक अकिस कुन हर दो बाबल, अकिस अक दर बगल आस्य रॅटत तिम, मुहबे अज़ जान बयक दीगर खटित तिम—यूसुफ जुलेखा, पृ० १३।

चित्रो को देखकर विस्मित हुआ था।[१]

इस प्रकार के प्रसगो का प्रभाव कवि 'मिस्कीन' पर ही दृष्टिगोचर होता है, गामी पर नही।

इन सभी बातो के होते हुए कवि के कथा-सगठन में नवीनता तथा मौलिक उद्भावनाओ का पुट मिलता है। कथारम्भ मे हम्द,[२] नात,[३] हजरत मुहम्मद,[४] अमीर कबीर सैयद अली हमदानी की प्रशसा[५] तथा पूर्ववर्ती कवि गामी की प्रशसा हुई है।[६] कथा का आरम्भ हजरत यूसुफ की महत्ता के साथ-साथ ही हुआ है।[७] कथा के प्रसगो को शीर्षको के अन्तर्गत बाट दिया गया है। याकूब तथा जुलेखा की यूसुफ के प्रति विरह-वेदना अत्यन्त करुणाजनक है। काव्य के अन्त मे कवि ने अपने पीरो के लिये ईश्वर-कृपा की कामना करते हुए अपने प्रमुख पीर मौलवी इहैया का भी आदर-सहित उल्लेख किया है।[८]

प्रेम-पद्धति

नायिका जुलेखा का प्रेम स्वप्न-दर्शन से उद्भूत होता है। वह अपने प्रेमी का दर्शन तीन बार स्वप्न में करती है।[९] यूसुफ अपने ईश्वरीय गुणो तथा सौंदर्य से सारे विश्व में प्रख्यात है।[१०] उसे प्राप्त करने का प्रयास नायिका की ओर से होता है क्योकि वह साधारण प्रेमी न होकर स्वय अल्लाह है।[११] उसकी प्राप्ति के लिए वह आखो के मार्ग से आंसुओ के वदले खून बहाती है।[१२] स्वप्न-दर्शन

---

१. वुछन दर हर तरफ यूसुफ-जुलेखा, शोगित ज़न हर दो तन यकजा बाहर जा, जि हर जअनिव वुछन तिम ताब बिस्तर, जुलेखा वुछिन पानस सअत्य दरबर—वही, पृ० ४५।

२. द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, पृ० २।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।
५. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५।
७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७९।
९. द्रष्टव्य—वही, पृ० १२-१८।

१०. बदी हुस्न व जमाल व नाज़ साज़ह, प्यमुत ग्रोस आल स तम्यसुन्दर आव-ज़ाह—वही, पृ० ८।

११. मे हावुम रवी यूसुफ या इललअही, गोमुत छुम शौक तिहिन्दी सीनअह बिरयानह वही, पृ० ८।

१२. नमन म्यच़ चायि तस यछ़ करअन जहरी, अछ़्यव किन्य खून दिल यिछ़ गोस जअरी—वही, पृ० २१।

के समय से ही वह उसके मिलन के लिये व्याकुल हो उठती है ।[1] इसी अभिप्राय-सिद्धि के लिये वह मिस्र की ओर अग्रसर हो जाती है और अपने प्रेमी को न पाकर अज़ीज के साथ विवाह करने पर विवश हो जाती है ।[2] अन्त मे वह अपने इष्ट को प्राप्त करती है तथा परकीया से स्वकीया का स्वरूप ग्रहण करके तादात्म्य स्थापित करती है ।

प्रमतत्व

कवि ने काव्य के आरम्भ मे 'हम्द' के अन्तर्गत यह प्रार्थना की है कि उस का हृदय 'इश्क हकीकी' मे उत्फुल्ल हो उठे । मारिफत की अवस्था को प्राप्त कर वह उस हकीकत के साथ एकमेक हो जाये ।[3] सच्चा साधक सासारिक बन्धनो से मुक्ति पाने के लिए ही प्रेम का मार्ग अपना लेता है ।[4] मूर्ति-पूजा केवल बाह्याडम्बर है और तभी जुलेखा लक्ष्य-प्राप्ति मे उसे असहायक जानकर यथार्थता का आभास पाकर उसका खण्डन करती है ।[5] प्रेमाग्नि मे जलने वाला सच्चा साधक उसी समय ईश्वर के दर्शन कर सकता है जब उसका प्रेम परिपक्व तथा दृढ रूप धारण करता है अन्यथा वह मूर्छित होकर गिर पड़ता है ।[6] साधक को उसका सौंदर्य प्रकृति के कण-कण मे प्रतिबिम्बित दिखाई देता है । वह जीव में भी उसी के दर्शन करता है ।[7] तादात्म्य हो जाने पर ही भेद-भाव मिट जाता है । एकत्व का अननुभूत आनन्द प्राप्त करके ही प्राणी अपनी अन्तिम मञ्जिल पर

---

१. जुलेखा ह्यनह इश्कअनि ज़ालि यलि लअज, न्येन्द्र रअवअस चन्द्र हिश ज़न ज़न गअज—यूसुफ जुलेखा, पृ० १४ ।

२. द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, पृ० १६-२० ।

३. बजाए मारिफत मखमूर करतम, अन्वार हकीकत सीनअह् बरतम —वही, पृ० २ ।

४. यि दुनिया कअसि हुलद छुइनह वफादार, तवै रूद अभि निशि लौब तअम्य नकोकार छि तिअम रअज़ी बतकदीर खुदावन्द, सना परुन बमेहनत शाद व खरसन्द—वही, पृ० २५ ।

५. अथस क्यथ तुलुन तामत सगरवारअह, प्वतुल फुटरुन क्वरुन तत पारअह् पारअह—वही, पृ० ५६ ।

६. वुछुन यामत सु यूसुफ गयि बेहोश, ज़ि बेहोशी दुबारअह आयि दर होश —वही, पृ० ३३ ।

७. बअ तम्यसुन्द अक्स छुस असलस निशि गछअह, बअ सुइ अक्स गछह अक्सस मे कर पज़ि ।—वही, पृ० ३३ ।

पहुंचता है ।[1] अजीज वजीर जैसे लौकिक प्राणी ईश्वरीय प्रेम नही कर सकते ।

विरह तथा ईश्वरोन्मुख प्रेम

इस काव्य मे लौकिक कथा के आधार पर अलौकिकता का आभास मिलता है । याकूब तथा जुलेखा दोनो का प्रेम ईश्वरोन्मुख है जिसकी ओर वे आकृष्ट होते हैं । यूसुफ देव-पुत्र तथा पयम्बर-पुत्र है ।[2] इस ईश्वरोन्मुख प्रेम के समय याकूब तथा जुलेखा दोनो सासारिक बन्धनो को तुच्छ समझते है । याकूब वात्सल्य के विरह से सताया हुआ होने के कारण अपने पुत्र से मिलने के लिए मिस्र की ओर आने के समय कई प्रकार की कठिनाइयां झेल लेता है ।[3] मरुस्थल मे प्राणान्त होने के समय उसका तादात्म्य ईश्वर के साथ होता है ।[4] इसी प्रकार जुलेखा का जीवन भी ईश्वर-प्रेम से पवित्र बन गया है ।[5] वह उसे खरीदने के लिए सर्वस्व लुटा देती है ।[6] ईश्वर-प्राप्ति के लिए जब वियोगावस्था अभिभूत हो जाती है तो प्रेमिका को प्राकृतिक-सौदर्य भी वियुक्त तथा प्रेरणाहीन दिखाई देता है । वह प्रकृति के साथ सहानुभूति प्रकट करके उस भी अपने प्रिय के विछोह के कारण दुःखी समझ कर कहती है :

> गुलालस अअस दपान क्याह गोमुत छुय,
> च ति दागाह चो मन बर दिल प्योमुत छुय ।[7]

(हे प्रिय गुलाल । तुम्हारी यह अवस्था क्या से क्या क्यो हो गई । क्या तुम्हारे हृदय मे भी प्रिय के वियोग के कारण ही यह दाग पड गया है ।)

---

१. बखूबी अक अकिस बओरहै मोहब्बत, सपुन तिम अक अकिस प्यठ तीत्य जानबाज,—वही, पृ० ६० ।

२. (क) सु यूसुफ ओस मानन्द परीज़ाद, ज़ि शअही ब शबअनी मर्द आजाद—यूसुफ-जुलेखा, पृ० ३७ ।

(ख) मे सअत्यन यत फ़सूनस मुल्तसर कर, बअ छुस पअज़्य पअठ्य फरज़न्द पयम्बर—वही, पृ० ३६ ।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६८-७३ ।

४. सु याकूब गव यलि अज़ दार फअनी, वसाले हक लओबुन तअम्य जावदानी—वही, पृ० ७३ ।

५. कअरअक दर इश्कबअज़ी पाक बअज़ी, लेखव द्रोन आलमन हअज़ सर फरअज़ी—वही, पृ० ७६ ।

६. च् पत माल व खज़नअह नब्ज़ रोवुम, जवअनी त अछिअन हुन्द गाश रोवुम—वही, पृ० ५७ ।

७. वही, पृ० २२ ।

ईश्वरोन्मुख प्रेम के सामने उसे सब-कुछ अर्थहीन दिखाई देता है।[1] सासारिक बन्धनो से मुक्त होकर जुलेखा का प्रेम जितना प्रगाढ बनता चला जाता है। उतनी ही उसकी लोक-लाज मिटती चली जाती है। यहा ईश्वर की कल्पना जुलेखा के रूप मे न होकर प्रियतम के सौदर्य के आधार पर की गई है। इसी सौदर्य से एकत्व प्राप्त करने का वियोग जुलेखा को पग-पग पर सताता है क्योकि यूसुफ उसके लिए सृष्टि का प्रमाण है। वहदानियत (एकत्व) के लिए प्रयत्नशील रहकर वह यूसुफ की कब्र पर ही अपने प्राण त्याग देती है।[2] यही 'फना' (निर्वाण) के अनन्तर 'बका' (अवस्थिति) की अवस्था है।

संयोग शृंगार

कवि ने स्वकीया के रूप मे जुलेखा के सयोग का वर्णन अत्यन्त सयमित रूप मे वर्णित किया है। पति-पत्नी दोनो एक-दूसरे से प्रेम करते है, तथा उनके लिए वही क्षण मूल्यवान् बन जाता है।[3] वे दोनो एकत्व का मधुपान करते हैं।[4] परकीया के रूप मे जब कभी जुलेखा ने सम्भोग का प्रयत्न किया था, यूसुफ उसे ठुकराता रहा। देव-पुत्र होने के नाते उसने सदा अपनी सच्चरित्रता का परिचय दिया।[5]

रूप-सौंदर्य वर्णन

इस प्रबन्धकाव्य में जुलेखा तथा यूसुफ दोनो के सौंदर्य का वर्णन हुआ है। जुलेखा के रूप-सौदर्य का वर्णन कवि ने परम्परागत आधार पर ही किया है।[6] विभिन्न अलकारो का आश्रय लेकर कवि ने इसके रूप-सौदर्य का वर्णन नख से

---

१. वति प्यठ द्रायि यारस अअस प्रारान, पनुन सुय आवनक महबूब छांरान —यूसुफ जुलेखा, पृ० ५६।

२. सपुन व असल बहक गयि महव मुतलक, परित अल्लाह मरित गअयि ताम बाहक, तभी ती गवनह ख्वोश दुनियाइ नासाज़, बताज वस्ल जानान गयि सर फराज़—वही, पृ० ७८।

३. सु वक्ताह क्याह गनीमत द्वोन व अन्य ओस,
अजब फसले बहारान बुलबुलन ओस—वही, पृ० ६०।

४. च्यवान मस लोलकी यकजान सअंपन,
वनय क्याह लोल मस च्यत मस्त क्याह गअय—वही, पृ० ६०।

५. दओपुस तअम्य खोफ मे छुम दर कयामत,
जिनाकारन अन्दर प्यमअह दर नदामत।—यूसुफ जुलेखा, पृ० ४५।

६. द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, पृ० १०-१२।

शिख तक किया है। उसके केशों का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है :

जि सर बरपा प्यवान तस जुल्फ गहमार,
बुछन वुछान करअन सद खून बयकवार।[1]

(उसके सिर से लटकने वाली जुल्फे नागो की भाति एक ही समय देखने वालो के सौ खून कर देती थी।)

इसी प्रकार कवि ने नायिका की ठोडी का वर्णन करते हुए कहा है :

होग्यन तस खुशनुमा सेब समरकन्द[2]

(उसकी ठोडी समरकन्द के सेब जैसी चित्ताकर्षक दिखाई देती है।)

कवि ने नायिका के नेत्रो, दातो, गर्दन, वक्षस्थल, कमर तथा घुटनो आदि सबका वर्णन किया है।

यूसुफ के रूप-सौदर्य का वर्णन कवि ने तीन स्थानो पर किया है। प्रथम बाल्यकाल के समय[3] तथा दूसरा उस समय जब जुलेखा उसे स्वप्नावस्था मे देखती है।[4] तृतीय वर्णन उस समय हुआ है जब वह दूल्हा बनकर जुलेखा से विवाह करने के लिए आता है।[5] अपने इसी व्याप्त सौदर्य के कारण वह अत्यन्त प्रसिद्ध है। उसका मस्तक ज्ञान के प्रकाश से पूर्ण है।[6] उसका प्रभावपूर्ण सौदर्य ही जुलेखा को वशीभूत करता है।[7] दूल्हा बन जाने के समय वह सबको विमोहित करता है।[8]

अन्य सूफी प्रेमाख्यानो की भाति इसमे नायिका अथवा जुलेखा को ईश्वर के अश मे मान्यता नही मिली है। इसी कारण उसके रूप-वर्णन मे कही भी रहस्य-मय परोक्षभाव चित्रण नही हुआ है। उसका रूप-वर्णन केवल सौदर्य-मात्र है।

भाषा—इस मे कवि ने बीच-बीच मे जो गजले कश्मीरी भाषा मे ही दी है,[9]

---

१. द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, पृ० १०। २ द्रष्टव्य—वही, पृ० ११।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७, ८। ४. द्रष्टव्य—वही, पृ० १२-१८।
५ द्रष्टव्य—वही, पृ० ५८-६०।
६. ड्यकअ रोशन तसुन्द ज्ञन लमये नूर, प्यवान पर तो गटे मज़ चश्म-बद्-दूर —यूसुफ जुलेखा, पृ० ८।
७. वुछुन दर ख्वाब अक दिलकश जवानाह,
रंबवुन शूबवुन रैणा तअ ज़ेबा—वही, पृ० १२।
८. वुछित हअरान गछान अअस्य खास त आम,
दपअनी ओस हर काह क्याह बनित आम—वही, पृ० ५८।
९. द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, पृ० १५, १८, २०, २२, ४१, ४४, ४७, ५६, ५९।

उन के साथ ही उसने पूरी गजले उर्दू मे भी दी है।[1] भाषा तथा भाव मे वह कुछ-कुछ गामी से प्रभावित दिखाई देता है। गामी ने अपने 'यूसुफ जुलेखा' मे कहा है :

कअम्य चे लोयी तस आयो ना आर मन्दहृवाने खूबसूरहा ।[2]

(हे मेरे प्रियदर्शी पुत्र ! तुम्हे किसने मारा। उसे तुम पर क्या तनिक भी दया न आई।)

इसी से प्रभावित होकर कवि 'मसकीन' ने कहा :

कअम्य लअई चे अनजअन गर्दनी स्राक,
चे मा आसी यारह तमि विजि त्रअवथम बाक ।[3]

(जिस अनजान ने तुम्हारी गर्दन पर वार किया, हे मेरे प्रिय पुत्र ! उस समय तुमने आखों से अश्रुधारा क्यो नही बहाई होगी।)

१७—गुलनूर-गुलरेज़[4]

कथा-सारांश—तीन अभिन्न मित्र व्यापार के लिए यात्रा करते हुए गुल अन्दाम नगर मे पहुचे। वहा के जलवायु के कारण उनमे अनबन हुई और वे न्याय के लिए वहा के राजा के पास समुपस्थित हुए। तीनो मित्रो ने एक महाजन से यात्रा-पूर्व एक सहस्त्र दीनार उधार लिये थे जिसे वापस करने के लिए वे किसी निर्णय पर नही पहुच सके थे। निर्णय के लिए यह आवश्यक समझा गया कि तीनो कलाविद् मिल अपनी उत्तमता सिद्ध करने के लिए किसी न किसी श्रेष्ठ वस्तु की रचना करे। राज्याज्ञा प्राप्त कर सुनार ने एक मछली, लुहार ने बालियो की एक जोड़ी तथा बढई ने लकड़ी का एक घोडा जैसी वस्तुए निर्मित की। इनमे घोडा हज़रत खिज्र के आशीर्वाद से आकाश मे वायु-वेग से उड सकता था। इन तीनो वस्तुओ का परीक्षण करते समय जब गुलफाम नगर के राजा का पुत्र मेहतर अली (दिलाराम) घोड़े पर सवार हुआ, तभी वह उड गया। उस पर बैठे दिलाराम ने उसे समन नगर की राजकुमारी गुलनूर के पास ले जाने की आज्ञा दी। दिलाराम ने इस राजकुमारी के दर्शन स्वप्न मे किए थे। घोडे के उड जाने पर राजा दुःखी हुआ। निर्णय तो दूर रहा, उन तीनों

---

१. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३८ ५०।
२. द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, गामी, पृ० ७।
३. यूसुफ जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २७।
४. गुलनूर-गुलरेज़, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगज बाज़ार, श्रीनगर, कश्मीर, प्रति प्रयुक्त।

कलाविद् मित्रो को बाज़ीगर मानकर राजा ने अपने मत्री के कहने पर बन्दीगृह मे डाल दिया।

एक सप्ताह अनन्तर दिलाराम समन नगर मे पहुचा। वहा एक नानवाइन ने उसे गुलनूर की सौदर्य-सम्बन्धी और भी बाते बताकर उसके निवास का पता बता दिया। सकेत पाते ही दिलाराम घोडे पर बैठकर उसे मिलने गया। प्रथम दर्शन करते ही वह उसके सौदर्य के वशीभूत होकर पृथ्वी पर गिर पडा। नायिका गुलनूर भी विरहाग्नि के कारण बीमार हो गई। उसका पिता यह जानने के लिए उत्सुक हुआ कि सात गढो के मध्य रहने वाली उसकी पुत्री गुलनूर के हृदय मे यह प्रेमाकुर किसने बो दिया।

दिलाराम अपनी प्रेमिका गुलनूर से मिलने के लिए प्रायः प्रतिदिन उद्यान मे आ जाता। गुलनूर के पिता ने उस उद्यान मे एक गुप्त कुआ खुदवाकर और उस मे काला रग डलवाकर दिलाराम को पकडवाने की युक्ति सोची। इस युक्ति के सफल हो जाने पर दिलाराम को मारने के लिए एक जल्लाद को सौंप दिया गया किन्तु वह घोडे की सहायता मे भाग गया। गुलनूर अपनी दासी से दिलाराम के भाग जाने की सूचना पाकर हर्षित हुई और उसने उसे यह शुभ सूचना देने पर पांच सौ दीनार पारितोषिक के रूप में दे दिये। अब प्रेमी तथा प्रेमिका प्रत्येक साय मिलते और उन मे प्रेमालाप हुआ करता था।

एक बार दोनो घोडे पर बैठकर समंगा नगर मे पहुचे। धन-अभाव के कारण उन्हें वहा काफी कष्ट उठाना पडा। गुलनूर ने वापस समन नगर जाकर वहा से धन लाने का प्रस्त व दिलाराम के सामने रखा जिसे उसने सहर्ष स्वीकार कर लिया। घोडे पर बैठकर जब वह घर पहुची और रुपयो की थैली हाथ में लेकर वह बाहर आई तो वहा घोडा न था। वह उस स्थान से उडकर कही अन्यत्र चला गया था। वह देखकर गुलनूर पर वज्रपात हुआ। वह वियोगाग्नि में जलने लगी। उधर से दिलाराम भी गुलनूर की प्रतीक्षा करते-करते अत्यन्त विह्वल हो उठा। उसके लिए प्रेमिका से मिलन के लिए समन नगर पहुचना अत्यन्त कठिन था। पथ की कठिनाई और मार्ग की अज्ञानता के कारण वह विह्वल हो उठा। सयोगवश उसने वृक्ष पर बैठे दो पक्षियो का वार्तालाप सुना, जिसका श्रवण करके उसे समन नगर पहुच जाने की विधि मिल गई। अब वह नदी-तट पर पहुंचा। जहाज के एक टूटे खण्ड पर बैठकर वह एक दिन तट के साथ लगा। वहा प्रासाद था। क्षुधातुर दिलाराम के भीतर जाने पर अत्यन्त सम्मान हुआ। उसमे निवास करने वाले ख़्वाजा ने उसे अपने जहाज़ पर बिठाकर समन नगर पहुचा दिया। वहां गुलनूर-गुलरेज़ का विवाह चीन के राजा के साथ निश्चित हुआ था और इस प्रसन्नता के उपलक्ष्य में बाजे, सतूर तथा साज़

आदि बज रहे थे। पूर्व परिचित नानवाइन ने पुनः दिलाराम को अपनी प्रेमिका का दर्शन कराने मे सहायता दी। वह स्त्री का रूप धारण करके अपनी प्रेमिका से जा मिला। दोनो इस सयोग के कारण हर्षित हुए। वहा से दोनो भागकर गुलफाम की ओर भाग चले। अपकीर्ति से बचने के लिए राजा ने अपने वज़ीर की पुत्री का विवाह चीन के राजा के साथ सम्पन्न कराया।

गुलफाम पहुचने से पहले ही गुलनूर तथा दिलाराम विवाह-बन्धन मे बन्ध गए। दिलाराम अपनी पत्नी गुलनूर को एक स्थान पर रखकर स्वय अन्न की तलाश मे निकला। एक डायन नानवाइन उसके सौंदर्य पर मोहित हुई और उसने दिलाराम को मत्र फूक कर अपना बन्दी बना लिया। गुलनूर विरहाग्नि से दग्ध हुई। वह पुरुष-वेष धारण करके अपने पति की खोज मे निकल पडी। अपना नाम फतेह अल्लाह रखकर उसने वहा के राजा शहरयार को उसके शत्रु दिलबर खा के परास्त करने मे सहायता दी। इस पर राजा ने प्रसन्न होकर अपनी पुत्री गुलबानो का विवाह छद्मवेषी गुलनूर के साथ किया। उसने पति की तलाश को जारी रखते हुए अन्त मे उस डायन नानवाइन को मार कर दिलाराम को छुडवा दिया। अन्ततः रहस्य खुल जाने पर गुलबानो का विवाह भी पिता की इच्छानुसार दिलाराम के साथ हुआ। उन तीनो का जब वापस गुलफाम मे आगमन हुआ तो तीनो कलाविद् मित्र कारागार से मुक्त किए गए।

कथा का आधार तथा संगठन

काव्य के अन्त मे कवि ने इस कथा के आधार की ओर सकेत करते हुए कहा है कि उसे इसकी प्रेरणा 'नूर अली नूर' नामक रचना को पढ़ने से मिली।[1] उर्दू भाषा मे लिखित इस पद्यमय रचना के अन्तर्गत ही उसने गुलनूर तथा उसके प्रेमी दिलाराम की कथा का अध्ययन किया।[2] इसी कथा से प्रभावित होकर कवि ने उसे नवीन रूप प्रदान किया।[3] पूर्व-परिचित रेखाचित्र में

१. मरतब छय गमअच नूर अली नूर, किताबा ताजोतर वुछमअच मे मज़मून —गुलनूर-गुलरेज, पृ० ५९।

२. वुछिम उर्दू किताबा नज्म बरपूर, दपान तथ नाव छुय मशहूर गुलनूर, परिथ किस्सह तम्यकुय मतलब अथी आम, गमुत गुलनूरिह प्यठ आशक दिलाराम—वहीं, पृ० ७।

३. उम्मेद छम वातअह अन्दर फज़ल अल्लाह, नविस म्येछर ज्यादअह प्रानि ख्वोतहु—गुलनूर-गुलरेज़, पृ० ७।

ही इस प्रकार रग भरकर उसने नायिका गुलनूर के प्रेम का प्रकटीकरण किया है।[१] उस नूर-अली-नूर (गुलनूर-गुलरेज) के उद्यान मे वस्ल (ईश्वर-मिलन) के सभी पुष्प अपने पूर्ण यौवन पर होने के कारण सौदर्य-युक्त हैं, जिनका दर्शन करके दिलाराम जैसा प्रेमी तादात्म्य चाहता है।[२]

मिसकीन ने इस काव्य के अन्त मे इसका पूरा नाम 'गुलनूर-गुलरेज़' दिया है।[३] काव्य का सगठन करते हुए कवि ने कथारम्भ से पूर्व हम्द,[४] ईश्वर के शाश्वत सौदर्य,[५] 'कुन' शब्द से सृष्टि-रचना[६], हज़रत-मुहम्मद की महत्ता,[७] नात,[८] अमीर-कबीर सैयद-अली हमदानी की प्रशसा,[९] प्रेम एव प्रेमियो की महत्ता,[१०] जिक्र की महिमा,[११] 'शिमला-गमन का स्व-यात्रा-वर्णन'[१२] तथा पुस्तक-रचना के कारण,[१३] आदि पर प्रकाश डाला है। विरहानुभूति से युक्त साधक दिलाराम प्रेमिका के सौदर्य की झलक प्राप्त करके ही उसकी ओर आकर्षित होता है।[१४] विघ्न-बाधाओ को सहन करके कभी वह घोड़े पर हवा मे उडता है,[१५] कभी पानी मे यात्रा करता है[१६] और कभी अपने सहायक-साथी घोडे से बिछुड जाता है।[१७]

---

१. करुन छय नूरह् किस गुलज़ारसअय सैर, चह सोज़े दिल अव्वल जअहिर करकना—वही, पृ० ५।

२. फुले लअज्य वस्लक्यन पोशन ब गुलजार, चू बुलबुल अक अकिस गयि महव दीदार—वही, पृ० २७।

३. हज़ारा शुक्र ऐ गुलनूर गुलरेज़, अजब किस्साह् निहायत दर्द अगेज मुसनिफ युस येम्युक हाजी मही-उद्-दीन, तख्लुस जान शूबान तस छु मिसकीन —वही, पृ० ५९।

४. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।   ५. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।   ७ द्रष्टव्य—वही, पृ० २।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० २-३।   ९. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४।
१०. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५।   ११. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६।
१२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६।   १३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७।

१४. गमुत छुम मुज़नरिब चू माह् दर आब, दिलस सन दित चोलुम सुय सर व कामत, तमी कअरमअच छम कअइम क़यामत, ब नज़्दे कम यि सिर बाव्यम न असला—गुलनूर-गुलरेज़, पृ० १४।

१५. दोहन श्यन बर हवा पओक इस्प ताज़ी, बहुपत्तम रोज दर शहर समन वओत—गुलनूर-गुलरेज़, पृ० १४।

१६. ज़ि दरिया त्रैयिमिह् दोह् ख्वोत किनारस, दोपुन हम्दोसना परवरदिगारस —वही पृ० ३६।

१७. दिचअल गुर्य दगअई हाय लतिये, चे त्रअवित च्चोल हवअई हाय लतिये —वही, पृ० ३४।

प्रिय से मिलन की आशा उसे अधीर नहीं होने देती। घर लौटते हुए भी उसे मार्ग मे कई प्रकार की कठिनाइयो का सामना करना पडता है और एक डायन नानवाइन उसे मत्र-मुग्ध कर बदी बना लेती है।[1] कठिनाइयो मे पडे नायक के लिये पक्षियो की सहानुभूति आदर्शमयी है।[2] अन्त मे 'वस्ल' (ईश्वर मिलन) की दशा पा चुकने पर साधक एक सच्चे सूफी का रूप धारण कर लेता है।[3] कवि ने काव्यान्त मे मारिफत की ही श्रेष्ठता प्रकट की है।[4] इसमे युद्ध-वर्णन भी हुआ है।[5] यह काव्य सयोगान्त है।

प्रेम-पद्धति

इस काव्य मे कवि ने प्रेम का प्रादुर्भाव स्वप्न-दर्शन से कराया है। नायक दिलाराम (मेहतर अली) प्रेमिका का स्वप्न मे दर्शन करके उसकी प्राप्ति के लिये विह्वल हो उठता है।[6] प्रेम का स्वभाविक विकास-क्रम उपस्थित करते हुए कवि ने दिलाराम के दृढ सकल्प का परिचय दिया है।[7] प्रेमिका गुलनूर भी दिलाराम का दर्शन करके उसके प्रति आकृष्ट होती है।[8] इस साक्षात्-दर्शन के अनन्तर दोनो वियोगावस्था से अधीर हो उठते है। विरह के कारण ही दोनो का प्रयत्न एक-दूसरे की प्राप्ति के लिये होता है। चीन के राजा के वैवाहिक बन्धन से मुक्ति पाने के लिये वह अपने प्रेमी के साथ भागकर अन्त मे उसी के साथ विवाह भी करती है।[9] अन्त मे दोनो गार्हस्थ्य-जीवन अपनाते है।

---

१. बिहित असस कान्द्रेन्याह् वानस प्यठ, वुछुन तअम्य सुइ शहज़ादह पेयस त्रहठ, पोरन मथअर नजर कअरनस जि दुकान, सपुन बज़ गालह् शहज़ादस बयक आन—वही, पृ० ४२।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३५।

३. बगर्मी वस्ल किस बागस फुलय लअज, फराकअच खै तिथी सीनस मुलप लअज—वही, पृ० ५४।

४ खुदावन्दा मे राहे इश्क हावुम, ज़ि जाम मारिफत मे चावअह् नावुम —वही, पृ० ५८।

५ द्रष्टव्य—वही, पृ० ४६-४८।

६. दर अजा दिलबराह् सुय वुछ मे दर ख्वाब, बयक जलवअह् न्यूनम ताकत व ताब—वही, पृ० १४।

७. नितम तस कुन मे दरदिल छ्यम तसअज माय—वही, पृ० १४।

८. दोपुस गुलनूरिह् न्यूथम चरि चे होश, दोपुस तमि पति आवअह् कर फरामोश—गुलनूर-गुलरेज, पृ० २७।

९. निकाह् कअोर कअज्य द्रोन यारन मुबारक, अज़ीज़न यार व गमख्वारन मुबारक—वही, पृ० ४२।

प्रेम-तत्व

कवि का कथन है कि 'कुन' शब्द से ही जगत् की रचना हुई और वह सौंदर्य से प्रफुल्लित हो उठा।[१] उसी गुलनूर का सौंदर्य संसार मे व्याप्त है अतः साधक उसकी प्राप्ति के लिये उद्विग्न हो उठता है।[२] वास्तव मे गुल एव बुलबुल तो एक बहाना है क्योकि वही स्वय प्रेमी और प्रेमिका है।[३] इसी प्रेम-तत्व का आधार लेकर मसूर ने अपने प्राण त्याग दिये तथा कतिपय राजाओ ने अपना राज्य तक छोड दिया।[४] प्रेम-तत्व को अपनाने वाला साधक ही अपने प्रिय के साथ वस्ल (ईश्वर मिलन) प्राप्त करता है।[५] स्वप्न मे प्रेमिका के दर्शन करने वाला दिलाराम भी प्रेमाग्नि से जलकर एव खिरका पहनकर और सिंहासन का लोभ छोडने के अनन्तर ही प्रेमिका की प्राप्ति के लिये साधना-पथ पर अग्रसर होता है।[६] उसका प्रथम-दर्शन करते ही दिलाराम मूर्छित हो जाता है। वह भावाविष्टावस्था मे अपने कपडो को फाड डालता है।[७] वास्तव मे प्रेमाग्नि किसी को भी चिन्ता-रहित नही रखती :

> तुलुस दअह इश्क नारन तार्निकिन्य द्रास,
> वनै क्या इश्क नारअह क्या बनित आस।[८]

(प्रेमाग्नि से उत्पन्न धुए ने उसके शरीर को जलाकर मस्तक से निकलने का मार्ग बनाया। इस प्रेमाग्नि ने उसकी क्या दुर्दशा कर दी, इसका वर्णन आपके सामने किस रूप मे करू।)

---

१. ज़ि गुल नूरुक जहूरान क्वरुन पअदाह, क्वरुन अज लफ्जे कुन तअम्य पअदह बागाह—वही, पृ० २।

२. बकसरत क्याह शगूफअह तत फूलन आव, दिमागस ब्वोय वहदत बुलबुलन चाव—वही, पृ० २।

३. सु पानै आशक व माशूक पानै, गुल व बुलबुल बनै क्याह छुय बहाने—वही, पृ० २।

४. लोदुम मे हजरत मंसूर बरदार, स्यठाह शाह त्रावअह नअविम पादशअही—वही, पृ० ५।

५. तमी बोध्य करन सर मस्त व मदहोश, फोलिक रअत्य बाग असलसवस्लकी पोश—वही, पृ० २।

६. कोडुन नालअह बादशअही, वोलुन खिरकअह चू मर्दाने इल्लाही—गुलनूर गुलरेज़, पृ० १५।

७. वुछित शाहज़ादह प्यव बेहोश बर खाक, ज़ि इश्क अव गिरियेबानस दितुन चाक—वही, पृ० २०।

८. वही, पृ० २१।

नायिका गुलनूर का शरीर भी प्रेमाग्नि से झुलस जाता है, एव वह जडवत् बन जाती है,[1] उसके नेत्रो की ज्योति कम होने लगती है ।[2] स्वास्थ्य गिर जाने से वह कृशकाय बन जाती है ।[3] प्रिय के साथ भाग कर वह लोक-लाज खो देती है । दोनो का प्रेम अटूट एव शाश्वत है । प्रेम द्वारा ही ईश्वर मे एकत्व स्थापित करना ही इस ससार का सार है ।[4]

विप्रलम्भ शृंगार तथा संयोग शृंगार

इसमे नायक-नायिका दोनो के विरह की चर्चा हुई है ।[5] प्रथम दर्शन तक केवल दिलाराम वियोग के कारण उद्विग्न हो उठता है किन्तु नायक के कमल तथा अगूठी जैसे अभिज्ञानो के द्वारा नायिका गुलनूर भी प्रेम-विह्वल हो उठती है ।[6] वह भी नायक के प्रति आकर्षित होकर मिलन की अभिलाषा करती है ।[7] वियोग का वर्णन करते हुए कवि पर फारसी की ऊहात्मक प्रवृत्ति का प्रभाव पडा हुआ परिलक्षित होता है । प्रेम-विह्वल नायिका का हृदय विरहाग्नि से कबाब बन जाता है तथा विरह-कुल्हाडी घात करती है ।[8] धन लाने के लिये गई हुई नायिका के वापस न आ जाने पर दिलाराम की अवस्था समग्र नगर मे दयनीय बन जाती है । वह अपना धैर्य खो बैठता है और चिन्तातुर हो जाता है ।[9]

---

१. डजिस बो होशिह गजिसो आम तावअह—वही, पृ० २३ ।

२. बो नादीद गअयस बेसब्र बे ताब— वही, पृ० २४ ।

३. दपुक गुलननूरिह छमना तदरुस्ती, ब बीमारी गमअच गमअच् छय पअदह सुस्ती—वही, पृ० २६ ।

४. सपुन अज मौत युस गअफिल ज़ि दुनिया, ख्यवान अफसोस नेरी सुइ अका—वही, पृ० ५८ ।

५. माशूके आशक कोनअह पतअ लारी, वस्लच छअस उम्मीद वअरीये—वही, पृ० २४ ।

६. तुलुन पापोश तामत माय फीरअस, यसुन्द पापोश तस कुन राय फीरअस —गुलनूर-गुलरेज़, पृ० २१ ।

७. दिलबरह यारह कवअह रूदहम दूरे, तमन्ना छुम गुलनूरे च्योन—वही, पृ० २१ ।

८. ललवअन्य बर-जिगर इश्कुन तबर छम,

× × ×

वदान दअोपनस मे दिल कोरथम कबाबा—वही, पृ० २६ ।

९. दिलारामन दोपुस छुमनअह कराराह, बो चानी पूचिह गमअच दिलखस्तअह वाराह—वही, पृ० ३३ ।

कठिनाइयो को पार करने के अनन्तर ही वह प्रेमिका तक पहुचने मे सफल होता है ।

सयोग-शृगार वर्णन इस काव्य मे तीन बार हुआ है किन्तु कही पर भी अभद्रता एव अश्लीलता की सीमा को वह छू नही पाया है । प्रथम-दर्शन, सयुक्त पलायन तथा अन्तिम मिलन ही इसके सयोग की तीन अवस्थाए है । अतिम मिलन ही प्रेमी-प्रेमिका का एकमेक भाव प्रदर्शित करता है ।

ईश्वरोन्मुख प्रेम

यह काव्य लौकिक पक्ष से अलौकिक पक्ष की ओर सकेत करता है ।[1] ऐसे कई स्थल है जिनमे गुलनूर-गुलरेज के परमात्म-स्वरूप की व्यजना हुई है ।[2] उस परम-सौंदर्य परमात्मा के प्रेम से ही यह ससार भरपूर है जिसे केवल साधक अथवा बुलबुल ही पहचान सकता है, अन्य कोई कौआ नही ।[3] परमात्मस्वरूपा गुलनूर सात गढो के भीतर एक पुष्पित उद्यान मे रहती है और इस बाग को देखते ही प्राणिमात्र को स्वर्ग की इच्छा नही रहती ।[4] गुलनूर ही परम-सौंदर्य है जिसकी ओर कवि ने सयोग तथा वियोग के वर्णनो मे सकेत किया है । अतुल सौंदर्य के कारण ही वह अतीव प्रभावशालिनी है तथा उसके स्वप्न-दर्शन से ही दिलाराम ससार से विमुख हो जाता है । सांसारिक सुखो तथा वैभव का परित्याग करके ही वह अलौकिक प्रेम मे लीन हो जाता है । गुलनूर के अलौकिक सौंदर्य का दर्शन करके ही वह उसकी प्राप्ति के लिये योगी के वस्त्र धारण कर लेता है ।[5]

रूप-सौंदर्य वर्णन

कवि ने नायिका गुलनूर-गुलरेज़ के रूप-सौंदर्य का वर्णन नख से शिख तक

---

१. ज़ि बहर ऐ दो आशक ऐ ख़ुदावन्द, मे मिसकीनस दितम बर आशकी अन्द
—वही, पृ० ५८ ।

२. जहानस हर तरफ सुय नूर जोशन
× × ×
यि नूराह क्याह मे होव पाक ज़ातन—वही, पृ० १७ ।

३. चो बुलबुल आशक गुल काव छुय नअह,
हतो वा बुलबुलो अज़ मन खबर बोज़—गुलनूर-गुलरेज, पृ० ७ ।

४. सतन किलन अन्दर बागाह शहस ख़ूब, वुछअनी युस चलन तस जन्तुक लब ।
—वही, पृ० १८ ।

५. बयक जलवअह मे न्यूनम ताकत व ताब,
सु रोवुम रग रोवुम जाम रोवुम—गुलनूर-गुलरेज़, पृ० १४ ।

किया है ।[1] उमके नेत्रो, मुख, दातो, ठोडी, वक्षस्थल, कमर तथा केश आदि का वर्णन कवि ने अत्यन्त मनोहारी ढग से किया है । नायिका की ठोडी का वर्णन करते हुए उसने कहा है ·

मुदवर क्याह् ज़िनखदा रग्रोप मुन्द सेब ।[2]

(उसकी ठोडी क्या है मानो चादी का सेव हो)

गुलनूर का सौदर्य ही सर्वत्र पुष्पो मे छिपा हुआ है[3] जिसे देखकर बुलबुल की भाति नायक दिलाराम वहदानियन (तादात्म्य) के लिये उत्कण्ठित हो उठता है । नायिका का लौकिक सौंदर्य ही उसके अलौकिक रूप का दर्शन कराता है ।[4] उसी का सौदर्य कण-कण मे समाया हुआ है ।[5] प्रसारित सौदर्य के कारण ही वह गुलनूर के नाम से प्रसिद्ध हुई है ।[6]

१८—रैणा व ज़ेबा[7]

कथा-सारांश—रवतन के राजा रेहाण का पुत्र रैणा यूसुफ की भाति अत्यन्त सौंदर्यशाली था । उसके जन्म पर राजा ने अतीव प्रसन्नता प्रकट की किन्तु सात वर्ष की आयु मे ही वह प्रेमाग्नि से जलने लगा । दुर्भाग्य से राजा रेहाण का परलोकवास हुआ, अत. रैणा की शैशवावस्था के कारण मत्रियो के परामर्श से रेहाण का भाई स्नोबर किंचित् काल के लिए राजा बना । राजा बनते ही स्नोबर की प्रकृति बदल गई और जब रैणा चौदह वर्ष का हुआ फिर भी उसने उसे राज्य नही लौटाया । वह रैणा को घृणा और ईर्ष्या की दृष्टि से देखने लगा । अपने जीवन-काल मे ही रैहाण ने यह निश्चित किया था कि रैणा का

---

१. द्रष्टव्य—वही, पृ० १७-१९ ।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० १९ ।

३. बकसरत क्याह् शगूफह तत फूलन आव,
दिमागस ब्वोय वहदत बुलबुलन चाव—गुलनूर-गुलरेज़, पृ० २ ।

४. जहानस हर तरफ सुय नूर जोशन,
शम्र तारस सपुन्मुत रोज़े रोशन—वही, पृ० १७ ।

५. नज़र त्रअवअन वुछुम अज़ दूर नूराह,
समन सारिवी गोमुत नूरुक जहूराह ।—वही, पृ० १७ ।

६. गुलस प्यठ परतवाह प्यव नूर कुय पूर,
सपुन माशूक प्यव तस नाव गुलनूर ।—वही पृ० २ ।

७. रैणा व ज़ेबा, पीर शम्स-उद्-दीन हैरत, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद, नूर मुहम्मद महाराज रणवीरगंज बाज़ार, श्रीनगर, कश्मीर, प्रति प्रयुक्त ।

विवाह स्नोबर की रूपवती पुत्री जेबा के साथ होगा, किन्तु अब ऐसा होना असम्भव दिखाई देने लगा।

रैणा तथा ज़ेबा का प्रेम परिपक्व हो चुका था। एक बार रैणा ने स्नोबर को प्रदत्त वचन के पालन की स्मृति करा दी किन्तु उसने उसकी प्रार्थना ठुकरा दी। निराशाजनक उत्तर के कारण रैणा पृथ्वी पर मूर्छित होकर गिर पडा तथा उसके नेत्रों से रक्तमय कण गिर पड़े। वियोगी होकर उसने अपने शरीर पर भस्म मला। जेबा की प्रेरणा पर दोनो नायक नायिका वहा से भाग चले।

भागते हुए रैणा व जेबा नदी-तट पर पहुच गए। नदी बाढ-ग्रस्त थी अतः वे दोनों वही घोडो से उतर कर विश्राम करने बैठे। प्रातः उनकी दृष्टि एक नाविक पर पडी जो अपनी लघु नौका को लेकर उसी ओर आ रहा था। नास्तिक नाविक जेबा को देखते ही उस पर मोहित हुआ। केवल एक को एक बार दूसरे तट पर पहुंचाने की सहानुभूति दिखा कर वह पहले जेबा को पार ले जाने के लिए राज़ी हुआ। जेबा नौका मे बैठी और रैणा वही तट पर नौका के वापस आने की प्रतीक्षा मे ठहर गया। नौका के न लौटने पर रैणा की विरह-अग्नि प्रदीप्त हो उठी। उधर से नास्तिक नाविक ने जेबा के रूप की प्रशसा करके उसे अपने भोग-विलास का शिकार बनाना चाहा। ज़ेबा के लिए पवित्र जीवन बिताना तथा चरित्र की सुरक्षा करना सर्वोपरि धर्म था अतः उसने समय व्यतीत करने के बहाने नाविक को एक ऐसे वासनात्मक प्रेमी की कथा सुनानी आरम्भ की जिसने किसी सच्चरिता नारी को मार्ग मे छेड़ कर पर्याप्त दुःख उठाया था एव जिसने अपने पापो की स्वीकृति हजरत ईसा के सामने की थी। दूसरी रात फिर विवश की गई ज़ेबा ने उसे समरकन्द के एक ऐसे निर्धन व्यापारी की कथा सुनाई, जो मस्जिद मे आधी रात के समय उपस्थित हुई रूपवती स्त्री पर आसक्त हुए बिना अपने दृढ चरित्र का प्रमाण दे गया और जिसके फलस्वरूप देवीय पुरुष ने उपस्थित होकर उसे पाच मोतियो की मालाए देकर अत्यन्त धनवान बना दिया। नास्तिक मल्लाह पर इन सभी उपदेशात्मक कथाओं का तनिक भी प्रभाव न पडा अतः उसने भी कुछ कथाए प्रत्युत्तर मे कहकर विश्वासघातिनी नारी के चरित्र पर प्रकाश डाला। इन अतर्कथाओ के द्वारा ही ज़ेबा अपने चरित्र की रक्षा करने मे सफल हुई।

एक प्रातः को जेबा युक्तिपूर्वक उस नास्तिक नाविक की नौका से भाग जाने मे सफल हुई। उधर से स्नोबर की मृत्यु के अनन्तर मत्रियो ने रैणा को ढूंढना आरम्भ किया जो अभी तक नदी-तट पर विरक्तावस्था मे नायिका की प्रतीक्षा कर रहा था। राज्य-प्राप्ति पर रैणा को प्रेमाग्नि और अधिक सताने लगी। अतः वह अपनी प्रेमिका की तलाश मे जा निकला। वनो, मैदानो, नदियो,

सागर, मैदानो तथा पर्वतो को लाघकर वह आगे बढता गया। अन्त मे नायिका की तलाश करते करते वह चीन पहुचा। उसे मार्ग की कठिनाइयो ने जर्जरित किया था किन्तु वह अपनी प्रेमिका को पाने मे सफल हो ही गया। अन्त मे सयोग होने पर दोनो वतन पहुचे जहा दोनो सुखपूर्वक रहने लगे।

कथा का आधार तथा संगठन

इस प्रबन्धकाव्य की रचना कवि ने अपने मित्र से प्रेरणा प्राप्त करने पर की।[१] प्रस्तुत काव्य का आधार फारसी की गद्यमय रचना 'शम्स कहकहा' है जिस मे से कवि ने रैणा व जेबा के कथानक को पानी मे से मोती की भान्ति चुनकर उसे कश्मीरी मे पद्यमय रूप प्रदान किया।[२]

इस काव्य मे कथारम्भ से पूर्व कवि ने प्रेम की महिमा,[३] सैयद मीर अली हमदानी की प्रशसा[४] तथा काव्य-रचना के कारण अथवा आधार का उल्लेख[५] किया है। अन्य सूफी प्रेमाख्यानो की भाति इसके प्रसगो को शीर्षको के अन्तर्गत बाट दिया गया है। बीच-बीच मे गज़लो का भी समावेश है।[६] आधिकारिक कथा का सम्बन्ध रैणा व जेबा से है किन्तु बीच-बीच मे कई अन्तर्कथाओ को भी स्थान दिया गया है। इन अतर्कथाओ की सृजना आधिकारिक कथा की गतिमयता के लिए ही की गई है। नायिका जब भी अपने आप को दुःख-सागर मे पाती है वह हबीब कुब्रिया मीर सैयद अली हमदानी का नाम स्मरण करके क्षमा-याचना करती है।[७] उसी की दया से अन्त मे उसका मिलन नायक से होता है। कथा सुखान्त है।

---

१. मे ओसुम दोस्ता अक साहब जोक, बुछित म्योन तसनीफ ओसुय जि ख्वोश, दोपुम तअम्य छुम चं फन नज्म मोलूम, फसानअह करतअह कजशिअर पअठ्य मजूमा—रैणा व ज़ेबा, पृ० ३-४।

२. किताब अअस नामी शम्स कहकहा, करअनी यत बुछित अशाक वाह वाह, स्यठाह जेबा सो अन्दर इल्ने इख्लाक, परित सअरी गछान तत प्यठ छि मुश्ताक, फसानअह अक तमी अदरअह मे चोरुम, दरे ज़ेबा अजान दरिया मे खोरुम, —वही, पृ० ४।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० २। ४. द्रष्टव्य—वही, पृ० २-३।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३-४।

६. द्रष्टव्य—रैणा व ज़ेबा, पृ० १६, १७, ३८, ४३, ४५, ५१, ५२, ५५, ५६ ५७, ५८, ५९।

७ द्रष्टव्य—वही, पृ० ३७-३८।

प्रेम-पद्धति

इस मे नायक-नायिका के साक्षात्-दर्शन की प्रेम-पद्धति की ओर ही सकेत मिलता है क्योंकि दोनों का पारिवारिक सम्बन्ध होने के कारण उनकी सन्निकटता का आभास मिल जाता है।[1] काव्य के आरम्भ मे ही नायक-नायिका को एक-दूसरे से पृथक् दिखाया गया है अत· मिलन के लिए वे चिन्तित दिखाई देते हैं।[2] वे दोनो एक-दूसरे से विलग होने के अनन्तर जब मिल जाते हैं तो भाग जाते हैं। भाग जाने की यह प्रेरणा नायिका द्वारा दी जाती है।[3] नास्तिक मल्लाह के हाथ मे पड जाने के अनन्तर नायिका अपने नायक को पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न करती है, जबकि नायिका की प्राप्ति का प्रयत्न नायक की ओर से राज्य-प्राप्ति के पश्चात् ही होता है।

प्रेम-तत्व

काव्यारम्भ मे ही कवि ने ईश्वर से प्रेम का प्याला पिलाने की प्रार्थना की है।[4] प्रेम का अकुर रैणा के हृदय मे शैशवावस्था मे ही फूट पडता है अतः उसे राज्य-प्राप्ति की चिन्ता अधिक नही सताती।[5] साक्षात्-दर्शन से उत्पन्न प्रेम की उत्कृष्टता के कारण रैणा अपनी प्रेमिका ज़ेबा के बिना एक पल भी रह नही सकता। उसकी प्राप्ति के लिए स्नोबर को वह पत्र भी लिखता है किन्तु वहां से निराशाजनक उत्तर पाने के पश्चात् निर्मल शरीर पर भस्म रमाता है। नायिका की प्राप्ति के लिए नायक द्वारा जो प्रयत्न होता है उसके लिए उसे मरुस्थलो, समुद्रों तथा पर्वतो को छान मारना पडता है।[6]

---

१. द्रष्टव्य—रैणा व ज़ेबा, पृ० ४-५।

२. वसित प्यव बर ज़मीन जामन दितुन चाक
 मोलुन अईनह पानस सूर तअ खाक।
 × × ×
 न रूदुम सब्र नी आराम नी ताब,
 ज़ि सर गव इश्कह तूफानुक यि सअलाब।—वही, पृ० ७, ८।

३. तेअअरी करतअ नेरव शाम गाशअह, करव मानन्द बुलबुल बोलबाशअह,
 —रैणा व ज़ेबा, पृ० ६।

४. वलो हा साकियो पैमानअह चावुम, दौहे अज़ इश्क ख्वद दीवानअह थावुम
 —वही, पृ० २।

५. गमा ओसुसनअह केंह अज़ ताजदअरी, वली दर दिल ज़ि दिलबर बेकरअरी
 —वही, पृ० ७।

६. बियाबानव अन्दर छाड़ान निगारस, जहाज़स ब्यूठ आखिर बर लबे आब,
 करन दर बहर जुस्तजू मेहताब, जज़ीरअह पतअह जज़ीर अह फयूर आ शाह
 —वही, पृ० ४६।

विप्रलम्भ शृंगार

इस प्रबन्धकाव्य मे विप्रलम्भ शृगार का उल्लेख तीन बार हुआ है, प्रथम नायक-नायिका के भाग जाने से पूर्व[1] और द्वितीय नायिका का नास्तिक मल्लाह के हाथ लग जाने के समय।[2] तृतीय बार इसका वर्णन नायक के तट पर बैठे रहने से लेकर उसके द्वारा नायिका की पुनः प्राप्त तक हुआ है।[3] स्नोबर द्वारा नायक की प्रार्थना ठुकराये जाने के समय रैणा के नेत्रो से खून के आंसू प्रवाहित होते है।[4] विरह के कारण चिन्ता तथा उन्माद के बढ जाने पर वह अपने वस्त्र फाड डालता है।[5] व्याकुलता एव तडप के कारण प्रलाप करता है।[6] वह प्रेमिका ज़ेबा से ही इस प्रेम-रोग के उपचार की प्रार्थना करता है।[7] क्षणिक मिलन के अनन्तर उनका यह वियोग नाविक के व्यवधान के कारण पुनः उभर पडता है। अपनी प्रेमिका से वियुक्त रैणा प्रलाप करता है जो अत्यन्त मर्मस्पर्शी है।[8] नायिका ज़ेबा भी अपने प्रिय के वियोग मे पुष्प की भाति सूख जाती है तथा उसकी पीडा अकथनीय वन जाती है।[9] प्रेमी की चिन्ता मे घुलने वाली ज़ेबा की विरह-व्यथा की कोई सीमा नही है।[10] वह कौए से प्रार्थना करती है कि वह उसकी विरह-वेदना को उसके प्रियतम तक पहुचा दे।[11]

नास्तिक मल्लाह के बधन में पडकर भी वह अपनी पवित्रता एव

---

१. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७, ८। २ द्रष्टव्य—वही, पृ० ९-४७।

३. द्रष्टव्य—रैणा व जेबा, पृ० ४८-५२।

४. पश्रोरुन खत तश्रस्य हुश्ररुन चश्मव खून—वही, पृ० ७।

५. रिवश्रनी श्रोस दिवान चाक जामन, प्यवश्रनी वश्रस्यवश्रस्य सुबहन तश्र शाम—वही, पृ० ८।

६. दपश्रनी बादिल दीवानहए ख्वद, हिकायत श्रज़ गमे जानानये ख्वद, श्रमा दिलबर मे जेबा छा वफादार, बो छुस दर गम सो मा श्रासिश्रम बा ग्यार—वही, पृ० ८।

७. गलित गोमुत वलित छुश्रम इश्कश्रह हाकल, चलित कतो जानह दिल श्रज़ गम तुलित छुम—वही, पृ० ८।

८. वोदुन त्युथ युथ सपुन शर्मन्दश्रह दरिया,
× × ×
लबश्रत कति बे वफा दिलदारश्रह फीरित—वही, पृ० ११।

९. ज़ि गम पिजमुर्दश्रह सपनस श्रान गुलतर—वही, पृ० ११।

१०. स्यठाह अफसरदश्रह गयि श्रज़ हिजर दिलबर, वही, पृ० ११।

११. कामदेवस तन मे नावस बाग ब वश्रथरावस, कावश्रह वन्तश्रस छुमनश्रह मशान श्रावुन्कुय सिरह।—रैणा व ज़ेबा, पृ० १५।

सच्चरित्रता का परित्याग नही करती। वह सदा अपने प्रेमी से मिलन की अभिलाषा अपने हृदय मे सजोए बैठी है। इस दुख मे युक्ति पाने के लिये वह हबीब कुब्रिया मे प्रार्थना करती है जो स्वीकार भी होती है :

जुदाई छमजि दिलबर या खुदाया,
मुदा म्योनुय चह कडुन हा खुदाया।[१]

(हे मेरे प्रभु ! मैं अपने प्रियतम से विलग हो गई हूं। मेरी उमसे मिलन की अभिलाषा पूर्ण तो कर दे।)

बिना प्रिय के दर्शन के उसका गुलाब जैसा सुन्दर मुख केसर की भाति पीला पड जाता है।[२] जेबा के भगाए जाने के अनन्तर रैणा नदी-तट पर जडवत् बैठा रहता है।[३] यह विरह का अन्तिम भाग है क्योकि राज-प्राप्ति के पश्चात् मार्ग की कठिनाइयो को पार करता हुआ नायक उसकी पुनः प्राप्ति मे सफल होता है।

इस में प्रतिनायक मल्लाह की कल्पना विप्रलम्भ की अतिशयया को प्रकट करने के लिए ही की गई है।

संयोग शृंगार

इस काव्य मे सयोग शृगार का वर्णन दो स्थलो पर हुआ है—प्रथम, जब नायक-नायिका भाग जाने के समय मिलते है[४] और दूसरा जब वे काव्यान्त मे परस्पर मिलते है।[५] दोनो स्थलो पर कवि ने यह सयोग शृगार अत्यन्त सयमित रूप मे वर्णित किया है। साधक-साध्य के मिलन से किसी भी प्रकार की अश्लीलता का चित्रण नही हुआ है। वास्तव मे सच्चे प्रेम के आधार पर ही साधक अपने साध्य को प्राप्त कर सकता है। फिर भला उसमे कुत्सित भावना को स्थान कहां। उनका अन्तिम मिलन 'वस्ल' से कम नही।[६] इस अवसर पर उनके उल्लास के समय प्रकृति भी प्रसन्न दिखाई देती है।[७] नास्तिक मल्लाह के

१. वही, पृ० ३७।
२. गोमुत ओसुस गुलाबस जँफरान पोश—वही, पृ० ३६।
३. मलिक रैणा बसाहिल ओस प्रारान, छनित गव इन्तेजारस इजतराबन—वही, पृ० १०।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६।
५. द्रष्टव्य—रैणा व जेबा, पृ० ५४। ६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५७।
७. यि मौसम इब्तदाये फसले गुल ओस, बहार व वक्त व ऐश व जाम व मल ओस—वही, पृ० ५४।

प्रसग द्वारा कवि ने यही दिखाने का प्रयत्न किया है कि वासनात्मक प्रवृत्ति अधोगामी है और वह 'नफ्स' की ओर ले जाने वाली होती है।[1] 'नफ्स' पर नियन्त्रण होने मे ही ईश्वर-मिलन सभव हो सकता है।

ईश्वरोन्मुख प्रेम

कठिन मार्ग पर चलने के अनन्तर ही साधक ईश्वर के साथ 'वस्ल' प्राप्त करता है।[2] अज्ञानी नीद मे ही अपना जीवन नष्ट कर देता है।[3] ज्ञानवान् प्राणी उसके स्मरण मे सदा अपने जीवन का प्रत्येक क्षण व्यतीत करता है अतः वही मारिफत का अधिकारी बन जाता है।[4] रैणा का जेबा के सौदर्य पर आकर्षित होना लौकिक कथा के आधार पर ही अलौकिक मिलन का प्रस्फुटन करता है।

रूप-सौंदर्य वर्णन

इस मे कवि ने रैणा[5] व जेबा[6] के अतिरिक्त अतर्कथाओ के बीच आने वाली कुछ नारियो के रूप[7] का भी सक्षिप्त वर्णन किया है।

प्रमुख रूप मे कवि ने नायिका जेबा तथा नायक रैणा के रूप-वर्णन का ही इस मे चित्रण किया है। जेबा स्वर्ग की अप्सरा अथवा सौदर्य की नदी मे खिले किसी कमल की भाति शोभायुक्त है।[8] उसके नेत्रो, भौहों, चितवन, वक्षस्थल तथा कमर आदि का वर्णन कवि ने परम्परा के आधार पर किया है। वह मेघो के बीच चमकने वाला बिजली के समान लावण्यमयी है :

'प्रजलुन कालअह ओब्रस तल वुजमल[9]

---

१. पेयम दर हाल नफसन जब्र थोरनम ख्याल खामनअय तअसीर कोरुम। —वही, पृ० १३।

२. मोठुस अज़ शादमअनी रज व गम प्रोन, अमी चालि सु गुलरोय व समन बो।

३. रियाज़त करतअह पुननी यार यारन, फ्वली अदअह नूर गुलज़ार तजली—वही, पृ० ३८।

४. ज़ि जामे मारिफत दामाह मे चावुम, दर आखिर नूर ईमान बख्शाज़म मे। वही, पृ० ६०।

५. द्रष्टव्य—रैणा व जेबा, पृ० ४-५। ६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५-७।

७. द्रष्टव्य—वही, पृ० १६, २२, २८।

८. अछ्यन मज़ नूर दर सो ज़न हूर, न तअ दरियाइ हुस्नस ताजअह पम्पोश—वही, पृ० ५।

९. वही, पृ० ६।

उसका हुस्न प्रात.काल की भाँति शुभ्र है :

असुन्द तअम्यसुन्द छु सुबहुक नूरदीदअह[१]

रैणा भी शैशवावस्था से ही यूसुफ के समान सुन्दर है। वह सौंदर्य मे अनुपमेय है :

सपुन हुस्नन दितुस कअरथअय कबालह[२]
(सौंदर्य का उस पर पूर्ण अधिकार है)

१६—लैला मजनू[३]

कथा-सारांश—अरब मे अत्यन्त दयालु दानवीर तथा गुणवान् राजा सैयद मीर राज्य किया करता था। परमात्मा ने उसे प्रत्येक प्रकार का सुख एव वैभव प्रदान किया था, किन्तु पुत्र-सुख से वंचित होने के कारण वह सदा चिन्तित रहता था। पुत्रेच्छा के लिये वह एक फकीर के पास गया। राजा की व्याकुलता देखकर तथा उसकी प्रार्थना के वशीभूत होकर उसने उसे पुत्रोत्पत्ति का वरदान दिया। राजा के घर जब एक सुन्दर बालक ने जन्म लिया तो उसका नाम कैस रखा गया। बालक ने माता का दूध नही पिया अतः राजा चिन्ताग्रस्त हुआ। इस पर राजा सैयद मीर ने अपने एक बुद्धिमान मत्री को अप्सराओं के देश स्वर्ग, मे भेजा जहा से वह कठिन प्रयत्न के पश्चात् अपने साथ शाहपरी को ले आया। शाहपरी का दूध पीकर ही कैस बडा हुआ। एक बार कैस ने शाहपरी को अपना देश दिखलाने का हठ किया। जब दोनों स्वर्ग की ओर जा रहे थे, मार्ग मे वे अलमास नगर पहुचे। वहा मदरसे (मकतब) मे पढने वाली लैला के साथ साक्षात्कार होने पर कैस उस पर आसक्त हुआ। उसका पूर्व राग जाग उठा। दोनों का प्रेमालाप एक उद्यान में हुआ। इस पर उन 'कैस तथा लैला' की प्रेम-चर्चा चतुर्दिक् फैल गई जिस के परिणामस्वरूप लैला का मकतब जाना बन्द कर दिया गया। विरह के कारण कैस विक्षिप्त हो उठा और वह वही एक कुम्हार के घर ठहर गया। कुम्हार से पात्र लेकर वह सदा अन्धा भिखारी बन कर लैला से भीख मागने जाया करता था। लैला से मिलने के समय उसे उसके महल की सात ड्योडियों को पार करना पडता था। उनकी प्रेम की अतिशयता को देखकर उनका विवाह निश्चित हुआ जो किसी कारण सम्पन्न न हो सका।

---

१. वही, पृ० ६।   २. वही पृ० ५।

३. लैला मजनू याने कअशिर लअल, पीर अब्दुल कबीर लोन, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगंज बाजार, श्रीनगर (कश्मीर) संस्करण (मार्च सन् १९६२ ई०), प्रति प्रयुक्त।

भग्न हृदय के कारण, कैस जो अब विक्षिप्तावस्था के कारण मजनू कहलाया जाता था, अरब के नज्द वन मे भाग गया। उधर से उसकी प्रेमिका लैला भी विरहाग्नि मे जलने लगी। मजनू ने एक बार तोते के हाथ अपनी प्रेमिका को सदेश भेजा और प्रत्युत्तर मे लैला ने भी उसे अपनी विरहाग्नि मे परिचित कराया। लैला से उत्तर लाते हुए जब तोता मजनू की ओर आ रहा था, वह मार्ग मे नफ्स के कारण एक शिकारी द्वारा जाल से पकडा गया। स्वामी द्वारा शिकारी को अधिक धन दिये जाने के पश्चात् तोता खरीद लिया गया। विरहाग्नि से सतप्त मजनू अपनी प्रेमिका से मिलने के लिये उस्ताद (ओखुन) के वेष मे गया किन्तु पता लग जाने पर वहा मे लैला के पिता द्वारा बाहर निकाल दिया गया। लैला भी ऊट पर बैठकर अपने प्रेमी से नज्द वन मे मिलने चली। अपने प्रेमी से पृथक् होने के कारण वह विरहाग्नि मे इतनी विक्षिप्ता बन गई कि उसका प्राणान्त हुआ। भटकता हुआ मजनू भी यह शोक-समाचार पाकर उसकी कबर मे समा जाने के अनन्तर उसके साथ ही परमधाम को सिधार गया।

कथा का आधार तथा संगठन

कबीर लोन से पूर्व निज़ामी, जामी, याकूब सर्फी ने फारसी मे तथा महमूद गामी एव पीर मही-उद्-दीन मिसकीन' ने कश्मीरी मे इस कथा के आधार पर काव्य-रचना की थी। कवि ने अरब की उसी कथा का आश्रय लेकर अपनी मौलिक उद्भावनाओ के बल पर उसे एक नवीन रूप प्रदान किया। पूर्ववर्ती काव्यो की अपेक्षा इस काव्य मे कुछ भिन्नता अवश्य दिखाई देती है।

कवि ने काव्यारम्भ में हम्द,[१] वर्णों के प्रतीकात्मक अर्थ[२] निर्गुण प्रभु की महिमा,[३] उसके नूर,[४] हज़रत मुहम्मद की महत्ता,[५] नात,[६] नफ़्स की बुराई,[७] कादिरी सप्रदाय के प्रमुख पीर शाह जीलान की प्रशसा[८] तथा काव्य रचना का कारण[९] प्रस्तुत किया है। इस काव्य की कथा का आरम्भ पूर्ववर्ती काव्यो के आधार पर ही हुआ है, किन्तु राजा सैयद मीर का पुत्रोत्पत्ति के लिये फकीर के

१-२-३-४. द्रष्टव्य—लैला-मजनू, पृ० २।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।

६. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।

७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३।

८. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३-४।

९. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४-५।

पास जाना[१], कैस का माता का दूध न पीना,[२] शाहपरी का स्वर्ग से आकर उसे दूध पिलाने आना[३] तथा कैस का शाहपरी के साथ अलमास नगर मे जाना[४] आदि कुछ ऐसे प्रसग है जिनकी उद्‌भावना कवि ने अपनी प्रतिभा के बल पर ही की है। लैला का अविवाहित रहना तथा उसका ऊट पर बैठकर उसे नज्दवन मे मिलने जाना[५] आदि घटनाए कवि के महमूद गामी की परम्परा का पालन करने के लिये अपनाई है। कबीरलोन ने इस काव्य मे प्रसगो के अनुसार शीर्षक दिये हैं। काव्य के बीच-बीच मे गजलों का भी समावेश हुआ है।[६] इन गजलो से कथा के प्रवाह मे गतिमयता आ गई है क्योकि उनकी सृजना घटित तथा घटने वाली कथा को दृष्टि मे रखकर ही की गई है। इस काव्य मे वर्णनात्मकता की अपेक्षा आध्यात्मकता तथा सूफी-सिद्धान्तो का अत्यधिक पालन किया गया है। अन्य पूर्ववर्ती कथाओ की भाति यह भी वियोगान्त है।

प्रेम पद्धति

इसमे पूर्व-राग के आधार पर साक्षात्-दर्शन से प्रेम का प्रादुर्भाव दिखाया गया है।[७] लैला-मजनू लौकिक प्रेमी न होकर अलौकिक प्राणी है जो अलमास नगर मे एक-दूसरे के प्रति आकर्षित होते है।[८] प्रथम-दर्शन मे ही वे एक-दूसरे

---

१. लोबुन पीर कुलानाह मतलब तमिस द्राव, लोबुक यलि ताम कअरहस वलज़अरी, गछिअम औलाद मे छम बेकरअरी, बोनुन यामत फकीरस गव नरम दिल। वही, पृ० ६।

२. ज़्यवनुय शहज़ादह द्वोद छुनअह च्यवान सारिनी गम पेश आव—वही, पृ० ७।

३. लगय पअरी च्यतम द्वोद छ़स बो चअन्य दाय, च्यन ब्रो ठअय तिहजअय माय—वही, पृ० ११।

४. यहोय गव शहर अल्मास, शहज़ादह वापस अमि जाइ हो द्राव—वही, पृ० १२।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ २६।

६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६, ८, ११, १७, १८, १९, २१, २३, २४, २५, २६, २७।

७. शमा सूरत सपुन शहज़ादस उस्ताद, समअक्य तिम अक अकिस सअत्य दिल ति गोक शाद—लैला-मजनू, पृ० १३।

८. वदान गव वओन्य लओबनय मदरसह दोस्त, परनि हुम्दाह बो अत मंज़ वातिथअय प्योस—वही, पृ० १३।

पर मोहित होते है।[1] वहदत (ईश्वर के साथ एकत्व) प्राप्त करने के लिये उसने लैला-मजनू को आत्मा-परमात्मा का स्वरूप मानकर उनके पूर्व-राग का चित्रण किया है।[2]

प्रेम-तत्व

आत्मा-परमात्मा जन्म से पूर्व एक होते है किन्तु ससार मे आकर वे पृथक् दीखते है। पूर्व राग के कारण ही प्रेमी अपनी प्रेमिका के सौदर्य के प्रति आकर्षित होकर उसे प्राप्त करने का प्रयत्न करता है।[3] जो प्रेमी शैशव मे ही प्रेम का रसपान करता है, वही ईश्वर के साथ एकत्व (वहदानियत) के लिये सदैव प्रयत्नमय रहता है।[4] मजनू परमात्मा ही अश है क्यो स्वर्ग की परी ही दूध पिलाकर उसका पालन-पोषण करती है।[5] वह सच्चे साधक के रूप मे प्रभु के सर्वव्यापक रूप का प्रतिनिधित्व करता है उसके हृदय मे प्रेम-तत्व का बीज जन्म मे ही फूट पडता है।[6] वह प्रेमिका से मिलने के लिये कठिनाइयो की तनिक भी परवाह नही करता। वह नज्द वन मे जाकर उसकी प्राप्ति की प्रार्थना मे लीन हो जाता है।[7] प्रेम-पथ पर चलने वाले साधक मजनू सर्वस्व त्याग कर केवल प्रेमिका के ध्यान मे रत रहता है।[8]

विप्रलम्भ शृंगार

नायक तथा नायिका के अतिरिक्त इस काव्य मे सैयदमीर के विरह का भी वर्णन हुआ है। नायक मजनू लैला से मिलन-पूर्ण तथा नज्द वन मे जाने के

---

१. वुछुम यामत तामत लो गुम आनो, लैला-मजनू, पृ० २५।
२. वुछुम दरियाये वहदत छटग्रह मारान—वही, पृ० ४।
३. बो ओसुस निशि मारस त्रोवनस दूर, छि फवोल्यमग्रत्य जि ग्रजारतस गुल ग्रनार—वही, पृ० ५।
४. यारग्रह दादि क्याह बनान यारस छि बेमग्ररिये, तोरग्रह दोपनस कति आक छुय गमुक ज़ाल नग्रलिये—वही, पृ० २१।
५. खग्रदमग्रतस थावनस लछ बग्रज़ग्रह दाये, दोपनकं छु थदि पाये हाय —वही, पृ० ११।
६. परान ओख ग्रखाह या लग्रल मजनू, दोपुक यि छु कारे इश्क ओखनन च्यून—वही, पृ० १३।
७. द्रष्टव्य—लैला-मजनू, पृ० २६।
८. शहज़ादह वापस ग्रमि जायि हो द्राव, रात दोह गव सुई पकान, मंगान ओसुय परवदरिदगारस, वात नावुम पनुन शहर—वही, पृ० १२।

समय अत्यन्त विरहाकुल होता है। पूर्व-राग की स्मृति तथा साक्षात् दर्शन के पश्चात् वह प्रेमिका की अप्राप्ति के कारण विरहाग्नि मे जल उठता है। नज्द वन मे जाकर साधक मजनू अपना खाना-पीना तक छोड देता है।[१] वह सदा अपनी प्रेमिका का नाम पुकारता रहता है तथा गुफाओ मे रहकर ससार का त्याग करता है।[२] उन्मत्तावस्था मे वह तोते के हाथ अपनी प्रेमिका को सन्देश भेजता है।[३] लैला के विरह के कारण ही वह अन्त मे उसकी कबर मे समा जाता है।[४]

नायिका लैला भी प्रिय के दर्शन के बिना बीमार पड़ जाती है और प्रिय के दर्शन बिना अपने आपको विरहाग्नि के कारण सर्प द्वारा डसी हुई मानती है।[५] विरह के कारण उसका हृदय विदीर्ण होता है।[६] वह सदा प्रिय के दर्शन के लिये परमात्मा से प्रार्थना करती रहती है और उसके बिना सदा अत्यन्त सतप्त हो उठती है।[७] वह पवन को दूत बनाकर प्रिय के पास भेज देना चाहती है ताकि वह उसकी विरहावस्था का वर्णन उसके पास जाकर करे और न आने का उपालम्भ दे।[८]

इसी भाति सैयद मीर की विरहावस्था का वर्णन किया गया है जो पुत्र-विरह मे जल रहा है।[९]

संयोग शृंगार

इसमे नायक तथा नायिका को सयोग-शृगार का वर्णन पाठशाला मे मिलन के समय दिखाया गया है।[१०] दूसरी बार उस समय सयोग शृगार का

---

१. दादि लअल हअन्दि मति त्रोवमुत ख्यन—वही, पृ० २०।

२. बन्द करित सुय गव गारन, गारव मज़ी तस ओस गारन—वही, पृ० २०।

३. तोतह गच्छता दोस्तस लागो दोस्तदअरिये, बति लअगिज़म शहसवार मंगयज़म ज़ातस यअरिये—लैला-मजनू, पृ० २१।

४. पोरुन लअलि ज़मीनस सपनि पारअह, सयुन दअखअल अदअह मा द्राव दुबारह—वही, पृ० २८।

५. जामअह मुचरित ब़ावस हाल, वुछित चोलहम कालअह शहमार—वही, पृ० १८।

६. गयम जिगरस पारह पारे, शिकार मो कर मीर शिकारे—लैला मजनू, पृ० १८।

७. बो तिहिन्दे दादि गमअचछस आवारह—वही, पृ० २२।

८. चअह गछ्तो वावह वन्तस क्या बनित आव, तमिस रूजित चह बरतल बन्तस आव—वही, पृ० २४।

९. द्रष्टव्य—वही, पृ० १९। . १०. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३।

वर्णन हुआ है जब मजनू पात्र बेचने के बहाने लैला से मिलने आता है।[1] तीसरी बार उन दानो का सयोग नज्द वन मे होना है।[2] सयोग-शृगार का यह वर्णन सर्वत्र सयमित है।

ईश्वरोन्मुख प्रेम

लैला अपने सौंदर्य के कारण ईश्वर की प्रतीक है। वह सात किलो के भीतर रहती है।[3] मजनू सच्चा साधक है जो सासारिक भोगो को त्याग कर कठिनाइयो के सागर को पार करके प्रेमिका से मिलने का प्रयत्न करता है।[4] फिक्र एव जिक्र मे लीन साधक मजिलो पर आगे बढकर मधुमक्खियो का छत्ता (ईश्वर लाभ) प्राप्त करता है।[5] सच्चा प्रेमी मजनू 'ॐ' का उच्चारण करके भी आगे बढ रहा है :

ॐ परान हमसो जाने[6]

(ॐ का उच्चारण करने वाला ही 'सोऽहम्' को जान पाता है)

इस प्रकार जो साधक सासारिक प्रलोभनो मे फसता है वह एकमेक प्राप्त नही कर सकता,[7] किन्तु जो प्रेमी उस महान-सत्ता को सर्वस्व समझकर अग्रसर होता रहता है वही इस संसार-सागर को पार करके ईश्वर के साथ एकत्व प्राप्त करता है।[8] मजनू तथा लैला का प्रेम अलौकिक है जो एक-दूसरे के प्रति आकर्षित होते है।

(ख) हिन्दी में उपलब्ध सूफी-काव्यों का क्रमिक परिचय।[9]

---

१ द्रष्टव्य—वही, पृ० १५। २ द्रष्टव्य—वही, पृ० २६।

३ सतन ड्येड्यन अन्दर चाव बारअह वारै, गोमुत तस अज़ फराक ओस पारअह पारे—वही, पृ० १६।

४. गअर त करित मुस नेरान रात तअ दोह तोरकुन दोरान—लैला-मजनू, पृ० १०।

५. फिक्र नीतन लोलक्यन मज़िलन, जिक्र सअत्य थावुन ज़बअन्य हाय, माछ-गन तुलराह व्यूर ह्यत आए, मुरि मज़अ नेरियस माछ—वही, पृ० १२।

६. वही, पृ० २०।

७. गओडनिचि वति हो वनुवुन बोज़नी, तन छनअह तति मोकलान—वही, पृ० १२।

८. बजर ओठ कोनअह छुक लारान, तमि शायि आशकव दीदव वुछ्यी, तरअहवुन जानुन वुछुन दरियाव, पाकान बर हो हाये—वही, पृ० १२।

९. कवियो के साहित्यिक परिचय के लिये द्रष्टव्य—परिशिष्ट।

१—चंदायन[1]

कथा-सारांश—अत्यन्त रूपमी चाद का जन्म राजा सहदेव (राम महर) के यहा गोबर नगर मे हुआ और चार वर्ष की आयु मे ही उसका विवाह बावन के साथ हुआ। पूर्ण यौवना हो जाने पर वह पति के क्लीव होने के कारण तथा सास की झिडकियो मे तग आकर वापस अपने मायके गोबर पहुच गई। एक दिन अपने धौरहर पर खडी झरोखे मे झाकने वाली चाद को एक बाजिर (वज्रयानी सिद्ध) ने देखा और वह उस पर आसक्त होकर मूर्छित हुआ। बाजिर गोबर नगर को छोडकर चाद के विरह-गीत गाता हुआ राजा रूपचन्द के नगर मे पहुचा। रूपचन्द के सामने बाजिर ने चाद के रूप-सौंदर्य का वर्णन किया जिसे सुनकर उसने गोबर नगर पर सेना-सहित आक्रमण किया। महर को जब यह विदित हुआ कि रूपचन्द उसकी विवाहिता पत्नी चाद को हस्तगत करने के लिए ऐसी धृष्टता कर रहा है तो वह भी युद्ध के लिए तैयार हो गया। युद्ध आरम्भ हुआ और महर के प्रमुख योद्धा मारे गये। इस पर महर ने वीर लोरक के पास एक भाट भेजा ताकि वह रूपचन्द की सेना से युद्ध करे। अपनी पत्नी मैना को सान्त्वना देकर लोरक युद्ध मे लडने के लिए आया और आते ही उस वीर ने रूपचन्द की सेना के दात खट्टे कर दिए जिस पर महर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। गोबर में वीर लोरक का अत्यन्त सम्मान हुआ और उसे एक हाथी पर बैठाकर एक जुलूस निकाला गया। चाद उसे देखते ही मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पडी और उसकी दासी बिरस्पत ने उसके मुख पर पानी छिडका।

तदनन्तर चांद ने अपने प्रेमी लोरक को देखने के लिए एक भोज का आयोजन किया। वहां जब चाद शृगार करके धौरहर पर खडी हो गई तो उसे देखते ही लोरक का खाना विषवत हो गया। घर लौटने पर वह बीमार पडा और उसके उपचार के लिए वैद्य आदि बुलवाए गए। यह देखकर लोरक की मा खोलिन अत्यन्त विलाप करने लगी। दासी बिरस्पत न लोरक को भभूत लगवाकर और मदिर मे ले जाकर चाद के दर्शन करवा दिए लेकिन लोरक उसे देखते ही मूर्छित हो गया और चाद वहां से निकल आई। विक्षिप्तावस्था में वह चांद के लिए रोने लगा। उधर चाद भी अपने प्रेमी के वियोग मे छटपटाती रही।

अब लोरक अपनी प्रेमिका चांद से महल मे आकर मिलता, यहा तक कि मैना को भी दोनो के दृढ प्रेम-सूत्र का परिज्ञान हुआ। चाद ने प्रेमी लोरक को

---

१. चंदायन, मौलाना दाऊद, सपादक, डा० परमेश्वरी लाल गुप्त, प्रकाशक, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर (प्रा०) लि०, बम्बई-४, प्रथम सस्करण (१९६४), प्रति प्रयुक्त।

भाग चलने का परामर्श दिया और एक रात को वे दोनो हरदी की ओर भाग चले। बेचारी मैना वियोगावस्था मे रोने लगी। भागते हुए प्रेमी-प्रेमिका को बीच मे गगा ने व्यवधान डाला। वे तट पर ठहरे और वहा एक नाविक उपस्थित हुआ जो चाद को देखते ही उस पर आसक्त हो गया। लोरक ने प्रकट होकर उसे गगा की बीच-धारा मे बहा दिया। जब बावन को उनके भाग निकलने का पता चला तो उसने उन दोनो का पीछा किया।

चार दिन चलने के अनन्तर वे एक नगर मे पहुचे। वहा लोरक चाद को एक मदिर मे बैठाकर स्वय नगर मे खाने-पीने का सामान लाने गया। पीछे से चाद पर जादू किया गया और वह एक टूटा योगी के पीछे चल पडी। वापस आने पर चाद को वहां न पाकर लोरक उसके वियोग मे रो पडा। अन्त मे पता लग जाने पर वह चाद को प्राप्त करके हरदी पटन पहुचा। विरहाकुल मैना ने अपनी प्रेमाग्नि का सदेश लोरक को भिजवाया जिसे सुनकर वह चाद को साथ लेकर गोबर-नगर की ओर चल पडा। उधर से बावन ने आकर लोरक की अनुपस्थिति मे मैना को खूब गालिया दी थी।

घर मे आकर उसका मिलन अपनी माता खोलिन से हुआ। उसने नगर पर आक्रमण हो जाने की बात लोरक के सामने चलाई। (इसके आगे का अश अनुपलब्ध है।)

कथा का आधार तथा संगठन

डा० अस्करी के अनुसार इस काव्य का आधार एक लोक-कथा है, जो विशेषकर भागलपुर के अनेक स्थानो मे प्रचलित है।[१] चदायन की कथा, लोक जीवन मे प्रचलित कथा का ही साहित्यिक रूप है। लोरक-चदा की प्रेम-कथा, दाऊद के समय मे काफी प्रचलित लोक-कथा रही होगी।[२] उसने अपनी कथा को लोक-जीवन से ही ग्रहण किया। बगला, छत्तीसगढी, दक्षिणी तथा भोजपुरी आदि इसके कई रूप उपलब्ध हैं। भिन्न-भिन्न प्रान्तों मे इस प्रेमाख्यान के रूप मिलते है, पर उन मे बहुत अन्तर नही है। कुछ अन्तर नामो के सम्बन्ध मे दीख पडता है जो उतना महत्वपूर्ण नही है, क्योकि लोरक का नाम सर्वत्र लगभग एक-सा है और यही हाल चदा का भी है। मयनावती कही मैना है। कही मझरिया है और भोजपुरी की लोरक-कथा में कही-कही मजरी भी है। इस मैना अथवा मजरी के लिए सब से प्रमुख बात यह है कि यह सती या सतवंती

१. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ३१।

२. चंदायन, डा० परमेश्वरी लाल गुप्त, भूमिका, पृ० ५७।

कहलाती है जहा चंदा अधिकतर प्रेमिका ही है ।[१]

'चदायन' की कोई भी प्रामाणिक प्रति अभी तक नही मिल सकी । कुरान के कुछ उपदेशो का प्रचार करने का माध्यम यह काव्य था ।[२] 'मौलाना दाऊद ने चदायन' को गीत,[३] कथा-कवित्त[४] और कवित्त[५] कहा है ।

इसका सगठन भारतीय चरित-काव्यो की सर्ग-बद्ध शैली पर न होकर फारसी मसनवियो के ढग पर हुआ है । निजामी, अमीर खुसरो, जामी तथा फैजी के ढग पर लिखी होने के कारण इसमे प्रत्येक प्रसग को फारसी शीर्षको के अतर्गत रखा गया है । कथारम्भ से पूर्व कवि ने ईश्वर-महिमा,[६] पैगम्बर एव उसके चार मित्रो की महिमा,[७] शाहेवक्त फीरोजशाह तुगलक की प्रशसा,[८] गुरु वदना[९] तथा ग्रन्थ-रचना काल का उल्लेख[१०] किया है । कथारम्भ अठारहवे कडवक से आरम्भ होता है,[११] और इसकी कथा नायक प्रधान न होकर अधिकतर नायिका-प्रधान है । नायिका ही नायिक को भगाने के लिए प्रेरित करती है ।[१२] नायिका-नायक के मिलन के अनन्तर कथा का अन्त नही होता अपितु वह अत्यन्त विस्तृत हो जाती है । लोरक जब उपनायिका मैना की विरह-व्यथा से द्रवीभूत होकर नायिका की बातो को अनसुनी करके घर लौटता है, तब भी वह बेचारा सुख से न रहकर किसी न किसी रूप मे व्यग्र ही रहता है । 'चदायन' मे एक बात, जो विशिष्टरूप मे देखने मे आती है, वह यह कि दाऊद ने उसे आध्यात्मिकता और दार्शनिकता के बोझ से सर्वथा मुक्त रखा है । वे कही भी,

---

१. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा, प० परशुराम चतुर्वेदी, द्वितीय संस्करण (सन् १९८२ ई०) लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ० ६७-६८ ।

२. हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य, पृ० १० ।

३. मौलाना दाउद यह गित गाई, जे रे सुनां सो गा मुरझाई । चदायन, डा० परमेश्वरी लाल, पृ० २८६ ।

४. तोर कहा मैं यह खड गावउ । कथा-कवित्त के लोग सुनावउ । वही, पृ० २८६ ।

५. और कबित मैं करउ बनाई, सीस नाइ कर जोर ।
एक एक जो तुम्ह पूछउ, विचार कहउ जिंह तोर ।—वही पृ० २८६ ।

६. द्रष्टव्य—चदायन, पृ० ८१ ।　　७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८१ ।

८. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८२ ।　　९. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८२ ।

१०. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८४ ।　　११. द्रष्टव्य—वही, पृ० ८५ ।

१२. लोर कहसि बिरस्पत, यहि लै नगर पराइ ।
आज राति लै निकरी, नतुर मरौ भोर बिस रवाइ । वही, पृ० २३९ ।

परवर्ती प्रेमाख्यानकारो की तरह धार्मिक प्रवचक के रूप मे आत्मा-परमात्मा, साधक और साधना की बात करते दिखाई नही पडते।[1] दाऊद की सूफी प्रेम-गाथा 'चदायन' का उल्लेख सर्वप्रथम, कदाचित 'नूरक चदा' के नाम से किया गया था।[2]

इसकी आधिकारिक कथा का सम्बन्ध चाद तथा लोरक के मिलन से है। कथा के विकास के लिए अन्य प्रासगिक कथाओ का भी समावेश हुआ है। इस मे युद्धो का भी वर्णन हुआ है।[3] खडित कथा सुखान्त है।

प्रेम पद्धति

इसमे नायक, नायिका तथा उपनायिका तीनों ही विवाहित है। नायिका चाद का विवाह बावन के साथ हुआ है।[4] उपनायिका मैना लोरक की पत्नी है।[5] लोरक का प्रेम परकीया नारी चाद के साथ है। साक्षात्-दर्शन से ही चाद तथा लोरक एक-दूसरे पर आसक्त होते है।[6] पहले चदा और तत्पश्चात् लोरक एक-दूसरे का साक्षात् दर्शन करके मूर्छित हो जाते है। भारतीय प्रेम-परम्परा के अनुसार प्रेम का वेग नायिका मे ही अधिक तीव्र प्रदर्शित किया गया है। सतीत्व की महत्ता,[7] वीरता तथा युद्ध आदि का वर्णन उचित ढग से कई स्थानो पर हुआ है।

प्रेम-तत्व

'सूफी कवियो ने प्रेम को ही अपने काव्यो का मुख्य आधार बनाया है। प्रेम या रति, शृगार का स्थाई भाव है। दाऊद ने प्रेम के अर्थ मे ही 'रग' शब्द

---

१. वही, भूमिका, हप० ६१।

२. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० २८।

३. द्रष्टव्य—चंदायन, पृ० १५०-१५६।

४. लाये बरन्हि बावन कह, चादा आरति दीन्ह उतार,
 जास सराकत देखेउ नाही, बेटवा भीभर बार—चदायन, पृ० १०४।

५. आगे आइ ठाढि धनि मैनां। नीर समुंद जस उलटै नैना—वही, पृ० १४८।

६. चादहि लोरक निरख (नि) हारा। देखि विमोही गयी बेकरारा—वही, पृ० १६२।

× × ×

चांद सीस भगवन्तहि नावा। भा अचेत मन चेत गवावा—वही, पृ० १८४।

७. माह मास मो यो घुघुवाई। लागी सीउ न पीउ तन जाई—वही, पृ० ११०।

का प्रयोग किया है।[1] प्रेम-रग या रति-रंग का सकेत इस 'रग' शब्द मे निहित है :

रग बिनु पान खिसाबमि मोही। सो रग इह न देखेउ तोही।
रग बिनु बातहि भाउ बनावा। तुम लोरक रग अनतै आवा।[2]

काव्य का नायक लोरक तथा नायिका चाद एक दूसरे पर आकृष्ट होने के अनन्तर पारस्परिक मिलन के लिये प्रयत्नशील रहते है। चाद तथा लोरक दोनों विवाहित है किन्तु विरह की विगी लग जाने पर चाद अपने प्रेमी लोरक की प्राप्ति के लिये कठिनाइयो की परवाह नही करती। लोरक सूर्य[3] तथा चाद चद्रमा है।[4] चाद विवाहित होकर भी अपने दृढ चरित्र का परिचय देता है। प्रेम में विघ्न डालने वाला नाविक[5] तथा बावन उसका कुछ भी बिगाड नही सकते।[6] लोरक भी प्रेम-रोग मे पीडित होता है तथा उस पर औषधि आदि का तनिक भी प्रभाव नही पड़ता :

चल खोलिन तोर कहा रोगी। मकु औखद जानउं वहि जिउकी।
× × ×
यह गुन गुनी तिर परधाना। यह बियाधि न औरवद जाना ॥[7]

विप्रलम्भ शृंगार

इस प्रबन्ध काव्य मे कवि ने एक नायक और दो नायिकाओ का समावेश किया है। प्रथम नायिका विवाहिता पत्नी है तथा दूसरी प्रेयसी, जो बाद मे पत्नीत्व प्राप्त करती है। नायक लोरक और नायिका चाद के विरह के साथ

---

१. द्रष्टव्य––मूल शोध-प्रबन्ध-मध्यकालीन हिन्दी-कवियो के सकेतिक और व्यवहृत काव्य-सिद्धान्तो का अध्ययन, डा० छविनाथ त्रिपाठी, हिन्दी-विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र (सन् १९६५ ई०) पृ० ३६९।
२. चन्दायन, सम्पादक, डा० परमेश्वरीलाल गुप्त, पृ० २१९।
३. सुरुज सनेह चाद कुमलानी। जाइ बिरस्पत छिरका पानी––चदायन, पृ० १६२।
४. दिन एक चाद धौरहर ढाढी। झाकसि माथ झरोखा काढी। वही, पृ० ११२।
५. अगों चांद सयानी, पाछे लोरक वीर। दयी सयोग गाग तर आयि। बूड़त पावा तीर––वही, पृ० २५१।
६. बावन धनुक सो दीन्ह उदारी। बारह बरिख तजी मैं नारी। वही, पृ० २५८।
७. वही, पृ० १७८।

इस मे मैना तथा खोल्निन के वियोग का भी वर्णन हुआ है। लोरक अपनी प्रेयसी चाद के लिए विरहाकुल बनता है किन्तु उसकी प्राप्ति के निमित्त कोई चेष्टा नही करता है।[1] वह केवल जोगी बनकर प्रेमिका के दर्शन की अभिलाषा से मन्दिर मे प्रतीक्षा करता रहता है।[2] मार्ग की कठिनाइयो मे चाद की ही प्रधानता प्रतीत होती है जबकि लोरक केवल एक सहायक के रूप मे प्रदर्शित होता है।

नायिका चाद को नायक लोरक के मिलन तक ही विरह सहन करना पडता है किन्तु लोरक को अपनी पत्नी मैना की व्यथा-गाथा भी सुननी पडती है। मैना का विरह-वर्णन करते हुए कवि ने बारह मासे का चित्रण किया है।[3] मौलाना दाऊद ने प्रेम और विरह को ही सर्वाधिक और व्यापक रूप से चित्रित किया है।[4] मैना को, अपने पति के बिना तिल-भर भी विश्राम नही मिलता :

मालिन कहा लोर बहि, रोवत मैना जाइ।
आग लाग मुन बिस्तर, जरते जाइ बुझाइ ॥[5]

सयोग-शृंगार

इस काव्य मे सयोग शृ गार का वर्णन कई स्थलो पर हुआ है। चाद तथा लोरक के सयोग-शृ गार को ही अधिक प्रमुखता दी गई है। नायिका चाद अपने प्रेमी लोरक का दर्शन भोज के समय तथा मदिर मे भी करती है। शयना-गार मे जब नायक-नायिका का मिलन होता है तो कवि ने सयोग-शृ ंगार का वर्णन कुछ असयमित रूप से किया है।[6]

रूप-सौन्दर्य वर्णन

इस काव्य मे चाद का रूप-सौदर्य वर्णन शास्त्रीय तथा लोक-परम्परा पर आश्रित है। चाद का जन्म होने पर सहदेव का मन्दिर इस धरती पर स्वर्ग के समान हो उठता है :

---

१ अब न खाइ अन पानी, दिन दिन जाइ कुमलात—चदायन, पृ० १७७।

२. सिध पुरुख मढि, घर तर सूर दुवार।
भगत मोर बनखड़ गये, चाद नाम ना निसार—चदावन, पृ० १८२।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३०४-३०८।

४ वही, भूमिका, पृ० ६०। ५. वही, पृ० २१४।

६. रंग के बात कहउं सुनु लोरा। कैसे रात मोह मन तोरा।
जात अहीर रग आह न तोही। रग बिनु निरंग न राता होई।
—वही, पृ० २०६।

सहदेव मदिर चाद औतारी । धरती सरग भई उजियारी ।[1]

यह ससार उसके ही सौंदर्य से प्रकाशित है जिसे देखकर सभी मोहित होते है :

तिरहुत अउध बदाऊ जानी । चहूं भुवन अस बात बखानी ।[2]

चाद के रूप सौंदर्य को देखकर केवल लोरक ही विमोहित नही होता[3] अपितु बाजिर,[4] रूपचन्द[5] और मल्लाह[6] भी उस पर आसक्त होते है। कवि ने उसका वर्णन नख से शिख तक किया है।[7] उसके केशो का वर्णन इस प्रकार किया गया है :

भवर बरन सो देखी बारा । जनु विसहर लर परे भडारा ।[8]

दातो का वर्णन भी दर्शनीय है :

अधर बहिर जो हसे कुवारी । बिजरी लोक रैन अधियारी[9]

चाद के रूप-वर्णन की भाति इस काव्य मे लोरक के सौदर्य का भी वर्णन हुआ है ।[10]

२—मृगावती[11]

कथा-साराश—चद्रगिरि के राजा गणपति देव पर लछमी की असीम कृपा थी किन्तु सतान के अभाव मे वह सदा दु:खी रहता था । अपनी वश-परम्परा के लुप्त होने की चिन्ता मे कहता है :

जो कुछ चाहे सो सब अहा, एक ना पूत नाउ जेहि रहा ।[12]

---

१. चदायन, डा० परमेश्वरी लाल गुप्त, पृ० ६८ ।

२. वही, पृ० ६६ ।

३. नैन दिस्टि चादा लायसु । दहा खाइ न सो देखे पायसु । वही, पृ० १८४ ।

४. घरहुत जीउ न जाने कितगा, क्या भई किनु सास ।
नैन नीर देह मुह छिरकहि, आये लोग जिहि पास । वही, पृ० ११२ ।

५. सभ सिंगार बाज़िर जो कहा । राजा नैन वैतरनी बहा । वही, पृ० १३२ ।

६. गुन बाधी वह खेवट, सरगा घेरी आई ।
लेके पार उतारो सो धनि, जौलहि लोगहिं आइ । वही, पृ० २५० ।

७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ११७-१३१ ।

८. वही, पृ० ११८ । ९. वही, पृ० ११८ ।

१०. सहसकरा सुरुज कै, रहै चांद चित्त छाइ ।
सोरहकरा चांद कै, भयी अमावस जाइ ।—वही, पृ० १६२ ।

११. मृगावती, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, प्रति प्रयुक्त ।

१२. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ६१ ।

पर्याप्त दान देने के अनन्तर भगवान ने उस पर दया की और उसके घर एक पुत्र-रत्न की उत्पत्ति हुई जिसका नाम राजकुमार रखा गया। वह दस वर्ष की आयु मे ही पडित बन गया।

राजकुमार आखेट-प्रेमी था। एक दिन बन मे एक सतरगिणी हरिणी के दर्शन से आश्चर्य-चकित होकर वह उसके पीछे भागा। वह हरिणी सरोवर के निकट छिप गई और राजकुमार उसकी प्राप्ति की अभिलाषा मे वही ठहर गया। वर्षा-ऋतु की भाति उसके नेत्रो मे वियोगाग्नि के कारण आसू फूट पडे। हरिणी पर मोहित होने के कारण वह घर न लौटा। उसका चिन्तित पिता सरोवर-तट पर पुत्र को समझाने के लिये उपस्थित हुआ। वहा राजा ने सरोवर के समीप ही एक भव्य मदिर का निर्माण किया। ऋतुए बदलती रही किन्तु राजकुमार का मन उस सुन्दर एव आकर्षक हरिणी से कभी भी पीछे न हटा।

एक दिन उस सरोवर पर सात अप्सराए मृगावती-सहित वहा आ पहुची। वे सभी उडने की कला मे सिद्धहस्त थी तथा वेश एव अपने स्वरूप को परिवर्तित कर देने की कला मे भी निपुण थी। मृगावती को देखते ही राजकुमार उस ओर बढा किन्तु वे सभी उडकर चली गई। इसके अनन्तर मृगावती अन्य सखियो के साथ सरोवर मे स्नान करने आई। राजकुमार ने छद्म वेश मे आकर उसके कपडे चुरा लिये जिस पर मृगावती ने उसे खूब फटकारा। राजकुमार ने अपना प्रेम प्रकट करते हुए कहा कि वह पिछले दो वर्षों से उसके लिये ही वहा बैठा है। उसके लिये ही उसने अपना घर त्याग दिया है। उसने जबसे उसे हरिणी के रूप में देखा था, तभी से वह उस पर मोहित हुआ था। इस पर मृगावती ने कहा कि पहली बार उसने उसके लिये ही मृग का रूप धारण किया था और दूसरी बार वह उसी के लिये वहा स्नान करने आई थी क्योकि एकादशी के पवित्र-दिवस पर ही उसने उसके साथ भेट करने का दृढ सकल्प किया था।

इसके अनन्तर दोनो मन्दिर मे गए और सुख-पूर्वक रहने लगे। एक बार राजकुमार पिता से मिलने गया और पीछे से मृगावती उडकर अपने घर काचनपुर चली गई। वापस आने पर राजकुमार विरह-व्यथा से सतप्त हुआ। अपनी प्रेमिका को ढूढने के लिये वह योगी बनकर घर से निकल पड़ा। वह सागर से घिरे एक पर्वत पर पहुंचा जहा रुकमिन नामक एक सुन्दरी को उसने राक्षस के चगुल से बचा लिया। उस सुन्दरी के पिता ने राजकुमार के साथ उसका विवाह कर दिया। तत्पश्चात् राजकुमार कांचनपुर पहुंचा जहा मगावती अपने पिता की मृत्यु पर सिंहासन पर बैठकर राज्य कर रही थी।

वहा राजकुमार बारह वर्ष रहा और उनसे दो पुत्र उत्पन्न हुए। पिता द्वारा बुलवाए जाने पर राजकुमार मृगावती को साथ लेकर वापस चद्रगिरी आया और मार्ग मे उसने रुकमिन को भी ले लिया। वह बहुत दिनो तक आनन्दपूर्वक रहा। एक दिन आखेट करते समय वह हाथी से गिरकर मर गया और उसकी दोनो रानिया उसके साथ सती हो गई।

कथा का आधार तथा संगठन

'मृगावती' का कथानक सभवत: किसी लोकप्रिय प्रचलित प्रेमकथा पर ही आश्रित रहा होगा और इस बात की ओर कवि ने स्वय भी सकेत किया है।[1] कुतबन ने कहा है कि यह कथा पहले हिन्दुओ मे प्रचलित थी और फिर उन (हिन्दुओं) से तुर्को मे आई। मैंने इस कथा का रहस्य समझाया है। इसमे योग के अतिरिक्त शृंगार एव वीर रसो का भी समावेश है:

पहले हिन्दुइ कथा अहइ, फिन रे गान तुरकइ ले गहर।
फिन हम खोल अरथ मब करा, जोग सिंगार पीर रस अहा ॥[2]

. ग्रन्थारम्भ मे कवि ने निर्गुण-महिमा, मुहम्मद साहब तथा उनके चार मित्रो अबूबकर, उसमान, उपर तथा सिद्दीक की वदना की है। तदनन्तर उसने शाहेवक्त, अपने पीर तथा ग्रन्थ-रचना के काल एव आधार का परिचय दिया है। कथा का सगठन सर्गबद्ध न होकर प्रसगानुकूल शीर्षको के अन्तर्गत किया गया है। चौपाइयों की पाच पक्तियो के पश्चात् एक दोहे का क्रम रखा गया है। स्वय कुतबन का कथन है कि मैंने इसे केवल दोहा, चौपाई, सोरठा, अरिल्ल आदि मे लिपिबद्ध कर दिया।[3] आधिकारिक कथा नायक राजकुमार तथा नायिका मृगावती से सम्बन्धित है और उन दोनो का तादात्म्य ही कवि का अभीष्ट है। नायिका तथा नायक दोनो प्रथम-दर्शन के समय अविवाहित है किन्तु नायक मार्ग की कठिनाइया सहन करते हुए नायिका से कांचनपुर मे मिलन से पूर्व रुकमिन से विवाह करता है। राजकुमार तथा रुकमिन की कथा इसमे प्रसग रूप से आई। क्योकि किसी नारी को नायक द्वारा राक्षस से बचाया जाना कथा-रूढि के परिपालन के लिये ही अपनाया जाता रहा है।

प्रेम-पद्धति

इसमे नायक-नायिका का प्रेम साक्षात्-दर्शन मे उद्भूत होता है। हरिणी के रूप में अपनी प्रेमिका मृगावती को देखकर नायक राजकुमार उस पर मोहित

---

१. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ७० ।

२. मध्ययुगीन । प्रेमाख्यान, पृ० ६८ ।

३. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ११२ ।

होता है। वह उसी के विरह मे तडप कर सरोवर-तट पर ही निवास करता है। नायिका का रूप बदलना केवल नायक की परीक्षा का ही द्योतक है। वह कहती है :

मृगावतिन्ह कहा सुन राया, तुमहि लाभ मृग धरि हम छाया ।[1]

दोनो का यह प्रेम अखण्ड है। नायिका का नायक की अनुपस्थिति मे उडकर काचनपुर जाना प्रेम-मार्ग की कठिनाइयो को दिखाने के लिये ही सृजित किया गया है। प्रबन्धकाव्य का प्रेम कही भी लोकाचार से बाह्य नही है।

विप्रलम्भ शृंगार

सूफी ईश्वर तथा जीव के विरह और प्रेम के उपासक है। कुतबन ने विप्रलम्भ शृगार की चर्चा करते हुए कहा है कि साक्षात्-दर्शन के अनन्तर प्रिया एवं प्रेमी, नायिका एव नायक दोनो ही विरह-पीडित रहते है। मृगावती अपने प्रेमी राजकुमार से प्रथम-मिलन के समय कहती है :

दूसरे तोह लाग लौ आयौ, सीख सहेलिन्ह बात लगायो ।
पुन यह कहूं एकादश केरा, आमी वेग न लायो बेरा ।[2]

उनका यह मिलन चिरस्थायी नही रहता और मृगावती उडकर कांचनपुर भाग जाती है। इस ओर मलिक मुहम्मद जायसी ने भी सकेत करते हुए 'पद्मावत' मे नायक राजकुमार के विषय मे कहा है :

राजकुवर काचनपुर गएऊ, मिरगावति कह जोगी भएऊ ।[3]

इस प्रबन्धकाव्य मे विरह का वर्णन तीन बार आया है। प्रथम राजकुमार मृगावती के विवाह-पूर्व, दूसरा मृगावती के वापस काचनपुर उड जाने के समय और तीसरा दोनो पत्नियो का पति के साथ सती होने के समय हुआ है। विवाह-पूर्व दोनो (नायक एव नायिका) का विरह एक-जैसा है। राजकुमार सब-कुछ छोड़कर सरोवर-तट पर रहने लगता है। अपनी प्रेमिका से मिलन की चिन्ता मे व्यस्त नायक आसुओ की झड़ी लगा देता है :

जब भादो बरसे आश्विन, सब जग भरा नैन के पानिन[4]

उनका यह विरह मिलन हो जाने के समय समाप्त होता है। मृगावती के

---

१. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ६७।

२. वही, पृ० ६७-६८।

३. जायसी-ग्रन्थावली, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, प्रकाशक, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद (१९५२), प्रथम सस्करण, पृ० २७६।

४. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ६६।

उड कर चले जाने के अनन्तर राजकुमार का विरह अत्यन्त तीव्र हो उठता है। वह उन्मत्त होकर उसकी तलाश मे काचनपुर पहुच जाता है। उसका तन एव मन विरह से व्याकुल है और वह अपनी सम्पूर्ण भावनाये केवल मृगावती को ही समर्पित करता है। उधर से विरह-विधुरा मृगावती कहती है :

बहुरि वियोग भएउ सिर सेती, कहेसि बात नाहिं आवहि एती।[१]

वज्र का कलेजा रखने वाला ही इस विरह को सहन कर सकता है·

वज्र करेजा जाही कर, भावी योग उर ताही।[२]

योगी राजकुमार सागर, पर्वत तथा दुर्गम स्थानो को पार करके आगे बढ़ता है जब तक कि उसे प्रेमिका के दर्शन नही होते। अन्तिम समय कथा वियोगान्त बन जाती है :

मिरगावति औ रुकमिनि लेके, जरि कुवर के साथ।
भसम भइ जर तिल येक, चिन्ह न रहा गात।[३]

संयोग-शृंगार

इस काव्य मे नायक राजकुमार तथा नायिका मृगावती का सयोग आत्मा-परमात्मा के मिलन की ओर सकेत करता है। सयोग-शृगार का वर्णन इसमे दो स्थानो पर हुआ है। प्रथम एकादशी के दिन तथा दूसरा काचनपुर मे विवाह होने के समय जब कि उन दोनो का पुर्नमिलन होता है। गार्ह्स्थ्य-जीवन की झाकी इस मे प्रस्तुत की गई है तथा नायक-नायिका के घर दो पुत्र-रत्नो का जन्म होता है, काचनपुर मे मिलन की कुछ पक्तियां देखिए :

दुऔ सेजपर बैसे जाई। मृगावती पुनि बात चलाई
आपनि विरत कहु मोहि आगे। आयेहु तौ चित के रिस लागे।[४]

इसमें राजकुमार तथा रुकमिन का संयोग-शृ गार भी सयमित रूप मे चित्रित किया गया है।

ईश्वरोन्मुख प्रेम

इस में कवि ने प्रेम-कहानी से ईश्वर के प्रति साधक के प्रेम की व्यजना की है।[५] मृगावती का सरोवर-तट पर आकर आत्म-समर्पण करना आत्मा-परमात्मा के मिलन के अतिरिक्त और कुछ नही है :

---

१. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० ११४। २. वही, पृ० ११४।
३. वही, पृ० ११७। ४. वही, पृ० ११६।
५. सूफीमत और हिन्दी-साहित्य, पृ० ११४।

कुवर कहा कस तौर न मानू, तोह जीव हू आपन जानू ।[1]

विवाह भी एक प्रकार का मिलन है। पति के साथ सती होना तादात्म्य की भावना को परिपुष्ट करता है।

३—पद्मावत[2]

कथा-सारांश—लावण्यमयी पद्मावती सिहल द्वीप के राजा गधर्वसेन और रानी चम्पावती की कन्या थी। बारह वर्ष की होने पर उसे सात खण्ड वाले महल मे अलग स्थान दिया गया। राजभवन मे हीरामन नाम का एक अद्भुत तोता था जिसे पद्मावती बहुत चाहती थी। जब वह युवावस्था को प्राप्त हुई, उसके रूप की ज्योति भूमण्डल मे सर्वत्र व्याप्त हुई। देश-देशान्तरो के राजा उसके परिणयार्थ आते किन्तु राजा अभिमानवश उन्हे आख तक मे न लाता था। इसी कारण पद्मावती का विवाह कही भी न हुआ। मदन सतप्त पद्मावती को तोते ने आश्वासन दिया कि वह देश-देशान्तरो मे जाकर उसके लिये योग्य वर खोजने का प्रयत्न करेगा। इसी कारण हीरामन बन की ओर उड गया जहां उस एक बहेलिए ने उसे पकड लिया। बहेलिए ने उसे एक ब्राह्मण को बेच दिया।

ब्राह्मण ने उसे चित्तौड पहुचकर राजा रत्नसेन को एक लाख रुपये मे बेच दिया।

राजा रत्नसेन के शिकार के जाने पर तोते ने नागमती के सम्मुख पद्मावती के रूप-सौदर्य का वर्णन किया। इससे नागमती चिन्तित हुई। उसने सोचा कि यदि यह तोता रत्नसेन से यह बात कह देगा तो वह उसे छोडकर सिहल की ओर उस (पद्मावती) की प्राप्ति के लिए प्रस्थान करेगा। उसने यह तोता धाय को मारने के लिए दिया। तोते को राजा का प्रिय समझकर धाय ने उसे नही मारा अपितु अपने पास छिपा लिया। राजा के वापस आने पर जब तोते की खोज हुई, तभी नागमती राजा को क्रुद्ध एव सतप्त देखकर धाय के पास जाकर तोता ले आई। तोते ने राजा के सामने सत्य बात बतलाते हुए पद्मावती के शृगार का नख-शिख वर्णन किया जिसे सुनते ही रत्नसेन मूर्छित हुआ। होश मे आने पर वह रोने लगा। हीरामन तोते के समझाए जाने पर भी वह धैर्य धारण न कर सका और सिहल-द्वीप जाने को तैयार हुआ। तोते के कथनानुसार उसने भोग छोड़कर योगी का रूप धारण करते हुए मेखला, सिंघी, चक्र, धधारी आदि धारण किए और अपने आथ सोलह सहस्त्र योगी राजकुमारों को साथ ले सिहल की

---

१. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ६८।

२. जायसी ग्रन्थावली, सपादक, माताप्रसाद गुप्त, प्रकाशक, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण (सन् १९५१ ई०), प्रति प्रयुक्त।

ओर चल पडा । पत्नी नागमती और माता के विलाप की उपेक्षा करके वह तोते को पथ-प्रदर्शक गुरु बनाकर आगे बढता गया ।

योगी रत्नसेन के आगमन तथा उसके रूप एव गुण आदि का वर्णन तोते के मुख से सुनकर पद्मावती उल्लसित हुई । वसत पचमी के दिन जब वह मदिर मे आई तो रत्नसेन उसके प्रथम-दर्शन मे ही मूर्छित हुआ । उसके वक्षस्थल पर चन्दन से यह लिखकर चली गई कि तूने अभी भिक्षा के योग्य भोग नही सीखा है, जब समय आया तू सो गया । जागने पर वह रो उठा और उसने मरने का निश्चय किया किन्तु वहा महादेव तथा पार्वती उसकी रक्षार्थ आ गए । उन्होने परीक्षा द्वारा उसे सच्चा प्रेमी जानकर सिद्धि-गुटिका प्रदान की ।

सिद्धि-गुटिका प्राप्त करके राजा महल मे घुसा । रत्नसेन ने नौकरो से कहा कि मै राज-कन्या पद्मावती का भिक्षारी हू । यदि वह मुझे दी जाए तो मै लौट जाऊगा । नौकरो द्वारा यह बात सुनकर राजा गधर्वसेन अत्यन्त क्रोधित हुआ । इस समय रत्नसेन ने पद्मावती को एक पत्र भेजा । अत मे महादेव, विष्णु और हनुमान द्वारा रक्षित रत्नसेन के साथ पद्मावती का विवाह हुआ ।

उधर नागमती के दिन विरह के कारण दुःख मे व्यतीत हो रहे थे और इधर रत्नसेन तथा पद्मावती सुख से जीवन-यापन कर रहे थे । एक पछी नागमती की विरहावस्था का सदेश लेकर सिहल पहुचा । शिकार को आए रत्नसेन को पक्षियों के वार्तालाप से नागमती की विरह-वेदना का परिचय मिला और वह मार्ग मे काफी कठिनाइया झेलने के अनन्तर चित्तौड पहुचा ।

यक्षिणी सिद्ध राघवचेतन को रत्नसेन ने वाममार्गी समझ देश-निकाला दे दिया । उसने जाकर दिल्ली के सुल्तान अलाउद्दीन के सामने पद्मावती के रूप-सौदर्य का बखान किया । वह पद्मावती को प्राप्त करने के लिए लालायित हो उठा । उसने दल-बल सहित चित्तौड़ पर आक्रमण किया । आठ वर्ष तक गढ जीता न जा सका । उसने एक चाल चल कर राजा से सधि की और दर्पण मे पद्मावती के प्रतिबिम्ब का दर्शन करके मूर्छित हुआ । जब राजा उसे गढ-द्वार तक छोडने आया, अलाउद्दीन ने उसे संकेत से पकडवाकर दिल्ली के कारगार में बन्द किया ।

पद्मावती ने धैर्य तथा बुद्धि से कार्य लेकर गोरा-बादल की सहायता से रत्नसेन को छुडवाकर ले आई । चित्तौड पहुंचने पर रत्नसेन ने पद्मावती द्वारा कुभलनेर के राजा देवपाल का घृणित प्रस्ताव सुनकर क्रोधित हो उस पर आक्रमण किया । इस युद्ध में रत्नसेन और देवपाल दोनों मारे गए तथा पद्मावती एव नागमती अपने पति के शव के साथ सती हो गई । अन्त में जब अलाउद्दीन गढ में पहुंचा तो उसे सर्वत्र राख के ढेर के सिवा कुछ भी न मिला ।

छार उठाइ लीन्हि एक मूठी । दीन्हि उडाइ पिरिथमी भूठी ।[1]

इस काव्य की कथा का सक्षिप्त रूप स्वय जायसी ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है :

सिघल दीप पदुमिनी रानी । रतनसेनि चितउर गढ आनी,
अलाउदी ढिल्ली सुलतानू । राघौ चेतन कीन्ह बखानू ।
सुना साहि गढ छेका आई । हिन्दू तुरकहि भई लराई ।
आदि अत जसि कथ्था अहै । लिखि भाषा चौपाई कहै ।[2]

कथा का आधार तथा संगठन

'पद्मावत' की सपूर्ण आख्यायिका को दो भागो मे विभाजित किया जा सकता है । रत्नसेन की सिहल-द्वीप-यात्रा से लेकर पद्मिनी को प्राप्त कर चित्तौड लौटने तक की कथा पूर्वार्द्ध[3] तथा राघवचेतन के देश निकाले जाने से लेकर पद्मावती एव नागमती के सती होने तक उत्तरार्द्ध[4] माना जा सकता है । इस काव्य के पूर्वार्द्ध का आधार कल्पित है अथवा कोई लोककथा, इस विषय मे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मत है कि उत्तर भारत मे, विशेषत अवध मे 'पद्मिनी रानी और हीरामन सुए' की कहानी अब तक प्राय. उसी रूप मे कही जाती है जिस रूप मे जायसी ने उसका वर्णन किया है । जायसी इतिहास-विज्ञ थे इस से उन्होने रत्नसेन, अलाउद्दीन आदि नाम दिये है, पर कहानी कहने वाले नाम नही लेते है । जायसी ने प्रचलित कहानी को ही लेकर सूक्ष्म व्योरो की मनोहर कल्पना करके, उसे काव्य का सुन्दर रूप दिया है । प० परशुराम चतुर्वेदी का कथन है कि 'जायसी ने अपनी प्रेम-कहानी का कथानक राजस्थान के इतिहास से लिया है और उसे अपने ढंग से काम मे लाया है ।[5] दानबहादुर पाठक ने लिखा है कि पद्मावती की कथा इतिहास-प्रसिद्ध है । कवि ने उसमे अपनी ल्पना का समावेश कर, उसे एक अद्भुत स्वरूप प्रदान किया है ।[6] टाड ने

---

१ जायसी-ग्रन्थावली, सपादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ५५४ ।
२. वही, पृ० १३५ ।
३. द्रष्टव्य—जायसी ग्रन्थावली, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २०५-४०३ तथा पृ० ४१६-५५४ तक ।
४. जायसी ग्रन्थावली, सम्पादक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, चतुर्थ सस्करण (सवत् २००६) भूमिका, पृ० २६ ।
५. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ५६-५७ ।
६. जायसी और उनका पद्मावत, प्राक्कथन लेखक, डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्रकाशक, हिन्दी साहित्य ससार, दिल्ली, प्रथमावृत्ति (१६५६), पृ० १०५ ।

अपने राजस्थान मे रत्नसेन का नाम भीमसी (भीमसिह) दिया है। 'आईने-अकबरी' मे भीमसी के स्थान पर रत्नसी (रत्नसेन या रत्नसिह) नाम दिया गया है।

जायसी ने इसे लिखते समय, अधिक से अधिक प्रचलित कथा-रूढियो को अपनाया होगा।[1] पद्मावत का अंग्रेज़ी अनुवाद करने वाले विद्वान, ए-जी-शिरेफ ने इस बात को सभव बताते हुए, कि जायसी 'कथा सरित्सागर' से परिचित था, अपनी पुस्तक की भूमिका मे कहा है कि कम से कम इस रचना की मुख्य कथा के राजा रत्नसेन एव पद्मावती के किसी सूए की सहायता से विवाहित होने वाले प्रसंग का सम्बन्ध तो उसकी उस कथा के साथ जोडा ही जा सकता है जिसमे रत्नसेन की ही भाति रूपसेन जैसा नाम के राजा को कोई 'हीरामन' जैसा चूडा-मन तोता पद्मावती जैसी चद्रावती के साथ विवाह करने मे अपनी भविष्यवाणी द्वारा सहायक सिद्ध होता है।[2]

'पद्मावत' की रचना सस्कृत काव्यो की सर्गबद्ध पद्धति पर न होकर फारसी की मसनवी शैली पर की गई है। ग्रन्थारम्भ मे कवि ने निर्गुण-स्तुति,[3] हज़रत मुहम्मद और उसके चार मित्रों की प्रशसा,[4] शाहेवक्त का गुणगान,[5] गुरु-प्रशसा[6], आत्म-परिचय[7] के पश्चात् ग्रन्थ-रचना-समय[8] का उल्लेख किया है। कथारम्भ के अनन्तर कवि ने दो घटना-चक्रो का सगठन अत्यन्त कुशलता से किया है। पूर्वार्द्ध का साम्य 'मृगावती' के साथ लक्षित होता है क्योकि इस मे रत्नसेन 'मृगावती' के राजकुमार की भाति ही जोगी वेश धारण करके अपनी प्रेमिका से मिलने के लिए घर छोड देता है और विविध कष्टो को झेलता हुआ कई परीक्षाए देता है। उत्तरार्द्ध मे वर्णित घटनाओ को वस्तुतः 'चदायन' की प्रमुख सघर्ष-प्रधान प्रसगो वाली कोटि मे रखा जा सकता है।[9] राघवचेतन की सृष्टि कल्पना-प्रसूत है। अलाउद्दीन के चित्तौड गढ घेरने पर उसके द्वारा सधि का

---

१. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ८०।

२. पद्मावत, प्रकाशक, रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ बगाल (१९४४), पृ० १४४।

३. द्रष्टव्य—जायसी-ग्रन्थावली, सपादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १२१-१२६।

४. द्रष्टव्य—वही, पृ० १२७।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ० १२८-१३१। ६. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३१-१३३।

७. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३३-१३५। ८. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३५।

९. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ५७।

प्रस्ताव[1] दर्पण मे पद्मिनी के आकस्मिक देखे जाने की घटना[2] तथा रत्नसेन का देवपाल द्वारा मारा जाना[3] आदि कई घटनाए कवि ने अपनी कल्पना के आधार पर सगठित की है। रत्नसेन का अलाउद्दीन के शिविर मे बन्द होने की अपेक्षा दिल्ली मे बदी होना, रानियो का विरह एव विलाप, देवपाल और अलाउद्दीन का दूती भेजना, बादल एव उसकी स्त्री का सवाद, देवपाल की कल्पना आदि बाते भी कवि की अपनी मौलिक उद्भावना के स्रोत हैं। नागमती वाले प्रसग को पद्मावत मे समाविष्ट करके जायसी ने इसमे भारतीय प्रेमाख्यानो के सब से महत्वपूर्ण अग सत निर्वाह' की भी प्रतिष्ठा कर दी है।[4] संदेशपरक रच-नाओ से प्रभावित होकर ही उसने इस मे नागमती की विरह-व्यथा का वर्णन किया है। 'जायसी ने इस सम्पूर्ण कथा को आध्यात्मिक रूप मे ढाल दिया है। चौदह भुवन मनुष्य के शरीर मे ही है अत. पिड मे ही ब्रह्माण्ड है। कथा मे चित्तौड शरीर है, एव रत्नसेन मन, सिहल हृदय, पद्मावती बुद्धि, हीरामन तोता गुरु, नागमती प्रपच, राघव-चेतन शैतान और अलाउद्दीन माया है।'[5] इस का कथानक घटना-प्रधान न होकर चरित्र-प्रधान है।[6] डा० छविनाथ त्रिपाठी के कथनानुसार पद्मावत को मसनवी शैली का महाकाव्य कहने की अपेक्षा मुस्लिम दृष्टिकोण को उदारता से अक मे लिए एक ऐतिहासिक-धार्मिक काव्य

---

१. सरजा सेती कहा यह भेऊ। पलटि जाहि अब मानै सेऊ।
कहु तोसो न पदुमिनी लेऊ। चूरा कीन्ह छाडि गढ़ देऊ।
—जायसी-ग्रन्थावली, सपादक, डा० माताप्रसाद गुप्त पृ० ४७८।

२. विहसि झरोखे आइ सरेखी। निरखि साहिदरपन मंह देखी।
होतहि दरस परस भा लोना। धरती सरग भरउ सब सोना।
—वही, पृ० ५०१।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५५१।

४. हिन्दी सूफी-प्रेमाख्यान, पृ० ५७।

५. मैं यह अरथ पडितन्ह बूझा। कहा कि हम्ह किछु और न सूझा।
चौदह भुवन जो तर उपराही। ते सब मानुख के घट माही।
तन चितउर मन राजा कीन्हा। हिय सिघल बुधि पदुमिनि चीन्हा।
गुरु सुआ जेइ पथ देखावा। बिनु गुरु जगत को निरगुन पावा।
नागमती यह दुनिया धधा। बांचा सोइ न एहि चित बंधा।
राघव दूत सोइ सैतानू। माया अलाउदी सुलतानू।
—जायसी-ग्रन्थावली, सम्पादक, डा० माता प्रसाद गुप्त, पृ० ५६२।

६. हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य, पृ० २१६।

कहना अधिक उपयुक्त होगा ।[१] इस मे जायसी ने सात चौपाइयो का क्रम रखकर उसके बाद एक दोहा रखा है ।

प्रेम-पद्धति

इस मे नायक-नायिका का प्रेम गुण-श्रवण मे उद्दीप्त होता है, हीरामन तोता उन दोनो के सम्मुख एक-दूसरे के रूप-सौदर्य का वर्णन करता है ।[२] राजा रत्नसेन मार्ग की अनेक कठिनाइयो को सहन करने के अनन्तर सिंहल द्वीप पहुंचता है ।[३] उधर से नायिका पद्मावती भी नायक से मिलने के लिये विह्वल हो उठती है ।[४] लोक-सम्बद्ध तथा व्यावहारिक भारतीय प्रेम-पद्धति का इसमे ध्यान रखा गया है और तभी विवाहिता पद्मावती अनिष्ट की आशका से अपना विशेष कगन देकर राघव-चेतन को सतुष्ट करना चाहती है ।[५] इस मे कवि ने नायक-नायिका के दाम्पत्य-प्रेम की झाकी प्रस्तुत की है ।[६] नागमती को प्रोषित-पतिका के रूप मे चित्रित किया गया है । स्वकीया होने के कारण उसके पुनीत प्रेम का विशुद्ध रूप प्रस्तुत किया गया है ।

प्रेम-तत्व

इस प्रबन्धकाव्य मे प्रेम के स्वरूप का दिग्दर्शन पग-पग पर हुआ है । सच्चा प्रेमी प्रिय से सम्बन्ध रखने वाली सभी वस्तुओ से स्नेह-भाव स्थापित करता है। इस मे 'रत्नसेन-पद्मावती का प्रेम विषम से सम की ओर प्रवृत्त हुआ है जिसमे एक पक्ष की कष्ट-साधना दूसरे पक्ष मे पहले दया और फिर तुल्य प्रेम की प्रतिष्ठा करती है ।[७] वास्तव मे प्रेम-सागर की कोई थाह नही है ।[८]

---

१. मूल शोध प्रबन्ध-मध्यकालीन हिन्दी कवियो के सकेतित और व्यवहृत काव्य-सिद्धान्तो का अध्ययन, पृ० ३९७ ।
२. द्रष्टव्य—जायसी-ग्रन्थावली, पृ० १८५-१९९ तथा २४०-२४१ ।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० २१५-२२७ ।
४. वर सजोग मोहि मेरवहु कलस जाति हौ मानि ।
जेहि दिन इछा पूजै बेगि चढावौ आनि । वही, पृ० २५० ।
५. कगन काढि सो एक अडारा । काढत हार टूटि गो गारा
—जायसी-ग्रन्थावली, स० डा० माता प्रसाद गुप्त, पृ० ४५१ ।
६ पद्मावति तू जीव पराना । जिय ते जगत पियार न आना ।
तू जस कवल बसी हिम माहा । हौ होइ अलि बेधा तोहि पाहा—
वही, पृ० ४०८ ।
७. जायसी ग्रन्थावली, स० रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ६५ ।
८. पेम समुंद अस अवगाहा, जहां न वार-पार नहिं थाहा—जायसी-ग्रन्थावली, स० डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २१७ ।

कठिनाइयो को पार करता हुआ प्रेमी प्रेम-पथ पर अग्रसर होता है क्योंकि प्रेम-चिगारी प्रज्वलित होकर लोक को विचलित कर देती है। तोते के मुख से पद्मावती के रूप-सौदर्य का वर्णन सुनकर रत्नसेन मूर्छित हो जाता है :

सुनतहि राजा गा मुरुछाई। जानहु लहरि सुरुज के आई।[१]

शिष्य के हृदय मे यह प्रेम—चिंगी गुरु ही सुलगा लेता है :

गुरु बिरह चिनगी पै मेला। जो सुलगाइ लेइ सो चेला।[२]

इस ओर वही जा सकता है जो योगी, यती, तपस्वी अथवा सन्यासी हो :

ओहि पथ जाइ जो होर उदासी। जोगी जती तपा सन्यासी।[३]

प्रेम के पर्वत पर चढना कठिन है और केवल सिर का बलिदान देने वाला ही इस पर चढ सकता है :

पेम पहार कठिन विधि गढ। सो पै चढै सीस सो चढा।[४]

राजा रत्नसेन इसी कारण जोगी बनकर शरीर पर भस्म रमाकर एव चन्दन मलकर आगे बढता है। वह प्रेम-पथ पर अग्रसर होने के लिये मुहूर्त नही देखता। सासारिक बन्धनो की परवाह न करते हुए वह माता एव नागमती के विलाप एव प्रलाप की उपेक्षा करता है। सासारिक बन्धनों को तिलाजलि देकर वह विषम मार्गो, दुर्गम पर्वतो, नदियो, खोहो तथा नालो को पारकर अन्ततः सिंहल पहुचाता है। पद्मावती की प्राप्ति के लिए वह सूली पर भी चढने को तैयार है जिस मे वह आनन्द का ही अनुभव करता है :

मांगे सीस देउ सिउ गीवा। अधिक नवौं जो मारै जीवा।[५]

इस प्रेम की कुछ विशेषताओ का वर्णन कवि ने हीरामन तोते के मुह से भी कराया है। सच्चा प्रेम एक बार उत्पन्न होकर फिर मिटता नहीं, पहले उत्पन्न होते तथा बढते समय तो उस मे सुख ही सुख दिखाई पडता है, पर बढ चुकने पर भारी दुःख का सामना करना पड़ता है।[६] जब यह प्रेम प्रगाढ बनता है तो फिर वह किसी भाव के लिये स्वतन्त्र स्थान नहीं छोडता :

तीनि लोक चौदह खंड सबै परै मोहि सूझि।
पेम छाडि किछु औरु न लोना जौं देखौं मन बूझि।[७]

---

१. वही, पृ० १९९।
२. वही, पृ० २०५।
३. वही, पृ० २०३।
४. वही, पृ० २०४।
५. जायसी-ग्रन्थावली, सपादक, डा० माता प्रसाद गुप्त, पृ० २८५।
६. प्रीति बेलि असै तनु डाढ़ा। पलुहत सुख बाढ़त दुख बाढ़ा।
प्रीति बेलि संग विरह अपारा। सरग पतार जरै तेहि झारा।
वही, पृ० २९१।
७. वही, पृ० १८४।

रत्नसेन तथा पद्मावती के अलौकिक प्रेम के साथ इस मे पद्मावती तथा नागमती के विवाद मे स्त्री-स्वभाव के कारण 'असूया' का भाव प्रकट होता है।[1]

विप्रलम्भ शृंगार

इस में रत्नसेन, पद्मावती तथा नागमती के विरह-ताप को प्रधानता मिली है। काल के समान इस विरह को सहन करना अत्यन्त कठिन है :

विरह आगि पर मेले आगी। विरह घाउ पर घाउ बजागी।
विरह बान पर बान पसारा। विरह रोग पर रोग सचारा।[2]

पद्मावती का रूप-वर्णन सुनते ही रत्नसेन को विरहाग्नि सताने लगती है।[3] वह अपनी प्रेमिका की खोज मे निकलकर प्रेम-पथ पर अग्रसर होता है और सांसारिक बधनो को तिलांजलि दे देता है। कठिनाइयो को पार करके सिहल-द्वीप पहुंच जाने पर उसकी विरहाग्नि और अत्यन्त तीव्र हो उठती है :

राजा इहा तैस तपि झूरा। या जरि विरह छार करि कूरा।[4]

प्रलाप करते हुए वह कहता है :

अरे मलिछ विसवासी देवा। कत मै आइ कीन्हि तोर सेवा।[5]

उसके रोने से सारा ससार डूब जाता है और तभी महादेव को उस पर दया आती है :

रोवन बूड़ि उठा ससारू। महादेव तब भएउ मयारू।[6]

वह रोता है तथा खून के अक्षरो से पाती लिखकर पद्मावती को भेजता है :

पाती लिखी सवरि तुम्ह नामां। रकत लिखे आखर मे स्यामा।[7]

उसे केवल अपनी प्रेमिका पद्मावती का ही ध्यान सताता रहता है। इसी भांति पद्मावती भी प्रिय के विरह मे जल रही है :

विरह दवा अस को रे बुझावा। को प्रीतम से को मेरावा।[8]

पत्रोत्तर देती हुई पद्मावती कहती है :

तबहु न जागा गा तै सोई। जागे भेट न सोए होई।[9]

---

१. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४१०-४१८।
२. द्रष्टव्य—जायसी-ग्रन्थावली, पृ० २८६-२८७।
. विरह भंवर होइ भावरि देई। खिन खिन जीव हिलोरहि लेही। —वही, पृ० १९९।
४. वही, पृ० २७७। ५. वही, पृ० २५६।
६. वही, पृ० २६४। ७. वही, पृ० २७१।
८. जायसी-ग्रन्थावली, सं० डा० माता प्रसाद गुप्त, पृ० २५५।
९. वही, पृ० २७५।

रत्नसेन के वियोग मे वह उद्विग्न होती है और वह नींद भी खो बैठती है :

नीद न परै रैनि जौ आवा। मेज केवाछ जानु कोइ लावा।[1]

विरहाग्नि के कारण उसका सारा शरीर जल रहा है :

जोबन चाद जो चौदसि करा। विरह कि चिनगि चाद पुनि जरा।[2]

विरह ताप की व्यापकता नागमती के आमुओ में सपूर्ण सृष्टि में प्रस्फुटित दिखाई गई है :

अम पर जरा विरह कर कठा। मेघ स्याम मै धूआ जो उठा।
दाधे राहु केतु गा दाधा। सूरज जरा चाद जीर आधा।
औ सब नखत तराई जरही। टूटहि लूक धरनि मह परही।
जरी सो धरती ठावहि ठावा। ढक परास जरे तेहि ठावा।[3]

उद्यानो मे जाकर वह प्रकृति से सहानुभूति की इच्छा करती है और अन्त मे एक पक्षी उसके प्रति सहृदयता प्रकट करता है :

फिरि फिरि रोई न कोई डोला। आधी राति विहगम बोला।[4]

जायसी के विरह-ताप के वेदनामय-स्वरूप की व्यजना अत्यन्त मार्मिक रूप मे की है। नागमती की विरह की तीव्रता को प्रकट करने के लिये 'वारहमासे' का वर्णन किया गया है। यह वर्णन आषाढ से आरम्भ होकर जेठ तक चलकर एक वर्ष पूरा करता है।[5] कवि ने ऋतु-सुलभ व्यापारो एव वस्तुओ के साथ विरहिणी के मन और तन की दशा का सादृश्य चित्रित करके सफलता प्राप्त की है। यह वर्णन फारसी के प्रभाव के कारण कही-कही ऊहात्मक रूप धारण कर गया है।[6]

संयोग शृंगार

इस काव्य मे विप्रलम्भ शृंगार की प्रधानता होने पर भी सयोग शृगार का वर्णन हुआ हैं। इस मे संयोग-शृंगार के उद्दीपन-हेतु षट्-ऋतु वर्णन हुआ है। पावस की जो बूदें नागमती को बाण की भाति दुःखदायिनी प्रतीत होती है, पद्मावती को वही कौधे की चमक मे सोने जैसी लगती हैं।[7] यह संयोग

---

१. वही, पृ० २३३।
२. वही, पृ० २३७।
३. वही, पृ० ३७०।
४. वही, पृ० ३६४।
५. द्रष्टव्य—जायसी-ग्रन्थावली, स० डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ३५५-३६४।
६. रकत के आसु परे भुइं टूटी। रेगि चली जनु बीर बहूटी।
—वही, पृ० ३५५।
७. रितु पावस बिरसै पिउ पावा। सावन भादो अधिक सोहावा।
—वही, पृ० ३४९।

विवाहोपरान्त नायक-नायिका के समागम के रूप मे हुआ है। समागम की इन पक्तियो मे अभिसार के कारण कुछ अश्लीलता आ गई है।[१]

ईश्वरोन्मुख प्रेम

इसमे नायिका पद्मावती को सूफी-सिद्धान्तो को सूफी-सिद्धान्तो के अनुसार साध्य माना गया है। वह सात स्वर्गो के ऊपर वास करने वाली है।[२] रत्नसेन ने उसे अपना गुरु और स्वय को उसका शिष्य माना है।[३] मदिर मे मिलन के समय दोनो मे सूर्य तथा चाद के समान एक-दूसरे के पास आते है।[४] प्रथम मिलन होते ही साधक रत्नसेन पद्मावती का दर्शन करके मूर्छित हो जाता है।[५] पद्मावती उस कच्चे साधक के वक्षस्थल पर लिखती है :

> तब चन्दन आखर हिय लिखे। भीख लेइ तुइ जोगि न मिखे।
> बार आइ तब गा ते सोई। कैसे भुगुति परापति होई।[६]

उसी 'परमभाव' मे लीन होने के लिये सपूर्ण सृष्टि आगे बढती हुई दृष्टिगोचर होती है। परन्तु साधना पूरी हुए बिना वहा तक कोई पहुच नही पाता। रत्नसेन का पद्मावती तक पहुचाने वाला प्रेम का मार्ग जीवात्मा को परमात्मा मे ले जाकर मिलाने वाला प्रेम-पथ का लौकिक रूप है जो 'बका' (अवस्थिति) की अवस्था मे अलौकिक स्वरूप धारण करता है। सिंहल के सातवे समुद्र मे पहुचने पर ही रत्नमेन की स'र्ण छाया हट जाती है तथा वह आनन्दित होने लगता है। यह दर्शन गुरु बिना नही हो सकता।[७] उस परम-सत्य को प्राप्त करना ही मानव-जीवन का परम-उद्देश्य है।[८]

---

१. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३४८-३५२।
२. हौं रानी पदुमावति सात सरग पर वास, हाथ सो तेहि के प्रथम जो आपुहि नास—वही, पृ० २७६।
सो पदुमावति गुरु हौ चेला। जोग तत जेहि कारन खेला—वही, पृ० २८५।
४. पुनि चलि सूरज चाद पह आवा। चाद सूरुज दुहु भएउ मेरा वा—जायसी-ग्रन्थावली, सम्पादक, डा० माता प्रसाद गुप्त, पृ० २५३।
५. परा माति गोरख का चेला। जिउ तन छाड़ि सरग कहं खेला।—वही, पृ० २५१।
६. वही, पृ० २५१।
७. बिनु गुरु पंथ न पाइन भूलै सोइ जो भेट। जोगी सिद्ध होइ तब जब गोरख सौ भेंट।—वही, पृ० २६३।
८. पंथिक जो पहुंचे सही घामू। दुख बिसरे सुख हौड़ बिसरामू।—वही, पृ० १३८।

रूप-सौंदर्य वर्णन

इसमे पद्मावती के रूप-सौदर्य का वर्णन तीन बार हुआ है। पहला पद्मावती का मानसरोवर पर आने के समय,[1] दूसरा तोता-नागमती[2] व तोता-रत्नसेन-सवाद के समय[3] तथा तीसरा उस समय हुआ है जब राघव-चेतन उसके विषय मे अलाउद्दीन को परिचित कराता है।[4] इन तीनो प्रसगो मे पद्मावती के रूप-सौदर्य का वर्णन नख से शिख तक किया गया है। ससार मे उसी के व्याप्त सौदर्य की चर्चा करते हुए कवि ने कहा है :

उन्ह बानन अस को को न मारा। बेधि रहा सगरौ ससारा।
गगन नखत जस जाहि न गने। है सब बान ओहि के हने।[5]

४—मधुमालती[6]

कथा-सारांश—कनेसर नगर के राजा सूरजभान के सोए हुए पुत्र मनोहर को अप्सराए रातो-रात मधुमालती की चित्रसारी मे ले आई। मधुमालती महारस नगर के राय विक्रम की पुत्री थी। वहा जागते ही दोनो का साक्षात्कार हुआ और वे एक-दूसरे पर मोहित हुए। पूछने पर मनोहर ने अपना परिचय देने के अनन्तर अपने अनुराग की दृढता बताकर कहा कि उसका प्रेम अपनी प्रेमिका मधुमालती के साथ जन्म जन्मान्तर का है। प्रेमालाप के पश्चात् दोनो निद्रा-निमग्न हुए और अप्सराए मनोहर को उठाकर फिर अपने माता-पिता के पास ले गई। इस भाति अप्सराओ के कारण ही मनोहर तथा मधु-मालती को सयोग तथा वियोग दोनो ही सहन करने पडे।

दोनो अपने-अपने स्थान पर जागे। विरहाग्नि से सतप्त मनोहर गृह-त्याग करके मधुमालती की प्राप्ति के लिये निकल पडा। समुद्र-मार्ग से जाने पर तूफान के कारण नौका टूट गई। उसके सभी इष्ट-मित्र बिछुड़ गए और वह नौका के एक टूटे तख्ते का सहारा लेकर तट के साथ जा लगा। वह एक अगम्य बन की ओर बढा, जहा उसने एक स्थान पर पलग पर लेटी एक सुन्दरी के दर्शन किए। उसने मनोहर को अपनी दुःख कथा सुनाते हुए कहा कि वह चित्तविसराम-पुर के राजा चित्रसेन की पुत्री प्रेमा है। उसे एक राक्षस उठाकर वहा ले आया

---

१. द्रष्टव्य—वही पृ० १५९-१६४। २. द्रष्टव्य—वही, पृ० १७५।
३. द्रष्टव्य—जायसी-ग्रन्थावली, स० माता प्रसाद गुप्त, पृ० १८५-१९९।
४ द्रष्टव्य—वही, पृ० ४२८-४४४। ५. वही, पृ० १८९।
६. मधुमालती, मझन, सपादक—डा० माताप्रसाद गुप्त, मित्र प्रकाशन प्रा० लि०, इलाहाबाद, साधारण सस्करण (१९६१), प्रति प्रयुक्त।

है। यह सुनने के अनन्तर मनोहर ने राक्षस को मार डाला और प्रेमा बन्धन-मुक्त हुई। प्रेमा ने मनोहर को बता दिया कि मधुमालती उसकी सखी है और वह उसे उसके साथ मिलाने मे सहायता देगी। तत्पश्चात् दोनो ने चित्तविसराम-पुर की ओर प्रस्थान किया।

प्रेमा के घर पहुचने पर उसके माता-पिता हर्षित हुए। उन्होने प्रेमा का विवाह मनोहर से करना चाहा किन्तु दोनो मनोहर तथा प्रेमा ने बहिन-भाई के सम्बन्ध को ही अपनाया था। दूसरे दिन मधुमालती अपनी माता रूपमजरी के साथ प्रेमा के घर आई और प्रेमा ने यत्नपूर्वक उन दोनो का मिलन चित्रसारी मे करा दिया। मनोहर तथा मधुमालती को एक साथ देखकर रूपमजरी ने प्रेमा को बहुत भला-बुरा कहा। मधुमालती तथा मनोहर एक-दूसरे से पृथक् होकर विरहाग्नि मे जलने लगे। प्रेम-विह्वला मधुमालती माता के कहने पर भी जब मनोहर के प्रति हुए प्रेम को छोड न सकी, तो उसने पुत्री को मत्र द्वारा पक्षी बना दिया। वह पक्षी होकर अपने प्रेमी मनोहर की खोज मे उड चली। एक दिन उडते हुए पक्षी को पिपनेर मानगढ के राजकुवर ताराचन्द ने पकड़ लिया क्योंकि मधुमालती को ताराचन्द के रूप का साम्य मनोहर के साथ प्रतीत हुआ। मधुमालती की प्रेम-कथा सुनकर ताराचन्द द्रवीभूत हुआ और उसने उसे मनोहर के साथ मिलाने का वचन दिया। पिंजरा उठाकर वह उसकी माता के पास महारस नगर पहुंचा। माता ने प्रसन्न होकर उसे मत्र द्वारा पुनः राजकुमारी का रूप प्रदान किया। अकस्मात् मनोहर भी वहा आ पहुचा। उसका विवाह मधुमालती के साथ हुआ।

एक दिन मनोहर के साथ शिकार से लौटने वाले ताराचन्द की प्रेमा पर दृष्टि पडी। प्रेम-दर्शन में ही वह मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पडा। उसके उपचार के लिये वैद्य बुलाए गए किन्तु सब व्यर्थ। तदनन्तर मधुमालती तथा मनोहर दोनों चित्रसेन के पास गए और उनकी प्रार्थना पर उसने अपनी पुत्री प्रेमा का विवाह ताराचन्द के साथ कर दिया। दोनो मित्र अपनी पत्नियो समेत आनन्दपूर्वक रहने लगे। कुछ समय अनन्तर मनोहर एव मधुमालती तथा ताराचन्द एव प्रेमा अपने-अपने घर लौट कर राज्योपभोग के अधिकारी बने।

कथा का आधार तथा संगठन

शेख मझन की 'मधुमालती' के कथानक का मूलस्रोत भी किसी प्रचलित कहानी में ही ढूढा जा सकता है।[1] इसके आधार के विषय मे कवि का स्वतः

---

१. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ७१।

कथन है :

आदि कथा द्वापर चलि आई। कलि जुग मह भाखा कै गाई।[१]

मधुमालती एक सरल प्रेम कथा है। इसके लिये कथा, अमृत कथा, रस कथा, रस वार्ता, रस वचन, अमृत वचन, प्रेम कथा शब्दो का प्रयोग मझन ने किया है।[२] अतः इसका आधार अवश्य कोई प्रचलित कथा रही होगी।

काव्यारम्भ मे कवि ने ईश्वर,[३] नबी,[४] चार खलीफाओं,[५] शाहेवक्त,[६] पीर,[७] तथा आश्रयदाता की प्रशसा के[८] अनन्तर वचन का भी गुणगान[९] किया है। उसका कथन है कि इस वचन ने सृष्टि रचना के पूर्व ही हरि-मुख से आदि ओंकार के रूप मे अवतार लिया। इसी वचन के द्वारा वह त्रिभुवन-नाथ स्वय भी अव्यक्त से व्यक्त बना :

वचन जौ नहि निरमवत विधाता। केत सुनत कोई रस बाता।[१०]

इस काव्य में कथानक के दो भाग हैं। पहला भाग मनोहर एव मधुमालती तथा दूसरा भाग ताराचन्द एव प्रेमा से सम्बन्ध रखता है। पहले भाग को आधिकारिक कथा तथा दूसरे भाग को प्रासगिक कथा कहा जा सकता है। इस प्रकार कवि ने नायक और नायिका के अतिरिक्त उपनायक और उपनायिका की भी योजना करके कथा को विस्तृत किया ही है,[११] फिर भी वे अनावश्यक कथनो और विस्तारो से बचना चाहते है।[१२] नायक-नायिका के साथ ही इसमे उपनायक-उपनायिका के चरित्र द्वारा सच्ची सहानुभूति, अपूर्व सयम तथा निस्वार्थ भाव का चित्र अकित किया गया है। इस मे घटना-वैचित्र्य कम है अतः वह साधारण गति स आगे बढता है। मधुमालती को मंत्र फूककर पक्षी बना देना[१३] और पुनः पूर्व रूप प्रदान करना[१४] कथानक मे चमत्कार उपस्थित करता है।

---

१. मधुमालती, सपादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २५।
२. मूल शोध प्रबन्ध, मध्यकालीन हिन्दी कवियो के सकेतित और व्यवहृत काव्य-सिद्धान्तो का अध्ययन, पृ० ४००।
३. मधुमालती, सपादक, डा० माता प्रसाद गुप्त, पृ० ३-६।
४. वही, पृ० ६।
५. वही, पृ० ६।
६. वही, पृ० ७-९।
७. वही, पृ० १०-१३।
८. वही, पृ० १४।
९. वही, पृ० १५।
१०. वही, पृ० १५।
११. हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ९७।
१२. मधुमालती, सपादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १७।
१३. द्रष्टव्य—वही, पृ० १८७।
१४. द्रष्टव्य—वही, पृ० २०९।

कथानक भी घटना-प्रधान न होकर चरित्र-प्रधान है। नायक-नायिका के प्रत्यक्ष दर्शन पर परस्पर एक दूसरे से प्रेम करने लगने पर दोनो का वियोग करवाकर लेखक ने कथानक को विकसित करवाया है, दोनो अपने अपने प्रेम मे दृढ है, इसी मे कथानक आगे बढता है।[१] प्रेमा का उद्धार करके मनोहर अपनी वीरता तथा आदर्शवादिता की परीक्षा मे सफल होकर अपने चरित्र की परीक्षा देता है। मधुमालती की सारी कहानी इसी प्रकार मर कर अमर होने की कहानी है।[२] मृगावती के समान ही मधुमालती मे भी पाच चौपाइयो अर्द्धालियो के उपरान्त एक दोहे का क्रम रखा गया है। कथा सुखान्त है।

प्रेम-पद्धति

'मधुमालती' का प्रेम प्रत्यक्ष-दर्शन पर आधारित है। प्रथम-मिलन के उपरान्त ही दोनों (प्रेमी तथा प्रेमिका) विलग हो जाते है।[३] प्रथम बार का यह साक्षात्-मिलन रात्रि के समय होने पर भी अत्यन्त सयमित तथा मर्यादित है। वे एक-दूसरे की अगूठी धारण करते है,[४] और जब तक उनका विवाह नही होता वे मर्यादा का उल्लघन कभी भी नहीं करते। यही कारण है कि उनके प्रेमोदय मे किसी प्रकार की भी अस्वाभाविकता नही आई है। नायिका की पुनः प्राप्ति के लिए नायक अपना सारा राज-पाट छोड़कर बन-बन भटकता है।[५] मधुमालती भी मनोहर के लिए प्रेम-विह्वल हो उठती है और पक्षी बन कर उस की तलाश मे घूमती-फिरती है। प्रेम-परीक्षा मे सफल होने के अनन्तर ही दोनो का विवाह हो जाता है।[६]

मधुमालती की व्यथा मूक है। मनोहर एकनिष्ठ प्रेमी है जो माता-पिता के स्नेह बधन एव लोकाचार की परवाह न करते हुए प्रेमिका की प्राप्ति के लिए दुर्गम पथ का पथिक बनकर अग्रसर होता है।[७]

---

१. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० २१७।
२. मधुमालती, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २५।
३. फुनि सब मिलि कै एकमत भई। सेज सहित कुवरहि लै गई।
× × ×
कुवरि उनीदि सोइ अरसानी। जानहुं रसिक गएउ रति मानी—वही, पृ० ७५।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५६-७१।
५. सिद्ध रूप दीसै बैरागी। मधुमालती के दरसन लागी।
मारग जोग सिद्धि मकु होई। बहुरि मिलै मधुमालती सोई—वही, पृ० ६४।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० २३७।
७. मांता पितै रोइ जेत कहा। कुवर कान सो एक न रहा।
पेम पंथ जेइं सुधि बुधि खोई। दुहुं जग किछु समुझहि नहिं सोई।
—वही, पृ० ६३।

दाम्पत्य-प्रेम के अतिरिक्त इस मे चारित्रिक दृढता का आदर्श भी उपस्थित किया गया है। मधुमालती एव ताराचन्द तथा मनोहर एव प्रेमा के सदाचार का प्रावल्य इस मे स्पष्ट रूप से झलकता है।

विप्रलम्भ शृंगार

अन्य सूफी कवियो को भाति मझन ने भी विरह के हृदयस्पर्शी दृश्य उपस्थित किए है। प्रथम मिलन के समय रात्रि को चित्रसारी मे साक्षात्कार करने वाले नायक-नायिका सयोग मे ही वियोग की आशका करके त्रस्त हो उठते है :

कबहूं पेम अनद हुलासा। कबहूं दुहुन्ह वियोग तरासा।[1]

अप्सराओ द्वारा पृथक् किए जाने के अनन्तर मधुमालती और मनोहर दोनो विरहाग्नि मे जल उठते है। प्रेमाकुल मधुमालती अपनी सखियो द्वारा पूछी जाने पर अत्यन्त सयत होकर यह उत्तर देती है :

कुवर एक सपने मे देखा। सपन रूप सौतुख कर लेखा।
विधनै मदन मूरति निरमएऊ। जम न होइ पैं जिउ जै गएऊ।
जम कै मीचु खिनक दुख देई। विरह मरन तिल तिल जिउ लेई।
एहि दुख सखी कैस निस्तरहू। बिन जिउ किमि जग जीवन सरिहु।
अब न सकौ रहि ओहि बिनु धरी। अचक गाज यह मोहि सिर परी।[2]

प्रेमा के पूछने पर भी वह वश की ही मर्यादा को दृष्टि मे रखकर उत्तर देती है :

पिता गिरिह मैं राजकुमारी। पर पुरुखहि मोहि कैसि चिन्हारी।
जौ अस मता पिता सुनि पावहि। मोहि जियत धरि ठाढ गड़ावहि।[3]

मधुमालती के लोक-कर्तव्यो एव मर्यादाओं का त्याग उसी समय होता है जब उसे मनोहर के विषय मे यह बात ज्ञात होती है कि वह अनेक कष्ट सहनकर वहा पहुचा है। उस समय वह प्रेमा के गले लगकर रोती है और तभी प्रेम का उद्दाम वेग स्वच्छन्द धारा की भाति फूट पड़ता है :

अब लहि विरह आगिन जिय राखिउ लोग कुटुक के कानि।
लाजन कहिउ काहु सेउ सुपुत सहिउं जिय हानि।[4]

मधुमालती अब प्रेमा से कोई भी बात गुप्त नही रखती। प्रेमा भी मनोहर के विरह और उसकी कृशता का ऊहात्मक वर्णन मधुमालती के सम्मुख इन शब्दों

---

१. मधुमालती, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ७३।
२. वही, पृ० ७६। ३. वही, पृ० १६०।
४. पृ० वही, १६४।

मे करती है :

रहा न कया मासु तस रत्ती । तेहि पर विरह हाड दिय कत्ती ।
जाकर जिउ बरबस हरि लीजै । तोहि कह पलटि दयाफुनि दीजै ।[१]

पछी बनने के समय ताराचन्द को अपनी प्रेमगाथा सुनाने वाली मधुमालती आसुओ के बदले खून बहाती है :

यह सुनि पछि रुहिर भरि नैना । रोइ रोइ कहै कुवर सेउ बैना[२]

विरह का वर्णन करने के लिए कवि ने 'बारहमासा' की पद्धति को अपनाया है । प्रकृति के व्यापारो में साम्य और विषमता दिखाई देती है । मधुमालती द्वारा आसुओ के बदले बहाए गए रक्त के कणो की सावन की झडी तथा वीर बहूटी से साम्य दिखाते हुए कवि ने कहा है :

रक्त आसु धर परे जो टूटी । सावन भए ते वीर बहूटी ।[३]

इस 'बारहमासा' के आधार पर विरहिणी की दुखानुभूति का मार्मिक चित्रण हुआ है । इसी विरह के कारण विरही को शरद्काल की स्वच्छ एवं निर्मल चद्रिका और उसकी शीतलता भी दाहक प्रतीत होती है :

कातिक सरद सताई बारा । अमिअ बुद बरखै बिखधारा ।
बिगसहि कवल भाति ते बारा । जनहुं कुमुदिनी ससि उजियारा ।
सरद रैनि सीतरि तेहि भावै । जो प्रीतम कठ लागि बिहावै ।
मोहि तन विरह अगिनि पर जारा । सरद चाद मोहि सेज अगारा ।[४]

इस मे ताराचन्द के विरह का भी वर्णन हुआ है जो प्रेमा के प्रथम दर्शन से ही मूर्छित होता है । रुग्ण हो जाने पर वैद्य भी उसका उपचार करने मे असमर्थ हो जाते हैं :

जंह लगि अहे सयान नगर मह सभ कहं भएउ हकार ।
सुनत राज थै अग्या चलि आए सभ बार ।[५]

प्रेम तत्व

मझन ने कहा है कि प्रेम ससार की अमूल्य वस्तु है, विधाता ने प्रेम (को व्यक्त करने) के लिए ही ससार को उत्पन्न किया, और उसी को ग्रहण कर वह स्वयं भी व्यक्त हुआ, प्रेम की ज्योति से ही सृष्टि मे प्रकाश हुआ, इसलिए प्रेम

१. मधुमालती, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १६७ ।
२. वही, पृ० १६५ ।
३. वही, पृ० २१४ ।
४. वही, पृ० २१५ ।
५. वही, पृ० २५२ ।

का समतुल्य संसार मे नही है, विरला ही कोई भाग्यवान इस प्रेम के सुहाग को प्राप्त करता है, जो इस प्रेम के यज्ञ मे जीवन की आहुति देता है, वही (वास्तविक) राजा है, इस प्रेम की हाट मे क्रय-विक्रय करना ही जीवन की सबसे बडी उपयोगिता है :[1]

पेम अमोलिक नग सयसारा। हि जेजिअ पेम सो धनि औतारा।
पेम लागि ससार उपावा। पेम गहा विधि परगट आवा।
पेम ओति सभ सिस्टि अजोरा। दोसर न पाव पेम कर जोरा।
विरुला कोइ जाके सिर भागू। सो पावै यह पेम सोहागू।
सबद अच चारिहु जुग बाजा। पेम पथ सिर देइ सो राजा।
पेम हाट चहु दिसि है पसरी गै वनिजौ जे लोइ।
लाहा औ फल गाहक जनि डहकावै कोइ।[2]

प्रेम ही जीवन की ज्योति है :

पेम दिया जाके घट बारा। तेहि सभ आदि अत उजिआरा।[3]

कथा के समाप्त करते हुए भी लेखक ने एक-मात्र यही सन्देश दोहराया है। वह कहता है कि इस जगत् मे अमरत्व लाभ करने का एकमात्र उपाय है प्रेम मे मरना :[4]

अमर न होत कोइ जग हारै। मरि जो मेरे तेहि मीचु न मोरे।[5]

प्रेमी तथा प्रेमिका एक-दूसरे से अविच्छेद है और जब प्रेमी अपनी प्रेमिका का साक्षात्कार करता है, समस्त सृष्टि उसे उसी में व्याप्त दिखाई देती है।

इहै रूप त्रिभुवन जग बेरसै महि पयाल आगास।
सोइ रूप परगट मे देखा धुव माथे परगास।[6]

संयोग-शृंगार

संयोग-शृगार पर अश्लीलता के आरोप से मझन पूर्णतया मुक्त है। इस काव्य मे नायक-नायिका के मिलन का चित्रण तीन स्थलों पर हुआ है किन्तु कही पर भी अश्लीलता नही आ गई है। सर्वप्रथम उनका संयोग-शृगार चित्र-शाला मे स्थान लेता है किन्तु दूसरी बार वे फुलवारी में मिलते हैं। अन्त में उनका यथाविधि मिलन विवाह के समय होता है किन्तु उस समय भी मंझन ने

१. मधुमालती, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, भूमिका, पृष्ठ २०।
२. वही, पृ०। १७
३. वही, पृ० १७।
४. वही, भूमिका, पृष्ठ २५।
५. वही, पृ० २८६।
६. वही, पृ० ६५।

संयमित रूप मे सयोग-शृगार का वर्णन किया है। सयोग के ऐसे स्थलो पर केवल आत्मा तथा परमात्मा की रहस्यात्मक अनुभूति की झलक मिलती है।[१]

रूप-सौंदर्य वर्णन

अन्य सूफी प्रेमाख्यानो की भांति ही इस मे नायिका मधुमालती[२] तथा उप-नायिका प्रेमा के रूप-सौदर्य[३] का वर्णन हुआ है। मधुमालती के सौदय को देख-कर सारा ससार मूर्छित होता है :

जेउ जेउ देखै रूप सिगारा। खिन मुरछै खिन चेत सभारा।[४]

ईश्वरोन्मुख प्रेम

सूफियो की दृष्टि मे सपूर्ण दृश्य जगत् उसी ईश्वर के रूप का प्रदर्शन है अतः जीवात्मा का उससे नित्य सम्बन्ध है और इसी लिए वह उससे तादात्म्य स्थापित करने के लिए तडपती है।[५]

कौन सो ठाउ तैं नाही तीनि भुवन उजिआर।
निरखु देखु तै सरबस पूरे सब ठा तोर बेवहार।[६]

कवि ने रचना के आदि मे योग की क्रियाओ का भी उपदेश दिया है।[७]

५—चित्रावली[८]

कथा-सारांश—नेपाल के राजा धरनीधर ने कठिन व्रत-पालन करके शिव-पार्वती के प्रसाद से 'सुजान' नाम का एक पुत्र-रत्न प्राप्त किया। चौदह वर्ष की आयु तक वह वैद्यक, पिंगल, छद, सगीत, ज्योतिष तथा भूगोल आदि सभी विषयो में पारंगत हो गया। मल्ल विद्या तथा घुडसवारी मे भी वह अत्यन्त प्रवीण हो गया। एक दिन कुवर सजान आखेट के लिये बन मे गया। वहा से लौटते समय वह मार्ग भूलकर देव (भूत) की एक मढी मे जा सोया। देव ने

---

१. नैन नैन सेउ लोभे मन सेउं मन अरुझान
दुवौ हिय उर मिलि एक भे भजियउ प्रानहि प्रान।—वही, पृ० २३८।
२. मधुमालती, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ४२-५२।
३. द्रष्टव्य—वही, पृ० १००-१०१। ४. वही—पृ० ४२।
५. सूफीयत और हिन्दी साहित्य, पृ० ११६।
. मधुमालती, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १८।
७. तन सो उरध लेहि गहि स्वासा। अगिनि हीय के डोल बतासा।—वही, पृ० १६।
८. चित्रावली, उसमान, सम्पादक, स्व० बाबू जगमोहन वर्मा, प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा, काशी (सन १६१२ ई०), प्रति प्रयुक्त।

शरणागत समझकर कुवर की रक्षा की। इसी बीच वह देव अपने एक अन्य साथी देव के साथ रूपनगर की राजकुमारी चित्रावली की ग्यारहवी वर्षगाठ का उत्सव देखने के लिए गया। दोनो देव सोते हुए कुवर को भी अपने साथ ले गए तथा वहा पहुचकर उन्होने उसे चित्रावली की चित्र सारी मे रखा और स्वय उत्सव देखने चले। नीद खुलने पर सुजान वहा चित्रावली का चित्र देखकर उस पर आसक्त हुआ। वह भी अपना एक चित्र बनाकर उसी की बगल मे टाग कर सो गया। दोनो देव उसे पुन उठाकर मढी मे ले आए। जागने पर कुवर चित्रावली के प्रेम मे विह्वल हो उठा। तत्पश्चात् पिता द्वारा प्रेषित कुछ पुरुषो से वह वापस राजधानी ले जाया गया। अपनी प्रेमिका के लिये विरह-विकल सुजान अपने गुरु-पुत्र सुबुद्धि नामक एक ब्राह्मण के साथ पुन: उस देव मढी मे गया और वहा उसने अन्न सत्र खोल दिया। उधर से चित्रावली भी कुवर सुजान का चित्र देख कर प्रेम विह्वल हो उठी। उसने अपने प्रेमी का पता लगाने के लिये परेवा नाम का एक दूत भेजा। सुजान उसके साथ रूपनगर पहुचा जहा दोनो का साक्षात्कार शिवमदिर मे हुआ। प्रथम दर्शन मे ही सुजान प्रेमिका चित्रावली की छवि देखकर मूर्छित हुआ। इस मिलन के पूर्व राजकुवर को अनेक प्रकार की कठिनाइयो का सामना करना पडा।

चित्रावली की मा हीरा से एक कुटीचर ने चुगली की जिस पर सुजान का वह चित्र धो डाला गया। इस पर चित्रावली ने उस कुटीचर का सिर मुडवा कर उसे घर से बाहर निकलवा दिया। बदला लेने के लिये कुटीचर ने कुवर सुजान को अन्धा करके एक गुफा मे डलवा दिया जहा उसे एक अजगर निगल गया। राजकुमार के विरह-ताप को सहन न करके उसने उसे उगल दिया। एक बन-मानुष की कृपा से अजन दिये जाने पर उसकी नेत्र-ज्योति पुनः पूर्ववत् हो गई। इसी समय एक मत्र हाथी ने उसे पकड लिया। एक पक्षीराज उस हाथी को ले उडा जिस पर उस (हाथी) ने घबडा कर कुवर को छोड दिया। वह एक समुद्र-तट पर जा गिरा। वहा एक फुलवारी में वह विश्राम कर रहा था कि सागरगढ की राजकुमारी कोलावती उसके रूप पर आसक्त हो गई। उसने घर पहुचकर उसे भोजन के लिये बुलाया तथा आहार मे अपना हार छिपा कर उसे चोरी के अपराध मे बन्दी बना लिया।

इसी समय सोहिल नाम के किसी राजा ने कौलावती के सौदर्य की शोभा का वर्णन सुनकर सागरगढ पर चढाई का परन्तु सुजान ने अपने पराक्रम से उसे मार भगाया। सुजान तथा कौलावती का परिणय हुआ, किन्तु कुवर ने चित्रावली की प्राप्ति तक सयम की प्रतिज्ञा की और दोनो शंकर-पूजन के लिये गिरनार की यात्रा करने चल पडे। वियोग से पीड़ित चित्रावली ने सुजान को ढूढने के

लिये पुनः परेवा को भेजा। वह भी गिरनार पहुचा और वहा उसने सुजान को रूपनगर के लिये प्रस्थान करने के लिये प्रेरित किया। कौलावती से फिर मिलने की प्रतिज्ञा करके कुवर रूपनगर की ओर चल दिया। कुवर को सीमा पर बैठा कर जब परेवा चित्रावली को सुसवाद देने के लिये आ रहा था, उसी समय उस (परेवा) को रानी हीरा के दूतों ने पकड लिया। परेवा के वापस न लौटने पर कुवर विरहाग्नि मे जल उठा। वह प्रज्ञितावस्था मे इधर-उधर दौडा। अपयश से बचने के लिये राजा ने उसे उन्मत्त हाथी से मरवाना चाहा किन्तु अपने पराक्रम से उसने हाथी को पछाड डाला। अंत मे यह ज्ञात हुआ कि सोहिल को परास्त करने वाला वही सुजान है। परेवा को मुक्त किया गया। उसी समय उधर से सागरगढ से आए हुए चित्रकार ने कुवर सुजान का चित्र उपस्थित किया जो उस योगी (सुजान) से बिल्कुल मिलता-जुलता था। राजा ने हर्षित होकर अपनी पुत्री चित्रावली का विवाह सुजान से किया।

विरह-सतप्त कौलावती ने कुमार के पास हंस मित्र को दूत बनाकर भेजा। उसने भ्रमर की अन्योक्ति द्वारा कुमार को कौलावती के प्रेम का स्मरण कराया। सुजान जब चित्रावली को लेकर स्वदेश की ओर प्रस्थान करने लगा तो मार्ग मे कौलावती को भी साथ ले लिया। सागर मे तूफान आने के अनन्तर वे सुरक्षित रूप से नेपाल पहुंचे। राजा अपने पुत्र का राज्याभिषेक करके स्वय शिवाराधना मे लग गया और फिर सुजान दोनो पत्नियो सहित आनन्दपूर्वक दिन व्यतीत करने लगा।

कथा का आधार तथा संगठन

'चित्रावली' का कथानक पूर्णतः काल्पनिक है। इसका कोई ऐतिहासिक अथवा पौराणिक आधार नही है।[1]

ग्रन्थारम्भ मे उसमान ने निर्गुण-निरंजन परमात्मा की महत्ता एक चित्रकार के रूप मे प्रकट की है। तदनन्तर उसने हज़रत मुहम्मद की महानता, नूर-उल्-मुहम्मदिया की उत्पत्ति, हज़रत मुहम्मद के चार मित्रो की स्तुति,[2] शाहेवक्त की प्रशसा तथा अपने पीर शाह निज़ाम तथा बाजा हाजी का गुणगान किया है।

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी और काव्य, पृ० ३५९।

२. पहले अबूबकर सतवादी। सन्त जान जो भी अनवादी।
दूजे उमर न्याउ प्रतिपारा। जे बिध कारन सुतहि संधारा।
तीजे उसमा पडित ज्ञानी। जे करि ज्ञान लखा विधि बानी।
चौथे अली सिह रन सूरा। दान खड़ग जे तिहुं जग पूरा।
—चित्रावली, (१९६२), पृ० ६।

आत्मपरिचय के अनन्तर कवि ने प्रस्तावना और फिर कथारम्भ किया है। कवि ने घटनाओं का वर्णन अधिक विस्तार के साथ किया है। कुछ घटनाओं तथा आश्चर्य तत्वों की सयोजना अत्यन्त नवीन ढग पर हुई है। धरतीधर का पुत्राभाव, दान एव परीक्षा के अनन्तर पुत्रोत्पत्ति, चित्रदर्शन, विरह, परेवा की खोज, सुजान का स्वदेश लौटना एव मार्ग की कठिनाइयों के अनन्तर प्रेमिका की प्राप्ति की परम्परागत घटनाओं के साथ-साथ इसमे यौगिक-क्रियाओं तथा लुक-अजन लगाने से लोगों की दृष्टि से अदृश्य होने तक की बाते आ गई है। कथा के काल्पनिक होते हुए भी उसमान ने अपने काव्य-कौशल द्वारा इसके पात्रों को इस ढग से चित्रित कर दिया है कि वे प्रायः सभी सजीव बन गए है। उनके दुःख मे हमे उनके साथ सहानुभूति प्रदर्शित करने को भी जी चाहता है और उनके सुख मे हम स्वय भी प्रसन्न हो उठते है। इस कवि के द्वारा किया गया पात्रों का नामकरण भी अधिकतर सकारण जान पडता है। इसका 'सुजान' वास्तव मे बुद्धिमान जान पडता है क्योंकि 'कौलावती' के साथ विवाह कर लेने पर भी, उस के साथ तब तक सपर्क नही रह सकता जब तक 'चित्रा-वली' नही मिल जाती। कौलावती माया का वह अविद्याजनित रूप है जिसे बिना 'चित्रावली' के विद्यामय रूप मे अपनाये स्वीकार करना खतरनाक है। कवि ने सुजान के दृढ प्रेम, परेवा की स्वामिभक्ति और कौलावती के निःस्वार्थ भाव का भी अच्छा चित्रण किया है।[1] वास्तव मे सुजान स्वय शिव का अवतार है।[2] इसके द्वारा केवल शिव के अद्वैत का ही आभास होता है। वही बाहर-भीतर सब स्थानों पर है। उसके बिना और कोई दूसरी नही है।[3] अजगर खण्ड' केवल सुजान की ही एकनिष्ठता का परिचय देता है।[4]

साधना-मार्ग का वर्णन करते हुए कवि ने रूपनगर के बीच पडने वाले नगरों के नाम भी प्रतीक रूप मे इस प्रकार दिये है—भोगपुर, गोरखपुर, नेहनगर तथा रूपनगर। भोगपुर मे इन्द्रिय-विषय अपनी ओर खीचते है। इनमे अनासक्त रहने वाला साधक ही काम-क्रोधदि को जीतकर गोरखपुर नगर मे पहुच पाता है। यहा वह गुरु द्वारा अन्तर्दृष्टि पाकर आगे बढता है। नेहनगर मे पहुचकर उसे समता-भाव प्राप्त होता है और फिर योगी-वेश से भी वह

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० १४३।

२. देखु देत हौं आपान असा। अब तोरे है हौं निजु बसा—चित्रावली, पृ० १९।

३. सब वही भीतर वह सब माहो। सबै आयु दूसर कोउ नाही—वही, पृ० १।

४. उठी खात ओहि ओदर आगी।
   पर्‌यौ उलटि भा उदर दुहेला।—वही, पृ० ११६।

विमुक्त होता है। रूपनगर अन्तिम स्थिति है यहा करोडो मे मे विरला ही पहुचता है।[1]

इस मे सुजान तथा चित्रावली सम्बन्धी कथा-भाग आधिकारिक है और शेष प्रासगिक कवि ने इसमे सात-सात चौपाइयो (अर्द्धालियो) के पीछे एक-एक दोहा रखकर जायसी का अनुसरण किया है। कथा सयोगान्त है।

प्रेम-पद्धति

इस मे चित्र-दर्शन के द्वारा नायक के हृदय मे प्रेम का उन्मेष दिखाया गया है। चित्रसारी मे सुजान चित्रावली के चित्र को देखकर उस पर आसक्त होता है और उसकी स्मृति मे उद्वेगपूर्ण बन जाता है। दूसरी बार परेवा के मुख से चित्रावली के गुणो का श्रवण कर के वह उसकी प्राप्ति के लिये अभिलषित हो उठता है। परेवा उसके गुणों का वर्णन करते हुए कहता है कि उसका ध्यान सभी करते है तथा सारा सचराचर जगत उसकी चाह मे लीन है।[2] उधर से नायिका चित्रावली भी चित्रसारी मे कुवर सुजान द्वारा निर्मित उसके चित्र को देखकर मोहित होती है। वह उसके मिलन के लिये विह्वल हो उठती है। सुजान के प्रेम की दृढता इसी मे है कि वह कौलावती के प्रति उदासीन रहकर केवल चित्रावली के अनन्य प्रेम मे ही लीन रहता है। कथा मे किसी प्रतिनायक अथवा परीक्षा करने वाली अप्सरा अथवा सागर-पुत्री की कल्पना नही की गई है। इस में नायक-नायिका के हृदय मे प्रेम एक-साथ उद्भूत होता है।

कौलावती को अपनाकर भी सुजान अपने आदर्श से तनिक भी नीचे नही गिरता। वह कौलावती से स्पष्ट शब्दो मे कहता है :

---

१. प्रथम भोगपुर नग्र सोहाया। भोग विलास पाउ जह काया।

× × ×

आगे गोरखपुर भल देसू। निबहै सोइ जो गोरख भेसू।
आगे पथ चलै पै सोई। जाके सग कछु मार न होई।
डारे कथा चक्र घंघारी। करै मया जिय काया सारी।
ऐसन जिग्र जेहि लोभ न होई। रूप नगर मगु देखे सोई।
पथिक तहा जो जाइ भुलाना। विमल पथ तेही पहिचाना
—चित्रावली, पृ० ८०-८३।

२. वह चित्रावलि आहै सोई। तीन लोक बँदै सब कोई।
सुरपुर सबै ध्यान ओहि धरही। अहिपुर सबै सेव तेहि करही।
—चित्रावली, पृ ७८।

हम तुम मानहि सबै रस, जह लहु प्रेम सुभाउ।
एक प्रेम रस सोइ तब जब चित्रावलि चाउ।[1]

प्रेम-तत्व

कवि का कथन है कि प्रेम का आधार रूप अथवा सौदर्य है ·

जहा रूप जग बनिज पसारा। आइ प्रेम तह कीन व्योवहारा[2]

परमात्मा के इसी रूप अथवा सौदर्य की ओर साधक आकृष्ट होता है

जैहिक चित्र अस जिउ लेनिहारा, दहु कस होइहि सिरजनहारा।[3]

किन्तु धैर्यवान प्राणी ही सुमेरु-पर्वत की इस चोटी पर पहुच सकता है। परमात्मा की कृपा-दृष्टि ही सर्वोपरि है ·

पावै खोज तुम्हारा सो, जेहि देखलावहु पन्थ।
कहा होइ जोगी भए औ पुनि पढै गरन्थ।[4]

परमात्मा की इस छवि के प्रथम दर्शन करते ही सुजान मूर्छित हो जाता है।

विप्रलम्भ-शृंगार

इस में कवि ने नायक एव नायिका दोनो का विरह-वर्णन किया है। जब नायक देव की मढी मे जाग उठता है, उस समय उसकी कृशता का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है कि उसका मुख पीला पड गया था, खून सूख गया था, उसके दोनो नेत्र बद हो गये और पूछने पर भी वह कोई उत्तर न दे पाता था।[5] उसे अपनी प्रेमिका के बिना विश्राम ही नही आता और वह उन्माद की अवस्था को प्राप्त होता है।

परम्परा का पालन करते हुए कवि ने वारहमासा का आधार लेकर विप्रलम्भ-शृंगार का वर्णन किया है। चित्रावली का विरह ही संसार में व्याप्त है जिसका उद्रेक वह अपनी पाती मे करती है।[6] नायक के समान वह भी कृश हो जाती है।[7]

---

१. चित्रावली, पृ० १५५।
२. वही, पृ० १३।
३. वही, पृ० १३।
४. वही, पृ० ४८।
५. अरुन वदन विपराय गा, रुहिर सूखिगा गात।
रहा झापि लोचन दोऊ, कहै न पूछै बात।—चित्रावली, पृ० ३७।
६. जो न पसीजसि जिउ मोर भारवी। पूछ देखु गिरि कानन साखी।
करै पुकार मंजोरन गोवा। कुहुकि कुहुकि बन कोकिल रोवी।
गयो सीखि पपीहा मन बोला। अजहुं कोकत बन बन डोला।
उडा परेवा सुनि मम बाता। अजहूं चरन रक्त सों राता—वही, पृ० १६७।
७. फागुन विरह पवन अधिकाना। हम तनुजस तरु पात पुराना—वही, पृ० १७३।

संयोग शृंगार

उसमान का संयोग चित्रण अधिक भावात्मक नहीं है। उसमे कवि ने पहेली बूझने एव वाक्चातुर्य की भी चर्चा की है। नायक-नायिका के संयोग का वर्णन इस प्रकार किया गया है :

सदे थम रोमाच तन, आमु पतन मुरभग।
प्रथम समागम जो कियो, सीतल था सब अग।[१]

इस वर्णन में अन्य सूफी-कवियो की अपेक्षा कुछ अश्लीलता अवश्य है।

रूप-सौंदर्य वर्णन

इस मे परेवा द्वारा नायिका चित्रावली के सौदर्य का वर्णन नख से शिख तक हुआ है।[२] ठोडी के गड्डे का वर्णन इस प्रकार किया गया है :

अंब सूल सम ठोडी भई, वह आमिल यह अमित भई।
तेहि तर गाड अपूरब जोवा, पाक आव जनु अगुरी टोना।[३]

नायिका की वरुणी का वर्णन करते हुए, जगत् की ब्रह्म-प्राप्ति लालसा का उल्लेख किया गया है :

लाग न बरुनि वान जेहि हीया, सो जग माह अभिरथा जीया।
जेते अहै जीव जग माही, साधन जाइ बान सो खाही।[४]

६—ज्ञानदीप[५]

कथा-साराश—नीभपार मिस्रिप के राय सिरोमनि राजा को शंकर की कृपा से ज्ञानदीप नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। योग्य राजकुमार ज्ञानदीप कुछ बडा होने पर जब आखेट करने गया तो सयोगवश कही मार्ग मे भटक गया। उसकी भेट सिद्धनाथ जोगी से हो गई जिसने उसे संसार से विमुख करना चाहा। राजकुमार को शिष्य बनाकर उसने उसे योग की ओर आकृष्ट करने के लिये सगीत की भी शिक्षा दी। तदनुसार राजकुमार मस्त योगी के रूप मे बेसुध रहने लगा। उधर विद्या नगर का राजा सगीत प्रेमी था और वह सदा संगीत का आयोजन किया करता था। राजा की एक विदुषी कन्या थी जिसका

१. चित्रावली, पृ० १०४।
२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७१-७७। ३. वही, पृ० ७३।
४. वही, पृ० ७१।
५. ज्ञानदीप, शेख नबी, हस्तलिखित ग्रन्थ, श्री उदयशकर शास्त्री, आगरा, प्रति प्रयुक्त।

नाम देवयानी था। राजकुमार वहा पहुचा और देवयानी की सखी सुरज्ञानी उसके सौंदर्य पर मुग्ध हुई। उसने इस बात की चर्चा देवयानी से की और जब उसने भी महल से उस योगी के रूप-सौंदर्य पर दृष्टि डाली, तो वह अत्यन्त प्रभावित हुई। उसने बेसुध होकर अपने हाथ को भी गुथी जाती हुई माला की सूई से विन्ध दिया।

देवयानी तभी से विरह पीडित होने लगी। एक बार सुरज्ञानी के साथ देवयानी ने ज्ञानदीप की कुटिया मे जाकर उसे वश मे करने का प्रयत्न किया किन्तु असफल रहकर वह अधिक विरह-ताप मे जलने लगी। अपना भेष बदलकर सुरज्ञानी मत्राभिषिक्त घोडे पर बैठकर ज्ञानदीप की कुटी के पास सहायता की याचना के लिये गई और जब ज्ञानदीप उस घोडे पर सवार हुआ, उसी समय वह घोडा आकाश-मार्ग से वायु-वेग मे उडकर देवयानी के महल की छत पर रुक गया। वहा ज्ञानदीप पडिता देवयानी से अत्यधिक प्रभावित हुआ और इस प्रकार उसके रोज वहा आने से प्रेमालाप भी बढता गया। महल के रक्षको ने इस बात की सूचना सुखदेव को दी, जिसने लौटते समय ज्ञानदीप को बाण मारकर आहत कर दिया। बदी बनाए जाने पर उसे काठ की एक मजूषा मे बद करके नदी में प्रवाहित कर दिया। योगी राजकुमार बहते-बहते भानराय की राजधानी भानपुर में पहुचा और सारा-सारा वृत्तान्त जानकर यहा के राजा ने उसे पुत्र-रूप मे रख लिया।

देवयानी अपने प्रेमी के विरह मे तिल-तिल जलने लगी। एक दिन चित्ता बना कर वह भस्म होने की तैयारी कर रही थी कि शकर जी ने उसे बचा लिया। उन्होने राजा सुखदेव को भी स्वप्न मे दर्शन देकर कहा कि वास्तव मे ज्ञानदीप निर्दोष है। ज्ञानदीप की पुनः प्राप्ति के लिये सुखदेव ने स्वयवर का आयोजन किया जिसकी सूचना पाकर भानराय भी ज्ञानदीप के साथ वहा पहुचा। वहा देवयानी ने ज्ञानदीप का वरण किया। राय सिरोमनि गुरु सिद्धनाथ को लेकर वहा पहुचा और उसने ज्ञानदीप को अपने साथ ले जाने की इच्छा प्रकट की। इस वियोग से उत्पन्न महान् दुःख के कारण ही भानराय का परलोकवास हुआ। ज्ञानदीप को भानराय का अन्तिम संस्कार करने के लिये भानपुर जाना पडा। देवयानी विरहाग्नि मे जलने लगी। जोगिन का वेष धारण करके सुरज्ञानी भानपुर पहुंची और वह ज्ञानदीप को अपने साथ विद्यानगर ले आई। अन्त मे ज्ञानदीप ने देवयानी समेत घर लौटते समय मार्ग मे सुन्दर सेन नामक राजा पर आक्रमण किया, जिसकी कुदृष्टि देवयानी पर पडी थी। उसे परास्त करके वह अपने माता-पिता के पास पहुचा गया। ज्ञानदीप एवं देवयानी को देखकर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। अन्त मे वह स्वयं अपने राज्य

के शासन-कार्य मे प्रवृत्त हो गया ।

कथा का आधार तथा संगठन

इस काव्य के कथानक की ओर संकेत करते हुए कवि ने स्वय कहा है कि उसने इस कहानी को कही से मुना था और फिर उसने उसी को अपनी भाषा-शैली के अनुसार लिखा ।[1]

ग्रन्थारम्भ मे कवि ने निर्गुण ब्रह्म की उपासना,[2] हजरत मुहम्मद की महिमा, शाहेवक्त की प्रगसा तथा ग्रन्थ-रचना के उद्देश्य का उल्लेख किया है । इस काव्य के कथा-सगठन मे अन्य कथाओ की अपेक्षा कुछ अन्तर है। कथा के प्रारम्भिक भाग मे नायक विरह से पीडित होकर स्वेच्छा से गृह-त्याग नही करता । उसके मार्ग का प्रदर्शन गुरु द्वारा होता है । कथा की गतिशीलता के लिये शकर की कृपा को सर्वत्र अपनाया गया है । मत्र-सिद्ध सुरज्ञानी तथा मत्राभिषिक्त अश्व जैसे आश्चर्य तत्वो द्वारा कथा मे कौतूहल-वृद्धि हुई है। वास्तव मे काल्पनिक कथानक के साथ ही, आश्चर्य तत्वो की योजना कौतूहल वृद्धि मे सहायक होती है ।[3] कवि ने प्रत्येक घटना का सयोजन अपूर्व ढग से किया है । ज्ञानदीप को मजूषा मे बन्द करके नदी मे बहा देना आदि घटनाओ से काव्य मे औत्सुक्य की वृद्धि हुई है ।[4] यूसुफ-जुलेखा मे वर्णित नारियो का तरबूज़ काटते समय अपनी अंगुली काट देने के अनुरूप ही इसमे देवयानी का बेसुध होकर सूई चुभ जाने की बात भी कवि ने कही है । कथा सुखान्त है ।

प्रेम-पद्धति

इसमे प्रेम का आविर्भाव साक्षात्-दर्शन से हुआ है । प्रथम दर्शन के अनन्तर ही देवयानी प्रेम-विह्वल हो उठती है । इससे पूर्व नायिका देवयानी ने अपनी सखी सुरज्ञानी से नायक ज्ञानदीप के गुणो का श्रवण किया था । प्रेमी-प्रेमिका के मिलन के अनन्तर यह प्रेम परिपुष्ट बन जाता है अत· नायिका देवयानी स्वयंवर के समय नायक ज्ञानदीप का ही वरण करती है। इसके पश्चात् उनका दाम्पत्य-

---

१. पोथी बाच नबी कवि कही जो । कुछ सुनी कहूं से रही ।
आखर चारि कहा मैं जोरी । मन उपराजा न कीन्हेउ चोरी ।

२. आदि अनादि निरंजन नायक । एक अकार सफल सुखदायक ।
दीन देखि दुख दरिद्र भंजै । ज्ञान अंध कर कारथ अंजै ।

३. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ४२१ ।

४. एहिक षौज निसि राजा लेइ । हमरे षौज मिले नहिं सोइ ।
बंघ्र बयारि की निरभै भता । महा भयानक उठहि अकूता ।'

प्रेम आरम्भ होता है। इसमे कवि ने नायिका के हृदय मे ही सर्वप्रथम प्रेमोदय दिखाया है। देवयानी साधिका है और ज्ञानदीप साध्य।[1]

विप्रलम्भ शृंगार

प्रेमी ज्ञानदीप का प्रथम-दर्शन करते ही नायिका देवयानी विरहाकुल होती है। नायक से मिलन के लिये वह सदा प्रयत्नमय रहती है। वह मर्यादा का त्याग करके नायक के लिये प्रेम-विह्वल होती है।[2] इस विरह का वर्णन कवि ने प्रथम-दर्शन से लेकर दोनो के वरण तक तथा ज्ञानदीप के भानपुर जाने के अनन्तर देवयानी को अकेला छोड़ देने के अवसरो पर किया है।

कवि ने विरह को उद्दीप्त करने के लिये प्रकृति का सहारा लिया है। कोयल की कूक ही हूक बन जाती है तथा पपीहे का पी-पी शब्द प्रिय की स्मृति दिलाकर हृदय विदीर्ण कर देता है

एही जुगुति दिन बीतेउ भारी। निसि आये विरहिन दुख भारी।
देखत चन्द चन्द बिरारा। पपिहा बोल सबद जिउ मारा।
बोलहि मोर सोर बन माहा। झीली झूकति काम तन ढाहा।
कोकिल कूकत कलरव बोली। विरह पसीजि भीजि तन चोली।

इस विरह की चर्चा करते हुए कवि ने बारहमासे का वर्णन किया है। कवि ने अ षाढ मास से इसका आरम्भ किया है। सावन मास के दुखद वियोग का वर्णन इस प्रकार हुआ है :

एह दुष वितवै नायका, नायक जेनहिं विदेश।
भूल सबै सिंगार रस, भई सो जोगिनि वैस॥

नख-शिख वर्णन

अन्य प्रेमाख्यानो की भांति इसमे नख-शिख वर्णन अधिक नही है।

७—पुहुपावती[3]

कथा-सारांश—काशीपुर का राजा मानिक चन्द अत्यन्त न्यायप्रिय था। एक दिन विजयदशहरा को वह अपनी राज्य-सभा मे बैठा हुआ अन्य राजाओ

---

१. विश्लेषण-वर्ष पहला, अक पहला, प्रकाशक, पजाब हिन्दी साहित्य अकादमी, कुरुक्षेत्र, लेख 'पजाबी सूफी-काव्य मे प्रतीक योजना' लेखक यश गुलाटी, पृ० ४०।

२. नबी प्रेम मद सो पियै, जो खोवे कुलकानि।
मानिक देइ कलाल कह, सदा जो पत की हानि।

३. पुहुपावती, हुसैन अली, गोपाल चन्द्र सिन्हा, प्रति प्रयुक्त।

मे भेट ले रहा था तथा गुणशील विद्वानो को दान दे रहा था कि तभी वहा पद्मिनी स्त्रियो की चर्चा चल पडी। वहा राज-दरबार मे एक ब्राह्मण ने यह बताया कि सिंहल द्वीप ही उनका उत्पत्ति-स्थान है और वे जम्बू द्वीप मे नही होती। इस वार्ता को सुनकर एक भाटिन ने राज्याज्ञा लेकर कहा कि पद्मिनी नारियों की उत्पत्ति केवल सिंहल द्वीप मे ही नही होती, अपितु जम्बू द्वीप मे भी होती है। उसने यह भी कहा कि जम्बू-द्वीप मे रूपनगर के राजा पद्मसेन एव रानी कौशल्या की पुत्री पुहुपावती भी ऐसी ही पद्मिनी है। राजा पुहुपावती के रूप-सौंदर्य का वर्णन सुनकर उसे प्राप्त करने के लिये विकल हो उठा। भाटिन ने राजा को बता दिया कि वह अविवाहिता है।

तदनन्तर कुछ पृष्ठ अनुपलब्ध है। पुनः कहानी आरम्भ होती है कि पुहुपावती के पास एक चित्र बेचने वाली आई। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि दूती ही पुहुपावती के पास सभवतः मानिक चन्द का चित्र लेकर आई हो। उस चित्र को देखते ही पुहुपावती मुग्ध हुई और उसे काम-पीडा सताने लगी। एक दिन उसने चतुर्भुज जी के मन्दिर मे जाकर चित्र के अनुरूप ही वर पाने की कामना प्रकट की और जब वह मन्दिर से लौटकर रात को घर मे आकर सो गई उसने मानिकचन्द के दर्शन किए। स्वप्न मे मानिकचन्द ने उसे बताया कि वह भी उसके प्रेम मे इसी प्रकार दुखी है। इसके अनन्तर एका-एक नीद उचट जाने से प्रेमाकुल पुहुपावती ने दूती (भाटिन) से कहा कि वह अपने बनाए हुए चित्र का आधार बताये। यह प्रति यहा खण्डित है और पुन. आरम्भ होने पर वियोगिनी पुहुपावती का मिलन अपने प्रेमी मानिकचन्द के साथ होता है। इसके अनन्तर चर्तुभुज का पूजन करने के पश्चात् वह मानिक चन्द के साथ स्वदेश लौटी। कालान्तर मे उनके घर देवी नाथ नामक पुत्र ने जन्म लिया। यह खण्डित प्रति यहीं समाप्त होती है।

कथा का आधार तथा संगठन

इस सूफी-प्रेमाख्यान की कथा काल्पनिक है। इसी की कथा के आरम्भिक पृष्ठ अनुपलब्ध है।

ग्रन्थारम्भ में कवि ने निर्गुण परमात्मा की महिमा, हजरत मुहम्मद तथा उसके चार मित्रों की प्रशसा तथा शाहेवक्त का गुणगान किया है। इसमे विरोधी तत्वों का अभाव दीखता है। नायक-नायिका के मिलन मे किसी भी तरह की बाधा प्रतीत नही होती।

इसकी कथा दुखहरनदास कृत 'पुहुपावती' से बिल्कुल भिन्न है। कवि ने

इस काव्य की रचना सन् १६६६ ई० मे की।[1] इसमे राजपुर नरेश के पुत्र राजकुवर और अनूप नगर के राजा अम्बरसेन की रूपवती कन्या पुहुपावती की प्रेमकथा का वर्णन है। इसमे विरोधी तत्वों की प्रचुरता है।

प्रेम-पद्धति

इसमे प्रेम का आरम्भ गुण-श्रवण से होता है। राजा भाटिन से अविवाहिता पुहुपावती के रूप-सौंदर्य का वर्णन सुनकर उस पर मुग्ध होता है। पुहुपावती का प्रेमारम्भ चित्रदर्शन से होता है जो दूती (भाटिन) उसके पास ले आती है। मानिकचन्द के सुन्दर चित्र को देखकर ही वह आश्चर्यचकित हो जाती है। चित्र की सुन्दरता से ही वह अपने प्रेमी मानिकचन्द के रूप-सौंदर्य की कल्पना करके कहती है

दुहु कस होहि सुन्दर सोई, अस रूपवन जहि बस होई।

इस चित्र को देखते ही वह प्रेमाग्नि से जल उठती है

बढी पीर तन लागे बाना। मरह मलाजन तहा बसाना।

विप्रलम्भ शृंगार

कवि का कथन है कि वियोगाग्नि मे जलने वाले को किसी भी प्रकार का सुख उपलब्ध नही होता।[2] इस काव्य मे विरह की दशाओं, स्थितियो एव अवस्थाओं का कही निर्देश नहीं है। इसमे केवल इसी बात का वर्णन-मात्र है कि विरह मे प्रेमियो पर क्या बीतती है।

संयोग शृंगार

इसमे सयोग शृगार अश्लील नही है। उसमे काव्य चमत्कार तथा अनुप्रास की छटा है :

निपटि लजीली नवल सुरबाला, हसि-हसि झुके हिए मदपाला।
छाके मद छवि परैं न छाकू, अस मद पियो न हरैं विपाकू॥

एक स्थान पर कवि ने संयोग मे 'फना' (निर्वाण) की झलक भी प्रस्तुत की है :

---

१. हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य पृ० ६६।

२. यद्यपि पुहुप समध सुठि साई, तदपि न मनुता मधुपद कोई।
जद्यपि आपु चहै मन भरा, कैसे भरे नेहु अधिकारा॥
जद्यपि मधुप पुहुप मह बसै, पै न अघाइ वहै रस रसै।
चित्त सीस मरि धर्यो ठंढाई, सहब सो आगि कहां सियराई॥

वहु वीर वस वहि वस भई, मै मिलि एक दोत मिटि गई।
रीझ रिझावन हार रिझ रीझ भये जो एक।
को रीझे रिझवावइ जह मिलि मिट्यो विवेक ॥

रूप-सौदर्य वर्णन

पुहुपावती के अनुपम सौदर्य के सम्मुख सभी वस्तुए कान्तिहीन हो जाती है :

असुरी सुरी सबै मैं हीनी, उड गन समिहु जोति तजि दीनी।
भइ रत्ती दुति रती जो देखी, क्रीडा मोद करै सु विसेषी ॥

इसके रूप-प्रकाश से रात भी दिन के समान प्रतीत होती है .

बिगसे कमल जानि मन सूरू, भयो बटोहिन दुख्खु समूख।
छपि गो चन्द उदै जो कीन्हा, मिटी तराई सूर जो चीन्हा ॥

अपनी सखियो के मध्य भी वह ऐसी शोभायुक्त प्रतीत होती है मानो तारो के बीच चन्द्रमा प्रकाशमान हो :

स्याम सुकेश रैनि है गई, समि तिन माहि तराइन भई।
बीचहि उदै कियो सो ससी, है सो स्वरग पुहुमि यों लसी।
जो कोइ धाइ पैग दस जाई, टूटै तारा तैसि लखाई ॥
सामा भइ सुगगन मलीनी, असि अबला पुहुमहि दुति दीनी।
कौतुक कियो ऐस उन नारी, भूमि अकास सु सबनि विचारी।

ईश्वरोन्मुख प्रेम

कवि ने पुहुपावती के विदा-वर्णन के रूप मे परलोक गमन तथा मानिकचन्द की सराहना के रूप मे एकेश्वरवाद का प्रतिपादन किया है। ससार की प्रत्येक नाशवान् वस्तु के प्रति कवि का कथन है :

अन्त जो है पलना यही सब आए ले चाल।
विधि दरसन भूपति दियो कियो यही प्रतिपाल।

अतः उस परमात्मा का ध्यान ही जीवन का सार है :

अहै न काया आपनी औ नहि आपा कोई।
एकै रूप लखौ जहा तजौ मरम जग खोई ॥

वह ईश्वर सर्वत्र व्याप्त है। वही सबका सरक्षक है।

एकहि छांडि न जानिय दूजा, कहा एकु जहं पूजा।
एक सबै विधाता भाषा, तुम का जानि दूज मन राखा।
एकै राखुहु मन विखे करि दूजा प्रतिकूल,
दूजा कहां जो देखियत है एकौ सो मूल।

८—हस-जवाहिर[1]

कथा-सारांश—बलखनगर के सुल्तान बुरहान शाह का पुत्र हस हज़रत खिज्र ख्वाजा के आशीर्वाद से उत्पन्न हुआ। ज्योतिषियो ने हस के नक्षत्र देख कर बतलाया कि वह स्वदेश से एक बार बिछुड़ जायेगा किन्तु अत मे वह फिर बलख लौटेगा तथा वहा का सुल्तान बनेगा। कुछ समय अनन्तर बुरहान-शाह की मृत्यु पर सर्वत्र अनबन फैल गई और बालक हंस को बन्दी बना लिया गया। प्रयत्न करके उसकी मा उसे अपने साथ ले जाकर बलख के बाहर चली गई। मार्ग मे अनेक प्रकार की कठिनाइयो को झेलने के पश्चात् वे किसी न किसी प्रकार हजरत खिज्र ख्वाजा के परामर्श से रूम देश के शाह तक पहुच गए। वहा उन दो का यथोचित स्वागत हुआ।

एक वर्ष व्यतीत हो जाने पर एक दिन जब हस फुलवारी मे सो रहा था उसे स्वप्न मे एक सुन्दरी दीख पडी जिसके सौदर्य पर वह तत्काल विमोहित हो गया।

उधर चीन देश के राजा आलमशाह की रानी मुक्ताहार ने जवाहिर नाम की एक पुत्री को जन्म दिया। एक दिन वह अपनी वाटिका मे घूम रही थी कि वहा एक परी तालाब मे स्नान करने आई। अपना 'चीर' किनारे पर ही छोड-कर वह तालाब मे नहाने लगी। जवाहिर ने उसका 'चीर' कही पर छिपवा दिया। 'चीर' लौटा देने पर वह परी जवाहिर की सखी बन गई और शब्द' नाम से जवाहिर की अन्य सखियो के साथ वही धोराहर मे रहने लगी। जब जवाहिर वयस्क हुई, उसके पिता आलम शाह ने पुत्री का विवाह-सम्बन्ध किसी देश के सुल्तान भोलाशाह के पुत्र दिनौर से स्थापित कर लिया। 'शब्द' परी ने दिनौर की बडी निन्दा की अत. वह उसके लिये योग्य वर की तलाश मे परेवा बन कर उड़ चली।

'शब्द' उड़ती-उडती रूम देश मे हंस के निकट पहुंच गई। उसने उस (हंस) के सामने जवाहिर के नख-शिख का वर्णन किया जिसे सुनकर वह इतना प्रभा-वित हुआ कि उसने जवाहिर को अपनी स्वप्न-सुन्दरी के रूप मे स्वीकृत किया। विरहाग्नि उद्दीप्त हो जाने के अनन्तर वह जोगी का वेश धारण करके प्रेम-पथ पर अग्रसर होने को तैयार हुआ किन्तु 'शब्द' ने उसे सात दिन तक ऐसा न करने से रोक दिया। वह स्वयं हंस के पास उड़ चली और उसने सारा वृतान्त जवाहिर को कह सुनाया। किसी की शिकायत पर रानी ने 'शब्द' को बंदिनी

१. हंस जवाहिर, कासिमशाह, प्रकाशक, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ, सन् १६३७, प्रति प्रयुक्त।

बनाकर उसका चीर भी छीन लिया। उडने मे असमर्थ परी की दुरवस्था पर जवाहिर अत्यन्त क्षुब्ध हुई। इधर से जवाहिर ने भी स्वप्न मे हस के सौदर्य के दर्शन किए।

उधर से 'शब्द' के वापस न लौटने पर हस व्याकुल हुआ। प्रेमी-प्रेमिका के प्रेम मे व्यवधान पढ जाने से जवाहिर के विवाह की तैयारिया दिनौर के साथ ही होने लगी। दु खी हम मिसी पर्वत पर जाकर सो गया। इसी बीच कुछ परियो ने हंस को चीन देश मे पहुंचा दिया। वे वहा दिनौर को सजी सजाई बरात से उठाकर हस को उसके स्थान पर बिठा आई। इस प्रकार अकस्मात् दोनो प्रेमियो की भेट हुई तथा हस एवं जवाहिर का विवाह हुआ। दोनों ने अपनी-अपनी अगूठिया बदल ली किन्तु जब वे आनन्दकेलि कर सो गए तो परिया हंस को वहां से उठाकर पुन· पर्वत पर ले आई और उसके स्थान पर दिनौर को जवाहिर के पास ले आई।

दिनौर को जवाहिर द्वारा वर के रूप मे स्वीकृत न किए जाने पर बरात रूठकर वापस चली गई और बदला लेने के लिये दिनौर जोगी होकर निक पड़ा। वह क्रोधित होकर गुरु वीरनाथ से जा मिला। वह ध्वसकारी साधना मे लीन हुआ। उधर जब हस जाग पडा तो उसे विरहाग्नि सताने लगी। जवाहिर भी विरह-विह्वल होने लगी। जवाहिर को दुःख से निवृत्ति देने के लिये 'शब्द' अपना चीर लेकर पुनः उड गई और हस के पास आई। हस अपनी प्रेमिका की विरह-पीडा का परिचय पाते ही जोगी होकर निकल पडा। उसके सग कई अन्य साथी भी चले गए। 'शब्द' उन सब का मार्ग-प्रदर्शन करती रही। अनेक प्रकार की बाधाओं का सामना करते हुए वे किसी प्रकार समुद्र-तट पर पहुंच गए। समुद्र पार करते ही 'शब्द' जवाहिर के पास चली गई और उसने उसे अन्य साथियों के साथ हस से मिलन कराया।

इस प्रकार हंस तथा जवाहिर एक बार फिर मिले। तदनन्तर हस अपनी प्रेमिका के साथ अपने देश की ओर चल पडा। मार्ग मे अवसर पाकर गुरु वीर नाथ के शिष्य ने उन्हें पुनः पृथक् कर दिया। हस जोगी के वेश मे घूमता हुआ भोलाशाह के यहां पहुचा और उसका विवाह उसकी पुत्री एवं दिनौर की बहिन के साथ हो गया। 'शब्द' के प्रयत्न से उसे जवाहिर भी मिल गई। हस अपनी दोनों पत्नियों को लेकर रूम देश की ओर लौटा। रूम का अधिपति बनकर उसने बलख को पुनः हस्तगत किया। यहा जवाहिर से उसे एक पुत्र-रत्न उत्पन्न हुआ जिसका नाम हसीन रखा गया। अन्त मे उसके विरोधी मीरदौला के पुत्र ने उस पर दूसरों से आक्रमण करवा दिया। उसने स्वयं हंस को छुरी से मार दिया जिस पर उसकी दोनों पत्नियों ने भी प्राण त्याग दिये। तीनों की एक साथ

समाधि बना दी गई। अन्त मे हसीन सिंहासनारूढ हुआ।

कथा का आधार तथा संगठन

'हसजवाहिर' का कथानक पूर्णरूप से काल्पनिक है।[1] यद्यपि इसमे बलख, चीन तथा रूम के प्रदेशो को घटना-स्थलो के लिये चुना गया है, फिर भी इन स्थलो के निवासी पात्रो का नामकरण भारतीय हैं। इन सभी पात्रों के नाम भी काल्पनिक हैं।

घटनाओ का सगठन परम्परा के आधार पर हुआ है। राजा का पुत्राभाव, आशीर्वाद के द्वारा पुत्रोत्पत्ति,[2] प्रेमोत्पत्ति, मार्ग की विकट कठिनाईया, परी अथवा परेवा की सहायता,[3] जीवन की असारता[4] तथा शाश्वत मिलन[5] आदि मे पूर्ववर्ती सूफी काव्यों से विशेष अन्तर प्रतीत नही होता। अप्सरा अथवा परी का उल्लेख आश्चर्य तत्वो की सयोजना के लिये किया गया है।

कथा विषादान्त है।[6] 'पद्मावत' की भाति ही कवि ने कथा के अन्त मे कथा-रूपक की ओर सकेत करते हुए कहा है :

कासिम कथा जो प्रेम बखानी। बूझे सो जो प्रेमी ज्ञानी।
कौन जवाहिर रूप सोहाई। कौन शब्द जो करत बड़ाई।
कौन हस जो दरसन लोभा। कौन देस जेहि ऊंचे सोभा।
कौन पथ जो कठिन अपारा। कौन शब्द जो उतरे पारा।
कौन मीत जिन सग जिव दीना। कौन सो दुर्जन अति छल कीना।
कौन ज्ञानी जो बननि सुनावा। कौन पुरुष जो सुनि चित्त लावा।
कौन दुष्ट जेहि दरशन जूझा। कौन भेद जेहि शब्दहि बूझा।

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य,—पृ० ४३४।

२. धनि वह रैन पुत्र की होई, धरती स्वर्ग हुलस सब कोई। हंस जवाहिर, पृ० ११।

३. दुविधा का मग छाडि के, एक पन्थ तू साज।
कै निज लेउ जवाहिरे, कै रूमी कर राज॥—वही, पृ० ७६।

४. धोखा अहै मर्म पट दिया, छाड सो धोख खोल पट दिया
धोख छांडि सुमिर करतारा, वही सो सांज धोख ससारा।
—वही, पृ० २७१।

५. छारहि रूप स्वरूप देखावा, छारहि मांह जक्त बौरावा।—वही, पृ० २७१।

६. पांतहि पांत सोवाय की, देह उपर ते छार।
छारहि करत ओढाय के, अंत छार की छार।—वही, पृ० २७०-२७१।

जाच कथा पोथी जु पढ, परसन नेहि जगदीस।
हमहि बोलि सुमिरै सोई, कासिम देइ असीस।[१]

संपूर्ण काव्य का सम्बन्ध-निर्वाह परिपुष्ट है।

प्रेम-पद्धति

इस मे कवि ने स्वप्न-दर्शन के द्वारा प्रेम का प्रादुर्भाव दिखाया है। अज्ञात सुन्दरी को स्वप्न मे देखकर नायक हस ससार के प्रलोभनो से उदासीन रहता है। 'शब्द' द्वारा अपनी प्रेमिका जवाहिर के रूप-सौदर्य का वर्णन सुनकर वह आश्वस्त हो उस पर मोहित होता है। इम भाति इसमे प्रेम का आविर्भाव पहले स्वप्न-दर्शन और फिर गुण-श्रवण के आधार पर कराया गया है। नायिका की प्राप्ति का प्रयत्न नायक की ओर से होता है। स्वप्न-दर्शन के पश्चात् ही 'अभिलाषा' उत्पन्न होती है। उस के प्रेम मे एकनिष्ठता तथा निश्चयात्मकता है। विवाहोपरान्त दोनो नायक-नायिका के प्रेम मे अलौकिकता के दर्शन होते है।

विप्रलम्भ शृंगार

विरह की उष्णता ही प्रेमी का जीवन है।[२] जवाहिर अपने प्रिय की प्रतीक्षा मे बेचैन होकर सदा अभिलाषा-पूर्ति की इच्छा रखती है·

भय अधराति ठाढ पछिताई, खन आंगन खन भीतर जाई।
मग जोवत बीते दिन राती, समुद्र माझ जस सीप सुवानी।[३]

इस भांति हंस भी अपनी प्रेमिका के लिये पीडित है। प्रकृति भी मानव के प्रति सहानुभूति प्रकट करती हुई इसमे प्रदर्शित की गई है।

विरह की अभिव्यजना के लिए इस मे बारहमासे की परम्परा को अपनाया गया है। इस मे प्रिय के वियोग मे दुखकातरता तथा आश्रयहीनता का भाव स्पष्ट झलकता है :

पवन झुलावे मनहि मय, विरह झकोरे देय।
गगन चढ़े उतरे अवनि, पिउ बिन थाम को लेय।[४]

और भी—

चहु दिशि चांचर होय धमारी, हौ सो रहिंउ छार गिरड़ारी।[५]

---

१. हस जवाहिर, पृ० २७२।

२. कासिम आगी विरह की, पड़ी बहुत तन घाव।
दहकी विरह झिकोर बहु, अब केहि बार बुझाय। वही, पृ० ३०

३. वही, पृ० ६०।   ४. वही, पृ० १३१।

५. वही, पृ० १३३।

कवि का कथन है कि यह सम्पूर्ण आकाश एव पृथ्वी उसके विरह मे व्याकुल होकर उसे प्राप्त करना चाहती है, परन्तु उसमे असमर्थता के दर्शन सर्वत्र होते है। इस कारण विरह पक्ष मे रहस्यवाद की झांकी प्रस्तुत की गई है :

मेघ सो रोवे ताहि दुख, भूमि चुवावै आस।
जग जाने बरसा भई लागो भादो मास।[१]

अन्य प्रसंग

कवि ने इसमे करुण रस के साथ ही वीर रस[२] का भी वर्णन किया है। करुण रस का वर्णन कवि ने हस के परलोकगमन के समय किया है

चन्द्र सूर अथये दोऊ, नखत भये अंधियार।
जगत महा परलै भयौ, सून सकल ससार।[३]

इस के अतिरिक्त इसमे जल क्रीडा,[४] दान-महिमा[५] तथा तप-महिमा[६] का वर्णन हुआ है।

नख-शिख वर्णन परम्परानुसार है।[७] जवाहिर को ही परमात्मा का स्वरूप मानते हुए कवि ने कहा है .

जग महं छाई किरन सब, ज्योति माझ कैलास।
तपसी थकित जगत के, बैठ सो तेहि की आस।[८]

६—इंद्रावती[९]

कथा-सारांश (पूर्वार्द्ध)—कालिंजर राज्य के राजा का नाम 'भूपति' था। उसकी मृत्यु के अनन्तर उसकी एकमात्र सतान 'राजकुवर' नामक कुमार गद्दी पर बैठा और अपनी पत्नी के साथ राज्य करने लगा। एक रात स्वप्न मे राजकुवर ने दर्पण के भीतर किसी सुन्दरी का प्रतिबिम्ब देखा। उसने उसी सुन्दरी को दूसरी रात भी स्वप्न मे देखा। उसके सौदर्य पर मोहित राजकुवर अपना राज्य-कार्य छोडकर विरहाग्नि मे जलने लगा। उसके मत्री बुद्धसेन ने राजा की

---

१. हस जवाहिर, पृ० २०४।
२ वही पृ० २२-२३।
३. वही, पृ० २६६।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३४-३६।
५. द्रष्टव्य—वही, पृ० २६८।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० १६२।
७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५४।
८. वही, पृ० ५०।
९. इद्रावती (पूर्वार्द्ध) प्रकाशक, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सन् १९०६ ई०, प्रति प्रयुक्त।
हस्तलिखित प्रति (उतरार्द्ध) नागरी प्रचारिणी सभा, काशी (आर्य भाषा पुस्तकालय मे सुरक्षित), प्रति प्रयुक्त।

उदासीनता को दूर करने के लिये कई युक्तिया सोची किन्तु सब व्यर्थ सिद्ध हुई। अन्त मे राजा की फुलवारी मे ठहरे हुए एक तपस्वी ने राजकुवर को बतलाया कि उसकी स्वप्न-सुन्दरी समुद्र पार बसे हुए आगमपुर नगर के जागपति नायक राजा की परम सुन्दरी कन्या इद्रावती है।

उस तपस्वी को अपना गुरु स्वीकार कर्के राजकुवर इंद्रावती के लिये आगमपुर की ओर जोगी बनकर चल पडा। मार्ग मे रस तथा भोग-प्रधान सात बन लाघकर वह आगे बढता गया। कायापति नामक एक बनजारे से उसकी भेंट मार्ग मे हुई और दोनो समुद्र पार कर 'जिउपुर' पहुंचे। विरह-पीडित राजकुवर बुद्धसेन को वही छोड कर सारगी लेकर चल दिया। मार्ग मे उसे शिव-मन्दिर मिला जहां पर उसे आकाशवाणी से यह ज्ञात हुआ कि इन्द्रावती की फुलवारी प्रेमपुर मे स्थित है। वहा जाने का आदेश पाकर वह दूसरे ही दिन वहा पहुचा।

उधर आगमपुर मे होली का उत्सव मनाया जा रहा था। इद्रावती अपना मुख दर्पण मे देखकर स्वय अपने सौदर्य पर रीझ रही थी। एक दिन उसने स्वप्न मे एक अर्धविकसित कमल को मधुकर के साथ जाते हुए देखा। उसने दूसरा स्वप्न भी देखा जिसमे उसने एक जोगी को अपनी मांग मे सिन्दूर भरते हुए देखा।

एक दिन इन्द्रावती वाटिका मे आ गई और वहा उसका साक्षात्कार राज-कुवर के साथ हुआ। दोनो एक-दूसरे पर मोहित हुए। प्रथम-दर्शन मे ही राज-कुवर उसे देखकर मूर्छित हुआ। अत्यन्त प्रयास करने पर भी जब राजकुवर की मूर्छा न खुली, तो इन्द्रावती एक पत्र में 'जिव कहानी' नामक एक कथारूपक लिखकर उसके पास छोड गई।

'जिव-कहानी' के उस कठिन मर्म को बुद्धसेन ने उसे समझाया जो सयोग-वश वहां पहुंच गया था। इस पर राजकुवर ने भी एक पत्र इंद्रावती को लिख-कर भेजा। एक दिन राजकुवर ने अकस्मात् झरोखे पर आई इद्रावती को देखा जिस पर उसकी प्रेमवेदना तीव्रतर हो उठी। अपनी प्रेमिका को प्राप्त करने की अभिलाषा से जब वह सागर से प्रणमोती निकालने चला तो वह दुर्जनराय द्वारा बन्दी बना लिया गया। राजकुवर ने बदी स्थान से तोते के हाथ अपनी प्रेमिका इद्रावती के पास अपने कैद होने का सन्देश भेजा। कृपा नामक राजा के द्वारा जब दुर्जन राय मारा गया तभी राजकुंवर बन्धन से मुक्त हुआ। वहा से मुक्ति पाकर वह नौका पर बैठकर समुद्र से प्रणमोती निकालने गया। प्रणमोती प्राप्त होने पर राजकुवर उसे इद्रावती के पिता जगपति को दे दिया, जिस पर प्रसन्न होकर उसने उसका विवाह अपनी पुत्री के साथ कर दिया। इस प्रकार इस कथा

का पूर्वार्द्ध समाप्त होता है।

कथा-सारांश (उत्तरार्द्ध)—राजकुवर तथा इद्रावती के समागम से ही इसका आरम्भ होता है। इधर जब राजकुवर अपनी पत्नी इद्रावती के साथ मिलन-सुख मे लीन था, उधर राज कुवर की पहली पत्नी सुन्दर कालिजर मे विरहाग्नि से दग्ध हो रही थी। राजकुवर के कालिजर से प्रस्थान करने के समय सुन्दर रानी गर्भवती थी। अब उसने कीर्तिराय नामक पुत्र को जन्म दिया था। विरहिणी सुन्दर ने कई बार जोगिन हो जाने की बात सोची और फिर कभी-कभी उसके हृदय मे आत्महत्या का भी विचार आया। विरह-विदग्धा सुन्दर को उसकी सखिया प्रति रात्रि कहानी सुना कर सुलाने की चेष्टा किया करती थी।

उसी समय कालिजर मे रहने वाली 'लोभ' नामक एक कुटिल स्त्री ने कीर्त्तिराय पर टोना किया जिस पर रानी सुन्दर ने उसे देश निकाला दे दिया। वहा से चलकर लोभ जैतपुर गई जहा उसने वहा के राजा कामसेन के सामने रानी सुन्दर के रूप-सौदर्य का वर्णन किया। कामसेन ने मोहिनी मालिन को जोगिन के भेष मे रानी सुन्दर के पास भेजा किन्तु सुन्दर ने उसे अपमानित करके वहा से हटा दिया। कामसेन ने क्रोधाग्नि मे जलकर रानी सुन्दर पर आक्रमण किया। रानी सुन्दर ने सफलतापूर्वक सामना किया और कामसेन मारा गया। अब रानी सुन्दर दुखित थी। उसने पवन-दूत के द्वारा राजकुवर के पास सदेशा भेजा। वह रानी सुन्दर का दुखार्त्त प्रवचन सुनकर स्वदेश लौटा। मार्ग में सागर की कन्या कमला ने इंद्रावती से भेट करके राजकुवर की परीक्षा ली जिस मे वह सफल हुआ।

कुछ समय पश्चात् किसी कारण राजकुवर की मृत्यु हो गई। उसके निधन पर उसकी दोनो रानिया उसके साथ सती हो गईं।

कथा का आधार तथा संगठन

कवि नूर मुहम्मद कृत इन्द्रावती की कथा मौलिक-सी प्रतीत होती है।[१] वे

---

१. मन दृग सो एक रात मझारा। सूझ परा मोहि सब ससारा।
देखेउ तहा नीक फुलवारी। देखेउं तहां पुरुष औ नारी।

× × ×

भोर होत लिरबनी मैं लीन्हा।
कहै लिखें ऊपर चित्र दीन्हा।

—इन्द्रावती, पृ० ३-४।

अन्य सूफी कवियो की भाति किसी ऐतिहासिक या पौराणिक कथा का आधार ले अपने सिद्धान्तो का प्रतिपादन नही करते है। प्रत्युत् कथावस्तु पूर्णतः काल्पनिक और रूपक के गुणो मे समन्वित है। पात्रो के भावात्मक नामकरण ने कवि के रूपक को स्पष्ट करने मे पूर्ण योग दिया है। कथावस्तु तथा पात्र पूर्णतः काल्पनिक है।[1]

ग्रन्थारम्भ मे कवि ने निर्गुण-ब्रह्म, रसूल मुहम्मद, उनके चार मित्रो तथा शाहेवक्त की प्रशसा करने के अनन्तर वचन की महिमा का गान किया है। करतार के एक वचन 'कुन' से ही इस सृष्टि की उत्पत्ति हुई है। इसी के साथ ही कवि ने अपने ग्रन्थ की रचना का कारण प्रस्तुत किया है। तदनन्तर प्रेम की महिमा बताई गई है।

कथा अधिकतता वर्णनात्मक है। इसमे कई अतर्कथाओ की सयोजना हुई है। इद्रावती मे चार कथानक है। उनमें एक तो आधिकारिक है और तीन प्रासगिक, चारो कथानक प्रेम-पथ के है। आधिकारिक कथावस्तु मे प्रेम स्वप्न-दर्शन पर आधारित है।[2] इसका कथानक अत्यन्त सरल है किन्तु लेखक ने मानवीय प्रवृत्तियो आदि को मुर्त्त आधार देकर पात्रो के रूप मे उपस्थित किया है। राजकुवर साधक है तथा गुरुनाथ तपस्वी मार्ग-प्रदर्शक है। आठ सखा शरीर के सग रहने वाले इद्रिय-विकार है। राजकुवर की रानी सुन्दर सासारिक मोह का आकर्षक स्वरूप है। मार्ग के साथ वीहड बन, इद्रिय विकार, रूप, गन्ध, स्पर्श, रस, शब्द आदि शारीरिक वासनाओ के प्रतीक है, जिन पर राजकुवर विजय प्राप्त करके आगे बढता चला जाता है।[3] साधना के मार्ग मे अग्रसर होकर ही 'जाइ बसा जिउपुर वियोगी' साधक की संपूर्ण चेतनाए आत्मकेन्द्रित हो जाती है। पूर्वार्द्ध में राजकुवर तथा इद्रावती का विवाह आत्मा-परमात्मा के मिलन का प्रतीक है।[4] जायसी के 'पद्मावत' की भांति ही कथा दुखान्त है। कवि ने कहा है कि जब तक पृथ्वी एवं आकाश स्थित है, यह ग्रन्थ विद्वानो के द्वारा पढा जाएगा।

प्रेम पद्धति

नायक-नायिका का मिलन सूफियो की दृष्टि मे आत्मा-परमात्मा का

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ४५८।
२. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० २१३।
३. तेहि ऊपर अस लाएउ ध्याना, रहि गई मूरत आप हेराना—इंद्रावती, पृ० ३०।
४. नूर मुहम्मद जगत मंह, जो नहि होत वियोग।
तो पहिचान न जातँ, यह सिगार संयोग।—इद्रावती, उत्तरार्द्ध

तादात्म्य है। राजकुवर के हृदय मे प्रेम-भावना का अविर्भाव स्वप्न-दर्शन से होना है। पहली रात्रि मे वह इद्रावती का प्रतिबिम्ब एक दर्पण मे देखता है और दूसरी रात मे उसके सौदर्य का दर्शन कई दर्पणो मे प्रतिबिम्ब देखता है।[१] उसका रूप देखकर वह स्वप्न मे ही मूर्छित होता है और जागने पर ही उसे हृदय मे उद्भूत प्रेम का परिचय मिल जाता है।[२] तभी वह उसकी प्राप्ति के लिए मार्ग की विघ्न-बाधाओ को पार कर के आगे बढता चला जाता है। स्वप्न मे दीख पडने वाली इद्रावती की प्राप्ति की अभिलाषा जाग्रत हो जाने पर नायक की प्रेम-भावना दृढ एव निश्चित रूप धारण करती है। इसी प्रकार मध्या नायिका इद्रावती के हृदय मे भी एक ऐसे ही जोगी के प्रति प्रेम समाविष्ट हो चुका था जिसको उसने स्वप्न मे देखा था। पूर्वार्द्ध मे उन दोनो का विवाह दाम्पत्य जीवन की ओर सकेत करके प्रेमी-प्रेमिका के एकत्व का परिचय देता है। यद्यपि इन्द्रावती का चरित्र प्रेम-भावना के कारण सराहनीय है, फिर भी विवाहिता पत्नी सुन्दर, अपनी त्याग भावना के कारण महान् है। जब राजकुवर नायिका इद्रावती की प्राप्ति के लिए रानी सुन्दर का परित्याग करता है, उस समय उसके चरित्र की भव्यता के दर्शन होते है। वह जोगी बनकर ही प्रेमिका के दर्शन के लिए अग्रसर होता है। राजकुवर के प्रस्थान के समय रानी सुन्दर रोती नही क्योकि इससे वह प्रिय के अपशकुन की संभावना का ध्यान करती है।[३] उन दोनो का सम्बन्ध शरीर और आत्मा की भाति अन्योन्याश्रित है।[४] राजकुवर के चले जाने के अनन्तर कवि ने रानी सुन्दर को प्रोषितपतिका के रूप मे चित्रित किया है।

प्रेम-तत्व

नायक तथा नायिका मे प्रेम-भावना उद्भूत होने पर मिलन की इच्छा उत्पन्न होती है। विरह से पीडित इंद्रावती प्रिय की सारगी बनने की अभिलाषा करती

---

१. जस दरपन निमल रहे, तस देखा अधिकार।
दरसन एकै नारि कौ, सब आदरस मझार—इंद्रावती, पृ० १०।

२. राजा देखि सपन अस जागा, लागा ग्रीव प्रेम को धागा।—वही, पृ० ११।

३. राजा पथ अगम पर चला। रोएं ताहि न होइ हि भला।
रोए सो पिय फेरि न आवहि, करू सोई जासो मुख पावहि। वही,
पृ० २६।

४. बसत सदन सइ सत्रु उजारा, हरि लेइ चला परान हमारा—वही,
पृ० २५।

है क्योंकि वह जोगी के साथ सदा रहती है ।[1] राजकुंवर के प्रेम-भाव पर भी तंत्र, जत्र अथवा मत्र का कोई प्रभाव नही पडता ।

विप्रलम्भ शृंगार

इद्रावती का दर्शन करके राजकुवर विरह द्वारा पीडित होता है । कवि ने 'इद्रावती' के उत्तरार्द्ध मे बारहमासे का वर्णन किया है । इद्रावती के विरह-वर्णन मे केवल वियोगावस्था की दशाओ तथा अवस्थाओ का ही वर्णन है, उस मे भावो की अधिक प्रभावोत्पादकता नही है ।

संयोग शृंगार

राजकुवर तथा इंद्रावती के विवाह द्वारा कवि ने आत्मा-परमात्मा के एकत्व की ओर सकेत किया है । इस मे षट्ऋतु-वर्णन उद्दीपन की दृष्टि से किया गया है । ऋतु-वर्णन पावस से प्रारम्भ होता है । इद्रावती के इस सयोग-सुख का वर्णन देखिए :

चिन्ता एक न मानहि मानहि अनन्द हुलासा ।
भोग सुखद हसि खेलि भो, बीति गएउ चौमासा ।[2]

इसी प्रकार कवि ने क्रमानुसार शरद्, हेमन्त, शिशिर तथा वसन्त आदि ऋतुओ का भी वर्णन किया है । यद्यपि इसमे परम्परागत अश्लीलता का अधिक आभास नही मिलता, फिर भी फलाहार के रूपक बाधने मे कवि ने कुछ अश्ली-लता का परिचय अवश्य दिया है ।

ईश्वरोन्मुख प्रेम

सूफी मतानुयायी होने के कारण कवि नूर मुहम्मद ने अपनी प्रेमकथा को अन्योक्ति के रूप मे वर्णित किया है । इसमे ऐसे कई स्थल आए है जिन मे इद्रा-वती को परमात्मा के रूप मे व्यजित किया गया है ।[3] वही (इद्रावती) परम सत्य है । दीपक की ज्योति के समान प्रज्वलित उसके सौदर्य पर ससार पतगे के अनु-रूप उस पर अपने प्राण विसर्जित करने को तैयार है ।[4] उसके अलौकिक प्रेम के

---

१. बडे भाग सारंगी, रहती प्रीतम पास ।
मोहि कलेस बिछुड़न कौ, है प्रछन्न परकाश ।—वही, पृ०

२. वही, उत्तरार्द्ध ।

३. कुच श्रीफल, बादाम दृग, अधर खांड सम आहि ।
चाहो सो फरहार में, पावौ लेउ सराहि । इद्रावती, उत्तरार्द्ध

४. जेहि दरसन के दीप पर है पतग ससार ।
प्रेम तेहिक तुम लीन्हा, मरै न न तोहार ।—वही, पृ० ४५ ।

लिए ही राजकुवर अपने सासारिक सुखो एव आशाओ का परित्याग करता है। वह इतनी सौदर्य-शालिनी है कि प्रत्येक प्राणी उसे बिना देखे ही प्रशसा करता है।[1] उसी एक की परम-ज्योति से सूर्य तथा चद्रमा प्रकाशवान् है। सृष्टि का कण-कण उसके सौदर्य पर मुग्ध है। उसी के सौदर्य का दर्शन रात्रि अपने असख्य नेत्र रूपी तारो से करती है।[2]

इन्द्रावती का दर्पण मे अपने स्वरूप को देखकर विमोहित होना उसके ब्रह्मत्व की ओर सकेत करता है :

> कोउ नाही बीच सो, अपने रूप लोभान।
> अपनो चित्र चितेरा, देखि आप अरुझान।[3]

एक हदीस मे कहा गया है कि अल्लाह जब अपने ही स्वरूप पर मुग्ध हुआ था तो उसने सृष्टि की रचना की थी।

साधक राजकुवर अपने पत्र मे अलौकिक प्रेम का परिचय देता है। ससार में ईश्वर के सदैव सम्मुख होने पर उसका साक्षात्कार वही कर सकता है जिसने माया का त्याग किया हो। अज्ञान रूपी निशा मे जागने वाला ही उसका दर्शन कर सकता है :

> जो सो जो जागै रयना, मन पर धरै ध्यान को नयना।
> ध्यान समेत रयना जो जागै, ताकौ हाथ मनोरथ लागै।[4]

इस भाति कवि ने 'इद्रावती' मे लौकिक प्रेम के मध्य अलौकिक प्रेम की ओर सकेत किया है।

१०—अनुराग बांसुरी[5]

कथा-सारांश—मूरतिपुर नामक एक नगर का जीव नायक राजा था। उसके एक मात्र सर्वगुण सम्पन्न पुत्र का नाम अतःकरण था। बुद्धि, चित्त एवं अहं-कार नाम के तीन साथी भी अतःकरण के साथ सदा रहते थे। उसके सकल्प तथा विकल्प नाम के और दो साथी भी थे। महामोहिनी अतःकरण की अत्यन्त

---

१. जो काहुअ पर डारै डीटी, सो जन देइ जगत दिस पीठी।
अस रूपवन्ती सुन्दर आहै, बिनु देखे सब ताहि सराहै।— वही, पृ० ४५।

२. है तेहि चन्द्र वदन लखि, जगत नयन उजियार।
गगन सहस लोचन सो, निरखे तेहिक सिगार।—वही, पृ० ४५।

३. इद्रावती, पृ० ७१। ४. वही, पृ० ६०।

५. अनुराग बांसुरी, नूर मुहम्मद, प्रकाशक हि० सा० सम्मेलन, प्रयाग (सं० २००२), प्रति प्रयुक्त।

सुन्दर पत्नी थी जिस पर वह सदा मुग्ध रहा करता था। एक दिन राजकुमार अंतःकरण ने श्रवण नाम के ब्राह्मण के गले में सर्वमंगला नाम की सुन्दरी की मणिमाला देखी। वह उसके प्रति प्रेम-विह्वल हो उठा और महामोहिनी उसके मन से उतर गई। श्रवण नामक ब्राह्मण के द्वारा उस ने उसके रूप-गुण की प्रशंसा भी सुनी। सर्वप्रथम यह मणिमाला स्नेह नगर के राजा दर्शनराय की परमसुन्दरी एवं विदुषी पुत्री सर्वमंगला के पास थी। उसने उसे ज्ञातस्वाद को उपहार-स्वरूप दिया था जो उस श्रवण ब्राह्मण का मित्र था। जब वह श्रवण ब्राह्मण विद्याध्ययन के लिए विद्यापुर गया था, तभी ज्ञातस्वाद ने उसे वह माला दी थी। अब श्रवण ने राजकुमार को वह मणिमाला दी।

इस मणिमाला को प्राप्त करके अंतःकरण सर्वमंगला की चिन्ता में रहने लगा। राजा के भेदिया बूझ ने राजकुमार के इस भेद को राजा के सम्मुख प्रकट किया। राजा ने अपने पुत्र अंतःकरण को प्रेम से विरत करना चाहा। अपने मित्र बुद्धि ने भी राजकुमार को समझाया। जब वे दोनों विफल हुए तो संकल्प एवं विकल्प ने उसे क्रमशः उत्साहित एवं विचलित किया किन्तु अंतःकरण दृढ़ बना रहा। मित्र संकल्प के परामर्श पर वह स्नेह नगर के लिए प्रस्थान करने के लिए तत्पर हुआ।

अंतःकरण की भेंट स्नेहगुरु नामक एक वैरागी से हुई जो तीर्थ-यात्रा करता हुआ वहीं से पहुंच गया था। उसे स्नेहनगर का निवासी पाकर अंतःकरण ने उसके द्वारा सर्वमंगला का पूरा परिचय प्राप्त किया। उसने अंतःकरण को प्रेम-मार्ग में दीक्षित किया। स्नेहनगर का मार्ग दिखलाने के लिए उसने उसके साथ 'उपदेशी' नाम का एक सुआ दे दिया और वह स्वयं पूर्ववत् तीर्थ-यात्रा के लिए आगे चल पड़ा। अंतःकरण अपने माता-पिता तथा पत्नी महामोहिनी को विलपता छोड़कर उपदेशी के पथ-प्रदर्शन में स्नेह नगर की ओर बढ़ा। यात्रा करते हुए उसे दो मार्ग मिले। सर्वप्रथम वह दक्षिण मार्ग से होता हुआ कुछ दिनों में इंद्रियपुर पहुंचा जो अत्यन्त आकर्षक था। वहां के राजा मायावी अचेष्टा ने अंतःकरण को मायाजाल में फसाना चाहा किन्तु वह विचलित न हुआ। मार्ग की कठिनाइयों एवं कष्टों को झेलता हुआ वह अंत में स्नेह नगर पहुंचा। वहां की अद्भुत शोभा देखकर वह विस्मित हुआ।

स्नेह नगर में रहकर अंतःकरण ध्यान देवहरा में बैठकर सर्वमंगला का ध्यान करने लगा। उसकी साधना के परिणाम स्वरूप सर्वमंगला ने स्वप्न में देखा कि किसी सुरम्य वाटिका में उस पर एक भ्रमर मंडरा रहा है जो निवारण करने पर भी नहीं मानता। नेत्र खुलते ही सर्वमंगला के हृदय में प्रेम-भावना का उदय आ। एक मास पश्चात् उस ने पुनः दूसरे स्वप्न में यह देखा कि एक सुन्दर

वैरागी ध्यान देवहरा मे बैठकर उस की मूर्ति की पूजा करके उसका कृपा-पात्र बनना चाहता है। इतने मे उपदेशी सुआ ने आकर सर्वमंगला को अंत:करण की संपूर्ण प्रेम-कहानी सुनाई। अंत:करण के विरह का परिचय पाकर सर्वमंगला के हृदय मे अपने प्रेमी के दर्शन करने की इच्छा प्रबल हो उठी। अपनी सखी चित्ररेखिनी को भेजकर उसने उसका एक चित्र मंगवा लिया।

तदनन्तर सर्वमंगला ने भी अपना एक चित्र अंत:करण के पास भेजा। इस चित्र-दर्शन के पश्चात् दोनो का पत्र-व्यवहार चल पड़ा। अंत:करण भी महल मे आया और उसने अपनी प्रेमिका सर्वमंगला के दर्शन किए। सर्वमंगला भी उसे देखकर प्रसन्न हुई। अंत मे सुआ के मुख से दोनो प्रेमियो के पारस्परिक प्रेम का समाचार पाकर दर्शनराय ने अपनी पुत्री सर्वमंगला का विवाह अंत:करण के साथ कर दिया। अन्त मे अंत:करण उसे साथ लेकर अपने घर लौट आया।

कथा का आधार तथा संगठन

'अनुराग बासुरी' शुद्ध धर्म-कथा है अन्य कथा नही।[1] इस मे कवि ने आत्म-चरित्र, गुरु परम्परा अथवा शाहेवक्त का कुछ भी परिचय नही दिया है। इस रचना को कवि ने दीन-प्रचार के लिए लिखा और इसी कारण इस मे इस्लाम का अनुमोदन खुलकर हुआ है। उसका कथन है कि गोपियो को मुग्ध करने वाली बासुरी अब इस जगत् मे नही है। इस बासुरी की ध्वनि को सुनकर तो माधव रूपी जीव भी विमोहित हो जाते है।[2] 'बुत परस्ती' का कुछ और आशय लेकर नूरमुहम्मद शखनाद को मिटाकर उसके स्थान पर चलती-फिरती छाया को ही पूजना चाहता है जिसमें वह परमतत्व अपने स्वरूप की झलक दिखा रहा है। साधक अंत:करण न हिन्दू है और न ही मुसलमान, अपितु वह देवहरा मे बैठकर केवल परम तत्व के ही ध्यान में ही लीन रहता है।

इसमे दर्शन राय महाप्रभु अथवा अल्लाह के रूप मे चित्रित किया गया है। उसकी पुत्री सर्वमंगला सूफियों की रागिनी है। मूरति पुर काया है, जिसका स्वामी जीव है। उसका पुत्र अन्त:करण है जिसके साथी मन, बुद्धि तथा चित्त आदि है। संकल्प तथा विकल्प उसके दो मित्र हैं। महामोहिनी अविद्या है

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ४६१।

२. कृष्ण बासुरी मोहि गोपी, अब वह वशी गई अलोपी।
यह बासुरी सबद सुनि मोहै, पंडित सिद्ध जगत में जो है।
कामयाब बांसुरी बजावै, माधव जीव सुनै नित पावै—अनुराग बासुरी, पृ० ६०।

किन्तु अंतःकरण दर्शनराय की पुत्री सर्वमगला को प्राप्त करने मे ही अपने जीवन की सार्थकता मानता है। मार्ग मे विघ्नबाधाओ की परवाह न करते हुए ही वह आगे बढता है। स्नेह गुरु की शरण मे जाकर एव उपदेशी सुआ की सहायता से जब वह एकाग्रचित होकर देवहरा मे ध्यान-मग्न हो जाता है, तभी प्रिय की प्राप्ति से उन दोनो मे तादात्म्य स्थापित हो जाता है। सम्पूर्ण कथा एक रूपक है। यह सयोगान्त भी है।

प्रेम पद्धति

इस मे प्रेम का प्रादुर्भाव रूप गुण श्रवण से होता है। अतःकरण श्रवण नामक ब्राह्मण के गले मे सर्वमगला नामक सुन्दरी की मणिमाला देखते ही विकल हो उठता है।[1] उधर से सर्वमगला के हृदय मे भी प्रेम भावना का उदय स्वप्न के द्वारा होता है। यह स्वप्न वह दो बार देखती है। अत.करण के प्रति उसका पूर्वराग तोते के कथन से परिपुष्ट होता है। तत्पश्चात् प्रेमी-प्रेमिका का प्रेम चित्र-दर्शन से दृढता प्राप्त करता है और अन्तत· दोनो का विवाह होता है। सर्वमगला का चरित्र गार्हस्थ्य रूप मे दृष्टिगोचर नही होता।

विप्रलम्भ शृंगार

इस काव्य मे 'महामोहिनी' का वियोग, अन्तःकरण का सताप एव सर्व-मगला की वियोगमूलक आतुरता ही सर्वत्र व्याप्त है।[2] इन पात्रो की विरह-व्यथा के प्रति प्रकृति भी सहानुभूति प्रकट करती है :

> समदन समय विरछ दल झरे, झरे रसा ऊपर फल परे।
> उनै परी करुना से डारी, कली पुहुप के कापर फारी।[3]

नख-शिख वर्णन

इस मे सर्वमगला के रूप-सौदर्य की चर्चा तीन स्थलो पर हुई है। सबसे पहले सर्वमगला के रूप का वर्णन ज्ञातस्वाद अपने सखा श्रवण से करता है।[4] दूसरी

---

१. काहू टोना फूंक पठायहु, याते देखत हिरदय आएउ।
मन मेरौ ओरै होइ गएउ, जानहु प्रीति फांद मह भएउ।
—अनुराग बासुरी, पृ० १००।

२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ४९२।

३. अनुराग बासुरी, पृ० १२७।

४. उरू जमल कनक के खम्भा के पदवारिज ऊपर रंभा।
रंभा कंज ऊपर कित होंई, इहां देखिये लागा सोई।—वही, पृ० ९८।

बार श्रवण उसके सौंदर्य का बखान अतःकरण मे करता है। तीसरी बार कवि ने स्नेह गुरु के द्वारा सर्वमगला के रूप की चर्चा अत्यन्त सरल शब्दो मे कराई है। स्नेह गुरु ने इन शब्दो मे उसके रूप का वर्णन किया है :

सरवमगला कमल समानू, मकरदी तेहि ऊपर भानू।
ओहि प्यारी पद पद्म परागू नैन परान अजन अनुरागू।
जह रूप की चर्चा करै, चित्त ना मूरति धरै।
जहा लाल मोती गुन गावै, ताके अधर दमन चित्त लावै।[1]

उसका रूप ऐसा है जिसे देखकर कभी तृप्ति नही होती। चित्रवर्धिनी सखी भी उसके अनुरूप चित्र बना सकने मे असमर्थ है।

छंद—इसमे तीन चौपाई या छ अर्द्धालियो के पश्चात् एक बरवै का प्रयोग किया है।

११—यूसुफ जुलेखा[2]

कथा-सारांश—नबी याकूब किनआ नगर मे रहते थे। उनकी सात पत्निया थी, जिनसे उन्हे बारह पुत्र उत्पन्न हुए थे। नबी याकूब अपने पुत्रो मे से यूसुफ से अत्यधिक प्यार करते थे जो अत्यन्त सुन्दर था। अन्य सभी भाई उमसे ईर्ष्या करते थे। एक बार सौतेले भाई उसे अपने साथ जगल ले गए। उन्होने उसे वहा एक अन्धकूप में ढकेल दिया पर लौटकर उन्होने नबी याकूब से कहा कि यूसुफ को भेडिया खा गया। इस बात को सुनकर याकूब अत्यन्त विकल हो उठा। उधर यूसुफ को उस मार्ग से जाते हुए, किसी सौदागर के दास ने कुए से बाहर निकाला। उसी समय भाइयो ने वहा पहुंचने के अनन्तर यूसुफ को अपना गुलाम बताकर उस सौदागर के हाथ बेच डाला। सौदागर उसे अपने साथ लेकर मिस्र देश की ओर चल पडा।

पश्चिम देश मे तैमूस नामक सुलतान राज्य किया करता था। उसकी रूपवती पुत्री का नाम जुलेखा था। उसने लगातार तीन रात स्वप्न मे यूसुफ के दर्शन किए। तीसरी रात्रि को उसे इस बात का पता चला कि मिस्र देश के वज़ीर के यहा भेट हो सकती है। अन्त मे धाय के परामर्श से तैमूस अपनी पुत्री जुलेखा का विवाह वज़ीर के साथ करने को तैयार हुआ। जुलेखा वज़ीर अजीज़ को देखकर पछता उठी क्योकि यह वह युवक नही था जिसे उसने स्वप्न मे देखा था।

---

१. अनुराग बांसुरी, पृ० ११४।

२. यूसुफ जुलेखा, हस्तलिखित ग्रन्थ, गोपाल चन्द्र, लखनऊ, प्रति प्रयुक्त।

वज़ीर अजीज़ के पास रहकर भी जुलेखा ने अपने सतीत्व की रक्षा की। मिस्र पहुचने पर जुलेखा ने यूसुफ को खरीदवा लिया। जुलेखा उसके सान्निध्य में सदा प्रसन्न रहती थी। एक दिन यूसुफ उसके आकर्षक से प्रभावित होकर उसकी ओर बढा किन्तु जब उसे अपने पिता नबी याकूब का स्मरण हो आया तो वह भाग चला। जुलेखा ने उसे पकडना चाहा और इस प्रयत्न मे यूसुफ के कुर्ते का पिछला पल्ला फट गया। निराश जुलेखा ने वजीर अजीज से शिकायत करके यूसुफ को कारावास मे डलवा दिया। जुलेखा गुप्त रूप से कारावास मे यूसुफ से मिलती रहती थी।

इधर जुलेखा की निन्दा होने लगी। इस पर उसने नगर की अनेको स्त्रियो को निमन्त्रण दिया। जुलेखा ने उन्हे यूसुफ के सामने हाथ बचाकर छुरी से तरबूज काटने की चुनौती दी। उन नारियो ने अपने हाथ काट दिये। वे सभी अत्यन्त लज्जित हुई और उन्होने क्षमा-याचना की।

एक रात सुल्तान ने स्वप्न देखा जिसका रहस्य यूसुफ ने बता दिया। इस पर यूसुफ को बधन से मुक्त किये जाने के पश्चात् मत्री बना दिया गया। किनआं मे अकाल पडने के समय यूसुफ ने मिस्र आए हुए भाइयो की पर्याप्त सहायता की। तत्पश्चात् यूसुफ का पता पाकर किनआ के अन्य लोग भी यहा आए। तीस वर्ष के अनन्तर यूसुफ की भेट अपने पिता से हुई। जब मिस्र का सुल्तान वृद्ध हुआ, उसने यूसुफ को ही अपनी गद्दी दे दी। अपने प्रेमी यूसुफ के वियोग मे बेचारी जुलेखा अंधी हो गई। अपने प्रिय की प्राप्ति के लिये उसने चालीस वर्ष तपस्या की।

एक दिन यूसुफ की सवारी नगर से निकली। मार्ग मे खडी जुलेखा को यूसुफ ने पहचान लिया। याकूब की दुआ से जुलेखा पुन. लावण्यमयी बन गई और दोनो यूसुफ तथा जुलेखा का परिणय हो गया। इश्क मज़ाजी का परिवर्तन इश्क हकीकी में हुआ। अन्त मे नबी याकूब की मृत्यु हो जाने पर यूसुफ नबी बन गया और अनासक्त होकर रहने लगा। यूसुफ के परमधाम सिधार जाने के समय जुलेखा भी उसकी समाधि पर पछाड खाकर गिर गई और उसका प्राणान्त हुआ। दोनो की समाधि एक-साथ बनाई गई।

कथा का आधार तथा संगठन

कवि निसार के इस काव्य के दो आधार हैं :

१. कुरान मे वर्णित 'यूसुफ जुलेखा' की कथा का आधार, तथा

२. जामी की 'यूसुफ जुलेखा' कथा का आधार।

१—कुरान में वर्णित यूसुफ जुलेखा' की कथा का आधार

कथारम्भ से लेकर पिता-पुत्र के मिलन तक का कथानक कुरान मे बिल्कुल मिलता है । कवि ने अपनी मौलिक उद्भावना के आधार पर कुछ ऐसे प्रसगो को भी अपनाया है जो कुरान मे नही हैं। ऐसे प्रसगो के अन्तर्गत जुलेखा का यौवनागमन, उसका नख-शिख-वर्णन,[१] स्वप्न-दर्शन,[२] विरह-वेदना[३], वजीर-अजीज़ के साथ विवाह सम्बन्ध, सतीत्व की रक्षा करना, तपस्या मे लीन होना, नेत्रहीन तथा सौदर्य-रहित होना उसका निधन तथा यूसुफ की मृत्यु आदि आ सकते है। कुरान के आधार पर अन्य ग्रन्थों में यूसुफ एवं जुलेखा का विवाह नही दिखाया गया है अत उनमे जुलेखा का परकीया स्वरूप ही सामने आता है।

२— जामी की 'यूसुफ जुलेखा' कथा का आधार

'फारसी ससनवी के सारे उपकरणो को लेते हुए कवि ने उसमे भारतीय प्रेम कथा पद्धति का भी उचित समावेश किया है ।'[४] यूसुफ से जुलेखा का मिलन, विवाह एव गार्हस्थ्य जीवन मे दाम्पत्य-प्रेम का वर्णन कवि निसार ने जामी के आधार पर ही किया है। पुन उसी की भाति कवि ने ईश्वर तथा उसके रसूल का गुणगान करने के अनन्तर सौदर्य तथा प्रेम की प्रशसा भी की है।

जामी तथा निसार के 'यूसुफ जुलेखा' के प्रसग प्राय. एक जैसे है ।[५] निसार के इस काव्य का अध्ययन करने से विदित होता है कि एकमात्र पुत्र के वियोग दुःख[६] ने कवि को इन सांसारिक दु.खों से अवश्य विमुख कर दिया होगा। इस पुस्तक की रचना के समय कवि निसार पर इश्क-हकीकी का प्रभाव अवश्य

---

१ दामिन अस वह माग-सोहाई, केस घमन्ट घटा जस छाई ।

२. एक रैवि फिर आइ सुलानी । आई नीद सुमुखि अलसानी ।
तीसर सपन फेर वै देखा । वहै रूप जो आदि विसैखा ।

३. जियौ तो जाऊ मित्र कह, मरौ त मारग माहि ।
छार होउ उडि जाउ अव, वसै जहा मोर नाह ॥

४. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ५१५ ।

५. जामी का 'यूसुफ जुलेखा' काव्य इन शीर्षको के अन्तर्गत बाटा गया है : क—तहकीक दर तजलियात जमाल शाहद हस्ती (ख) फजलियत सदक व रास्ती (ग) बयाने नजरात व तब्दुलात आलमे वजूद (घ) तलबे महजूल (ङ) अफगाने जुलेखा (च) दस्ते पेश बदल नदारद (छ) अस्मते दुखतरान (ज) ख्वाब व ख्याल (झ) शौके वसाल (न) वस्फे बयाबान आदि आदि । द्रष्टव्य—जामी, तालीफ अली असगर हिकमत, तकमुल ईरान द्वारा प्रकाशित, पुस्तक सख्या क्रम ७५०३, रिसर्च डिपार्टमेंट, श्रीनगर ।

६. द्रष्टव्य—जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ५१० ।

पडा होगा। इस काव्य मे प्रेम की पीर का अद्भुत चित्रण हुआ है। कुरान मे यूसुफ का चरित्र नबी के रूप मे चित्रित किया गया है, परन्तु यहा कवि ने याकूब को भी नबी स्वीकार किया है। कठिनाइयो को पार करने के अनन्तर ही ज़ुलेखा को यूसुफ की प्राप्ति होती है। यह कथा दुखान्त है।

प्रेम-पद्धति

इसमे प्रेम का आविर्भाव स्वप्न-दर्शन से होता है। नायिका ज़ुलेखा लगातार तीन बार स्वप्न मे यूसुफ सौंदर्य-मूर्त्ति को देखकर उस पर मोहित होती है। द्वितीय बार स्वप्न मे दर्शन देने वाला यूसुफ अपनी प्रीति का विश्वास दिलाते हुए कहता है :

कहा कि अस मोहि उपज्यो सोगू।
तुम्ह ते अधिक सो विरह वियोगू।

तीसरी रात को स्वप्न देख लेने पर ज़ुलेखा की प्रेम धारणा निश्चित हो जाती है। वह प्रिय को प्राप्त करने का सकल्प करती है। उसकी प्राप्ति के लिये वह विघ्न-बाधाओ को सहन करके सतीत्व की रक्षा करने मे सफल होती है। वज़ीर अज़ीज़ से विवाह होने पर भी ज़ुलेखा की विरक्ति सभवतः कथा मे अलौकिकता के समावेश के कारण दिखाई गई है। यूसुफ का प्रेम अत्यन्त मर्यादित सयमित तथा निर्मल है।

प्रेम-तत्व

कवि ने ईश्वर के अनन्तर प्रेम को ही वन्दनीय माना है। इस प्रेम का स्थान मानव-हृदय मे है जिसे ईश्वर ने मानव-रचना के पश्चात् ही उसमे अन्तर्हित किया। ज़ुलेखा अपने प्रेमी यूसुफ से मिलन के लिये अत्यन्त आतुर है :

होय विलम्ब सोच जनि मानहु, प्रेम न कतहुं अविस्था जानहु।

अपने प्रिय को हृदय मे स्थान देने के अनन्तर और किसी के लिये स्थान नही रहता। अपने प्रेमी यूसुफ को प्रभु-रूप में ही स्वीकार करके ज़ुलेखा उसके दर्शन के लिये लालायित हो उठती है।[१]

वियोग-पक्ष

इस कथा में वियोग का वर्णन दो स्थानो पर हुआ है—प्रथम यूसुफ एवं याकूब के पृथक्त्व के समय तथा द्वितीय ज़ुलेखा एव यूसुफ के वियोग मे।

---

१. मांगहु तुम्ह करतार ते, देहिं नैन कर जोत।
जेहि नें देखहु तोर मुख, चहौं न हीरा मोत॥

पिता याकूब का अपने पुत्र यूसुफ के प्रति प्रेम लोक बाह्य है। याकूब भक्त है और यूसुफ ईश अंशीय है। पिता-पुत्र के रूप मे यह उपासक-उपास्य का प्रेम है। पुत्र-वियोग मे याकूब अपनी नयन-ज्योति खो बैठता है।

यूसुफ भी पितृ-वियोग से दुःख अनुभव करता है। वह जानता है कि उसके वियोग से उसके पिता का हृदय अधिक दुखी होगा।

कथा मे जुलेखा का वियोग प्रधान है। वह अपने प्रियतम की प्राप्ति के लिए सर्वत्याग करती है। वह अपने प्रियतम के वियोग मे असहाय हो उठती है।

> घन गरजै दामिनि लोकाही, नारि कत के गोद छिपाही,
> हम केहि के गिउ लावें वाही, पावस समय देह बल नाही।

उसे व्याप्त प्रकृति का उदास स्वरूप अपने प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करता हुआ प्रतीत होता है।

रूप-सौंदर्य वर्णन

कवि ने इसमे जुलेखा एव यूसुफ दोनों के रूप-सौदर्य का वर्णन किया है। अत्यन्त सौदर्यशालिनी जुलेखा का दर्शन करके प्राणी विमोहित होता है :

> बाउर होय जो दरसन हेरा।

उसके तिल का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है :

> विसुकरमै लकि सुघर कपोला, दीठि परे तिल दीन्ह अमोला।

उसकी मुस्कान का भी एक उदाहरण देखिए :

> जो वह अधर मधुर मुसकाई, तो मिरतक कह देत जियाई।

इसमे कवि ने जुलेखा का सौंदर्य-वर्णन नख से शिख तक किया है। इस सूफी काव्य मे कवि ने कही पर भी नारी-रूप मे ईश-अंश की कल्पना नही की है, इसी कारण जुलेखा का रूप-वर्णन केवल सौंदर्य-मात्र के रूप मे ही प्रतिभासित होता है।

यूसुफ का सौदर्य अद्वितीय है। उसी के रूप के आधार पर कथा का विकास होता है। उसका शान्त एवं शीलवान् चरित्र सराहनीय है।

ईश्वरोन्मुख प्रेम

इसमे कवि द्वारा संपादित प्रेम का वर्णन लौकिक पक्ष से अलौकिक पक्ष की ओर अग्रसर होता है। ईश्वर की कल्पना प्रियतम के रूप में नहीं है। प्रत्युत् प्रियतम के सौदर्य के आधार पर ईश्वर की कल्पना की गई है और उस काल्पनिक सौदर्य के वशीभूत हो अन्य सांसारिक विषयों का त्याग कर दिया है। तात्पर्य यह कि 'इश्क मजाजी' को 'इश्क हकीक़ी' के सोपान स्वरूप वर्णित किया

गया है ।[1]

ईश्वर की इस सन्दर सृष्टि का प्रमाण यूसुफ है । परम-तत्व को प्राप्त करने के लिये आराधना ही सर्वोत्तम सोपान है और तभी जुलेखा उस चिर आकाक्षित प्रेम की अपेक्षा करती है जो यूसुफ के प्रति है .

मैं विरथा यह जनम गवाया, प्रेम विपत मानुख सो लावा ।
काहे न प्रेम अलख ने लाऊ, जेहि ते भोख भुगत पुन पाऊ ।।

अलंकार

कवि ने इस मे अनुप्रास, उल्लेख एव दृष्टात आदि अलकारो का प्रयोग किया गया है :

अनुप्रास . डारहि डार औ पार्नाह पाता, सुना वृक्ष तिन विरहके बाता ।

१२—प्रेम चिनगारी[2]

कथा-सारांश—इस काव्य के दो भाग है—प्रथम बासुरी की कथा और दूसरी हज़रत मूसा पैगम्बर तथा गडरिये की कथा ।

१—बांसुरी की कथा

सारे ससार को अपने हृदय की करुणाजनक ध्वनि सुनाने वाली बासुरी की कथा अत्यन्त व्यथापूर्ण है । उसे बन मे पृथक् कर दिया गया । बासुरी बजाने वाला उसके हृदय को बेधकर जब अपनी ध्वनि ससार मे व्याप्त करता है, तो उसके द्वारा बासुरी की स्वय की विरह-व्यथा भी अभिव्यक्त होती है । बासुरी की यह ध्वनि प्रत्येक प्राणी के श्रवणो तक पहुचती है किन्तु कोई विरला ही उसके गुप्त रहस्य को जान पाता है । उस के भेद को समझ पाने वाला ही निर्गुण मत का ज्ञाता बन जाता है । वास्तव मे यह बासुरी, प्रेम की बासुरी है । इसकी ध्वनि मानव-हृदय पर प्रभाव डालकर उसे परम-प्रेम का विरही बना देती है । इस ध्वनि मे अद्भुत शक्ति है क्योकि इसे सुनते ही प्राणी माया-जाल से छूटकर आनन्द-लाभ उठाता है । इस वशी मे निर्माता की ध्वनि प्रसारित है । निस्सन्देह उस परमात्मा की अभिव्यक्ति का साधन-मात्र यह आत्मा है और वही मानव धन्य है जो उस प्रभु को अपने हृदय मे निवास देता है । यह ससार भी उसी की निर्मल ज्योति से प्रकाशवान है । स्वच्छ हृदयाकाश वाला प्राणी ही उसकी निर्मल ज्योति के दर्शन अपने मे कर पाता है ।

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ५२२ ।

२. प्रेम चिंगारी, हस्तलिखित ग्रन्थ, अखतर हुसैन निज़ामी ।

२—हज़रत मूसा पैग़म्बर तथा गड़रिया की कथा

एक बार हजरत मूसा भ्रमण कर रहे थे कि उनकी दृष्टि एक गडरिये पर पडी। यह प्रेमोन्मत्त गडरिया सदा प्रभु के ध्यान मे लीन रहता था। इसके अनन्य प्रेम को देखकर हजरत मूसा ने पूछा कि वह ऐसी भावनाये किसके प्रति प्रकट कर रहा है। यह ज्ञात होने पर कि वह परमात्मा का ध्यान कर रहा है, हजरत मूसा ने धिक्कारते हुए उसे कहा—'परमात्मा ज्ञानगम्य है, उसके प्रति प्रेम की ऐसी भावनाये व्यक्त करना गुनाह है।'[1] गडरिया इस उपदेश से निराश होकर बन की ओर भागा। मूसा का यह उपदेश परमात्मा को भी अच्छा न लगा और उसने शीघ्र ही मूसा के पास प्रेमोपदेश-पूर्ण सन्देश भेजा जिसे सुनते ही वह गडरिये के पीछे लगा। मिलने पर मूसा ने गडरिये से क्षमा-याचना करके प्रेमभाव की प्रशसा की। गडरिया इस समय तक प्रिय तथा प्रेमी की द्वैत-भावना को मिटाकर जीवन-मुक्त हो चुका था। जिस प्रकार वशी की ध्वनि से उसका निर्माता पहचान जाता है। उसी प्रकार आत्मदर्शन के द्वारा परमस्वरूप का भी दर्शन होता है।

आधार तथा संगठन

कवि ने इसके आधार के विषय में स्वय लिखा है कि उसने मौलाना रूमी की मसनवी की दो हिकायतो का हिन्दी मे उल्था किया है।[2] उसने अपने विचारानुसार ही उसे प्रेम चिनगारी नाम दिया है।[3]

ग्रन्थ के आरम्भ मे कवि ने निर्गुण-वन्दना, हजरत मुहम्मद की प्रशंसा, चार खलीफाओ तथा इमाम हसन एव हुसैन का महत्व तथा पीर की चर्चा की है। बासुरी की प्रथम कथा मे मानव को बासुरी मानकर सूफी-अद्वैतवाद का स्पष्टीकरण किया गया है और हजरत मूसा पैगम्बर तथा गड़रिये की द्वितीय कथा मे निर्गुणवाद का वर्णन किया गया है।

कवि अपनी साधारण बोलचाल की भाषा मे रूमी की हिकायतो का उल्था करने मे निश्चय ही सफलता प्राप्त कर गया है। इसके मूल-आधार की ओर

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ५३४।

२. वही, पृ० ५३३।

३. मेरे ध्यान बस्यो इक बारा, 'मौलाना रूमी' उजियारा।
   चुन चुन कुछ बेते तिन केरी, लाल रतन सो अधिक उजेरी।
   तिन 'बैतन' कर तिलक बनाइयो, हिन्दी भाषा मे कहि गायो।
   मत उपजा तस किह्यो विचारी, राख्यो नाम प्रेम-चिनगारी॥

सकेत करते हुए स्टाइन तथा ग्रियर्सन महोदय का कथन है कि 'बासुरी की ध्वनि की इस प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति की समता 'अराबियन नाइट्स' की काव्य-कथा के कुछ अशो अली-नूर अल-दीन तथा मिरियम-करधनी कन्या से की जा सकती है, जिनका समावेश उस मे सयोगवश नही माना जा सकता है।[१]

प्रेम-तत्व की विशेषता

वंशी का कथन है कि अपने समान विरही-हृदय को ही वह अपनी विरह-व्यथा सुना सकती है :

सुनो कथा बासुरिया गावै, बिछुडन की गति रोय सुनावै।
बन सो काट भई हम न्यारी, सब्द सुनत रोवें नर-नारी।
छाती टूक टूक कै पाऊ, तो विरहा के चोप सुनाऊ।
पिय से मिल बिछुडे जो कोई, फेर मिलन जो है नित सोई।

प्रत्येक प्राणी बासुरी की ध्वनि का अपने विचारानुसार अर्थ निकालता है किन्तु उसके तत्व को समझाने का प्रयास कोई विरला जन ही करता है। तभी आत्मदान कठिन हो गया है :

मैं सब सो धुन रोय सुनावा। सुखी दुखी सब धनु सुन पावा।
आपन मत जान्यो सब कोई। मीत भये मेरे सुन सोई।
× × ×
पै उघरै जिय के जब नैना, तब सूझै बूझै यह बैना।

इसे बशी की ध्वनि मे मजनू की भाति प्रेमोन्मत्त बनाने की शक्ति है :

बंसी कै भाषा सुन ताती, मध मधब है रकत सौ रासी।
प्रेम कथा बंसी अब गाये, मजनू के विरही बौरावै।

हज़रत मूसा तथा गड़रिया की कथा में भी प्रेम की महत्ता का गुणगान है :

सो उपदेस न हरि को भायो, मूसै वेग सदेंस पठायौ।
सुमिरन करत तपा भटकाई, मोसे प्रेमी मोर छुडाई।

३–निष्कर्ष—कश्मीरी और हिन्दी दोनों ही भाषाओ के सूफी-प्रबन्धकाव्यो की कथा वस्तु के संगठन मे एक ही विशिष्ट प्रकार की पद्धति अपनाई गई दिखाई

---

१. There is a close resemblance, which we may suppose can hardly be accidental, between this personification of the flute and one of the most poetical passages in the 'Arabian Nights' in the tale of Ali-Nur-al-Din and Miriam, the Girdle Girl.

—हातिम्ज टेल्ज, पृ० XXXVI

पडती है। साधक को साधना-पथ पर बढते हुए किन-किन कठिनाइयो का अनुभव होता है तथा वह उन्हे पार करता हुआ किस प्रकार अग्रसर होता है। प्रेम उनका मूल भाव है तथा उसको केन्द्र बना कर कही एक नायक और दो नायिकाओ तथा कही दो नायक और एक नायिका को कथावस्तु मे समाविष्ट कर लिया गया है। वस्तुतः प्रेम का त्रिकोणात्मक सघर्ष इन सूफी-काव्यो मे चित्रित हुआ है और इसी सघर्ष मे ही प्रेमी या साधक की सपूर्ण कठिनाइयां चित्रित की गई है। जहा तक तत्र, मत्र, जोग तथा सिद्धि का प्रश्न है, सभी सूफी-काव्य समान रूप से प्रभावित दिखाई पडते हैं चाहे वे कश्मीर के हो अथवा हिन्दी के। शैली पर मसनवी की ही छाप है। सर्वश्रेष्ठ साधक को सूफी-सिद्धातो के अनुसार सर्वश्रेष्ठ मानव होना चाहिए। यही कारण है कि धर्म, जाति और बाह्याडम्बर से ऊपर उठकर-मानवतावादी स्वर को ही बल दिया गया है। हिन्दी के सूफी-काव्यो मे लोक-जीवन, लोक-भाषा तथा लोक-कथाओ को जितना प्रश्रय दिया गया है, कश्मीरी-सूफी कवि फारसी की अतिशयता के कारण उस सीमा तक नही पहुच सके है, फिर भी कश्मीरी सूफी-कवियो ने कश्मीर में प्रचलित शैव-साधना को उसी प्रकार समन्वित करने का प्रयत्न किया है जैसे हिन्दी-सूफी कवियो ने लोकाचार को।

कश्मीरी तथा हिन्दी के सूफी-काव्यो मे प्रायः एक ही प्रकार के अलकारो जैसे अनुप्रास, उपमा, रूपक, अतिशयोक्ति तथा दृष्टात आदि का प्रयोग हुआ है।

(२) मुक्तक रचनाएं

(क) कश्मीरी में उपलब्ध मुक्तक रचनाएं

कश्मीरी-साहित्य में मुक्तक-काव्य की रचना चौदहवी शताब्दी से ही होने लगी थी। विषयगत विभिन्नताओ के होते हुए भी यह साहित्य चौदहवी शताब्दी से सन् १९२५ ईस्वी तक अबाध गति से लिखा जाता रहा जो प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध है। इस मे सूफी-सन्तो तथा कवियो की निर्गुण उपासना, प्रेम एव विरह का वर्णन मिलता है। कश्मीर के ऐसे सूफी-सतो मे लल्लेश्वरी, शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश), स्वच्छ क्राल, शाह गफूर महमूद गामी, नगमा साहब, रहमान डार, बहाब खार, शम्स फकीर, अहमद बटवारी, शाह कलन्दर, असद परे, वाजह महमूद तथा अहमदराह आदि प्रमुख है जिनकी रचनायें सूफी-सिद्धांतो व उसके दार्शनिक तत्वो से समन्वित है।[1]

---

१. इन सभी प्रमुख मुक्तक-सूफी संतों और कवियो के परिचय के लिए द्रष्टव्य—परिशिष्ट।

संत कवयित्री लल्लेश्वरी (**लल्लद्यद**) के 'वाक्यों' या 'वाख्यों' का मूल स्वर दार्शनिक रहा है किन्तु उन मे एक ऐसा महानतम सवेदना-सदेश विद्यमान है जो उच्च एव पवित्र विचारधारा मे गुम्फित है। तथा जो कई दर्शनो की सम्मिलित थाती है। यही कारण है कि लल्लेश्वरी हिन्दू-मुसलमान दोनो की प्रिय रही है।[1] वह ज्ञान-मार्ग की पथिका होने के कारण निर्गुण की उपासिका रही है।[2] इसके वाक्यो मे शैवमत के प्रतिस्पर्द्धी वैष्णव-धर्म के साथ-साथ मुसलमानो सूफी-मतो के सिद्धान्तो का भी समावेश है। यह सूफीमत उसके प्रादुर्भाव से पूर्व भारत तथा कश्मीर मे प्रवेश पा चुका था।[3] इसी आधार पर उसका कथन है:

शिव वा केशव वा जिन वा,
कमलज़ि नाथ नाम दअरिन यिहुय,
मेय अबलि कअस्यतन बवअहू रज,
मुवा, सुवा, सुवा, सु ।[4]

(शिव हो, केशव हो, महावीर हो अथवा विष्णु हो कुछ भी हो उसका नाम लो। वह मुझ निराश्रित को भव-बन्धनो से मुक्ति दे। चाहे वह यह कहलाये तथा चाहे वह कुछ कहलाये।)

शिव की प्राप्ति के लिए वह योगिनी बनी हुई है। उसका यह अटल विश्वास है कि अपने-आपको पहचानने वाला ही उस ईश्वर को पहचान सकता है:

---

१. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य—कअशिरिहू अदबअच तअरीख, पृ० १५२।

२. योजना, दिसम्बर, १९५९ अक, लेख—'कश्मीरी काव्य को नारियो की देन', शशि शेखर तोपखानी, पृ० १५।

३. There are in it many touches of Vaishnavism, the great rival of Shaivism, much that is strongly reminiscent of the doctrines and methods of the Muhammadan sufis, who were in India and Kashmir well before her day.

—दि वर्ड आफ लल्ल, पृ० १६५।

४. लल्लद्यद, सम्पादक, प्रो० जियालाल कौल, अनुवादक, प्रो० नन्दलाल कौल तालिब, प्रकाशक, जम्मू व कश्मीर अकादमी, श्रीनगर (सन् १९६१ ई०) पृ० ४५।

—Shivor Keshav, Lotus Lord or Jin. These be names : Yet takest thou from me. All the ill that is my world within, He be thou, or he, or be, or he.

—दि वर्ड आफ लल्ल, पृ० १७१।

लल्ल बो द्रायस लोल रे,
छाडान लूसमुन द्यन क्योह राथ,
वुछुम पडित पनने गरे,
सु मे रग्रोटमम न्यच्छत्तर तग्र साथ।[1]

(लल्लेश्वरी का कहना है कि मै उस प्रभु के अन्वेषरण मे वहुत देर तक भटकती रही किन्तु अन्त मे मुझे यह विदित हुआ कि वह तो मेरे ही घर अर्थात् आत्मा मे विराजमान है। वही घडी मेरे लिए शुभ मुहूर्त थी।)

गतिमयता को जीवन तथा निद्रा को मौत समझकर उसका कथन है कि आलसी प्राणी उसकी प्राप्ति मे असफल रहता है जबकि वह ज्ञेय शिव सर्वव्यापी है:

शिव छु थलि थलि रोजान,
मो ज़ान ह्युन्द तग्र मुसलमान,
तुरक ऐ छुख तग्र पान प्रज़नाव,
स्वय छय साहिबस ज़ग्रनी जान।[2]

(शिव का ही सौदर्य चतुर्दिक् व्याप्त है अतः तू हिन्दू तथा मुसलमान का भेद-भाव न कर। तू ज्ञानी बनकर अपने आपको पहचानने का प्रयत्न कर। हे प्राणी! वास्तव मे यही ईश्वर की वास्तविक पहचान है।)

यहा लल्लेश्वरी का काव्य—स्वर दार्शनिक पृष्ठभूमि पर पूर्णतः मानवतावादी है। 'वह मै ही हूं' के आधार पर उसका कहना है:

असी अग्रस्य तग्र असी आसव, असि दग्रोर कग्रर पतवत,
शवस सग्रोरिनह ज्योन तग्र मरुन, रग्रोस सोरिनग्रय अतगत।[3]

(पहले भी हम ही थे और इसके बाद भी हम ही होगे। हम ही पूर्वकाल से दौड लगाते आ रहे है। इस शव-शरीर का जन्म-मरण कभी मिटेगा नही। बिना लेन-देन के 'अतगत' व्यवहार कैसे चल सकता है अर्थात् पुण्य का 'अतगत' ही इस जन्म-मरण के जाल से मुक्ति दिला सकता है।)

धार्मिक बाह्याडम्बर तथा अन्धविश्वासो का खण्डन करती हुई वह कहती है:

---

१. लल्लद्यद—पृ० ३६।
२. वही, पृ० १०४।
३. कलाम लल्ल आरिफ, सम्पादक, काज़ी निज़ामुद्दीन खानयारी, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, श्रीनगर, कश्मीर, पृ० २०।

दीव वटा दीवर वटा
प्यठ बम्रोन छु एक वाठ,
पूज़ कस करख होट बटा
कर मनस तग्र पवनस सघाट।[१]

अर्थात्

पूजता किसे अरे नादान ?
पाहन है यह देव, कि देवालय केवल पाषाण,
दोनों पाहन है पण्डित। तू धरता किसका ध्यान ?
मन-आत्मा कर एक, अर्चना का यह सत्य निधान।
मूढ रे बाक़ी सब अज्ञान। पूजता किसे अरे नादान।[२]

सच्ची साधना तथा प्रेम को महत्व प्रदान करते हुए उसका कथन है :

मायि ह्यु न प्रकाश कुने, लयि ह्यु न तीरथ काह्।[३]

(प्रेम जैसा प्रकाश किसी वस्तु मे नही है। इश्क हकीक़ी की भावना जैसा कोई तीर्थ नही है।)

वासनापूर्ण आत्मपक्ष अथवा 'नफ़्स' जो ईश्वर से विमुख करता है, उसका त्याग ही श्रेयस्कर है। कोई विरला ही इस 'नफ़्स' के माया-जाल से बचकर उस ईश्वर का दर्शन करने मे सफल होता है।[४]

वह शिव केवल नाम जपने से ही प्राप्त नही होता जब तक कि उसके पूर्ण ध्यान मे तत्परता न दिखलाई जाये :

शिव शिव करान हम्स गथ स्वरिथ, रूजिथ व्यवहारी द्यन क्याह् राथ,
लागि रोस्त उदय युस मन करिथ, तग्रस्य न्यथ परसन सुरि गुरि नाथ।[५]

(हंस की चाल को दृष्टि में रखकर जो शिव के पवित्र नाम का जाप करता है, जो धर्म-कार्य मे दिन-रात लीन रहता है, जो द्वैत भाव से अपने आपको ऊपर उठाता है और जो केवल प्रभु-भजन मे सदा लीन रहता है, उसी पर देवताओ का वह देवता कृपालु रहता है।)

वह ईश्वर स्वय ज्ञेय, ज्ञाता तथा ज्ञान का स्वरूप है, अतः सच्ची प्रेमासक्ति उस तक पहुंचा सकती है :

---

१. लल्लद्यद, पृ० ४१।
२. अनुवादक, शशिशेखर तोषखानी—योजना, दिसम्बर, १९५६ अक, पृ० १६।
३. लल्लद्यद, पृ० १३५।
४. नफ्सी म्योन छुटा हो सुते, अमी हस्ती मोनगनम गरि गरि बल।
५. वही, पृ० ७५।

गगन चय भूतल चय चय छुक द्यन, पवन तग्र राथ
अरग चन्दन पोश पोन्य चय, चय छुक सोरुय तग्र लग्रग्यज़ी क्याह ।[1]

(तू ही ग्राकाश, पृथ्वी, दिन, वायु, रात, पूजा-सामग्री, चन्दन, फूल, पानी तथा सब-कुछ है, फिर मै अकिंचन क्या भेट चढाऊँ ।)

गुरु की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए लल्लेश्वरी का कहना है :

ग्वर शब्दस युस यिछ पछ वरे ग्यान वगि रटि च्यति त्वरगस,
यद्रिये शव मरिथ आनन्द करे, अद कुस मरि तय मारन कस ।[2]

(गुरु के शब्द पर विश्वास करने वाला साधक ही मारिफत की अवस्था प्राप्त कर सकेगा । जो भी प्राणी 'नफ्स' के घोडे पर सवार होगा एव जिसको अपनी इद्रियो पर पूर्ण निग्रह करने की शक्ति होगी, उसी का तादात्म्य ईश्वर से होगा । ऐसा साधक न कभी मर सकता है तथा उसे कोई मार ही सकता है ।)

इस लिए 'नफ्स' पर विजय प्राप्त करने के लिए सासारिक प्रलोभनों तथा मिथ्या-कपट आदि का त्याग आवश्यक है :

लूब मारुन सहज व्यचारुन, द्रोग ज़ानुन कल्पन त्राव[3]

(लोभ को त्याग कर उस प्रभु की उपासना मे लीन हो जा । तुम उसके सौंदर्य को देखकर उसके ही नूर मे निमग्न हो जा ।

विरहाग्नि ही साधक को ईश्वर तक पहुंचाने के लिए जलाती रहती है । उस प्रभु के मिलन के लिए यह आवश्यक है कि साधक अभी से चेतकर उस ओर अग्रसर होने का प्रयत्न करे :

गग्रफ़िलो हग्रकग्रह कदम तुल,
वुनि छै सुल तग्र छाडुन यार,
पर कर पैदा परवाज़ तुल,
वुनि छि सुल तग्र छाडुन यार ।[4]

(हे भ्रम में पड़े प्राणी ! तेरी मंज़िल बहुत दूर है, अतः शीघ्र कदम उठा । अब भी समय है अतः अपने मित्र की तलाश कर । तुम्हारे पास उडने के लिए पख तो हैं अतः अभी से अपने प्रेमी की खोज करने का प्रयत्न कर ।)

इस विरहाग्नि से पीड़ित लल्लेश्वरी अपने प्रिय की तलाश में अत्यन्त व्याकुल है । उसकी तलाश करते-करते उसके पैरो के तलवो का मास भी मार्ग के साथ चिमट गया है :

---

१. लल्लद्यद, पृ० १२४ । २. वही, पृ० ६७ ।
३. वही, पृ० ७२ । ४. वही, पृ० १७ ।

लतअन हुन्द माज़ लारियोम वतन,
अकी हअवनम अकि ची वथ,
यिम यिम बोज़न तिम कोनअह मतन,
ललि बूज शतन कुनि कथ ।[1]

(मेरे पैरो के तलवो का सारा मास मार्ग के साथ चिमट गया है। किसी एक ने मुझे उस एक का मार्ग दिखाया। जो उसका नाम सुने वह उन्मत्त क्यो न हो उठे। मुझ लल्ल ने उसकी प्राप्ति की अभिलाषा को ही अपने जीवन का उद्देश्य मानकर सौ बातो की एक बात स्वीकार की है।)

इस सत-कवयित्री का विचार है कि विरहाग्नि से पीडित साधक को सहन-शक्ति से कार्य लेना चाहिए। ऐसा होने पर ही साधक 'फना' होकर 'बका' की अवस्था प्राप्त करता है .

लोलुक नार ललि लोलि लल्लनोवुम
मरनय म्वोयस तअ रुजअस न ज़रै,
रग रछि जात अमअय क्याह नअ रग होवुम,
वो दपन च्वलुम क्याह सना करै ।[2]

(अपने शरीर मे मैंने प्रेमाग्नि को अत्यन्त कष्ट के साथ सहन किया। मै मृत्यु से पूर्व ही मर गई और 'फना' होकर 'बका' की अवस्था में अन्तर्लीन हुई।)

लल्लेश्वरी भी निर्गुण तथा निराकार की उपासिका है किन्तु उसका निर्गुण शिव है। कबीर आदि भारतीय सन्तो के उपास्य निर्गुण एव निराकार ब्रह्म राम से भिन्न प्रतीत नही होते। उपासना-पद्धति भी जिसमे ध्यान, प्रेम तथा भजन आदि हैं, सतो से मिलती-जुलती है। सूफियो का जिन अशो तक निर्गुण सन्तो से साम्य है, वैसा ही साम्य लल्लेश्वरी के काव्य मे भी मिलता है। सतो तथा सूफियो दोनो का स्वर मानवतावादी रहा है और लल्लेश्वरी के वाक्यो मे भी वही ध्वनि मुखरित हुई है। तमिल की सुप्रसिद्ध भक्त कवयित्री गोदा (आण्डाल) तथा चौदहवी शताब्दी की कश्मीरी कवयित्री लल्लेश्वरी एवं सोलहवी शताब्दी की हिन्दी कवयित्री मीरा का अपने-अपने साहित्य मे न केवल महत्वपूर्ण स्थान है अपितु तीनो के ही काव्यो में एक साधिका नारी के सहजोद्गार समान रूप से मिलते हैं। अपने-अपने आराध्य की विरहानुभूति और उसे मिलन की कामना तीनों में ही समान रूप से अभिव्यक्त हुई है। गोदा (आण्ड़ाल) स्वयं पोषिता कन्या थी, मीरा राजरानी थी और लल्लेश्वरी सामान्य गृहस्थ, परन्तु साधना

---

१. लल्लद्यद, पृ० २८ ।
२. वही, पृ० ८० ।

के क्षेत्र मे बाह्याडम्बर और लोक-लाज से मुक्त समान अनुभूति क्षेत्र की निवासिनी प्रतीत होती है।

शेख नूर-उद्-दीन (नुंदर्योश) के श्लोक या स्रुकी लल्लेश्वरी की अपेक्षा अधिक उपदेशात्मक है।[1] 'लल्लेश्वरी के अनन्तर उसी ने ऋषित्व की स्थापना मे योगदान दिया। मुसलमान होते हुए भी उसने शैवमत को मान्यता दी। उससे ही प्रभावित ऋषि-सम्प्रदाय ने इस्लामी सूफीमत तथा मूल कश्मीरी शैव-मत का मिश्रण स्वीकार किया।[2] लल्लेश्वरी (लल्लद्यद) के तीस वर्ष बाद नुंदर्योश (शेख नूर-उद्-दीन) की वाणी मे भी इस संदेश की गूंज सुनाई पडती है जिसमें ज्ञान, भक्ति तथा सदाचार द्वारा आध्यात्मिक एव आधिभौतिक सतुलन की प्रेरणा प्रकट हुई है।[3]

नुंदर्योश ने कहा है कि प्रभु एक है किन्तु उसके नाम अनेक है तथा ज़िक्र (स्मरण) के बिना उसकी प्राप्ति असम्भव है।[4] वह प्राणि मात्र को हज़रत मुहम्मद के स्मरण करने का उपदेश देता है अतः उसने उसके चार मीतो की भी प्रशसा की है। 'नफ्स' अथवा वासनात्मक आत्मपक्ष से बचकर प्रभु-चिन्त पर उसने अधिक बल दिया है। उसका कथन है कि यह 'नफ्स' ही प्राणी का पतन करा देता है।[5] प्रभु का जिक्र (स्मरण) करने वाला प्राणी अतुलनीय है :

ज़िक्रअह् तअ फिक्रअह् हुन्द लूब आसी, ह्यकि कुस करिथ चेय सअत्व मान[6]
(ज़िक्र तथा फिक्र मे लीन प्राणी की समानता कोई भी नही कर सकता।)

प्रेमाग्नि मे जलने वाले साधक को सदा विरह सताता रहता है। प्रेम-मार्ग पर चलकर ही वह उसकी प्राप्ति मे सफल होता है :

आशिक सुय युस इश्क-नार दज़े स्वोन जन प्रज़ल्यस पनुनुय पान।[7]

---

१. Sheikh Nur-ud-Din is more didactic than Lalla
—कशीर, दूसरा भाग, पृ० ४०४।

२. मूल कश्मीरी के लिये दृष्टव्य—फलसफस मज सोन मीरास, रेडियो वार्ता।

३. कश्मीरी भाषा और साहित्य-लेख, 'चतुर्दश भाषा-निबन्धावली' पृ० ६।

४. अकुय स्वदा नाव छुस लछा, ज़िक्र रोस काह कछा मो।
उमर वन्दुन अकोय पछा, रीज़कअह् रोह् कांह् मछा मो।
—नूरनामा, शेख नूर-उद्-दीन, सपादक, मुहम्मद अमीन कामिल, प्रकाशक, आफ आर्टस, कल्चर एण्ड लेंग्वेजिज़, श्रीनगर (सन् १९५६ ई०) पृ० ४२।

५. नफसी कअरनम अदल तअ वदल, नफ्सी कअरनम ज़दल छ्यय, नफ्सी लूरिम क्रेयि हुअन्द्य कदल, नफ्सी शैतान वदल किय—नूरनामा, पृ० ८४।

६. वही, पृ० ११०। ७. वही, पृ० १९८।

(सच्चा प्रेमी वही है जो प्रेमाग्नि मे जलता रहता है क्योकि उसी मे दग्ध होकर वह सोने की भाति चमक उठता है।)

नुदर्योश ससार को क्षणभगुर मानकर प्राणी को मृगतृष्णा से सावधान करता है। उसकी धारणा है कि काम-क्रोध का त्याग करने वाला ही वस्ल (ईश्वर-मिलन) प्राप्त कर सकता है :

काम, क्रूद्ध, लूब, मोह, अहकार छुय, दोज़ुखुय नार छुय दिवान श्राय ।[1]

(काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहकार प्राणी-मात्र को नरक की अग्नि मे धकेल देते है।)

अतः प्रेम-मार्ग पर चलने के लिये गुरु का पथ-प्रदर्शन आवश्यक है :

परिअय मोल तै परिग्रह मोजी, परिअय, छुम द्रोन अच्छ्यन गाश ।[2]

(मेरे लिये पीर ही माता-पिता के समान तथा दोनो नेत्रो का प्रकाश है।)

स्वच्छकाल ने ईश्वर-दर्शन के लिये प्रेमाग्नि की आवश्यकता स्वीकार करते हुए कहा है कि प्रेम द्वारा ही साधक साधना-पथ पर अग्रसर होकर 'वस्ल' प्राप्त करता है। अपनी कविता 'हअसिल दर्दे मुहब्बत', मे उसका कथन है :

शमादान शमा ह्यथ, पोपुर आव करान गथ,
द्रोनवय दअद्य क्या रूद्य पथ, हअसिल, दर्दे मुहब्बत ।[3]

(शमादान पर दीपक जलने के समय पतगा उसके चारो ओर चक्कर काटता है। दोनों जलकर प्रेम का परिचय देते हुए पीछे नही रहते। संसार मे कौन-सी सार्थक वस्तु है ? केवल प्रेम की अग्नि मे जलना।)

वह प्रभु सर्वव्यापक है। आत्मा तथा परमात्मा का वही सम्बन्ध है जैसा झरने तथा नदी का होता है। दोनों अभिन्न है। शास्त्रों में उस प्रभु के नाम अनेक हैं। वह केवल नामभेद से ससार मे समाया हुआ है। जब मसूर ने 'अनल्हक' कहकर यही बात कह दी, तो उस बेचारे को मृत्यु-दण्ड दिया गया। कवि ने इसी भाव को अपनी कविता ज्वयि मज दरियाव (बूंद में दरिया है) में इस प्रकार प्रकट किया है :

तमि श्यछि मंसूर मारनअह आव, नाव दर आब तै आब दर नाव ।[4]

(सर्वात्मवाद का सदेश देने पर मसूर को प्राण छोड़ने पडे। नौका जल मे है तथा जल नौका मे है।)

---

१. नूरनामा, पृ० ८३।

२. कलाम शेख उल-आलम, प्रथम भाग, पृ० ४।

३. सूफी शअयिर, प्रथम भाग, पृ० ६२।

४. वही, पृ० ८६।

आत्मा तथा परमात्मा के बीच जो अन्तराल है, उसे मिटाने के लिये गुरू की सगति आवश्यक है। 'मज नो दूर्यर' (बीच मे दूरी नही है) मे उसने कहा है

पीरस सअत्य चअह कर लय, सीरुक मरने बावी सुय।
स्वनस युथ न मेली ल्वय, मज नो म्वोय मे दूर्यर छुय।[1]

(तुम अपने पीर के साथ प्रेम-भाव बढा ले। वही तुम्हे रहस्य-बोध करा सकता है। कही स्वर्ण मे कासी का मेल न हो जाये, इस कारण भेद-भाव को मिटा दे क्योंकि आत्मा-परमात्मा के बीच कोई वास्तविक दूरी नही है।)

द्वैत-भाव ठीक नही। आत्मा तथा परमात्मा को भिन्न-भिन्न मानने वाले अत्यन्त मूर्ख है। ऐसी भावना केवल उनके अहभाव को ही प्रकट करती है। 'यि छु गुमानै' (यह तो केवल अहभाव है) कविता मे कवि का कहना है:

अख चअ तअ बेयि बअ, गजअर मअ बा, ह्यबा छु गुमानै।[2]

(एक तू है एक मैं हू—ऐसा न गिन। यह तो केवल तेरा अहभाव ही है।)

मानव के लिये यह उचित है वह आत्म-ज्ञान प्राप्त करके स्व को पहचानने का प्रयत्न करे। वह हृदय मे बसे ईश्वर के दर्शन के लिये प्रयासशील रहे। मानव स्वय ही अपना मित्र व अपना शत्रु है, इस आशय को कवि ने अपनी कविता 'बअ कुस गोस' (मैं कौन हूं) मे इस प्रकार व्यजित किया है

मे नो जोन हम्ह ओस, ये गरि ओस शहशाह,
कस वनअ दुश्मन कस वनअ दोस, पानय ओस बअय बहानअह।[3]

(मैने अभी तक नही जान पाया था कि वह प्रभु मेरे ही घर 'हृदय' मे निवास करता है। भला अब मै किसको अपना शत्रु व मित्र कहूं। इसके लिये मैं ही त स्वय उत्तरदायी हूं।

'वस्ल' (ईश्वर मिलन) से पूर्व यह आवश्यक है कि साधक प्रेम मे परिपक्वावस्था धारण कर ले। इसी भाव को कवि ने अपनी कविता 'द्रोपमय तअ द्रोपनम' (मैंने पूछा और उसने उत्तर दिया) में कहा है·

द्रप्योमस नओक्तह् ओस नतअह आव कते,
द्रोपनम पओख्तह् सपदयो इश्क वते।[4]

(मैंने पूछा—प्रेम की यह बूद वहा से आई। उत्तर मिला—परिपक्वावस्था प्राप्त कर ले तो सब-कुछ जान पाओगे।)

---

१. सूफी शअयिर, प्रथम भाग, पृ० ८७। २. वही, पृ० ७८।
३. वही, पृ० ७७।
४. वही, पृ० ८१।

प्रेमाग्नि मे जलने वाला साधक सदा उसकी प्राप्ति के ध्यान मे लीन रहता है। वह केवल उसी की जात को पहचानने मे तत्पर रहता है।[1] विरहाग्नि के कारण उसे नीद तक नही आती। सर्वव्यापक प्रभु के दर्शन के लिये कवि ने अपनी अभिलाषा को 'छुम न न्यन्द्र इवान' (नीद नही आती) कविता मे इस प्रकार प्रकट किया है .

फुल्या लज्यो दर्शन वागस, मे गोछ दर्शन चोनुये।
अरशस तअ फरशस मज़ छुमहो बसवुनये।[2]

(उस प्रभु का सौंदर्य ससार रूपी उद्यान मे प्रतिभासित हो रहा है। वह भू तथा आकाश मे बस रहा है और मुझे उसी के दर्शन की अभिलाषा है।)

प्रायः प्राणी ससार मे जन्म लेकर उस ईश्वर को भूल जाते है, अतः कवि ने उसका सदा स्मरण करने के लिये अपने भावो की अभिव्यक्ति 'याद नो रूदुय केह' (तुमने सब-कुछ विस्मृत कर डाला) कविता मे इस प्रकार की है :

अज़ पुश्त पिदर पअदह किथ गोखो, दर शिकम मादर ज़ाख,
हाल वन्तअह हालस माजअह यनअ जाखो, चे नो याद रूदुय न केह।[3]

(तुम्हे माता-पिता ने जन्म दिया। जबसे तुमने जन्म लिया तुमने सब-कुछ विस्मृत कर डाला।)

इसी गजल मे कवि ने यह भी कहा है कि प्रभु ने मानव का निर्माण जल, अग्नि, पृथ्वी तथा वायु के चार तत्वो से किया, अत. उस निर्माता को भूल जाना अपने जन्म को व्यर्थ गंवाना है :

आबअह, नारअह, बादअह, खाक अह मओर लदनोवनय,
मिलवन कअरअय जातन, तमि मिलवनि आदअह जगतस आखो।[4]

(उस प्रभु ने तुम्हारे शरीर का निर्माण जल, अग्नि, पृथ्वी तथा वायु के चार तत्वो से किया। इन चार तत्वों के बाद ही तुम्हे जगत् मे जीवन मिला।)

इसी भाति अपनी कविता 'यि छु गुमाने' (यह तो अहभाव है) मे कवि ने इश्क-हकीकी की महत्ता प्रकट करते हुए कहा है कि प्राणी इसी के द्वारा उस ईश्वर का दर्शन कर सकता है।[5]

शाह गफूर के काव्य मे ईश्वर, हज़रत मुहम्मद तथा प्रेम के महत्व पर

---

१. यी मे वुछुम, ती छुम मे दिलस, ख्वलस क्या वुछै।—सूफी शअयिर, प्रथम भाग, पृ० ८४।

२. वही, पृ० ९८। ३. वही, पृ० १००। ४. वही, पृ० १००।

५. स्वच्छकाल करान तस मरहबा, युस गव ज्यनै दीवानअह,
मरिथ छु हुरान तस मरतबा, हबा यि छु गुमानै—वही, पृ० ८०।

प्रकाश डाला गया है। उसका कथन है कि आरिफ (ज्ञानी) ही सर्वव्यापक ईश्वर का भेद पा सकता है। वह इस रहस्य को भी जान पाता है कि उस ईश्वर के अतिरिक्त इस ससार में और कुछ भी नहीं है। अज्ञानी उसके अस्तित्व मे भी सदेह करता है।[1]

उसी ईश्वर के नूर का अवतरण हजरत मुहम्मद के रूप मे हुआ।[2] उस ईश्वर का नूर या सौदर्य ही सारे ससार मे व्यापक है। बेचारे मसूर ने उसे सर्वव्यापक मानते हुए भला कौन-सा अपराध किया।[3]

कवि का कथन है कि उस ईश्वर के साथ तादात्म्य स्थापित करने मे हमारा शरीर ही बाधक सिद्ध होता है। उस ईश्वर के बिना संसार में कोई भी सार-वस्तु नही है। कवि ने अपनी कविता 'सूहम सू' (सोऽहम्) मे ईश्वर की सर्वव्यापकता को स्वीकार करते हुए कहा है :

वशर अअविथ, ईशर चअ गारुन, ईशरस सअत्य रोज़, सपदख स्वन,
ईशर सपदुन शरीर गव मारुन, दारनै दारुन सू हम सू।[4]

(हे प्राणी ! सासारिक प्रलोभन त्याग कर तथा उस ईश्वर का ध्यान एव निरन्तर जाप करने से ही तू स्वर्णमय बन जायेगा। तादात्म्य से अभिप्राय शारीरिक सुख-भोग के त्याग मे है और तभी सोऽहम् की पदवी भी प्राप्त होती है।)

आध्यात्मिक प्रेम-भावना का सबल ग्रहण कर ईश्वर-प्राप्ति का दृढ सकल्प कवि ने 'इश्क अथ त्रावनअ' (प्रेम को हाथ से जाने न दूंगा) नामक गजल में प्रकट किया है :

जुलेखायि ख्वाब वुछ निश यत्रावन, यूसफनि दादि गयि देवानअय,
खूचअय नअ यारह दादि दियार मा रावन, इश्कअय अथअकुन त्रावन नय।[5]

(जुलेखा ने अपने प्रेमी यूसुफ का दर्शन स्वप्न मे किया। वह उस पर मोहित हुई। उसे खरीदने के लिये अपना सारा धन लुटा कर भी वह नही

---

१. आरिफन छु यकीन ह्यनि तअ ब्वनय, केंह छुनअह सिवाय गअर अल्लाह,
गअफिलस छु गमानअह छा किनअह छुनै, सु ओस पानय वनै क्याह।
—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० १०० ।

२. गाह तमी पैगम्बर लोगनै—वही, पृ० ६६ ।

३. दारस प्यठ पानअह द्रोपनय 'अनै', शैख मसूरस ल्वदुख राह। वही, पृ० ६६ ।

४. शेख मसूरस ल्वदुख राह। वही, पृ० ६५ ।

५. वही, पृ० ६७ ।

घबराई । मैं भी प्रेम को हाथ से जाने न दूगा ।)

कवि को ईश्वर-प्रेम के बिना और कुछ भी प्रिय नही लगता । उसके दर्शन के लिये विरहाग्नि उसे सदा सताती रहती है । वह समझता है कि इस ससार मे उसी का दर्शन जीवन का सार है :

छुनग्रह केह् लारुन फग्रनी सराय, दम ग्राय मेल्यम ना ।[१]

(यह ससार तो एक सराय की भाति है जहा की प्रत्येक वस्तु नाशवान् है । कही मुझे यहा उस ईश्वर के दर्शन को अवसर मिले तो कितना शुभ हो ।)

कवि का कथन है कि आशिक या प्रेमी बलिदान से नही घबराता, क्योकि इश्क ही इन प्रेमियो का ताज होता है ।[२] सच्चा प्रेमी ही ईश्वर-दर्शन कर सकता है । वही 'फना' होकर मारिफत के दरिया मे अवगाहन कर सकता है ।[३] 'हावान पनुनय पान' (ईश्वर का दर्शन-लाभ होता है) नामक कविता मे कवि ने तादात्म्य का चित्र इस प्रकार उपस्थित किया है :

दोह् अकि आरिफन मारिफत चावन, कमि आयि तिमान करनावन स्रान
अथ ह्यथ खान छस पान मल्हनावन, हावान आशकन पनुनुय पान ।[४]

(वह ईश्वर किसी न किसी दिन ज्ञानियो को मारिफत का जाम पिला ही देता है । वह उनको मारिफत के दरिया में स्नान भी करवाता है । वह स्वय ही अपने हाथो से उनके लिये सब-कुछ करता है । इस भाति वह अपने प्रेमियो को अपना सौदर्य दिखा देता है ।)

महमूद गामी अपने सन्त तथा सूफी सरल जीवन में 'नफस' से बचा रहा । उसका विश्वास था कि एकान्त में प्रभ-भजन करके तथा सासारिक बन्धनो से दूर रह कर ही साधक मारिफत की अवस्था प्राप्त कर सकता है ।[५] उसकी गज़लो में फारसी तसव्वुफ की लय साफ सुनाई पड़ती है । उसका विश्वास था :

पानय अखसुय तस लछ बदी नाव, पानय पानस वुछनै आव ।[६]

---

१. सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० १०२ ।

२. इश्कअय आशकन ताज छुय शेरे, इश्की छुय अल्लाह् अकबर—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० १०४ ।

३. दरियाइ मारिफतह् पान खास ठारे, फान यलि सपदख आनस अन्दर—वही, पृ० १०४ ।

४. वही, पृ० १०७ ।

५. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—महमूद गामी, संपादक, गुलाब नबी ख्याल, भूमिका, पृ० ८ ।

६. वही, पृ० ६५ ।

(भिन्न-भिन्न है रग और भिन्न भिन्न है नाम, आप ही अपने आपको 'वह' देखने निकला है)[1]

कवि ने ये भाव अपनी एक गजल 'पानय पानस वुछने आव' (आप ही अपने आपको 'वह' देखने निकला है) मे अभिव्यक्त किए है। आत्मा तथा परमात्मा मे अभेद बताते हुए उसने कहा है :

पानय सअलिक मअलिक मयखानस, पानय पानस वुछने आव।[2]

(इस ससार रूपी मधुशाला मे वह स्वय ही सालिक एव स्वय ही मालिक है।)

उसकी एक नज्म 'नय' (बासुरी) मे प्रेम-व्यथा का वर्णन हुआ है। लकडहारा उसे बन से पृथक् करता है। वास्तव मे विरह-विधुरा बासुरी की ध्वनि प्रेम से व्याप्त है। यह बासुरी आत्मा के रूप मे उस परमात्मा की अभिव्यक्ति का साधन है क्योंकि वह प्रभु सब प्राणियो के हृदय मे वास करता है जिसे मसूर ने 'अनल्हक' कहा था। कवि का कथन है

तबरदारन करिनम गन्यै, बनै वअ दर्दे नीस्तान,
तती बअ नय करेनस छनय, यती छु नयि नीस्तान,
तती जमा सअरी यिनय, वनै बअ दर्दे नीस्तान,
बअलिथ अनिनस मोहनअ वनै, जअलिथ कुस ह्ययकि पनुनपान,
नारअह पान जालुन सअहल छुनै, वनै बअ दर्दे नीस्तान।
अनल्हक द्रोपनय मसूरनअय, बरदार ओसुय वारअह वुफान।[3]

(लकड़हारा मुझे बन से विलग करके ले आया। अब मैं अपनी विरह-व्यथा सुनाऊगी। उस मोहन-वन से पृथक् करके वह मुझे नीचे ले आया। अतः अब विरह से उत्पन्न इस अग्नि को कौन सहन कर सकता है। इसका सहन करना अब असह्य हो रहा है। मसूर ने इसी भाव से प्रेरित होकर अनल्हक की रट लगाई।)

वन से पृथक् होने वाली 'नय' (बासुरी) की उत्कट विरहानुभूति ही इस नज्म मे मुखरित हो उठती है। कवि की इस नज्म का प्रेरणा-स्रोत कश्मीर मे मे प्रचलित 'नय हअज कथ' (बांसुरी की कथा) ही प्रतीत होती है।[4] प्रो० पुष्प के कथानुसार जीवात्मा और परमात्मा के विरह का यह संकेत रहस्यवाद के प्रसिद्ध कवि रूमी की उस विश्व-विख्यात मसनवी से प्रभावित है, जिसका आरम्भ

---

१. अनुवादक, प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प, कश्मीरी भाषा और साहित्य-लेखा पृ० १२।

२. महमूद गामी, पृ० ९६।

३. वही, पृ० ८६।

४. द्रष्टव्य—हातिम्ज़ टेल्ज़ (कश्मीरी स्टोरीज़ एण्ड सागस), पृ० १६१।

यो होता है—विश्नव अज़ नय चू हिकायत मी कुनद ।[1]

कवि ने यह कहा है कि प्राणी उस मूलाधार ईश्वर से मिलन के लिये सदा व्याकुल रहता है

मदनो छुस बग्र रिवान छुय नग्र यिवान ग्रार म्योनुय ।[2]

(हे प्रभु ! तुम्हारे दर्शन के लिये लालायित मेरा यह विरह पूरित हृदय तुम्हारी स्मृति में लीन है, परन्तु तुझे तनिक भी दया नही आती ।)

प्रेम का प्रादुर्भाव ईश्वर के साथ ही हुआ, इस पर कवि का कथन है .

चग्रह आख अव्वल बूजुम कुने, चानि सअ्रत्य आव शहशाह ।[3]

(प्रेम ! तेरा प्रादुर्भाव, उस ईश्वर के साथ ही हुआ । तेरे द्वारा ही उस प्रभु का ध्यान होने लगा ।)

प्रेम को ही सर्वस्व मानकर कवि ने ससार की क्षणभगुरता के भाव अपनी नज़्म, 'दुनिया',[4] मे अभिव्यक्त किए है ।

नगमा साहब ने ईश्वर, प्रेम तथा ससार आदि सब-कुछ पर लिखा है । अपनी गज़ल 'तस छु म्योन नाव' (उसका नाम वही है जो मेरा है) मे कवि ने कहा है कि चिर-साधना के बाद मुझे यह ज्ञात हुआ कि ईश्वर तथा मेरे मे कोई भेद नही है :

सअ्रन्य तग्र वोगअ्रन्य बअ्रन्य दित्य मे तस,
प्योम च्यतस तस छु म्योन नाव ।[5]

(यह बात मुझे घोर साधना तथा खोज के बाद विदित हुई कि उस ईश्वर तथा मेरे मे कोई भेद नही है ।)

ईश्वर को सर्वव्यापक तथा घट-घट वासी मानते हुए कवि ने अपनी गजल 'सु छि निशि' (वह तो हृदय मे निवास करता है) मे यह भाव इस प्रकार प्रकट किया है :

यस नाद लायि सु छुम निशि, कमियू शीशअ्रह चौवनस मस ।[6]

(जिस ईश्वर को मैं पुकारूं वह तो मेरे ही हृदय मे बस रहा है । न जाने यह प्रेम-मदिरा उसने मुझे किस गिलास से पिलाई ।)

इस सृष्टि के आरम्भ मे वह अकेला था, किन्तु वही एक फिर इस ससार मे अनेक होकर व्याप्त हो गया :

कुनुय आव तग्र कुनुय गव, अथ नाव आलम हअ्रित प्यव[7]

---

१. कश्मीरी भाषा और साहित्य-लेख, पृ० ११ ।
२. महमूद गामी, पृ० ६२ । ३. वही, पृ० ६१ ।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६७-१०१ । ५. सूफी शअ्रयिर, पहला भाग, पृ० ११० ।
६. वही, पृ० १०४ । ७. वही, पृ० १३४ ।

(सृष्टि के प्रारम्भ मे वह एक था और सृष्टि के अन्त मे वही एक रहा । मध्य मे ही वह सृष्टि मे व्यक्त हुआ है ।)

सच्चा प्रेमी प्रेमाग्नि मे जलकर उसके दर्शन की अभिलाषा करता है। उसका सौदर्य उसे मिलन तक विरह-पीडित करता रहता है । 'बुनि छुम ज़ालन' (वह अभी भी मुझे विरहाग्नि मे जला रहा है) नामक गज़ल मे कवि ने कहा है .

दिल न्यूम हुस्नन ज़ुल्फन तम खालन, बुनि छुम ज़ालन आस ने आर[1]
(उसका सौंदर्य मेरा चित्त चुराकर ले गया । वह अभी भी मुझे विरहाग्नि मे जला रहा है । उसे अभी भी तनिक दया नही आ रही है ।)

एक सच्चा साधक मरजीवा बनकर ही उसकी प्राप्ति के लिये प्रयत्नशील रहता है ।[2] इसी प्रेम से विह्वल होकर मसूर ने अपने प्राण तक त्याग दिये ।[3] सालिक 'वस्ल' (ईश्वर मिलन) तक विरह का अनुभव करता रहता है ।[4]

रहमान डार ने अपनी गजलो मे ईश्वर, प्रेम, ससार, वहदानिया तथा मारिफत के विषय मे बहुत-कुछ कहा है । कवि ने उस सर्वव्यापक ईश्वर का सौदर्य सपूर्ण ससार मे व्याप्त माना है । आरिफ (ज्ञानी) उसके सौदर्य को देखकर ही विस्मित होता है । अपनी गजल 'जानानअह हर रोअये' (प्रेमी ईश्वर सर्वव्यापक है) मे कवि ने इसी भाव को इस प्रकार प्रकट किया है

ज्वोय मंज़ छु कतरअह पानअह, कतरअह मज़ नेरान ज्वोय,
सरअह कअर रिन्द जानानअह, जानानअह वुछ हर रोय ।[5]

(सरीता मे वह एक बूद बनकर समाया हुआ है । बूद से ही सरिता का निकास है । हे प्रेमी ! तुम प्रभु को पहचान ले । वह सर्वव्यापक है ।)

परमात्मा प्रत्येक हृदय मे निवास करता है । मानव ईश्वर का ही अंश है । उस की आत्मा परमात्मा की भाति ही अमर है ।[6] कवि ने अपनी गज़ल 'प्रज़नोवुम ससार' (मैंने ससार को पहचान लिया) मे यह प्रकट किया है कि

---

१. सूफी शअयिर, पहला भाग, पृ० १०६ ।
२. दर मजहब आशकी, व्यपुय न मंतकी—वही, पृ० ११६ ।
३. बरदार ख्वोत मंसूरे, सगसार व्यपि नो तते—वही, पृ० ११५ ।
४. वस्ल वक्तन कथ सपअज़ तति मोख्तसर,
योर सोरिओस तोरअह बूजमे न कांह खबर । वही, पृ० १२१ ।
५ वही, पृ० १५८ ।
६. नूरह निशि नूरा पैदा द्राव, अहदस अहमद सपदानय,
मुहम्मद लगिथ बाज़ार द्राव, बहार आव जाने जानानय—वही, पृ० १४६ ।

उस ईश्वर के बिना यह ससार निराधार है ।[1]

प्रभु के साथ तादात्म्य स्थापित करना ही इस जीवन का उद्देश्य होना चाहिये । कवि ने इस सम्बन्ध मे अपनी गजल 'मारिफत बनान रहमान' (कवि रहमान द्वारा मारिफत के स्वरूप का प्रतिपादन) मे कहा है

शरीयतअह छै अथ कुनि फर्क, तरीकअतह यकसान,
हकीकतअह निशि अकल छि हारान, मारिफत बनान रहमान ।[2]

(शरीयत की अवस्था मे असमानता प्रतीत होती है किन्तु तरीकत की अवस्था में समता का आभास होने लगता है । हकीकत की अवस्था मे साधक की अक्ल परास्त होती है और तभी कवि रहमान ने मारिफत के स्वरूप का प्रतिपादन किया है ।)

मारिफत तथा वहदानिया (ईश्वर के एकत्व) के इच्छुक कवि ने वहदत (एकत्व) को सृष्टि के खिले पुष्प के रूप मे स्वीकार करते हुए उसका प्रकाश सूर्य की भाति उज्ज्वल माना है ।[3] 'जिक्र' (स्मरण) द्वारा ही ईश्वर का एकत्व प्राप्त होता है और एकत्व की इस स्थिति मे साधक एव साध्य अभिन्न हो जाते है ।[4]

प्रभु का सौदर्य अथवा नूर सारे ससार मे व्याप्त है और वह हजरत मुहम्मद के रूप मे उसका निरीक्षण कर रहा है ।[5] प्रेम की मदिरा पीने वाला साधक विरह से तड़प उठता है । वह केवल उसके दर्शन के लिये ही लालायित हो उठता है ।[6]

'माछ तुलअर' (मधुमक्खी) मे कवि ने छत्ता, मधुमक्खी तथा मधु की प्रतीक-योजना के आधार पर कहा है कि आत्मा ही छत्ता है, फिक्र ही मधुमक्खी है तथा मधु ही नफ्स है ।[7] अतः जो प्राणी केवल मधुमक्खी की भांति 'नफ़्स' की

---

१. बुनियाद आदम छै ला निहायत, दुनिया छु नापायदार,
शुनिया गच्छिथ वोतुस बअ मतलब वहदत लोबमस तार ।—सूफी शअयिर, पहला भाग, पृ० १४१ ।

२. वही, पृ० १४० ।

३. फ्वोल गुले वहदत दर मुल्के वजूद, आफताब जन तावान—वही, पृ० १३९ ।

४. वहदअनी यति निशि वहदत द्राव, बहार आव जाने जानानै—वही, पृ० १४६ ।

५. मुहम्मद लअगित बाज़ार द्राव, बहार आव जाने जानानै—वही, पृ० १४६ ।

६. द्रष्टव्य—वही, पृ० १४५ ।

७. रुह गव माछ गन, फिक्र गअयि तुलअर, माछ गयि नपस अमारे—वही, पृ० १६७ ।

चिन्ता करता है, उसकी आत्मा अन्त मे पश्चात्ताप करती है। उचित यही है कि प्राणी उस ईश्वर के ध्यान मे लीन होकर मारिफत (पूर्ण ज्ञान) प्राप्त करे।

वहाबखार का सारा कलाम गजल तथा गीत के तर्ज पर सूफियाना है।[1] उसके काव्य मे मारिफत तथा लोक-गीतो की विशेषताए अधिक है।[2] अपने आपको प्रेमिका तथा ईश्वर को प्रेमी मानकर उसने अपने एक गीत 'मु कस पतय गोम' (वह किसके पीछे भागा) में कहा है :

दअन्द छिस म्वोख्तअह फअल्य, लाल छम कथय,
देवानअह करिथ गौम, नम छिन रअग्यमअत्य आदम रतँ।[3]

(मेरे प्रियतम का सौंदर्य अनुपम है। उसके दात मोती के समान सुन्दर, बातें मोती जैसी प्यारी तथा नाखून मानव के खून मे रजित दिखाई दे रहे है)

उस ईश्वर को घट-घट वासी मानते हुए वह कहता है :

दिलस अन्दर याग छुय सरअह कर, ख्वद सरवर छुय।[4]

(हृदय मे निवास करने वाले प्रियतम का निरीक्षण कर। स्वय ही वह दर्शनीय है)

प्रेम-मदिरा पिलाने वाला ईश्वर ही ज्ञेय है किन्तु वही हमारे भीतर विरहानुभूति उत्पन्न करके पुनः छिप जाता है। कवि की धारणा है कि उस हकीकत तक तभी पहुचा जा सकता है जब नासूत, मलकूत तथा जबरूत के लोकों को पार किया जाये। लाहूत की अन्तिम-अवस्था ही साधक के लिये श्रेयस्कर है।[5]

अज्ञानी एव प्रमादी प्राणी सासारिक प्रलोभनो मे फस कर अपने अमूल्य जीवन को गवा बैठते है किन्तु ज्ञानी पुरुष ही मसूर की भाति सचेत रहकर उसकी प्राप्ति के लिये दत्तचित रहते हैं।[6] इस भाति सच्चा साधक सदा

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० ४००।

२. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० ८४।

३. वही, पृ० १४६।

४. बयाजे वहाब खार, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणबीरगज बाजार, श्रीनगर, कश्मीर, पृ० ४।

५. नासून मलकूत गव जबरूत हअरतन प्यव,
लाहून लअजिस परव छुस तोरअह जवाब है।—वही, पृ० ७।

६. गाफिल छु खफतँ बे खबर अमि आबअह ईरान सरअह कर,

× × ×

छूर लओग मसूरसअय फ़ाश लगअव करने सीर सअय, वही, पृ० ८।

विरहाग्नि मे जलता रहता है ।

तन जग्रजनम ग्रमि यार छुम तनह् त्योगल लार,
तमि दरियावुक शोर मुय जानि युम गव तार ।[1]

(उस प्रेमी ने मेरे शरीर को विरहाग्नि से जला डाला है । उस दरिया वहदत की नदी) का शोर वही सुन पाता है जो कोई सिद्ध पुरुष हो ।)

कवि को उस ईश्वर का सौदर्य चतुर्दिक प्रतिभासित हो रहा है :

वुछान गछ जलवग्रह जात, मुछुय ताबान चोपग्नरी ।[2]

(उस ईश्वर के सौदर्य का ग्रवलोकन करता चल । उसी का यह नूर चारो ग्रोर चमक रहा है ।)

इस सौदर्य का दर्शन वही कर सकता है जिसने उसे पहचान पाया हो । उसे हृदय मे धारण करने वाला साधक ही उसके मधुर सगीत को सुन सकता है । 'ति क्या गव' (वह क्या हुग्रा) गीत मे कवि ने इसी भाव को इन शब्दो मे ग्रभिव्यक्त किया है :

साज़ बोजि सोज़स माने, ख्वदा जाने ति क्या गव,
× × ×
मजलून म्वोत क्या करे, लग्रल छस पनने गरे ।[3]

(ईश्वर का सगीत पवित्र-ग्रात्मा ही सुन सकता है जैसे वीणा ही ग्रपने से निकले राग का ग्रर्थ जान सकती है । बेचारा मजनू क्या करता, लैला तो उसके ही हृदय मे बस गई थी ।)

इस कारण 'रस कति ल्वग्यो' (प्रेम कहा हुग्रा) गज़ल मे कवि का कथन है कि शरीयत का पालन-कर्ता मुसलमान है । तरीकत की ग्रवस्था को पार करने वाला ही ग्रागे बढ पाता है । हकीकत के पुष्पित वसत का दर्शन वही कर सकता है जिसने मारिफत की मधुशाला मे प्रेम रूपी मधु का पान किया हो ।[4]

---

१. सूफी शग्रयिर, दूसरा भाग, पृ० ६ ।
२. बयाजे वहाब खार, पृ० १२ ।
३. वही, पृ० १५३ ।
४. यम्य यति शरीग्रत पोलनय, सु गव मुसलमान,
तरीकतस वुछान गछतो, मीलिथ छु हनि हनि,
हकीकतस वग्रन्य दि वारग्रह पग्रठ्य, बहार वुछ शोलान,
मैखानग्रह मारिफत ग्राशकन छावान, पैमानह रोज़ तो च्यने । वही, पृ० १५७ ।

शम्स फकीर की गजलो मे तसव्वुफ और शैव-दर्शन एक होकर बोलते है। उस की दृष्टि मे ईश्वर सर्वव्यापक है। एक गजल मे उसका कहना है :

हयात उल्-नबी छु ताबानय, बअह शम्स व स्वद सिकन्दर[1]

(उस ईश्वर का नूर ही प्रत्येक स्थान पर प्रकाशित हो रहा है अतः मैं शम्स भी हूं और सिकन्दर भी हूं।)

एक आरिफ (ज्ञानी) सात मंजिलो को पार करके ही यह सौंदर्य देख सकता है और देखकर गूगे के गुड के समान उसका वर्णन नही कर सकता :

सतअ निशि दरियाव पअदअह गव, तथ ला निहायतस छअनअह ज्यव,
आरिफ छु तथ सअती हर दमअय, यति सुन छुमय तति सुय छुमै।[2]

(सात मजिलो को पार करके ही सागर दिखाई दिया। उस अवर्णनीय को वर्णन करने की शक्ति कहा। केवल एक ज्ञानी ही क्षण-क्षण इस मजिल पर से गुजरता रहता है। यहा भी उसको पाया और वहा भी उसी को देखा।)

अपनी एक गजल मे कवि ने प्राणी को प्रेम-मदिरा पीकर जीते-जी मारिफत की गहराइयो मे उतरने की प्रेरणा दी है :

शम्स फकीरन वओन नन्यर, कुस जानि दरियावुक सन्यर,
मर जिन्दअह सरह कर कुनत तुराब, मस्तानह मस गोस दर खरावा।[3]

(शम्स फकीर ने स्पष्ट कहा है कि मारिफत की नदी की गहराइयों मे कौन उतरना जानता है। हे प्राणी! जीवित होकर मरने से पहचान उत्पन्न कर। मैं तो मधुशाला में मदहोश पडा हुआ हूं।)

दुई के भ्रम को मिटाने के लिये शम्स फकीर ने बराबर बूद और दरिया का दृष्टान्त तरह-तरह के रूपकों द्वारा गूथने का प्रयत्न किया है। उसका कथन है कि बूंद तथा दरिया मे कोई भी मूल अन्तर नही है। शाश्वत मूलधारा के स्रोत पर विचार करते हुए उसका कहना है :

जोयि मज छुइ बसित आगरदअनी, आगुर कमि निशि द्राव,
इन्द्राजअह गजस सपदुक गन्यअनी, आगुर कमि निशि द्राव,
× × ×
यम्य सुन्दुय वोलुर तम्यसुन्द प्वोनी, कतरअह मंजअह दरियाव द्राव,
वातखय सरवनन ग्वडअह गछ फअनी, शमह अचि दरह किन्य सपदक फअनी[4]

---

१. शम्स फकीर, प्रो० शम्स-उद्-दीन अहमद, कल्चरल अकादमी, जम्मू कश्मीर, प्रथम सस्करण (सन् १९५९ ई०) पृ० ३६।

२. वही, पृ० ४८। ३. वही, पृ० ३२।

४. बयाजे शम्स फकीर, प्रथम भाग, संग्रहकर्ता, मौलवी बद्र-उद्-दीन, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, श्रीनगर, पृ० १४।

दरिया मे से कतरा निकला,
(और) कतरे के अन्दर दरिया समा गया।
(और), दरिया कतरे मे बहता रहता है,
आम लोगो को तो इस (भेद) की खबर नही
(जानने वाला) तो खासो मे से भी खास ही है।
वुलर-झील जिसकी है, पानी उसी का है,
जो तू तत्व को जान पाये तो पहले लीन हो जा।
मूलस्रोत कहा से निकला है ?[1]

फिक्र (चिन्तन) तथा 'जिक्र '(स्मरण) के तत्व को बताते हुए कवि ने कहा है :

फिक्र तअ्र जिक्र दिल वसवसअ्रह् चोलुम तार लोगुम दरियावस,

×　　　　×　　　　×

शम्स फकीर जमा सपदिथ लछ् बदिस वअ्रसि अ्रख मिसाला ।[2]

(फिक्र तथा ज़िक्र करने से मेरी घबराहट दूर हुई और मैं नदी के पार हो गया। शम्स फकीर ने अन्तिम सीमा पर जाकर देखा कि लाखों वर्ष की साधना केवल एक मज़िल है।)

'अनल्हक' (सोऽहम्) की आध्यात्मिक अनुभूति का साक्षात्कार करने के लिये उसने शरीयत, तरीकत, मारिफत तथा हकीकत के साथ ही नासूत, मलकूत जबरुत एव लाहूत की उपादेयता प्रकट की है।[3] उसने अध्यात्म की सूफी-धारा मानवतावादी उदारता के नाते ही अपनाकर अपनी वाणी मे प्रवाहित किया है। ज़िक्रो-फिक्र की भूमिकाओ को तय करके वह 'तर्के वजूद', 'तर्के दुनिया', 'तर्के अकबा', 'तर्के मौला' और अन्त मे 'तर्के तर्के' (त्याग ही त्याग) के उत्तरोत्तर उत्कर्ष की प्रेरणा करता है।[4] इसी लिये कवि ने कहा है :

ललिये करसय ल्वलअ्रह्-म्वोत लाय[5]

(हे सखी ! आओ, प्रियतम को गोद मे लेकर झूला झूले।)

अहमद बटवारी के गज़लो मे सूफी-सिद्धान्तो का प्रतिपादन समीचीन ढग

---

१. अनुवादक--प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प, योजना, अगस्त-सितम्बर, १९५७, वर्ष २, अक ७, पृ १९।
२. शम्स फकीर, प्रो० शम्स उद्-दीन अहमद, पृ० २०।
३. दृष्टव्य—वही, पृ० २६।
४. योजना (अगस्त-सितम्बर, १९५७) पृ० २२।
५. शम्स फकीर, स० प्रो० शम्स-उद्-दीन अहमद, पृ० ६०।

मे हुआ है । परमात्मा-आत्मा तथा प्रेमिका-प्रेमी दोनो अभिन्न हैं—इस भाव का स्पष्टीकरण कवि ने अपनी एक गजल 'यि छु यकसान' (इनमे कोई अन्तर नहीं है) मे किया है ।[1] एक और स्थान पर उसका कथन है :

वैष्णव, कृष्णस, ऋषि मग्रदानस, महागणीश, तनि कस करअह नमस्कार,
गग राजअह व्यूठुम गगबल थानस, जान छुम मीलिय जहानस सअत्या ।[2]

(विष्णु, कृष्ण, ऋषि-मुनि, महागणेश, गगबल (रामाराधन और भरत पर्वतों के ऊपर स्थित छोटी गगा) पर बैठे गगराजा (शिव) मे से मैं किस को प्रणाम करू । उन सब में तथा मेरे अन्दर एक-ही आत्मा मे प्रतिभासित हो रही है । वास्तव मे आत्मा एव परमात्मा मे अभेद है ।)

परमात्मा से विछिन्न आत्मा का भाव उसकी 'नय' (बासुरी) नामक गज़ल मे प्रस्फुटित हुआ है । अपनी पूर्वदशा मे आत्मा एव परमात्मा एक रहे है किन्तु विलग होने पर ही आत्मा को वियोगाग्नि सहन करनी पड़ती है । प्रतीक-योजना के आधार पर 'नय' (बासुरी) केवल निर्माता की ही ध्वनि को ही प्रसारित करती है । प्रियतम सब प्रेमियो के हृदय मे बस रहा है और उसकी ज्योति सर्वत्र व्याप्त है । बासुरी का हृदय-द्रावक ध्वनि को ही प्रसारित करती है । प्रियतम सब प्रेमियो के हृदय मे बस रहा है और उस की ज्योति सर्वत्र व्याप्त है । बासुरी की हृदय-द्रावक ध्वनि विरह-पूर्ण है । इसकी ध्वनि सुनने वाले हृदय में ही प्रभु-दर्शन कर लेते है । जल, अग्नि, पृथ्वी एव वायु के चार तत्वों से निर्मित शरीर को पाकर जो प्राणी सावधान नही होते, उनका यौवन व्यर्थ ही व्यतीत हो जाता है तथा वे पश्चात्ताप करते रहते है ।[3] कवि ने यह भाव कश्मीर मे प्रचलत लोक-कथा के आधार पर व्यक्त करते हुए कहा है कि प्राणी की नरकाग्नि से बचने और तादात्म्य प्राप्त करने के लिये इस 'नय' (बासुरी) की ध्वनि का·

---

१. सियाह पोश लैला, ऐन लैला, फवकअह, चोग ज़ाजान पथ रुद क्या,
स्वति छय मिसाला तति वअस्य प्यवान, बोज़ान कोनअ छुक यि छुक यकसान ।
—सूफी शअयिर, पहला भाग, पृ० १७४ ।

२. वही, पृ० १९५ ।

३. आब नय नार नय खाक नय बावह नय, चोरिह सअत्य चोर दस्त वपय,
अफसोस गव तिमन यिम नअ मुहरम गय, तावन प्योक यावनस ।
वही, पृ० १७१ ।

श्रवण करना चाहिये ।[1] ममूर जैसा साधक ही उस आनन्दोत्सव का भागी बन सकता है ।[2] गुरु का पथ-प्रदर्शन भी उस ईश्वर तक पहुचने के लिये आवश्यक है ।[3]

शाह कलन्दर ने अपनी गजलो मे विरहाग्नि का वर्णन करते हुए कहा है कि वियोग के कारण मसूर पागल हो उठा । 'फना' होकर ही उसने 'वस्ल' (ईश्वर-मिलन) प्राप्त किया ।[4] इस भाति सालिक सदा उसके मिलन से पूर्व विरह-बाणो से बिन्ध होता है :

> तीर लोयनम अज़ कमान, वारअह कअरनस नीम जान,
> गोम जिगरस लअरी, न्यूनम अज निगाहे दीन व दिल ।[5]

(प्रेमी ने अपने धनुष से बाण चलाकर मेरे हृदय को क्षत-विक्षत कर दिया । चितवन रूपी बाणो से उसने मेरा धर्म व दिल चुरा लिया ।)

कवि ईश्वर-मिलन का अत्यन्त इच्छुक है । वह अपने प्रमादी मन को सचेत होने के लिये पग-पग पर समझा रहा है । उस का इस बात मे विश्वास है कि परमात्मा का अंश होने के नाते आत्मा के लिये अपने मूलस्रोत का ध्यान करना आवश्यक है । आत्मा ने परमात्मा के सम्मुख ससार मे शरीर धारण करने के समय उनके स्मरण करने की जो प्रतिज्ञा की थी, वह भी आत्मा को ईश्वर-चिन्तन करके अवश्य पूर्ण करनी चाहिये :

---

१. दोजअख मज नेर, छाव जन्तअच नय, सुलतान अज़ कारस—वही, पृ० १७१ ।

दृष्टव्य—The flute is saying of the Cane branke to whom is knowledge will know he only who will be arrived at Him who has no abode (i. e. God).

—हातिम्ज़ टेल्ज़, पृ० १६८ ।

२. द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, पहला भाग, गज़ल इन्द्राजनि दरबार (इन्द्र के दरबार मे), पृ० १७८-१७६ ।

३. बेपीर इंसान इरअह् वअन्य नावे, बे पीर इंसान तावन जद—अहमद बटवारी, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीर गज, श्रीनगर, पृ० १६ ।

४. तस कम्युक आराम आसी, यम्य च्योमुत इश्कुन शराब,

× × ×

या सपुन च्य मस्त मसूर, खस्तह् बरदार फ़ना । सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० १४४ ।

५. वही पृ० १३६ ।

वग्रदग्रह दिथ बग्र ग्रायोस तते, केह न ह्ग्रसिल कग्रोर मे यते ।
जगलस मज ह्वम गोस यले, पानग्रह म्याने हा गाफिले ।[१]

(मै उस ईश्वर को उसके चिन्तन करने का वायदा देकर इस ससार मे जन्म पा गया । किन्तु मैने उसे भूलकर और अपनी प्रतिभा भग करके कुछ भी प्राप्त किया । मुझे वन मे भी सासारिक प्रलोभनो ने घेर लिया । हे मेरे गाफ़िल हृदय ! सचेत हो जा ।)

कवि ने सासारिक असारता की ओर सकेत करते हुए कहा है :

फ़ान ससार, केह नो रोजे
× × ×
जान दुनिया न्यन्द्रग्रह ज्वोल ।[२]

(ससार क्षणभगुर है । यहा की कोई भी वस्तु स्थायी नही है । यह ससार तो केवल स्वप्न-मात्र है ।)

असदपरे अपनी गजलो मे उस ईश्वर का नूर सपूर्ण ससार मे व्याप्त मानता है । अपनी गजल 'च्वपग्ररी तम्यसुन्द गाह' (चारो ओर उस का ही सौदर्य प्रकाशित हो रहा है) मे कवि ने 'सोऽहम्' के आधार पर आत्मा-परमात्मा की अभिन्नता का वर्णन करते हुए कहा है ·

सू हम सू कुय परगाशा, छुस च्वपग्ररी डेशान तग्रम्यसुन्द गाह ।[३]

कवि का कथन है कि जब मंसूर को इस रहस्य का आभास हुआ, तभी उसने 'अल्लाह्-अल्लाह' का स्मरण करके प्रभु-एकत्व प्राप्त किया :

'अल्लाह अल्लाह पग्रोर मंसूरन, अल्लाह पान कोरनम तग्रय,
जहूर अल्लाह ह्ग्रसिल कोरनम, तदग्रह तग्रम्य 'ग्रन' पोरनम।[४]

(मसूर ने अल्लाह-अल्लाह का स्मरण करके अपने-आपको ईश्वर-स्वरूप बनाया । उसे ईश्वर-सौदर्य के दर्शन हुए और तभी उसने 'अनलहक' का उपदेश दिया ।)

वह ईश्वर रूप—रग रहित है । वह अनुपमेय भी है ।[५] इसी 'च्वपग्ररी तम्य-सुन्द गाह' गजल मे उसने उस ईश्वर के सौदर्य को प्राप्त करने का साधन ध्यान तथा योग बताया है ।[६] कवि की दृष्टि मे राम-रहीम तथा काबा-बुतखाना में

१. सूफी शग्रयिर, दूसरा भाग, पृ० १४४
२. वही, पृ० १४१ । ३. वही, पृ० २०४ ।
४. वही, पृ० १९२ ।
५. सु छु बेरंग बे निशानय, ह्यु न तसकाह, कग्रंसि ह्यु न पानय ।—वही, पृ० १८४ ।
६. ध्यानस प्रानस सग्रत्य सोदा, छुस च्वपग्ररी डेशान तम्यसुन्द गाह—वही, पृ० २०४ ।

अभिन्नता है ।[1]

मन्दिर-मस्जिद के झगडो में न पड़ना ही श्रेयस्कर है । पवित्रात्मा को ही 'वस्ल' की प्राप्ति होती है ।[2] 'बक़ा' की अवस्था मे साधक की अवस्थिति ईश्वर मे होती है। इस भाव को कवि ने अपनी गज़ल 'मअरिथ रुत दपनय' (मरकर भला कहेंगे) मे इस प्रकार प्रकट किया है :

ज़िन्दअह पान दक्कन तअ डुलन कितूय, मरिथ रुत हो दपनय[3]

(जीते जी तो कठिनाइयो का अनुभव करना अच्छा है, ताकि मरने पर सभी भला कहें ।)

अत॰ ज्ञानी पुरुष ही उस 'नूर अली नूर' का पात्र बन जाता है ।[4]

वाजह् महमूद ने अपने गीतो तथा गज़लों में परमात्मा की अभिव्यक्ति ससार मे मानी है। अपने एक गीत 'कअम्य ताम कअड़नम कल' (किसी ने मुझे ललचाया) मे कहा है कि आत्मा उस दिव्य-लोक से आकर इस ससार मे शरीर धारण करके उस मूल-स्रोत के लिये तड़पती रहती है :

कती आयस कती जायस, वते वति नागबल चायस,
तते वनवान वुछुम लाछल, मअत्य कअम्य ताम कअड़नम कल ।[5]

(मैं कहां से आई और कहां उत्पन्न हुई। बीच में मैंने शरीर धारण करके ससार मे प्रवेश किया। वहा मैंने ईश्वर-भजन सुना। किसी उन्मादक ने मुझे ललचाया)

कवि उसकी प्राप्ति के लिए शीश-दान देने को तैयार है। अपनी गज़ल 'कदम सर दिमयो' (चरणो पर सिर प्रस्तुत है) में कवि का कहना है :

ब्वोनकुन नमिथअय कर्यो भो सजिदा[6]

---

१. अवले खबरा अनी रहीम रामन, मूजूद मंज सर नामन ति लो ।
काबअह तअ बुतखानअह रअव्य मअत्य सवाबन, दम दम दिल मे न्यूव काबना
सूफी गअयिर, दूसरा भाग, पृ॰ १६४ ।

२. सअलीनिशि सूफी यस तअ लो लो—वही, पृ० १८६ ।

३. वही, पृ० १६८ ।

४. नूर अली नूर, गव बदन म्योन पूर,
अरव कथा अशअस मुरअदी—वही, पृ० २०२ ।

५. सूफी शअयिर, तीसरा भाग, संपादक, मुहम्मद अमीन कामिल, जम्मू व कश्मीर अकादमी आफ आर्टस, कल्चर एण्ड लेंग्वेजिज़, श्रीनगर (सन् १६६५ ई०) पृ० १३० ।

६. वही, पृ० १३१ ।

(तुम्हारे चरणों पर झुक कर मैं प्रणाम करता हूं ।)

प्रेमी सदा विरहाग्नि मे चलता रहता है । ईश्वर से मिलन के लिये वह सदा सतप्त दिखाई देता है :

इश्क दरियाव यलि लगि ग्राय दिनिये, मब्रग्रच नाव कर दियि ग्रथ तार ।[1]

(प्रेम-सागर की लहरो के थपेडो मे उलझे हुए साधक को सहनशीलता की नौका कब पार पहुंचा देगी)

प्रेम मे विभोर कवि की दशा मसूर जैसी हो गई है :

हालि मसूर तनग्र म्याने छु गोमुत[2]

(मेरी दशा उस मसूर जैसी हो गई है ।)

ग्रहमद राह ने ग्रपनी गज़लो मे उस ईश्वर के चारो ग्रोर फैले सौदर्य का वर्णन किया है । ग्रपनी गजल 'नूरन क्वोरुस देवानग्रह' (सौदर्य ने मुझे पागल बना दिया) मे कवि का कहना है :

नूरुन कोरुस देवानग्रह तय, हूरन ग्रन्दर हम खानग्रह तय ।[3]

(हूरो के साथ निवास करने वाले प्रभु के सौदर्य को देखकर मैं पागल हो उठा हूं ।)

सौदर्य के इस बाण ने जब मे उसके हृदय मे विरहाग्नि उत्पन्न कर दी है तभी से उसे शान्ति नही मिलती । वास्तव मे यह प्रेमाग्नि साधक को मंसूर की भांति सहन करनी पडती है :

ननि कथग्रह पेयि बाजार, वनि शेख मसूरन,
कनि कनि क्वोरुख संगसार, दीदार तस दीदन ।[4]

(मंसूर द्वारा कथित बात का जब रहस्योद्घाटन हुग्रा तब सभी उस पर कुपित हुए । उसने तो उस प्रभु का दर्शन नेत्र-निलय मे किया था ।)

इन प्रमुख मुक्तक कवियो के ग्रतिरिक्त ग्रालोच्यकाल मे ग्रन्य सूफी कवियो जैसे मोमन साहब,[5] रहीम साहब,[6] नुन्द डार[7] शुक्रयोंश,[8] इब्राहीम शाह,[9] समद

---

१. सूफी शग्रयिर, तीसरा भाग, सपादक, मुहम्मद ग्रमीन कामिल, पृ० १२० ।
२. वही, पृ० १२२ ।
३. वही, पृ० १५० ।
४. वही, पृ० १४४ ।
५. द्रष्टव्य—वही, दूसरा भाग, पृ० १११-११४ ।
६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ११७-१३२ ।
७. द्रष्टव्य—वही, पृ० २०७-२१६ ।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० २१६-२२० ।
९. द्रष्टव्य—वही, पृ० २२३-२२४ ।

मीर[१] तथा परमानन्द[२] आदि ने भी सूफी-साहित्य मे अभिवृद्धि की। मकबूल शाह क्रालवारी[३] तथा हक्कानी का मुक्तक-सूफी-साहित्य भी प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध है।[४]

(क) निष्कर्ष

इन सभी सूफी-मुक्तकारो ने साधनात्मक दृष्टि से एक ही प्रकार का स्वर मुखरित किया। आराध्य के प्रति प्रेम, मिलन की कामना, विरह की अनुभूति तथा साधना की पद्धति वर्णनीय रही है। यह अवश्य है कि किसी मे अनुभूति की गहराई अधिक है और किसी मे उपदेशात्मकता। सूफी-प्रबन्ध-काव्यो मे साधना के मार्ग की जिन कठिनाइयो को विस्तृत रूप मे प्रस्तुत किया गया है, उनके वर्णन के लिये मुक्तको मे तो अवकाश नही था, किन्तु अनुभूति एवं सवेदना की गहराई उनकी भावात्मक साधना की गहराई को ही प्रकट करती है। इश्क-हकीकी को वाणी देना सब का प्रमुख उद्देश्य रहा है और इन सूफी भाव-मुक्तको मे इश्क मजाजी की पद्धति का आश्रय लेने की अपेक्षा सीधे इश्क-हकीक़ी को ही अभिव्यजना प्राप्त हुई है। वस्तुतः इन मे भाव तथा दार्शनिक जगत् की सीमा-रेखाए एक-दूसरे को स्पर्श करती है।

(ख) हिन्दी में उपलब्ध मुक्तक रचनाएं

हिन्दी के सूफी-मुक्तक कवियो ने अपने मत सम्बन्धी विचारो को अभिव्यक्ति दी है। सूफियो की स्फुट काव्य-रचना भी सूफी-प्रेमाख्यानो के साथ ही आरम्भ हुई।[५] प० परशुराम चतुर्वेदी ने अमीर खुसरो (सन् १२५५ ई० से लेकर सन् १३२५ ई०) को सूफी-मुक्तक काव्य का सर्वप्रथम रचयिता माना है।[६] उसके अनन्तर आने वाले आलोच्यकाल के मुक्तक-सूफी-कवियो मे अब्दुल कद्दूस गगोही, मलिक मुहम्मद जायसी, शेख़ फरीद, यारी साहब, पेमी, बुल्लेशाह, दीन दरवेश, नजीर तथा अब्दुल समद आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

अमीर खुसरो के कुछ तो ऐसे दोहे तथा पद उपलब्ध हुए है जिन मे रहस्यात्मक ढंग से ब्रह्म तथा जीव की चर्चा हुई है :

---

१. द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, तीसरा भाग, पृ० १५४-१८६।

२. द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, तीसरा भाग, पृ० २१-६६।

३. द्रष्टव्य—मकबूल शाह क्रालवारी, सपादक, प्रो० हामदी कश्मीरी।

४. हक्कानी, सपादक, फितरत कश्मीरी।

५. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३०१।

६. वही, पृ० ३०१।

गोरी सोवे सेज पर, मुख पर डारे केस ।
चल खुसरो घर आपने, रैन भई चहु देस ।[1]

तथा—

अत विदा है चलि है दुलहिन, काहू की कछु ना बसाई,
मौज खुसी सब देखत रह गए, मात पिता औ भाई ।
मोरि कौन सग लगिन धराई, धन-धन तेरि है खुदाई
बिन मागे मेरी मंगनी जो दीन्ही, पर घर की जो ठहराई ।[2]

अब्दुल कद्दूस गंगोही ने ईश्वर को सर्वव्यापक माना है । प्रेमी सदा उसकी प्राप्ति के लिये तडपता रहता है । अपना तन, मन एवं यौवन खोने वाला ही उस तक पहुच पाता है

तन मन जोबन खोय के, बैठी आपन खोय ।
ऐसा खेल जो खेलिए, निहचै सवेरा होय ।[3]

कवि ने और भी कहा है :

क्यो नहि खेलू तुझ सग मीता । मुझ कारन तू ईना कीता ।[4]

मलिक मुहम्मद जायसी ने 'अखरावट' के प्रारम्भ मे ईश्वर को सृष्टि का निर्माता के रूप मे स्मरण करते हुए कहा है :

आदिहु तें जो आदि गोसाईं । जेइ सब खेल रचा दुनियाईं ।[5]

वह ईश्वर सर्वव्यापक है । एकेश्वरवादी दर्शन के अनुसार उसने कहा है :

एक अकेल न दूसर जाती । उपजे सहस अठारह भाती ।[6]

हजरत मुहम्मद को उसने अपने नूर के रूप मे रचा और उसके प्रीत्यर्थ ही सृष्टि की सर्जना हुई :

अैसेई अधकूप मंह रचा मुहम्मद नूर[7]

कवि ने सृष्टि के विषय में बहुत कुछ लिखा है । उसने रूह को सृष्टि का उपादान कारण माना है। अल्लाह की अलौकिक भक्ति की झलक रूह के माध्यम से ही होती है । यह सृष्टि उसकी छाया अथवा प्रतिबिम्ब है एव केवल अल्लाह ही सत्य है :

---

१. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० २२५ । २. वही, पृ० २२५ ।
३. वही, पृ० २२६ । ४. वही, पृ० २२७ ।
५. जायसी-ग्रन्थावली, (अखरावट) । सपादक, डा० माता प्रसाद गुप्त, पृ० ६५३ ।
६. वही, पृ० ६५३ । ७. वही, पृ० ६५३ ।

गगन हुता नहि महि हुती, हुते चद नहिं सूर ।[1]

कवि ने सृष्टि की आदि-रचना शून्यावस्था से मानी है जब न गगन था ती, न सूर्य था और न चन्द्र । नाम, स्थान, सुर, शब्द तथा पाप-पुण्य आदि कुछ भी नही था । इस प्रकार 'अखरावट' के प्रारम्भ मे सृष्टि के उद्भव एव विकास की कथा मूलत. इस्लामी धर्म-ग्रन्थो तथा विश्वासो के आधार पर दी गई है । 'कुन' (प्रकाश हो) और कहने के साथ ही सर्वत्र प्रकाश हो गया । हम कहा से आए है और हमे कहा जाना है ? के बाद गुरु की महत्ता की बात, इस्लाम की श्रेष्ठता, अपने गुरु मोहदी और उनकी परम्परा का गुणगान, हस रूपक, शून्य निरूपण, धृत रूपक एव दीपक रूपक के वर्णन, कबीर की प्रशसा, गुरु-शिष्य सवाद रूप मे अहकार-विनाश, प्रेम-घृणा, तत्वो की स्थिति के प्रश्न एव गुरु द्वारा स्पष्टीकरण, गुरु द्वारा ईश्वर के गौरव का गान इत्यादि के पश्चात् कवि कहता है कि यह गूढ बात बिना चिन्तन के समझ मे नही आ सकती ।[2]

उसने जीव को परमार्थत. ब्रह्म का ही अश माना है। ब्रह्म के साथ एक होने के लिये पृथक् सत्ता अथवा अहभाव का नाश आवश्यक है :

एकहि ते दुइ होइ दुइ सो राज न चलि सकै ।
बीच तें आपुहि खोइ मुहम्मद एकै होइ रहु ।[3]

वह अपने आपको ही सृष्टि के दर्पण मे देख रहा है :

आपु आप चाहसि जो देखा, जगत साजि दरपन कै लेखा ।[4]

कवि की दृष्टि मे नमाज़, शरीयत, तरीकत, मारिफत तथा हकीक़त ही प्रेमपथ के महत्वपूर्ण अंग है । उसने आदम के अल्लाह से विछोह के दुःख को साधारण जीव के वियोग का दु ख मानकर इस्लामी कल्पना पर सूफीमत की प्राण-प्रतिष्ठा कर दी है । तादात्मय हो जाने पर सब प्रकार की दुविधा और भेद-भाव लुप्त हो जाते हैं :

तहा न मीचु न नीदु दुख रह न देह मां रोग ।
सदा अनंद मुहम्मद सब सुख माते (मौन ?) भोग ।[5]

शेख फरीद ने अपने श्लोको (दोहों) में परमात्मा, जीवात्मा तथा विरह

---

१. जायसी-ग्रन्थावली (अखरावट) डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६५३ ।
२. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृ० ७७ ।
३. जायसी-ग्रन्थावली (अखरावट), डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६५९ ।
४. चित्ररेखा, जायसी, सपादक, डा० शिवसहाय पाठक, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी-१, द्वितीय संस्करण, पृ० ९७ ।
जायसी ग्रन्थावली, (आखिरी कलाम), डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ७०८ ।

आदि के विषय मे बहुत कुछ लिखा है। उसने शरीयत अथवा कर्मकाण्ड की भी चर्चा की है। परमात्मा को अन्तर्यामी तथा सर्वशक्तिमान मानते हुए कवि कह रहा है :

फरीद जगलु जंगलु किआ भवहि बणि कडा मौडेहि।
फमी रबु हिआलीऐ जगलु किआ ढढेहि।[१]

उस परमात्मा को जगलो मे प्राप्त करने के लिए भटकना व्यर्थ है। क्योकि वह मानव-हृदय मे ही निवास करता है। दैन्य, धर्म तथा शील को धारण करने वाले ही वास्तव मे परमेश्वर के सच्चे साधक होते है।[२]

जीवात्मा को केवल एक परमात्मा का ही भरोसा है। तालाब के समान इस संसार मे निवास करने वाले पक्षी की भाति उसे फसाने के लिये माया रूपी पच्चास जाल है :

सरवर पखी हेकडो फाहीवाल पचास।
रहु तनु लहरी गुणु तिया सचु तेरी आस।[३]

विरह को प्रधानता देते हुए कवि का कथन है कि विना विरह के यह हृदय श्मशान के समान है :

विरहा विरहा आखीये विरहा तू सुलतान।
फरीदा जितुतनि विरहु न उपजै सो तनु जाणु मसान।[४]

वह हृदय की स्वच्छता को सर्वोपरि मानने वाला है उसने धन-सग्रह तथा विलासमय जीवन को साधक के लिये वर्जित माना है। साधक को 'नफ़्स' के प्रलोभन मे न फंसकर सरल जीवन व्यतीत करना चाहिये :

रूखी सूखी खाइ के ठण्डा पानी पीऊ।
फरीदा देखि पराई चोपडी ना तरसावे जीऊ।[५]

इसके साथ ही उसने शरीयत या कर्मकाण्ड की चर्चा करते हुए वज़ू तथा नमाज़ की भी महत्ता प्रकट की है :

---

१. शेख फरीद जी दी बाणी, संपादक, साहिब सिंह, प्रकाशक, लाहौर बुक शाप, घंटाघर, लुधियाना (१९४९), पृ० ६४।
निवणु सु अखरु खवणु गुणु जिहवा मणिआ मंतु।
ऐत्रै भैडे वैस करि तावसि आवी कंतु—जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३०३।
३. शेख फरीद जी दी वाणी, पृ० १३२।
४. वही, पृ० ७३। ५. वही, पृ० ६९।

उट्ठ फरीदा ऊजू माजि सुबह निवाज गुजारि,
जो सिरु सांई ना निवै, सो सिस कपि उतारु ।[१]

उसका कहना है कि साधक का प्रेम परमात्मा के प्रति लोभरहित होना चाहिये । उसकी कविता मे स्त्री जीवात्मा का और पुरुष परमात्मा का प्रतीक है ।[२]

यारी साहब ने ज्योति-स्वरूप परमात्मा के विषय मे लिखा है कि वह प्रत्येक घट मे व्याप्त है । अड मे ब्रह्माण्ड समाया हुआ है अत उसकी खोज हृदय-मे ही की जा सकती है

हेली जोति सरूपी आतमा घट घट रहो समाय हेली ।
परमत तुम न भाव नो हेली नेकु न इत उत जाय हेली ।
रूप रेख का भरवौ हेली कोटि सुर प्रकास ।
अगम अगोचर रूप है कोऊ पावै हरि को दास ।
+ + +
कहेइ यारी घट ही मिलो जाकह खोजत दुरी है ।
आठ पहर नीरखत रहो, रहेली सन्मुख सदा हजूर हेली ।[३]

उसका प्रकाश करोड़ो सूर्य के समान है । इस अलख एव अगम्य को कोई विरला साधक ही पा सकता है .

रूप रेख बरनो कहा, कोटि सूर परगास ।
अगम अगोचर रूप है, कोउ पावै हरि को दास ।[४]

इस प्रकार उसका साधक उसे आठो पहर स्मरण करता रहता है क्योकि जीते जी उसका स्मरण करने से ही कल्याण-प्राप्ति होती है .

बिन बदगी इस आलम मे खाना तुझे हराम है रे ।
बदा करै सोइ बंदगी, खिदमत मे आठो जाम है रे ।
यारी मौला बिसारि के, तू क्या लागा बेकाम है रे ।
कुछ जीते बंदगी कर ले, आखिर को गौर मुकाम है रे ।[५]

नासूत, मलकूल, जबरूत तथा लाहूत आदि लोकों के विषय मे उसका कथन है :

सूली के पार मेहर परेवा, मलकूत जबरूत लाहूत तीनों ।
लाहूत सेती नासूत है रे, हाहूत के रस मे रंग भीनो ।[६]

---

१. शेख फरीद जी दी वाणी, पृ० ९५ ।
२. क्यू-क्यूं-क्यूं मैंडे सजना क्यू ।
मेतन जोबन तो कू सज्यो, सब रस रस रस यूं ।
—जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, प० ३०४ ।
३. यारी साहब के पद, काशी नागरी प्रचारिणी सभा की हस्तलिखित प्रति से ।
४. वही । ५. वही । ६. वही ।

कवि ने फारसी की वर्णमाला के क्रम मे अपने (अलिफनामा) मे उपदेश तथा नीति सम्बन्धी बातें कही है, उसका कहना है·

आलोक येक देहु अनेका आदि अन्त केरी एकै एक।
इन्ह मन मे यमीता मा त्यागी, आबा मेटी चरनमसी लागी।
हमजा नरहरि सुमिरन करै, बीनु प्रयास भवसागर तरै।
जीम जगपति ही दैये रापहु, हे हलीम होय नरहरि भापहु।[1]

एक एक का आलोक ही अनेक रूपो मे प्रकट हो रहा है। साधक को चाहिये कि वह मन की ममता का त्याग करके, अहं को नष्ट करके स्वय को उसके चरणो मे लगा दे। इस प्रकार साधक बिना प्रयास ही नरहरि का स्मरण भी करके भवसागर को पार करता । उस जगपति का हृदय मे विनयपूर्वक ध्यान करना ही वाछनीय है।

पेमी ने अपने ग्रन्थ 'पेम परकाश' मे सूफी-परम्परा के अनुसार खुदा एव रसूल की स्तुति अथवा वन्दना की है। ईश्वर के विषय मे उसका कथन है कि मदिर एव मस्जिद मे केवल उसी की ज्योति प्रतिभासित हो रही है। हिन्दू तथा मुसलमानो मे वह एक रूप से ही समाया हुआ है

पेमी हिन्दू तुरक मे, हर रग रहो समाइ।
देवल और मसीत मे, दीप एक ही भाइ।[2]

कवि का कथन है कि जहां प्रेम है वही विरह है जहा सुख है वही दु:ख है तथा जहा फूल है वही कांटा भी है·

जहां पीत तहु विरह है, जहा सुख-दुख देख।
जहां फूल तहां काट है, जहां दरब तह सेखा।[3]

बुल्लेशाह ने उस परमात्मा का नूर सारे ससार मे व्याप्त माना है। उसका कथन है:

चे चानणा बुल्ल जाहानादां तू। तेरे आसरे होइ विवहार सारा।
बेइ सभाण की आंखयो देखहा है, तुझे सूझता चानणा औ अध्यायाा।[4]

संसार को नाशवान् समझकर वह उस प्रभु के चरणो मे प्रेम बढाने की चेतावनी देता है। इस क्षणिक जीवन मे उसका स्मरण करके ही आवागमन मिट सकता है·

---

१. अलिफनामा, काशी नागरी प्रचारिणी सभा (अपूर्ण प्रति)
२. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २४०। ३. वही, पृ० २४०।
४. बुल्लाशाह की सीहर्फी, खेमराज श्रीकृष्ण दास, बबई, सं० १९६४।

करले आज करनदी वेला, बहुरि न होसी आवन तेरा ।
साथ तेरा चल चल्ल पुकारे ।[१]

साधक को उस प्रभु का विरह सदा सताता रहता है। विरही को कभी भी आराम नही मिलता :

रात दिनें आराम न मैंनूं, खावै विरह कसाई नू ।
बुल्लेशाह धृग जीवन मेरा, जौ लग दास दिखाई नू ।[२]

प्रेम को महत्ता देते हुए कवि ने एक 'काफी' मे कहा है :

अब हम गुम हुए गुम हुए, प्रेम नगर के शहर,
अपने आपनू सोध रहा हु न सिर हाथ न पैर ।[३]

इस प्रेम-पाश मे जब कवि का हृदय उलझ जाता है तो उसे न अपना-जैसा कोई रोगी दिखाई देता है और न ही इससे छुटकारा देने वाला कोई वैद्य ही मिलता है। वह बेचैन होकर पुकार उठता है .

हम बे कैद मन बे कैद, ना रोगी ना वैद्य ।
ना मैं मोमन ना मैं काफ़र, ना मुल्ला न सैद ।[४]

दीन दरवेश ने अपनी कुडलियो तथा दोहो मे 'नफ़्स' तथा सासारिक मोह-ममता के त्यागार्थ प्राणी को सचेत किया है । उसका कहना है कि केवल प्रभु-नाम का स्मरण करने से ही जीवन सफल होता है और शेष भौतिक पदार्थ यही धरे रह जाते है अतः क्षणिक वस्तुओ के स्वामी को कभी अहकार नही करना चाहिए ।

धरा रहे धन माल, होयगा जगल डेरा ।
कहै दीन दरवेश, गर्व मत को गवारे ।[५]

मानव का जीवन क्षणिक है जैसे बादल की छाया । केवल धनोपार्जन में समय व्यतीत करना अपने जीवन को निष्फल बनाना है :

माया माया करत है, खरच्या खाया नाहिं,
सो नर ऐसे जाहिंगे, ज्यों बादर की छाहिं ।[६]

इस संसार में सभी उस परमात्मा के स्वरूप है अतः न कोई बड़ा है और न

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २४२ ।
२. वही, पृ० २४२ ।
३. काफियां बुल्लेशाह, प्रकाशक, भाई मेहर सिंह एण्ड संज, बाजार माई सेवां, अमृतसर, पृ० ६७ ।
४. वही, पृ० ६८ ।
५. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० २४४ ।
६. वही, पृ० २४४ ।

कोई छोटा। हिन्दू तथा मुसलमानों में कोई अन्तर नहीं है :

हिन्दू कहे सो हम बडे मुसलमान कहे हम्भ।
एक मूग दो फाड़ हैं कुण जादा कुण कम्भ।[1]

कवि नज़ीर ने ईश्वर को सर्वव्यापक मानकर उसका स्मरण करने की बात कही है

जिस सिम्त नज़र कर देखे है, उस दिलबर की फुलवारी है,
कहीं सब्ज़ी की हरियाली है, कहीं फूलों की गुलकारी है।
हर आन हसी पर आन खुशी, हर वक्त अमीरी है बाबा।
बस आप ही वह दातारी है, और आप ही वह भडारी है।[2]

ऐसे ईश्वर की उपलब्धि के लिए उसने प्रेम को ही वास्तविक माना है। उसी की धारणा है कि उसका सौंदर्य सबको वशीभूत करने वाला है :

हम चाकर जिसके हुस्न के है, वह दिलबर सबमें आला है।
उसने ही हमको जी बख्शा, उसने ही हमको पाला है।
दिल अपना भोला भाला है, और इश्क बडा मतवाला है।
क्या कहिए और नज़ीर आगे, अब कौन समझने वाला है।[3]

द्वैतभाव को छोड़कर ईश्वर से तादात्म्य स्थापित करने की भावना को वह अत्युत्तम मानते हुए कहता है :

जो मरना मरना कहते हैं, वह मरना क्या बतलाए कोई।
बां जो हर बाहें खोल मिले, सब अपनी-अपनी छोड दुई।[4]

वह ईश्वर एक होते हुए भी अनेक है और फिर भी यह आत्मा उसके विरह मे तड़पती रहती है :

ये एकताई, ये यकरगी, तिस ऊपर यह कयामत है।
न कम होना, न बढना और हजारो घट मे बट जाना।[5]

संसार के सम्बन्ध मे कवि का कथन है कि यह मिथ्या है। वास्तव मे यह ससार एक मृगतृष्णा है :

गुल शोर बबूला आग हवा और कीचड़ पानी मिट्टी है।
हम देख चुके इस दुनिया को यह धोखे की सी टट्टी है।[6]

इस कारण प्रेमी उस प्रभु की प्रसन्नता पर ही आश्रित होकर उसके ध्यान

सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २४४। २. वही, पृ० २४५-२४६।
३. वही, पृ० २४६। ४. वही, पृ० २४६।
५. जायसी-परवर्ती हिन्दी सूफी कवि और काव्य, पृ० ३१३।
६. वही, पृ० ३१५।

मे समाधिस्थ होता है :

और वतन पूछ हमारा । तो या सुन रख बाबा ।
या गली दोस्त की या यार के घर आगना ।[१]

अब्दुल समद ने ईश्वर, गुरु तथा सच्चे साधक के लक्षण बताकर बाह्य पूजोपासना की व्यर्थता सिद्ध की है । उसने ईश्वर को सर्वव्यापक मान कर उसे हृदय मे भी अवस्थित माना है । चेतनावस्था के समय ही प्रेमी उसका दर्शन कर सकता है :

साधो देखो अपने मांही, घर मे पडी काकी परछांई
गुर लछिया से ध्यान न आया,
एक है एक बहुत हम गाया ।
आख खुली जब देखा 'मस्ता'
वह है, वह है साई ।[२]

परमात्मा का स्मरण उत्तम समझकर उसने अनहदनाद की चर्चा के अनन्तर 'सोऽहं' का भी वर्णन किया है । जैसे 'फना' के पश्चात् 'बका' की अवस्था मे साधक ईश्वर मे ही अवस्थित हो जाता है, वैसे ही अनहदनाद के सुनाई देने के अनन्तर तादात्म्य की स्थिति उपस्थित होती है :

अनहद मिटी ज्ञान मिट जावे, सो ह पूरन जब फिर जावे ।
या से आगे कही वही मस्ता, एक ही एक लखाई ।[३]

तादात्म्य हो जाने पर ही 'मै' का विनाश हो जाता है :

मोहन मेरा है नियरे, हर देखन मे नही आवे रे ।
हर आवे हम जावे साधू, हम आवे हर जावे रे ।[४]

उस प्रभु का नाम स्मरण करते हुए गुरु के पथ-प्रदर्शन की भी आवश्यकता पडती है :

हर हर करे औ गुरु को देखे उसको मिलता प्यारा है ।
नाम निरंजन का मधु पीवे, ध्यान को मधुवारा है ।[५]

सच्चा साधक जाति तथा वर्ण के भेद-भाव से ऊपर उठकर केवल उसी परम-सत्ता की उपासना मे लीन रहता है :

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३१४ ।
२. सूफी काव्य- संग्रह, पृ० २५३-२५४ ।
३. जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी कवि और काव्य, पृ० ३१६ ।
४. वही, पृ० ३२१ ।
५. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० २५२ ।

ना हम हिन्दू ना हम तुर्की, ना हम बालक ना हम पुर्खा ।
सब मे हम है सब है मो मे, जो जाने सो पूरे गुर का ।[1]

बाह्य पूजोपासना की अपेक्षा हृदय की शुद्धि को अनिवार्य मानते हुए उसका कहना है :

अपनी कथा जाने नही, पडित हुआ तो क्या हुआ ।
जोगी गोसाई सेवडे, कपडे रगे है गेरुये ।
मन को तो रगते ही नही, कपडे रगे तो क्या हुआ ।[2]

बजहन ने ईश्वर तथा गुरु की महिमा के पश्चात् प्रेम-मार्ग की उत्कृष्टता पर प्रकाश डाला है । वह ईश्वर एक होते ही अनेक है । उसके विषय मे बजहन कुछ कहने मे असमर्थ है । सागर बूद मे समाया हुआ है :

अलिफ एक बहुरगी साई, हर घट में बाकी परछाही ।
जहा देखो तहा रूप है न्यारा, ऐसा है बहुरगी प्यारा ।।
बजहन कहै तो क्या कहै, कहने की नहि बात ।
सिन्धु समानी बिन्दु मे अचरज बडा देपात ।।[3]

गुरु-विहीन साधक उस परमात्मा के रहस्य को जान नही पाता :

बे बिनु गुरू कोई भेद न पावै, धरनी से अकास को धावै ।
पहिले प्रीत गुरु से करै, प्रेम डगर में तब पगु धरै ।[4]

प्रेम का महत्व प्रकट करते हुए कवि का कथन है :

प्रेम की नदी गहरी, जो कोउ उतरे पार ।
आशिक और माशूक मे, रह्यो कौन विचार ।[5]

प्रेम का बाण लगते ही साधक सासारिक बन्धनों के भझाल से अपने आप को मुक्त पाता है :

जाके हिरदे लगत है, बजहन प्रेम का बान ।
छूट जात है सब कुटुम, भूल जात है ग्यान ।[6]

हिन्दी के इन सूफी मुक्तक कवियो के अतिरिक्त फकीरा तथा सरमद आदि भी अत्यन्त प्रसिद्ध हैं ।

(ख) निष्कर्ष

मुक्तक-काव्य तीन प्रकार के है :

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३१६ ।
२. वही, पृ० ३१६ । ३. वही, पृ० ३२२ ।
४. वही, पृ० ३२२ ।
५. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २५५ । ६. वही, पृ० २५५ ।

१. सिद्धान्त निरूपक २. भाव मुक्तक तथा ३. उपदेशपरक मुक्तक।

सूफी-सिद्धान्तों को इस्लामी मान्यताओं के आधार पर प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न किया गया है। भाव मुक्तकों में प्रेम तत्व को प्रमुखता दी गई है तथा ईश्वर के सान्निध्य की अनुभूति के साथ कुछ स्थलो पर विरहानुभूति भी व्यक्त हुई है। उपदेशात्मक मुक्तक सूफी-प्रेम के महत्व का प्रदर्शन करते है तथा उस की ओर आकृष्ट होने की प्रेरणा देते है।

कश्मीरी सूफी मुक्तको मे भी यही तीनो प्रकार उपलब्ध होते है किन्तु वहा अन्तिम दो की बहुलता है और मुक्तको में सिद्धान्त-निरूपण की अपेक्षा प्रेरणा देने का स्वर प्रबल रहा है।

तीसरा अध्याय

कश्मीरी और हिन्दी सूफी-प्रबन्धकारों पर तुलनात्मक दृष्टि

१. प्रबन्ध-काव्य

यद्यपि साधना-पद्धति की समता और लक्ष्य की एकता के कारण कश्मीरी और हिन्दी-सूफी काव्यो की प्रवृत्तियो मे कोई विशेष अन्तर प्रतीत नही होता, फिर भी उन मे वातावरण और परिस्तिथियो के भेद के कारण पर्याप्त अन्तर भी मिल जाता है। यहा कश्मीरी और हिन्दी, दोनो ही प्रकार के सूफी-काव्यों की सामान्य-विशेषताओ का हम एक-साथ उल्लेख करेंगे।

सूफी-प्रबन्धकाव्यों के कथानक प्रकार

आलोच्यकाल में जिस प्रकार की कथाएं कश्मीरी तथा हिन्दी-साहित्य में समान रूप मे प्रचलित रही, स्थूल रूप मे वे निम्नलिखित कोटि मे रखी जा सकती है :

१. ऐतिहासिक या पौराणिक आधार पर आश्रित कथाएं।
२. फारसी की कहानियां।
३. प्रचलित लोक-कथाएं।
४. कल्पना-प्रसूत कथाएं।

१. ऐतिहासिक या पौराणिक आधार पर आश्रित कथाएं

ऐतिहासिक आधार पर जो सूफी-काव्य लिखे गये, वे पूर्णतः ऐतिहासिक नहीं कहे जा सकते। वे एक प्रकार के मिश्रित कथानक से सम्पन्न हैं। घटनाओ मे काल्पनिक घटनाओ का भी प्रचुर समावेश हुआ है और इसका मुख्य कारण ऐतिहासिक घटनाओ को सूफी रंग मे रंगना था। कश्मीरी कवि पीर

अज़ीज अल्लाह हक्कानी ने 'मुमताज़-बेनजीर'[1] तथा हिन्दी के सूफी-कवि जायसी ने 'पद्मावत' के उत्तरार्द्ध मे ऐतिहासिक घटनाओ को उनके विशुद्ध रूप मे रखने का प्रयत्न किया है।

२. फारसी की कहानियां

फारसी की कहानियो मे कथावस्तु की एक पृथक विशेषता रही है। इस विदेशी भाषा के साहित्य द्वारा ही सर्वप्रथम सूफीमत के प्रेम-सम्बन्धी सिद्धान्तो का प्रचार हुआ। हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्यकार प्राय मुसलमान है। इसे आरम्भ करने वाले तो मुसलमान ही है। इसकी प्रारम्भिक अवस्था मे उर्दू का प्रचार न हो पाया था। इस कारण मुसलमानी शासन की एव कट्टर मुसलमानो की भाषा फारसी थी। हमारे ये कवि भी फारसी जानते होगे।[2] 'यूसुफ जुलेखा' जैसी इस्लामी व शामी परम्परा को कथाओ को भी फारसी के कवि जामी ने अपनाया था। 'लैला मजनू' एव 'शीरी-खुसरो' को भी फारसी-साहित्य मे विशेष स्थान मिला था।

फारसी-साहित्य मे उपलब्ध इन सूफी-कथानको को आधार बनाकर ही कश्मीरी सूफी-कवियो ने 'लैला-मजनू', 'शीरी-खुसरो', 'यूसुफ़ जुलेखा', 'वामीक अज़रा' तथा 'गुलनूर-गुलरेज़' आदि सूफी-काव्यो की रचना की है। ये कथाए ऐतिहासिक श्रेणी मे नही आ सकती और न इन्हे पौराणिक श्रेणी मे ही रखा जा सकता है क्योकि फारसी पुराणो से भी ये ग्रहीत नही है। अपने आरम्भिक काल मे ये काल्पनिक कथाएं थी। साहित्य मे उन्हे स्थान मिला और अन्ततः लोक-जीवन मे वे इतनी घुल-मिल गई कि उन्हे लोक-कथाओ का स्तर प्राप्त हो गया। कश्मीरी कवियो ने फारसी लोक-जीवन मे विख्यात इन कथानको को केवल आधार-मात्र बनाया है और अपनी रुचि के अनुसार यथास्थान कुछ परिवर्तन भी किया है। 'शीरी-खुसरो, तो 'शीरी फरहाद' की कथा से थोडा अन्तर रखती है। यही स्थिति अन्य प्रबन्ध-कथानको के सम्बन्ध मे भी विद्यमान है। हिन्दी-साहित्य में केवल निसार की 'यूसुफ जुलेखा' शीर्षक रचना ही इस कोटि के अन्तर्गत आती है।

३. प्रचलित लोक-कथाएं

हिन्दी के सूफी-कवियो में मौलाना दाऊद की 'चदायन', कुतबन की 'मृगावती', जायसी की 'पद्मावत' तथा मंझन की 'मधुमालती' आदि कथाए

---

१. हक्कानी ने स्वयं इस कथा को इतिहास-प्रसिद्ध कहा है किन्तु इसके स्रोत का उल्लेख नहीं किया है। द्रष्टव्य—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० ५।
२. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० १८१।

इसके अंतर्गत आती है। हिन्दी के कवियो ने अधिकतर हिन्दू-समाज मे प्रचलित लोक-कथाओ का आश्रय लिया। जनता मे प्रचलित कथाओ को उन्ही की ठेठ भाषा मे कहकर इन कवियो ने अपना जन-कवि होना सिद्ध कर दिया है।[1]

कश्मीरी सूफी-कवियो ने कश्मीर के लोक-जीवन मे प्रचलित लोक-कथाओ को बहुत कम प्रश्रय दिया है। इन मे केवल कश्मीरी सूफी-काव्य 'हियमाल' ही इसका अपवाद है। कश्मीरी प्रबन्धकार पीर मही-उद्-दीन 'मिसकीन' ने पजाब मे प्रचलित लोककथा 'सोहनी मेयवाल' तथा हक्कानी ने 'चन्द्रवदन' के लिये दक्षिण के कवि मुकीमी के 'चन्द्रवदन व माहियार' तक को अपने काव्य का आधार बनाया।

४. कल्पना-प्रसूत-कथाएं

कई कवियो ने काल्पनिक आधार को अपनाकर काव्य-रचना की जिन मे कुछ-कुछ चमत्कारो की भी प्रचुरता है। इसके अन्तर्गत कश्मीरी सूफी कवि मौलवी सदीक अल्लाह का 'बहराम व गुल अन्दाम' तथा मकबूल शाह क्रालवारी का 'गुलरेज' आता है। हिन्दी-सूफी-कवियो मे उसमान की 'चित्रावली', शेख नबी की 'ज्ञानदीप', हुसैन अली की 'पुहुपावती', कासिमशाह की 'हस जवाहिर' तथा नूर-मुहम्मद की 'इन्द्रावती' आदि रचनाए इस कोटि मे आती है।

मसनवी पद्धति

जहां तक काव्य के बाह्याकार का प्रश्न है, सूफी-कवियो ने विशेष रूप से मसनवियो का ही सहारा लिया। मसनवी फारसी-साहित्य की एक काव्य शैली है। मसनवी-शैली वर्णनात्मक है और इस मे विशेषरूपेण कथा-साहित्य ही लिखा गया है। यह अपने-आपमे पूर्ण ग्रन्थ होता है। ग्रन्थारम्भ मे ईश्वर, पैग़म्बर के मित्र, कवि के गुरु और समसामयिक राजा की प्रशसा रहती है। तदनन्तर कवि रचना के ध्येय को सुस्पष्ट करता है। इसके छन्दो मे प्रत्येक पद अपने आप मे स्वतन्त्र और पूर्ण होता है। वह तुकान्त होता है। साधारणतया इस मे छन्द-परिवर्तन नही होता। ग्रन्थ-रचना का समय भी दिया जाता है। इस शैली में शीर्षको के नाम प्रसंगानुकूल फारसी मे दिये जाते है।

प्रबन्ध-काव्य की रचना सर्गबद्ध होती है। उसमे शृगार, शान्त एव वीर रस में से कोई एक रस प्रधान होता है। धर्म, अर्थ, काम एव मोक्ष मे से एक की प्राप्ति उनका लक्ष्य होता है। प्रारम्भ मे आशीर्वाद, कही खलो की निन्दा या सज्जनो का गुण-वर्णन होता है। सर्ग मे एक ही छन्द चलता है किन्तु अन्तिम छन्द भिन्न होता है। उसमे प्रकृति-चित्रण होता है तथा प्रबन्ध-

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३२७।

काव्य का नामकरण घटनाओ या पात्र-विशेष के नाम के आधार पर होता है ।[1]

सूफी-प्रेमाख्यानो की रचना भारतीय चरित-काव्यो की सर्ग-बद्ध शैली मे न होकर फारसी मसनवी के ढग पर हुई है ।[2] इस भाति कश्मीरी तथा हिन्दी के आलोच्यकाल के सभी सूफी-प्रेमाख्यान सर्ग-बद्ध शैली की अपेक्षा मसनवी ढग पर लिखे गये मिलते हैं । फारसी की मसनवी नामक रचनाओ को यहा की प्रबन्धात्मक रचनाओ से अधिक भिन्न नही ठहराया जा सकता ।[3] हिन्दी प्रेमाख्यानो के आरम्भ मे कवि ईश्वर की वदना करते है, रसूल की तारीफ करते है, गुरु का उल्लेख करते है और शाहेवक्त का गुणगान करते है ।[4] ये भारतीय प्रबन्धकाव्यो के उन मगलाचरणो का स्मरण दिलाती है जिनका निर्माण कदाचित् केवल विघ्न-निवारण अथवा कार्य-सिद्धि के उद्देश्य से आरम्भ मे ही दिया जाता था ।[5]

कश्मीरी सूफी-कवियो मे से अधिकाश ने अपने गुरु का उल्लेख नही किया है । शाहेवक्त की प्रशसा भी किसी ने नही की है । वे मसनवी शैली पर लिखे गये है और उनके बीच-बीच मे गजलों का भी प्रयोग हुआ है ।

हिन्दी और कश्मीरी दोनो ही प्रकार के सूफी-काव्य एक ओर जहा मसनवी शैली को प्रमुखता देते है, वहा दूसरी ओर वे वस्तु-योजना मे भारतीय प्रबन्ध-काव्यो की वर्णन-शैली का भी स्पर्श करते है । वस्तु-विभाजन वे घटनाओ के आधार पर करते है और उन्हे घटना से सम्बन्धित नाम देकर उससे शीर्षक बना लेते हैं । सामान्यतः ये शीर्षक लम्बे और वर्णन-सार की भाति होते है । 'चंदायन' और कश्मीरी सूफी-काव्य 'गुलरेज़', 'गुलनूर-गुलरेज' तथा 'हियमाल' आदि में इसी प्रकार के शीर्षक लगाए गए है जबकि 'पद्मावत' में छोटे शीर्षक दिये गये है । कुछ सूफी-काव्य ऐसे भी है जिनकी कथावस्तु का विभाजन ही नही किया गया है और आरम्भ से अत तक कथा निरन्तर चलती रहती है । पीर मही-उद्-दीन 'मिसकीन' का 'लैला-मजनू' काव्य इसी प्रकार का है ।

इससे स्पष्ट है कि कश्मीरी सूफी-काव्यों में कथा-विभाजन कवियो की रुचि पर निर्भर रहा है जबकि हिन्दी मे 'मधुमालती'[6] को छोड़कर प्रायः

---

१. द्रष्टव्य—साहित्य दर्पण, विश्वनाथ, सपादक, शालग्राम शास्त्री, प्रकाशक मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली (सन् १९५६ ई०), पृ० २२५ ।

२. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० ८२ ।

३. हिन्दी के सूफी-प्रेमाख्यान, पृ० १०९ ।

४. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० २५७ ।

५. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० ११०-१११ ।

६. द्रष्टव्य—मधुमालती, सपादक, डा० माताप्रसाद गुप्त ।

सभी सूफी-काव्यो की कथावस्तु भिन्न-भिन्न शीर्षको के अतर्गत विभाजित है ।

हिन्दी के सूफी-कवियो पर वस्तु-सगठन की दृष्टि से अपभ्र श के चरित-काव्यो का भी प्रभाव पडा है और इन विभाजित घटनाओ को भी 'कड़वकों'[1] मे बांटा जा सकता है । किसी एक घटना-प्रसग मे कितने कडवको का समावेश किया जाये, यह भी वर्ण्य-विषय को देखते हुए कवियो ने अपनी रुचि के अनुसार ही किया है । आरम्भ के हिन्दी-सूफी-काव्य विशेषत चन्दायन तथा पद्मावत आदि को (कडवको) में ही विभाजित माना जाता है, परन्तु कश्मीरी सूफी-काव्य अपभ्रंश से प्रभावित नही है, फिर भी घत्ता आदि देने की प्रक्रिया हिन्दी-सूफी-काव्यों की भाति उन में भी दिखाई पड़ती है ।

वस्तु का विकास

इन प्रबन्धो की कथावस्तु को प्रारम्भ, प्रयत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति तथा फलागम आदि पांच भागों मे विभक्त किया जा सकता है । कथानक की भूमिका के प्रारम्भ मे निस्सन्तान राजा की पुत्रोत्पत्ति, उसके लालन-पालन तथा युवा-वस्था तक पहुंचने का वर्णन होता है ।

इस भूमिका के उपरान्त स्वप्न-दर्शन, गुण-श्रवण, चित्र-दर्शन तथा साक्षात्-दर्शन के द्वारा नायिका के रूप-सौंदर्य पर आसक्त होना कथानक प्रारम्भ कहलाता है । तत्पश्चात् नायक की ओर से नायिका को पाने का प्रयत्न आरम्भ हो जाता है और यही से प्रयत्नावस्था आरम्भ होती है । नायक की मार्ग की कठिनाइयो, राक्षसों या देवो से युद्ध तथा प्रासंगिक कथाओ के समावेश से कथा का विस्तार होता है । नायक के द्वारा नायिका के नगर मे पहुचने पर प्राप्त्याशा स्थान पाती है किन्तु आकस्मिक दुर्घटना, राज्याज्ञा तथा कोप आदि से नायक-नायिका का विछोह हो जाता है । दोनो प्रेमी एक-दूसरे से दूर जा पडते है तथा उनका मिलन दुर्लभ हो जाता है । ऐसे ही स्थलों पर नायक को बाह्य सहायता प्राप्त होती है और नियताप्ति की अवस्था आ जाती है ।

हिन्दी-काव्यो मे आश्चर्य-तत्वो के सहारे कथानक उद्देश्य की ओर मुड़ता है और नायक-नायिका मिलन मे ही फलागम की पूर्ति होती है किन्तु कश्मीरी-सूफी प्रबन्धों मे साधारणत. कथानक का अन्त वियोग में ही होता है और स्वर्ग में ही नायक-नायिका के मिलने की भावना को फलागम के रूप मे अपनाया जाता है ।

प्रासंगिक कथाओं का समावेश

इन प्रबन्ध-काव्यो मे अधिकारिक कथा के साथ-साथ प्रासगिक कथाओ की

---

१. द्रष्टव्य—चंदायन की भूमिका, डा० परमेश्वरी लाल, पृ० २२-२४ ।

सयोजना हुई है। नायक की भाति नायक के मित्र की भी प्रेम-कहानी चलती रहती है। नायक की फल प्राप्ति के अनन्तर उसके मित्र का मिलन भी उसकी प्रेमिका से हो जाता है। 'मृगावती' में राजकुमार एवं रुकमिन की कथा, 'मधुमालती' मे प्रेमा एव ताराचन्द की कथा तथा 'चित्रावली' मे सुजान-कौलावती की कथा प्रासगिक कथा के रूप मे आई है। कश्मीरी प्रवन्ध-काव्य 'मुमताज बेनजीर' मे मुमताज के मित्र वजीर पुत्र दमसाज की कथा भी इसी प्रकार की प्रासगिक कथा है। 'गुलरेज़' मे मासूम शाह तथा नाज़मस्त की कथा को सहकारी कथावस्तु कहा जा सकता है। 'रैणा व जेबा' मे कई अतर्कथाओ का समावेश किया गया है। घटनाओ का सगुम्फन निपुणता मे हुआ है। मिलन के अनन्तर भी इनका कथानक आगे बढता है जिस मे कवि को सयोग वर्णन करने का अवसर मिलता है।

इन तीन प्रवन्ध-काव्यो के अतिरिक्त अधिकाश कश्मीरी प्रबन्धो मे प्रासगिक कथा का समावेश नही किया गया है। वहा मुख्य या आधिकारिक कथा ही तीव्र गति से चलती है और फलागम की ओर उन्मुख होती है। प्रासगिक कथाओं की अपेक्षा उन मे ऐसे सहायक पात्रो की योजना की गई है जो नायक के प्रयत्न को नियताप्ति तक पहुंचाते हैं। इनकी स्थिति ठीक वैसे ही है जैसे 'पद्मावत' मे शिव-पार्वती या हनुमान द्वारा रत्नसेन को सहायता देने की स्थिति है।

मूल कथा के साथ सम्बन्ध

अधिकाश कश्मीरी सूफी-काव्यो मे प्रासगिक कथाओ के अभाव के कारण मूलकथा से उनके सम्बन्ध का प्रश्न ही नही उठता। हिन्दी-सूफी-काव्यो मे प्रासगिक कथाएं अवश्य समाविष्ट है और उनमे से अधिकाश पताका सदृश है। सूफी-कवियो ने प्रासगिक कथाओं मे भी प्रेम की ही अभिव्यंजना की है। फलस्वरूप उद्देश्य की दृष्टि से वे भी सूफी-सिद्धान्तो के अनुकूल ही सिद्ध होती हैं। प्रेम की व्यंजना के इन द्विविध रूपो से जहां एक ओर कथा की मार्मिकता बढती है, वहां प्रेम तत्व के विस्तार का भी सकेत मिलता है। ऐसे पताका नायक मुख्य साधक का भांति ही स्वयं भी प्रेम के साधक हैं और साधक की सहायता करते हुए स्वय भी सिद्धि प्राप्त करते है।

कश्मीरी के 'मुमताज़ बेनज़ीर', 'गुलरेज़' तथा 'रैणा व जेबा' काव्यों मे प्रासंगिक कथाओ का समावेश है और इन प्रासगिक कथाओं के नायक और नायिका भी हिन्दी-सूफी काव्यों की भांति एक ओर मुख्य साधक (नायक) की सहायता करते हैं और दूसरी ओर स्वयं भी सिद्धि प्राप्त करते है।

हिन्दी और कश्मीरी दोनो ही प्रकार के सूफी-काव्यों का प्रयोजन प्रेम की अभिव्यजना करना है। फलस्वरूप उनकी कथाओ मे भी एक प्रकार का सगठन-सम्बन्धी साम्य मिलता है। प्रेम का उद्‌भव, साधक की विविध कठिनाइयां, प्रेमिका से मिलन-सुख, वियोग तथा विरहानुभूति आदि को सभी सूफी-कवि प्रस्तुत करना चाहते है। इस लिये पात्र और घटना-प्रसगो के कतिपय अतरो के साथ इन सब की वस्तु-योजना समान ही दिखाई पड़ती है।

एक निश्चित प्रकार की वस्तु-योजना के कारण कथा सीधी गति मे आगे बढती है। जहा वर्णन विस्तार है, वहा वस्तु शैथिल्य दिखाई पडता है और जिन सूफी-काव्यो मे वर्णन-विस्तार नही है, वहा कथा मे गतिशीलता अधिक दिखाई पडती है। फारसी-कथा सीधी चलती है और उसकी घटनाओ के गुम्फन की प्रक्रिया सरल, सीधी तथा उत्तरोत्तर एक दिशा की ओर काव्य को आगे बढाने वाली होती है। कथावस्तु के अग्रसर करने के साथ ही साथ वर्णन विस्तार और चारित्रिक विशेषताओ का उदघाटन चलता रहता है। हिन्दी और कश्मीरी दोनो ही सूफी-काव्यो पर फारसी की कथा-पद्धति का प्रभाव पडा है अतः इनमे प्रबन्धवक्रता का सर्वथा अभाव है।

प्रत्येक सूफी-कवि ने अपनी रचना का निर्माण प्रबन्धकाव्य के नियमानुसार करने की चेष्टा की है। परिस्थितियो पर ध्यान देते हुए उन्होंने उन्हे कार्य-कारण के अनुसार स्थान दिया है और पूर्ण प्रबन्ध की दृष्टि मे उन मे काम लिया है। उन्हें न केवल अपने कथानकों के स्वाभाविक प्रवाह की गति देखनी पडी, किन्तु इसके साथ-साथ उन्हें यह भी विचार करना पडा कि अमुक घटना व घटनाये हमारे अंतिम उद्देश्य अर्थात् कथारूपक के आदर्श को किसी प्रकार विकृत या अगहीन तो नही कर देती।[1]

वर्ण्य-विषय

कश्मीरी-सूफी-काव्य लघु आकार वाले भी है तथा बृहत् आकार वाले भी है। दोनो मे ही मसनवी शैली का उपयोग किया गया है और वर्ण्य-विषय भी प्राय: समान है। वर्णन-विस्तार के आधार पर कश्मीरी सूफी-प्रबन्धकाव्यो के दो वर्ग बनाये जा सकते है। प्रथम वर्ग मे वे रचनाये आयेगी जिन मे वस्तु का वर्णन विस्तारसे प्रस्तुत किया गया है। इन मे 'मुमताज़ बेनज़ीर,' 'गुलरेज़' तथा 'रैणा व ज़ेबा' की गणना की जा सकती है। द्वितीय वर्ग मे उन सूफी-प्रबन्ध-काव्यो की गणना की जा सकती है जिन मे वर्णन-विस्तार अपेक्षाकृत कम

---

१. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० ९१।

और कवि का ध्यान कथावस्तु को ही गतिशील बनाने पर अधिक रहा है। अधिकाश कश्मीरी सूफी-रचनाये इसी वर्ग के अन्तर्गत आती है।

हिन्दी-सूफी-काव्यो की अपेक्षा इन में प्रेम की अभिव्यजना अधिक स्पष्ट है और उस में गूढता या रहस्यमयता उत्पन्न करने का प्रयास नही दिखाई पडता। इन मे कथानक भी अधिक गतिशील है। मसनवी शैली मे लिखे होने के कारण कथावस्तु के आरम्भ करने से पूर्व इन मे ईश्वर, गुरु, तत्कालीन बादशाह, कवि तथा कवि के मित्र आदि का उपयुक्त वर्णन प्रस्तुत किया गया है। कश्मीरी सूफी-

वर्णन के इस क्रम मे अधिक सतर्क नहीं हैं और वे गुरु, तत्कालीन बादशाह तथा अपने मित्रो आदि के परिचय देने मे भी अधिक रूचि प्रदर्शित नही करते। यही कारण है कि तत्कालीन बादशाह की चर्चा तो किसी ने भी नही की है। गुरु का उल्लेख भी कुछ ही सूफी-कवियो ने किया है। इन आरम्भिक वर्णनो का सम्बन्ध मूल कथावस्तु के साथ नही है। ये वर्णन केवल परम्परा-निर्वाह के बोधक-मात्र हैं।

मुख्य कथा के वर्णन-प्रसगो मे नायक-नायिका के माता-पिता का परिचय, उनका सन्तानाभाव, सताप-प्राप्ति के उपचार, सन्तानोत्पत्ति, ज्योतिषियो की भविष्य-वाणी, नायक की युवावस्था, नायिका के गुण-श्रवण, चित्र-दर्शन, स्वप्न-दर्शन अथवा प्रत्यक्ष-दर्शन से प्रेम का प्रादुर्भाव, मिलन के लिए आतुरता, पूर्व-रागजन्य विरह, नायक के मित्रो की सहायता, नायिका का परिचय, नायिका का नख-शिख-वर्णन, नायक के प्रति उसकी उत्सुकता, प्रेमी से भिन्न पुरुष से नायिका का विवाह, नायक के प्रति प्रेमनिष्ठता, नायक की साधना और कठिनाइया, मिलन और विरह तथा नायक-नायिका का एक-साथ निधन आदि-उल्लेखनीय है।

हिन्दी के सूफी-कथानको में नायक-नायिका मिलन के अनन्तर उनके सुख-मय जीवन का चित्रण या संयोग वर्णन भी किया गया है किन्तु कश्मीरी सूफी-काव्य मिलन के उपरान्त के जीवन के चित्रण मे अधिक रुचि नही दिखाते। वस्तुतः ऐसे सूफी-काव्य मिलन के उपरान्त ही समाप्त हो जाने के कारण सुखान्त कहे जा सकते है। 'गुलरेज', 'रैणा व ज़ेबा', 'बहराम व गुल अन्दाम', 'गुलनूर-गुलरेज़' तथा 'मुमताज़ बेनज़ीर' सुखान्त-सूफी-प्रबन्धों के उदाहरण हैं। अन्य कश्मीरी सूफी-काव्य दुखान्त है और वे नायक-नायिका के निधन के उपरान्त ही समाप्त होते है।

कश्मीरी तथा हिन्दी के 'यूसुफ जुलेखा' और हिन्दी के 'ज्ञानदीप' को छोड़कर शेष सभी सूफी-प्रबन्धों में नायिका की प्राप्ति का प्रयत्न नायक की ओर से ही होता है। नायक के इन प्रयत्नों मे विदेश-यात्रा, पर्वतों तथा समुद्रो की यात्रा

एव तूफानो आदि के सकटो मे जूझने आदि का भी वर्णन हुआ है। कश्मीरी सूफी-कथाओ का सम्बन्ध अधिकतर मिस्र, बसरा, बलख, रोम, यमन तथा चीन आदि दूरस्थ स्थानो के साथ दिखाया गया है। अत: नायक के लिए इन स्थानो की यात्रा अनेकानेक कष्टो का भोगना भी दिखाया गया है और परिणामस्वरूप इन कठिनाइयो के वर्णन मे विस्तार की भी कमी नही है।

अल्प विस्तार वाले कश्मीरी सूफी प्रबन्ध काव्यो मे भी वर्ण्य-विषय प्राय: वे ही हैं जो दीर्घ विस्तार वाले प्रबन्ध-काव्यो मे है। वस्तुत: इनमे प्रासगिक कथाओ का अभाव-सा है। फारसी-साहित्य की लघुकथाए ऐसे प्रबन्धकाव्यो की आदर्श हैं। वहा पर बडे-बडे प्रेमाख्यानो से लेकर छोटी-छोटी प्रेमाख्यायिकाए तथा अल्प विस्तार वाले प्रेमात्मक प्रसंग तक मसनवियो और गीति-काव्यो मे पाये जाते हैं।[1]

हिन्दी के सूफी-प्रेमाख्यान प्राय: अधिक विस्तार वाले हैं। इनके भी वर्ण्य-विषय प्राय. वे ही है जो ऊपर सकेतित किये गए है। इतना अवश्य है कि एक ओर तो उन मे वर्णन-विस्तार की प्रवृत्ति पाई जाती है, और दूसरी ओर उनमे प्रेम की गूढ़ाभिव्यजना भी उपलब्ध है। इन मे नैतिकता का स्वर भी मुखरित हुआ है और लौकिक-प्रेम की कीली पर घूमकर इन में आध्यात्मिक प्रेम की व्यजना भी प्रस्तुत की गई है।

वर्ण्य-विषय की दृष्टि से हिन्दी के कई सूफी काव्यो मे हिन्दू-जीवन और उसके लोकाचार का बड़ा व्यापक और विस्तृत वर्णन किया गया है। स्वयं 'पद्मावत' इसका साक्षी है। इसके अतिरिक्त नायक की मृत्यु पर नायिका का सती होना भी प्रदर्शित किया गया है। कश्मीरी-सूफी-काव्यो में नायक और नायिका प्राय: मुसलमान हैं और इसलिए उनके वैवाहिक या सामाजिक आचार सर्वथा भिन्न रूप मे प्रस्तुत किये गये हैं। 'हियमाल' को छोड़कर वहां नायक और नायिका की मृत्यु के उपरान्त सती होने की क्रिया भी नही दिखाई गई है अपितु कुछ मे तो नायक मृत्यु-स्थल पर मजार का निर्माण भी करवाया गया है। 'शीरी खुसरो' और 'लैला-मजनूं' तथा 'यूसुफ जुलेखा' आदि मे इस तथ्य को देखा जा सकता है।

हिन्दी के सूफी-काव्यो मे अविवाहिता कुमारियो की स्वच्छंद क्रीडा, पूर्व पत्नी की विरहावस्था तथा पूर्व पत्नी द्वारा प्रेषित वियोग-सदेश और नायक द्वारा प्रतिनायक के पराजय आदि का भी वर्णन हुआ है जबकि कश्मीर के सूफी प्रेमाख्यानों में न विवाह से पूर्व नायिका की अत्यधिक स्वच्छंदता का वर्णन है,

---

१. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा, पृ० १५३।

न पूर्व पत्नी की विरहावस्था का वैसा मार्मिक वर्णन है, जैसा जायसी ने नाग-मती का किया है।

हिन्दी के सूफी प्रबन्धकाव्यो मे अन्तर्जातीय विवाह का वर्णन कही भी नही हुआ है। नायक तथा नायिका दोनो ही सजातीय है, अर्थात् या तो वे दोनो हिन्दू हैं अथवा वे दोनो मुसलमान है। कश्मीरी-काव्य 'जेबा निगार' इस परम्परा से सर्वथा भिन्न रूप प्रस्तुत करता है।' 'ज़ेबा-निगार' मे ईश्वर का वरदान प्राप्त कर जब ज़ेबा के उत्पन्न होने पर ज्योतिष-विशारद ब्राह्मण कन्या के लक्षण देखते हुए उसके भविष्य के विषय मे किसी विधर्मी मुसलमान युवक के साथ विवाह होने की बात का परिचय पाता है, उस समय पिता को अपकीर्ति का अभास होकर चिन्ता सताने लगती है।[1] हिन्दी काव्यो मे पुत्र के जन्म पर लक्षण के लिए ज्योतिषी के बुलाए जाने की बात भो कही गई है।[2] माता-पिता के सम्मान या लज्जावश कन्या मर्यादा के पालन-हेतु स्वेच्छा के प्रतिकूल कार्य होने पर जीवन-त्याग तक की कल्पना करती है :

हौ सौ मारी पिता घर, बोलत वचन लजाऊ ।
तब मै बचो कलक ते, प्राण काप मर जाऊ ।[3]

बहु-विवाह की प्रथा के कारण कई सूफी-काव्यो मे सौतिया-डाह अथवा सपत्नियो मे पारस्परिक वैमनस्य का भी वर्णन हुआ है। हिन्दी का 'चन्दायन'[4] और 'पद्मावत'[5] तथा कश्मीरी का 'हियमाल'[6] काव्य इस वर्णन की उपलब्धि कराते है। इस वर्णन के होते हुए भी पातिव्रत्य, शील तथा सतीत्व के महत्व की चर्चा भी इन सूफी-प्रबन्धो मे हुई है।

काव्य शास्त्रोक्त महाकाव्य के वर्ण्य-विषयो का समावेश तो प्रायः इन सूफी काव्यो मे है ही, उनका अधिक ध्यान सामाजिक तथा लौकिक आचारो की ओर भी रहा है। यही कारण है कि ज्योतिषी, भूत-प्रेत, योगी, तथा सिद्ध आदि के वर्णनो को भी यथास्थान समाविष्ट कर दिया गया है। यह वर्णन तत्कालीन

---

१. सपुन मोलूम तस अज़ इल्म तजीम, ग्वडअन्य आगाज़ यम्पसुन्द आसि इस्लाम। गछित बालिग गछिहअस दर इश्क अजाम, जवानाह तस पतअह दीवानह आसी—जेबा निगार, पृ० ५।

२ पडित देश-देश के धाये, पोथी काढ जनम दरशाये—हस जवाहिर, पृ० ४२।

३. वही, पृ० ४३।

४. द्रष्टव्य—चदायन, डा० परमेश्वरी लाल गुप्त, पृ० ३३२।

५. द्रष्टव्य—पद्मावत, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ४१४-४१५।

६. द्रष्टव्य—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० ५८।

लोक मान्यताओं के चित्रण मात्र हैं जो वर्ण्य-विषयों को जन-साधारण के समीप रखने के प्रयत्न से लगते हैं।

पात्र और चरित्र-चित्रण

कश्मीरी प्रबन्ध काव्यों मे अलौकिक, काल्पनिक तथा प्राकृतिक पात्रो का चरित्र-चित्रण हुआ है। अलौकिक पात्रो जैसे खुदा, ईश्वर तथा इन्द्र आदि का चित्रण वरदान तथा प्रेम-पथ के पथिको की सहायता के लिये हुआ है। गुलरेज मे राजा तैफूर को खुदा के वरदान से ही पुत्रोत्पत्ति होती है।[१] 'हारुन-रशीद' मे राजा अपने पुत्र की कामना खुदा से करता है।[२] 'जेबा निगार' मे हुसन आबाद के ज्योतिष-विशारद ब्राह्मण को मदिर मे जाकर ईश्वर की उपासना के अनन्तर ही पुत्र-प्राप्ति मे मनोकामना सिद्ध होती है।[३] महमूद गामी ने अपने काव्य 'यूसुफ-जुलेखा मे अलौकिक पात्र की आकाश-वाणी द्वारा प्रेम-पथ की पथिका जुलेखा को ढाढस बधवाया है।[४] 'मुमताज बेनजीर' मे मुमताज की सहायता इन्द्र करता है।[५] कभी-कभी आध्यात्मिकता एव अलौकिकता के प्रतीक किसी फकीर का वर्णन भी सन्तानाभाव की पूर्ति के लिये किया गया है। 'सोहनी मेयवाल' मे दानवीर सौदागर अलीबेग को पुत्र की उत्पत्ति फकीर के आशीर्वाद से ही होती है :

प्रछअनी गव फकीराह् ल्वबुन दर गार,
बजअरी क्वरुन तस निश हाल इजहार।[६]

(वह पूछते-पूछते आगे बढा और अन्त मे गुफा मे बैठे एक फकीर के पास पहुचा। करुणापूर्ण शब्दो मे उसने उसे अपना सारा वृत्तान्त सुनाया।)

---

१ दुआ तअम्यमुन्द सपुन अज हक अजावत, क्वरुन तस खास फरजन्दाह् अनायत—गुलरेज, स० मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० ५५।

२ म्वख्तह् जन होरुन अज दीदअह् दर दुआ, बारे खुदाया बख्श फरजन्दअह् पारसा हारुन रशी, पृ० ३।

३. मे बोजुम दाद करतम खस्तह् दिलशाद, चल्यम मे गम त बम बख्शुम मे औलाद—जेबा-निगार, पृ० ५।

४ तति वथित वति वअच आयस तस गैबी खबर, पाक थावत वातनावत निशेह् यारस गम म बर। पृ० ३।

५ सपुन आखिर तमिस प्यठ हुकुम इद्राज, चह् बेशक बख्शमक बा शाह् मुमताज—मुमताज बेनजीर, पृ० ६२।

६. सोहनी मेंयवाल, पीर मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० ३।

सूफी-कवि मूर्ति-पूजा को व्यर्थ मानते थे।[1] ब्रह्म को निराकार एव सर्वव्यापक मानना ही उन्हें अभीष्ट था, फिर भी उन्होने अलौकिक पात्रों की कल्पना लौकिक पात्रो के रूप मे की है। 'हियमाल' का नायक नागराय प्रेमिका के सौदर्य पर ही मुग्ध होकर उसकी प्राप्ति के लिये राजकुमार के रूप मे परिवर्तित होता है। निर्धन फकीर एव उसकी पत्नी को अपना परिचय देते हुए नागराय कह रहा है :

वो आदम छुमनअह ज़ात परी छम, मे दर हर सूरते जलवअहगरी छम।[2]
(मैं कोई मानव नही हूं। मैं तो परीजाद हूं। मै सदा उसी अलौकिक प्रकाश मे आलिप्त रहने वाला हूं।)

काल्पनिक पात्रो के अन्तर्गत देवो, भूतो, परियो, डायनो तथा ऐय्यारो का वर्णन हुआ है। 'बहराम व गुल अन्दाम' मे नायक बहराम को सैफ़ूर नामक देव तथा उसके भाइयो मे मल्लयुद्ध करना पडता है। बहराम अत्यन्त वीर था।[3] देव अथवा भूत बहराम से हारने के अनन्तर क्षमा-याचना करते है और फिर वे बहराम के सहायक सिद्ध होते है।[4] 'गुलरेज' मे नाजमस्त को बदिनी बनाने वाला एक देव ही है, अजबमलिक उस देव को मारकर उसे वहां से मुक्ति दिला देता है। वह देव उसका तीर लगते ही पृथ्वी पर गिर पडता है और एक भूकम्प सा आ जाता है।[5] यह नाज़मस्त स्वय परियो की ही राजरानी है।[6] अजबमलिक तथा नौशलब के विवाह के अवसर पर परिया सामूहिक रूप से गाती है।[7] नागराय का समन-नगर देवो तथा जिन्नो का निवासस्थान है।[8] 'गुलनूर-गुलरेज'

---

१. छु काफिर बदशुगून दर बुत परस्ती, गोमुत गुमराह अज खामी व मस्ती। —ज़ेबा-निगार, पृ० ५।
२. हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० १५।
३. वनै क्याह ओस मर्द कार व जअरी, बवक्ते, जग च्योन शीरे शिकअरी। —बहराम व गुल अन्दाम, पृ० ३।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७-६।
५. कोहा ह्यु तीरअह सअत्यन बर जमीन प्यव, ज़ि लअरजह कोह व मअदानन बुन्युल गव—गुलरेज, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० १३०।
६. बअ छस परियन जिनन हअंज़ पादशाहबाय, ज़ुवस अन्दर छि दर बयत अलामां जाय—वही, पृ० १२५।
७. मारअह मति च्योन छुम मारम म्वतये, दिल गोम म्वतये मेलखना—वही, पृ० २२५।
८. द्रष्टव्य—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० १५।

मे दिलाराम पर जादू करने वाली एक डायन नानवाइन है।[1] ये परिया तथा भूत कभी-कभी स्वय कष्ट उठाकर सहायता भी प्रदान करते हैं। 'लैला-मजनूं' मे मजनू को दूध पिलाकर पालन-पोषण करने वाली शाहपरी ही है।[2] ऐयारों का वर्णन 'ज़ेबा निगार' मे हुआ है, उसमे ऐयार ही निगार को कुछ सुघाकर पनी प्रेमिका ज़ेबा से पृथक करके अपने पिता के पास ले आते है।[3]

प्राकृतिक पात्रो मे पशु-पक्षी एव पुरुष-स्त्री दोनो पात्र प्रमुख हैं। पशु-पक्षी पात्रो का वर्णन हारुन-रशीद, यूसुफ जुलेखा (गामी वहाजी मही-उद्-दीन मिसकीन) गुलरेज, गुलनूर-गुलरेज तथा लैला मजनू (कबीर लोन, गामी व पीर मही-उद्-दीन 'मिसकीन' कृत) आदि प्रबन्धकाव्यो मे हुआ है। हारुन रशीद मे एक पक्षी नायक अज़ीज़ की हथेली पर बैठकर सब दर्शकों को चकित करता है।[4] गामी के 'यूसुफ-जुलेखा' मे याकूब अपने पुत्र यूसुफ का हाल पक्षियो से इस प्रकार पूछता है

पीर याकूब छुसै प्रारान, श्यछ प्रछान जानावरान,
म्योन यूसुफ डयूठवोन नासग्र, हिरनग्र चश्मग्र स्याह छुस तग्र।[5]

(पक्षियो से कुशल-समाचार पूछने वाला याकूब प्रतीक्षा कर रहा है। वह उनसे पूछ रहा है कि क्या उन्होंने हिरणो के समान काले नेत्रो वाले उसके पुत्र यूसुफ को कहीं देखा तो नहीं।)

इसी भाति हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' के 'यूसुफ जुलेखा' मे विक्षिप्ता नायिका जुलेखा अपने प्रियतम यूसुफ के विषय मे उसका हाल पक्षियो से पूछती है :

प्रछहान जानावरन त्वहि यार म्योनुय,
वुछुव मा सग्र मुस गमख्वार म्योनुय।[6]

---

१. परान मग्रन्थग्रर नजर कग्ररनस ज़ि दूकान, सपुन बज़गालह शाहज़ादस बयक आन रटित थोवुन सु बज़गालह बज़ीर, अनिस तमि डुग्रनि यिछ सख्ती बतकदीर—गुलनूर-गुलरेज़, पृ० ४२।

२. शाह परी द्वद दिनि आयि हाय।—लैला-मजनू, कबीर लोन, पृ० ११।

३. निगारस ह्यथ बशहर गैज गग्रय तिम, दुहुक आराम रातुक ख्वाब ओवुक, निगार नाज़नीन त्वोत वातनोवुक, कतरुक मग्रलिस निशिह हग्रज़िर बदरबार—ज़ेबा-निगार, पृ० ६५।

४. यी दपन शहज़ादनग्रय कग्रोर दस्त ज्यूठ।
जानवाराह आव तस बर दस्त व्यूठ। पृ० ७।

५. यूसुफ जुलेखा, गामी, पृ० ६।

६. यसुफ जुलेखा, हाजी मही-उद-दीन 'मिसकीन', पृ० २२।

(वह पक्षियो मे पूछने लगी कि क्या तुमने पीडित करने वाले मेरे प्रेमी को कही देखा तो नही।)

'गुलरेज' मे नायिका ही माता के शाप मे पक्षी बनकर अपने प्रियतम की तलाश मे इधर-उधर भटकती रहती है। 'गुलनूर-गुलरेज' मे घोडे पर बैठने वाली नायिका गुलनूर जब समन नगर से वापस नही लौटती, उस समय नायक दिलाराम अनजान मार्ग के कारण पुर्नमिलन की शका मे प्रकम्पित हो उठता है किन्तु तत्काल दो पक्षियो का वार्तालाप उसे प्रेमिका से मिल पाने के लिये सहायक सिद्ध होता है।[१] कबीर लोन के 'लैला मजनू' मे तोता ही मजनू का पत्र उसकी प्रेमिका लैला तक पहुचा देता है।[२] गामी के 'लैला-मजनू' मे ऊट का वर्णन हुआ है।[३] इसी प्रकार हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' के 'लैला-मजनू' मे पवन[४] तथा कौए[५] को दूत के रूप मे प्रस्तुत किया गया है।

पुरुष-पात्रो मे मजनू (कबीर लोन द्वारा वर्णित मजनू को छोडकर), फरहाद, यूसुफ, मेयवाल तथा मैयार जैसे साधारण पात्रो के अतिरिक्त शेष सभी नायक राजकुमार है। ये सभी नायक अत्यन्त सुन्दर तथा आदर्शवादी युवक है। उनमे दृढता तथा एकनिष्ठता के दर्शन होते है। 'हियमाल' के नागराय को छोड कर शेष सभी नायक अविवाहित है। वे नायिका की प्राप्ति के लिये अग्रसर हो जाते है। अपनी नायिका की प्राप्ति के लिये वे फकीर, योगी अथवा सन्यासी बनकर 'वस्ल' (ईश्वर मिलन) की इच्छा रखते है। मजनू,[६] फरहाद[७] एव सूर्य

---

१. बनागअह जानवर जोराह वसित आयि, बशाखे आन शजर यकजा कअर अख जाय, द्रपुन मादन नरस ऐ दिलबरे मन, कथा वन नेरिह राथाह साइता जन—गुलनूर-गुलरेज, पृ० ३५।

२. तोतो गच्छतो दोस्तस लाग दोस्तदअरिये। पृ० २१।

३. शबअह अकि लअल ऊटस खअसित द्रायि, वारअह तस मार मजि ज्वलह आयि। पृ० १२।

कि ऐ बादि सबान्ना सपुन तेज, मे छुयना दिल द्रदमुतन आमतावअह। पृ० १४।

५. नितमो कावअह यारस म्यानि ग्रावअह,
यितमो सालअह इमशब हाल बावअह। पृ १४।

६. जामअह त्रअवित तअ पानस जन्दअह वअलुन,
तसव्वुर यारअह सअन्दी सूर म्वलुन। लैला-मजनू, गामी, पृ० ४।

७. वदुन शीरीनि मति फरहादअह म्याने, कवअइ दिचमय अजयत जंगलन मंज़—शीरी खुसरो, पृ० १०।

रूप निगार,[1] फकीर रूप मे चित्रित किए गए है। 'हारुन-रशीद' का अजीज, 'गुलरेज' का अजब-मलिक और 'चन्द्रवदन' का मैयार आदि योगी के रूप मे हमारे सम्मुख आते है। नागराय, बहराम, मेयवाल तथा वामीक जैसे नायकों को सन्यासी दिखाया गया है जो सभी सासारिक प्रलोभनो को छोडकर इच्छा-पूर्ति के लिये कठिनाइयो को पार करते चले जाते है। लगभग सभी नायक प्रथम-दर्शन करते ही मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पडते है। फरहाद,[2] नागराय[3], निगार,[4] मेयवाल[5] तथा मैयार[6] आदि सभी नायको की ऐसी ही दशा होती है। दर्शनीय पुरुष बुड से गुल अन्दाम के गुणो का श्रवण करते ही नायक बहराम पृथ्वी पर अचेत होकर गिर पडता है।[7] इन नायको मे प्रेम-रोग इतना बढ जाता है कि वैद्य आदि का उपचार भी उसे ठीक नही कर पाता। 'जेबा-निगार' मे नायक निगार प्रेम-रोग का शिकार बन जाता है और उसके असाध्य रोग को वैद्य भी दूर नही कर सकते :

मर्ज तअम्यमुन्द वुछुक मुहलक न हअयिल,
तम्युक तशखीश जोनुक सख्त मुश्किल।[8]

(उन्होने उसका प्रेम-रोग असाध्य जान पाया। उसका उपचार उन्हें अत्यन्त कठिन प्रतीत हुआ।)

---

१. तमाजत आफताबअच सख्त लअज तस,
खय तन गर्मअह क्रायि सअत्य गअज तस। जेबा-निगार, पृ० ७५।
+ + +
कथा त्रअवित लिवासे सादगी प्राव, ख्याले शाही व शहजादगी प्राव, वही, पृ० २३।

२. अव्वल अज आब चश्मअह ख्वद अनुन जोइ, पथर प्यव डेशिवुन्वुय बेखबर गव—शीरी-खुसरो, पृ० ९।

३. वसित प्यव जमीन अज दस्ते सैयाद। हियमाल, वली अल्लाह मत पृ० १८।

४. यिकत तम शहजादस वअच दर गोश, च्वलुस सब्र व करार अज दिल डवलुस होश—जेबा निगार, पृ० १४।

५. सपुन मुश्ताक तस कुन ल्वोग वुछने, बयक दीदन सपुन बेहोश सरमस्त, सोहनी मेयवाल, पृ० ७।

६. बरखाक प्यव खस्तअह चवेश, अज जख्मे जानानअह दिलरेश। चद्रवदन, पृ० ४।

७. ति बूजित शहजादअह गव वेहोश, शराबन हुस्नकी दितुनस दिलस जोश —बहराम व गुल अन्दाम, पृ० ५।

८. जेबा-निगार, पृ० १७।

लगभग प्रत्येक नायक के पिता के गुणो पर प्रकाश डाला गया है। इन प्रबन्ध-काव्यो मे 'शीरी-खुसरो' के खुसरो, 'यूसुफ--जुलेखा' के अजीज 'वामीक-अजरा' के बहमन तथा 'रैणा जेबा के नाविक के अतिरिक्त और अन्य किसी काव्य मे प्रतिनायक की कल्पना नही की गई है। अन्य पुरुष-पात्रो मे या तो नायक के मित्रो का वर्णन हुआ है अथवा उपनायक या आदर्श पुरुषो का चरित्र चित्रित किया गया है।

स्त्री पात्रो मे नायिका, उपनायिका अथवा अन्य स्त्री-पात्रो का चरित्र चित्रित किया गया है। कश्मीरी प्रबन्ध-काव्यो की अधिकतर नायिकाए सभ्रान्त राजकुल की युवा स्त्रिया है। शीरी, जुलेखा, गुल अन्दाम, अजरा, चन्द्रवदन, बेनज़ीर गुलनूर तथा ज़ेबा आदि राजकुल की युवा राज्य-कन्याए है। अधिकतर नायिकाए अविवाहिता है और केवल लैला, शीरी, जुलेखा तथा अजरा को ही इनमे विवाहिता रूप मे चित्रित किया गया है। सभी नायिकाए अपने सतीत्व की रक्षा करने मे सफल होती है। वे रूप-सौदर्य की मूर्त्ति है और नायक उन पर प्रथम-दर्शन मे ही मुग्ध होता है। वे अपने प्रणय मे दृढ है। 'गुलनूर-गुलरेज' मे नायिका गुलनूर पुरुष वेश धारण करके अपने प्रेमी दिलाराम को नानवाइन डायन से मुक्ति दिलाती है।[1] ये प्रधान नायिकाएं परमात्मा का प्रतीक अकित की गई है और उनके नख-शिख वर्णन मे तथा कथा के घटना-चक्र मे उनके परमात्म-तत्व का सकेत निरन्तर होता रहा है। लैला मे उसी 'नूर अली नूर' का रूप समाया हुआ है।[2] प्रायः सभी नायिकाओ का नख-शिख वर्णन उसी ईश्वर का आभास-मात्र है। कुछ नायिकाए अपने साधक नायक की परीक्षा भी लेती है। 'मुमताज बेनज़ीर' मे नायिका अपने प्रेमी नायक की परीक्षा उसी रूप में लेती है,[3] जिस रूप मे शीरी ने फरहाद की परीक्षा[4] ली थी। सकेतित तथा व्यवहृत अर्थ मे नायिका ब्रह्म तथा नायक आराधक दिखाया गया है। 'हियमाल' की नागिनो के अतिरिक्त प्रायः किसी काव्य मे प्रतिनायिका की कल्पना नही हुई है।[5] 'बहराम व गुल अन्दाम' में बहराम रूह अफजा को देव के हाथो से बचा

---

१. वलअन मरदानअह रख्ताह रोज़ मस्तूर, दितुन मर्दानअह पअठयन ताज बरसर—पृ० ४४।

२. ड्यकअह तस सुबहा ख्वतन ओस रोशन, तसन्दी हुस्नअह गव ससार तोशन —लैला-मजनू, गामी, पृ० ८।

३. द्रष्टव्य—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० २६-२८।

४. गुनाह बख्शुम करियोमम इम्तिहानाह, शीरी खुसरो, गामी, पृ० १०।

५. द्रष्टव्य—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० ५५-६०।
तथा द्रष्टव्य—हियमाल, सैफ-उद्-दीन, पृ० ५६-६१।

लेता है। 'गुलरेज़' मे नाजमस्त तथा उसकी बहिन मस्तनाज़ उपनायिकाओ के रूप मे आई हैं। अन्य स्त्री पात्रों मे लैला[1] तथा नौशलब की माता[2] आदि का भी वर्णन हुआ है।

हिन्दी के प्रबन्धकाव्यो मे भी अलौकिक, काल्पनिक तथा प्राकृतिक पात्रो का चरित्र-चित्रण हुआ है। ये अलौकिक पात्र पद्मावती के शिव एव पार्वती, चित्रावली के शिव एव पार्वती, इद्रावती के शिव एवं पार्वती तथा हस जवाहिर के ख्वाजा खिज्र के रूप मे आये है। ये सतान का वरदान देने, अन्य पात्रो की परीक्षा लेने तथा प्रेम पथ के पथिको की सहायता करने मे सहयोग देते है। 'हस जवाहिर' का हस, 'इद्रावती' तथा 'चित्रावली' का सुजान अलौकिक पात्रो के वरदान मे ही उत्पन्न होते है। 'पद्मावत' मे भवानी एक सुन्दर अप्सरा का रूप धारण कर रत्नसेन की परीक्षा लेने के लिये उपस्थित होती है। वह कहती है :

सुनहु कुवर मोसों एक बाता। जस रग मोर न औरहि राता।
ओ विधि रूप दीन्ह है तोका। उठा सो सबद जाइ सिव लोका।
तब हौ तो कह इन्द्र पठाई। गै पदुमिनि तैं आछरि पाई।
अब तजु जरन मरन तप जोगू। मो सों मानु जनम भरि भोगू।[3]

किन्तु रत्नसेन अपने प्रेम-पथ पर चलकर दृढता का परिचय देते हुए कहता है :

भलेहि रग तोहि आछरि राता। मोहि दोसरे सौ भाव न बाता।[4]

ये अलौकिक पात्र नायक को प्रेम-पंथ की दृढता के लिये सहायता ही देते है। 'पद्मावत' मे जब रत्नसेन सिहलगढ के पास किंकर्तव्यविमूढ होकर अपना अन्त करने के लिये तैयार होता है, तभी शिव आकर उसे सिद्धि-गुटिका देते हुए सिहलगढ मे प्रवेश करने का मार्ग बता देता है।[5] शूली देने के समय भी शिव

---

१. (क) द्रष्टव्य—लैला-मजनू, गामी, पृ० ३।
(ख) द्रष्टव्य—लैला-मजनू, पीर गुलाम, मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० १०।
२. द्रष्टव्य—गुलरेज, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० १६६-१७४ तथा १९७-२०३।
३. जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २६१।
४. वही, पृ० २६१।
५. सिद्धि गोटिका राजें पावा। औ मै सिद्धि गनेस मनावा।
जब सकर सिधि दीन्ह गोटेका। परी हूल जोगिन्ह गढ़ छेंका। वही, पृ० २६६।

रत्नसेन को बचाता है ।[1] ये पारलौकिक पात्र लौकिक चरित्रो के रूप मे भी कही-कही आए है । लक्ष्मी रत्नमेन को छलने का प्रयत्न करती हुई कहती है :

हौं पदुमावति रानी रतनसेनि तू पीउ ।
आनि समुद महू छाडे अब रे दबे मै जीउ ।[2]

काल्पनिक पात्रो मे राक्षस एवं परियो का चरित्र चित्रित किया गया है । इन राक्षस पात्रो का चित्रण मृगावती, पद्मावती, मधुमालती तथा चित्रावली आदि काव्यों मे हुआ है । 'चित्रावली' मे वर्णित राक्षस अत्यन्त सहृदय है जो सुजान को अरक्षित न छोडकर उसको अपने साथ 'चित्रावली' के नगर ले जाता है । मृगावती, पद्मावती तथा मधुमालती के राक्षस-पात्र अत्यन्त कठोर है । 'मृगावती' मे योगी राजकुमार ही रुकमिन नामक सुन्दरी को राक्षस के चगुल से बचाता है । 'पद्मावत' का राक्षस अति विशालकाय होने के कारण रत्नसेन को सिहल से लौटते समय बडे कष्ट देता है :

राजै कहा रे राकस बौरे जानि बूझि बौरासि ।
सेतबध जंह देखिअ आगे कस न तहा लै जासि ।[3]

'मधुमालती' का राक्षस-पात्र उपनायिका प्रेमा को उठाकर ले गया था । मनोहर उस राक्षस को मार कर प्रेमा को छुडा लाता है ।[4] परियो का चित्रण 'हंस-जवाहिर' काव्य मे हुआ है जो हस-जवाहिर की उपयुक्त जोड़ी का वैध-विवाह कराने मे सफल होती है ।

प्राकृतिक पात्रो मे पशु-पक्षी आदि पात्रो का इन काव्यो मे चित्रण हुआ है । पद्मावत का सुआ, 'इन्द्रावती' का तोता, नागमती का पछी, 'चित्रावली' का अजगर एव मत्त हाथी, 'मृगावती' मे स्वय हरिणी के रूप मे मृगावती तथा 'मधुमालती' मे स्वय पछी रूप मे मधुमालती आदि पात्र इन्ही के अन्तर्गत आते है । प्राकृतिक पात्रो के भीतर ही इसके पुरुष एवं नारी-पात्र भी आते है । पुरुष-पात्रो मे रत्नसेन तथा 'इन्द्रावती' के राजकुवर को छोडकर शेष सभी नायक अविवाहित हैं । ये सभी नायक राजकुमार है । 'चित्रावली' के सुजान की प्रेम-प्रेयसी कौलावती भी थी । लोरक एक साधारण नायक है । ये सभी नायक कुमारी

---

१. अगिनि बुझाइ पानि सो, तू राजा मन बूझु ।
तोरे वार खपर है लीन्हे, भिख्या देहु न जूझ ।—वही, पृ० २६७ ।

२. जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २६८ ।

३. वही, पृ० ३८५ ।

४. जिमि तखिर जरि काटै तन धर खंसि परै निदान ।
तिमि राकस पुहुमी परेउ कया परिहरे परान । मधुमालती, पृ० १४६ ।

राजकुमारियो मे ही प्रेम करते है। इनमे से केवल चदा तथा जुलेखा ही विवाहिता है। इन नायको मे दृढता के दर्शन होते हैं। 'चंदायन', 'पद्मावत', 'हसजवाहिर' तथा 'यूसुफ जुलेखा' मे प्रतिनायको की भी कल्पना की गई है। नायिकाए अत्यन्त सुन्दरी है। चदायन', पद्मावत', चित्रावली, हसजवाहिर तथा इद्रावती मे एक ही प्रतिनायिका है। अन्य स्त्री-पात्रो मे नायिक की मा तथा दूती आदि पात्र भी आ जाते है।

सूफी-काव्यो के सभी नायक प्रेम-साधक है और इसी के लिये वे अनेक प्रकार के कष्ट सहते है। यद्यपि कई काव्यो मे प्रतिनायक की उपस्थिति विद्यमान है, किन्तु उनकी पराजय के बाद नायक तथा नायिका का चिर-मिलन प्रदर्शित कर लिया गया है। यह चिर-मिलन दो रूपो मे दिखाई पडता है। नायक और नायिका के मिलन के उपरान्त काव्य को सुखान्त बनाकर उसे समाप्त कर लिया गया है अथवा कुछ काव्यो मे नायक और नायिका दोनो ही शरीर-त्याग करते है तथा चिर-मिलन की स्थिति का अनुभव करते है। कश्मीरी का सूफी-काव्य शीरी खुसरो ऐसा काव्य है जिसमे नायिका तो एक है किन्तु नायक दो है, फरहाद तथा खुसरो। इसी भाति 'यूसुफ जुलेखा' मे भी एक नायिका तथा दो नायक है, अजीज वजीर तथा यूसुफ। 'शीरी खुसरो' मे साधक की सपूर्ण कठिनाइयो का चित्रण तो फरहाद के माध्यम से हुआ है और शीरी तथा फरहाद का प्रेम ही उस अलौकिकता की अभिव्यजना करता है जो सूफी-सिद्धान्तो के अनुकूल है। फरहाद की मत्यु के अनन्तर शीरी अपने पति खुसरो के साथ पुनः गृहस्थ जीवन के सुख का अनुभव करती है, जबकि वह फरहाद की मृत्यु पर यह उद्गार भी प्रकट करती है कि वह कयामत तक उसके साथ वचन-बद्ध रहेगी। इसमे फरहाद और खुसरो दोनो का ही चरित्र-चित्रण शीरी के प्रेमी के रूप मे हुआ है किन्तु शीरी तथा फरहाद का प्रेम अलौकिक और शाश्वत प्रेम का साक्षी है जबकि खुसरो तथा शीरी का प्रेम सामाजिक मर्यादाओ के अनुकूल लौकिक प्रेम है। सभवतः कवि का उद्देश्य लौकिक तथा अलौकिक प्रेम की एक-साथ अभिव्यजना करना था। इसी स्थिति के परिणामस्वरूप खुसरो तथा फरहाद के चरित्र-चित्रण मे तो किसी प्रकार की त्रुटि नही आने पाई है, परन्तु शीरी का चरित्र पद्मावती की भाति न रहकर उससे कुछ भिन्न हो

---

१. मैना पूछहि कहा निसि कीन्ह। कौन नारि मोर कै दीन्ह। चदायन, डा० परमेश्वरी लाल गुप्त, पृ० २१३।

२. नागमती कारन कै रोई। का सोवै जौ कत बिछोई।—पद्मावत, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ३६४।

गया है। सासारिक प्रेम करने वालो के साथ क्या परमात्म-तत्व स्वरूप नारी प्रतीक ब्रह्म का स्नेह भी वैसा ही होता है जैसा अलौकिक प्रेम के साधक के प्रति? इस अस्पष्टता के कारण ही शीरी का दिव्य तथा अलौकिक रूप कुछ फीका पड गया है। इसी प्रकार की स्थिति 'यूसुफ जुलेखा' मे भी है परन्तु वहा यूसुफ की मृत्यु के साथ जुलेखा की मृत्यु भी प्रदर्शित करके उनके परम रूप की सुरक्षा कर ली गई है।

प्रकृति-चित्रण का स्वरूप

कश्मीरी प्रबन्धकाव्यो मे प्रकृति का चित्रण कई रूपो मे हुआ है। मानवीय भावनाओं से असयुक्त शुद्ध प्रकृति-वर्णन कुण्ड, सरोवर अथवा हौज, सागर, दरिया, मरुस्थल, वन-उपवन तथा नगर आदि के रूप मे हुआ है। कुण्ड अथवा सरोवर का वर्णन 'हियमाल' मे हुआ है।[1] हौज का वर्णन मसनवी 'जेबा-निगार' मे कवि ने उस समय किया है जब नायिका जेबा उसमे स्नान करने के लिये उतरती है। यह हौज़ अत्यत आकर्षक है।[2] सागर का वर्णन मसनवी 'गुलरेज' मे हुआ है जब अजब-मलिक उसमें तूफान के समय अपने मित्र रासख से बिछुडकर किसी तख्ते पर बैठकर बह जाता है।[3] अधिकतर कश्मीरी सूफी-कवियो ने सागर से अपरिचित होने के कारण विशालकाय दरिया को ही सागर के रूप में स्वीकार करके उसका वर्णन किया है। इस प्रकार सागर के रूप में दरिया का वर्णन 'रैणा व ज़ेबा'[4] 'मुमताज बेनजीर'[5] तथा 'सोहनी-मेयवाल'[6] आदि प्रबन्धकाव्यो में हुआ है। मरुस्थल का वर्णन 'मुमताज बेनज़ीर' में हुआ है जब नायक मुमताज़ को प्रेम-परीक्षा देते हुए महासुन्दर परी की

---

१. (क) बहोज़े वज़ू तदारुक रबनी आरुक—हियमाल, सैफ-उद्-दीन, पृ० १३।
   (ख) छि नागस अन्द्य अन्द्यी गोतह गोनह गुल, चमन बन्दी योस्मन हा ए सुबल—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० ११।

२. वसहने बाग होजाह् ओस ख्वशतर, शुबन यथ जन्तस मंज होजे कोसर, पृ० ३०।

३. न बूजुम यारसुन्द पैग़ाम नै नेब, पनअन्य यिम सअत्य असिम गअम तिम गअब, गुलरेज़, संपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ११३।

४. ब दरिया दर सोज बरक गव खानअह, सु ज़ेबा ह्यत बा आब बेकाननअह —पृ० १०।

५. छुम रोवअह युथुय बणाय बला, दरिया बुथ आम तिथुय दोबाला, पृ० ९३।

६. तलातुम सख्त छुम अज़ मोजे दरिया। पृ० ४२।

तलाश में कठिनाइयो को पार करना पडता है। वह पर्वतो तथा मरुस्थलो मे उसे ढूढता फिरता रहता है।[1] इन कवियो ने नज्द-वन का वर्णन किया है जहा साधक प्राणी प्रेमिका की प्राप्ति के लिए साधना-रत रहता है। महमूद गामी तथा कबीर लोन के 'लैला मजनू' मे नायक मजनू अपनी प्रेमिका लैला की प्राप्ति के लिये नज्द-वन का ही आश्रय ग्रहण करता है।[2] 'सोहनी मेंयवाल' में नायक मेयवाल कुम्हार के घर से निष्कासित किए जाने के अनन्तर वन का ही मार्ग ग्रहण करता है।[3] 'वामीक अज़रा' मे भी निराश वामीक अपनी प्रेमिका की प्राप्ति के लिये वही साधना-रत रहता है।[4] उपवन का वर्णन लगभग सभी काव्यो मे हुआ है। 'गुलरेज'[5] मे 'बागअक तअरीफ' (उपवन की प्रशंसा) शीर्षक प्रसंग मे कवि का कथन है कि 'यदि पृथ्वी पर कहीं स्वर्ग है तो यही है, यही है, यही है'[5] 'हियमाल' मे नायिका 'हियमाल' के उपवन की शोभा देखकर नाग-राय विमोहित होता है।[6] इसी प्रकार सैफ-उद्-दीन द्वारा रचित हियमाल' मे भी बलबीर के उद्यान का वर्णन कवि ने मनोरम शब्दो मे किया है।[7] 'गुलनूर गुलरेज' मे भी कवि ने गुलफाम नगर के राजोद्यान का वर्णन अत्यन्त मनोहारी ढग से किया है।[8] इस मे इस रहस्य का भी उद्घाटन हुआ है कि नायिका

---

१. छहअड़ान गव कोह व सहरा जस्तअह जस्तअह—पृ० ३०।

२. (१) 'आव मजनू लारान नज्द रोटुन, दोस्तन अअशनावन पान खवटुन।
—लैला मजनू, गामी, पृ० ६।

(२) मंगान आस तस ख्वदायस थाव तम कन, मे छुहनअह मोलूम हावहतम नज्द कुइ वन—लैला मजनू, कबीर लोन, पृ० २६।

३. पकान गव जंगलस मज़ वोत रिवान, बज़मरी हाल अके नाल दिवान, पृ० २२।

४. वनस मज ओस आशक हमदम आह, वगिर्द अगिर्द तस हागल तअ हिरन, पृ० २३।

५. अगर फिरदौस बर रूए जमीं अस्त, हमी अस्त व हमी अस्त व हमी हस्त, गुलरेज़, संपादक, मुहम्मद यूसूफ टेग, पृ० १४८।

६. सु नागराय अलगअवअह ओतत आव, ल्वगुस दागाह बुछअनी बाग बर द्राव—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० १६।

७. चमन मज़ कम परी पीकर ज़री पोश, यिमन मज़ नन चरी कमि गूदवी पोश, पृ० ६६।

८. चमन अन्दर चमन गोण्डमुत चमन तत, गुल व बुलबुल तअ सुबल हम समन तत, पृ० १३।

गुलनूर सात गढो के भीतर एक अप्यिन उद्यान मे वास करती है ।[१] नगरो का वर्णन प्राय· प्रत्येक काव्य मे मिलता है क्योकि इन मे वर्णित नायिकाए प्रायः राजकुमारिया होने के कारण सुन्दर नगरो मे ही निवास करती है । लैला मजनू मे कवि कबीर लोन ने अरब का वर्णन अत्यन्त महिमाशाली शब्दो मे किया है ।[२]

अधिकतर काव्यो मे प्रकृति का चित्रण उपमानो के रूप मे नख-शिख के अतर्गत हुआ है । कही-कही वह दृष्टात रूप मे वर्णित हुई है । कही-कही प्रकृति मानव के प्रति सहानुभूतिमय भी दिखाई गई है । नज्द बन मे जाने वाले वियोगी मजनू[३] तथा वामीक[४] के चारो ओर हिरण तथा बारह सिगे ही रहते है। वे भी उनके दुःख के समभागी बनकर उनसे विलग नही होना चाहते ।

इन प्रबन्धकाव्यो मे षट्-ऋतु-वर्णन अथवा बारहमासे का वर्णन नही हुआ है । शृगार-रस की अभिव्यक्ति के लिये अधिकतर कवियो ने वसन्त को ही अपनाया है । वसन्त (बहार) का वर्णन कवियो.ने नायक-नायिका के मिलन के समय किया है । उसके द्वारा साधक-साध्य के 'वस्ल' (ईश्वर मिलन) की झाकी प्रस्तुत की गई है । 'गुलरेज' मे नोशलब व अजबमलिक के इस मिलन की प्रसन्नता मे प्रकृति की प्रफुल्लिता का चित्रण देखिए :

फसले बहार आमद खुशबू गुलन मुबारक,[५]

(बंसत आ गया है । पुष्पो को यह सौरभ मुबारक हो ।)

'गुलनूर-गुलरेज' मे कवि ने इस बहार के 'वस्ल' का रूपात्मक वर्णन करते हुए कहा है :

वस्लअकी पोश फवल्य फसलकिस नारस,

× × ×

नारअह मजअ फवल्यमित क्याह छि गुलजार ।[६]

---

१. सतन किलन अन्दर बाग़ाह शहस खूब, वुछअनी यस चलन तस जन्तुक लूब, वही, पृ० १८ ।

२. सु अरब क्याह ओस मशहुर, तमि मजअह आशकन हुन्द द्राव ज़हूर, अमारत हाय रगीन जाय अजली, जि, आ सेब व जि गम हर ज़रंह खअली, पृ० ५

३. समित अअस्य हिरन हागल सअह तअ हापत, तमिस अंद्य अद्य बिहित तति दर मुसीबत । लैला मजनू, गामी, पृ० १३ ।

४. वनस मंज़ अअस्य आशिक़ हमदम आह, बगर दा गरदतस हांगल तअ हिरन । वामीक अज़रा, पृ० २३ ।

५. वही, पृ० २१४ । ६. वही, पृ० ५ ।

(अतिशय प्रेमाग्नि के इस बहार में 'वस्ल' (ईश्वर मिलन) के पुष्प खिल उठे। इस असीम प्रेमाग्नि के कारण प्रकृति की शोभा क्या ही अद्वितीय रूप धारण कर गई है।)

'ज़ेबा निगार' में भी इसी प्रकार का सुखद-मिलन प्रस्तुत किया गया है।[1]

वियोग के समय सुन्दर प्रकृति भी नायिका को दुःखदायिनी प्रतीत होती है। वामीक की अनुपस्थिति में बाग की शोभा अज़रा के लिये घुटनमय वातावरण प्रस्तुत करती है।[2] ज़ेबा को अपने प्रिय के वियोग में रात्रि का अंधकार प्रसारित मातम की भांति प्रतीत होता है।[3] इसी प्रकार मसनवी 'ज़ेबा निगार, में नायिका ज़ेबा को वियोग के कारण श्रावण-मास पौष-मास जैसा प्रतीत होता है।[4] उसकी दशा भ्रमर बिना शुष्क यबरज़ल फूल की भांति हुई है।[5] उसके विलाप से प्रकृति में भी एक कपकपी उत्पन्न होती है।[6] पीर मही-उद्-दीन 'मिसकीन' ने अपने काव्य' 'लैला-मजनू' में लैला के विलाप के समय प्रकृति को पूर्ण सहानुभूतिमय दिखाया है।[7] मुमताज़ को भी प्रिया के वियोग में प्रकृति अपने समान केसर-पुष्प की भांति पीली दिखाई देती है।[8]

हिन्दी प्रबन्धकाव्यों में शुद्ध प्रकृति-चित्रण समुद्र, सरोवर, वन-उपवन तथा नगर-वर्णन के रूप में हुआ है। यात्रा करते हुए नायक सागर के तूफान में फंस जाते हैं। रत्नसेन की नौका पद्मावती के साथ घर आते समय क्षत-विक्षत हो जाती है और दोनों विभिन्न दिशाओं में चले जाते हैं।[9] इसी प्रकार 'मधुमालती'

---

१. निगातस ऐशकिस फसले बहार आयो, मुबारक अस्त मतलब वस्ले या आयो—पृ० ५२।

२. चे रोस्तुय बाग गोमुत कोह अन्दोह, गमुक शब ह्य बन्योमुत राहतुक दोह। —वामीक अज़रा, पृ० ३०।

३. जमानअह नीलगोन गव अज़ गमे ओ, सपुन आलम सियाह अज़ मातमे ओ, —रैणा व ज़ेबा, पृ० ११।

४. फराकन चअन्य कओरनम श्रावनस पोह—ज़ेबा निगार, पृ ७६।

५. बोम्बरो कर वुछत वारअह, बले बीमार यंबरज़ल—वही, पृ० ६८।

६. वदान बारव दिवान तमि शोर क्याह तुल, ति बूज़ित गव कोहिस्तान तज़लज़ुल—वही, पृ० ६६।

७. सबा हर तरफ रफतार आवान, पयाम गुल व बुलबुल वातनावान। पृ २६।

८. वनान गह ज़ैफरान पोशश कुनुय हाल, इ ज़र्दी म्यानि ज़र्दी हअंज छि तमसाल—मुमताज बेनज़ीर, पृ० ३५।

९. बोहित टूक टूक सब भए। अस न जाने दहु कंह गए।
भय राजा रानी दुइ पाटा। दूनों बहे भए दुइ बाटा।—जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ३८६।

मे भी मधुमालती की खोज मे जाने वाला योगी मनोहर चार मास तक सागर मे यात्रा करता फिरता है।[१] 'चित्रावली' मे सुजान की नौका भवर मे फसती है और अगस्त्य की कृपा से वह डूबती नही।[२] सरोवर का वर्णन मृगावती, पद्मावत तथा चित्रावली मे हुआ है। 'पद्मावत' मे मानसरोवर का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है :

> खेलत मानसरोवर गई। जाइ पालि पर ठाडी भई।
> देखि सरोवर रहसहि केलि। पदुमावति सौ कहहि सहेली।[३]

'चित्रावली' मे सखियो के साथ सरोवर मे प्रवेश करने वाली नायिका के विषय मे कवि ने कल्पना की है :

> तीर धरिन सब चीर उतारी, धाइ धसी सब नीर मंझारी,
> कनकलता फैली सब बारी, पुरइनि तीर जानु जल डारी।
> मानहु ससि सग सरग तराई, केलि करत अति लाग सोहाई।
> हस देखि जलहर तजि गए, पदुम सबै दिन कुमुदिनी भए।[४]

ये सरोवर उपवनो मे ही स्थित है। कासिम शाह ने अपने 'हस जवाहिर' मे रूप-सौदर्य के रूप मे मायके की स्वच्छन्दता का वर्णन करते हुए कहा है :

> मोर कहा आवो फुलवारी, जब सब जाव गवन ससुराटी।
> खेल लेव जो खेलव गोरी, जब लग रहौ पिता पर मोरी।[५]

सरोवर मे जल-क्रीडा का वर्णन 'इन्द्रावती' में इस प्रकार हुआ है :

> सुरज उआ आकास ही, चन्द्र उआ जल माह,
> कुमुद तामरस फूले, दोउ मित्र के पाह,[६]

नूर मुहम्मद ने अपनी 'अनुराग बासुरी' मे फुलवारी का वर्णन-मात्र भी किया है।[७] वाटिका का सुन्दर वर्णन 'चित्रावली' मे भी हुआ है :

---

१. बोहित बोझि समुद चलावा। विधि का लिखा जानि नहिं पावा।
   मास चारि गए पानिहि पानी। फुनि सो अदिन घरी नियरानी।—पृ० ९६।
२. द्रष्टव्य—चित्रावली, पृ० २३२।
३. जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १५९।
४. चित्रावली, पृ० ४७।
५. हंस जवाहिर, पृ० ४७।
६. वही, पृ० ९०।
७. सब मन भावन प्यारी प्यारी, प्यारी प्यारी मन फुलवारी।
   मन फुलवारी चहुं दिस फूली, फूली फुलवारी जेहि भूली॥
   भूलि देखि उरबसी गौरी। गौरी भई प्रेम सो बोरी।—पृ० ९८

सीतल सघन सुहावन छाही, सूर किरिन तह सचरे नाही।[1]

गोबर-नगर के वर्णन मे वृक्षो तथा पुष्पो की चर्चा इस प्रकार हुई है :

दारिउं दाख बहुल लै आई। नारिग हरिक कहै न जाई।
कटहर तार फरे अविरामा। जामुन कै गिनती को जाना।[2]

नगर-वर्णन पद्मावत, चित्रावली, इन्द्रावती तथा पुहुपावती आदि प्रबन्ध-काव्यो मे हुआ है। 'पद्मावत' मे सिंहल का वर्णन करते हुए कवि ने कहा है :

घन अवराउं लाग चहु पासा। उठै पुहुमि हुति लाग अकासा।
तखिर सबै मलैगिरि लाए। भै जग छाह रैनि होइ छाए।
मलै समीर सोहाई छाहा। जेठ जाड लागै तेहि मासा।
ओही छाह रैनि होइ आवै। हरिअर सबै अकास दिखावै।[3]

'चित्रावली' मे गाजीपुर तथा रूपनगर के उद्यान का वर्णन[4] हुआ है। कालिजर एव आगमपुर का वर्णन 'इद्रावती' मे हुआ है।[5] इसी प्रकार 'पुहुपावती' मे काशीपुर तथा रूपनगर का भी वर्णन हुआ है। काशीपुर का वर्णन देखिए :

काशीपुर सघन सभ जानहु, एक एक बहु रूप बखानहु॥
बरनो का धनि देश सुवेसा, निजु निज घर सबै नरेशा।

कही कही प्रकृति का वर्णन उपमानो के रूप मे भी हुआ है। उपदेशात्मक तथा दृष्टांत रूप मे प्रकृति का चित्रण सुरम्य बन पडा है। 'चदायन' के दोनो ही बारहमासो मे प्राकृतिक उपकरणो का उल्लेख इस रूप मे हुआ है :

हेवत मोहि बिसारे, जिहि पर कामिनि रावइ।
सिरजन मुयउ तुसार, बेग कहु सूरुज आवइ।[6]

षट्-ऋतु-वर्णन तथा बारहमासा-वर्णन प्राय. सभी प्रबन्धों में हुआ है। प्रकृति-चित्रण करते हुए इसे सहानुभूतिमय रूप मे भी प्रकट किया गया है। इसके अतर्गत हीरामन तोता, मैना तथा अन्य सदेशवाहक पछी आते है जो नायक अथवा नायिका के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करते है। मनुष्य के सुख-दुःख के प्रति सहानुभूति रखने वाली प्रकृति का वर्णन इस प्रकार हुआ है :

---

१. हंस जवाहिर, पृ० ६१।   २. चदायन, पृ० ८६।

३ जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ३०८।

४. सरवर तीर पछिम दिसि जहां, चित्रावली की बारी तहा।
सीतल सघन सुहावन छाही, सूर किरिन तंह संचौ नाहीं।—पृ० ६१।

५. भूधर के भूधर गढ ऊपर, भूधर ऊपर सोहें भूधर।—उत्तरार्द्ध।

६. चदायन, पृ० ३०८।

जो न पसीजसि जिउ मोर भारवी, पूछ देखु गिरि कानन साखी ।
को पुकार मजोरन गोवा, कुहुकि कुहुकि बन कोकिल रोवा ।
गयो सीखि पपीहा मन बोला, अजहूं कोकत बन बन डोला ।
उड़ा परेवा सुनि गम बाता, अजहूं चरन रक्त सो राता ।[1]

'पद्मावत' मे पक्षी आधी रात को बोल कर नागमती को ढाढस बधाता है ।[2] 'हंस जवाहिर' मे पपीहा हंस का शुभचिन्तक है और वह उसे सन्मार्ग पर चलने का आदेश देता है :

दुविधा का मग छाडि के, एक पथ तू साज ।
कै निज लेउ जवाहिरे, के रूमी कर राज ।।[3]

वियोगी को अपने वियोग की परछाही सर्वत्र दिखाई देती है । उसे अपने चारों ओर की प्रकृति भी दुखी दिखाई देती है ।[4] उसे कभी प्रकृति का सुखमय स्वरूप और कभी उदास स्वरूप अपने प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करता प्रतीत होता है । 'चित्रावली' मे नायिका के विरह को देखकर वनस्पतिया बारह मास तक पत्ते नही धारण करती । अनार का हृदय भी विदीर्ण हो जाता है किन्तु उसके प्रियतम को दया तक नही आती ।[5]

प्रकृति का वर्णन उद्दीपन रूप मे भी हुआ है । 'ज्ञानदीप' में कोयल की कूक, मोर के शोर एव पपीहे की पी-पी से विरह उद्दीप्त होते हुए प्रदर्शित किया गया है ।[6] इसी भाति कवि नूर मुहम्मद ने अपनी रचना 'अनुराग बासुरी' मे बसन्त का वर्णन उद्दीपन रूप मे किया है :

---

१. चित्रावली, पृ० १६७ ।

२. फिरि फिरि रोई न कोई डोला । आधि राति विहंगम बोला ।
—जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ३६४ ।

३. वही, पृ० ७६ ।

४. फूले फूल सिखी गुजारहि, लागी आगि अनार के डारहिं ।
मैं का करू कहां अब जाऊ, मो कह नहि जगत मंद ठाऊ ।—युसुफ जुलेखा, निसार ।

५. वनस्पति सुनि विथा हमारी । बरहे मास होय पतझारी ।
दारिम हिया फाटि सुनि पीरा । पै पिय तोर न दया सरीरा ।
—चित्रावली, पृ० १६८ ।

६. एहि जुगुति दिन बीतेउ भारी, निसि आये विरहिन दुख भारी ।
देखत चन्द चन्द बिरारा, पपीहा बोल सबद जिउ मारा ।
बोलहि मोर सोर बन माहा, झीली झकति काम तन ढाहा ।
कोकिल कूकत कलरव बोली, विरह पसीजि भीजि तन चोली ।

फूला देख मुलच्छन लाला, बूझा भरा रक्त सो प्याला।
कहा अरे लाला अनुरागी, मोनिन निय पीयमि केहि लागी।
केहि सनेह को दगध अपारा, लाछन तोहि हिरदय मे डारा।
चयपा पील रग लखि वेही, कहै पीत किन कीन्हा तोही ॥[1]

'सूफी प्रेमाख्यानो मे आया हुआ प्रकृति-चित्रण अपनी स्वतन्त्र-सत्ता नही रखता। प्रकृति का वर्णन या तो उद्दीपन की दृष्टि मे है या रहस्यवादी भावनाओ के स्पष्टीकरण के लिए।'[2]

प्रेम

आरम्भ—नायक तथा नायिका, दोनो गुण-श्रवण, चित्र-दर्शन, स्वप्न-दर्शन अथवा प्रत्यक्ष-दर्शन के द्वारा एक-दूसरे से गहरा प्रेम करने लगते हैं। उनका यह प्रणय-व्यापार उनके अभिभावको से छिपा रहना है और गुप्त रूप से दोनो मिलते है, फिर अभिभावको की सम्मति भी प्राप्त हो जाती है। किसी-किसी आख्यान मे तो इसी स्थर पर विवाह हो जाता है और किसी-किसी मे नायिका एव नायक बिछुड जाते है। और कुछ सकटो के पश्चात् दोनो का मिलन हो जाता है। प्राय कहानी यही पर समाप्त हो जानी है। जिन काव्यो मे विवाह शीघ्र हो जाता है उन मे नायक एव नायिका फिर बिछुड जाने हैं और अन्त मे फिर मिलते है।[3] कतिपय वियोगान्त कश्मीरी काव्यो मे यह मिलन नायक-नायिका की मृत्यु होने पर दिखाया गया है। इश्क-मजाजी के द्वारा इश्क-हकीकी का प्रतिपादन करना ही इनका मूल उद्देश्य है।

प्रेम मूल रूप मे स्थायी भाव है और अन्य सभी स्थायी भावो से यह सबल भी है। श्रृगार-वर्णन मे वह रति का पर्यायवाची है। सूफियो का प्रेम ठीक-ठीक रति का पर्यायवाची नही माना जा सकता क्योकि रति की चरम परिणति सम्भोग मे होती है। यह ठीक है कि कतिपय सूफी-काव्यो मे प्रेम की परिणति सम्भोग श्रृगार मे प्रदर्शित की गई है और पूर्वराग जन्य विरह भी उससे उद्दीप्त करने का ही साधन बना है तथापि सैद्धान्तिक रूप मे सूफियो का प्रेम वासना विरहित प्रेम का ही प्रतीक है। अपने अलौकिक रूप मे मिलन के वर्णन-स्थलो पर वह रति का पर्यायवाची बन जाता है, परन्तु विरहानुभूति के समय वह असीम तथा व्यापक प्रेम का स्वरूप ग्रहण कर लेता है। यही कारण है कि प्रेम की अलौकिकता का उत्कृष्ट रूप विरहानुभूति मे ही अभिव्यक्ति पाता है। सूफी-

. चित्रावली, पृ० १२२।

२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २४३।

३. हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य, पृ० १२८।

काव्यो के ध्येय की पूर्ति भी विरह-वर्णनो मे ही होती है, इस लिए प्रेम-भाव को जब साहित्य की कसौटी पर कसा जाता है अथवा प्रबन्ध-काव्यो मे रस की पृष्ठ-भूमि मे उस पर विचार किया जाता है, तब वह रति का स्थान ग्रहण करता है। मुक्तक-काव्यो मे यह भाव की स्थिति विद्यमान नही है जबकि प्रबन्ध-काव्यों मे वह शृगार-रस का मूल स्थायीभाव तथा आध्यात्मिक धरातल पर साधक और साध्य के असीम एव अलौकिक प्रेम का परिचायक बन जाता है। प्रेम भाव के उत्तरोत्तर एव क्रमिक-विकास का रूप सूफी-काव्यो मे अत्यन्त ही मनोवैज्ञानिक ढग से चित्रित हुआ है और उसकी पद्धति तथा विकास के मनोवैज्ञानिक एव शास्त्रीय परम्पराओ से अनुमोदित कारणो को भी प्रस्तुत किया जाता रहा है। प्रेम के विकास की एक ही प्रकार की निश्चित दिशा प्रायः सभी सूफी-काव्यो मे उपलब्ध होती है।

विकास

इन काव्यो मे प्रेम तथा रूप का सम्बन्ध विशेष रूप से दिखाया गया है। प्रेमारम्भ का मूल कारण रूप-सौदर्य ही है जो वस्तुतः उस 'नूर-अली-नूर' की ओर सकेत करता है। इस प्रकार साधक पूरी आस्था रखता हुआ कि मैं मूलत. उसी का हू और उससे विलग ही बडा हू उसके साथ पुर्नमिलन के लिए वह आतुर हो जाता है। यही उसकीविरहावस्था की स्थिति है।[1] अन्त मे साधक उस सौदर्यशाली ईश्वर मे अवस्थित होता है। इसके लिए नायक को पारिवारिक बन्धन बाध नही पाते। जन्म-जन्तान्तर का प्रेम ही नायक-नायिका को एक-दूसरे की ओर आकर्षित करता है। इस प्रकार सूफी मसनवियो का विषय इस प्रकार है कि जीव ससार के रूप-राग मे किस प्रकार लिपटा रहता है, भोग-विलास मे लीन है, और सद्‌गुरु के आदेश अथवा अन्तरात्मा की पुकार से विचलित हो किस प्रकार वह प्रियतम की ओर उन्मुख हो चल पडता है, पर बीच मे ही लोभ-विशेष के कारण फस जाता है और फिर उचित आदेश पाकर अपने लक्ष्य मे लीन हो अपने को सत्य समझकर परमात्मा और जीवात्मा का एकीकरण कर अपनी वास्तविक सत्ता का परिचय प्राप्त कर लेता है।[2] साधक को जब अपने अभीष्ट की प्राप्ति होती है तो वह आत्म-विभोर हो जाता है।

५—शृंगार-रस—संयोग एवं विप्रलम्भ

ससार प्रकृति पुरुष की केलि रगस्थली है। नारी-पुरुष की प्रीति, प्रकृति-

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० १०२-१०३।
२. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य, डा० हीरकान्त श्रीवास्तव, प्रकाशक, हिन्दी प्रचार पुस्तकालय, वाराणसी, द्वितीय संस्करण (१९६१) पृ० ९०।

पुरुष की बडी प्रीति का प्रतिबिम्ब-मात्र है। शृगार-रस की इसी प्रीति का प्रतिपादन इन प्रेमाख्यानो मे प्राप्त होता है।'[1] रति-भाव जब पूर्णया पुष्ट और चमत्कृत होता है तभी उसे शृगार-रस कहते है। नायक एव नायिका इसके आलम्बन होते है। सखा, सखी, वन, उपवन, बाग तडाग, चन्द्र, चादनी, चन्दन भ्रमर-गुजन, कोकिल-कूजन, ऋतु-विकास आदि शृगार-रस के उद्दीपन माने जाते है। भ्रूभग, अपाग वीक्षण, मृदु मुस्कान, हाव-भाव आदि शृगार-रस के अनुभव के अन्तर्गत आते है। उग्रता, मरण, आलस्य एव जुगुप्सा को छोडकर शेष निर्वेदादि सपूर्ण भाव, इस मे सचारी या व्यभिचारी भाव होते है।[2]

शृगार रस दो प्रकार का है—सयोग शृगार एव विप्रलम्भ शृगार। कश्मीरी प्रबन्धकाव्यो मे सयोग-शृगार का वर्णन आत्मा-परमात्मा के मिलन हेतु किया गया है। 'बहराम व गुल अन्दाम', 'गुलरेज,' 'मुमताज़ बेनज़ीर' 'गुलनूर-गुलरेज़' तथा 'रैणा व ज़ेबा' सयोगान्त-काव्य है जिनका अन्त नायक-नायिका के विवाह-बन्धन मे हुआ है। 'बहराम व गुल अदाम' मे नायक-नायिका के मिलन के अवसर पर कवि मौलवी सदीक अल्लाह ने सयोग की सुखद अनुभूति का भावात्मक चित्रण किया है। आत्मा तथा परमात्मा की रहस्यात्मक अनुभूति का आभास ऐसे ही स्थलो पर मिलता है।[3] 'गुलरेज' मे नायक अजब मलिक तथा नायिका नौशलब का मिलन साधक-साध्य का अपूर्व तादात्म्य प्रकट करता है।[4] 'मुमताज़ बेनज़ीर' मे शाश्वत मिलन की महिमा का गान हुआ है। उस मे सयोग-शृगार ही 'वस्ल' (ईश्वर मिलन) का स्वरूप है।[5] 'गुलनूर-गुलरेज़' मे प्रेमी-प्रेमिका के अन्तिम मिलन अथवा तादात्म्य की भावना मे भद्रता एव शालीनता का परिचय मिलता है।[6] इसी भांति प्रबन्धकाव्य 'रैणा व जेबा' मे

---

१. वही, पृ० ९९।

२. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य, पृ० ९९।

३. सपुन वेताब अज़ मस्ती शहनशाह, वचरुन बिमयार बूसअह बर रुखे माह।
सपुन मदहोश अज बाब जवानी, बमा होशी ल्वबुन गंज निहानी।
—पृ० १५।

४. वलेकिन फर्क बोज़ए मर्दे हुशियार, मजाजी ज़ान गुल हकीकत ज़ान गलजार।
—गुलरेज, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० २३७।

५. मियूलुक यचकअल्य युदवी दूरिरुक रज,
ल्वबुक आखिर वसालकि पूरिरुक गज।—पृ० २५२।

६. द्वय त्रअवअक खुशी हअन्दि नाग नोवुक,
बबागे-वस्ल गुचअह फ्वलनोवक।—पृ० ५४।

भी साधक-साध्य का मिलन पवित्र भित्ति पर चित्रित किया गया है।[१] शेष सभी काव्य वियोगान्त है। विप्रलम्भ शृगार अपने विविध स्वरूपो के साथ कश्मीरी सूफी-काव्यो मे अधिक परिपुष्ट रूप धारण कर गया है। इन मे आत्मा का परमात्मा से विछोह तथा उसकी ईश्वर-प्राप्ति की उत्कट इच्छा, लालसा, चिन्ता, स्मरण तथा गुण-कथन चित्रण है। विरह-दशा के साथ पाण्डुता तथा सदेश-प्रेषण की चर्चा इन मे विस्तार के साथ हुई है। नायक अथवा नायिका वियोगावस्था के समय प्रायः गजल गाते है। 'लैला-मजनू' मे मजनू[२] 'सोहनी मेयवाल' मे मेयवाल[३] तथा 'हियमाल' मे हियमाल[४] आदि पात्र अपने प्रिय को पत्र द्वारा अपनी विरहावस्था का परिचय देते है। नायक निगार का अनारकली की भाति लाल शरीर केसर की भाति पीला पड जाता है तथा हिय फूल जैसा सौदर्य अरिण पुष्प के समान रूप धारण करता है।[५]

इसी भांति 'वामीक अज़रा' मे अपने प्रिय वामीक की वियोगावस्था के कारण अजरा के यौवन-उपवन का जीवन-पुष्प धूलिमय बन जाता है। प्रिय के वियोग मे उसका हृदय विदीर्ण होने लगता है।[६]

हिन्दी के प्रेमाख्यानक काव्यो में प्रधान रस शृगार है जिसका वर्णन उसके दो रूपो-सयोग तथा विप्रलम्भ मे हुआ है। सयोग शृगार मे कवियो ने नायक-नायिका का मिलन कराया है। ये अवसर प्रायः विवाह के पश्चात् सुहागरात तथा दीर्घ विच्छेद के पश्चात् मिलन के रूप मे आते है।[७] इस मिलन के समय हास-परिहास भी होता है। 'पद्मावत' मे सुहागरात से पूर्व सखियो का आगमन होता है जो रत्नसेन के योगी वेष की खिल्ली उडाती है।[८] इस मे संयोग के साथ-

---

१. मुल्के रैणा जि बहर वस्ले बेताब, बगुलशन मुज़तरिब मानन्द सीमाब—
पृ० ५६।
२. द्रष्टव्य—लैला मजनू, कबीरलोन, पृ० २२।
३. द्रष्टव्य—सोहनी मेयवाल, पृ० २६।
४. द्रष्टव्य—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० २२, २७।
५. सपुन जन जैफरान तस गुल अनारस,
सपुन तस अरिण रग तत हिय पानस।—ज़ेबा निगार, पृ० १७।
६. गुलालअह् बागे जानुक प्योम बर खाक,
मे कत्यू क्याह रुद्ध जुज दागे दिल चाक।—वामीक अजरा, पृ० ३२।
७. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० २८६।
८. धातु कमाय सिखाय तें जोगी। अब कस जस निरधातु वियोगी।—
जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ३२०।

साथ सम्भोग का भी चित्रण हुआ है जिसके कारण इस मे कुछ अश्लीलता का समावेश हुआ है।[1] मझन की 'मधुमालती' मे सम्भोग शृंगार का चित्रण नही है। इस मे कवि ने मधुमालती की केवल प्रथम समागम वाली लज्जा का ही चित्र-मात्र अंकित किया है :

एक पिरीत जिय पिय कै औ मे परथम संग।
तिसरें लाज बियापति उपज न दुहु रति-रंग।[2]

'चित्रावली' मे भी पहेली बूझने तथा वाक्-चातुर्य की चर्चा हुई है। कुंवर सुजान के जोगी हो जाने पर चित्रावली जो व्यंग करती है उसका अश्लीलतापूर्ण वर्णन हुआ है :

सेद थंभ रोमांच तन, आसु पतन सुरभग
प्रथम समागम जो कियो, सीतल भा सब अंग।[3]

किन्तु 'इंद्रावती' मे राजकुंवर तथा इंद्रावती के विवाह द्वारा आत्मा एवं परमात्मा का मिलन कराए जाने के संकेत मे अश्लीलता का आभास नहीं मिलता किन्तु फलाहार के रूपक बांधने में कवि की उक्ति मे अवश्य कुछ अश्लीलता आ गई है :

कुच श्रीफल बादाम दृग, अधर खाड सम आहि।
चाहौ सो फरहार मे, पावौ लेउ सराहि।[4]

इस प्रकार हिन्दी-सूफी-कवियो ने संयोग-शृंगार मे सम्भोग के कायिक पक्ष का विशद वर्णन किया है। ऐसा करते हुए उन्होने मर्यादा को त्याग दिया है। निसार के 'यूसुफ जुलेखा' के संयोग-शृंगार मे कश्मीरी काव्यों की भाति कायिक भोग का वर्णन नही हुआ है अपितु इस मे विवाह के अनन्तर यूसुफ एवं जुलेखा के इश्क हकीकी की ही चर्चा हुई है।[5]

वियोग का चित्रण बारहमासे के रूप मे अत्यन्त गंभीर, मार्मिक तथा निर्मल ढंग से किया गया है। नागमती को सारा संसार जलमय दिखाई देता है। उस की नौका बिना खेवक के है। स्वयं नाव थक गई है अतः उसकी भेंट प्रियतम के साथ कैसे हो सकती है :

---

१. द्रष्टव्य—जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ३४८-३५१।
२. मधुमालती, पृ० २३६। ३. चित्रावली, पृ० २०४।
४. इंद्रावती, उत्तरार्द्ध।
५. चालीस बरस जोग में कीन्हा, सुन कै नांव सबै कुछ दीन्हा।
जब तोर नांव सुनावै कोई, पावै लाख देऊं जो कोई।
बीस बरस रह्यों दरस अधारा, बीस बरस सुन नाम संभारा।

परवत समुद अगम बिच बन बेहड घन ढख ।
किमि करि भेटौ कत तोहि ना मोहि पांव न पाव ।[1]

'चदायन' मे चाद भी लोरक के विरह मे अत्यन्त व्याकुल होकर कहती है

हौ निसि चाद सुरुज कब पावउ । देवस होइ चढि सरग बोलावउ ।[2]

विरही को पावस की रिम-झिम वर्षा तथा शरद्-ऋतु की निर्मल एवं स्वच्छ चादनी और शीतलता दाहक प्रतीत होती है। इसका चित्रण मझन ने अपनी 'मधुमालती' मे किया है।[3] 'चित्रावली' मे नायिका चित्रावली पत्र लिखते समय नायक सुजान को यह प्रदर्शित करती है कि उसका ही सपूर्ण विरह इस सृष्टि मे व्याप्त है।[4] 'हस जवाहिर' मे प्रिय के वियोग मे दुख-कातरता तथा आश्रयहीनता का भाव परिपूर्ण रूप से व्यजित हुआ है :

नैन चुवै जस सावन ओरी, पिउ बिन नाउ को खेयै मोरी।[5]

'इद्रावती' मे वियोगावस्था की दसो दिशाओ का चित्रण हुआ है। इस में कवि ने बारहमासे का वर्णन विरह को उद्दीप्त करने के लिये किया है .

सुन्दर वाक मनाक न भावै, गगन चाक उद्वेग सतावै ।[6]

कवि निसार ने भी वियोग-वर्णन मे बारहमासे की परम्परा का निर्वाह 'यूसुफ-जुलेखा' मे किया है ।

अन्य रस

शृंगार के अतिरिक्त कश्मीरी तथा हिन्दी प्रेमाख्यानो मे वीर रस का वर्णन हुआ है। प्रभु की पीडा मे विह्वल सूफी-कवियो ने काव्य-सृजन को आध्यात्मिक साधना का एक मनोरम और लोक-प्रिय रूप मान लिया है। उनके काव्य मे प्रेम-रस (शृंगार) की प्रधानता है। युद्ध-वर्णनो के अवसर पर वीर-रस की जो झलक दिखाई पडती है, वह उस रस के परम्परागत प्रभाव की सूचक है। वीर और शृंगार काव्य-शास्त्र की दृष्टि से भले ही परस्पर विरोधी हों, काव्य-प्रयोग

---

१. जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ३५५ ।

२. चदायन, पृ० १६१ ।

३. भादो भरम भयावनि राति ।
विरह दवा मोहि सेज संघाती ।
सिघ मघा पावस झकझोरी ।
पेम सलिल दुहुं लोयन ओरी । मधुमालती, पृ० २१४ ।

४. गयो सीखि पपीहा मन बोला, अजहूं कोकत बन बन डोला ।
उड़ा परेवा सुनि मम बाता, अजहूं चरन रकत सो राता । पृ० १६७ ।

५. वही, पृ० १३७ ।   ६. पूर्वार्द्ध ।

मे वे एक-दूसरे के प्रेरक रहे है।[1] इन दो प्रधान रसो के अतिरिक्त इन मे शान्त, वात्सल्य, वीभत्स तथा करुण-रस आदि का भी समावेश हुआ है।

कश्मीरी सूफी-काव्य, बहराम व गुल अन्दाम मे नायक बहराम मल्लयुद्ध मे प्रवीण है। वह कई देवो से युद्ध करता है।[2] 'चन्द्रवदन' मे मैयार की सहायता के लिये पट्टन नगर पर आक्रमण किए जाने का भी वर्णन है।[3] शान्त-रस का वर्णन 'लैला-मजनू' मे हुआ है जबकि मजनू शान्ति प्राप्त करने के लिये नज्द-वन मे जाता है।[4] 'यूसुफ जुलेखा' मे वात्सल्य रस का अद्भुत चित्रण हुआ है। पिता याकूब अपने प्रिय पुत्र यूसुफ के लिये विलाप करता है।[5] इसी प्रकार 'जेवा निगार' मे पिता अपने पुत्र निगार के लिये व्याकुल होता है और उसके वात्सल्य का बाध फूट पडता है।[6] वीभत्स इसका वर्णन खून के आसू बहाने के रूप मे हुआ है।[7] इसी भाति करुण-रस का परिपाक लैला-मजनू,[8] शीरी खुसरो[9],

---

१. द्रष्टव्य—मूल शोधप्रबन्ध, मध्ययुगीन हिन्दी कवियो के सकेतित व व्यवहृत काव्य-सिद्धान्तो का अध्ययन, पृ० ३७१।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३।

३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७

४. (१) लैला मजनू, गामी, द्रष्टव्य—पृ० १२।
   (२) वही, पीर गुलाम मही-उद्-दीन (मिसकीन), द्रष्टव्य—पृ० ५६।
   (३) वही, कबीर लोन, द्रष्टव्य—पृ० २६।

५. कतियू छाडत बो कस अअछ्अ हाल चोनुय, मे चानी पुछि ल्वगुम वोअन्य जूनि ग्रानवी। मतो चलतम मतो चलतम मत्यो हो, यितम दर्शुन दितम मे हावतम रो।—हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २७।

६ द्रष्टव्य—वही, पृ० ६२।

७. द्रष्टव्य—लैला-मजनू, गामी, पृ० ६।
   द्रष्टव्य—हारुन रशीद, पृ० ८।
   द्रष्टव्य—रैणा व जेवा, पृ० १०। द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, गामी, पृ० १०।
   द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २१।
   द्रष्टव्य—मुमताज़ बेनज़ीर, हक्कानी, पृ० ९३।

८. द्रष्टव्य—लैला-मजनू, गामी, पृ० १३।
   द्रष्टव्य—लैला-मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० ८२।
   द्रष्टव्य—लैला-मजनू, कबीर लोन, पृ० २८।

९. द्रष्टव्य—शीरी खुसरो, गामी, पृ० १५।

यूसुफ-जुलेखा,[१] हियमाल[२] तथा वामीक-अजरा[३] आदि काव्यो मे हुआ है।

हिन्दी-प्रेमाख्यानो मे से 'चदायन' तथा 'पद्मावत' आदि वीर-रस का वर्णन हुआ है। 'चदायन' मे लोरक की वीरता का वर्णन इस प्रकार हुआ है :

फिर सजोइ कटार लीन्ह, बाध चला तरवारि।
रकत पियास खाड लोर कर, दौरा जीभ पसारि।[४]

'पद्मावत' मे रत्नसेन दिल्ली-नरेश अलाउद्दीन के दूत से कहता है :

तुरुक जाइ कहु मरै न धाई। होइहि इसकदर कै नाई।
सुनि अम्रित केदली बन धावा। हाथ न चढा रहा पछितावा।[५]

अन्य काव्यो मे भी वीर रस है परन्तु वह इतना सजीव नही।[६] शात-रस का वातावरण 'पद्मावत' की समाधि पर उपस्थित किया गया है :

राती पिय के नेह गइ सरग भएउ रतनार।
जो रे उवा सो अथवा रहा न कोउ ससार।[७]

वात्सल्य रस तथा बीभत्स रस के एकाध चित्र ही मिलते है। करुण रस शृगार एव वात्सल्य की क्रोड़ मे ही आया है। इसकी कोई स्वतन्त्र महत्वपूर्ण सत्ता नही है।[८]

६—कला पक्ष

कश्मीरी प्रबन्धकाव्यो मे मसनवी-शैली का पालन किया गया है जिनके बीच-बीच मे गजलो का भी समावेश हुआ है। इन कश्मीरी मसनवियो की विधा व विकास ईरानी है, मगर ये फारसी मसनवियो की अपेक्षा भ्रातियो तथा पेचीदगियो से रहित है।[९] इन मे फारसी बह्रो का अनुकरण तो हुआ

१. द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, गामी, पृ० १८।
द्रष्टव्य—हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० ७८।
२. द्रष्टव्य—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० ६७-६८।
द्रष्टव्य—हियमाल, सैफ-उद्-दीन पृ० ७५।
३. द्रष्टव्य—वामीक अजरा, सेफ-उद्-दीन, पृ० ३०।
४. चदायन, पृ० १४७।
५. जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ४४६।
६. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० ३२४।
७. जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ५५४।
८. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० ३२७।
९. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० ९१।

है ।[1] किन्तु कश्मीरी शायरी की कुछ एक बह्रे फारसी बह्रो से बिल्कुल पृथक दिखाई देती है ।[2] गामी का काव्य तो चार बह्रो रमल मुस्मिन, खफीफ मुस्दस, मुतकारिब मुस्मिन, रमल मुस्दस मे लिखा गया है किन्तु अधिकतर कश्मीरी कवियो की बह्रे स्थानीय भावात्मक विशेषताओ तथा फारसी एव उर्दू के प्रभाव के कारण कुछ बिगड गई दीखती है। यद्यपि इन बह्रो की अपनी ध्वन्यात्मकता है वे मिश्रित बह्रो के प्रयाग भी कहे जा सकते है ।[3] मसनवी पद्धति के विषय मे स्वय जामी का कथन है कि मसनवियो मे कवि को शैली तथा तुक के सम्बन्ध मे स्वतन्त्रता होती है ।[4] कश्मीरी प्रबन्धकारो ने तुक की ओर ध्यान तो रखा है किन्तु अधिक विद्वान न होने के कारण बह्रो मे अवश्य कुछ परिवर्तन दिखाई देता है ।

कश्मीरी-सूफी कवियो को फारसी-विचारधारा की अभिव्यक्ति के लिये कश्मीरी मे उपयुक्त पारिभाषिक शब्द उपलब्ध न थे,[5] अत उन्होने उर्दू एव फारसी के शब्दो को प्रचुर मात्रा मे अपनाया। 'जेबा-निगार' मे उर्दू की पक्तियो को कही-कही पर स्थान दिया गया है।[6] 'मुमताज बेनजीर' मे उर्दू की गजल का भी समावेश हुआ है ।[7] इन सभी सूफी-काव्यो मे निज़ामी तथा जामी की भाति प्रत्येक कवि ने प्रसगो के अनुकूल फारसी मे शीर्षक दिये है, जबकि 'गुलरेज' मे ये शीर्षक कश्मीरी मे दिये गये है।

हिन्दी सूफी-काव्यो की सर्जना मे प्रात फारसी मसनवी पद्यति को गृहीत

---

१. यस फेरि मनस इश्कुन चूर, रग-रग हंगस गुल लागनस ।
यह आसि कनस शौकुक दूर, दर्दकि खमखानअह मय चावनस ।—लैला मजनू, गामी, पृ० ९ ।

२. बहारस वस्लकिस ओनुथम, खज़ा अज़ बादे महजूरी,
हिय थअर जन फ्वलय स्वरित, पोहन यन मा हरे ब्वम्बरो ।
—यूसुफ जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २३ ।

३ द्रद मजनून द्राव लअलि हुअजि राये, लअल रूज छाये मअतिस वुछुन
कैसर शाहन ह्योप हा वज़ीर म्याने, अज़ मे सपदुप बख्त बेदाद ।—लैला मजनू, कबीर लोन, पृ० २६ ।

४ मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० २५३ ।

५. कश्मीरी जबान और शायरी, पहला भाग, पृ० १०८ ।

६ द्रष्टव्य—पृ० ८२ ।

७ द्रष्टव्य—पृ० १३९ ।

किया गया है पर उनका अन्धानुकरण नही किया गया है।[1] हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यानक काव्यो मे जो प्रबन्ध-रूढिया मिलती है, वे अधिकतर भारतीय चरित-काव्यों की है।[2] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का कथन है कि इन प्रेमगाथा काव्यो के सम्बन्ध मे पहली बात ध्यान देने की यह है कि इसकी रचना बिल्कुल भारतीय चरित-काव्यो की सर्गबद्ध शैली पर न होकर फारसी की मसनवियो के ढग से हुई है जिनमे कथा सर्गो या अध्यायो मे विस्तार के हिसाब से विभक्त नही होती, बराबर चली चलती है, केवल स्थान-स्थान पर घटनाओ या प्रसगों का उल्लेख शीर्षक के रूप मे दिया जाता है।[3] 'चदायन' की प्रति मे भी खण्ड-विभाजन के रूप मे प्रायः कड़वको के शीर्षक दिये गये हैं। इन सूफी-काव्यो मे संस्कृत के महाकाव्यों की भाति सर्गो या खण्डो मे विभाजन नही है।

फारसी की मसनवियो मे जिन छदो का प्रयोग हुआ है, उनका प्रयोग हिन्दी के प्रेमाख्यानो मे नही हुआ है।[4] सूफी-कवियो ने दोहा-चौपाई का एक निश्चित क्रम स्थिर किया। कुतबन तथा मझन ने पाच अर्द्धालियो के उपरान्त एक दोहे का क्रम रखा है। मलिक मुहम्मद जायसी तथा उसमान ने सात अर्द्धालियो के पश्चात् एक दोहा रखा है। शेख नबी ने भी सात अर्द्धालियो के उपरान्त दोहे का क्रम रखा है। भाषा की दृष्टि से इन कवियों ने अवधी को ही अपनाया। अधिकाश हिन्दी के सूफी-कवि अवध-प्रान्त के रहने वाले थे, अतः काव्य मे अवधी का प्रयोग उनके लिये स्वाभाविक था।[5]

अलंकार

कश्मीरी प्रबन्ध काव्यो मे अलंकारो का कोई सजग प्रयोग नही मिलता। भावों की सुव्यंजना तथा उनकी तीव्रता के लिये ही इनका प्रयोग किया गया है। इन कवियों ने अधिकतर साम्य मूलक अलकारो जैसे उपमा, उत्प्रेक्षा तथा रूपक आदि का ही प्रयोग रूप-सौदर्य-वर्णन मे किया है। इसके अतिरिक्त इन काव्यों मे प्रतीप, अतिशयोक्ति, सन्देह तथा व्यतिरेक अलकारो का भी व्यवहार किया गया है।

उपमा का वर्णन करते हुए इन कवियों ने अधिकतर उपमान साहित्यिक परम्परा से लिये हैं। जैसे:—

---

१. मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य, पृ० ३३९।
२. वही, पृ० ३३६।
३. जायसी ग्रन्थावली, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, भूमिका पृ० ४।
४. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० २५५।
५. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २६१।

(क) तमुन्द मोए स्याह मुश्के तअरी,
मरस पैवस्तअह अन्दर नाफअहकअरी।[1]

(ख) होग्यन चअन्य सेब तम अअस मुदवर।[2]

(ग) ज़िनखदा सेब जन्नत या बिही तम।[3]

अन्य अलकारो के उदाहरण इस प्रकार है .

उत्प्रेक्षा (क) जबीन गिलगौन तम क्या ओस मोज़ून,
मिलित चदुन बलित खुनुक शफक ज़न।[4]

(ख) मुसल्लसल ग्रूबवुन क्याह ज़ुल्फ व काकुल,
जअह गैमू जन परेशान ताज़अह सुवल।[5]

(ग) तमुन्द रुख आफताब जन मुन्वर।[6]

रूपक . (क) कमान-अब व यबरजल-चश्मे जादू।[7]

(ख) परी सूरत सअ बिल्कुल गरक दर नूर।[8]

---

१. अर्थात् उसकी सुगधित केशराशि की महक पुष्पो से खिले सरोवर की सुगधि के समान चतुर्दिक् फैल रही थी। गुलरेज़, सपादक, मुहम्मद यसुफ टेग, पृ० ७२।

२. अर्थात् उसकी ठोडी सेब के समान चमक रही थी। ज़ेवा-निगार, पृ० १०।

३. अर्थात् उसकी थोडी स्वर्ग (कश्मीर) के सेब अथवा बिही (एक फल) के समान सुन्दर थी। —हियमाल, सैफ-उद् दीन, पृ० १०।

४. अर्थात् वह अनुपम सौदर्यशालिनी यवती ऐसी प्रतिभासित होती थी मानो आकाश मे चन्दन से आवेष्टित चद्रमा चमक रहा हो। लैला-मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० ५।

५. अर्थात् उसके मुख पर शोभा देने वाले दो जुल्फ ऐसे सुन्दर प्रतीत होते है, मानो दो ताज़ा सुबल पुष्प खिले हुए हो। गुलरेज़, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ७२।

६. अर्थात् उसका मुख मानो सूर्य की भांति चमक रहा हो। ज़ेबा-निगार, पृ० १०।

७. अर्थात् भौह रूपी धनुष तथा नर्गिस रूपी नेत्रों से वह जादू करती थी। —गुलरेज़, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ११८।

८. अर्थात् उसका अप्सरा रूपी मुख सौदर्य के कारण अत्यन्त प्रकाशवान् था। —ज़ेबा निगार, पृ० ७।

प्रतीप : वुछित गोमुत जिगर खून अनारन।[१]

अतिशयोक्ति :

(क) जि बेरहमी तसजअह चश्मअह मखमूर
वआशवह कत्ल मर्दम क्याह करन पूर।[२]

(ख) बरअह गयि चश्मअह डीशिथ गयि यबरजल,
चलिथ गयि हिरण हागल लग्य जगल।[३]

(ग) ड्यक तस सुबहा ख्वतन ओस रोशन।[४]

(घ) रुखस प्यठ खाल तम्यसुन्द याम ड्यूठुम।
अजअयिब जन दोहस मज शाम ड्यूठुम।[५]

व्यतिरेक : शाहजादम क्या वनै रुत ख्वय ओस,
आफताबअह ख्वतअह जेबा रोअय ओस।[६]

कश्मीरी सूफी-कवियो ने सादृश्य-योजना के लिये रति-भाव की पुष्टि करने वाले शृगारिक वर्णनो मे भी ऐसे उपमानो का प्रयोग किया है जो उसके अनुकूल सिद्ध नही होते, अपितु रति के पोषण के विपरीत वे वितृष्णा उत्पन्न करते है और बीभत्स की उपस्थित का सकेत कर देते है। ऐसे वर्णन मे ऊहात्मकता का समावेश हुआ है। 'रक्त के आसू' बहाने की कल्पना इस प्रकार की गई है।

(क) ल्वग वदने अश्कह कनि तअम्य त्रोव खून।[७]

---

१. अर्थात् उसकी विरहाग्नि से ही अनारो का हृदय लाल हो गया है। ज़ेबा निगार, पृ० ९।

२. अर्थात् उसकी दोनो मस्त आखे जलकणो सहित देखने वालो के हृदय पर छुरी चलाती है। जेबा निगार, पृ० ८।

३. अर्थात् उसके नेत्रो की शोभा देखकर नर्गिस का रग फीका पड गया तथा सभी हिरण एवं बारहसिघे बनो मे भाग गए। गुलरेज़, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ७३।

४. अर्थात् उसका मस्तक प्रातःकालीन आभा से भी अत्यधिक सुन्दर था। लैला मजनू, गामी पृ० २।

५. अर्थात् उसके मुख पर चमकने वाला तिल ज्यो ही देखा, त्यो ही आभास हुआ जैसे दिन मे सध्या का निवास हो। बहराम व गुल अन्दाम, पृ० ४।

६. अर्थात् राजकुमार के सौदर्य का क्या कहना, वह जाज्वल्यमान सूर्य से भी अधिक सुन्दर था। हारुन रशीद, पृ० ४।

७. अर्थात् वह रोकर आसुओ के बदले खून बहाने लगा। हारुन रशीद, पृ० ८।

(ख) म्यठाह गम प्योम चश्मअव किन्य हारुन खून ।[1]

(ग) अच्छ्यव किन्य खून दिल यछ गोम जअरी ।[2]

(घ) दर वादी गम हरान अच्छ्यव खून ।[3]

गामी के 'लैला मजनू',[4] तथा यूसुफ जुलेखा,[5] मे भी इन रक्त के आसुओ का वर्णन हुआ है । सिक्ख-शासन के समय 'कश्मीरी-काव्य मे पजाबी शब्दो का भी समावेश हुआ[6] :

कदम मेरा चलना नही अगाहान, इस जजबे ने मोडान्दा विछाहान ।[7]

हिन्दी प्रबन्धकाव्यो मे भी भावो की तीव्रता के लिये अर्थालिकारो का प्रयोग हुआ है । इन सूफी-कवियो ने, वाक् वैदग्ध्य दिखाने वाले अलकारो का प्रयोग अधिक नही किया है, न ही इन कवियो को काव्य के क्षेत्र मे चमत्कार-प्रदर्शन की इच्छा ही थी ।[8] अर्थालिकारो मे उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, उल्लेख, सन्देह तथा अतिशयोक्ति आदि का प्रयोग हुआ है :

उपमा :

(क) भौह धनुक धनि धानुक दोसर सरि न कराइ ।
गगन धनक जो ऊगवै लाजन्ह सो छपि जाइ ।[9]

(ख) सुधा समान जीभ मुख बाला, औ बोलति अति वचन रसाला ।[10]

---

१. अर्थात् अत्यन्त दुःख के कारण ही उसने आखो से खून बहाया । रैणा व जेबा, पृ० १० ।

२. अर्थात् हृदय का दुःख नायिका के नेत्रो से आसुओ के बदले खून के रूप में बह निकला ।—यूसुफ जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २१ ।

३ अर्थात् दुःख का मारा घाटियो मे घूमता-फिरता हुआ आखो से खून बहाने लगा । —मुमताज बेनजीर, पृ० ६३ ।

४. द्रष्टव्य—लैला-मजनू, पृ० ६ ।

५. द्रष्टव्य— यूसुफ जुलेखा, गामी, पृ० १० ।

६. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सानि अदबअच-ज़ान, डिस्कोरसिज नं० ५, श्री प्रताप कालेज, श्रीनगर, प्रकाशक—मही-उद्-दीन हाजनी, जुलाई १९६०, पृ० ९ ।

७. जेबा निगार, पृ० ८२ ।

८. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २५५ ।

९. जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १८८ ।

१०. मधुमालती, पृ० ५० ।

उत्प्रेक्षा :

(क) अम्ब्र फार जनु मोतिह भरे। ते लइ भौह के तरे धरे।[१]

(ख) पुहुप सुगन्ध करहिं सब आसा। मकु हिरगाइ लेइ हम बासा।[२]

रूपक :

(क) चतुर कला सभ नागरि सुबुधि सुमत सुजान।
भौह धनुक सर बरुनी मारहि ताकि परान।[३]

उल्लेख :

एक कहा लट सो मुख सोभा, हीरा अधिक लखि मुरछा लोभा।
एक कहा लट नागिन कारी, डसा गदल सो गिरा भिखारी।
एक कहा लट जामिनि होई, रात जानि जोगी गा सोई।[४]

सन्देह :

दसन बीच दाडिम को, की मोती लर होइ।
की हीरा की नषत है, चमक बीज अस सोइ।[५]

अतिशयोक्ति :

मिरिग सजग भइ दहु दिसि हेरइ।
चीन्हि कै सीह सेदूर अहेरइ।[६]

इसके अतिरिक्त इन काव्यो मे अन्त्यानुप्रास सर्वत्र सुन्दर रूप मे मिलता है।[७] जैसे—

तेहि पर राजकुवर एक भारी। देखि भरम बहु मति भइ बारी।[८]

हिन्दी के सूफी प्रबन्धकाव्यो मे भी कवियों ने रति-भाव की पोषकता के विपरीत बीभत्सता का वर्णन करके 'रक्त के आसू' बहाने की उद्भावना निम्न-लिखित रूप मे की है :

(क) रक्त के आसु परे भुइ टूटी। रेगि चली जनु वीर बहूटी।[९]

(ख) रक्त रोइ मै अस कै। चोलि चीर रतनार।[१०]

(ग) रकत आसु धर परे जो टूटी। सावन भए ते वीर बहूटी।[११]

---

१. चदायन, पृ० ११९

२. जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १८९।

३. मधुमालती, पृ० १०९। ४. इद्रावती, उत्तरार्द्ध।

५. वही। ६. मधुमालती, पृ० ५५।

७. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० ३६१।

८. मधुमालती, पृ० ५५।

९. जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ३५५।

१०. चंदायन, पृ० ३०८। ११. मधुमालती, पृ० २१४।

इन सूफी-कवियो ने अपने अप्रस्तुत-विधान मे अधिकाश परम्परागत सादृश्य योजना मे की है तथा रसात्मक प्रसगो मे अधिकाश भाव के अनुरूप अनुरंजनकारी अप्रस्तुत की ही योजना की है। इन परम्परागत उपमानो मे कुछ अवश्य ऐसे है जिनसे भावोत्तेजना मे बाधा उपस्थित होती है, जैसे गले की सूक्ष्मता के वर्णन मे उसके अन्तर्गत पीक का संसार दिखाई देना, मास, रक्त एव मज्जा के द्वारा दु.ख प्रदर्शित करना, जाघो की उपमा कदली वृक्ष मे न देकर हाथी की सूड से देना।[1]

प्रतीक-योजना

प्रतीक अप्रस्तुत, अमूर्त और अदृश्य वस्तु का चित्र नही खीचता, केवल उस के वैशिष्ट्य और प्रभाव का सकेत प्रस्तुत मूर्त और दृश्य वस्तु द्वारा करता है।[2] हाफिज़, रूमी, अत्तार तथा निजामी आदि फारसी के सभी समर्थ सूफी-कवियो ने प्रतीको के माध्यम से अपने विचारो को अभिव्यक्त किया है। उन्होने शराब, साकी तथा जाम के प्रतीको का आश्रय लिया। कश्मीरी प्रबन्ध-काव्यो मे इन प्रतीको के अतिरिक्त गुलाब, बुलबुल, निशान, बहार, मुक्ता तथा खजर आदि प्रतीको का भी प्रयोग हुआ है। शराब का उल्लेख प्रेम के रूप में शीरी-खुसरो,[3] 'यूसुफ-जुलेखा'[4] (महमूद गामी), 'ज़ेबा निगार',[5] तथा 'चन्द्रवदन'[6] आदि प्रबन्ध-काव्यो मे हुआ है। साकी को सत्य अस्तित्व के प्रतीक के रूप मे 'चन्द्रवदन' मे वर्णित किया गया है,[7] किन्तु महमूद गामी ने उसे 'उन्मत्त प्रेमी' के लिये भी प्रयुक्त किया है।[8] जाम आदि का प्रतीक भी, चन्द्रवदन मे आया है।[9] मुमताज़

---

१ जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २५४।

२. विश्लेषण, वर्ष पहला, अक पहला मार्च ६५ लेख पंजाबी सूफी-काव्य मे प्रतीक योजना, यश गुलाटी, पृ० ३६।

३. यि मस्ती छअमनअह वुछुमअच ज़ाह् शराबस। पृ० ६।

४. मसअह छु मस्तानअह् बो कअरथस खराब। पृ० ८।

५. द्वय त्रअवित मय यकसान क्याह् च्योक। पृ० ५८।

६. रिन्दव च्यव मस्तानअह मय इश्कनी मैखानअह्। पृ० २।

७. ल्वोदमुत मय कलवालन,
रिन्दव च्यव मस्तानअह्। पृ० २।

८. शर्बत कअम्य चोवुक दामअह् हा कलवाल मतं। लैला-मजनू, पृ० १३।

९. यवोद सनी मज़ सीनस, रूय कास्तो आईनस,
मज़ाज़ किअन प्यालन, ल्वोदमुत मय कलवालन। पृ० २।

बेनजीर मे कवि ने कहा है :

ख्याली गअय मय वस्लअक च्यवान जाम ।[1]

'गुलाब' को केवल नायिका किन्तु बुलबुल को नायिका एवं आत्मा दोनो के प्रतीकात्मक रूपो मे अपनाया गया है । 'गुलरेज' मे नायिका को गुलाब के प्रतीक रूप मे लिया गया है ।[2] नायिका के लिए बुलबुल का प्रतीक 'लैला मजनू' मे आया है ।[3] आत्मा के प्रतीक-रूप मे बुलबुल का प्रयोग 'हारुन रशीद' मे हुआ है ।[4] कही-कही पर बुलबुल को नायक का प्रतीक भी माना गया है ।[5] उल्लास के लिए निशात,[6] वस्ल के लिए बहार,[7] आसुओ के लिए मुक्ता[8] तथा वियोग के लिए खजर[9] आदि प्रतीको का प्रयोग हुआ है ।

कश्मीरी कवियो ने परमात्मा के प्रति जीवात्मा के प्रेम को कई प्रतीको द्वारा व्यजित किया है जिन मे से दीपक और पतग,[10] गुल और बुलबुल,[11] मतलूब और तालिब,[12] बहार और बुलबुल,[13] प्रकाश और सूर्य[14] तथा भ्रमर व यबरजल (नर्गिस)[15] आदि प्रमुख है । इन काव्यो मे जहा भी नायिका के मुख-सौंदर्य का वर्णन किया गया है, वहा उन्होने इसी समन्वित सौदर्य के प्रतीक को प्रकट करने की चेष्टा की है ।

---

१. अर्थात् नायक तथा नायिका दोनो वस्ल (ईश्वर-मिलन) के जाम पीते गये, पृ० २५१ ।

२. गुलाबाह जन छु फवलमुत सुबलन मज । सम्पादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ७४ ।

३. दितुन बुलबुल सिफ्ते फरियाद व नारअह । पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० १७ ।

४. पजरअह मजअह याम बुलबुल चूरि च्वल, म्यचि मुर आवारह गव ताम रगअह डल, पृ० ११ ।

५. बुलबुल आशके गुल काव छुय नअह । गुलनूर-गुलरेज, पृ० ७ ।

६. (१) निशातस ऐशकिस फसले बहार आयो, जेबा निगार, पृ० ५२ ।
(२) निशातस ऐशकुय पचल योस्मन पोश । वामीक अजरा, पृ० ९ ।

७. बहारस वस्लकिस ओन्थम, खज़ा अज बादे महजूरी । यूसुफ जुलेखा । हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २३ ।

८. म्वक्तअह जन होरुन जअ दीदअह दा दुआ । हारुन रशीद, पृ० ३ ।

९. (१) फराकअच खाक लअइत दिल कुतरथम । वामीक अज़रा, पृ० ९ ।
(२) कअरथम स्वनस मे सरतल यवोद लायहम चह करतल । जेबा निगार, पृ० ३९ ।

१० (क) यवोद वनै असि सअत्य रोजी अक दमाह्, पोपरिक पअठ्य गत करि है शमा । यूसुफ जुलेखा, गामी, पृ० १३ ।

(ख) पोपुर शमअस पान जालअनी, मुश्ताक शब व रोज दीदारस ।
हियमाल, वलीअल्लाहमतो, पृ० ६६ ।

(ग) शमा सूरत वुछित परवानअह् गोसअय, परीरुख डेश्यवुन दी वानह गोसअम । वामीक अजरा, पृ० ६ ।

(घ) चअ शमअह् खानअह् बो परवानअह् चॅ ह्यत । हियमाल, सैफ-उद्-दीन, पृ० ४० ।

(च) तगी परवानसअय शमुक वुछुन नूर, यमिस बर शोलअ दर यकदम गछान सर ।—गुलरेज, सम्पादक, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० २३७ ।

(छ) शमा जन अस रिवान पान मारान, सअ कअरमअच सोख्तह पोपुर इश्कअह् नारन । लैला-मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २७ ।

(ज) बजान परवानअह आन शमअह सपुन, परेशानी चजिस दिल जमा सपुन । जेबा-निगार, पृ० ५ ।

११. (क) शमीम गुंचअह चावान बुलबुलस मस, नसीम सुबह् हावान नव गुलस अस । वामीक अज़रा, पृ० २५ ।

(ख) सुय कुलकुय मजहरे कुन, सुय गुल तअ सअरी बुलबुल । चन्द्रवदन, पृ० २ ।

१२. (क) मुबारक तस यस गछी शौक गअलिब, पेयी मतलूब अजजान लागि तअलिब । सोहनी मेयवाल, पृ० ११ ।

(ख) छु वामीक तअलिब हक आशिके पाक, अभी मतलूब छस अजरा ति गमनाक । वामीक अजरा, पृ० १४ ।

१३ सु वक्ताह् क्याह् गनीमत द्वनवअन्य ओस,
अजब फसले बहारान बुलबुलन ओस ।—यूसुफ-जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन, 'मिसकीन', पृ० ६० ।

१४. वुछुम शहरस प्यमुत गाशाह् छु महताब, गटि च़जमअच तअ डीथिश गोस बेताब ।—गुलनूर-गुलरेज, पृ० १७ ।

१५ (क) द्वपुस इश्कन बन छु माने, हा ब्वम्बुर तअ यबरजअल जाने । लैला-मजनू, कबीर-लोन, पृ० २५ ।

(ख) ब्वम्बरों गजिस चानेकले, सुय नार गोम यबरजअले ।
यूसुफ-जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० १५ ।

उन्होन अपनी नायिकाओ के माध्यम से ईश्वरीय ज्योति को प्रकट करने का प्रयत्न किया है। महमूद गामी कृत 'लैला मजनू' मे लैला[१] 'शीरी खुसरो' मे शीरी,[२] वली अल्लाह मतो कृत 'हियमाल' मे हियमाय,[३] मकबूल शाह कृत 'गुलरेज़' में नोशलब,[४] सैफ उद्-दीन कृत 'वामीक अजरा' मे अजरा,[५] पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' कृत 'लैला मजनू' मे लैला,[६] 'जेबा-निगार' मे जेबा,[७] 'सोहनी-मेयवाल' मे सोहनी,[८] हक्कानी कृत 'चन्द्रवदन' मे चन्द्रवदन[९] 'मुमताज बेनजीर' मे 'बेनजीर',[१०] हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' कृत गुलनूर-गुलरेज' मे गुलनूर[११] तथा कबीर लोन कृत 'लैला-मजनू' मे लैला[१२] को परम सौदर्य का प्रतीक माना गया है। नायक आत्मा अथवा साधक का प्रतीक है जो

---

१. तिहिन्दि नूरह निशि गव पअदअह आलम, सु छुइ सूरत बमाने जिस्म आदम। गही तअम्य लअल लोगुय गाह मजनू, अशाकन हीलअह कअर्य कअर्य जान व दिल न्यून। पृ० २।

२. प्रजलवन्य छिस अलरवअन्य सत सितारअह, करअन तिम बेकरारन पारअह पारअह। पृ० ३।

३. पशान आशक छु तअम्यसुन्द साज डीशिथ, मशान तअम्यसुन्द सोरुय नाज डीशिथ। पृ० १९।

४. बआलम छुमनअह वुनक्यन काह ति सअनी, बनेमअच तस छि हुस्नच मेहर-बअनी। गुलरेज़, सम्पादक, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० ७१।

५. चरागे शामे गम या सुबह उम्मेद, फरोगे नूरे दिल या नूर जावेद। पृ० ५।

६. जबीनस मजहर नूर इल्लअही, हसीन पट शुबान तस पादशअहो। लैला-मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० ५।

७. छि रोशन अज़ जबीन व रोय आन हूर, दलील माने नूर अली नूर। पृ० ६।

८. न तस हता परी न हूरे जन्नत, तसन्दी हुस्नह सम्सारस छि मिन्नत। पृ० १०।

९. कूराह तस नूरह वुज़मल, तूरकि नूरअच मशाल। पृ० ३।

१०. जि आईनह छि रोशन साक पुर नूर, बगैग्त शोलहबर गव शमा काफ़ूर, पृ० १०।

११. चह वन्तम क्याह मे ड्यूठ्म न्यसफ रातन, यि नूराह क्या मे होवुम ज़ाति पाकन। पृ० १७।

१२. सतन ड्येड्यन अन्दर चाव वारअह वारय,
ग्वमुत तस अज फिराक ओस पारअह पारै। पृ० १६।

नायिका की प्राप्ति के लिए प्रेम-पथ पर अग्रसर होता है और तभी नायक-नायिका के प्रेम की कथा आत्मा और ब्रह्म के प्रेम की प्रतीकात्मक कथा होती है। लैला-मजनू (गामी)मे मजनू,[१] 'शीरी-खुसरो' मे फरहाद,[२] 'वामीक अजरा' मे वामीक,[३] 'जेबा निगार' मे निगार,[४] सोहनी-मेयवाल मे मेयवाल,[५] तथा 'चन्द्रवदन' मे मैयार,[६] आदि इसी रूप मे चित्रित किए गए है। 'यूसुफ-जुलेखा' मे जुलेखा ही साधिका है जो यूसुफ की प्राप्ति के लिए प्रयत्नमय रहती है।[७] नायिका का रूप वर्णन सुनकर अथवा स्वप्न या चित्र या साक्षात् दर्शन करके ही नायक प्रेम-पथ पर अग्रसर होता है। वह गुदडी (खिरका) पहनता है और मार्ग की कठिनाइयो की परवाह नही करता। खिरका प्राप्त मुरीद यह जानता है कि खुदा ने उसे स्वीकार किया है।[८] 'गुलनूर-गुलरेज' मे इस खिरके का उल्लेख हुआ है। जिसे नायक दिलाराम अपनी प्रेमिका को प्राप्त करने के लिए धारण करता है।[९] 'हारुन-रशीद' मे नायक अजीज कन्था धारण करके निर्गुण प्राप्ति के लिए अग्रसर होता है।[१०] लैला-मजनू(गामी कृत)मे भी मजनू कन्था धारण करके साध्य की

---

१ सु कोनअह खसे नज्द वनस, यस फेरि मनस इश्कुन चूर, पृ० ६।

२. वनन यारब कनन गछि ना सदा म्योन, बो छुस बन्दअह चअ छुक बरहक खुदा म्योना। पृ० १०।

३. सपुन शहजादअह वामीक ताजह मजनून, वदन हर दम बदन ओसुस पुर अज खून। पृ० ८।

४. शराबे बेखुशी च्यत गव सु सरमस्त, मताए दिल दितुन यकबार अज दस्त। पृ० १४।

५. न कअसि सअत्य ओसुय गुफतगू तस, ख्याले यार ओसुय रूबरू तस। पृ० १३।

६. हयजअन्य वोलथस माये, दीन नोवुम चानि माये। पृ० १०।

७. (१) पाक आशक आयस करान अल्विदा,
ओस यूसुफ खास माशूक खुदा। गामी, पृ० १८।
(२) बो दर खिल्वत अमी न्यूनस बसदजार,
बराय वस्ल ख्वद आयम बयकबार, यूसुफ जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन मिसकीन, पृ० ४६।

८ मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० २३५।

९. क्वडुन नालअह कबाहे बादशअही,
बोलुन खिरकअह च मर्दान इल्लअही। पृ० १५।

१०. जाहदह परहेज़ गअरी ख़िरकअह वल, खिरकअह पोशन निशि शैतान दूर च्वोल। पृ० ६।

प्राप्ति मे लीन होता है।[1] 'बहराम व गुल अन्दाम' मे भी नायक कन्था पहनता है।[2] कतिपय कश्मीरी प्रबन्धकाव्यो मे नायको द्वारा केवल भस्म मलने तथा वस्त्र फाडने की बात कही गई है।[3] प्रेम-पथ की कठिनाइयो का वर्णन सभी काव्यो मे हुआ है। पर्वतो,[4] दैत्य,[5] तूफान,[6] तथा समुद्र[7] आदि भी एक प्रकार से भयकर कठिनाइयो के प्रतीक होकर आए है।

हिन्दी के सूफी-कवियो ने अपनी भावनाओ या विचारो की अभिव्यक्ति के लिए भारतीय प्रतीको को ग्रहण किया है,[8] फिर भी मदिरा, साकी तथा मदिरालय का प्रयोग प्राय सभी प्रेमाख्यानो मे हुआ है।[9] इन कवियो ने जीवात्मा तथा परमात्मा के प्रेम की लहर एव सागर,[10] चन्द्रमा एव चकोर,[11] दीपक एव पतग,[12] कमल एव भ्रमर[13] तथा बूद एव समुद्र[14] आदि प्रतीको द्वारा अभिव्यक्त

---

१. जामअह त्रअवित तअ पानस जन्दअह् वोलुन। पृ० ४।

२. वोलुन तअम्य जअन्दअह म्वलुन तअम्य सूर तअ सास। पृ० १०।

३. द्रष्टव्य—लैला-मजनू, पृ० ४।
   द्रष्टव्य--हारुन-रशीद, पृ० ५।
   द्रष्टव्य—गुलरेज़, सम्पादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ८७।
   द्रष्टव्य—वामीक अजरा, पृ० ११।

४ द्रष्टव्य—शीरी खुसरो, पृ० १०।

५. द्रस्टव्य—बहराम व गुल अन्दाम, पृ० ६-६।

६. द्रष्टव्य—मुमताज बेनजीर, पृ० .१३।

७. द्रष्टव्य—गुलरेज, सम्पादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० १११।

८. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० २२६।

६. अरे अरे कलवार पियारे, मदिरा ढारे नैन तुम्हारे।
   एक पियाला भर मद दीजै, मोल पियारो मानस लीजै। इद्रावती, उत्तरार्द्ध।

१०. तुइ जो समुद मैं लहरि तुम्हारी, मै जो बिरिख तुइ मूल। मधुमालती, पृ० ७०।

११. चकई बिछुरि पुकारं कहा मिलहु हो नाह। एक चाद निसि सरग पर दिन दोसर जल मांह।—जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १६१।

१२. करत न हत्या आप वह, इन्द्रावति रमनीय,
    दीपक कहत पतग सो, मो पर दे ते जीप। इन्द्रावती, पृ० ८३।

१३. भंवर आइ बनखंड़ हुति लेहि कवल के वास
    दादुर बास न पावहि भलेहिं जो आछहि पास।—जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १३६।

१४. वह समुद्र आगे हम लोगें, बिन्दु समां आवै केहि जागै। अनुराग बांसुरी।

किया है। इन मे नायिका परम-सौंदर्य की प्रतीक है। मझन कृत 'मधुमालती' मे मधुमालती के माध्यम से दैवी सौंदर्य को हृदयगम कराने का प्रयत्न किया गया है। कुतबन कृत 'मृगावती' की नायिका परम-सुन्दरी है। जायसी कृत 'पद्मावत' की पद्मावती ईश्वरीइ ज्योति को प्रकट करने वाली है। नायक आत्मा के प्रतीक रूप मे चित्रित किए गए है। ये सभी नायक नायिका की प्राप्ति के लिए मार्ग की कठिनाइयो की कोई परवाह नही करते। इन प्रेमाख्यानो मे यात्रा का प्रतीक भी ग्रहण किया गया है। यात्रा का यह प्रतीक लेते हुए भी हिन्दी के सूफी-कवियो ने आत्मा के उन्नयन की विचित्र श्रेणियो को अपने ढंग से स्पष्ट करने की चेष्टा की है।[1] 'चित्रावली' मे साधना के निरन्तर विकास को लक्षित करने मे कवि ने मार्ग मे आने वाले विषयात्मक अन्तरायो को 'पुरो' की सज्ञा दी है।[2] पहला पुरभोगपुर, दूसरा गोरखपुर, तीसरा नेहपुर और चौथा रूप नगर है। इसी भाति 'इन्द्रावती' मे कवि ने राजकुवर की आगमपुर यात्रा के बीच मे आने वाले कुछ बनो का वर्णन किया है। नूर मुहम्मद की 'अनुराग बासुरी' मे प्रतीक-पात्रो का नामकरण उनके गुण-विशेष के आधार पर किया गया है।

हिन्दी-सूफी कवियो मे जायसी ने जिस प्रकार हिन्दी-वर्णमाला के अक्षरो को लेकर 'अखरावट'[3] की रचना की है, और उस मे सूफी-सिद्धान्तो, का निरूपण किया है, ठीक उसी प्रकार कश्मीरी मे भी सोहनी मेयवाल[4] तथा लैला-मजनूं (कबीर लोन कृत)[5] मे उर्दू वर्णो को पहले रखकर कतिपय पक्तिया लिखी गई है। यद्यपि वे 'अखरावट' की तरह न तो क्रमबद्ध है और न ही उनमे वर्ण-माला के सभी अक्षरो का ही उपयोग हुआ है।

रूपक तत्व, समासोक्ति एवं अन्योक्ति

जायसी के 'पद्मावत' के अन्त मे कथा को 'तन चितउर मन राजा कीन्हा'[6] आदि उक्तियो के द्वारा रूपक का स्वरूप प्रदान कर दिया गया है। कश्मीरी के किसी भी सूफी-काव्य मे सपूर्ण कथा-वस्तु को इस प्रकार के रूपक से बाधने का कोई भी वर्णन-सकेत उपलब्ध नही होता। यद्यपि 'यूसूफ-जुलेखा' मे यूसुफ को

१. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० २३४।
२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २१६।
३ द्रष्टव्य—जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६५३-६७६।
४. द्रष्टव्य—पृ० १४।
५. द्रष्टव्य—वही, पृ० २।
६. वही, पृ० ५६२।

ईश्वर कहा गया है, किन्तु अन्य पात्रो पर यूसुफ की भाति ही जीवात्मा तथा माया आदि का आरोप नही किया गया है ।

जायसी के 'पद्मावत' मे 'गढ तस बाक जैसि तोरि काया'' जैसे स्थल कश्मीरी सूफी-काव्यो मे उपलब्ध नही होते । यद्यपि प्रेमसाधना के स्वरूप को स्पष्ट करना इन सूफी-काव्यो का भी लक्ष्य है, परन्तु वे समासोक्ति, अन्योक्ति अथवा रूपक तत्वो का प्रयोग नही करते । अधिक से अधिक वर्णन के समय वे प्रेम-व्यापार-सम्बन्धी प्रतीको का प्रयोग कर लेते है । वस्तुत कश्मीरी सूफी-कवियो ने अपनी प्रेम-पद्धति का प्रतिपादन सीधे ढग से या तो कथानक द्वारा किया है या नायिका के अलौकिक सौदर्य-वर्णन द्वारा अथवा इन तीनो के द्वारा। इसलिए उक्त विवाद के लिए न तो उन्होने अवसर प्रदान किया है और न ही ऐसा कोई सकेत दिया है जिसके आधार पर उक्त तत्वों की उपलब्धि उनमे ढूढी जा सके ।

७—सूफी-सिद्धान्तों का निर्वाह

आलोच्यकाल के समस्त कश्मीरी तथा हिन्दी-सूफी कवियों ने सूफीमत मे प्रचलित सभी सूफी-सिद्धान्तो का परिचय अपने काव्यो मे दिया है । प्रत्येक सूफी कवि के विषय मे यह अनुमान करना स्वाभाविक है कि वह अपने मत का अनुयायी होने के कारण उन सिद्धान्तो मे पूर्ण विश्वास रखता होगा । उनकी रचना किसी पूर्व परिचित कार्यक्रम के अनुसार किसी रेखा-चित्र मे केवल रग-मात्र भर देती है और इस रगभरी मे प्रदर्शित उनका कला-नैपुण्य ही उन्हे अन्य कवियो की श्रेणी मे स्थान दिलाता है ।[२]

परमात्मा और सृष्टि

प्राय. सभी कश्मीरी प्रबन्धकारों ने 'हम्द' मे ईश्वर को कुरान के अनुकूल चित्रित किया है । उन्होने अल्लाह को 'अहमद',[३] खालिक,[४] इलाही[५] जात[६] तथा अहद[७] आदि कहा है । इन कवियो ने केवल इस्लामी एकेश्वरवाद अपितु शुहूदिया सप्रदाय के विचारो को भी हृदयगन किया है, अल्लाह की तीन शक्तियो-सृजन, पालन एव सहार का परिचय तो दिया है, किन्तु अधिकतर कवियों ने अल्लाह को कर्ता तथा सृष्टि को कृति रूप में ही चित्रित किया है ।[८] उन्होने परमसत्ता को केवल इच्छा-मात्र ही सृष्टि-रचना मे महत्वपूर्ण माना है । उसकी कर्तव्य-शक्ति ही प्रधान है । उन्हें इजादिया मत अमान्य नही रहा किन्तु इसके साथ ही उन्होने शुहूदिया तथा वजूदिया सिद्धान्तो को भी मान्यता दी । शुहूदिया विचारधारा के अनुसार उन्होंने बिम्ब-प्रतिबिम्ब और वजूदिया के अनुसार व्यापक, व्याप्य एवं अंश-अशी की भावना को अपनाया । 'मुमताज बेनजीर' मे

इस जगत् को उसका प्रतिबिम्ब माना गया है।[९] हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' ने 'यमुफ जुलेखा' काव्य मे इस बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव चित्रण स्पष्टतया किया है।[१०] 'जेबा-निगार' मे कवि ने ईश्वर को ही प्रेमी-प्रेमिका का रूप दिया है।[११] 'चन्द्रवदन' मे कवि हक्कानी ने उसे ससार मे व्याप्त माना है।[१२] इसी प्रकार

---

१. जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २६५।

२ सूफी-काव्य सग्रह, पृ० ९८-९९।

३. हम्द बेहद नाते अहमद हर सहीफस इब्तिदा, रोज दमाह सोजे इश्कन बोज ए मर्दे खुदा—यमुफ जुलेखा, गामी, प० २।

(२) पस अज हम्द-खुदा व नाते अहमद—वामीक अजरा, पृ० ३।

४. (१) अव्वल हम्दाह द्वप तस खअलिकस कुन, दितुन यम्य आब व खाकस नार इश्कुन। लैला-मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २।

(२) हम्द तम खअलिकस यम्य दर दो आलम, जिखलकत खास क्वर ईजाद आदम। सोहनी मेयवाल, पृ० २।

(३) ख—खअलिक छु मअलिक रब-उल्-आलमीन, ज मीनन आसमानन मंज छु बमकीन। लैला-मजनू, कबीर लोन, पृ० २।

५. इलअही रहमतुक बर मुचराबुम, जमाल शाहद मकसूद हावुम। जेबा-निगार, पृ० २।

६. (१) हम्दाह शूबी जातस, युस जलवअहगर कायनातम। चद्रवदन, पृ० २।

(२) सपअज खअहिश यलि तस जाते पाकस, क्वरुन तअम्य पअदअह आदम आब व खाकसा—यसुफ-जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० ६।

७. अज नुक्तह नन्यव नूरे सरमद, अहदस नाव प्यव अहमद। चन्द्रवदन, पृ० २।

८. (१) अव्वल हम्दाह तमिस यम्य पअदह क्वर जान, ज़मीन व आसमान व इश्क व आरफान।—शीरीं खुसरो, पृ० २।

(२) क्वरुन यम्य पअदह खाकस शक्ल आदम,
हरुन यम्य इश्क सअत्यन जाने आलम।—लैला-मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २।

९. चू आईना मजला कुन जमीरम, नुमा शैदा बहुस्न बे नजीरम। पृ० २।

१०. बो तम्यसुन्द अक्स छुस असलस निशिह गच्छअह, बो सुय अक्स गच्छअह अक्सस मे कर पज़िह।—पृ० ३३।

११. छु लअगित आशक-माशूक पानअह, सु जेबा तअ निगार ओसुस बहानअ। पृ० २।

रंग-रंग मस्दर, बे रंग पानअय छु मज़हर, ह्यरि ब्वन बसिथ पानअह, छु य गअर सुन्द बहानअ। पृ० २।

'गुलनूर गुलरेज' मे इस सृष्टि को उस परमसत्ता का प्रतिबिम्ब मानकर उसे इस मे व्याप्त माना गया है।[1] कबीर लोन कृत 'लैला-मजनू' मे कहा गया है कि जो उस निराकार 'ओ' का उच्चारण करता है, वही यह जानता है कि वह सब प्राणियो, मे निवास करता है,[2] वह परम सत्य इस सपूर्ण ससार के जीवो, वस्तुओ तथा कार्य-कलापो मे विद्यमान है। वह एक ही अनेकत्व के रूप मे व्यक्त हो रहा है :

छि मखलूक आदमी, अल्लाह छु खालिक,
गच्छुन तस खअलिकस प्यठ शूब्रि आशिक।[3]

(अल्लाह खालिक है और शेष सभी प्राणी मखलूक वह एक ही अनेकत्व मे व्याप्त है। उस प्रभु (अल्लाह) के साथ प्रेम-भाव रखना ही प्राणी को शोभा देता है।)

कश्मीरी-सूफी कवियो की धारणा है कि परमेश्वर ने सर्वप्रथम अपने नाम के आलोक से 'नूरुलमुहम्मदिया' अर्थात् 'मुहम्मदीय आलोक' की सृष्टि की जो आदि-भूत बन गया।' फिर उसी 'नूर' सम्बन्धी उपादान कारण से पृथ्वी, जल, वायु एव अग्नि नाम के चार तत्वो की सृष्टि हुई, फिर आकाश और तारे हुए और उसके अनन्तर सप्तभुवन, धातु, उद्भिज पदार्थ, जीव-जन्तु एव मानव की रचना हुई जिनके द्वारा ब्रह्माण्ड बना तथा अनेक ब्रह्माण्डो का विश्व प्रादर्भूत हुआ।[4] कबीर लोन ने अपने 'लैला-मजनू' में कहा है कि परमात्मा ने सर्वप्रथम 'मुहम्मदीय अलोक' की सृष्टि की।[5] 'सोहनी मेयवाल'[6] तथा लैला-मजनू (गामी)[7] मे भी इसी प्रकार का मत प्रकट किया गया है।

---

१. द्रष्टव्य—पृ० ५।

२. कन हा युस दियि मति ची तारे, ओ परान हम सुय जाने। पृ० २०।

३. गुलरेज, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० १०१।

४. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ३८।

५. तअमिय नूरन छु युतमुत आलमस नूर, च सारिअनी ब्रोठ पैदा करित अहमद। वनै क्याह नूर अहमद यिछ छु बेहद, छु सारिनअय पाय ब्वड यिछ सोन सरदार। पृ० २।

६. जुरुन नअ रुख ख्वटुन अज हुस्न बेहद ब्वरुन न्वन पान अज नूरे मुहम्मद, क्वरुन सुय दर नबी आदम शरफनाक, बहुस्नश खिलते तशरीफ लोलाक, पृ० २।

७ हम्द तस यम्य मुहम्मद पअदअह क्वरुन, पननि इश्क सअत्य तस सीनअह ब्वरुन, तिहिन्दि नूरह निशिह गव पैदा आलम, सु छुय सूरत बमैने जिस्म आदम। पृ० २।

इन कवियों ने माया का अर्थ जगत्-प्रपंच तथा सांसारिक प्रलोभनों को ही माना है ।[1]

हिन्दी के सूफी-कवि ईश्वर के स्वरूप में सहमत हैं । उन पर भारतीय विचारधारा का यथेष्ट प्रभाव पड़ा हुआ है । जायसी ने 'पद्मावत' में कहा है कि ईश्वर एक है, वह अलख है, अरूप है, अवर्ण है, प्रकट और गुप्त सभी स्थानों में व्याप्त है, न उसके पुत्र है और न माता-पिता ही है । उस को किसी ने उत्पन्न नहीं किया । संपूर्ण संसार का मूलकारण यही है ।[2] कवि मझन ने प्रतिबिम्बवाद की ओर संकेत करते हुए कहा है कि उस परमसत्ता के समान दूसरा और कोई नहीं है । यह सृष्टि उसके मुख के सौंदर्य का दर्पण है । वह इस संसार में सर्वत्र प्रतिबिम्बित हो रहा है ।[3] नूर मुहम्मद ने कहा है कि वही परमसत्ता सर्वत्र व्याप्त है और उसी एक के रवि, ससि, नीरज तथा कुमुदिनी आदि विभिन्न नाम हैं ।[4] उसमान ने उस परम-सत्ता को गुप्त एवं प्रकट रूप में सर्वत्र व्याप्त माना है ।[5] उसने यह भी कहा है कि मैं आदि में उस चितेरे का बखान करता हूं, जिसने इस जगत् के चित्रण का निर्माण किया है ।[6] कुतबन ने भी परमात्मा तथा सृष्टि में चित्रकार और चित्र का सम्बन्ध स्थापित किया है ।[7] शेख निसार का कहना है कि वह परमात्मा चौदहों भुवनों में व्याप्त है । उसके बिना कोई जन्तु जीवित नहीं रह सकता । जैसे नट स्वरूप धारण करके अनेक लीला में करता है, वैसे ही वह परमात्मा भी विभिन्न रूप धारण करके अनेक

१ द्रष्टव्य—हारुन रशीद, पृ० ५ ।
द्रष्टव्य—लैला-मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २५ ।

२ अलख अरूप अबरन सो करता । वह सब सो सब ओहिं सो बरता ।
परगट गुपुत सो सब बियापी । धरमी चीन्ह नहि पापी ।
ना ओहि पूत न पिता न माता । ना ओहि कुटुम्ब न कोइ संग नाता ।—जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १२४ ।

३. एक अहै दोसर कोई नाही । तेहि सभ सिस्टि रूप मुख जाही । मधुमालती, पृ० ५ ।

४. तुमही देह धरे सब ठाऊं । रवि ससि नीरज कुमुदिनी नाऊं । इन्द्रावती ।

५. सब वहि भीतर वह सब माही, सबै आपु दूसर कोउ नाही । आपु अमूरति, मूरति उपाई, मूरति माति तहां समाई । चित्रावली ।

६ आदि बखानो सोई चितेरा, यह जग चित्र कीन्ह जेहि बेरा ।—वही ।

७. फिन यह रहे कि चरित पसारा, सो कहत मन जोग संभारा ।
चित्र देखि के खोज चितेरा, खोज करा तो मिले सवेरा । मृगावती ।

क्रियाए कर रहा है। वह अमर तथा अजन्मा है। कोई विरला ही उसके मर्म को समझने मे समर्थ होता है।[1]

परमज्योति ने स्वय से एक और ज्योति या नूरमुहम्मद साहब को उत्पन्न किया जिसके सुख के लिये इस सपूर्ण सृष्टि की रचना हुई।[2] मझन का कथन है कि उन्ही के लिये परमात्मा के मन मे सृष्टि-रचना की चाह उत्पन्न हुई।[3] कुतबन ने भी कहा है कि उसने सर्वप्रथम मुहम्मद के नूर का सृजन किया, तत्पश्चात् मानव का।[4] जायसी का भी यही मत है।[5] इस प्रकार सभी सूफी कवि मानते है कि मुहम्मद की प्रीति के लिये ही परमसत्ता ने सृष्टि का सृजन किया। मझन का कथन है कि सृष्टि के मूल मे प्रेम का प्रवेश हुआ। उसके पश्चात् सकल सृष्टि की रचना हुई। सृष्टि का मूल कारण ही प्रेम है। ससार मे उसी का जन्म और जीवन सफल है जिसके हृदय मे 'प्रेम की पीर' उत्पन्न हुई हो

प्रथमहि आदि पेम परविस्टी। तौ पाछे भइ सकल सिरस्टी।
उतपति सिस्टि पेम सो आई। सिस्टि रूप भर पेम सबाई।
जगत जनमि जीवन फल ताही। पेम पीर उपजी जिअ जाही।
जेहि जिअ पेम न आइ समाना। सरुज भेद तेइ किछु न जाना।[6]

उसमान का भी कथन है कि आदि मे विधि ने प्रेम को उत्पन्न किया। प्रेम के लिये जगत् को संवारा। इसी अपने रूप को देखकर उसे सुख मिला।[7]

---

१. वह पूरन चौदह खंड माही। वह बिन जिया जन्तु कोउ नाही॥
सब मह आपसु खेले खेला। नट नाटक चाटक जरु मेला॥
न वह मरे न मिटे न होई। अपरम मरम न जाने कोई॥—यूसुफ जुलेखा।

२ जायसी के परवर्ती हिन्दी-कवि और काव्य, पृ० ४६।

३. नाउं मुहम्मद त्रिभुवन राऊ, ओहि लागि भएउ सिस्टि कर चाऊ। मधु-मालती, पृ० ६।

४. पहले नूर मुहम्मद कीन्हा, पोछ्ठ नेहिक जनता सब कीन्हा। मृगावती।

५. प्रथम जोति विधि तेहि कै साजी,
औ तेहि प्रीति सिस्टि उपराजी। जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १२७।

६. मधुमालती, पृ० १६।

७. आदि पेम विधि ने उपराजा। पेमहि लागि जगत सब राजा।
आपुन रूप देखि सुख पावा। अपने हीये पेम उपजावा।—चित्रावली

इन कवियो ने माया को जगत् प्रपच के रूप मे अपनाया है।[1]

जीवात्मा और साधक

सूफी-प्रेमाख्यानो मे आध्यात्मिक प्रेम का वर्णन हुआ है। इनमे दो जीवनो का एकीकरण दिखाया गया है। यह एकीकरण कश्मीरी प्रबन्धो मे नायक-नायिका की मृत्यु अथवा विवाह की सस्था द्वारा दिखलाया गया है। साधक जीवात्मा का प्रतीक है, और तभी वह उसके मिलन के लिये व्याकुल रहता है। उसे विश्वास है कि एकीकरण अथवा वस्ल (ईश्वर-मिलन) होने पर ही सपूर्ण वस्तुए सुलभ हो सकती है।[2] इस के लिये गुरु का पथ-प्रदर्शन आवश्यक है।

हिन्दी के सूफी-प्रेमाख्यानो मे भी साधक जीवात्मा का ही रूप है। इन कवियो ने भी प्रेम-तत्व की महिमा का गान करके अन्त मे नायक-नायिका का मिलन करा दिया है जो जीवात्मा तथा ईश्वर का ही तादात्म्य है। उनका कथन है कि सच्चे गुरु का चेला कभी पथभ्रष्ट नही होता।[3]

कश्मीरी तथा हिन्दी के 'यूसुफ जुलेखा' मे यूसुफ को साध्य तथा जुलेखा को साधिका अथवा जीवात्मा के रूप मे ग्रहण किया गया है।

सौंदर्य, प्रेम और विरहानुभूति

कश्मीरी प्रबन्धकारो मे रूप-सौदर्य और प्रेम का अन्योन्याश्रय दिखाया गया है। उन मे रूप-सौदर्य को ही परमात्मा की ज्योति के रूप मे मान्यता मिली है। प्रत्येक प्रबन्ध-काव्य की नायिका ने रूप का वाणिज्य पसारा है। लैला[4], शीरी[5], हियमाल,[6] गुल अन्दाम,[7] अजरा,[8] नौशलब,[9] जेबा,[10] सोहनी,[11] चन्द्रवदन,[12] मुमताज,[13] गुलनूर[14] आदि नायिकाए परम-ज्योति से युक्त है। मजनू तथा फरहाद साक्षात्-दर्शन द्वारा ही अपनी-अपनी प्रेमिका के प्रति आकर्षित होते है। नागराय भी साक्षात्-दर्शन से हियमाल के सौदर्य पर मोहित होता है। अतीव सुन्दरी अजरा के प्रति भी वामीक का प्रेम दृढ एव अटल है।[15] बुड से गुल-अन्दाम के रूप-सौदर्य का वर्णन सुनकर बहराम, प्रौढ व्यक्ति से नौशलब के नख-शिख का वर्णन सुनकर, अजबमलिक तथा सेवक से सोहनी के गुणो को सुनकर मेयवाल आसक्त होता है। प्रत्येक नायक अपनी नायिका का रूप-सौदर्य-वर्णन सुनकर प्रेमाभिभूत होता है। वह विरहाग्नि मे तपने लगता है क्योकि प्रेम तथा विरह का अनिवार्य सम्बन्ध है। उस समय तक साधक की साधना सिद्ध नही होती ,जब तक कि उसकी हृदय की सपूर्ण कलुषताए नष्ट नही होती। महमूद गामी का मजनू, फरहाद एव हारुन रशीद, वली अल्लाह मतो व सैफ-उद्-दीन का नागराय, पीर-गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' का मजनू, निगार एव मेंयवाल, हक्कानी का मैयार तथा कबीर लोन का मजनू आदि नायक

आजीवन तडपते है। 'यूसुफ जुलेखा' मे भी जुलेखा जीवन-पर्यन्त तडपती है और यूसुफ से भेंट होने पर उसकी सपूर्ण वासनाए निर्मल हो जाती हैं।'[१६]

---

१. तबहु भा मन माया-भारा। अब लागि अनुरागी परा। अनुराग बासुरी, पृ० २३।
२. द्वन वअन्य वस्ल गव रूद कुनुय, कुनिरस तिहिन्दिस कुस हेयि नाव—लैला-मजनू, गामी, पृ० ८।
३. अगुवा सोइ पन्थ जो जाना, अगुवा सहित न फिरे भुलाना। अनुराग बासुरी, पृ० १२८।
४. ड्यक तस सुबह ख्वतन ओस रोशन, तसन्दी हुस्नह गव सम्सार तोशन। —लैला मजनू, पृ० २।
५. जहूरे नूरे हक पेशाने ओ, चि गोयम वस्फ आलीशाने ओ। शीरीं-खुसरो, पृ० २।
६. स्व जूनी डब शबन क्याह शोलअह नूर, नतअ जीनत तम्यकुय सय जन्तअच हूर।—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० १७।
७. छि पेशानी तिहिज जन आफ्ताबाह, तति यति ताजतर आसन गुलाबाह। बहराम व गुल अन्दाम, पृ० ४।
८. चरागे शामे गम या सुबहे उम्मीद, फ़रोगे तूरे दिल या नूर जावेद। वामीक अजरा, पृ० ५।
९. छु यथ वक्तस अन्दर दर मुल्के दुनिया, निगारे गुल रुख माशूके जेब॥ गुलरेज, संपादक, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० ७१।
१०. वोजुल रुख तस बनल हुस्न प्रजलुन, जहानस हुस्नकिस बानो कुनी जन—रैणा व ज़ेबा, पृ० ५।
११. सुहेल यथ बर जबीन मुबह पुर नूर। सोहनी मेयवाल, पृ० ८।
१२. कद बागे हुस्नुक शमशाद, रूद जलवये मेहरार शाद। चन्द्रवदन, पृ० ३।
१३ बुयन हुन्द फसल नूरुक वस्ल माबीन, तजली दर मुकामे क़ाव तौसीन। मुमताज बेनजीर, पृ० ९।
१४. समन सारिवअय ग्वमुत नूरुक जोहराह, जहानस हर तरफ सुय नूर जोशन। गुलनूर गुलरेज, पृ० १७।
१५. यिहमना ख्वाबे न्यन्द्र यवोद यियम मे,
दिहमना दरशुनाह वरशुन पेयम मे।—वामीक अज़रा, पृ० ९।
१६. जि दर्द इश्क जिन्दअह पान मुदी, तवय पतकुन तिहुन्द अफसानअह रूदुय। —यूसुफ जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन मिसकीन, पृ० ७९।

कश्मीरी कवियों के वर्णनों मे आया हुआ यह प्रेम ईश्वरोन्मुख प्रेम का प्रतीक है।[१] नायिका के प्रति प्रेम उत्पन्न होने पर सैफ-उद्-दीन ने विरह की महत्ता बताते हुए कहा है कि जिसके हृदय में प्रेम का चोर प्रवेश करता है, वह प्रिय के वियोग में सदा तडपता रहता है।[२] पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' ने अपने काव्य 'सोहनी-मेयवाल' मे कहा है कि उल्लासोद्यान विरह रूपी ओलों के कारण तहस-नहस हो जाता है।[३] उस मे यह भी कहा गया है कि दो प्राणियों का वियोग असहनीय होता है।[४] इन काव्यों मे विरह को उस मूल पदार्थ के रूप मे लिया गया है जिस मे अमरत्व का गुण विद्यमान है।[५] विरहानुभूति के कारण ही इस प्रेम का अस्तित्व दिखाया गया है। इन्होंने परमात्मा से बिछुड़ी हुई जीवात्मा की विरह-व्यथा का आरम्भ होना अनिवार्य सा माना है।[६]

हिन्दी के प्रेम काव्यों मे भी सौंदर्य, प्रेम तथा विरहानुभूति का वर्णन किया गया है। यही रूप ही ज्योतिर्मय परमात्मा से परिचित होने के लिये प्रेम की ओर अग्रसर होने का माध्यम बनता है। मझन की 'मधुमालती' मे मनोहर मधुमालती को समझा रहा है कि यही रूप बहुत से रूपों मे प्रकट हुआ है, यही रूप बहुत से अनुपम भावों मे व्यक्त हुआ है। यही रूप समस्त नेत्रों मे ज्योति बनकर समाया हुआ है, यही रूप समस्त सागरों मे मोती बनकर उत्पन्न हुआ है, यही रूप फूलों मे वास बनकर व्याप्त है, और यही रूप भ्रमरों के विलास का रस है। यही रूप शशि और सूर्य है, और यही रूप जगत् मे पूरित होकर उसको आपूर्ण कर रहा है।[७] 'पद्मावत' मे भी तोते के मुख से पद्मावती

---

१. बोज महमूद क्या गयि इश्कबअजी,
हकीकत द्राव जअहिर अज मजअजी। लैला, गामी, पृ० १४।
२. मुहब्बत यस दिलस मज चाव चूरे, मरुन छुइ तस जुरुव दिलदार दूरे।
वामीक अजरा, पृ० ८।
३. शगूफस ऐशकिस मज डोठ पेयिनय। पृ० २३।
४. जुदअई बोड कयामत यार यारन, पृ० ४६।
५. हकीकत गव बरुन शोक इलअही, मजाजस प्यट दरुन वाही तबाही।
—वामीक अजरा, पृ० ३६।
६. येलि द्रन मेलि सोदा क्या तिमन गम, दिलन द्रन वस्ल गव योद व गेलह आलम।—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० २६।
७. इहै रूप परगट बहु रूपा। इहै रूप बहु भाउ अनूपा।
इहै रूप सभ नैनन्ह जोती। इहै रूप सभ साया मोती।
इहै रूप सभ फूलन्ह बासा। इहै रूप रस भवर बेरासा।
इहै रूप ससिहर औ सूरा। इहै रूप जग शरि अपूरा। मधुमालती, पृ० ६५-६६।

के रूप-सौदर्य का वर्णन सुनकर रत्नसेन उस पर आसक्त हो जाता है । रत्नसेन ने सहस्त्रो किरणो को विकीर्ण करने वाला उसका रूप देखा । उसे ऐसा लगा कि जहां-जहा उसकी दृष्टि पडी है । कमल खिल उठा है ।[१]

विरहानुभूति का चित्रण भी इन काव्यो मे हुआ है । जायसी ने विरह की महानता का वर्णन करते हुए कहा है कि प्रेम मे विरह और रस दोनो का समावेश है, जैसे मोम के छत्ते मे शहद और बर्रे दोनो का वास होता है ।[२] 'चदायन' मे लोरक जिस समय चदा का दर्शन करता है, उसी समय वह उसका हृदय काढ के ले जाती है । बेचारा लोरक विरहाकुल होकर तडपने लगता है ।[३] 'कुतबन' की 'मृगावती' का नायक राजकुमार प्रेमिका-अमिलन में उद्भूत विरह-दशा का अनुभव करके किंगरी बजाने पर ही तुल जाता है ।[४] मझन कृत 'मधुमालती' मे मनोहर अपनी प्रेमिका मधुमालती से कह रहा है कि जिस जी में तुम्हारा दु:ख उत्पन्न हुआ, जगत् मे उसका जन्म धन्य है ।[५] प्रत्येक नायक इस विरह का अनुभव करके अपनी प्रेमिका से मिलन के लिये साधना-पथ पर अग्रसर होता है। केवल कवि निसार के 'यूसुफ जुलेखा' मे जुलेखा ही आयु-पर्यन्त अपने प्रेमी यूसुफ से मिलने के लिये विरहाग्नि मे जलती रहती है। 'चित्रावली' का सुजान, 'ज्ञानदीप' का ज्ञानदीप, 'हस-जवाहिर' का हस तथा 'इद्रावती' का राजकुवर आदि भी ऐसे नायक है जो कहानी के प्राय: आरम्भ मे ही, विरह-यातना द्वारा अभिभूत हो जाते है ।

आध्यात्मिक सोपान

कश्मीरी प्रबन्धकाव्यो में प्रेम-साधना को दुर्गम मानकर उसे एक प्रकार की आध्यात्मिक यात्रा माना गया है । इस यात्रा मे साधक को कई सोपान पार करने पड़ते है । जब आत्मा उस ब्रह्म का पूर्ण ज्ञान (मारिफत) प्राप्त करती है,

---

१. सहसहुं करा रूप मन भूला । जह जह दिस्टि कवल जनु फूला ।
—जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १८३ ।

२ पेमहि माह विरह औ रसा । मैंन के घर मधु अब्रित बसा। वही, पृ० २३२ ।

३. जिहि दिन हो जेउनार बुलावा । महर मदिर काहू दिखरावा ।
सो जिउ ले गई कही न जाई । बिन जिउ भयउ परेउं घहराइ ।
—चदायन, पृ० १७८ ।

४. बहुरि वियोग भएउ सिर सेती । कहेसि बात नहि आवहि एती,
कीगरी कीहे वियोग बजाइ । सभहा सुन वोही देखन आवइ । मृगावती ।

५. जेहि जिय महिं तोर दुख उपजा । धनि सोजग औतार । मधुमालती,
पृ० ६३ ।

तब उसके साथ एकाकार होने मे उसे किंचित्-मात्र भी बाधा उपस्थित नही होती। हक्कानी कृत 'मुमताज बेनजीर' मे बेनज़ीर अपने प्रेमी मुमताज के सामने विवाह (वस्ल, ईश्वर मिलन) से पूर्व जो पाच शर्ते पूर्ण करने के लिये रखती है, वास्तव मे वे पाच आध्यात्मिक सोपान है।[1] तत्पश्चात् उसे वस्ल के लिये ही यह लम्बी एव कठिन आध्यात्मिक यात्रा तय करनी पडती है।[2] राजरानी की प्राप्ति होते ही उसने दूसरा सोपान पार किया।[3] बेनज़ीर के साथ विवाह करने के लिये वह इसी प्रकार अन्य सोपानो को पार करते हुए आगे बढ गया।[4] कबीर लोन कृत 'लैला मजनू' मे चार मुकामात का उल्लेख किया गया है। उसने सासारिक सुख एव भोगो को पहला मुकाम, ईश्वर-महिमा के परिज्ञान को दूसरा मुकाम, कठिनाई के सागर को पार करके आगे बढने को तीसरा मुकाम तथा फना को अन्तिम मुकाम माना है।[5] सूफियो की दृष्टि मे इसे क्रमशः नासूत, मलकूत, जबरूत तथा लाहूत की संज्ञा दी जा सकती है। इसी प्रकार हक्कानी ने 'मुमताज बेनजीर' मे भी शरीयत, तरीकत, मारिफत तथा हकीकत आदि की अवस्थाओं की महिमा का गुण-गान किया है।[6] हाजी मही-उद्-दीन मिसकीन ने अपने 'यूसुफ जुलेखा' मे मारिफत आदि की अवस्थाओ को पार

---

१. ज़ि तरक वस्ल रोजी जान सलफत, छु यवोद दूर कयामतकुय अलामत।
× × ×
मे थोवमुत ख्वास्त गारस ई छु दस्तूर, करन पअंची शरअइत मियअन्य मंजूर। मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० २६।

२. वहारे वस्ल दिलबर छुस स्यठाह कूठ, तव्य छुस रोब आमुत युथुय सफर ज्यूठ। वही, पृ० ३३।

३. दर ती गनअजिल व मरअहिल, तयजील करान गअय दो मजिल। वही, पृ० ६१।

४. बसद शादी करान गव कतए मज़िल। वही, पृ० २३६।

५. ग्वडनिचि वति हो वनवुन बोज़नी, तन छनअह तति म्वकलान।
बजर ब्रोठ कोनअह छुक लारान, तमि शायि आशको दीदव वुछुवय।
तरअहवुन ज़ानन वुछुन दरियाव, पकान बर हवा हाय।
चोर फ़ना हो गच्छ ज़ानाने हाय, चूरन हुन्द दौर अन्दरअह नेरे।
लैला-मजनू, कबीर लोन, पृ० १२।

६. सुय रहबर माबर शरीयत, सुय मुनफहर माशर तरीकत।
सुय बाग़ हकीकतुक कुनुय कुल, यानी बजहान सु शेख़ फी उल्कल।
मुमताज बेनजीर, पृ० ७०।

करके हकीकत (सत्य की उपलब्धि) की इच्छा प्रकट की है।[1] उसने अपने दूसरे प्रबन्ध-काव्य 'गुलनूर-गुलरेज' मे भी शरीयत, तरीकत, मारिफत एव हकीकत का वर्णन किया है।[2] गुलरेज मे भी कहा गया है कि इश्क मजाजी ही इश्क हकीकी का पुल है,[3] तथा यह हकीकत की अवस्था लोक-परलोक का राजस्व प्रदान करती है।[4] हकीकी की महिमा का गुण-गान 'वामीक अजरा' मे भी किया गया है,[5] इस प्रकार सभी सूफी-प्रेमाख्यानो मे इन आध्यात्मिक स्थितियो का वर्णन हुआ है।

जो प्राणी ससार को क्षणिक एव नाशवान् समझकर शरीयत के अनुसार उसकी जिक्र (स्मरण), फिक्र (चिन्तन), समा (कीर्तन) एव अवराद (नित्य-प्रार्थना) मे लीन होता है,[6] वही तरीकत के क्षेत्र मे 'नफ्स' को परास्त करके अधिक प्रज्ञा-सम्पन्न बन जाता है।[7] तोबा (अनुताप), जहद (स्वेच्छा दारिद्रय), सब्र (सतोष), शुकर (धैर्य एव कृतज्ञता), रिजाअ (दमन), तव्वकुल (कृपा पर पूर्ण विश्वास) तथा रजा (वैराग्य या तटस्थता) पर चलने वाला साधक

---

१. बजाइ मारिफत मखमूर करतम, अनवार हकीकत सीनअह बरतम। पृ० २।

२ तरीकत से बुजर्गाह पाकबाजाह, हकीकत जानवुन क्याह अहल राजाह। पृ० ६।

३. मज़ाजस नाव पुल थोवमुत बुजर्गव, तरी अमि कअदलअह युम सु बहरहवर। गुलरेज, पृ० २३८।

४. मजअजी हस्त वअही व तबअही, हकीकत आलमन द्वन पादशाही। वही, पृ० १०२।

५. माजज़ुक इश्कह थोव सूरत-परस्ती, हकीकत मैन्युक गव जोक व मस्ती। पृ० ३७।

६. (१) ज़िक्र हन्दिह पवअह युस फिकरिह मज सनिये। दरियाइ वहदत मजदियि बन।—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० ६।

(२) स्वरतअह अल्लाह परतअह अल्लाह, जिक्र अल्लाह फिक्र अल्लाह। करतअह दिल आगाह परतअह अल्लाह, फेरवुन छुय शाह परतअह अल्लाह। वही, पृ० ५०।

७. (१) ख्वय कर म्वख्तस रवी वुछ यारस, जिक्र हन्दिह बेल फ्वल्य डूरिस तर आव। गुलनूर-गुलरेज, पृ० ६।

(२) करान जिक्र खुदा पुरनूर चेहरा, तरीकत रो बुजर्गाह पाक बाजअह। हकीकत ज़ानवुन क्याह अहल राज़ाह, फकीरस निशिह गच्छित बा अक्ल बा तमीज़—वही, पृ० ६।

आत्मशुद्धि के अनन्तर अन्य अवस्थाओ को पार करके वस्ल (ईश्वर-मिलन) प्राप्त करता है। मिलन की दशा मे दोनो अभिन्न हो जाते है।[1]

आध्यात्मिक यात्रा के लिये कतिपय कश्मीरी प्रबन्धकारो ने गुरु की महिमा का गुण-गान किया है। वली अल्लाह मतो ने 'पीर' को परमात्मा का ही नूर माना है जिसके बिना उस तक पहुचना कठिन है।[2] कवि हैरत ने भी इसी रूप मे उसकी प्रशसा की है।[3] सैफ-उद्-दीन की 'वामीक अजरा' मे कहा गया है कि ज्ञानी गुरु ही परमात्मा का साक्षात्कार करा देता है।[4] गुरु का पथ-प्रदर्शन प्राप्त करने वाला साधक ही वस्ल प्राप्त कर सकता है।[5]

हिन्दी के सूफी-कवियों ने भी इन आध्यात्मिक सोपानो का वर्णन किया है। 'पद्मावत' मे रत्नसेन के जन्म से लेकर सुग्गे के आगमन तक की स्थिति को 'नासूत' की स्थिति कह सकते है। इसके बाद उसके जोगी बनकर निकलने से लेकर सिंहल द्वीप पहुंचने तक की स्थिति को 'मलकूत' की स्थिति कह सकते है। सिहलगढ मे पहुंचने से लेकर विवाह तक की स्थिति को 'जबरूत' की मजिल कह सकते है, पर यह होते हुए भी 'लाहूत' या हकीकत की मजिल 'पद्मावत' मे बडी अस्पष्टतापूर्ण और उलझी हुई लगती है।[6] उसमान का भोगपुर 'नासूत' की स्थिति हो सकती है। उसका गोरखपुर दूसरी मजिल होकर 'मलकूत' है। गोरखपुर मे जाने के लिये सच्चे साधक को गुदडी धारण करनी पडती है। नेह नगर को 'आलमे जबरूत' समझा जा सकता है। इस मे साधक को आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है, उसका रूपनगर ही हकीकत (लाहूत) की मजिल है।[7] मझन की 'मधुमालती' तथा उसमान की 'चित्रावली' मे कथा का

---

१. द्वय त्रअवित मय यकसान क्याह् चश्रोक, तिथय तस नाजनीन पानस वोलुन पान—जेबा निगार, पृ० ५८।

२. छु पीरी नूरहबलनूर अली नूर—हियमाल, पृ० ६।

३. चह छुक नूर अली नूर इल्लअही, अनिव तशरीफ दीगर पीरअह कश्मीर। रैणा व जेबा, पृ० २।

४. वलो उस्तादअह द्वन मज छुक चअह महरम। पृ० १२।

५ बिना शक यिम समन तअलिब त मतलूब, जि हम जिन्सी छु तस रगबत ज्यादअह—जेबा-निगार, पृ० ४०।

६. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० १३७।

७. रूपनगर अति आह सोहावा। जेहि सिर भाग सो देखे पावा।
अतिहि डेरावन अतिहिं सो ऊचा। कोटि माह कोउ एक पहुचा।
—चित्रावली, छद २१३।

पर्यवसान नायक के विवाह के पश्चात् होना है। आध्यात्मिक साधना के उच्चतम शिखर 'लाहूत' की स्थिति आलोच्यकाल के इन प्रेमाख्यानो मे भी स्पष्ट नही हो पाती है।[१]

नूरमुहम्मद ने 'जिक्र' तथा 'फिक्र' दोनो की व्याख्या की है।[२] उसमान तथा जायसी जैसे कवियो ने इन प्रकारो का वर्णन न करते हुए गुप्त जाप या 'खिलवत दर अजुमन' की ही प्रशसा की है। गुप्त जाप करने वालो ने उसे पा लिया, परन्तु प्रदर्शन करने वाले दर्शक ही इकट्ठा करके रह गए।[३] जायसी का कथन है कि प्रकट मे तो साधक को चाहिये कि वह सारे सासारिक कार्य करता रहे, किन्तु मन ही मन उसे आराध्य का ध्यान करना चाहिये।[४]

इन्होने भी गुरु का चयन किया है। जायसी ने कहा है कि 'गुरु वह है जो शिष्य के हृदय मे विरह की चिनगारी उत्पन्न कर दे।[५] हीरामन ही रत्नसेन का गुरु है। उसमान ने अपनी 'चित्रावली' गुरु की महिमा का गान करते हुए कहा है कि हे गुरु! तुम नाथ हो और मै अनाथ हूं, इस कारण मेरी डोर को पकड कर खीच लो। तुम मेरे अगुआ हो और मैं तुम्हारा अनुसरण करने वाला हूं।[६]

मिलन की दशा

कश्मीरी सूफी-कवियो के अनुसार अन्तिम दशा अपनी प्रियतमा व प्रियतम के साथ मिलन की होती है। उनका परम लक्ष्य स्वय परमात्मा है जो 'एक' और 'एकमात्र' सत्य है। खुदा के साथ 'वस्ल' की हालत मे आ चुकने पर ही एक सच्चा सूफी अपने जीवन की सार्थकता मानता है। लगभग सभी कश्मीरी

---

१. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० १३७।

२. जब लग प्रेम न व्यापै, तब लगि स्वाय।
स्वाय जात जब आवत, पाढत जाय। अनुराग बांसुरी, पृ० १०७।

३. गुपुत रहहु कोउ लखै न पावै। प्रकट भये कुछ हाथ न आवै।
गुपुत रहे ते जाइ पहुचै। परगट बीचे गए बिगूचे। चित्रावली, पृ० ११४।

४. परगट लोकाचार कहु बाता, गुपुत लाउ जासौ मन राता।
—जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २६५।

५. गुरु विरह चिनगी पै मेला। जो सुलगाइ लेइ सो चेला। वही, पृ० २०५।

६. मैं अनाथ तुम्ह नाथ गुरु, खैचहु मम डोर।
तै मोर अगुआ पंथ तंह, मैं पिछलगुआ तोर। चित्रावली, छद २१५।

सूफी-काव्यो मे इस 'वस्ल' (ईश्वर मिलन) को परम-लक्ष्य माना गया है।[1] वह खुदा के वुजूद मे अपने को 'फना' कर उसके साथ 'बका' के स्तर पर भी पहुच जाता है।

जुवस गिन्दुन क्वरुन यारस फिदा जान, बका ल्वबनय जि शौक ओ सपुन फान।[2]
(अपने प्राणो पर खेलकर उसने शरीर को प्रियतम पर न्योछावर कर दिया। अपने शौक के कारण 'फना' होकर उसने 'बका' की प्राप्ति की।)

'फना' होने के लिये 'नफ्स' (वासनापूर्ण आत्मपक्ष) का त्याग अतीव आवश्यक है। वली अल्लाह मतो कृत 'हियमाल'[3], हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' कृत 'गुलनूर-गुलरेज',[3] तथा कबीर लोन कृत 'लैला-मजनू'[4] मे इस 'नफ्स' की निन्दा की गई है। ईश्वर-मिलन के लिये सूफी-सतो ने माया (सासारिक प्रलोभन) के त्याग को ही उत्तम माना है। ससार के वासनात्मक प्रेम मे फसा प्राणी अत मे हिंसात्मक प्रवृत्ति को अपनाता है।[6] ऐसे प्राणी को सद्गति प्राप्त नही होती :

---

१. (१) गोण्ड मजनून हवोण्ड मुसलाह, वस्लुक गव नम्र तस जाह ति तमलाह। लैला-मजनू, गामी, पृ० ८।
 (२) दिल व जान वस्लुक लोल गछि बरनुय। हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० ७१।
 (३) जि बागे वस्ल अजरा पोश छावी। वामीक अजरा, पृ० २४।
 (४) च्यवन मस अअस्य लोलकि वस्लह शीशअह, बिहित जन ओस मजनू लअलि निशिह।—गुलरेज, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० १६८।
 (५) सपुन तिन पानवअनी दर इश्क फअनी। क्वरुक हअसिल वसाले जावदानी। जेबा-निगार, पृ० ८४।
 (६) ब गैरत दर मोहब्बत द्राय जानबाज, सपुन अज़ वस्ल यकदीगर सर इफराज—सोहनी मेंयवाल, पृ० ४७।
 (७) ख्यअली गअय मय वस्लुक च्यवान दाम। मुमताज़ बेनजीर, पृ० २५१।
२. सोहनी मेयवाल, पृ० ४५।
३. छु नफ़्स बार गअलिब तालिबनान, ज़न व फरजन्द व अखशन दुश्मने जान। पृ० २।
४. नफ़्स अमारन क्वरनस ख्वार। पृ० ३।
५. नफ्स अमारन क्वरनस बज़गार, पृ० ३।
६. ब इश्के शहवती युस आसि मुरदार सु खूनरेजी करान छुय आखिरकार। —मुमताज बेनज़ीर, पृ० ४६।

दपुस तअम्य ख्वोफ मे छुम दर कयामत,
जिनाकारन अन्दर प्यमअह दर नदामत ।[1]

उनका साध्य फना है, मोहब्बत नही । वे हकीकत (सत्य की उपलब्धि) की प्राप्ति के लिये ही विभिन्न सोपानो को पार करने के इच्छुक है ।

हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यानो मे भी 'सूफी साधक' इस दृश्यमान जगत् से परे परमसत्य की खोज मे रहता है । इस जगत् से ऊपर एक चिरन्तन, चैतन्य सत्ता है जो भूत-मात्र मे परिव्याप्त एव अन्तर्भूत शाश्वत आत्मा हे । अज्ञान के कारण जीव परमात्मा के वास्तविक रूप को समझ नही पाता । परमतत्व को पहचानने के पूर्व स्वय को पहचानना या आत्मज्ञान आवश्यक है ।[2] अपने को पहचानने वाला ही ईश्वर को भी पहचान पाता है । अन्तर्दृष्टि से ही परमसत्ता के दर्शन होते है । यह ससार असार है और यहा का सपूर्ण ऐश्वर्य, सुख एव सम्पत्ति मिथ्या है जिसका वर्णन कासिमशाह ने किया है ।[3] उसकी साधना उसी परमसत्ता मे फना (लीन) होकर बका (अवस्थित) हो जाने के लिये होती है ।[4]

८. कश्मीरी और हिन्दी सूफी-काव्यों में साम्य

कश्मीरी तथा हिन्दी-प्रबन्धकाव्यो मे कथानको के विकास के लिये कुछ समान अभिप्रायो का उपयोग हुआ है । साक्षात्-दर्शन, स्वप्न-दर्शन, चित्र-दर्शन तथा गुण-श्रवण पर आश्रित ये सूफी-काव्य फारसी मसनवी, प्रचलित कथाओ, कल्पना-प्रसूत कहानियो तथा ऐतिहासिक एव पौराणिक आधार को लेकर लिखे गये है । इन सूफी-प्रेमाख्यानो मे नायको के पिता प्राय: पुत्र न होने से चिन्तित रहते चित्रित किये गये है । पिता के दान-पुण्य या ज्योतिषी अथवा किसी सिद्ध पुरुष के आशीर्वाद से ही अजबमलिक,[5] हारुन रशीद,[6] मेयवाल,[7] मनोहर,[8] सुजान[9] तथा ज्ञानदीप आदि नायक जन्म लेते है । नायक अथवा

---

१. यूसुफ़-जुलेखा, हाजी मही-उद् दीन 'मिसकीन', पृ० ४५ ।

२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ७१ ।

३. द्रव्य भडार चला सब द्वारे, जावम-हारजात जो आरे ।
जग बावर अरझा तेहि पहिया, अन्त निदान होय सब कहिया, हस जवाहिर, पृ० ४ ।

४. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ७५ ।

५. द्रष्टव्य—गुलरेज़, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ५५ ।

६. द्रष्टव्य—हारुन रशीद, पृ० ३ । ७. द्रष्टव्य—सोहनी मेयवाल, पृ० ४ ।

८. द्रष्टव्य—मधुमालती, पृ० २७-३१ ।

९. द्रष्टव्य—चित्रावली, पृ० १६ ।

नायिका के हृदय में विरह के बढ जाने पर वैद्य या ओझा आदि बुलाये जाते है। वे नाडिया देखकर यह बताते है कि रोग असाध्य है। जेबा के सौंदर्य-वर्णन के श्रवण से निगार का शरीर विवर्ण हो जाता है और उसका अनार जैसा लाल शरीर पीला पडता है। उसके पिता द्वारा वैद्य बुलाए जाते है किन्तु वे उसका उपचार नही कर पाते।[1] 'गुलरेज़' मे भी अजबमलिक नायिका नोशलब के रूप-सौंदर्य के श्रवण-मात्र मे पुष्प की भाति वियोग के कारण मुर्भा जाता है।[2] उसके असाध्य-रोग का पता वैद्यों को नही लगता।[3] 'वामीक अजरा' मे नायिका अजरा भी अपने नायक की विरहाग्नि मे जल उठती है तथा शर्बत (काढा) पीकर भी उसके रोग का शयन नही होता। वह नायक रूपी वैद्य के दर्शन से ही स्वस्थ हो जाती है।[4] 'पद्मावत' मे पद्मावती के गुण-श्रवण से मूर्छित रत्नसेन के उपचार के लिये बुलाए गए वैद्य प्रेम रोग की दवाई देने मे असमर्थ हो जाते है।[5] 'मधुमालती' मे भी मनोहर की नाडी पकडकर वैद्य उसकी पीडा पर विचार करते हुए कहते है कि कुमार दृष्टिबाणों से मारा गया है, और उसकी वेदना इस प्रकार की है, जिससे हमारा कोई सम्बन्ध नही है।[6] उसमान की 'चित्रावली' मे भी कुशल-वैद्य नाडी देखकर कहता है कि

---

१. हकीमन पादशाहन नाद दोबुन, मर्ग तम्यसुन्द तिमन अथि आजमोवुन।
हकीमव याम वुछ तस नब्ज पुर चोश, सपुन नादान सिफत व बे अक्ल व बेहोश—जेबा-निगार, पृ० १७।

२. ग्वठुस अज दर्दे दिल राहत त च्यन-च्यन, सपुन तस गुल अजारस रगे सोसन—गुलरेज, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ८६।

३. हकीमस इश्कुनुय दोद गव न मोलूम, इलाजची वथ लअबअ, न गव सु महरम।—वही, पृ० ८७।

४ जि शर्बत दर्दे दिल हर्गिज ख्वलुस नअ, जि शीरअह सोज खानुक तब चलुस्नह।

× × ×

अनिन ख्वश वामीकस निशिह चूरि दर गार, वुछुक दीदार फारिग ख्वश जि अगयार, पृ० ११-१३।

५. जाँवत गुनी गारुरी आए। ओझा वैद सयान बोलाए।
चरचहि चेष्टा परिखहि नारी। निअर नाहि ओषद तेहि बारी।
—पद्मावत, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २००।

६. कहेसि कुवर लोयन सर मारा।
बेदन सो जो न काज हमारा। पृ० ८४।

राजकुवर को कोई रोग नही है, वह विरह-बाण से मारा गया है ।[१]

दोनो प्रबन्ध-काव्य के नायक प्रेम का प्रादुर्भाव हो जाने पर अपनी नायिका से मिलने के लिए आतुर दिखाई देते है । वे कठिनाइयो का सामना करते हुए आगे बढते है । इन नायको को घुडसवारी, मल्लयुद्ध तथा युद्धवीरो के रूप मे भी चित्रित किया गया है । 'गुलनूर-गुलरेज' मे नायक दिलाराम घोड़े पर बैठकर वायु वेग से उडता है ।[२] बहराम व गुल अन्दाम मे नायक बहराम मल्लयुद्ध मे प्रवीण होने के साथ-साथ युद्ध-वीर भी है ।[३] मौलाना दाऊद के 'चदायन' का नायक लोरक भी युद्धवीर है ।[४] मार्ग मे नाना प्रकार की कठिनाइया सहते हुए सभी नायक गन्तव्य स्थान की ओर बढते है । दोनो काव्यो के नायक अधिकतर राजकुमार तथा नायिकाए राजकुमारिया है । दोनो प्रकार की नायिकाए लैला, शीरी, जुलेखा, अजरा तथा चाद को छोडकर अविवाहिता है । ये सभी प्रधान नायिकाए परमात्मा की प्रतीक अकित की गई है और इसी कारण उनके नख-शिख वर्णन मे तथा कथा के घटना-चक्र में उनके परमात्म-तत्व का संकेत इन कवियो ने अपने काव्यो मे किया है । नायिका की प्राप्ति का प्रयत्न प्राय: नायक की ओर से होता है किन्तु यूसुफ-जुलेखा' (गामी, हाजी, मही-उद्-दीन 'मिसकीन' तथा निसार कृत) मे नायक को प्राप्त करने का प्रयत्न करती है । 'रैणा व जेबा' मे नायिका जेबा अपने प्रेमी रैणा को पत्र लिखकर भाग जाने के लिए विवश करती है ।[५] 'चदायन' में चाद इसी प्रकार अपने प्रेमी नायक लोरक को बिरस्पत के द्वारा सदेश भेजती है कि उन दोनो (प्रेमी-प्रेमिका) को मिलकर सध्या समय भागना चाहिये ।[६] इन दोनो काव्यो मे नायक का भाग जाने की प्रेरणा नायिका द्वारा ही दी जाती है । इसके अतिरिक्त दोनो काव्यो में भाग जाने से लेकर मल्लाह की कुदृष्टि पड जाने तक की सभी घटनाओ मे बहुत साम्य है । दोनों

---

१. द्रष्टव्य---चित्रावली, छन्द ६५ ।

२. यलि बर इस्प हिकमत ख्वोत दिलाराम, कसम दितुनस समन शहरुक ह्योतुन नाम । पृ० १४ ।

३. ब तीर अन्दअज़ी व हम नेजहबअजी, रोटुन बर पहलू अनान सर फिरअजी । पृ० ३ ।

४. झिरक लोह जनु अदनल भानूँ । डरहूँ दूसर सूझि न आँनू ।
देखि बाँठ राजा पहँ आवा । चाँद कहा सूरज चलि आवा । पृ० १५१ ।

५. तय्यअरी करतअह नेख शाम गाशय, करव मानन्द बुलबुल बोल बाशय । पृ० ६ ।

६. आइ बिरस्पत कहा सदेसू । लोर चाद लइ (जा) परदेसू । पृ० २८६ ।

नायक अपनी-अपनी नायिकाओ को भगाकर नदी-तट पर पहुचते है। जेबा के रूप-सौदर्य को देखकर मल्लाह उस पर आसक्त होता है।[1] ठीक इसी प्रकार गगा-तट पर पहुचकर 'चदायन' मे चाद पर मल्लाह की कुदृष्टि पडती है और वह उस पर मोहित होता है।[2]

समुद्र-यात्रा करते हुए दोनो (कश्मीरी तथा हिन्दी) प्रबन्धकाव्यो के नायक तूफान मे फस जाते है। 'गुलरेज़' मे नायक अजबमलिक,[3] 'मुमताज़ बेनजीर' मे मुमताज[4] तथा 'गुलनूर-गुलरेज' मे दिलाराम[5] आदि को समुद्र अथवा नदी-यात्रा करनी पडती है। मझन की 'मधुमालती' मे जोगी बनने के समय मनोहर को को चार मास तक समुद्र मे चलना पडता है।[6] 'चित्रावली' में सुजान की नौका भवर मे फस जाती है।[7]

इन काव्यों मे प्रेम घटक के रूप मे पक्षियो का उपयोग किया गया है। हारुन रशीद[8] 'यूसुफ़ जुलेखा[9], गुलरेज-गुलनूर,[10] लैला-मजनू[11] आदि काव्यो में ये पक्षी सहायक के रूप मे चित्रित किये गये है। इसी 'पद्मावत' मे तोता तथा उसमान की 'चित्रावली' मे परेवा सुजान का सहायक सिद्ध होता है। दोनो

---

१. वुछअनी ख्वी जेबा गव गिरिफ्तार। बनन बादिल दि करअह क्याह् हीलह-कार—रैणा व जेबा, पृ० १०।

२. खेवट देख विमोहा रूप। अभरन बहुल सुनारि सरूप।
दई विधाता पूजई आसा। अश तिरिया जो आवइ पासा।—चंदायन, पृ० २५०।

३. द्रष्टव्य—गुलरेज, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ११।

४. द्रष्टव्य—मुमताज बेनज़ीर, पृ० १३।

५. द्रष्टव्य—गुलनूर-गुलरेज, पृ० ३६।

६. बोहित बोझि समुद चलावा। विधि का लिखा जानि नहिं पावा।
मासारि गए पानिहि पानी। फुनि सो अदिन घरी नियरानी। पृ० ६६।

७. चित्रावली, पृ० २३२।

८. द्रष्टव्य—पृ० ७।

९. द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, गामी, पृ० ६।
द्रष्टव्य—यूसुफ जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० २२।

१०. द्रष्टव्य—पृ० ३५।

११. द्रष्टव्य—लैला मजनूं, गामी, पृ० १२।
द्रष्टव्य—लैला मजनूं, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० १४।

प्रकार के काव्यो मे पक्षियो को चुगने के लिए मोती दिये जाते है।[1] नायिका का पक्षी रूप मे परिवर्तित होना दोनो काव्यो मे समान रूप मे मिलता है। 'गुलरेज' तथा 'मधुमालती' के नायक तथा उपनायक एव नायिका तथा उपनायिका की कथा मे विशेष साम्य है। 'गुलरेज' की नायिका नोशलब माता के मत्र पढने से ही पक्षी बनती है।[2] 'मधुमालती' की नायिका मधुमालती भी इसी प्रकार माता रूपमजरी के मत्र पढने से पक्षी का रूप धारण करती है।[3] जिस प्रकार 'मधुमालती' मे सखी प्रेमा नायक मनोहर तथा नायिका मधुमालती का सयोग करवाने मे सफल होती है और फिर इस कुकृत्य पर मधुमालती की माता रूप-मजरी प्रेमा की पर्याप्त भर्त्सना करती है,[4] ठीक उसी प्रकार 'गुलरेज' मे भी नायिका नोशलब तथा नायक अजबमलिक का मिलन करवाने मे सखी नाज-मस्त सफल होती है जिसे तत्पश्चात् नोशलब की माता गुलबदन की प्रताडना सहन करनी पडती है।[5] 'गुलरेज' की भाति 'मधुमालती' मे भी नायक-नायिका को पृथक् किया जाता है। अजबमलिक को नायिका नोशलब मे पृथक् किये जाने के अनन्तर तुर्किस्तान के किसी स्थान पर डाला जाता है,[6] और मनोहर को भी इसी प्रकार कनकगिरि पर फेक दिया जाता है।[7] अजबमलिक की पक्षी बनी प्रेमिका नोशलब को मासूमशाह पकडकर उसकी व्यथा-गाथा सुनने के

---

१ १—बरगवत जानवारन म्वख्तग्रह ह्यु त ख्योन, जि तमये खाम नफ़सन जालग्रह लोगुना—गुलरेज, सपादक, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० ६३।
 २—मुक्ता परे जाल ढहराई। देखि पखि तो दिस्टि फिराई।
 उडन के मनसा जो चित्त अही। रही खिनक मुकुता तन चही।
 मधुमालती, पृ० १६२।

२. फ्वकाह दितुनम परिथ मग्रन्थर सनेयम, बयक दम जानवर सूरत बनेयम।
 —गुलरेज़, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० १८२।

३ तब चिरिवा भर लैंके पढि छिरकेसि मुख पानि।
 लागत खिन मधुमालति पछी होइ उडानि। मधुमालती, पृ० १८७।

४. द्रष्टव्य—मधुमालती, पृ० १८२-१८३।

५ द्रष्टव्य—गुलरेज, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० १६६-१७३।

६. तुलुक वग्रल्य वग्रल्य ब तुर्किस्तान त्रोवुख,
 ति क्याह मोलूम छम कथ जायि थोवुख।—गुलरेज, मुहम्मद, यूसुफ टेंग, पृ० १७४।

७. कुवरहिं लै सो कनैगिरि डारा। मधुमालती लै मंदिर उतारा। मधुमालती, पृ० १८३।

अनन्तर पिंजरे में बंद करके उसके माता-पिता के पास उसी प्रकार ले आता है, जिस प्रकार मनोहर की पक्षी बनी हुई प्रेमिका मधुमालती को ताराचन्द पकड़-कर उसकी व्यथा-गाथा सुनने के पश्चात् पिंजरे में बंद करके उसके माता-पिता के पास ले जाता है। मासूम शाह पक्षी नोशलब को लेकर जब उसके माता-पिता के पास पहुंचता है तो माता गुलबदन प्रसन्न होकर उसका विवाह मासूम-शाह से करना चाहती है किन्तु वह स्पष्ट रूप से इन्कार करते हुए कहता है कि उसने नोशलब को अपनी बहिन के रूप में स्वीकार किया है।[१] 'मधुमालती' में भी मानगढ़ का राजकुंवर ताराचन्द पक्षी बनी मधुमालती को जब उसके माता-पिता के पास ले आता है, उस समय वे उसका विवाह ताराचन्द के साथ करना चाहते हैं किन्तु वह उसके साथ बहिन का सम्बन्ध जतलाकर उनकी इस प्रार्थना को अस्वीकृत करता है।[२] दोनों प्रबन्धकाव्यों (गुलरेज व मधुमालती) में पक्षी बनी नायिकाएं पुनः माता के मंत्र से पूर्व रूप धारण कर लेती हैं।[३] उधर से स्वयं 'गुलरेज' का नायक अजबमलिक उपनायिका नाजमस्त को राक्षस से बचाता है।[४] 'मधुमालती' में भी मनोहर उपनायिका प्रेमा को राक्षस के चंगुल से छुडा लेता है।[५] अन्त में उपनायक मासूमशाह का विवाह उपनायिका नाजमस्त[६] से तथा उपनायक ताराचन्द का विवाह उपनायिका प्रेमा[७] से होता है। दोनों प्रबन्धों में राक्षसों एवं दैत्यों का वर्णन हुआ है। किसी उजाड नगर में उपनायिका के साथ साक्षात्कार होने की बात एकरूपता तथा साम्य रखती है। अजबमलिक उपनायिका

---

१. यि छम ख्वाहर बअ छुस अम्युसुन्द बरादर,
   करस कथ नजरे बद जानन च मादर। गुलरेज, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० २०२।

२. यह सुनि कुंवर कहा सुनु माता। बाचा मोहि एहिं बीच विधाता।
   बाच बहिनि मोरि दुहिता तोरी। जस तुइ जननि ओहि कै तसि मोरी।
   मधुमालती, पृ० २१०।

३. (१) वत महर व मपुन बर शक्ले असली, तिछअय गयि यिअछ परीज़ाद अअस असली।—गुलरेज, मुहम्मद यूसुफ टेंग पृ० १९८।
   (२) रूपमंजरी पढि के छिरका मधुमालति मुख नीर।
   पहिलइ रूप भई वर कामिनि परिहरि पंखि सरीर। मधुमालती, पृ० २०९।

४. द्रष्टव्य—गुलरेज़, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० १३०।

५. द्रष्टव्य—मधुमालती, पृ० १४६।

६. द्रष्टव्य—गुलरेज़, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० २३२-२३४।

७. द्रष्टव्य—मधुमालती, पृ० २६१।

नाजमस्त को पलग पर लेटी हुई देखकर उसके सौन्दर्य पर उसी प्रकार आसक्त होता है,[1] जैसे मनोहर उपनायिका प्रेमा को पलग पर लेटी हुई देखकर उस पर मोहित होता है।[2]

कश्मीरी तथा हिन्दी प्रबन्धकाव्यों के कथानको की घटनाओं का साम्य कई अन्य रूपों मे भी उपलब्ध है। 'जेबा निगार' मे ब्राह्मण पिता रात्रि के समय अपनी पुत्री जेबा को मजूषा मे रखकर नदी मे बहा देता है और एक निस्सतान मुसलमान रजक उसका पालन-पोषण करता है।[3] 'ज्ञानदीप' मे भी ज्ञानदीप को सुखदेव एक काठ की पेटी मे बन्द करके नदी मे बहा देता है। राजा भीमराय उसे अपने पास पुत्रवत् रख लेता है। निसार तथा हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' कृत 'यूसुफ जुलेखा' मे एक जैसी समता विद्यमान है और दोनो प्रकार के कथनको मे कोई विशेष अन्तर नही दीखता। अख्तर हुसैन निजामी द्वारा रचित 'प्रेम चिगारी' काव्य का भाव अहमद बटवारी की 'नय' (बासुरी) जैसा ही है यद्यपि वह एक मुक्तक रचना है। दोनों के काव्य का यह सदेश है कि 'बासुरी' की ध्वनि सुनने वाले हृदय ही प्रभु-दर्शन मे सफल होते है।[4] इसी भाति 'पद्मावत' मे सुग्गे की अनुरूपता वहाब खार के लघु प्रबन्ध 'तोतह' (तोता) से की जा सकती है। हीरामन तोते के द्वारा पद्मावती के रूप-सौदर्य का वर्णन सुनकर रत्नसेन उसकी प्राप्ति के लिये सिहल पहुचता है ·

चला भुगुति मागे कह साजि कया तप जोग।
सिद्ध होउ पदुमावति पाए हिरदै जेहिक वियोग।[5]

इसी भाति कवि वहाबखार के 'तोतह' मे राजा भी नायिका जेबा के रूप-

---

१. वुरुन तस थोद तुलुन अज़ रोयि पुरनूर, गिरव गव छा परी या जन्तअच हूर,
—गुलरेज, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० ११७।

२. नौ सत साजें बाला निभरम सेज सुख सेव।
दुइ चखु कुवर चकोर जेउ चद्रवदनि मुख जोव।—मधुमालती, पृ० १००।

३. द्रष्टव्य—जेबा-निगार, पृ० ६।

४. (१) बसी के भाषा सुन ताती, मध मधब है रक्त सौ राती।
प्रेम कथा वंसी जब गावै, मजनू कै विरही बौरावे। प्रेम-चिगारी।
(२) आवाज़े शीराज हलकै यद्राज,
वज़वान शश जहातस।
आलव म्यानी यस गयि गोशन,
तस छुय दिल तोशन। सूफी-शअयिर, पहला भाग, पृ० १७१।

५. जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त पृ० २०५।

वर्णन को सुनकर द्वीप सगीन शहर पहुचता है । वह 'जेबा' को प्राप्त करने के अनन्तर रत्नसेन की भाति ही समुद्र-तट पर पहुचता है ।[1] इसी प्रकार 'गुलरेज़' मे भी नायिका एक द्वीप मे रहती है ।

जजीरस मंज सकूनतगाह छम तस, दपान बेयत अलामा तत नाप मुल्कस ।[2]
(नायिका का निवास स्थान एक टापू है । उसका नाम बैत अलामा है ।)

प्रत्येक सूफी-काव्य मे नायिका का निवासस्थान अत्यन्त दूर दिखाया गया है लेकिन उस स्थान का नामकरण भिन्न-भिन्न रूपो मे किया गया है । इन काव्यो मे नायिका के निवासस्थान के कुछ नाम बलपूर, चीन, मकबा, हुसनावाद, गुजरात तथा समन आदि दिए गए है । गुलरेज, मुमताज, बेनजीर एव गुलनूर-गुलरेज आदि की नायिकाए किसी न किसी द्वीप की ही रहने वाली है । कश्मीरी तथा हिन्दी के प्रबन्ध-काव्यो में एकेश्वरवाद की भावना प्रमुख है और इसी कारण इन मे आत्मा तथा परमात्मा को अभिन्न माना गया है । 'अनल्हक' हिन्दी सूफी कवियों को 'एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति' का ही रूपान्तर है ।[3] इन मे प्रतिबिम्बवाद का दार्शनिक पक्ष अधिक निखरा है । गुलनूर का सौदर्य ही सारे ससार मे व्याप्त है ।[4] जायसी ने भी पद्मावती के रूप-सौदर्य का वर्णन करते हुए कहा है कि प्रकृति मे उसी का रूप समाया हुआ है ।[5] दोनो प्रकार के काव्यो मे नायक नायिका का प्रथम-दर्शन करते ही मूर्छित होता है ।

विरहानुभूति की भावना तथा उसका ऊहात्मक वर्णन इन दोनो प्रकार के काव्यो में हुआ है । रक्त के आसू बहाना तथा शरीर का पीला पड जाना सामान्य रूप से इनमे उपलब्ध है । नायिका को देखकर नायक का मूर्छित होना तथा जल-क्रीड़ा का वर्णन भी इनमें मिलता है । नारी की निन्दा समान रूप से इन मे

---

१. ज़ेबा हूर ह्यथ गरअह कुन द्राव, समन्दर जुवस प्यठ ब्वरुख ठहराव ।
—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० १७१ ।

२ गुलरेज़, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ६८ ।

३. जस मारूइ कह बाजा तूरू । सूरी देखि हसा मसूरु ।
चमके दसन भएउ अजियारा । जो जह तहा बीजु अस मारा ।
—जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २९५ ।

४. नज़र त्रअवअन वुछुन अज दूर नूराह । समन साखिअय गोमुत नूरुक ज़ोहराह ।—गुलनूर, गुलरेज, पृ० १७ ।

५. ओनए मेघ परी जग छाहा । ससि की सरन लोन्ह जनु राहा ।
छपि गै दिनहि भानु कै दसा । लै निसि नखत चाद परगासा ।
—जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १६० ।

पाई जाती है ।[१] आध्यात्मिक अवस्थाओ का वर्णन, गुरु महिमा, हठयौगिक क्रिया-पद्धति, प्रकृति-चित्रण तथा मिलन-सुख आदि की बाते दोनो मे एक ही प्रकार से वर्णित हुई है । अपनी भावनाओ के स्पष्टीकरण के लिए इन काव्यो मे प्रतीको की भी आवश्यकता पडी है । कई सिद्धान्त-सम्बन्धी बातो को वर्णों के प्रतीको द्वारा प्रकट किया गया है । काव्य के अन्त मे भी कश्मीरी तथा हिन्दी कवियो ने अलौकिक प्रेम के महत्व का निरूपण किया है ।[२]

दोनो प्रकार के काव्यो का प्रणयन मसनवी शैली मे हुआ है । दोनो मे निर्गुण-महिमा, हजरत मुहम्मद की प्रशसा उनके चार मित्रो का गुण-गान, प्रेम की महिमा तथा विनय-प्रदर्शन की भावना समान रूप से उपलब्ध है । कश्मीरी तथा हिन्दी के अधिकतर कवियो ने काव्य का रचना-समय दिया है । कश्मीरी कवियो ने इसे काव्य के अन्त मे दिया है जबकि हिन्दी-प्रबन्धकारो ने इसे काव्य के आरम्भ मे ही प्रस्तुत किया है । दोनो काव्यो (कश्मीरी तथा हिन्दी) का नामकरण या नायक या नायिका अथवा दोनो नायक-नायिका के आधार पर किया गया है ।

९—कश्मीरी और हिन्दी सूफी-काव्यों में वैषम्य

कश्मीरी के अधिकतर वियोगान्त सूफी काव्यो के कथानक फारसी, पजाबी, उर्दू, दक्षिणी-भारत तथा प्रचलित लोक कथाओ के कुशल रूपांतर है । इन काव्यो की नायिकाए प्राय: अविवाहिता है और केवल लैला, शीरी, जुलेखा एव अजरा ही विवाहिता चित्रित की गई है । विवाहिता नायिकाओ के दो प्रेमियो का वर्णन किया गया है । एक ऐसा प्रेमी है जो वासनात्मक प्रेम का भूखा है किन्तु दूसरा प्रेमी एकनिष्ठ साधक है जिस के लिए नायिका सदा विरहाग्नि मे जलती रहती है । उसके लिए नायिका साध्वी रह कर जीवन-यापन करती है और वह सदा नायक के साथ एकत्व प्राप्त करने के लिए आतुर दिखाई देती है । लैला-मजनू

---

१. (१) द्रष्टव्य—हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० १६ ।
(२) तिरिया काट केतुकी, भौर ओहट हुत बार ।
प्रकट सरूप देखि जनि भूलहि होइहि अत बेकार । मधुमालती, पृ० ८७ ।

२. (१) न शीरी न सु खुसरो न सु फरहाद,
मगर छय आशकन हुअज अकि कथाह याद ।
शीरीं-खुसरो, पृ० १५ ।
(२) कंह सरूप पदुमावति रानी । कोई न रहा जग रही कहानी ।
—जायसी ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ५५५ ।

(पीर गुलाम मही-उद्-दीन कृत) मे लैला,[1] शीरी-खुसरो में शीरी,[2] यूसुफ जुलेखा मे जुलेखा[3] तथा वामीक अज़रा मे अजरा[4] अपने-अपने प्रिय के वियोग मे एकनिष्ठ प्रेम एव पवित्रता का परिचय देती है। 'रैणा व जेबा' मे भगाई गई जेबा भी अन्तर्कथाओ द्वारा मल्लाह का मनोरजन करके अपने चरित्र की रक्षा करने मे सफल होती है।[5] इन काव्यो मे नायक अपनी नायिका की प्राप्ति के लिए जीवन-भर तडपता रहता है और उसका प्रेम अशरीरी रूप मे वर्णित किया जाता है। जहा नायिका अविवाहिता है वहां विशेषतया प्रतिनायक की कल्पना नही की गई है। किसी-किसी काव्य मे उपनायक तथा उपनायिका की कथा भी साथ-साथ चलती है। यह उपनायक नायक का मित्र अथवा मत्री-पुत्र होता है जो मार्ग मे उससे बिछुड जाता है। 'गुलरेज' मे नायक के मित्र रासख तथा 'मुमताज बेनजीर' मे वजीर पुत्र दमसाज की कथाए प्रासगिक रूप मे आई है। इन काव्यो मे जहा कही सयोग का वर्णन हुआ है, वह सभोग की अतिशयता के कारण दूषित नही होता। गुलरेज,[6] मुमताज बेनजीर,[7] गुलनूर-गुलरेज़,[8] तथा रैणा व जेबा,[9] मे नायक-नायिका का सयोग साधक एव साध्य के 'वस्ल' के रूप मे वर्णित हुआ है। सयोग-शृगार का वर्णन करते हुए कवियो ने इन काव्यो

---

१. मे छुम बस अजकि पत कुन चोन दीदार,
अजीन पस बेवकूफी यिछ करा बो। पृ० ४६।

२. जि पायस ख़ाक बरसर लअज लदने,
वलो फरहादह म्याने दोस्तदारअह। पृ० ११।

३ च सिवा कअसि सअत्य दिल ल्वगुम न, च सिवा वोन्द मे काचाह यार छुमनअह। यूसुफ जुलेखा, गामी, पृ० १०।

४. च रोस्तुय यारअह छुय मुश्किल लसुन म्योन,
बसुन बाग़ैर यकदम जुव खसुन म्योन। पृ० १८।

५. द्रष्टव्य—रैणा व जेबा, पृ० १२-४०।

६. तुलुख यचकाल योदवय काल वस्लुक,
ल्वबुक ख्वश अकबत इक़बाल वस्लुक।—गुलरेज़, मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० २३१।

७. ख्यअली गअय मय वस्लुक च्यवान दाम। पृ० २५१।

८. दोहन केचन तिमय च्यव वस्लुकुय मय, दिगर गव नअ तिमवन्युव अस्लुकुय पय। पृ० ५४।

९. बकामे दिल बजामे ऐश मय च्योन, म्वठुस अज़ शादमअनी रंज व ग़म प्योन। पृ० ५७।

मे कही भी हास-परिहास तथा वाक्-पटुता का वर्णन नही किया है। इन मे षट्-ऋतु वर्णन का आधार भी नही अपनाया गया है। नायक-नायिका के सयोग-शृगार का चित्रण करते समय केवल बजने वाले साज तथा सतूरो की ध्वनि को ही महत्ता दी गई है।[१] यह सन्तूर कश्मीर की वीणा कहलाता है। इस मे शहतूत के खोखले चौखट के ऊपर सौ तारे फैली हुई होती है।[२] इस भाति सभी कश्मीरी सूफी-काव्यो मे नायक तथा नायिका का मिलन साधक एव साध्य के तादात्म्य का प्रतीक है।

कश्मीरी सूफी-काव्यो मे बारहमासे का वर्णन कही पर नही हुआ है। नायक के हृदय को विरहाग्नि उस समय भी सतप्त करती है जब वह किसी प्रौढ व्यक्ति द्वारा नायिका के रूप-सौदर्य का वर्णन सुनता है। 'बहराम व गुल अन्दाम' मे नायक बहराम प्रौढ व्यक्ति बुड से ही गुल अन्दाम के रूप-सौदर्य का श्रवण करके उस पर आसक्त होता है।[३] 'मुमताज़-बेनजीर' मे प्रौढ पुरुष ही मुमताज को उसकी प्रेमिका के नगर मे पहुचा देता है।[४] इन काव्यो मे नायिका ही नायक के प्रेम की परीक्षा लेती है और कोई अलौकिक पात्र लौकिक मात्र के रूप मे परीक्षा लेने के लिए अवतरित नही होता। 'शीरी-खुसरो' मे शीरी ही फरहाद की परीक्षा लेकर अन्त मे अपना पश्चाताप प्रकट करके कहती है 'हे फरहाद ! मेरे द्वारा ली गई इस परीक्षा के लिए तू मुझे क्षमा कर।[५] 'जेबा निगार' मे जेबा अपने प्रेमी को परीक्षा मे सफल हुआ देखकर बधाई देती है।[६] इन मे अधिकतर नायक अविवाहित है, अतः पूर्व-पत्नी की विरहावस्था का प्रश्न ही उत्पन्न नही होता। वियोग की अतिशयता को प्रकट करने के लिये लश-लकडी (देवदार की लकडी जिसे चौबे-चराग भी कहा जाता है) का प्रयोग हुआ

---

१. यिथय पअठ्यन वज़ान अस्य साज व सतूर, शबस्ता सुबह सअरी शाद व मसरूर।—मुमताज बेनज़ीर, पृ० २४८।

२. The Santoor is the veena of Kashmır. It has hundred strıngs stretched over a hallow wooden frame of mulbery wood.
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५२७।

३. द्रष्टव्य—बहराम व गुल अन्दाम, पृ० ४।

४. द्रष्टव्य—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० १४-१७।

५. ह्रपुस शीरीनि ऐ फरहाद दाना,
गुनाह बख्शुम करियोमय इम्तहानाह। पृ० १०।

६. यि बूजित वारयाह तस गोस दिलशाद, मुबारक छुय बै गैरत द्राक फरहाद। पृ० ४८।

है । 'यूसुफ-जुलेखा' मे जुलेखा अपने प्रेमी यूसुफ का स्वप्न-दर्शन करके वियोग के कारण देवदार की लकडी (कश्मीरी-लशनार) की भाति जलती है ।[१] अधिकतर नायक अपनी नायिका की प्राप्ति के लिए वैरागी बन जाते हैं । इन मे ऐयारो का भी वर्णन हुआ है और वे नायक-नायिका को मिलन-सुख से वचित रखने मे दक्षता रखते है ।

नायिका किसी सरोवर अथवा होज पर ही स्नान करने के लिए आती है ।[२] कही-कही पर कश्मीरी कवियो ने दरिया की कल्पना सागर के रूप मे की है ।[३] नायक एव नायिका का मिलन महल मे ही दिखाया गया है ।

मसनवी शैली मे लिखे गये इन काव्यो मे शाहेवक्त की प्रशसा नही की गई । कवियो मे विशेषरूप से आत्म-परिचय नही दिया है । काव्य के अन्त मे कश्मीरी सूफी कवियो ने समासोक्ति, अन्योक्ति अथवा रूपक तत्वो का भी प्रयोग नही किया है । काव्य के बीच-बीच मे उन्होने गजलो का समावेश किया है ।

हिन्दी के सूफी प्रबन्धकाव्य अधिकाश रूप मे सयोगान्त है । उन मे सयोग के साथ-साथ सम्भोग का भी चित्रण अधिकतर हुआ है । इसी सम्भोग के कारण नायक-नायिका के हास-परिहास अथवा वाक्-चातुर्य का वर्णन इन काव्यो मे उपलब्ध है । चदायन,[४] मधुमालती[५] तथा चित्रावली[६] आदि काव्यो मे हास-परिहास का सम्यक् रूप से वर्णन हुआ है । इन मे षट्-ऋतु वर्णन का भी आश्रय लिया गया है ।

इन काव्यो के कथानक अधिकतर उत्तर-भारत से सम्बन्धित है । नायिकाएं प्राय: अविवाहिता है । कतिपय नायक विवाहित हैं और तभी इन मे उनकी पूर्व पत्नी की विरह-व्याकुलता का चित्रण हुआ है । इस वियोग-वर्णन के लिए कवियो ने बारह-मासे का वर्णन किया है ।

---

१ अशि मति वुछतो क्या बन्योम, लशि नारअह जअजथस गोम नेगारा ।
—यूसुफ़ जुलेखा, हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० १५ ।

२. ब सहने बाग होजाह ओस ख्वशतर, शुबन यथ जन्तस मज़ होजे कौसर,
क्वरुन तमि जामअह अज़ नाजुक बदन दूर, बदन तम्यसुन्द अयान गव शोलह नूर ।—जेबा निगार, पृ० ३० ।

३. द्रष्टव्य—मुमताज बेनजीर, पृ० १३ ।

४. चाद कहा खिन एक सभारहु । हार टूटि गा मोतिह संभारहु । पृ० २०९ ।

५. कबहूं पेम घुमाइ अडावै । कबहूं सुधारस सीचि जियावै ।
कबहूं पेम आनन्द हुलासा । कबहूं दुहुन्ह वियोग तरासा । पृ० ७३ ।

६. पुनि मन्मथ रति फागु सवारी, खोलि अछूत कनक पिचकारी ।
रग गुलाल दोउ लै भरे, रोम-रोम तन मोती झरे । पृ० २०४ ।

सभी सूफी काव्यो मे प्रतिनायक की कल्पना नही की गई है। जहा कही भी प्रतिनायक की योजना हुई है, वहा वह नायिका की प्राप्ति मे नायक के लिये बाधक सिद्ध होता है। इन काव्यो मे विरह-व्याकुलता किसी पक्षी द्वारा उत्पन्न की जाती है जो गुरु रूप मे उपस्थित होता है। पक्षी द्वारा ही नायिका का रूप-वर्णन सुनकर नायक प्रेम-पथ पर अग्रसर होता है जैसा कि 'पद्मावत' मे वर्णित है। ठोडी और उस मे गड्ढा पड जाने का वर्णन उसमान के अतिरिक्त अन्य किसी कवि ने नही किया है।[१] इन मे अधिकतर नायक अपनी नायिका की प्राप्ति के लिये सन्यास धारण नही करते।

इन कवियो ने मानसरोवर का वर्णन किया है। 'पद्मावत' मे पद्मावती अपनी सखियो के साथ मानसरोवर मे स्नान करने आती है।[२] 'चित्रावली' भी सखियो के साथ मानसरोवर पर स्नान करने जाती है।[३]

इन सूफी प्रेमाख्यानो मे नायक तथा नायिका एक-दूसरे का दर्शन शिव-मन्दिर मे करते है। 'पद्मावत' मे रत्नसेन से पद्मावती का मिलन शिव-मन्दिर मे होता है।[४] 'चित्रावली' मे चित्रावली शिव-मन्दिर मे ही अपने प्रेमी सुजान से भेट करती है।[५] यही शिव तथा पार्वती, कथा-नायक की सहायता करते है। पहले पार्वती नायक रत्नसेन की परीक्षा लेती है और फिर शिव नायक रत्नसेन को यह उपाय भी बतला देता है कि उसे नायिका पद्मावती किस भाति प्राप्त होगी।[६] कश्मीरी प्रबन्ध-काव्यो की भाति इन मे ऐयारो का वर्णन नही हुआ है जो नायक-नायिका के मिलन सुख मे बाधा उपस्थित करते है।

हिन्दी के सूफी-कवियो ने मसनवी-शैली को अपनाकर शाहेवक्त का गुणगान किया है। काव्य के अन्त मे 'पद्मावत'[७] तथा 'हस जवाहिर' आदि मे कथा रूपक की चर्चा हुई।[८] इन कवियो द्वारा ग्रन्थारम्भ मे ही आत्मपरिचय दिया

---

१. अब मूल सम ठोडी भई,
वह आमिल यह अमिरत भई।
तेहि तर गाड अपूरब जोवा,
पाक आव जनु अंगुरी टोवा। चित्रावली, पृ० ७३।
२. द्रष्टव्य—जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १५८-१६२।
३. द्रष्टव्य—चित्रावली, पृ० छन्द ११७-१२१ तक
४. जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २५१।
५. द्रष्टव्य—चित्रावली, छन्द, २८८।
६. जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २६०-२६५।
७. वही, पृ० ५६२।
८. हस जवाहिर, पृ० २७२।

गया है। फारसी-बह्रो के स्थान पर ये काव्य दोहा-चौपाई, चौपाई बरवै तथा दोहा-चौपाई आदि के छन्द-क्रम पर लिखे गए है। इन मे भारतीय प्रेमाख्यान काव्य एव फारसी की मसनवी काव्य-शैली का मिला-जुला रूप द्रष्टव्य है।[1]

कश्मीरी सूफी-काव्यो मे फारसी प्रतीको को अपनाया गया है किन्तु हिन्दी के सूफी-कवियो ने अपने विचारो की अभिव्यक्ति के लिये अधिकतर भारतीय प्रतीको का ही आश्रय लिया है, यद्यपि मदिरा, साकी तथा मदिरालय के प्रतीको का व्यवहार प्रायः हिन्दी के सूफी-काव्यो मे भी उपलब्ध है।

इस आधार पर यह कहना युक्तिसगत प्रतीत होता है कि यद्यपि दोनो प्रकार के काव्य निजी विशेषताओ, अनेकरूपता तथा विविधता से मडित है, फिर भी इन मे विभिन्नताओ की अपेक्षा अधिकतर साम्य के तत्व ही दृष्टिगोचर होते है।

१०—साम्य वैषम्य के मौलिक कारण

(क) पूर्ववर्ती प्रभाव

कश्मीरी-सूफी-काव्यो पर शैवमत तथा फारसी-साहित्य का पूर्ववर्ती प्रभाव है। शैवमत या त्रिक् शास्त्र के दार्शनिक सिद्धान्त सृष्टि के तीन रूपो शिव, शक्ति एव पुरुष मे सम्बन्धित है। इस मे इस बात को मान्यता दी गई है कि सृष्टि परमात्मसत्ता की शक्ति से उद्भूत उसकी आत्माभिव्यक्ति है। इस मे जाति एव रग के भेद-भाव को कोई स्थान नही।[2] उसका प्रतिबिम्ब इस सृष्टि मे दर्पण पर पडे प्रतिबिम्ब की भाति झलक रहा है।[3] अपनी ही इच्छा (चित्ति) के आधार पर उस परम-सत्ता ने स्व-सृष्टि की यवनिका पर अपने आपको

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३२६।

२. The philospthy is concerned with the three-fold existence of the Universe, Shiva (the Universal Being) Shakti (the Universal energy) and Nar or Purush (the individual). Shaivism also holds that the Universe is manifestation of God Himself brought about by His (Swatantra Shakti) motivating power. Shaivism recognises no restrictions of caste and creed and has no place for discrimination on this basis.

—कश्मीर शैवज्मि, प्रवक्ता, स्वामी लक्ष्मणजू, रेडियो कश्मीर से १०-६-६५ को प्रसारित वार्ता।

३. विमलमकुर सामाजी, यत्याभयन कमाकम सेय।
प्रशमुभजितथपद अलमाजी, शून्यं कृत्वा पुनरपि तेय। महानय प्रकाश, पृ० १२५।

प्रकाशित किया है ।[1] इस्लाम के कश्मीर मे प्रवेश पाने से पूर्व शैवमत मे तान्त्रिक विधि-विधानो का सम्मिश्रण हो चुका था । शितिकण्ठ ने तेरहवी शताब्दी मे 'महानय प्रकाश' की रचना की जिस मे योग की चार अवस्थाओ तथा पाच अध्यात्मिक स्थितियो का पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित किया गया है जिन से मानव की चेतना जागृतावस्था को प्राप्त होती है ।[2] इस मे गुरु-महिमा का भी वर्णन है :

गुरुदेव्यु अकअकथियदेवत
अन्तरभाव परस्परकित्त ।
याग्वेत क्षीरसमुद्र सए कत ।
यान्याहश्चित्तन्यानृत्त ।[3]

महाराजा अशोक (ईसा पूर्व २३२-२७३) से पूर्व यहा बौद्ध-विहारो की स्थापना हो चुकी थी ।[4] इस्लाम के कश्मीर मे आगमन से पूर्व ह्रासोन्मुख बौद्ध-धर्म का शैव-तन्त्रो के साथ एकत्व स्थापित हो चुका था ।

फारसी के फिरदौसी, सनाई, अत्तार, रूमी, शेख सादी, हाफिज तथा जामी आदि कवियो की रचनाए तसव्वुफ के रग मे रंगी हुई है । इन कवियो का प्रभाव कश्मीरी सूफी-कवियो पर पडे बिना न रह सका । इनकी एक उक्ति 'अल मजाजो कन्तुरतुल हकीका 'अर्थात् 'इश्क मजाजी ही इश्क-हकीक़ी का पुल है' के आधार पर मकबूल शाह क्रालवारी ने अपने काव्य 'गुलरेज' मे कहा है :
मजाजस नाव पुल थोवमुत बुजर्गव, तरी अमि कदलअह युस सु बहरवर गव ।[5]
(पूर्वजो ने इश्क मजाजी को इश्क-हकीकी का पुल कहा है और जो इस पुल से पार होता है, वही परम सत्ता का ज्ञान प्राप्त करता है ।)

निजामी की पाच मसनवियो मे से 'खुसरो शीरी' मे क्रमश खुदा की तारीफ, रसूल की नात, शाहेवक्त तुगरिल की दुआ तथा इश्क का गुण-गान किया गया है[6], 'लैला-मजनू' मे भी उसने 'हम्द' के अन्तर्गत खुदा की प्रशसा, नात मे रसूल

---

१. स्वेच्छया स्वभित्तौ विश्वमुन्मीलयति—By the power of its own will (citi) unfolds the universe upon its own screen.
प्रत्यभिज्ञाहृदयम्, सूत्र २, अनुवादक, एमिल बेयर ।
२. कअशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० १३७ ।
३. महानयप्रकाश, पृ० ५७ ।
४. कअशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० ११७ ।
५. गुलनूर, मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० २३८ ।
६. खुसरो शीरी, निज़ामी, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, सन् १९०२ ई०, पृ० १-५ ।

का गुण-गान तथा मेराज का जिक्र किया है।[1] जामी ने अपने काव्य 'यूसुफ जुलेखा' मे कहा है कि सासारिक प्रेम को छककर पियो ताकि तुम्हारे ओठ और अधिक शुद्ध प्रेम का सुरापान कर सकें।[2]

प्राय: सभी कश्मीरी-सूफी प्रबन्धकारो ने 'हम्द' मे ईश्वर की प्रशसा की है तथा उन्होने अपने काव्यो मे लौकिकता के माध्यम द्वारा अलौकिकता के दर्शन कराए है। जिस समय कश्मीरी फारसी-सूफी कवियो पर फारसी के इन कवियो का सर्वप्रथम प्रभाव पडा, तो उन्होने उसी आधार पर काव्य-रचना की। याकूब सर्फी बाबा दाऊद खाकी तथा मुल्ला मुहसिन फानी ही यहा के प्रमुख स्थानीय फारसी-सूफी कवि थे। इनके माध्यम से ही यहा के कश्मीरी सूफी कवि प्रभावित हुए। निजामी के अनुकरण पर ही याकूब सर्फी ने पहले 'पंजगज' लिखा जो पाच मसनवियो (लैला-मजनू, यूसुफ जुलेखा, वामीक अजरा, मगाजी-उल-नबी तथा मुकामाते-मुर्शिद) का सग्रह है। तदनन्तर फारसी मसनवी के द्वारा एक सुगम शैली का सूत्रपात हुआ जिसके फलस्वरूप महमूद गामी ने आध्यात्मिक परम्परा को एक नई दिशा दी।[3] कश्मीरी-सूफी कवियो ने फारसी से प्रभावित होकर ही बह्र हजज मुम्दस, बह्र रमल मुम्दस, बह्र खफीफ तथा तकारुब आदि का प्रयोग किया। महमूद गामी की मसनवी 'लैला-मजनू' 'शीरी-खुसरो', तथा 'हारुन-रशीद' में बह्र हजज मुस्दस का उपयोग किया गया है। 'हियमाल' (सैफ-उद्-दीन तथा वली अल्लाह मतो कृत), गुलरेज (मकबूल शाह क्रालवारी कृत) तथा जेबा निगार (पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' कृत) आदि काव्य प्राय: इसी बह्र मे लिखे गए है। फारसी कविता राजदरबार की कविता थी,[4] किन्तु कश्मीरी सूफी कवियो को किसी भी राजा का प्रश्रय प्राप्त न था। शाहेवक्त की प्रशसा न करके उन्होने अपने काव्यो मे फारसी मसनवियो की भाति ही हम्द,

---

१. लैला-मजनू, पृ० १-३।

२ Drink deep of earthly love, that so thy lip,
May learn the wine of holier love to sip.
—यूसुफ जुलेखा, जामी, अनुवादक रैल्फ टी-एच ग्रिफ्थ (लदन), पृ० २४।

३ Later on the Persian 'Masnavi' provided a convenient technique for this literary development of Mahmud Gami gave the mystical tradition a new turn.
—कश्मीरी लिट्रेचर री प्रिटेड, पृ० ११४।

४. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, पहला भाग, पृ० १८३।

नाते नबी, औलिया की प्रशसा तथा ग्रन्थ-रचना का कारण आदि सब कुछ प्रस्तुत किया। उपमानो के रूप मे लिये गये पुष्प अधिकतर ईरानी है। किसी-किसी वृक्ष, पुष्प तथा फल मे स्थानीय रग व रूप की झलक दिखाई देती है।[१] चिनार,[२] शमशाद,[३] सुबल,[४] तथा बादाम[५] आदि उपमानो को फारसी के आधार पर ही अपनाया गया है। मजनू, फरहाद तथा यूसुफ आदि को फारसी काव्यो के आधार पर साधारण नायको के रूप मे ही चित्रित किया गया है।

इस प्रकार महमूद गामी से लेकर आज तक हमारे यहा सूफी तथा दार्शनिक काव्य की जो पूजी जिस मात्रा मे विद्यमान है तथा उस कोष मे जितनी नई-नई पूजी शामिल हो रही है, उस पर निस्सदेह फारसी विचार-धारा का पर्याप्त प्रभाव पडा हुआ है।[६]

हिन्दी के सूफी-प्रेमाख्यान फारसी की प्रेमाख्यानक मसनवियो से प्रभावित होते हुए भी भारतीय परम्पराओ के अधिक निकट है। परमात्मा ही उद्गम-स्थल है, उसी से उत्पन्न होकर प्राणी पुन उसी में लौट जाते है[७] संपूर्ण ब्रह्माण्ड मे एक ही परमात्मा व्याप्त है।[८] इस सृष्टि की रचना उसी ने की है।[९]

---

१. कश्मीरी जबान और शायरी, पहला भाग, पृ० १९२।

२. अकिस आगअन्य आसान छय आसान शिहिल बूनी। हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० १६।

३. तअम्यसुन्द कद छु अज नेको मरशती, बिला तशबीह शमशाद बिहिश्ती। सोहनी मेयवाल, पृ० ८।

४. मु तूल जुल्फ अज़ अबर तसलसुल, ब पेच व ताब लरजान मर्गे सुबल। मुमताज़ बेनज़ीर, पृ ९०।

५. मय नव या कमान या फितनये आम, दो तेग मर्गे आशक बर्गे बादाम। वामीक अजरा, पृ० ५।

६. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, पहला भाग, पृ० १९६।

७. यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति,
यत्प्रयन्त्यभिसविशन्ति। तद्विजिज्ञास्व, तद्ब्रह्मेति। तैत्तिरीयोपनिषद्, भृगुवली, प्रथम अनुवाद।

८. एकोदेव: सर्व भूतेषु गूढ सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्ष:सर्वभूतादिवास: साक्षी चेताकेवलो निर्गुणश्च।
श्वेताश्वर उपनिषद्।

९. सोऽकामयत। बहुस्याम प्रजायेयेति। तैत्तिरीयोपनिषद्, षष्ठ अनुवाक

तथा उसकी प्राप्ति के लिए गुरु का मार्ग-दर्शन आवश्यक है[1] आदि सभी सम्बन्धित विचारधाराओ पर भारतीय उपनिषदो का प्रभाव पडा है। सूफीमत का साम्य अद्वैतवाद के साथ है फिर भी वे मत वेदान्त के इन विभिन्न मतवादो से प्रभावित तो है लेकिन वे उनकी नकल मात्र नही है।[2]

सस्कृत का प्रभाव इन पर स्पष्टतया परिलक्षित होता है। 'चदायन' मे मौलाना दाऊद तथा 'पद्मावत' मे जायसी ने एक नायक तथा दो नायिकाओ का वर्णन किया है। सामान्यतः लौकिक प्रेम-कथाओ मे राजकुमार और राजकुमारी अविवाहित ही दिखाये जाते है, इसे पूर्णतः मुस्लिम परम्परा की देन भी नही माना जा सकता क्योकि सस्कृत की नाटिकाओ मे ज्येष्ठा और कनिष्ठा के रूप मे दो नायिकाओं की कल्पना उपलब्ध है, जिनमे पहली विवाहिता पत्नी और दूसरी प्रेयसी होती है, जो बाद मे ज्येष्ठा की अनुकम्पा से पत्नीत्व का पद प्राप्त करती हैं।[3]

बौद्ध-धर्म अपने सस्थापक की मृत्यु के अनन्तर कई शाखाओ मे विभक्त हो गया। इसके उत्तरकाल मे तत्र की प्रधानता रही। जत्र-मत्र तथा जादू-टोना की उपासना शक्ति के प्रतिरूप समझकर की जा रही थी। अह का नाश, खिलवत (एकान्त-सेवन) मुराकबा (ध्यान) तथा फना (निर्वाण) आदि पर बौद्ध-धर्म का ही प्रभाव प्रतीत होता है।

नाथ-सप्रदाय का प्रभाव उत्तरी-भारत के पश्चिमी प्रदेशो मे था। इस सप्रदाय के प्रवर्त्तक गोरखनाथ की साधना मे अद्वैतवाद तथा योग-साधना का समन्वय मिलता है। ये गोरखपथी सिद्ध हाथ में किगरी, कान मे कुण्डल तथा गले मे रुद्राक्ष की माला पहनते थे। इनका वस्त्र लाल या गेरुए रग का होता था। सूफियो पर इन नाथ-पथियो का प्रभाव उनकी योग-साधना पर पडा। 'पद्मावत' मे रत्नसेन गेरुए कपड़े धारण करके ही सिहल की ओर बढता है।[4]

---

१. परीक्ष्य लोकान्कर्मचितान्ब्राह्मणो निर्वेद मायान्नास्त्यकृत· कृतेन।
तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणि· श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठम।
—मुण्डकोपनिषद् (१-२-१२)

२. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ३७६।

३. मूल शोध प्रबन्ध, मध्ययुगीन, हिन्दी-कवियो के संकेतित और व्यवहृत काव्य सिद्धान्तो का अध्ययन, पृ० ३७०।

४. चला कटक जोगिन्ह कर कै गेरुआ सब भेषु।
कोस बीस चारिहु दिसि जानहुं फूला टेसु। जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २११।

पद्मावती के रूप-सौंदर्य का दर्शन करते ही गोरखनाथ का यह चेला मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पडता है।[1]

सिद्धो, नाथ पथियो और सन्तो ने मध्यकाल मे अपने विचारों और सिद्धान्तो के प्रचार-प्रसार के लिये छन्दो और गीतो का आश्रय लिया। इनका महत्व ज्ञान की दृष्टि से अधिक है और काव्य की दृष्टि से कम, फिर भी उन मे यत्र-तत्र सरस उक्तिया बिखर पडी है और वे काव्य की दृष्टि से भी उच्च स्तर पर पहुचती है। उन मे सरसता और काव्य तत्वो की उपलब्धि हो जाती है। रहस्यवाद की साधना के कारण उनकी उपदेशात्मक सूक्तियो मे भी मनोरमता के दर्शन होते है।[2]

अपभ्रंश के चरित काव्यो की काव्यगत रूढियो जैसे प्रेमारम्भ से पूर्व गुण-श्रवण, चित्रदर्शन, साक्षात्-दर्शन, लौकिक कथा मे अलौकिकता का सदेश, समुद्र-यात्रा की योजना, बन मे किसी सुन्दरी के साक्षात्कार, सरोवर मे अचानक नायिका से साक्षात्कार, पशु-पक्षी की भाषा समझना, नारी-जाति की प्रवचना, सिहल की यात्रा, जन्म जन्मान्तर के प्रेम आदि का प्रभाव भी इन सूफी-काव्यो पर पड़ा है। 'करकण्डू चरिउ' के नायक की भाति ही रत्नसेन को सिहल की यात्रा करनी पडती है। 'मधुमालती' मे मनोहर नायिका मधुमालती को अपने जन्म जन्मान्तर के प्रेम के सम्बन्ध मे कहता है :

कँ करवत ओहि जनम देवाएउ। ताहि पुन्नि तोहि दरसन पाएउ।[3]

सस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश के काव्यो मे सर्वत्र विनय-प्रदर्शन है। 'पद्मावत'[4] 'मधुमालती'[5] तथा 'चित्रावली'[6] आदि मे कवियो ने इसे अपनाया है।

इन काव्यो पर फारसी की मसनवी शैली का प्रभाव पडा है। फारसी के काव्यों में पछी सदेशवाहक रूप मे आए है। इस प्रकार पद्मावत का हीरामन तोता, हस जवाहिर मे पछी का रूप धारण करने वाली परी तथा इन्द्रावती के सदेश को प्रेमी के पास ले जाने वाला पक्षी भी सदेश ले जाने मे सहायक सिद्ध

---

१. परा भाति गोरख का चेला। जिउ तन छाड़ि सरग कह खेला। वही, पृ० २५१।

२ मूल शोध-प्रबन्ध, मध्यकालीन हिन्दी कवियो के सकेतित और व्यवहृत काव्य-सिद्धान्त का अध्ययन, पृ० ३७०।

३. मधुमालती, पृ० ५८।

४. द्रष्टव्य—जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १३५।

५ द्रष्टव्य—मधुमालती, पृ० २३। ६. द्रष्टव्य—चित्रावली, छद ३३।

होता है। फारसी पात्रो के समान ही रत्नसेन, यूसुफ(यूसुफ जुलेखा, निसार कृत) तथा हस आदि अत्यन्त सुन्दर है। हिन्दी-सूफी काव्यो मे वियोग का ऊहात्मक वर्णन फारसी प्रभाव के कारण ही हुआ है।

(ख) परिस्थितियों का अन्तर

कश्मीर पर इस्लाम तथा फारसी का प्रभाव फारस तथा मध्य एशिया से आने वाले सैयद उलेमाओ तथा विद्वानो द्वारा खूब पडा। यहा से भी विद्वान बुखारा, समरकन्द तथा हेरात आदि विश्वविद्यालयो मे फारसी सस्कृति का गहन अध्ययन करने के लिये चले जाते थे। उस समय वे स्थान इस्लामी-सस्कृति के महान् केन्द्र थे।[१] फारसी भाषा, विशेषकर शहाब-उद्-दीन(सन् १३५४ ई०—७३) के समय मे सस्कृत के स्थान पर कश्मीर की सास्कृतिक तथा राज्य-भाषा बनी।[२] इस प्रभाव के फलस्वरूप यहा के फारसी सूफी कवियो तथा कश्मीरी-सूफी कवियो ने अत्तार, निजामी, रूमी तथा जामी आदि के अनुकरण पर काव्य लिखे। यद्यपि फारसी राज्य-भाषा रही, तथापि राजनीतिक उतार-चढाव के कारण यहा के फारसी तथा कश्मीरी सूफी कवियो ने शाहेवक्त की प्रशसा नही की। फारसी के कश्मीरी-सूफी कवि याकूब सर्फी (सन् १५२१ ई०--सन् १५९४ ई०)[३] ने कहा है कि यदि निजामी ने मेरी तरह उतार-चढाव से पूर्ण अशातिमय वातावरण देखा होता, तो वह कभी भी ऐसे शक्तिशाली काव्य की रचना मे कदापि समर्थ न होता।[४]

---

१. The place of perso Islamic influence in the valley was accelerated with the immigration of Sayyid nobles and scholars from Persia and central Asia. After ordent scholars went to the Universities at Bukhara, Samarkand Herat, the centres of Islamic culture, to drink deep from the Persian culture·
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीरी, पृ० ५०५।

२. .. replaced Sanskrit as the language of culture and administration, particularly during the rule of Shihab-Ud Din.
—तारीख-ए-हसन (पर्शियन पोएट्स इन कश्मीर, चौथा भाग), पृ० १०।

३. द्रष्टव्य—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५०७-५०८।

४ निजामी रा कि हरगिज हेच कर दी, बदल न निशस्तह बूद अज़ गर्म व सदी।—पजगंज, वामीक अजरा, पृ० ४८।

कश्मीरी-सूफी प्रबन्धकारो को अधिकतर राज्य का सरक्षण एव आश्रय प्राप्त न हुआ। इस कारण उन्होने न राजदरबारो का चित्रण किया और न ही शाहेवक्त की प्रशसा की। इन काव्यो मे केवल निस्सतान राजा के स्वभाव का चित्रण ही कुछ एक पक्तियो मे उपलब्ध है। 'सोहनी मेयवाल' मे कवि ने निस्सनान राजा की चिन्ता का वर्णन करते हुए केवल इतना कहा है कि वह अत्यन्त दु.खी था।[1] उनके काव्य मे सामूहिक रूप से स्थानीयता बहुत कम या धुन्धली-धुन्धली नजर आती है क्योंकि उन्होने फारसी से प्रभावित कश्मीरी भाषा का ही बहुलता से प्रयोग किया। सूफी-सिद्धान्तो की अभिव्यक्ति के लिए उन्होने एक नया वातावरण उत्पन्न किया, जो न ईरानी था और न कश्मीरी[2] फिर भी उन्होने अपने सामाजिक रहन-सहन तथा रीति-रिवाजो की अवहेलना नही की।

इन काव्यो मे नायिकाओ के रूप-सौदर्य का वर्णन परम्परानुसार हुआ है किन्तु उनके निवासस्थान के नाम विभिन्न रूपो मे आए है। नायक अथवा नायिक के नाम हिन्दू तथा मुसलमान दोनो प्रकार से दिये गये है। नागराय एक हिन्दू नायक तथा हियमाल एक हिन्दू नायिका है। इसके अतिरिक्त 'जेबा निगार' की नायिका जेबा तथा 'चन्द्रवदन' की नायिका चन्द्रवदन, मूल रूप मे हिन्दू नारिया है।

काव्य-रचना का समय प्राय प्रत्येक काव्य के अन्त मे दिया गया है। शालीनता के कारण ही कुछ कवियो ने अपने काव्यो मे आत्मपरिचय बहुत कम दिया है। कई काव्यो मे आत्मपरिचय उपलब्ध ही नही होता। कतिपय काव्यो के अन्त मे कवियो ने अपने गुनाहो के लिए क्षमा-याचना भी की है।

कश्मीरी सूफी-काव्यो के कथानक प्राय एक जैसे है। कवियो ने बीच-बीच में गज़लों का भी समावेश किया है। इन मे षट्-ऋतु-वर्णन तथा बारहेमासे का वर्णन नही हुआ है। कुछ कवियो ने अज्ञान के कारण दरिया को ही समुद्र के रूप मे अपनाया है।[3] परिस्थितियो के प्रभाव के कारण ये सभी काव्य वियोगान्त है।

जहा तक हिन्दी प्रबन्धकाव्यो के देश, काल तथा परिस्थितियो का सम्बन्ध

---

१ अमानन बोज़ केंह आंमुस न औलाद, स्यठाह दिल ओस तम ओजरह नाशाद। —सोहनी मेयवाल, पृ० ३।

२ मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, प्रथम भाग, पृ० १०८।

३ तिमन दर आब दरिया मुदथा गव, बक़िस्मत आशकन ब्वड हसरताह रूयव।—मुमताज़ बेनजीर, पृ० १३।

है, उन मे कवियों ने परम्परागत एव रूढिबद्ध घटना-व्यापारो की योजना करके अपनी कथावस्तु का सगठन किया है। अभारतीय कथावस्तुओ के आधार पर लिखे जाने पर भी उनमे भारतीय वातावरण को अकित किया गया है। 'हस जवाहिर' तथा 'यूसुफ जुलेखा' नामक काव्यो के क्षेत्र अभारतीय है। 'हस जवाहिर' के नामकरण के अतिरिक्त उनकी गृह-व्यवस्था, सामाजिक रहन-सहन एव रीति-रिवाज सभी भारतीय है।[1] शेख-निसार की प्रेमगाथा 'यूसुफ जुलेखा' के पात्र अभारतीय है और कुछ तो अलौकिक तक कहे जा सकते है, किन्तु इतना होने पर भी उनकी सपूर्ण चेष्टाए सर्वथा अभारतीय नही है। प्रायः प्रत्येक सूफी-कवि ने नख शिख, बारह-मासा, षट्-ऋतु, विवाह-प्रथा एव उत्सवादि का वर्णन उनके भारतीय रूपो मे ही प्रस्तुत किया है।

इन काव्यो मे राजदरबारो का सास्कृतिक चित्रण अवश्य हुआ है। प्रत्येक राजदरबार मे सगीतज्ञ, चित्रकार, ज्योतिषी तथा गुप्तचर का होना आवश्यक था। प्रत्येक काव्य के नायक-नायिका का जन-जीवन के नायको से तादात्म्य स्थापित किया गया है। प्रेम का उत्कर्ष भारतीय परिस्थितियो के आधार पर ही वर्णित है। इसी कारण अधिकतर काव्य सुखान्त है। कश्मीरी तथा हिन्दी-सूफी कवि जब टोपी उतार कर मक्के की ओर अल्लाह के चरणो पर रखते है, उस समय सूफियो के जिक्र मे वह शक्ति है कि वह देश, काल तथा परिस्थिति के ऊपर उठकर आत्मा और परमात्मा के मिलन मे सहायक होती है।[2]

(ग) काव्यों और कवियों के दृष्टिकोणों का अन्तर

कश्मीरी सूफी-कवियो का काव्यादर्श फारसी काव्य रहा है जबकि हिन्दी-सूफी कवियो का काव्यादर्श भारत के प्राचीन चरित और कथा-काव्य। इस आदर्श-भिन्नता के कारण दोनो के काव्य-सम्बन्धी दृष्टिकोण मे भी अन्तर आ गया है। हिन्दी के सूफी-कवि अपने काव्यो को भारतीय काव्य-परम्परा के अधिक से अधिक समीप रखने का प्रयत्न करते है और इसी लिये वे अपभ्रश या पूर्ववर्ती काव्यो मे प्रचलित कथा-रूढियो, उपमानो और प्रतीकों का प्रयोग करते है, जबकि कश्मीरी-सूफी कवियो का दृष्टिकोण इसके सर्वथा विपरीत है और उन्होंने इन तत्वो को फारसी परम्परा से ग्रहण किया है। दोनो मे मसनवी शैली का साम्य होते हुए भी हिन्दी के सूफी-कवि काव्यारम्भ के वर्णनो मे एक-दूसरे के अधिक समीप है और इस मे वे एक नियम विशेष का पालन करते है जबकि

---

१ जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २०६।

२. वही, पृ० २०६।

कश्मीरी-सूफी कवि इन प्रारम्भिक वर्णनो मे अपनी रुचि को ही प्रमुखता देते है। यही कारण है कि उन्होंने तत्कालीन राजा या बादशाह का वर्णन प्रस्तुत नही किया है। राजनीनिक उथल-पुथल अथवा राज्याश्रयहीनता भी इसका कारण हा सकता है। यूसुफ जुलेखा (निसार कृत) को छोडकर हिन्दी के सभी सूफी-काव्यो के नायक-नायिका हिन्दू है और इन सूफी कवियो का उद्देश्य भी अधिकतर हिन्दुओ के बीच प्रेम का प्रसार करना था अत उन्होने हिन्दू-जीवन, आचार और रीति रिवाजो आदि का विशद्-वर्णन प्रस्तुत किया है। कश्मीरी सूफी काव्यो के नायक-नायिका अधिकतर मुसलमान है, इसीलिये उन्होने इस्लामी रीति-रिवाजो को ही उस मे प्रश्रय दिया है। इन सूफी-काव्यो के निर्माण-काल की अवधि मे कश्मीर की वहुसख्यक जनता मुसलमान बन चुकी थी। फलस्वरूप उन्हे अपनी प्रेम-पद्धति के प्रकार के लिये उनके ही सम्पर्क में अधिक आना पडता था। हिन्दू जनता शैव-तत्र से प्रभावित थी, अत अपने सूफी-काव्यो में उन्होंने केवल उन ही शैव-तत्वो का समावेश किया है जो उनके अनुकूल पडते थे और इस प्रकार वे फारसी-परम्परा के इन प्रेमाख्यानो के माध्यम से हिन्दू जनता को भी किसी सीमा तक प्रभावित कर लेते थे। हिन्दी और कश्मीरी सूफी कवियो के दृष्टिकोण के इस मौलिक अन्तर के कारण ही उनके काव्यादर्शो मे भी अन्तर आ गया है यद्यपि लक्ष्य दोनो के समान है।

(घ) साम्य के लिये साधना-पद्धति का सादृश्य

सूफियो का ईश्वर किसी एक जाति या धर्म-विशेष गुणो से युक्त अल्लाह, गाड, राम अथवा अन्य कोई सज्ञारूप ईश्वर नही है। वह न किसी एक स्थान पर बैठा है, न अवतार लेता है और न शासनाधीश की भाति वही से विश्व का सचालन करता है। वह तो एक व्यापक शक्ति है जिसे किसी भी निश्चित नाम से पुकारा जा सकता है। हम सब उससे पृथक् नही है। वही हमारा स्रोत है, अत. हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, जैन, बौद्ध और पारसी नाममात्र के ही भेद है, सभी का लक्ष्य विविध साधनो से एक ही स्थान पर पहुचना है और वह है अपने मूल विश्वात्मा से एकरूपता।[1] कश्मीरी सूफी-काव्य 'चन्द्रवदन' मे नायक मैयार इसी आधार पर अपनी प्रेमिका से कहता है कि मै अपने धर्म से स्वय बेगाना हूं। न मैं हिन्दू हूं और न ही मुसलमान। मैने सकेत पाये जाने वाले सौंदर्य-शाली रूप का ज्ञान पाया है। राम-राम की प्राप्ति की उत्कट इच्छा मन

१. सूफीमत और हिन्दी साहित्य पृ० २५५।

को ओजपूर्ण बना रही है।[1]

दोनो प्रकार के काव्यो मे कवियो की साधना उसी परमात्मा मे फना (लीन) होकर बका (अवस्थित) हो जाने के लिये है। यही प्रयास-काल साधक (सालिक) का मार्ग या साधना-पथ है। (ईश्वर-मिलन) कश्मीरी काव्यो में प्रधान रहा है। 'लैला-मजनू' गामी कृत,[2] 'हियमाल', वली अल्लाह मतो कृत,[3] 'वामीक-अजरा',[4] 'सोहनी-मेयवाल,[5] 'गुलनूर गुलरेज,[6] आदि में इस (वस्ल) को महत्वपूर्ण बताया गया है। मारिफत (पूर्ण ज्ञान) के लिये साधक को कुछ सोपानो और अवस्थाओ (हाल) को पार करना पडता है। हकीकत ही साधक की परमानुभूति है। इन की साधना में 'जिक्र' एव 'फिक्र' की भी योजना है। 'जिक्र' में साध्य के निरन्तर चिन्तन का उल्लेख है और 'फिक्र' का उद्देश्य आत्म-विस्मरण है। 'जिक्र' के अतर्गत प्राणायाम पद्धति एव नियमन की प्रधानता है। इस मे मन, प्राण तथा शरीर का नियमन होता है। 'जकात' या दान भी उनकी साधना का एक अग है किन्तु शरीयत, तरीकत तथा मारिफत की अवस्थाओ को पार करके ही हकीकत के साथ तादात्म्य सभव है। उपासना-पद्धति में गुरु या पीर का अत्यधिक महत्व है। प्रेम की एकनिष्ठ भावना भी इन काव्यो मे उपलब्ध है। कठिनाइयो को पार करके ही साधक को अपने लक्ष्य की प्राप्ति होती है।

सूफी कथानक रूढ़ियां और अभिप्राय

इन सूफी-काव्यो मे 'प्रेम की पीर' को एक विशेष प्रश्रय मिला है। इनमें 'इश्क-मजाजी' के स्थान पर 'इश्क-हकीकी' के ही बीच उपलब्ध होते है। सूफीमत के प्रचार के कारण कश्मीर तथा भारत में एक नवीन प्रेमाख्यान पद्धति का सूत्रपात हुआ। कश्मीर के सूफी प्रेमाख्यान अधिकतर फारसी सूफी-काव्यो की कथानक रूढियो से प्रभावित है। इनमें लौकिक प्रेम की अपेक्षा अलौकिक प्रेम के निरूपण के साथ-साथ इस्लामी विचारधारा का अकन अधिक सुस्पष्ट है। यद्यपि अधिकाश काव्य आकार में छोटे है, फिर भी उनमें 'प्रेम की पीर' की व्यजना अधिक गहरी एव ऊहात्मक है।

---

१. अज दीन ख्वद बेगानअह, नय ह्युन्द नय मुसलमान,
मे रओय लवब नेब नामुक, लवग जोश तस राम रामुक।
—चन्द्रवदन, पृ० ५।

२ द्रष्टव्य—पृ० ८। ३. द्रष्टव्य—पृ० ७१।

४ द्रष्टव्य—पृ० २४-२५। ५. दृष्टव्य—प० ४७।

६. द्रष्टव्य—पृ० ५८।

हिन्दी सूफी-कवियो ने लोक-प्रचलित भारतीय प्रेमाख्यानो की प्रचलित परम्पराओ का सूत्र पकडकर एव कई ऐतिहासिक तथा अर्द्ध-पौराणिक प्रेम-कथाओं को भी अपनाकर उनपर अपना रग चढाया। इन प्रेम-कथाओ की कथा-वस्तु का विकास उन्होने अपनी प्रेम-साधना तथा पद्धति के अनुरूप करना चाहा जिसके लिये उन्हें कई प्रचलित कथानक रूढियो का आश्रय लेना पडा। किसी राजकुमारी पर राजकुमार के आसक्त होने के माध्यम से उन्होने कष्ट-सहन, विरह-भावना तथा सौदर्यादि की जो अद्भुत कल्पना की, उसके लिये उन्हे कई प्रकार के पात्रों के अतिरिक्त बन, उपवन, समुद्र-सरोवर तथा नगर-वर्णन को भी अपनाना पड़ा। ईश्वर को प्रियतमा मानने के फलस्वरूप इन काव्यो में एक विशेष रचना-पद्धति को ग्रहण किया गया है। इस रूप मे प्रेम-साहित्य के एक नए अङ्ग की पूर्ति हुई। विशेपत इन काव्यो मे इस्लामी विचारधारा के सिद्धात का चित्रण कर भारतीय-साहित्य मे उन्हे एक विशेप स्थान देने का प्रयत्न किया गया है।

चौथा अध्याय

कश्मीरी और हिन्दी सूफी मुक्तक काव्यों पर तुलनात्मक दृष्टि

(१) सूफी मुक्तक काव्यों की कश्मीरी परम्परा तथा हिन्दी परम्परा

मुक्तक काव्यो की कश्मीरी परम्परा सन् १३५० ई० से मानी जाती है। उस समय कश्मीर के सास्कृतिक जीवन मे उथल-पुथल मची हुई थी। इधर से शैव-मत की जीवन-पोषण परम्पराओ को बाह्य-आडम्बर ने ढक लिया था और उधर से इस्लाम के प्रचारक सूफी फकीर एक नया दृष्टिकोण पेश करने लगे थे।[1] सर्वप्रथम लल्लेश्वरी (लल्लद्यद—सन् १३५० ई०—सन् १४०० ई०) ने कबीर से सौ वर्ष पहले इस बाह्याडम्बर और पाखण्ड पर तीव्र चोटे की।[2] वह अमीर कबीर सैयद अली हमदानी की समकालीन थी जिसने सन् १३७९-८० ई० से सन् १३८५-८६ ई० में कश्मीर-यात्रा की।[3] लल्लेश्वरी के 'वाक्यो या 'वाख्यों' मे सूफी-साहित्य के मुक्तक रूप का बीज निहित है। इन मे हकीकत की झलक स्पष्ट रूप से नज़र आती है।[4] इन 'वाक्यो' का छन्द-विधान परिष्कृत तथा कसा हुआ नही है। केवल एक लचीली लय का ही मनोरम संगीत समाविष्ट है।

---

१. कश्मीरी भाषा और साहित्य, पृ० ४।

२. वही, पृ० ५।

३. Being a contemporary of Sayyid Ali Hamdani at the time of his visit to Kashmir, 1379-80 to 1385-86 A. D.

—दि वर्ड आफ लल्ल, पृ० १।

४. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—लल्लद्यद, भूमिका, पृ० १४।

लल्लेश्वरी के लगभग तीस वर्ष अनन्तर आध्यात्मिक समन्वय का सहारा लेकर शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश सन् १३७७ ई०—सन् १४८८ ई०) मानवता का प्यार भरा सन्देश सुनाने के लिये आगे बढे। लल्लेश्वरी के पश्चात् वे दूसरे इस्लामी ऋषि थे जिन्होने श्लोको (स्रुकियो) की रचना की जो 'नूरनामा' तथा 'ऋषिनामा' में सग्रहीत है। नुदर्योश को राजदरबार अथवा गोष्ठियो मे विशेष रुचि न थी। वे लल्लेश्वरी की प्रसिद्धि तथा कीर्ति से अत्यन्त प्रभावित थे। इन ही कारणो से उनके श्लोको (स्रुकियो) पर सस्कृत-साहित्य का प्रभाव अक्षुण्ण रहा। साथ ही फारसी और अरबी से प्रभावित होना भी इनके लिये स्वाभाविक था। नुदर्योश के बारे मे जो सुन्दर लोकगीत और सलाप गीत आज भी प्रचलित है उन से ज्ञात होता है कि 'र्योश' साहित्य की परम्परा कम से कम सोलहवी शती तक जारी रही होगी जब कि वर्तमान 'र्योशनामा' लिपि-बद्ध किया गया।[१]

मुसलमान होते हुए भी शेख नूर-उद्-दीन शैवमत से प्रभावित थे। वे जीवन भर गुफाओ तथा कन्दराओ मे तपस्या करते रहे। इस भाति इस्लामी ऋषि बराबर तसव्वुफ तथा शैवमत का समन्वय करते रहे। यह तसव्वुफ कश्मीर मे पहुंचकर खालिस कश्मीरी तसव्वुफ का रूप धारण कर गया। अपनी 'तुजुक जहागीरी' मे जहागीर ने कहा है : कश्मीर मे सब से अधिक ऋषि प्रतिष्ठित है, ये साम्प्रदायिकता से कोसो दूर होकर एकान्त-जीवन व्यतीत करने वाले है, ये सचमुच ख़ुदा की उपलब्धि मे ही दत्तचित्त है, ये किसी के सामने अपना हाथ भी नही फैलाते।[२]

नफ्स,[३] काम-क्रोधादि का नाश,[४] ज़िक्र-फ़िक्र की महिमा[५], गुरु की प्रधानता[६] तथा परमात्मा-सम्बन्धी विचारो को जिस रूप मे इन इस्लामी-ऋषियो ने अपनाया था, उसी ऋषित्व को सभी परवर्ती कश्मीरी सूफी कवियों ने अपनाया, जिसका प्रमाण हमे उनके मुक्तक काव्य से मिलता है।[७] लल्लेश्वरी तथा शेख नूर-उद्-दीन के अनन्तर फारसी भाषा केवल राजदरबारों तथा खानकाओ तक

---

१. कश्मीरी भाषा और साहित्य, पृ० ७।
२. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—फलसफस मज सोन मीरास, रेडियो वार्ता।
३. लल्लद्यद, वाक्य ६१, पृ० ८८।
४. नूरनामा, श्लोक ४७, पृ० ८३।
५. वही, श्लोक १५, पृ० ११०।
६. कलामे शेख़ उद्-दीन आलम, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगंज, श्रीनगर, पृ० ४।
७. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—फलसफस मज सोन मीरास, रेडियो वार्ता।

ही सीमित न रही, अपितु उसका प्रचार साधारण जनता मे होने लगा।[1] इस कारण इन परवर्ती सूफी-कवियो मे फारसी के शब्दो का भी बाहुल्य मिलता है।

कश्मीरी सूफी साहित्य मे सोलहवी एव सत्रहवी शताब्दी मे कोई उल्लेखनीय मुक्तक कवि नही हुआ, यद्यपि अब्दुल अहद आज़ाद का यह कहना है कि हब्बा ख्वातून (जन्म समय सन् १५४१ ई०—१५५२ ई०)[2] के समसामयिक हबीब अल्लाह नौशहरी ने अपनी ग़जलो द्वारा तसव्वुफ का प्रचार किया।[3] अवतार कृष्ण रहबर ने भी इस तथ्य को मान्यता देते हुए कहा है कि उन (अबीब अल्लाह नौशहरी) के तसव्वुफ से युक्त गज़ल वे वचन है जिन मे आध्यात्मिक प्रेम (इश्क-हकीकी) का प्रस्फुटन हुआ है, यद्यपि ऐसे आध्यात्मिक पदो तथा गीतो का आधार नुदर्योश श्लोको को ही माना जा सकता है।[4] हबीब अल्लाह नौशहरी के ये गजल अनुपलब्ध है अतः उन पर निरपेक्ष रूप से कुछ कहा नही जा सकता।

अठारहवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे स्वच्छकाल, शाह गफ़ूर तथा महमूद गामी ने मुक्तक काव्य की रचना करके सूफी-साहित्य मे अभिवृद्धि की। तदनन्तर मुक्तक कवियो की अजस्र धारा प्रवाहित हुई जिन मे से नगमा साहब, रहमान डार, वहाब खार, शम्स फकीर, अहमद बटवारी, शाह कलन्दर, असद परे, वाजह महमूद तथा अहमद राह आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन कवियो ने अपने मुक्तक-काव्य की रचना अधिकतर गजलो, गीतो, नातो मे की।[5] यह वह आध्यात्मिक बपौती है जिस मे तसव्वुफ और शैव-दर्शन एक स्वर होकर बोलते सुनाई पडते है।[6] इन गज़लो मे जहा प्रेम-चर्चा हुई है, वहा बाह्याडम्बर एव कर्मकाण्ड की आलोचना भी की गई है।

कश्मीरी सूफी मुक्तक साहित्य प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध है। यहाँ प्रेम-प्रबन्धो का आरम्भ अठाहरवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध से होता है किन्तु मुक्तक-काव्य की उपलब्धि चौदहवीं शताब्दी से ही होती हैं जिस मे जन-जीवन की अभिव्यक्ति सुचारू रूप से हुई है।

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० ६४
२. द्रष्टव्य—वही, पृ० २०२।
३. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—वही, पृ० ७०।
४. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—कअरिथरिह अदबअच तअरीख, पृ० २२८।
५. कवियो की मूल रचनाओ के लिये द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, तीनो भाग।
६ योजना, अगस्त-सितम्बर, १९५७, पृ० १८।

हिन्दी-साहित्य मे सूफियो की स्फुट काव्य-रचना भी सूफी प्रेमाख्यानो के साथ ही आरम्भ हुई।[१] हिन्दी-साहित्य में अमीर खुसरो (सन् १२५३ ई०—सन् १३३५ ई०) को सर्वप्रथम सूफी-मुक्तक काव्य का रचयिता माना जाता है। उनके प्राप्त पदो तथा दोहो मे सूफी-साहित्य का बीज निहित है। मसनवियो के अतिरिक्त उन्होने मुक्तक-काव्य की भी रचना की। मुक्तक-रचनाओं की प्रणाली भारतीय-साहित्य मे अत्यन्त प्राचीन है। सस्कृत एव अपभ्र श मे लिखित मुक्तक-साहित्य प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध है।

खुसरो के अनन्तर अब्दुल कद्दूस गगोही ने मुक्तक-काव्य में रचना की। उनके उपलब्ध दोहे उनके महापुरुष होने की बात को सिद्ध करते है। जायसी ने भी 'पद्मावत' के अतिरिक्त मुक्तक-काव्य की रचना की। उनके 'अखरावट' मे जीव-ब्रह्म एवं साधना आदि तथा 'आखिरी कलाम' मे पीर महिमा, इस्लामी धर्म-दर्शन, जीव, सृष्टि, ब्रह्म आदि पर विचार प्रकट किए गए है। तदनन्तर यारी साहब एव बुल्लेशाह ने स्फुट पद लिखे। नज़ीर के प्रेमातिरेक मे रचित पद तथा अब्दुल समद के भजन भी मुक्तक सूफी-साहित्य के अन्तर्गत आ जाते है। सूफियो के मुक्तक पदो की अपेक्षा उनके मुक्तक दोहो की सख्या अधिक है।[२] इन दोहो तथा पक्षों के अतिरिक्त यारी साहब के भजन, दोहे एव झूलने, कवि दीन दरवेश की कुण्डलिया तथा कवि नजीर की फारसी वजनो के अनुसार लिखी रचनाये विशेष महत्व रखती है। कवि वजहन ने भी दोहो की रचना की। हिन्दी-सूफी मुक्तक साहित्य मे ससार की असारता, गुरु की वदना, जीवन का लक्ष्य तथा निर्गुण-निराकार की उपासना आदि विषयो पर विचार प्रकट किये गये है। उनके काव्य मे प्रेम-चर्चा के साथ ही कर्म-काण्ड एव बाह्या-डम्बर की आलोचना की गई है। हिन्दी का यह मुक्तक सूफी साहित्य प्रचुर मात्रा में मिलता है। इस मे प्रेम प्रबन्धो का समय चौदहवी शताब्दी से आरम्भ होता है और उसके समानान्तर ही मुक्तक-काव्य की उपलब्धि भी हमे इसी शताब्दी से खुसरो के समय से होती है। इस मुक्तक-साहित्य में जन-जीवन की सफल अभिव्यक्ति हुई है।

(२) दोनों की परम्पराओं का तुलनात्मक स्वरूप

कश्मीरी मे सूफी-मुक्तक काव्य का आरम्भ चौदहवी शताब्दी मे लल्लेश्वरी के समय से हुआ और हिन्दी में भी। स्फुट काव्य की उपलब्धि चौदहवी शताब्दी से ही हो जाती है क्योकि खुसरो ने ही इस काल मे ऐसे कुछ पदो की रचना की

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३०१।
२. वही, पृ० १४१।

थी ।[1] मुक्तक-काव्य की परम्परा कश्मीरी तथा हिन्दी मे एक समान ही चौदहवी शताब्दी से आरम्भ तो हुई किन्तु कश्मीरी मे यह परम्परा निरन्तर सन् १९२५ ई० तक चलती रही जब कि हिन्दी मे इसका साहित्य केवल उन्नीसवी शताब्दी तक ही उपलब्ध होता है ।

कश्मीरी मुक्तक-काव्य की परम्परा का सूत्रपात चौदहवी तथा पद्रहवी शताब्दी मे इस्लामी-ऋषि-सप्रदाय द्वारा हुई । इन इस्लामी-ऋषियो मे से लल्लेश्वरी की वाणी 'वाक्यो' या 'वाख्यो' मे फूट पडी तथा शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) ने कश्मीरी श्लोको (सू्कियो) मे अपने सिद्धान्तो को अभिव्यक्ति दी । इन दोनो पर सस्कृत का प्रभाव अधिक और फारसी का प्रभाव कम परिलक्षित होता है। इनके अनन्तर आने वाले सभी-सूफी कवियो ने फारसी के अनुकरण पर मुक्तक काव्य की रचना गजलो, गीतो, नजमो तथा नातो मे की । इसका प्रमुख कारण यह है कि वे काव्य का स्तर अधिक बढाने के लिए फारसी के विद्वान बन जाते थे ।[2]

इसी कारण हम लल्लेश्वरी के 'वाक्यो' तथा शेख नूर-उद्-दीन के मुक्तक काव्य को कश्मीरी-भाषा की पुरातन सस्कृति के स्मृति-चिह्न के रूप मे स्वीकार कर सकते है ।[3]

इसके विपरीत हिन्दी-मुक्तक काव्य अपभ्र श तथा फारसी की परम्पराओ से युक्त होकर आगे बढा । इन सूफी-कवियो ने अपभ्र श की परम्परा से प्रभावित होकर ही पदो की अपेक्षा अधिकतर दोहो मे रचना की । जायसी ने 'अखरावट' तथा 'आखिरी कलाम' आदि की रचना दोहो मे ही की । शेख फरीद ने सलोक (दोहे), यारी साहब ने साखी, पेमी तथा बजहन ने भी दोहे लिखकर सूफी-प्रेम तथा चेतावनी का मधुर उपदेश दिया। दीन दरवेश ने कुडलिया लिखी तथा कवि नज़ीर ने अपनी रचनाओ को फारसी वजनो के आधार पर लिखा ।

(३) उपलब्ध सूफी-मुक्तक काव्य की विशेषताएं

(क) भाव पक्ष

कश्मीरी-सूफी कवियों का मुक्तक काव्य आध्यात्मिक आलोक से भरा पडा है । उन का परमात्मा एक होकर भी अनेक है एव अरूप होते हुए भी सर्वव्यापक

---

१ जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १४१ ।

२. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, प्रथम भाग, पृ० १०२ ।

३. वही, पृ० १०६ ।

है।[1] लल्लेश्वरी ने इस निर्गुण-निराकार को शिव की संज्ञा दी है जो सर्वत्र विद्यमान है। उसी की ज्योति जगत् में व्याप्त है अतः न कोई हिन्दू है और न ही मुसलमान।[2] शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश),[3] स्वच्छ क्राल[4] तथा महमूद गामी[5] का निर्गुण एक होकर भी अनेक रूपों में समाया हुआ है। रहमान डार,[6] वहाब खार[7] अमदपरे,[8] शम्स फकीर[9] तथा अहमद राह[10] आदि का परमात्मा वह निर्गुण-निराकार है जिसका सौंदर्य एवं नूर संसार भर में प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर होता है। उनकी दृष्टि में जगत् ईश्वरीय प्रदर्शन-मात्र है। शम्स फकीर ने उसका नूर कण-कण में व्याप्त माना है।[11] वह उसे 'हरमुख' नाम से भी अभिहित करता है जिसके दर्शन-मात्र की उसे अभिलाषा है।[12] महमूद गामी ने इस अरूप-निर्गुण को प्रिय के नाम से भी पुकारा है।[13] वही संसार की उत्पत्ति, स्थिति

---

१. युस ओस तती, सु छु यती, सु छु प्रथ शायि रटिथ मकान,
सु छु प्यादअह तअ सू छु रथी, सू छु सूरे गुप्त पान।
—नूरनामा, श्लोक, २१२, पृ० २४९।

२. शिव छु थलि थलि रोजान, मो जान ह्यु न्द तअ मुसलमान। लल्लद्यद, वाक्य १०५, पृ० १०४।

३. निर्गुण चअय रोयतअह दितम, छुस-बअ च्यान नाव स्वरान। नूरनामा, श्लोक २६, पृ० ६२।

४. दपान स्वच्छ क्राल अलिफसमा छि बिन्दी,
छि पानय खुदावन्दस ख्वदावन्दी।—सूफी-शअयिर, पहला भाग, पृ० ८३।

५. क्याह वनअह आदम यथ यकसानस, पानय पानस वुछने आव।
महमूद गामी, पृ० ९५।

६. द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, प्रथम भाग, पृ० १५८।

७. द्रष्टव्य—बयाज़े वहाब खार, पृ० १२।

८. द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० २०४।

९. द्रष्टव्य—शम्स फकीर, पृ० ५२।

१०. द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, तीसरा भाग, पृ० १५०-१५१।

११. रिन्दन गिन्दान प्यव वरशनै, ज़िंदगी लबअख तअ वुछुक नूर।
तूरस सूर गव परतव प्यनै, यि क्या वनै यी गव जहूर। वही, शम्स फकीर, पृ० १०५।

१२. हरमुख छुम दीदारो, सति मीमअह न्वन द्राख रंगदारो।
बे रंग सअय आम नो शुमारो, तनै चे सअत्य गोम मिलचारो।
वहीं—शम्स फकीर, पृ० ९४।

१३. मदनो छुस बअ रिवान छुय न इवान आर म्योनुय।
मो आम लोल चोनुय कास्तम जूनि गरवुनुय।—महमूद गामी, पृ० ९१।

तथा सहार का कारण भी है ।[1]

इन कवियो की धारणा है कि हज़रत मुहम्मद की उत्पत्ति उसी के नूर से हुई ।[2] उनके न्यायशील चार मीतो का भी कही-कही वर्णन आया है ।[3] असद परे ने यहा तक कहा है कि मुहम्मद की ही नही अपितु राम की भी उत्पत्ति उसी नूर से हुई ।[4]

इन कवियो की धारणा है कि आत्मा तथा परमात्मा मे अभेद है ।[5] प्रत्येक कवि ने अनल्हक' (सोऽहम्) की आध्यात्मिक अनुभूति का प्रतिपादन किया है । महमूद गामी तथा अहमद बटवारी की 'नय' (बासुरी) नामक रचनाओ मे यह बात प्रत्यक्ष रूप से स्पष्ट की गई है कि आत्मा के रूप मे यह बासुरी उस परमात्मा की अभिव्यक्ति का ही साधक है । इसी कारण ये कवि जीवन की इस मूलधारा के मूल स्रोत की जटिल समस्या को सुलझाने के लिए अत्यन्त व्याकुल दिखाई देते हैं । यह आत्मा अपने उस शाश्वत प्रियतम से बिछुडकर ससार मे आती है, इसीलिए उसके दर्शनो के लिए सदा तडपती रहती है । वास्तव मे जीवात्मा परमात्मा का सम्बन्ध प्रेमी प्रेमिका का है ।[6] कश्मीरी-सूफी मुक्तककारो ने सूफी प्रबन्धकर्ताओ की भाति साधक को पुरुष रूप में तथा परमात्मा के नूर को नारी के सौन्दर्य मे चित्रित नही किया है । उन्होने आत्मा का पुरुष रूप मे और कही सन्तो की भांति नारी के रूप मे ही चित्रित किया है । जहा पुरुष रूप

---

१ साहब दोह अकि दोराह करे, यथ ससारस करि लुरअह पार ।
जमीन तअ आसमान प्यन छलि छले, न गछिअस इन्साफ, न यियस आर ।
—नूरनामा, पृ० १४२ ।

२. मुहम्मद लअगिथ बाजार द्राव, बहार आव जाने जानानय ।
सूफी शअयिर, पहला भाग—रहमान डार, पृ० १४६ ।

३. मुहम्मद चोर यार बरहक गअजराव
तिमन निशिअ अन्दी दुनियुहुक न्याय । वही, पृ० ८७ ।

४. तमी राम नावस द्युत छिवरा, च्वअरी ड़ेशान तमिसुन्द गाह । सूफी शअयिर, दूसरा भाग—असद परे, पृ० २०४ ।

५. अख चअह तअ बेयि बअ राजअर म बा, हबा यि छु गुमानै । सूफी शअयिर, प्रथम भाग, स्वेच्छकाल, पृ० ७८ ।

शमादान शमा ह्यत, पोपुर आव करान गथ ।
द्व नवअय दअय तअ क्या रूद पथ, हअसिल ? दर्दे मुहब्बत । वही, पृ० ९२ ।

चित्रण हुआ है, वहा भी परमात्मा पुरुष है और वह या तो उपास्य स्रष्टा है[१] या मित्र ।[२] उन्होने आत्मा को जहा नारी रूप मे चित्रित किया है, वहा परमात्मा प्रिय रूप मे वर्णित है ।[३]

इन कवियो ने सृष्टि की उत्पत्ति शून्य से ही मानी है । इनके मतानुसार शून्य से तात्पर्य ब्रह्म ही है । स्वच्छकाल की दृष्टि मे उसी अडे से ही नूर की उत्पत्ति हुई ।[४] प्रत्येक मुक्तक कवि ने ससार को नाशवान माना है । ससार की क्षणभगुरता पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि यहा की कोई वस्तु स्थायी नही ।[५] सासारिक प्रलोभन अथवा 'नफ्स' प्राणी को अपनी ओर आकर्षित करते है जिसके परिणाम-स्वरूप वह परमात्मा से दूर हटता चला जाता है ।[६] काम, क्रोध, मोह, लोभ, तथा अहकार को मिटाकर वस्ल (ईश्वर मिलन) और वहदत (एकमेक) के लिये ये कवि अत्यन्त प्रयत्नशील दिखाई देते हैं । लल्लेश्वरी[७] तथा शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) ने इनके त्याग के लिये पुरुष को चेतावनी दी है ताकि वह जीवन के सन्मार्ग पर चलकर लक्ष्य-प्राप्ति मे सफल हो जाये ।[८] आलस्य का त्याग, भोग-विलास के प्रति विरति तथा अज्ञान के परित्याग का

---

१. अल्लाह ति हू हू छुम दर मनय, बअ क्या वनै यि गव जहूर । सूफी शअयिर, तीसरा भाग, शम्स फकीर, पृ० १०५ ।

२. मे वुछ हर शयि सु यार, छुनअह काह म्वत ति खअली । वही, पृ० ९७ ।

३. द्रष्टव्य—महमूद गामी, पृ० १११ ।

४. ठूलह अन्दरह द्राव जौहर, मुले तथ तोथ नै तथ पर,
हू लै करान तोरय आव, नाव दर आब तै आब दर नाव । सूफी शअयिर, प्रथम भाग, पृ० ९० ।

५. फान ससार केह नो रोजे, तस छु मूजुद युस ग्वडअह सोजे ।
जान दुनिया न्यन्द्रह ज्वोले, पानि म्याने हा गाफिले । सूफी शअयिर, दूसरा भाग, शाह कलन्दर, पृ० १४१ ।

६. ठहरअह छय पननी छाय, छायि छि दिलअच राय ।
आईनअह रठ दरदसतय, चअवनस बअ पानअह मस तय । सूफी शअयिर, प्रथम भाग, रहमान डार, पृ० १४४ ।

७. लूब मारुन सहज व्यचारुन, दवग ज़ानुन, कल्पन त्राव,
निशिह छुय तअ दूर मो गारुन, शून्यस शून्याह मीलिथ गव । लल्लद्यद, वाक्य, ७३, पृ० ७२ ।

८. काम, क्रूद, लूब, मोह, अहंकार छुय, दोज़खुय नार छुय दिवान त्राय । नूरनामा, श्लोक ४७, पृ० ८३ ।

वर्णन इन्होने अपने काव्य मे पग-पग पर किया है। गाफिल तथा अज्ञानी रहने से मानव अपने अमूल्य जीवन को खो बैठता है।[१]

इन कवियो की समदृष्टि सदा सार्वभौतिक रही है, उनकी नातो, गजलो तथा नज्मो मे भेद-भाव के स्थान पर आध्यात्मिक उल्लास के व्यापक सदेश का स्वर मुखरित हो उठा है। जब कण-कण मे उसी का उल्लास रमा है, फिर दुई (द्वैत भाव) के लिये अवकाश कहा। प्राय· सभी कवियो वे इस दुई को दूर करके परमात्मा को प्राप्त करने की सच्ची प्रेरणा दी है। आध्यात्मिक समन्वय का यही सन्देश नुदर्योश की स्रुकियो (श्लोको) मे निरन्तर प्रस्फुटित हो उठा है।[२] स्वच्छकाल ने इस स्व-पर का भेद-भाव मिटाने पर अधिक बल दिया है।[३]

आलोच्यकाल मे धर्म का रूप केवल अन्धविश्वासो तथा बाह्याडम्बरो तक ही सीमित था। सकुचित विचारधारा के कारण आडम्बर की बढती हुई मात्रा का खण्डन इनके काव्य मे उपलब्ध है। बाह्याडम्बरो की अपेक्षा इन्होने आन्तरिक शुद्धि पर अधिक जोर दिया है। इन्होने निर्मल हृदय से सत्कार्य का अनुमोदन करके परम्परागत पूजा के प्रति अपनी अरुचि प्रकट की है।[४] धार्मिक बाह्याडम्बर का बोलबाला होने के कारण इन कवियो ने कश्मीरी जनता को झूठे एव पाखण्डी धर्माचार्यों से सावधान किया है।[५] इन्होने सत्य तथा अहिसा का प्रतिपादन किया। इनकी धारणा थी कि सत्य-कर्म ही मानव को ससार-सागर से पार करा देते है और शेष सब-कुछ यही रह जाता है।[६] सच्ची भक्ति तथा प्रेम के बिना शास्त्राध्ययन बेकार है। प्रत्येक कवि सत्य का बीज बोने का ही इच्छुक है। इन कवियो ने मूर्त्ति-पूजा का खण्डन करके मदिर-मस्जिद को

---

१. गाफिलो हकअह कदम तुल, ट्ठुनि छय सुल तअ छाड़ुन यार। लल्लद्यद, वाक्य १८, पृ० १७।

२ मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—तसव्वुफुक तअ शैवमतुक इम्तजाज, रेडियो वार्ता।

३ द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, प्रथम भाग, पृ० ७८।

४. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—तसव्वुफ तअ शैवमतुक इम्तजाज, रेडियो वार्ता।

५. परान परान ज्यव ताल फवजयो, तस किछ करे काह् तिज नवजात,
तसबीह् फिरान ओगजे गजियो, व्वय लदिसअय व्वय चअज नो जात।
—नूर नामा, श्लोक १५१, पृ० १८७।

६. द्रष्टव्य—वही, श्लोक १६८, पृ० २३५।

एक ही माना है ।[१] जिक्र-फिक्र तथा मुराकबा को महत्व देते हुए इन्होंने गृहस्थ-जीवन का पालन किया । इनके मुक्तक-काव्य मे हिन्दू-मुसलमानो को प्रेम के सूत्र मे पिरो देने की सबल अभिव्यक्ति मुखरित हुई है ।

कश्मीरी मुक्तक काव्य मे तसव्वुफ तथा योग की पारिभाषिक शब्दो की झकार सुनाई देती है जिनसे सस्कृत तथा फारसी की पालित परम्पराओ का परिचय मिलता है । सहनशक्ति के साथ साथ इन्होंने इश्क मजाजी को ही इश्क हकीकी का उत्तम स्थान दिया है । 'फना' होकर 'बका' की अवस्था को प्राप्त करना ही इन्हे अभीष्ट है ।[२] इन सभी कवियो ने तसव्वुफ व शैवमत के सामजस्य का स्वर अलापा है ।

समाज तथा राजनीति के भी बन यथार्थ की क्रन्दन ध्वनि भी कई सूफी-कवियो की गज़लो मे सुनाई पडती है । यद्यपि अधिकतर कवि केवल आध्यात्मिक उत्कर्ष का राग अलापते रहे है, फिर भी उन्होंने उस कटु सत्य को उघाडा है जिस मे बेचारे किसान पर जमीदार द्वारा किए गए अत्याचार का वर्णन है । इसमे जागीरशाही की पराकाष्ठा का उल्लेख है । मुकद्दम, पटवारी कारदार, शकद्दर, तथा कारिन्दे आदि सभी किसान की कमाई पर हाथ साफ करके पनप उठे है ।

शम्स फकीर ने कहा है :

हअरुद यलि आव तअ नेरमान मानि, सोबारित खल गडि हा छनबन्वाल
जग तअ यअरुन पानअह इ कारदार जानि, अन्द रोज साथाह छुइ गनीमत,
मुकदम तअ पटवार छुइ बिहिथ सानि, ब्याल्युक पजि दर छुइ जमीदार,
वरजिह बागे कर ज़मीदारअह सानि, अन्द रोज साथाह छुइ गनीमत ।[३]

(शरद् आएगा तो दूसरो से होड करता चल,
खलिहान को भर दे, ओ धान चुनने वाले,
लाल है या सफेद यह कारदार आप जाने,
मुकद्दम और पटवारी हमारे हा ही बैठे हैं ।

---

१. अख काबअह बेयि बुतखानअह, हुफ्ताद व दू मिलतस,
ब्योन ब्योन छुक समानअह, बअ पैमानअह चअवनस । सूफी शअयिर, पहला भाग, रहमान डार, पृ० १५४ ।

२. बका बा अल्लाह करिथ विहात, सफातस मज छि याक जात ।
—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, असदपरे, पृ० १८६ ।

३. बयाज़े शम्स फकीर, पहला भाग, पृ० १४ ।

बीज का अधिकारी जमीदार ही तो है।
ओ हमारे जमीदार, हमारा भाग दे दे।)[१]

शेख नूर-उद्दीन (नुदर्योश) का जमाना भी जमीदारी के भाग्योदय का समय था। वे गाव के निवासी थे अत ये सभी अत्याचार देख चुके थे। उन शृखलाओ को तोडने की शक्ति इनमे नही थी। परिणाम यह निकला कि वे दुनिया को विपत्तियो और यातनाओ का घर समझकर इससे छुटकारा पाने के उपदेश को ही प्रसारित करते रहे।[२]

इस मुक्तक-काव्य मे मानवतावादी स्वर भी प्रस्फुटित हो उठता है, इन कवियो का कथन है कि बून्द तथा दरिया में कोई अन्तर नही। क्योकि :

दरियावअह मअजअह कतरअह द्राव,
कतरस मज दरियाव चाव।[३]

(दरिया मे से कतरा निकला और कतरे के भीतर दरिया समा गया।)

सृष्टि के कण-कण मे परमात्मा की ज्योति के दर्शन करके ही इन कवियो ने मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाया है। ऐसा होने पर भेद-भाव कहा। मानव-मानव मे अन्तर कहा। ब्रह्मज्ञानी वही है जो इस भेद-भाव से दूर रहकर पूजा-पाठ, योगाभ्यास तथा स्वाध्याय की उपादेयता को अधिक महत्व नही देता। उसके हृदय मे सगीत की ऐसी हिलोरे उठती है जिसमे बाह्याडम्बर तथा भिन्नता को कोई स्थान नही।[४] इस कारण कश्मीरी मुक्तक-काव्य मे मानव की सनातन महिमा को पहचानने का प्रयत्न किया गया है।

हिन्दी के मुक्तक-काव्य मे प्रेम स्वरूप ईश्वर को वास्तविक सत्ता के रूप मे अपनाया गया है। वह ज्योति स्वरूप ईश्वर सृष्टि-निर्माता तथा सर्वव्यापक है।[५] उसी अलख, वाहिद, निरंजन तथा लाशरीक ब्रह्म से ही सपूर्ण जगत् जन्मा है और उसी मे विलीन भी हो जाता है। ब्रह्म से जगत् का अभेद है।[६] वह अन्तर्यामी

---

१. अनुवादक—प्रो० पृथ्वी नाथ पुष्प, लेख 'शम्स फकीर की कविता' योजना, अगस्त-सितम्बर, १९५७, पृ० २२।

२. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, पहला भाग, पृ० २१३।

३. बयाज़े शम्स फकीर, पृ० ४।

४. द्रष्टव्य—लल्लद्यद, वाक्य ९८, पृ० १२२।

५. परगुट गुपुत विचारि सो बूझा। सो तजि दूसर औ न सूझा।
जायसी ग्रन्थावली (अखरावट) डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६५३।

६. मसूर पिआरे किहा अनल्हक, कहो कहाया कै,
बुल्हा शेह उसी दा आशक, आपना आप वंजाया है। बुल्लेशाह, पृ० ५४।

है। वही सत्य है और यह सृष्टि उसी की प्रतिबिम्ब है[1] सारे संसार मे उसी का नूर समाया हुआ है।[2] इस सृष्टि की रचना उसी से हुई है। यह ब्रह्माण्ड अंड मे ही समाया हुआ है अतः घट-घट मे उसका निवास है।[3] उसी हज़रत मुहम्मद की उत्पत्ति हुई :

रचा मुहम्मद नूर जगत रहा उजियार सोइ।[4]

वही एक अनेक होकर सागर की बूंदो के समान संसार मे समाया हुआ है।[5] जीव के विषय मे इन स्फुट काव्यो मे वेदान्तियो की भांति 'अनलहक' का प्रतिपादन हुआ है। यह जीव अल्लाह का ही प्रतिरूप है। वह ब्रह्म का अंश है। मनुष्य वह दर्पण है जिसमे अल्लाह अपना रूप देखता है।[6] जीव का मुख्य उद्देश्य अपने अहंभाव को दूर कर के ब्रह्म के साथ तादात्म्य स्थापित करना है।

हिन्दी सूफी मुक्तक-कारो ने भी सूफी प्रबन्धकारो की भांति इस बात की चिन्ता नही की है कि साधक को पुरुष रूप मे तथा परमात्मा के नूर को नारी के सौंदर्य मे चित्रित किया जाये। उन्होने आत्मा को पुरुष रूप मे और कही सन्तो की भांति नारी के रूप मे चित्रित किया है। जहां तक पुरुष रूप मे विचार हुआ है, वहां भी परमात्मा पुरुष है और वह या तो मित्र है या उपास्य स्रष्टा। जहां आत्मा नारी रूप मे चित्रित हुई है, वहां परमात्मा प्रिय है। वह पुरुष है और आत्मा को सुहागिनी कहा गया है। कुछ निम्नलिखित उद्धरण इस तथ्य को स्पष्ट कर देते है :

---

१. आगि बाउ जल धूरि चारि मेरइ भाड़ा गढा।
आपु रहा भरि पूरा मुहमद आपुहि आप मह॥
—जायसी-ग्रन्थावली, (अखरावट), डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६५६।

२ जितवल देखा दिसदा ओही, कसम उसे ही होर न कोई।
वहो मोहकम फिर गई धरोई, जब गुर पत्री बाची। बुल्लेशाह, पृ० १०३।

३. कहो यारी घट ही मिलो जाकह खोजत कुरि है। यारी साहब के पद, नागरी प्रचारिणी सभा की हस्तलिखित प्रति से।

४. द्रष्टव्य—जायसी ग्रन्थावली (अखरावट), डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६५४।

५. रहा जो एक जल गुपुत समुंदा। बरसा सहस अठारह बुंदा। वही, पृ० ६५४।

६. सोई अस घट-घट मेला। औ सोइ बरन बरन होइ खेला। वही, पृ० ६५४।

हमारे एक अल्ह पिय प्यारा है।
+ + +
आवै न जाइ मरै नहिं जीवै, यारी यार हमारा है।[१]

तथा—

आतम नारी सोहागिनी, सुन्दर आपु सवारि।
पिय मिलने का उठि चली, चौमुख दियना वारि।[२]

केवल यारी साहब ने ही ऐसा नही किया है अपितु अन्य सूफी मुक्तककारो ने भी आत्मा को साधिका या स्त्री रूप मे प्रस्तुत किया है। जैसे बुल्लेशाह की निम्नलिखित पक्तिया देखी जा सकती है।

कद मिलसी मे विरह सताई।[३]

नजीर भी अपने दिलबर का चाकर ही अपने आपको घोषित करता है:

हम चाकर जिसे हुस्न के है, वह दिलबर सबसे आला है।[४]

इस दृष्टिकोण को सन्तो का प्रभाव माना जा सकता है क्योकि मूल सूफी-सिद्धान्त आत्मा को या साधक को स्त्री रूप मे स्वीकार नही करते। सुहागिन तथा पिय की भावना निश्चित रूप से सतो की देन है। जब 'अल्लनामा' मे 'कुछ सिगार किये नहि हावे, जा पी चाहे सुहागिन होवे' कहा जाये, तो आत्मा का स्त्री-रूप ही व्यक्त होता है। वास्तविकता यह है कि आत्मा और परमात्मा के प्रेम की जब चरम अवस्था आती है और मिलन का क्षण उपस्थित होता है तो आशिक एव माशूक मे किसी प्रकार का भी विचार ही नही रहता। वजहन ने इसे ही स्पष्ट करते हुए कहा है:

प्रेम की नदी गहरी, जो कोउ उतरे पार।
आशिक औ माशूक मे, रह्यो कौन विचार।[५]

ये सभी उक्त उद्धरण इस तथ्य को स्पष्ट करते है कि प्रबन्धकारो की दृष्टि सूफी-सिद्धान्तो के प्रस्तुतीकरण मे अधिक सतर्क रही है, जबकि सूफी मुक्तककारो ने प्रेम भाव की अभिव्यजना को इतना अधिक महत्व दिया है कि वह सम्बन्ध भी भावात्मक बनकर ही रह गया है और फलस्वरूप साधन तथा साध्य के स्वरूप पर उनका अधिक ध्यान नही गया है जितना उनके सम्बन्धो पर।

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, यारी साहब के भजन, पृ० २१३।
२. वही, यारी साहब की साखी, पृ० २१४।
३. वही, पृ० २१८। ४. वही पृ० २२२।
५. वही, पृ० २३१।

स्फुट रचनाओ मे से कुछ का सम्बन्ध सिद्धान्त सम्बन्धी विषयो के प्रतिपादन एव नीति-कथन से है, तथा अन्य कुछ ग्रन्थ कवियो का बहुज्ञान भी प्रदर्शित करते है। अपनी स्फुट रचनाओ मे कविगण स्पष्ट रूप से चेतावनी देने मे सजग ज्ञात होते है। निजी अनुभव की गभीरता के साथ-साथ स्वाभाविक उद्‌गारों की भी सरलता है।[१] ससार की असारता तथा उसकी क्षणभगुरता पर इन कवियो ने अपने विचार प्रकट किये है। माया को इन्होने सासारिक प्रलोभनो के रूप मे स्वीकार किया है जो प्राणी को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। यह 'नफ्स' (वासनापूर्ण आत्मपक्ष) जीव को सासारिक वासनाओ की ओर प्रवृत्त करता है। धन-सग्रह तथा भोग-विलास सभी व्यर्थ है।[२] इस मुक्तक-काव्य मे हृदय की शुद्धता पर बल डाला गया है तथा पूजोपासना एव जाति-वर्णन से ऊपर उठने का उपदेश दिया गया है। इसी कारण इसमे यह वर्णित है कि न कोई छोटा है और न कोई बडा। द्वैतभाव (दुई) के परित्याग तथा अपनी पृथक् सत्ता या अहभाव को दूर करके ब्रह्म के साथ तादात्म्य स्थापित करना ही सर्वोत्तम है।[३] हिन्दू-मुसलमान मे अभेद मानकर इन्होने दोनो की एकता के लिये भरसक प्रयत्न किया।[४] दोनो को प्रेम के सूत्र मे पिरो देने की सबल अभिव्यक्ति इस काव्य मे प्रस्फुटित हुई है। इस भेद-भाव तथा बाह्याडम्बर से दूर रहने वाला ही सच्चा साधक है।

'अनलहक' अथवा 'सोऽहं' के सिद्धान्त के साथ-साथ इसमे अनहदनाद को भी विशेष महत्व दिया गया है।[५] अतः इसमे समाधिस्थ होकर ब्रह्म मे लीन होने की चर्चा भी की गई है। यह आत्मा उस ईश्वर के विरह मे सदा तडपती

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २८८।

२. कहै दीन दरवेश भूल मत गाफिल गदा।
मिरतलोक के मांहि फूलिए बहुत न बदा। दीन दरवेश, सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० २४४।

३. एकहि ते दुइ होइ दुइ सौ राज न चलि सकै,
बीचु ते आपुहि खोइ मुहमद एकै होइ रहु—जायसी-ग्रन्थावली (अखरावट), डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६५६।

४. हिंदू कहें सो हम बडे मुसलमान कहें हम्म।
एक मूग दो फाड है कुण जादा कुण कम्म। दीन दरवेश, सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० २४४।

५. अनहद ते भा आदम दूजा। आप नगर करवावै पूजा। जायसी ग्रन्थावली (अखरावट), डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६७०।

रहती है । हृदय की शुद्धि के बिना साधना व्यर्थ है ।

उपासना के क्षेत्र मे इन कवियो ने प्राणिमात्र की समानता स्वीकार की है। इनके मुक्तक-काव्य द्वारा समाज-सस्कार मे पर्याप्त सहायता मिली। सामान्य जडीभूत जनता के जीवन मे आशा, प्रेरणा एव आस्था की चेतना का जागरण इन सूफी-साधको द्वारा ही सभव हो सका ।[१] इस काव्य मे पग-पग पर सामाजिक तथा सास्कृतिक जीवन का विशेष प्रतिबिम्ब पडा है, किन्तु राजनीति के क्षेत्र मे होने वाले अत्याचार, साम्राज्यवादिता, शोषण, दुर्भिक्ष एव महामारी आदि के प्रकोप के विषय मे ये कवि अधिकतर मौन रहे है। सूफी कवियो की इस चुप्पी का कारण है उनका इस्लामानुमोदन का प्रदर्शन । सूफीमत का प्रवेश जिस समय भारत-भूमि पर हुआ उस समय तक उसका राज्य-सत्ता से विरोध समाप्त हो चुका था ।[२]

(ख) साधना पक्ष

कश्मीर के मुक्तक-सूफी साधको ने परमसत्ता मे लीन (फना) होकर अवस्थित (बका) हो जाने के लिये साधना की है ।[३] प्रयास काल अथवा साधना-पथ पर चलते हुए साधक (सालिक) परमज्ञान (मारिफत) प्राप्त करने के लिये चार अवस्थाओ और सात सोपानो को पार करके अग्रसर होता है । शरीयत के विधि-विधानो का न विरोध और न ही अधिक विस्तृत चर्चा करके इन्होने कर्मकाण्ड की अपेक्षा हृदय की शुद्धि, प्रिय के ध्यान तथा चिन्तन पर अधिक बल डाला । इन चारो अवस्थाओं का उल्लेख कवि रहमान डार ने अपनी गजल 'मारिफत वनान रहमान' (रहमान डार का परम-ज्ञात के सम्बन्ध मे कथन) मे किया है ।[४] कवि वहाब खार को भी इन चार अवस्थाओ का ज्ञान था । उसका कथन है कि पहले शरीयत के मार्ग पर चलकर साधक तरीकत की अवस्था को प्राप्त करता है। धीरे-धीरे तरीकत मे सफल हो जाने के पश्चात्

---

१ जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३३० ।

२ वही, पृ० १४८ ।

३. फनायि मज गाछि जमा अनुन, वहाब खार ती छय सफअई । सूफी शअयिर, दूसरा भाग, वहाब खार, पृ० १५६ ।

४. शरीयतअह छय प्रथ कुनि फर्क, तरीकतअह यकसान,
हकीकतअह निशिह अक्ल छय हैरान, मारिफत वनान रहमान । सूफी शअयिर, रहमान डार, पृ० १४० ।

उसे परम-ज्ञान होता है। तदनन्तर वह हकीकत की अवस्था को प्राप्त करता है।[१] शरीयत के अन्तर्गत आने वाले जिक्र (स्मरण) तथा फिक्र (चिन्तन) का उल्लेख भी इन काव्यो मे उपलब्ध है।[२] प्रत्येक कवि ने इनका वर्णन किया है किन्तु शेख-नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) ने नमाज तथा रमजान आदि का महत्व भी दर्शाया है।[३] वास्तव मे इन सभी कवियो ने साधना के मार्ग मे इनका विरोध नही किया है अपितु इसके साथ ही इन्होने जिक्र, फिक्र तथा तिलवत का केवल सयोग किया है। एकान्त मे हठयोग जैसी क्रियाओ को करते हुए मन मे कलमा का उच्चारण भी ये कवि करते रहे है।[४] इन्होने मक्का-मदीना को कायानिष्ठ माना है।[५]

'नफ्स' के साथ जहाद करते हुए साधक तरीकत को प्राप्त होता है। इस मार्ग का अनुसरण करते हुए वह एकान्त एव मौन धारण करता है। वह भूख-प्यास सहन करता है तथा चित्र-वृत्तियो का निरोध करके अग्रसर होता है। 'नफ्स' को परास्त करके वह 'मारिफत' मे प्रवेश करता है। म्वारिफ (परम ज्ञानी) बनने से पूर्व साधक को आत्मशुद्धि करनी पडती है। उसे ईश्वर पर पूर्ण

---

१. यम्य यति शरीयत पोलनय, सु गव मुसलमान
तरीकतस वुछान गअछतव मीलिथ छु हनि बहने।
हकीकतस ववन दियि व वारअह पअठय।
बहार वुछ शोलान, मयखानह मारिफत आशकन छावान। सूफी शअयिर, दूसरा भाग, वहाब खार, पृ० १५७।

२. जिक्रे सअत्यन प्वरुम अल्लाह, फिक्रे सअत्यन सपनस कव लो,
दिले यामथन सूरुम अल्लाह, बूजम फायनमा तूलवा। नूरनामा, श्लोक, १६५, पृ० २०१।

३. तोश बन्दअह निमाजि बेयि रमजानस, ती हो लगियो पानस सअत्य। वही, श्लोक ८६, पृ० १२१।

४. कलिमय प्वरुम, कलिमय स्वरुप कलिमय क्वरुप पनुनुय पान।
कलिमय हनि हनि मोयन तोरुम, कलिमअह सअत्य वोतुस लामुकाम।
वही, श्लोक ७०, पृ० १०५।

५. मक्काह मदीनस बर छी वथिये, नेरि तलिये रोफ करान।
सूफी शअयिर, तीसरा भाग, शम्स फकीर, पृ० ८९।
(ख) काबअह दिला ड्यकि सअंदअर, बा कुन्यर करिथ यकसानो,
सूफी शअयिर, पहला भाग, अहमद बटवारी, पृ० १७८

विश्वास करना पडता है ।[1]

शरीयत एव तरीकत की उपलब्धि के पश्चात् मारिफत के द्वारा साधक को हकीकत की प्राप्ति होती है । मारिफत के भावावेगमय रूप का नाम ही 'इश्क' है । कवि शाह गफूर नें इस तथ्य का उल्लेख अत्यन्त सुन्दर शब्दों मे किया है ।[2] यही साधना मार्ग का उच्चतम सोपान है । प्रेमाग्नि से तपित साधक यही इच्छा करता है कि कोई भी अपने प्रिय से पृथक् न हो ।[3] इश्क के साथ ही साधक वज्द (उन्मादना) एव वस्ल (ईश्वर मिलन) प्राप्त करता है । उन्मत साधक जब निरन्तर परमात्मा का चिन्तन करता है और वह उसकी वियोगाग्नि मे जलता रहता है, तभी उसे वस्ल की प्राप्ति होती है ।

इन कवियो ने साधना के अन्तर्गत आने वाली उपासना पद्धतियो मे गुरु की महिमा प्रमुख मानी है । कश्मीरी शैव तन्त्रो मे गुरु-पूजा को अनिवार्य माना गया है[4] क्योकि गुरु या पीर ही साधक को साधना का रहस्य समझा कर प्रेम-पथ पर आगे बढाता है । कश्मीरी-सूफी मुक्तक कवियो ने गुरु-महात्म्य का अत्यधिक वर्णन किया है । लल्लेश्वरी का कथन है कि जो गुरु शब्द पर विश्वास रखता है वह हकीकत को प्राप्त करता है ।[5] नुदर्योश ने पीर को ही पिता, माता

---

१. आरिफन छु यकीन ह्यरि तम्र बोनय, केह छुनम्रह सिवाह गैर अल्लाह ।
गम्रफिलस छु गुमानम्रह या किनि छुनम, सु म्रोस पानय वनय क्याह ।
—सूफी शाम्रयिर, दूसरा भाग, शाह गफूर, पृ० १०० ।

२. दरियाइ मारिफतम्रह पान खास ठारे, फान यलि सपदख आनस अन्दर,
जान कर, नटि चव या च्रतो नारे, म्राशक कोनम्रह तथ दारे सर ।
—सूफी शाम्रयिर, भाग दूसरा, पृ० १०४ ।

३. कम्रंसि मम्र गछिन माशूक छनम्रय, कम्रसि म्रह गछिन जुदाई ।
फना गयि कम्रत्या म्रमी फनय, वलो इश्को वनै क्याह । महमूद गामी,
पृ० ९२ ।

४. स च गुरुः आचार्यो रक्षिक चुम्बक, स चायं पूर्वज्ञान एव सर्वोत्तमः—तेन बिना दीक्षाद्यसपत्तेः । योगी तु फलोत्सुकाय युक्तो यदि उपायोपदेशेन अव्यव-हितमेव फल दातु शक्त उपायोपदेशेन तु ज्ञाने एव युकतो मोक्षेऽपि अभ्युपा-यात् ज्ञान पूर्णताकाङक्षी च बहूनि गुरूनि कुर्यात् । तंत्रसार, पृ० १२५ ।

५ गुरुर शब्दस युस यिछ पछ बरे, ग्यानम्रह वगि रटि छ्यति त्वरगस,
यद्रिये शू मरिथ आनन्द करे, अद कुस मरि तय मारन कस । लल्लद्यद,
वाक्य ६७, पृ० ९२ ।

तथा नेत्र प्रकाश माना है।[1] उसका यह भी कहना है कि बिना गुरु के साधक चप्पू रहित नाव तथा बसौली बिना बढई के समान है।[2] बिना गुरु से प्राप्त निर्देशन वाला साधक चारो ओर अधे की भांति भटकता रहता है। इन कवियो ने पीरो का सम्मान करके उनकी कृपा प्राप्त करने तथा उन्हे जीवानादर्श बनाने की चेष्टा की है। कवि अस दपरे भी गुरु का उपदेश सुनकर उसकी कृपा का पात्र बनते हुए प्रेम-पथ पर अग्रसर होता है।[3] इस प्रकार इन कवियो ने अपनी साधना मे गुरु का महत्व एव उसकी महानता दोनो ही स्वीकार की है।

प्रियतम का साक्षात्कार ही इन की साधना का लक्ष्य है। इन्होने कहा है कि जब तक हृदय मे ज्ञान का प्रकाश न होगा तब तक कुछ न सूझ पडेगा। इनकी दृष्टि मे प्रभु अपने ही हृदय मे निवास करता है ·

मजलून म्वत क्याह करि, लअल छस पनिने गरिह।[4]

(बेचारा उन्मत मजनू क्या करे, लैला तो उसके हृदय मे ही निवास करती है।)

इन्होने शरीर-सयमन के साथ मनोनिग्रह को अत्यन्त महत्व दिया है क्योकि मन की आत्मा-तत्व के परिचय मे प्रधान कारण है। मन की एकाग्रता द्वारा ही सुरति-सदन मे उसका मार्ग खोजना अभीष्ट है। लल्लेश्वरी ने कहा है :

पूज कस करख होटह बटा,
कर मनस तअ पवनस सघाठ।[5]

(अरे पण्डित: मुझे बता कि तू किस की पूजा करता है। अपने मन तथा प्राण को वश में कर ले।)

इस भाति मन के निग्रह मे काम, क्रोध, मोह तथा लोभ आदि विकार दूर हो जाते हैं और सार-भूत ईश्वर का स्मरण हो सकता है। वास्तव मे अल्लाह तथा बन्दा 'जमाल-जलाल' के अस्तित्व एव अनस्तित्व का भेद है। जीव ससार मे आते ही जब अल्लाह के इस 'जमाल-जलाल से हीन हो जाता है, तभी वह दुःखी होता है।

इन्होने स्थान-स्थान पर योगियो के पारिभाषिक शब्दो का प्रयोग किया है।

---

१. परिअय मोलतय पीरअय मोजी, परिअय छुम द्वोन अच्छयन गाश।
 —क्लामे शेख-उल-आलम, प्रथम भाग, पृ० ४।

२. खूरि रअोस नाव तअ तूरि रअोस छान। वही, पृ० २५।

३. पीरअह सअंज कथ मे बूजअम खामन, लल वअन्य ख्वश अन्दामन तहलो।
 —सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० १६४।

४. वही वहाब खार, पृ० १५३।

५. लल्लवाद, वाक्य ४१, पृ० ७०।

दमअह दमअह दमन मे हती गोम यकसानो,
नेरहमल मदावार प्योम तती लो लती लो,
तुर्या सुबुप सपुन जागिरती दपुन कर जानो,
शम्स फकीरो गम खे अती लो लती लो।[1]

(दम दम मैने अपने दम (सास) की सुधली,
मे एकाकार हो गया
तूर्या, सुषप्ति, स्वप्न और जागृति
मै दीवाना क्या जानू ?
शम्स फकीर, विवेक से काम ले वही,
इसमे सन्देह नही, लो लो ललितके लो।[2]

'जागृति' स्वप्न, सुषप्ति और तूर्या आदि शब्दावली दाराशिकोह के 'सिरि अकबर' द्वारा फारसी सूफीवाद का अग बन चुकी थी और काश्मीर के सतो मे इसका प्रचलन सजीव परम्परा का ही प्रतिपालन है।[3] हठ योगियो की साधना का प्रभाव इन पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। प्राणायाम, आसन-समाधि, अनहदनाद, सोऽहम् तथा पिड-ब्रह्माण्ड की एकता का सूक्ष्म विवेचन इनके मुक्तक काव्य मे उपलब्ध है। अनहदनाद के विषय मे लल्लेश्वरी ने अपने विचार प्रकट किये है।[4]

इसी प्रकार पिण्ड-ब्राह्माण्ड की एकता के सम्बन्ध मे रहमान डार ने कहा है कि सरिता मे कतरा (बूद) है और कतरा ही सरिता का उद्गम स्थल है।[5] इन्होंने एकान्त-सेवन तथा गुफा-तपस्या को साधना के लिए उत्तम माना है।[6]

सच्ची साधना के विषय मे नुदर्योश ने कहा है कि परम-ज्ञान ही सर्वोत्तम है। केवल पुस्तको के अभ्यास से उस निर्गुण के साथ तादात्म्य स्थापित नही हो

---

१. बयाजे शम्स फकीर, प्रथम भाग, पृ० १८।

२. अनुवादक—प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प, योजना (अगस्त-सितम्बर सन् १९५७ ई०) पृ० ७१।

३. वही, पृ० २१।

४ अनाहथ खसव रेफ शुन्याले, यस नाव न वर्ण न गुथुर न रैफ। लल्लद्यद, वाक्य ८८, पृ० १२२।

५. ज्वय मज छु कतरअह पानअह, कतरअह मजह नैरान ज्वय। सूफी —शअयिर, पहला भाग, पृ० १५८।

६. मअजी ग्वफ बो बन्दै हन्दलरी, जन्दअह बो बन्दै पअटी काटै।
गगरन राजअह शोगन बो गिन्दय, सअरअय उमर बो बन्दै गरि ढाय।
—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० १६३।

सकता ।[१] प्रणय-मदिरा पीने वाला ही हृदय मे बसे हुए उस प्रभु के दर्शन कर सकता है । फरहाद ने भी इसी प्रेम-तत्व को अपना कर उसका दर्शन किया था ।[२] इस प्रेम-पंथ पर चलना अत्यन्त कठिन है ।[३]

हिन्दी के सूफी मुक्तक-कारो ने भी शरीयत, तरीकत, मारिफत तथा हकीकत को साधना-पथ का महत्वपूर्ण अग माना है । इसके द्वारा ही साधक ईश्वर की सुन्दर प्रेममयी प्रकृति का अनुसरण करता हुआ प्रेममय हो जाता है । जायसी ने अपने 'अखरावट' मे इन चारो अवस्थाओ का स्पष्ट उल्लेख किया है ।[४] उसने नमाज की उपेक्षा न करके उसे भी महत्वपूर्व माना है ।[५] शरीयत के इस प्रथम अग, नमाज का स्पष्ट उल्लेख जायसी को छोडकर प्राय अन्य कवियो ने नही किया । अधिकतर हिन्दी सूफी मुक्तक-कवियो ने नमाज की अपेक्षा तिलवत (कुरान पाठ), जिक्र (स्मरण), फिक्र (चिन्तन), समा (कीर्तन) तथा अवराद (नित्य प्रार्थना) आदि तत्वो का वर्णन किया है । इस भाति 'जमाल-जलाल' के अस्तित्व को धारण करने वाले अल्लाह से विलग हुए जीव के लिए उन्होने विधि विहित-साधना को स्वीकार किया है । हृदय की शुद्धि को सर्वोत्तम मान कर भी उन्होने बाह्य विधि-विधानो की उपेक्षा नही की ।

तरीकत मे साधक को 'नफ्स के साथ जहाद करके चित्तवृत्तियो का निरोध करना पड़ता है । इसी से उसे परमज्ञान की प्राप्ति होती है और वह मारिफ

---

१. परान परान खअली पर गय, खर गयि किताबअह बअरी ह्यथ, यिम दिलअह निशन बाख़बर गअय, तिम नर गयि तारह तरिथ क्यथ । नूरनामा, श्लोक १५२, पृ० १८८ ।

२. यस नाद लाग़ि सु छुम निशिह, कम्यू शीशह च्योवनस मय ।

× × ×

लोलकि अटअह मय कनि पेशि, फरहाद तेशि क्या लय हा । सूफी-शअयिर, पहला भाग, पृ० १०४, १०५ ।

३. इश्क छु माजि कुन´ प्वथुर मरुन, सुय ज्वलह को तअ कही । नूरनामा, श्लोक १६३, पृ० १९९ ।

४. सांची राह सरीअत जेहि बिसवास न होइ । पाव राखि तेहि सीढी नियरम पहुचे सोय ।

× × ×

राह हकीकत परै न चूकी । पैठि मारफत मार बुड़ूकी ।
जायसी-ग्रन्थावली (अखरावट), डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६६४ ।

५. ना नमाज है दीन क थूनी । पढ़ै नमाज होइ बड़ गूना ।
वही, पृ० ६६४ ।

बनना है। मारिफ मे पूर्व उसे सात सोपानो तोबा (अनुताप), जहृद (स्वेच्छा-दारिद्रय), सब्र (सतोष), शुक्र (धैर्य), रिजाअ (दमन), तव्वकुल (कृपा पर पूर्ण विश्वास) तथा रजा (वैराग्य), को पार करना पडता है और तभी वह आत्म-शुद्धि मे सफल होता है। तत्पश्चात् साधक को हकीकत अथवा सत्य की उपलब्धि होती है।

मूलत यह साधना प्रेम-प्रभु' की साधना है, अभेद की भावना ही साधक के हृदय मे विरहानुभूति जगा देती है। उनका विचार है कि अन्तर्दृष्टि तन-मन को वश करने पर ही खुलती है। बुल्लेशाह ने तन-मन के सयमन को उत्तम माना है।[1] एकाग्रता द्वारा मन की मैल हटाने के लिये दरिया साहब ने भी बाह्याचार की व्यर्थता सिद्ध की है।[2] वेद-कुरान के विषय मे बुल्लेशाह ने कहा है कि इनका पाठ करने से तब तक ईश्वर की प्राप्ति नही होती, जब तक कि मन मे एकाग्रता का निवास न हो।[3] मक्का एव तीर्थ सभी कायानिष्ट है।

इनकी साधना-पद्धति पर हठ-योगियो का प्रभाव परिलक्षित होता है। नाथ-पथ की कई बातो का प्रभाव देखा जा सकता है। प्राणायाम, आसन-समाधि, अनहदनाद,[4] अनल्हक[5] तथा पिंड-ब्रह्मादि की एकता[6] आदि का सूक्ष्म विवेचन इन के मुक्तक-काव्य मे मिलता है। अनहननाद के श्रवण पर साधक का चित्त स्थिर हो जाता है और 'सोऽहम्' का जाप पूर्ण हो जाता है।' सूफी-स्फुट साहित्य रचयिताओ के पदो मे भी हठयोग-साधना की यथेष्ट चर्चा रहती है, किन्तु कवि अब्दुल समद ने सूर्य और चन्द्र, प्राणवायु और अपान वायु,

---

१. जेहडे मन लागा नही दूया रे, येह कौन कहे मन मोया रे,
इनायित सब तन होया रे, फेर बुलहा नाम पराया है।
काफिया बुल्लेशाह, पृ० ४३।

२ भीतरमै लि चहल क लागी, ऊपर तन का धावै है।
अविगति सुरति महल के भीतर, बाका पथ न जोवै है। सतवाणी सग्रह, पहला भाग, पृ० १५२।

३ वेद कुराना पढ पढ थके, सिजदे करदिया धस गए मत्थे,
ना रब तीरथ ना रब मक्के, जिन पाया तिन नूर अनवार। काफिया बुल्ले-शाह पृ० ७३-७४।

४. द्रष्टव्य—वही पृ० १८। ५. द्रष्टव्य—वही, पृ० ३९।

६. सातो दीप नवौ खड आठौ दिसा जो आहिं।
जो बरम्हंड सौ पिंड है हेरत अत न जाहि। जायसी-ग्रन्थावली (अखरावट), डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६५६।

इडा और पिंगला नाड़ियो के निरोध, तत्पश्चात् अनहद ध्वनि, 'सोह' का अभ्यास, तदनन्तर केवल एक उसी की अवस्थिति आदि का क्रम से वर्णन किया है।[1]

इन कवियो ने गुरु की श्रेष्ठता तथा महत्ता को भी सिद्ध किया है। कवि वजहन ने गुरु का महत्व प्रकट करते हुए कहा है कि उसके मार्ग-प्रदर्शन के बिना कोई सच्चा रास्ता नही पाता।[2] कवि अब्दुल समद का मत है कि गुरु के शरण होने वाला ही भगवान को प्राप्त करता है।[3] जायसी ने भी गुरु-माहात्म्य का वर्णन किया है।[4]

इन्होने प्रेम को साधना का प्रधान अग माना है। विरहानुभूति होने पर साधक साधना के मार्ग पर अग्रसर होता है। सच्चा प्रेमी ही उसे प्राप्त कर सकता है क्योकि प्रेम का बाण लगते ही उसे अपने परिवार का ध्यान भूल जाता है।[5] प्रेम की साधना मे सूफी-मुक्तक कवियो के यहा मदिरा का अत्यन्त महत्व रहा है। यह मदिरा पिलाने वाला स्वय प्रियतम है अथवा आध्यात्मिक गुरु है। प्रणय की मदिरा साधक को आनन्द-विभोर कर देती है।[6] इसके पान करने से उसी का ध्यान रहता है जिसने उन्मत्त बना दिया है। मध्य युग का ज़माना, कुरान की शिक्षा तथा इन कवियो का सत स्वभाव इन अन्य उपदेशो के मूल मे है।[7]

(ख) शैली पक्ष

जहा तक शैली का सम्बन्ध है, इन मुक्तक-काव्य के कश्मीरी सूफी कवियो ने वाक्यो, श्लोको, नज्मो, नातो, गजलो तथा गीतो का प्रयोग किया।

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी कवि और काव्य, पृ० १०५।

२. बिनु गुरु वजहन लेत है, जो कोउ बरुन रगाय।
यह निजके तुम जानियो, दोनो दरसे जाय। सूफी काव्य-सग्रह पृ० २५५।

३. हर हर करे औ गुरु को देखे, उसको मिलता प्यारा है। वही पृ० २५२।

४. पा-पाएउं गुरु मोहदी मीठा। मिला पंथ सो दरसन दीठा।
जायसी ग्रंथावली—डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६६४।

५. जाके हिरद लगत है, वजहन प्रेम का बान।
छूट जात है सब कुटुम, भूल जात है ज्ञान।
—सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २५५।

६. इश्क होरां दे पये पवाडे, कुझ सूला कुझ करमा साडे।
मसूर होरां चा बुरके पाड़े, असा भी मूह तो लेई लाही। काफिया बुल्ले-शाह, पृ० ७७।

७. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० ४०८।

लल्लेश्वरी ने वाक्यो की शैली को अपनाया। 'लल्लवाक्य' दो बैती श्लोक है।[1] अधिकतर मुक्तककारों ने नज्मो एव गजलो की आधार-भूमि फारसी की गजले एव नज्मे रही है। शम्स फकीर ने भी गजलो की शैली अपनाई। महमूद गामी ने नाते लिखकर फारसी शैली का अनुकरण किया।

महमूद गामी तथा रहमान डार ने उलटबासिया लिखकर अपने विचारो को अभिव्यक्ति दी। आत्मा-परमात्मा की अभिन्नता का वर्णन करते हुए कवि महमूद गामी ने अपनी गजल 'तमसीले आदम' (मानव-विवरण) मे कहा है.

आब मज नावि तअ नाव मज आबस, युथ छु हक हुक आनजिनाबस सअत्य[2]
(जल नौका के भीतर है तथा नौका जल के भीतर है। इसी भाति परमात्मा आत्मा मे और आत्मा परमात्मा मे अन्तर्लीन है।)

कवि रहमान डार ने सरिता से बूद और बूद से सरिता के उद्गम का उदाहरण देते हुए परमात्मा से उत्पन्न सृष्टि तथा सृष्टि में प्रतिबिम्बित परमात्मा का चित्रण भी किया है।[3]

इन कवियो ने सवादात्मक शैली का भी उपयोग किया है। शेख नूर-उद्-दीन (नुंदर्योश) व उसके शिष्य बाबा नसर-उद्-दीन महान् सूफी कवयित्री लल्लेश्वरी के समकालीन थे। इन तीनो के शास्त्रार्थ का सवादात्मक रूप 'नूरनामा' मे प्रस्तुत किया गया है।[4] इसी भांति नुदर्योश एव उनकी माता तथा पत्नी जी दीदी का वार्तालाप भी नाटकीय ढग से प्रस्तुत किया गया है।[5] इसके अतिरिक्त इन कवियो ने फारसी वर्णमाला का आधार लेकर भी कही-कही काव्य-रचना की। नुदर्योश, उनकी माता (सद्र मोज) व पत्नी जी दीदी का संवाद इसी वर्णमाला के कुछ वर्णों का आधार लेकर लिपिबद्ध किया गया है। महमूद गामी ने अपनी गज़ल 'नय' (बांसुरी) मे इस वर्णमाला का उपयोग किया है, जो अधिक वर्णनात्मक है।[6]

इसके अतिरिक्त इन कश्मीरी मुक्तक सूफी कवियो ने अपनी शैली मे प्रतीको

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, पहला भाग, पृ० १३८।
२. महमूद गामी, पृ० ८४।
३. ज्वय मंज छु कतरअह, कतरअह मज नेरान ज्वय। सूफी शआयिर, पहला पृ० १५८।
४. द्रष्टव्य—लल्लद्यद, पृ० १३०।
५. द्रष्टव्य—नूरनामा, पृ० २८९-२९४।
६ महमूद गामी, पृ० ८५।

को भी स्थान दिया। इन्होने बूंद-सरिता,[१] शमा-परवाना,[२] गुल-बुलबुल,[३] भ्रमर-नर्गिस[४] तथा उल्लू एव जाल[५] के द्वारा भावाभिव्यक्ति की। महमूद गामी ने अपनी रचना 'तमसीले आदम' (मानव विवरण) मे जीवात्मा एव परमात्मा के सम्बन्ध को गुलाब एव उसकी सुगन्धि के प्रतीको द्वारा स्थापित करते हुए कहा है :

सूरतस माने ताबीर खाबस, मुश्क जन मीलिथ गव लावस मग्रत्य।[६]
(सूरत मे 'मानी' है, ख्वाब मे 'ताबीर'
वैसे ही जैसे 'गुलाब' मे सुगन्धि व्याप्त है)[७]

इन कवियों ने मदिरा को प्रतीक मानकर कहा कि प्रेम-मधु पीने वाले को कभी आराम नही मिलता।[८]

हिन्दी का सूफी-मुक्तक साहित्य अधिकतर साखी, पद, काफी, चौपाई तथा कुण्डलियो मे लिखा गया मिलता है। जायसी ने 'अखरावट[९] तथा 'चित्ररेखा'[१०] मे दोहों तथा चौपाई छन्दो का प्रयोग किया है। कवि गगोही, पेमी तथा वजहन ने भी दोहो मे लिखा है। बुल्लेशाह की 'काफिया' सर्वप्रसिद्ध है।

जायसी ने 'अखरावट' मे वर्णों का ही आधार नही लिया है अपितु सवा-दात्मक शैली को भी अपनाया है। गुरु-चेला-सवाद ४४ वे सोरठे के पश्चात् प्रारम्भ होकर अत तक चलता है।[११] इस मे कवि ने अक्षरो के आधार पर सूफी-सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया है।

इन कवियो ने भी प्रतीको का आश्रय लिया है। फरीद ने ब्रह्म को दूल्हा तथा जीवात्मा को नववधु के रूप मे चित्रित करते हुए कहा है .

---

१. द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, पहला भाग, पृ० ८९।
२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ९२। ३. द्रष्टव्य—वही पृ० १०९।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० १२४।
५. द्रष्टव्य—वही, दूसरा भाग पृ० ७७। ६. महमूद गामी, पृ० ८४।
७. कश्मीरी भाषा और साहित्य, अनुवादक, प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प, पृ० १२।
८. तस कम्युक आराम आसी, यम्य च्यव इश्कुन शराब। सूफी शअयिर, दूसरा भाग, शाह कलन्दर, १४४।
९. द्रष्टव्य—जायसी-ग्रन्थावली (अखरावट), डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६५३-६७३।
१०. द्रष्टव्य—चित्ररेखा, डा० शिवसहाय पाठक
११. द्रष्टव्य—जायसी-ग्रन्थावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६७२-६७६।

फरीदा जे जाणां तिल थोडडे, सभलि बुकु भरी।
जे जाणा सहु नढडा, थोडा माणु करी।[1]

यहा तिल का प्रयोग श्वास-प्रवाह के लिये प्रतीक रूप मे हुआ है। इसके अतिरिक्त फरीद ने हस (शुद्ध आत्माओ के लिये),[2] सरोवर (ससार),[3] छड़ी (शरीर),[4] रस्सी (श्वास प्रवाह),[5] मल्लाह (गुरु अथवा ब्रह्म के लिये),[6] लहरें (सासारिक दुःख),[7] कुरग (शरीर),[8] काग (विषय वासना)[9] और पिंजरा (शरीर)[10] आदि प्रतीको का सुन्दर प्रयोग किया है। उसके ये सभी प्रतीक व्यावहारिक जीवन से लिये गए है। बुल्लेशाह ने आत्मा के लिये कुमारी का प्रतीक प्रयुक्त किया है।[11]

४—कश्मीरी और हिन्दी-सूफी मुक्तक काव्यों में साम्य

कश्मीरी तथा हिन्दी के मुक्तक कवियो की आस्था का मूलाधार यद्यपि कुरान मे प्रतिपादित अल्लाह है, फिर भी इन्होने उसे अपने बाह्य प्रभाव एव स्वतन्त्र चिन्तन द्वारा भिन्न रूप प्रदान किया है। कुरान के अनुसार अल्लाह सृष्टि-कर्त्ता, नित्य एव सर्वशक्तिमान है। उसी से सब पदार्थ उत्पन्न हुए; और अन्त मे सब-कुछ उसी मे विलीन हो जायेगा।[12] इन दोनो प्रकार के कवियो ने उस नित्य, सौंदर्यशाली (जमाल), गौरव गुण-युक्त (जलाल) तथा पूर्णत. गुण-शील (कमाल) माना है।[13] यह सृष्टि उसी के प्रकाश-पुज की एक रश्मि का

---

१. शेख फरीद जी दी वाणी, पृ० ५३।

२. वही, पृ० ६२। ३. वही, पृ० ६४।

४. वही, पृ० ६४। ५. वही, पृ० ६४।

६. वही, पृ० १०४। ७. वही, पृ० १०४।

८. वही, पृ० १०८। ९. वही, पृ० १०९।

१०. वही, पृ० १०९।

११. नी सखियो मै गई गवाची खुले घूघट मुह नाची। काफियां बुल्लेशाह, पृ० १०३।

१२. Unto Allah belongeth whatsoever is in the heaven and whatsoever is in the earth, and Unto Allah all things are returned.
—दि ग्लोरियस कुरान सू० ३, १०९

१३. क—च्वपअरी द्रायस जमाल चोन वुछने कमाल वलै यावनै, सूफी शअयिर, पहला भाग, पृ० १५३।
ख—छोड़ जमाल जलालहि रोवा। कौन ठांव तें दैउ बिछौव। जायसी-ग्रन्थावली (अखरावट), डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६५६।

प्रतिबिम्ब है और वह इस मे सर्वत्र विद्यमान है। उसके अतिरिक्त और कुछ भी नही है। कुरान मे वर्णित अल्लाह के सिद्धान्त 'केवल एक ही ईश्वर है' को इन्होने 'केवल ईश्वर ही वास्तविक है और कुछ नही' के रूप मे मान्यता दी। इन्होने यह स्वीकार किया कि विश्व का सौदर्य उसी का सौदर्य है।[1] 'अनल्हक' अथवा 'सोऽहम्' की भावना दोनो मे विद्यमान है। इसी कारण वे आत्मा-परमात्मा मे कोई भेद नही मानते। उनका विचार है कि हम एक ही की आत्मा है यद्यपि दो शरीरो मे रहते है। यही अभेद की भावना उन मे विरहानुभूति को जन्म देती है। उन्होने ईश्वर को पुरुष तथा साधक या आत्मा को नारी के रूप मे ही स्वीकार किया है।

निखिल विश्व उसी का प्रदर्शन-मात्र है। शरीर के भीतर और बाहर ससार मे उसी का निवास है।[2] अपने महान् सौदर्य मे भी वह अदृश्य दृश्यमान है। यह दृष्टि उसी का एक निर्मल दर्पण है। प्रेम पर आधारित सिद्धान्त के कारण उनकी इस बात पर पूर्ण श्रद्धा है कि ईश्वर ही मानवीय साकार रूप मे अवतरित हुआ है। ईश्वर, सृष्टि तथा जीव मे वे कोई विभेद नही देखते। शम्स फकीर तथा कवि वजहन ने बूद मे ही सागर की कल्पना की है।[3]

'नफ्स' से मन हटाकर उसके सौदर्य पर मुग्ध होकर प्रेम करने वाला ही उसे प्राप्त कर सकता है। आध्यात्मिक ज्ञान की अवस्थाओ, शरीयत, तरीकत एव मारिफत का अनुसरण करके जब वह नासूत, मलकूत एव जबरूत के लोको को पार करके आरिफ बन जाता है तभी लाहूत की दशा को प्राप्त कर एव

---

१. क—जहूरे आदम च्वपअरी ताबान, आलम बारह ह्योतनम तअय।
सूफी शअयिर, दूसरा भाग, असद परे, पृ० १९२।
ख—हम चाकर जिसके हुस्न के है, वह दिलबर सबसे आला है।
सूफी काव्य-सग्रह, पृ० २४६।

२. क—अल्लाह ति हू-हू छुम दर मनै, बअ क्या वनै यी गव जहूर।
सूफी-शअयिर, तीसरा भाग, शम्स फकीर, पृ० १०५।
ख—साधो देखो अपने माही, घर मे पड़ी काकी परछाई। सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० २५३।

३. क—दरियावह मजअ कतरअह द्राव, कतरस मंज दरियाव चाव। बयाजे शम्स फकीर, पृ० ४।
ख—समन्दर समायो बूद मे, अचरज बड़ो दिखाता। सूफी-काव्य-सग्रह वजहन, पृ० २५५।

ज्ञाननिष्ठ हो कर उसे हकीकत के सत्य की उपलब्धि होती है।[१] उस ईश्वर के मिलन (वहदत) पर दोनो का अटल विश्वास है।

'मैं' और 'तू' के द्वैत-भाव को मिटाकर वे अद्वैत की भावना से प्रेरित दिखाई देते है। उन्हें इस दृश्य जगत् में सर्वत्र ईश्वर ही विद्यमान दिखाई देता है और इसी कारण वे इस मे घटित सभी पदार्थो का विवेचन ईश्वरीय प्रकाश के रूप मे करते है। उन्होने ऊच-नीच के भेद-भाव को मिटाने तथा हिन्दू-मुस्लिम एकता के सस्थापनार्थ अपनी अमर वाणी का सन्देश सुनाया। उनके लिये राम-रहीम एक है।[२] वह स्वय ही उपास्य एव उपासक है।

इनका विश्वास है कि मानव मे दैवी प्रकृति के अतिरिक्त दानवी प्रकृति भी विद्यमान है जो उसे विषय-वासनाओ और सासारिक प्रलोभनो की ओर अग्रसर करती है। यही कारण है कि इन्होने स्थान-स्थान पर ससार के क्षणिक भोगों के प्रति आकृष्ट न होने के लिये मानव को पग-पग पर चेतावनी दी है। मानव को सत्कर्मों एव समार्ग पर चलने का उपदेश इनके मुक्तक काव्य मे सर्वत्र विद्यमान है। इन्होने कल्ब (हृदय), रूह (आत्मा) एव सिर्र (ज्ञानशक्ति) को ही आध्यात्मिक सपर्क का उपकरण माना है। कल्ब और सिर्र प्रभु-दर्शन मे महत्वपूर्ण है। प्रकृति से उज्ज्वल एव पवित्र कल्ब ही वासना की कालिमा से दूषित हो जाता है किन्तु ज्ञान प्रकाश से उसका अज्ञानान्धकार विलीन हो जाता है। इसी लिये पैशाचिक प्रवृत्तियो काम, क्रोध, मद एव लोभ को त्याग कर इन्होने जीवन की सार्थकता का उपदेश दिया है। पाशविक अधोगति से बचाने और ईश्वर के अश मानव को अपनी शक्ति का आभास दिखलाने के लिये ही ये कवि विह्वल दिखाई देते है।

गुरु मे इनकी अपार श्रद्धा है। वही पूर्ण पुरुष ईश्वर का प्रतिरूप है।

---

१. क—मारिफतअह सअत्य गोस बा दिल बेदार, प्रजनोवुम संसार।
सूफी शअयिर, पहला भाग, रहमान डार, पृ० १४१।
ख—सूली के पार मेहर पेखा, मलकूत जबरूत लाहूत तीनों।
लाहूत सेती नासूत है रे, हाहूत के रस मे रग भीनो। सूफी-काव्य-सग्रह, यारी साहब, पृ० २३७।

२. क—अव्वले खबर अन्य रहीम रामन, मौजूद मंज सर नामन तह लो।
सूफी शअयिर, दूसरा भाग, असद परे, पृ० १९४।
ख—कुण्ण जादा कुण कम्म कभी करना नहि कजिया।
एक भगत हो राम दूजा रहमान सो रजिया। सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २४५।

औलिया या पीर से प्राप्त मार्ग-प्रदर्शन ही इनके जीवन का बहुमूल्य सबल है। उसी के नेतृत्व मे साधक के आचार का आदर्श उच्च हो जाता है क्योकि सत्य के परिचय के लिये वह आत्मशुद्धि मे सहायक सिद्ध होता है। ईश्वर पर विश्वास (तौहीद), प्रार्थना (सलात) उपवास (रोजा), दान (जकात) और काबे की यात्रा (हज) से ही यह आत्मशुद्धि सभव है। वास्तव मे इनका काबा कायानिष्ठ है। सात्विक (साधक) का हृदय ही उसका मदिर है।

प्रभु का साक्षात्कार कराने मे इन्होने सच्चे प्रेम को ही प्रधानता दी है। नूदर्योश[1] तथा बुल्लेशाह[2] ने तब तक शास्त्राध्ययन को व्यर्थ माना है जब तक हृदय मे सच्चे प्रेम का उदय न हो। नुदर्योश तथा जायसी को छोडकर किसी अन्य के नजाम तथा रमजान को महत्व नही दिया। सभी कवि प्रेम की मदिरा पीकर प्रभु-दर्शन के इच्छुक है। शरीयत के नियमो के वर्णन का जहा तक सम्बन्ध है, उसका उल्लेख केवल कुरान के परिपालन के लिये ही किया गया है क्योकि अपने सिद्धान्तो के प्रचार के साथ कवि उसका मोह त्याग न सके। प्राणायाम तथा हठयोग की क्रियाओ का दोनो मे मिलता-जुलता रूप उपलब्ध है। साधक का 'फना' की स्थिति मे आत्म-भाव पूर्ण रूप से विनिष्ट होता है तथा 'बका' की अवस्था मे उसे ईश्वर-प्राप्ति होती है। इस अवस्था मे मैं' और 'तू' का भाव नही रहता। नीति-कथन, एकान्त सेवन तथा मनोनिग्रह पर दोनो ने अधिक बल दिया है।

सामाजिक जीवन मे इनका श्रेय इस बात मे है कि इन्होने जडीभूत जनता को आस्था, आशा तथा प्रेरणा का सुसदेश सुनाया। दोनो ने अपने भावो की अभिव्यक्ति के लिए प्रतीको का आश्रय लिया। कुछ कश्मीरी मुक्तक-कारो की भाँति जायसी आदि कवियो ने न केवल वर्णो के आधार पर लिखा अपितु नाटकीय शैली को भी अपनाया। शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) के श्लोको (स्रुकियो)[3] एव महमूद गामी की 'नय' (बासुरी) गजल की भाति ही हिन्दी मे जायसी ने 'अखरावट' यारी साहब ने 'अलिफनामा'[4] तथा वजहन ने

---

१. परान परान पालुन मउठ मो, ल्यखान ल्यखान व्यूठुक दिल,
जिक्रे सअ्रत्यन मोला टोठमो, फिक्रे सअ्रत्यन रउछ मे शिल।
—नूरनामा, श्लोक १५३, पृ० १८६।

२. द्रष्टव्य—कलामे शेख-उल्-आलम, पृ० १।

३. द्रष्टव्य—महमूद गामी, पृ० ८५-८६।

४. जीम जगत पती हीर दैयँ राबहु, हे हलीम होय नरहरी भाषहु।
खे खालक छाड़हु सब झूठा, दाल दआल सुमिरहु अनुठा।

'वजहननामा' की रचना वर्णमाला के क्रम पर करके सूफी-सिद्धातो का पालन किया।

५—कश्मीरी और हिन्दी सूफी-मुक्तक-काव्यों में वैषम्य

कश्मीरी तथा हिन्दी मुक्तक-सूफी साहित्य मे केवल छन्द-योजना तथा शैली में ही प्रायः अन्तर लक्षित होता है। उन मे विभिन्नताओ के स्थान पर समानता अधिक है। शैली के क्षेत्र मे कश्मीरी मुक्तक-काव्य मे पुराणो की सवाद शैली अथवा कथोपकथन शैली को कई कवियो ने अपनाया है जबकि हिन्दी मे इसे केवल जायसी ने ग्रहण किया है। कश्मीरी साहित्य गीतो, गजलो, नज्मो एव उलटवासियो के रूप मे उपलब्ध है जब कि अधिकतर हिन्दी मुक्तक सूफी-साहित्य दोहा, सोरठा, कुण्डली, सीहर्फी तथा चौपाई आदि मे लिखा गया है।

कश्मीरी मुक्तक-काव्य मे कवियो ने सामाजिक जागरण के साथ-साथ राजनीतिक अत्याचार का वर्णन किया है।[1] हिन्दी के कवि इस विषय मे मौन ही है और इन्होने राजनीतिक कठोरता का वर्णन नही किया है। कश्मीरी कवियो ने ब्रह्मा, विष्णु एव शिव के प्रति भी अपनी उदारता दिखलाकर उन मे सौदर्य की झलक देखी है,[2] जबकि हिन्दी के कवियो ने न उनका खण्डन ही किया है और न मण्डन ही।

इसी प्रकार गुल, बुलबुल, मदिरा तथा चमन आदि के स्थान पर हिन्दी-सूफी मुक्तककारों ने कमल, पपीहा, मधु, और वाटिका का सरलता से प्रयोग किया है।

६—साम्य तथा वैषम्य के मूलाधार

(क) साम्य के मूलाधार

कश्मीर तथा भारत मे आरम्भ से ही प्रेम तथा भक्ति के उपासको की कमी न थी। प्रेम भावना तथा सत्पुरुषो के आदर्शों से अनुरजित सूफीमत के द्वारा स्लाम की कट्टरता क्षीण हो गई। सूफीमत के सिद्धान्तो तथा जीवन-उद्देश्य

---

१. दिलकिस बागस दूर कर गअसिल, अदअह द्यव पवली यबरजल बाग।
मरिथ मगनै वुमरि हअज हअसिल मौत छुय पतअह तहसीलदार।
—लल्लद्यद, वाक्य ८, पृ० ४२।

२. ब्रह्मा, वेषण, महीशर, चह गारुन, शुफुत हो छुय तिहुन्दुय जुव।
पान है खटनै, जान ह्यरव मारुन, दारुनुय दारुन सू हम सू।—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, शाह गफूर, पृ० ६५।

सम्बन्धी विचारो की परिपुष्टि तेरहवी शताब्दी के मध्य तक ही हुई थी और उसके अन्तर्गत आने वाले बौद्ध-धर्म एव वेदान्त की विचारधारा कश्मीर से बाहर वाले प्रदेशों मे ही पनप चुकी थी।[१] सूफीमत के केन्द्र बसरा और बगदाद थे जहा आर्य सस्कृति का प्रचुर प्रभाव था।[२] भारत-आगमन से पूर्व 'दमिश्क, खुरासान, बगदाद आदि मे सूफियो के मठ स्थापित हो चुके थे।[३] कश्मीर तथा भारत मे पहुचने से पहले 'इन सूफी साधको का अब इस्लाम धर्म-सघ या राज्य सघ से विरोध न था प्रत्युत बहुत अशो मे वे उसके सहायक ही सिद्ध हुए।[४]

कश्मीरी मे सूफीमत के प्रचार के समय कुछ सुल्तानो पर इसका पर्याप्त प्रभाव पडा। देहली के सुल्तान किसी न किसी सूफी साधक के शिष्य या मुरीद बन जाते थे, या उन्हे विशेष सम्मान प्रदान करते थे।[५] सुल्तानो तथा चको के शासन काल मे सूफीमत का विकास कश्मीर मे उत्तरोत्तर बढता गया, और भारत में भी अकबर के समय तक सूफीमत प्रेम भक्ति पर आधारित होकर सर्वमान्य हो चुका था।[६] कश्मीर मे इस्लाम के प्रचार के कारण प्रचलित भारतीय नृत्य की प्राचीन परम्परा लुप्त नही हुई अपितु मुसलमानो के प्रारम्भिक शासन-काल मे उसको धारा अक्षुण्ण रही।[७] भारत मे भी शनै-शनै सूफीमत मे भारतीय सगीत, नृत्य, देवोपासना की भावना, योगियो की चमत्कारवादी पद्धति आदि का भी समावेश हो चला।[८]

---

१ The evolution of Islamic mysticism into a well developed system of thought and way of life had achieved by the middle of the 13th century and the ideas, if any, which it borrowed from Buddhist and Vedantic Philosophy, it did so in countries outside Kashmir.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्ताज, पृ० २४१।

२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० १२।

३. वही, पृ० १३।

४. वही, पृ० १७१। ५. वही, पृ० २६।

६. वही, पृ० २६।

७. The tradition in dance did not die with the advent of Islam-During the early Muslim rule, the Indian classical dances continued to hold their ground.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५२२।

८. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २६।

कश्मीर एवं भारत की मध्ययुगीन राजनीतिक, धार्मिक एवं सामाजिक जर्जरित तथा संकुचित हो गई थी। अंध-विश्वासों का प्रचलन, कर्मकाण्ड की अधिकता तथा ब्राह्मण-धर्म की क्लिष्टता प्रधान रूप धारण कर गई थी। इसी समय सूफियों ने जब सर्वजन-ग्राह्य प्रेम भावना पर आधारित स्वमत का प्रचार किया तो अधिकांश जनता इसकी ओर आकर्षित हुई। जाति भेद, आर्थिक प्रलोभन, शासकों का अत्याचार, स्वधर्म अज्ञान, धर्म-परिवर्तन के द्वारा दण्ड एवं कर से विमुक्ति आदि कई ऐसे मूलाधार हैं जिनको दृष्टि में रखकर सूफी-कवियों ने प्रेम कथा सहृदयता से भरी प्रचार-प्रणाली को अपनाया। जाति-व्यवस्था की कटुता अथवा मुक्तक काव्य के रचयिता सूफी-सन्तों के प्रेम प्रचार से प्रभावित होकर ही कई निम्न वर्ग की जातियां इस्लाम-धर्म में दीक्षित हो गई। यद्यपि कश्मीर की जनता ने इस्लाम-धर्म स्वीकार किया, फिर भी उसने अपनी परम्पराओं से नाता नहीं तोड़ा। इस्लाम में दीक्षित होकर भी उसने प्राचीन रूढ़ियों एवं विधि-विधानों का पालन किया।[१] परमात्मा तथा मनुष्य के मध्य मध्यस्थ को स्वीकार न किए जाने के फलस्वरूप ही सूफीमत में काजी, मल्लाह एवं मौलवी और साथ ही राजनीतियों प्रतिनिधियों का विरोध रहा।

(ख) वैषम्य के मूलाधार

कश्मीर में जब इस्लाम-धर्म का प्रचार बढ़ा तो यहां के सूफी-सन्तों ने उन स्थानों से आध्यात्मिक प्रेरणा प्राप्त करनी चाही जो इस्लामी संस्कृति के केन्द्र बन चुके थे, अतः विद्वानों ने हेरात, समरकन्द तथा बुखारा आदि देशों की यात्रा प्रारम्भ की जो फारस के सांस्कृतिक केन्द्र थे ताकि वे वहां जाकर विख्यात सूफी संतों तथा विद्वानों के चरणों पर नतमस्तक होकर फारसी की संस्कृति का अध्ययन करें।[२] मुगल-काल (सन् १५८६ ई०—सन् १७५२ ई०) में कश्मीर

---

१. Although the people of Kashmir changed their religion, they did not make a complete break with the past, but carried with them many of their old beliefs & practices to the new faith.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्तान्ज़, पृ० २४१।

२. Scholars, therefore, began to visit Herat, Samarkand & Bukhara, which formed part of Persia's culture empire to learn at the feet of eminent jurists & devout sufis, and drink deep from the fountain of Persian culture.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्तान्ज, पृ० २५४;

फारसी की खूब प्रगति हुई और कश्मीरी कवियो की एक ऐसी अविच्छिन्न धारा चल पडी जिसने फारस के सास्कृतिक केन्द्रो जैसे ईरान, मशहाद, हमदान, खाफ (हेरात के निकट स्थान) बहलोज तथा अन्य केन्द्रो के समकालीन फारसी विद्वानो से समानता प्राप्त करने की स्पर्द्धा की।[१] फारसी के प्रचलन के अनन्तर भी निजी तथा राजकीय कार्यों के लिए संस्कृत मे काफी समय तक गतिरोध उपस्थित न हुआ।[२] कश्मीरी गजल पर फारसी का प्रभाव काफी पडा। प्रभाव के ये बीज इस मे निहित दिखाई देते है,[३] अत: फारसी शैली की महत्ता यहा पर्याप्त रही। गजल का प्रयोग और प्रचार अरब देश मे भी बहुत रहा,[४] और सूफीमत के प्रसार मे फारसी भाषा ने बहुत सहयोग दिया किन्तु जैन-उल-आबदीन एव मुगलो के समय मे सस्कृत तथा फारसी का विशेष प्राधान्य रहा।[५]

इसके विपरीत हिन्दी के अपने छन्द थे, अपने अलकार और अपनी परम्परा थी, जिसे उसने सस्कृत, प्राकृत एव अपभ्र श की उत्तराधिकारिणी के रूप मे अपनाया था। गजल के स्थान पर उसके सामने आर्या, गाथाए दूहे का आदर्श प्रत्यक्ष था।[६] सूफीमत से उसकी विचारधारा का केवल सार तत्व लेकर हिन्दी-सूफी कवियो ने उसे अपने स्वदेशी ढाचे मे डालकर प्रस्तुत किया।

---

१. We find a galaxy of Kashmiris making their mark in Persian Muse and rubbing shoulders with their contemporaries from Iran, Mashhad, Hamdan, Khaf (near Herat), Bahloj and other centres of Persian culture.

—तारीख-ए-हसन (पर्शियन पोएट्स इन कश्मीर, चौथा भाग), पृ० १०।

२. Despite the growing popularity of Persian, the use of Sanskrit for private & official purposes did not cease for a long time.

—कश्मीर अण्डर दि सुल्तांज़, पृ० २५७।

३. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, पहला भाग, पृ० १८६।

४. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० ६५।

५. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य—शैवमतुक तम्र तसव्वुफुक इम्तजाज, रेडियो वार्ता।

६. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० ७०।

पांचवा अध्याय

पारस्परिक देन और उनके मूलभूत कारण

१—कश्मीरी कवियों की हिन्दी-सूफी कवियों को देन

कश्मीरी मे सूफी प्रबन्धकाव्यो का प्रारम्भ अठारहवी-शताब्दी से हुआ और सन् १७७५ ई० मे सन् १६२५ ई० तक इसकी परम्परा प्रधान रही, किन्तु हिन्दी मे प्रबन्धकाव्य रचना चौदहवी शताब्दी से उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ तक होती रही। यह एक अत्यन्त विचित्र बात है कि जब हिन्दी मे सूफी प्रबन्ध-काव्य का प्रवाह बहुत कुछ क्षीण हो गया था, तभी कश्मीर मे सूफी प्रबन्ध-काव्य का जन्म हो रहा था। यह तथ्य स्पष्ट है कि जिस समय हिन्दी में प्रबन्धकाव्यों का प्रणयन हो रहा था उस समय उसके समानान्तर कश्मीर मे फारसी सूफी प्रबन्धकाव्यो की रचना हो रही थी। यह एक टेढा प्रश्न भी है किन्तु इसके तीन मूल कारण हैं। पहला यह कि कश्मीर के स्थानीय सूफी कवियों ने फारसी के अत्यधिक प्रचार को देखकर ही ऐसा किया क्योकि इस नवीन प्रचलित भाषा का इतना प्रचार हुआ कि वह सर्वसाधारण के हृदय मे भी प्रवेश पा गई। दूसरा कारण यह है कि कश्मीर के कवियो ने फारसी कवियो की प्रतिस्पर्द्धा में अपनी योग्यता प्रदर्शित करने के लिये ही ऐसा किया। तीसरा कारण यह है कि उस समय कवियों ने यह निराधार भावना अपनाई कि कश्मीरी का क्षेत्र अत्यन्त सकुचित है अत: इसके द्वारा भावाभिव्यक्ति हो ही नही सकती और तभी यहा के कवियो ने विदेशी भाषा का आश्रय ग्रहण किया।[1] राजभाषा तथा सास्कृतिक अभिव्यक्ति की माध्यम फारसी भाषा का

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, पहला भाग, पृ० ३५।

प्रचार महाराजा प्रतापसिह के राज्यकाल (सन् १८८५ ई०--सन् १९२५ ई०) तक होता रहा जबकि उसका स्थान उर्दू एव अग्रेजी ने ग्रहण किया। कालान्तर मे फारसी के इस घटते महत्व के साथ ही कश्मीरी के प्रतिभी कवियों की रुचि बढी और तभी इससे एक शताब्दी पूर्व सन् १७७५ ई० से ही कश्मीरी मे प्रबन्ध-काव्य लिखे जाने लगे। इन कश्मीरी प्रबन्धकाव्यो का भावपक्ष वैसा ही रहा किन्तु उन मे फारसी, पजाबी, उर्दू तथा सस्कृत के शब्दो का भी प्रयोग किया गया।

मुल्ला मुहसिन फानी,[1] बाबा दाऊद खाकी,[2] गनी[3] तथा याकूब सर्फी कश्मीरी फारसी सूफी साहित्य के विख्याततनामा कवि हुए है। इन फारसी सूफी-कवियो का प्रभाव न केवल यहा के परवर्ती स्थानीय कश्मीरी सूफी-काव्य पर पडा अपितु भारत के तत्कालीन हिन्दी सूफी-कवि भी उनकी विचारधारा से अवश्य प्रभावित हुए। इन तथ्यो की ओर अभी विद्वानों का बहुत कम ध्यान गया है और इसी अवहेलना के कारण उन कश्मीरी फारसी सूफी रचनाओ का महत्व अब भी अन्धकारमय है जिन्होंने भारतीय सूफी-कवियो को प्रभावित किया। कवि गनी द्वारा लिखित दीवान (सबोधन गीतो का सग्रह) कश्मीर की सीमाओं को पार करके भी प्रसिद्धि के विस्तृत क्षेत्र की अब भी अपेक्षा रखता है।[5]

इसी भाति याकूब सर्फी (सन् १५२१ ई०—सन् १५९४ ई०) को अपनी काव्य प्रतिभा विशेषकर मसनवियो तथा गजलो के कारण निज़ामी एव जामी का समकक्ष ठहराया जाता है।[6] भारत के समकालीन राजनीतिज्ञ तथा विद्वान उसका मान-सम्मान किया करते थे।[7] उसने भारत के कई नगरो की यात्रा की थी और इसी कारण उसने इस देश की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उसके फारसी

---

१. द्रष्टव्य—कशीर, दूसरा भाग, पृ० ४६१।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४५७। ३. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४४७।

४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ४५९।

५. Ghani's Diwan or the collection of his odes has gone beyond the confines of Kashmir though it still awaits days of proper appreciation.

—कशीर, दूसरा भाग, पृ० ४४७।

६. His poetical diction, especially the mathnavi and Ghazal, ranks him with Nizami and Jami.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५०७।

७. He was widely respected by top ranking Indian statemen and men of letters of his time.

—वही, पृ० ५०७।

दीवान मे एक ऐसी गजल है जिस मे उस ने अहमदाबाद एव उसके निवासियो का पर्याप्त गुणगान किया है। भारत-यात्रा करते समय वह यहा के उल्लेखनीय विद्वानो तथा राजनीतिज्ञो के सम्पर्क मे आया था। वह अकबर के प्रधानमत्री अबुल-फजल के ज्येष्ठ भाई फैजी का परम-मित्र था। उसे मुन्तखिब-उल्-तवारीख के रचयिता बदायू के मुल्ला अब्दुल कादिर का ससर्ग भी प्राप्त था। अपनी भारत-यात्रा के बीच उसने शेख अहमद सरहन्दी (मुजादीद अल्फे-सानी) को हदीस तथा सूफीमत के सिद्धान्तो का भी ज्ञान कराया था।[१] याकूब सर्फी ने ही एक ऐसे शिष्ट मण्डल का नेता बना था जिसने अकबर को कश्मीर को अधिकार में लेने की प्रार्थना की थी, क्योकि उस समय वहां की आर्थिक दशा अत्यन्त शोचनीय थी।[२] इस से स्पष्ट है कि कश्मीर से बाहर के सूफी-साधक एवं कवि भी उससे प्रभावित हुए होगे क्योकि उसका सम्पर्क कश्मीर के बाहर के सूफी-साधको से इतिहास सिद्ध तथ्य के रूप में स्वीकार्य है। इस प्रकार कश्मीर एव भारत के आवागमन के साधनों मे और अधिक सुगमता आ गई।

याकूब सर्फी के भारत मे यात्रा करने एव कश्मीर के मुगल राज्य मे विलय होने के समय भारत मे दिल्ली, मुलतान, डलमऊ, आगरा एव जौनपुर

---

१. He visited various cities in India. His admiration for India and her cities may be gauged from the fact that there is a lyric in his Persian Diwan devoted wholly to the praise and virtues of Ahmadabad and its people. He came in close contact with literary figure in India and developed a great intimacy with Faizi, the elder brother of Abul Fazal, the celeberated stateman and Prime Minister of Akbar. He was also with good terms with Mulla Abdul Qadir of Budayuni, the celeberated author of Muntakhab-Al-Twarikh. While Sarfi was in India, Sheikh Ahmad Sirhindi (the well known Mujjadid Alf-i-Sani) used to receive instruction from him in Hadis and Sufism.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५०७।

२. The Sheikh headed a deputation of leading men of his country (who were under evil effects of economic condition) to the court of Akbar, urging him to annex Kashmir.

—वही, पृ० ५०८।

आदि फारसी-साहित्य के प्रसिद्ध केन्द्र थे। इन केन्द्रो का सम्बन्ध कश्मीर के तत्कालीन सूफी-केन्द्रो के साथ था। मुगल काल (सन् १५८६ ई०—सन् १७५२ ई०) तथा अफगानों के समय (सन् १७५२ ई०—सन् १८१९ ई०) तक कश्मीर मे फारसी भाषा पर्याप्त रूप मे समृद्ध रही। भारत के साथ सन्निकट का सम्बन्ध होने, कश्मीरी विद्वानो का इन भारत के सूफी-केन्द्रो पर सतत यात्रा करने एव दिल्ली, आगरा कन्धार तथा काबुल से कश्मीर मे लेखको और विद्वानो के आने जाने से भारत-कश्मीर सम्मिश्रित एक नई सस्कृति जन्म ले रही थी जिसकी अभिव्यक्ति फारसी-साहित्य मे पनप रही थी।[१] कश्मीर एव भारत का सम्बन्ध पूर्वकाल से ही था किन्तु मुगल-काल मे यह और भी दृढ हो गया। यातायात की सुगमता के कारण इन केन्द्रो का पारस्परिक आदान-प्रदान बढता गया। उस समय कश्मीर मे फारसी सूफी-कवि मुल्ला मुहसिन फानी (सन् १६१५ ई०—सन् १६७१ ई०) ने कुतुबदीनपुरा को अपना सूफी-केन्द्र बनाया था, जहा दाराशिकोह ने सन् १६४५ ई० मे दबिस्तान-ए-मजाहिब की रचना की थी।[२]

अजमेर, दिल्ली एव पानीपत आदि स्थानो पर जो इन सन्तो की दरगाह बनी हुई है, वे अधिकाश मुसलमानो के लिये आकर्षण का कारण रही है, प्रायः प्रतिवर्ष वहा उत्सव होता है जो उर्स कहलाता है।[३] इस उर्स में सम्मिलित होने के लिये कश्मीर के सूफी-कवि भी आया करते थे। कुछ कश्मीरी सूफी कवि जैसे हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन', 'अजीज अल्लाह हक्कानी', एव पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' आदि पीर-मुरीदी के लिये पजाब की ओर आते थे, अतः इन दरगाहो पर आकर अपनी श्रद्धा के पुष्प अर्पित करना न भूलते होगे।

---

१. The Mughal and Afghan period saw the flowering of the Kashmiri's talent in Persian Literature. Because of the close association with the rest of India and the frequent travels of Kashmir's learned men to famous centres of learning in the plains, and the presence in Kashmir of writers and poets from Delhi, Agra, Qandhar and Kabul, new standards were created and we find the emergence of an Indo.

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५१३।

Kashmir Lit. in Persian.

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० ५११।

३. सूफीमत और हिन्दी साहित्य, पृ० ८४।

यहा आकर उनकी वार्ता अवश्य यहा के सूफी-सन्तो से होती होगी, वस्तुतः इसमे कोई सन्देह नही कि कश्मीरी सूफी कवियो ने यहा के मुक्तक कवियो को अवश्य उसी रूप मे प्रभावित किया होगा जिस रूप मे उनके पूर्ववर्ती कश्मीरी फारसी सूफी-कवियो ने हिन्दी प्रबन्धकारो को किया होगा।

कश्मीरी के सूफी कवि भाव-सकोच की शृंखलाओ से आबद्ध नही थे। सूफी होने के कारण वे विशाल हृदय रखते थे तथा विश्व-प्रेम के पुजारी थे। केवल शरीअत का अन्धाधुन्ध अनुकरण उन्हे मान्य नही था, अत. वे मन्दिर-मस्जिद, काबा, काशी जनेऊ-माला तथा हिन्दू-मुसलमान एकता का व्यापक सन्देश सुनाते रहे। उनके मानवतावादी स्वर का प्रभाव हिन्दी सूफी मुक्तककारो पर प्रत्यक्ष रूप से पडा। कश्मीर के सूफी कवि द्वैतभाव के विरोधी थे।[1] इसी से प्रभावित होकर बुल्लेशाह ने कहा .

> दुई दूर करो कोई सोर नही, हिन्दू तुरक कोई होर नही,
> सब साधु लखो कोइ चोर नही, घट-घट मे आप समाया।[2]

कहना न होगा कि कश्मीरी सूफी मुक्तककार शम्स-फकीर सन् १८६६ ई०—६८ ई० मे अमृतसर के एक प्रसिद्ध सूफी सत के सपर्क मे आए। उस समय शम्स फकीर की आयु केवल २४-२५ वर्ष से अधिक न थी। अमृतसर का वह उन्मुक्त सूफी फकीर गलियों में घूमता था और उसके शिष्यो की टोली उसके पीछे-पीछे चला करती थी। यही पर शम्स फकीर ने उस सूफी फकीर के दर्शन का लाभ प्राप्त किया। वहा वह बारह वर्ष रहा।[3] शम्स-फकीर वहा ज्ञान प्राप्ति के साथ साथ कश्मीर मे प्रचलित सूफी-सिद्धान्तो का प्रचार भी करता रहा। इस आधार पर यह कहना युक्तिसंगत प्रतीत होता है कि कश्मीरी कवियो का हिन्दी के पश्चिमी क्षेत्रो के सूफी कवियो पर अवश्य प्रत्यक्ष प्रभाव पडा।

शैली सम्बन्धी पारस्परिक देन तो नही के बराबर है, किन्तु वस्तु सगठन और साधनात्मक एकता के कारण जितना आदान-प्रदान सम्भव है उसे ही स्वीकार किया जा सकता है।

२—हिन्दी सूफी-कवियों की कश्मीरी सूफी-कवियों को देन

सूफीमत का प्रथम चरण पश्चिमी भारत (कश्मीर, सिन्ध तथा गुजरात)

---

१. द्रष्टव्य—सूफी शाअयिर, प्रथम भाग, पृ० ७८।
२. सन्तवाणी सग्रह, दूसरा भाग, पृ० १६०।
३. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—शम्स फकीर, पृ० ८।

मे पडा ।[१] सूफीयों मे चिन्तन-पद्धति का विकास जिस-जिस रूप में हुआ, उसका स्वरूप सदैव इस्लामी रहा । हिन्दी-सूफी प्रेमाख्यान की धारा जब क्षीण हुई, तभी कश्मीरी में उसका उद्भव हुआ, अत. आवागमन के साधनो की सुगमता, राजनीतिक सम्बन्धो तथा विचार-साम्य के कारण पूर्ववर्ती काव्यों का प्रभाव परवर्ती काव्यों पर पडना अनिवार्य था। कश्मीर, पजाब एवं बगाल पर मुस्लिम समाज एव सस्कृति का प्रभाव विशेष रूप से लक्षित होता है जिस कारण यहा की भाषा की प्रेम-कहानियो में भी उस रग मे रंगे हुए प्रसगो का आ जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है, किन्तु इनके अभारतीय प्रेमाख्यानो मे हमे भारतीयता भी क्रमश अधिकाधिक अशों मे उपलब्ध होती जान पडती है ।[२] कश्मीर के अधिकतर सूफी कवि मुसलमान थे और उनकी मूल प्रेरणा के स्रोत ईरान के ही कवि रहे किन्तु शैव-मत की प्रधानता के कारण वहा के हिन्दू भारत की दार्शनिक विचारधारा के अधिक सन्निकट थे और इस कारण दोनो का आदान-प्रदान होता रहा । वस्तुत: हिन्दी मे जब सूफी-प्रेमाख्यानो की रचना हुई तो प्रेम पर आधारित इन प्रबन्धो का कश्मीरी काव्य पर प्रभाव पडना स्वाभाविक था । कश्मीरी प्रबन्धकारो ने अभारतीय कथाओ की अपेक्षा पजाब एव दक्षिण की कहानियो तक को अपना लिया । पीर अजीज़ अल्लाह हक्कानी ने स्वय यह स्वीकार किया है कि उसके प्रबन्ध-काव्य 'मुमताज़ बेनजीर' का आधार वह ऐतिहासिक कथा है जिसे भारत के इतिहासकारो ने वर्णित किया है ।[३] यद्यपि इस प्रबन्ध मे ऐतिहासिक कथा का आधार लिया गया है, फिर भी उसकी कई घटनाए कल्पना-प्रसूत है । इस भारतीय कथा को ही अपने प्रबन्धकाव्य का मूल स्रोत मानकर कवि हक्कानी ने सूफी-सिद्धान्तो का प्रचार किया है । हक्कानी एक बहुश्रुत विद्वान था । वह बौद्धमत से भी प्रभावित था और उसने भारत की यात्रा की थी । उस के दूसरे सूफी प्रबन्धकाव्य 'चन्द्रवदन' का कथा-आधार बीजापुर के दक्षिणी कवि मुकीमी द्वारा लिखित 'चन्द्रवदन माह्यार' प्रतीत होता है । इस प्रकार जो-जो सूफी-कवि कश्मीर से बाहर भारत के अन्य भागों मे गये उन्होने लगभग भारत की किसी न किसी प्रचलित कथा को अपनाया । सैफ-उद्-दीन पर हिन्दी सूफी प्रबन्ध-काव्यों का इतना प्रभाव पड़ा कि उसने लुधियाना मे रहकर कश्मीर की लोक प्रचलित कथा 'हियमाल' को अपने काव्य का आधार बनाया । हिन्दी-सूफी काव्यो के समान ही उसने भी कथारम्भ मे इश्क-मजाजी की अपेक्षा इश्क-हकीकी की

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी-कवि और काव्य, पृ० २६ ।

२. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा, पृ० १०७ ।

३. मुमताज़ बेनजीर, पृ० ५ ।

महत्ता प्रकट की है। इस प्रबन्ध-काव्य के नायक-नायिका दोनो हिन्दू है। भारत की यात्रा करने वाले पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' ने भी पजाब मे प्रचलित लोक-कथा 'मोहनी मेथवाल' को अपनाया।

कश्मीरी प्रबन्ध-काव्यो मे प्राय प्रासगिक कथाओ का अभाव है किन्तु 'मुमताज बेनज़ीर,' 'गुलरेज' तथा 'रँगा व जेबा' मे प्रासंगिक कथाओ का समावेश होने के कारण हिन्दी सूफी प्रबन्धो का ही प्रभाव परिलक्षित होता है। हिन्दी प्रबन्धो की भाति ही इन मे उपनायक एवं उपनायिका मुख्य नायक एव नायिका की सहायता करते है। फारसी-काव्यो की अपेक्षा कश्मीरी सूफी काव्यो के नायक लगभग हिन्दी प्रबन्धो के समान ही राजकुमार है। उनके समान ही कश्मीरी सूफी प्रबन्धो की नायिका का निवासस्थान चीन, मकबा, गुजरात एव समन आदि नगर बताये गय है। वहाबखार ने अपने लघु प्रबन्ध 'तोतह' (तोता) मे नायिका का निवासस्थान समुद्र से सविलत एक द्वीप सगीन शहर-माना है जो जायसी द्वारा 'पद्मावत' मे वर्णित सिहल से समानता रखता है।

लक्ष्य की एकता के कारण कश्मीरी तथा हिन्दी सूफी-काव्यो की प्रवृत्तियो मे कोई अन्तर विशेष नही दीखता, यद्यपि वातावरण एव परिस्थितियो के भेद के कारण पर्याप्त अन्तर भी उपलब्ध होता है। साम्य के आधार पर दोनो प्रकार के काव्यो के कथानक प्राय: एक जैसे है। अत उन मे एक तरह का सगठन सम्बन्धी साम्य मिलता है। दोनों प्रकार के काव्यो मे प्रेम की अभिव्यजना हुई है। हिन्दी के सूफी-प्रबन्धकाव्यो की भांति ही कश्मीरी काव्यो मे साधक जीवात्मा का प्रतीक है और तभी जीवात्मा-परमात्मा के एकीकरण के लिए साधक की विरहानुभूति का चित्रण इन काव्यो मे मिलता है। साधना मे आध्यात्मिक सोपानो को पार करके ही साधक अपनी अन्तिम दशा को पहुंच कर प्रियतम के साथ एकीकरण प्राप्त करता है। वस्तुत. नायक सामान्यत साधक है और हिन्दी के काव्यो की भांति ही कश्मीरी प्रबन्धकाव्यो मे भी साधना के स्वरूप का एक जैसा चित्रण मिलता है।

इस भांति सपूर्ण सूफी-साधना की प्रक्रिया प्राय. एक-जैसी है, अत पूर्ववर्ती होने के कारण यदि हिन्दी-सूफी काव्य का प्रभाव स्वीकार किया जा सकता है लेकिन फारसी का प्रभाव भी प्रतीत होता है। वस्तुत हिन्दी एव कश्मीरी दोनो ही सूफी-कवियो ने एक ही स्रोत से समान प्रभाव ग्रहण किया है।

कश्मीरी-सूफी कवियो पर अरबी एवं फारसी के शब्दो का प्रभाव पडा है ही,

---

१. हकीकी यस नम्र हअसिल बानियाज़स, तरीकी तस छु दिन दुल पट मज़ाजस
—हियमाल, पृ० १।

उन मे पजाबी,[1] सस्कृत[2] एव हिन्दी[3] के शब्दो का भी प्रयोग हुआ है। उर्दू-मिश्रित पजाबी का प्रयोग भी कही-कही हुआ है।[4]

३—पारस्परिक आदान-प्रदान के मूलभूत कारण

(क) पूर्ववर्ती प्रभाव ·

कश्मीरी तथा हिन्दी-सूफी प्रेमाख्यानो पर फारसी सूफी-साहित्य का गहन प्रभाव पडता है किन्तु कश्मीरी सूफी प्रेमाख्यान अधिकतर फारसी-सूफी काव्यो के निकट है जबकि हिन्दी-सूफी काव्य मसनवी शैली से प्रभावित होकर भी भारतीय परम्पराओ के अत्यधिक निकट है। दार्शनिक क्षेत्र मे कश्मीर मे शैवमत एव तान्त्रिक साधना की तथा भारत मे अद्वैतवाद की प्रधानता रही। इस्लाम धर्म के प्रचार से पूर्व कश्मीर तथा भारत मे बौद्ध-धर्म की विकृति हो चुकी थी। दोनो स्थानो पर उच्चवर्गीय तथा निम्न-स्तरीय जातिया पारस्परिक सघर्ष मे लीन थी क्योकि ऊंच-नीच का भेद-भाव अत्यन्त प्रबल था। यद्यपि सूफीमत इस्लाम-धर्म का ही परिवर्तित रूप है फिर भी वह नाथ-पथियो के हठयोग से अप्रभावित हुए बिना नही रह पाया है। कश्मीरी सूफी काव्यो मे 'हम्द' की भावना हिन्दी-सूफी-काव्यो मे विनय के रूप मे उपलब्ध है। बौद्धो के निर्वाण का प्रभाव 'बका' के रूप मे दोनो ने स्वीकार किया है। कश्मीर मे शैवमत तथा तसव्वुफ एव भारत मे अद्वैतवाद तथा तसव्वुफ का सम्मिश्रण होने लगा।

---

१. द्रष्टव्य—पजाबी शब्द—अगाहान, मोडान्दा, बिछाहान, जेबा-निगार, पृ० ८२।

२. द्रष्टव्य—सस्कृत शब्द—सन्यास, मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० १४।
कामदेव, लैला मजनू (गामी) पृ० ६।
ओ, वही, पृ० २०।
मुख, चन्द्रवदन, पृ० १४।
श्रावरण, हियमाल (वली अल्लाह मतो), पृ० ३४।
हरमुख, वही, पृ० ६४।

३. द्रष्टव्य—हिन्दी शब्द—जोगी, मुमताज़ बेनजीर, पृ० ३१।
परी, वही, पृ० ३३।
महासुन्दर, वही, पृ० ३५।
सादगी, जेबा-निगार, पृ० २३।

४. कदम मेरा नहीं चलता अगाहां, इस जज़बे ने मोड़ान्दा बिछाहान। जेबा-निगार, पृ० ८२।

रहस्यवाद की झलक दोनो प्रकार के काव्यो मे इसी कारण उपलब्ध है। पक्षियो का सदेशवाहक रूप फारसी में भी उसी रूप मे विद्यमान है जैसा कि यहा के प्रेमाख्यानो मे उपलब्ध है। मध्ययुग की कहानी कला की यह अपनी विशेषता है कि पक्षी आदि अमानवीय जीव भी मानवीय सवेदना एव सहानुभूति से भरे हुए थे। राम कथा मे तो बन्दर गिद्ध आदि सभी बराबर भाग ले रहे है।[1] फारसी की ऊहात्मक वर्णन-प्रणाली का प्रभाव दोनो प्रकार के काव्यो मे उपलब्ध है। कतिपय कथानक रूढियों का साम्य भी इन काव्यो मे सहज रूप से मिलता है। स्रोत भी दोनो के एक थे, अत पारस्परिक प्रभाव-साम्य दिखाई पडना आश्चर्यजनक नही है।

(ख) साधनात्मक एकता

कश्मीरी एव हिन्दी के नायक साधक बनकर योगियो का वेश धारण करते हैं। वे हाथ मे किगारी, सिर पर जटा, शरीर मे भस्म तथा कथा पहनकर साधना-मार्ग पर अग्रसर होते है। कश्मीरी प्रबन्धकाव्यो मे मजनू, फरहाद तथा निगार आदि अपनी प्रेमिका की प्राप्ति के लिये फकीर बनते है जबकि अज़ीज, अजब मल्लिक एव मैयार आदि योगी के रूप मे प्रस्तुत किये गये है। इसी भाति हिन्दी-सूफी प्रबन्धकाव्यो मे भी अधिकतर नायक, जोगी का वेश धारण करके नायिका की प्राप्ति के लिये साधना-पथ पर अग्रसर होते है। दोनो प्रकार के अधिकतर नायक अपनी नायिका का प्रथम दर्शन करते ही मूर्छित हो जाते है। इस प्रकार योगियो की वेश-भूषा का साधक के स्वरूप के लिये रूढ हो जाना कोई अनहोनी बात नही दीखती।

साधक सात सोपानो का अतिक्रमण करने के अनन्तर साधना करते हुए चतुर्विध सोपानो मारिफत, प्रेम, वज्द (उन्मादना) एव वस्ल (ईश्वर-मिलन) को प्राप्त होता है। इसी भाति साधना की चार अवस्थाओ का अनुसरण करते हुए वह अन्त मे 'लाहूत' की दशा तक पहुंचता है जहां पर वह आत्मज्ञाननिष्ट हो जाता है और उसे 'हकीकत' अथवा सत्य की उपलब्धि होती है। कश्मीरी सूफी कवियो ने 'वस्ल' को अधिकतर महत्वपूर्ण माना है, किन्तु वास्तव मे वे उस सत्य की उपलब्धि के लिये ही प्रयत्नशील दिखाई देते है। हिन्दी के सूफी कवियो ने भी उस परमतत्व की उपलब्धि को ही अपने जीवन का मुख्य उद्देश्य स्वीकृत किया है।

कश्मीरी मुक्तक कवियो ने जिस अनहद नाद का चित्रण किया है, निसार कृत 'यूसुफ जुलेखा' मे भी उसी प्रकार का वर्णन मिलता है :

---

१. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० ३५३।

सुने वचन एक कोऊ, अनहद दस प्रकार ।
ताकर रूप न देखे । कारन कवन विचार ॥

साधक की जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति एव तुरीयावस्था का उल्लेख कवि निसार की भाति कश्मीरी कवियो ने भी किया हैं । निसार ने कहा है :

ना वह मरे, न मिटे न होई, अपर मरम न जाने कोई ।
जाग्रत, सवन, सुषुप्ति साजा, मुनि तुरीया मह आय विराजा ।

इसी प्रकार कश्मीरी मुक्तक कवि शम्स फकीर ने भी अपनी भावाभिव्यक्ति की है ।[१] दोनो प्रकार के काव्यो मे गुरु का महत्व दर्शाया गया है । बिना 'पीर' या 'गुरु' की कृपा के सिद्धि असभव मानी गई है । उनमे प्रेम की चर्चा हुई है । प्रिय की निश्चयात्मकता के कारण प्रिय प्राप्ति की दुरूहता, या प्रयास के कष्ट, त्याग एव आपा मिटाने की भावना दृढ होती है ।[२] इस प्रेम की अभिव्यक्ति के लिये कश्मीरी कवियो ने फारसी प्रतीको को ग्रहण किया है जबकि हिन्दी के सूफी-कवियो ने अधिकतर भारतीय प्रतीक ही अपना लिये है । दोनों जीव एव परमसत्ता में कोई पारमार्थिक अन्तर नही देखते । 'सोऽहम्' की ध्वनि 'अनलहक' मे प्रतिध्वनित हुई है । उसी का सौदर्य ससार की प्रत्येक वस्तु में प्रतिभासित हो रहा है, अत· लौकिक प्रेम मे भी उन्हे अलौकिक आभास मिलता हे । दोनो ने मिलन के साथ विरह को भी महत्व दिया है एव सयोग के साथ वियोग का वर्णन किया है । प्रेम की एकनिष्ठता के साथ ही उन्होने हृदय की शुद्धि पर बल दिया है । प्रिय के प्रेम की प्राप्ति के लिये कश्मीरी सूफी कवियो ने हिन्दी सूफी कवियो के अनुरूप ही साधना-पथ की कठिनाइयो को पार करके आगे बढ़ने का महत्व दर्शाया है ।

(ग) भाव-पक्ष और शैली के मौलिक स्रोतों की एकता

कश्मीरी सूफी-काव्य के प्रणयन से पूर्व वहा के फारसी सूफी-काव्य के द्वारा भाव और शैली का मार्ग निर्दिष्ट हो चुका था । जिस समय हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यानो की रचना आरम्भ हुई उस समय तक उनके रचयिताओ के लिये वैसी अनेक बाते प्रस्तुत की जा चुकी थी जिनका उपयोग वे किसी न किसी रूप में बड़ी सरलता के साथ कर सकते थे । क्या कथावस्तु, क्या काव्य रूप, क्या रचना-शैली और कथा-रूढियो जैसी सामग्री इन मे से कदाचित किसी के लिये भी उन्हें कोई सर्वथा नवीन मार्ग निर्मित करने की आवश्यकता नही

१. बयाज़े शम्स फकीर, प्रथम भाग, पृ० १८ ।
२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ११५ ।

थी, न उन्हें इनके लिये अधिक प्रयास ही करना पड़ा होगा।[१] फारसी की मनसवी पद्यति मे तो वस्तुत उत्तरी भारत के भी वे सूफी-कवि अपने को नही बचा सके, जिन्होने अपनी प्रेम-गाथाओ को इधर की अवधि मे लिखा।[२] अतः जहा तक हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यानो के लिये कहा जा सकता है, इनके रचयिताओ के सामने तो सभवतः कोई ऐसा उपयुक्त आदर्श भी उपस्थित रहा होगा जिसका अनुसरण करना उन्हें स्वाभाविक जान पडता होगा। यह विशेषकर उनके समय तक प्रचलित उन विशिष्ट अपभ्रंश या प्राकृत आख्यानो के रूप मे रहा होगा जिन मे से कुछ की रचना का उद्देश्य धार्मिक प्रचार भी हो सकता था।[३] उनका ध्यान सभवत. उन फारसी सूफी प्रेमाख्यानो की ओर भी अवश्य आकृष्ट हुआ होगा जिनका निर्माण अधिकतर निजामी (मृ० सन् १३०३ ई०) के समय से होने लगा था और जिनकी कुछ बातो को अपने यहा समाविष्ट कर लेना उनके लिये स्वाभाविक भी था।[४] प० परशुराम चतुर्वेदी का कथन है कि भारत के सूफी प्रेमाख्यानो के लिये कोई न कोई पूर्व प्रचलित भारतीय रचनादर्श वर्तमान रहने के कारण, इधर फारसी साहित्य का प्रभाव उतना नही पड सका जितना दक्खिनी हिन्दी की ऐसी रचनाओ पर पडा।[५] इस सशय का समाधान करते हुए इतना कहना अभीष्ट होगा कि फारसी से प्रभावित कश्मीरी सूफी-साहित्य की तुलना मे हिन्दी का सूफी-साहित्य उसके अत्यन्त निकट जा बैठता है क्योकि दोनों में वैषम्य की अपेक्षा साम्य ही अधिक है और यह वैषम्य अधिकतर विभिन्न परिस्थितियो एवं वातावरण के कारण ही प्रतीत होता है अतः उन पर भी फारसी का प्रभाव उतना ही गहरा पडा हुआ है जितना कश्मीरी सूफी-साहित्य अथवा दक्खिनी हिन्दी की ऐसी रचनाओ में परिलक्षित होता है।

कश्मीरी-सूफी-कवियो के लिये फारसी-सूफी-कवियो और शैवमत एव तांत्रिक साधना का पूर्ववर्ती साहित्य उपलब्ध था अतः उन्होंने शिव को ही परमसत्ता के रूप में ग्रहण किया जैसा कि जायसी ने भी 'पद्मावत' मे शिव की ही महिमा का गान किया है।[६] इस आधार पर यह अवश्य माना जा सकता है कि भारत के प्रबन्धकाव्यो मे हमे वे प्रायः सारी अन्य बाते ठीक उसी रूप मे दीख पडती है जिस में वे मसनवियो के अन्तर्गत पाई जाती है और जिनके आधार

---

१. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, भूमिका, पृ० २१।

२. वही, पृ० १४।

३. वही, पृ० १४।

४. वही, प० १४।

५. वही, पृ० १५।

६. जायसी-ग्रन्थावली, स० आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पंचम सस्करण, पृ० ६०।

पर ही वस्तुतः हम इन दोनो प्रकार की रचनाओ मे विशिष्ट साम्य का भी परिणाम निकाल सकते है।[१] इस भांति हिन्दी के सूफी-प्रेमाख्यानो (चरित-काव्यो की कथा-रूढियो को समाविष्ट करके भी) तथा कश्मीरी-सूफी प्रेमाख्यान दोनो भाव-पक्ष एव शैली के मौलिक स्रोतो की एकता का ही निर्देशन कराते है।

भारत तथा ईरान मे चिरकाल से सम्पर्क स्थापित हो चुका था और प्राचीनतम सूफियो मे ईरानी ही अधिक थे। वास्तव मे इस्लाम का जो पौधा ईरान मे लगा वह सूफीमत के विकसित रूप मे अपना फल लाया,[२] भारत मे आने से पूर्व उन पर बौद्ध धर्म, भारतीय अद्वैतवाद तथा ईसाई धर्म आदि का प्रभाव पड चुका था। इस कारण नवीन जातिया और विचार वाले लोग जो समय-समय पर भारत आये यहा की सभ्यता, सस्कृति और धर्म द्वारा प्रभावित होकर इसी मे लीन हो गये।[३] इसी प्रकार कश्मीर मे भी इस्लामी तसव्वुफ तथा योगशास्त्र का पारस्परिक मेल हुआ। विचारो मे एकता आ गई तथा सिद्धान्तो द्वारा इस्लामी तसव्वुफ मे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से एक परिवर्तन उपस्थित हुआ।[४] शैवमत की प्रधानता के कारण कश्मीरी सूफी-कवियो पर इसका प्रभाव पड़ा और उन्होने शिव को ही परमसत्ता के रूप मे स्वीकार किया। जनता के हृदय मे शैवमत के दार्शनिक सिद्धान्तो के प्रति श्रद्धा जम चुकी थी यद्यपि भ्रांतियो तथा विधि-विधानो के कारण वह केवल दर्शन-मात्र बन कर रह गया था तथा तान्त्रिक-धर्म की प्रधानता हो चली थी, फिर भी शिव को परमसत्ता मानकर कश्मीर के सूफी-कवियो को अपने सिद्धातो के प्रचार की उचित भाव-भूमि मिली क्योकि कुरान का अल्लाह भी सर्वोपरि है।[५] इसी प्रकार मुसलमान जिस समय भारत में आये थे शिवपूजा का अधिक प्रचार था तथा उनकी स्थापना के समय सिद्ध और नाथ योगियो का बोलबाला था। योगी लोग शिव के आराधक थे।[६] नाथपथी और योगी एक ओर पंतजलि की योग-परम्परा से प्रभावित हैं और दूसरी ओर कश्मीरी शैव-तत्र से। सूफियो पर इन योगियो का प्रभाव तो स्पष्ट ही दीख पड़ता है। शिव को परमयोगिन मान कर ही नाथपंथियो ने उन्हे अपना आराध्य माना है और जायसी ने भी इसी कारण से साधक रत्नसेन के

---

१. हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान, पृ० १११।
२. सूफीमत और हिन्दी-साहित्य, पृ० ३८।
३. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० २०
४. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी शअ्यिर, प्रथम भाग, पृ० ५२।
५. Surely we created man of the best stature.
—दि ग्लोरियस कुरान, सू० ९५, ४।
६. सूफीमत और हिन्दी-साहित्य, पृ० ८९।

सहायक के रूप मे शिव को प्रस्तुत किया है। 'आखिरी कलाम' मे तो वे मुहम्मद को शिव का अवतार ही मान लेते है।[1] कश्मीर की परिस्थितियो ने जहा कश्मीरी सूफी कवियो को शैवतत्र को अपना लेने की प्रेरणा दी वहा जायसी जैसे पूर्ववर्ती कवि ने भी इस दिशा मे उनका पथ-प्रदर्शन कर दिया था।

दोनो प्रकार के काव्यो मे परमात्मा तथा सृष्टि सम्बन्धी सभी बाते लगभग एक जैसी है। दोनो का परमतत्व अलख एव अरूप है जिसका नूर संसार मे प्रतिबिम्बित हो रहा है। सौदर्य, प्रेम एव विरहानुभूति के विषय मे प्राय उनके विचार एकरूपता रखते है, इसका प्रमुख कारण विशेष रूप से इस्लाम की विचारधारा का अनुमोदन है। कश्मीर के सूफी कवि शैवमत एव हिन्दी के सूफी कवि अद्वैतवाद आदि से प्रभावित होकर भी इस्लाम के इजादिया मत को कुछ अशो मे स्वीकार करते है यद्यपि वे अधिकतर शुद्दिया मत के समर्थक रहे है। यही उनके विचार-साम्य के मौलिक स्रोत कहे जा सकते है।

दोनो प्रकार के काव्यो मे मसनवी शैली का आधार अपनाया गया है। हिन्दी के सूफी-काव्य, चरित-काव्यो की भाति सर्ग-बद्ध न होकर मसनवी शैली का ही अनुसरण करते है।

(घ) सूफी-सिद्धान्तों के प्रचार की सुसंगठित एक ही प्रकार की पद्धति

सूफी अपने सिद्धान्तो के प्रचार के लिये यात्रा तथा लोक कथाओ का आश्रय लेते रहे। कश्मीर मे सूफीमत का प्रचार 'सूफियाना कलाम' के द्वारा हुआ। इस मे अधिकतर मुक्तक-काव्य की प्रधानता रही क्योकि शब्दो पर बल डालने वाले 'सूफियाना कलाम' का गान समवेत स्वर मे होता है। छन्द मे यह ताल के अनुरूप होता है किन्तु इसके बोल प्रायः भारतीय तालो से भिन्न है। इसके ५४ मुकाम है जिनमे से कुछ के भैरवी, ललित तथा कल्याण आदि भारतीय नाम रखे गये है।[2] कश्मीरी प्रबन्धकारो ने भी सूफी-सिद्धान्तो के

---

१. जो जम आन जिउ लेत है, सकर तिनहू कर जिउ लेब।
सो अवतेर 'मुहम्मद' देखु तहूं जिउ देब।
—जायसी ग्रन्थावली, रामचन्द्र शुक्ल, पचम सस्करण, पृ० ३४६।

२. The Sufiana Kalam, which lays stress on the words or the text of the songs, is always sung in chorus. The metre of the verse falls well into the shape of the tala, the bols of which, incidently, are very different from those of India. It has fifty four maqams (modes) out of which some bear Indian names like Bhairvi, Lalit and Kalyan.
—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ५२७।

प्रचार के लिये कश्मीरी लोक-कथाओ जैसे 'हियमाल' आदि को अपनाया। अभारतीय कथाओ मे भी उन्होंने इन सिद्धान्तो को समाविष्ट करके सूफीमत का प्रचार किया। उन्होने यात्रायो द्वारा भी स्वमत को जन-जन मे फैलाने का प्रयत्न किया। वे कश्मीर से बाहर सूफी-केन्द्रो पर आकर विद्याध्ययन करते थे। कश्मीरी सूफी कवियो जैसे सैफ-उद्-दीन, पीर अजीज अल्लाह हक्कानी, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' एव शम्स फकीर आदि ने इसी पथ का अनुसरण किया।

इसी भाति भारत के हिन्दी सूफी-कवियो ने लोक-कथाओ का सहारा लेकर सूफी सिद्धान्तो का प्रचार किया। निसार ने अभारतीय कथा 'यूसुफ जुलेखा' की रचना की। वे भी यात्राओ द्वारा सूफीमत का प्रचार करते रहे।

४—निष्कर्ष

कश्मीर तथा भारत का सम्बन्ध प्राचीन काल से चला आ रहा है। कुछ समय तक कश्मीर के सुल्तान दिल्ली के सुल्तानो के अधीन न रहे किन्तु फिर भी उनके राजनीतिक सम्बन्ध मे अधिक परिवर्तन न आया। सुल्तान जैन-उल-आब्दीन ने खुरासान, तुर्की, मिस्र एव दिल्ली उपहार भेजे। मुगल-काल मे अकबर के समय से जब आवागमन के साधन और अधिक सुगम हुए तो कश्मीर एवं भारत का सांस्कृतिक सम्बन्ध दृढतम रूप धारण कर गया। कश्मीर मे सूफी-केन्द्रो की स्थापना हो चुकी थी और उसके समानन्तर ही भारत मे भी ऐसे केन्द्रो का उद्भव हुआ था। दोनो केन्द्रो का आदान-प्रदान होता रहा। कश्मीर मे फारसी सूफी प्रबन्ध-काव्यो की प्रचुरता के कारण कश्मीरी प्रबन्धकाव्यो की रचना हिन्दी प्रबन्धकाव्यो के बाद हुई। फिर भी दोनो का आदान-प्रदान होता रहा। कश्मीरी तथा हिन्दी के सूफी-सन्तो ने सूफीमत के प्रचार के लिये सुसंगठित एक ही प्रकार की पद्धति अपनाई। वे दरगाहो पर उर्स के समय मिलते और विचारो का पारस्परिक आदान-प्रदान करते। यह उर्स साल भर मे एक बार होता है और संत के मृत्यु-दिवस पर मनाया जाता है। इस तरह का एक मकबरा श्रीनगर (कश्मीर) में शेख अब्दुल कादिर जीलानी का है और चटगांव मे बाबा फरीद के नाम पर मकबरा बना है, जो वास्तव मे पाकपतन (पजाब) मे है।[1] इस भांति कलापक्ष मे प्रायः वैषम्य होने पर भी उन का भाव-पक्ष साम्य की अधिक क्षमता रखता है।

---

१. सूफीमत साधना और साहित्य, पृ० ३३६।

उपसंहार

'कश्मीरी और हिन्दी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन' से कई महत्वपूर्ण तथ्य दृष्टिगोचर होते है। भारत के अन्य भागो की भाति कश्मीर मे भी सफी-सन्तो का आगमन हुआ। इस कारण इस शोध-प्रबन्ध मे सूफीमत के विकास को दिखलाते हुए कश्मीर सहित भारत मे उसके व्यापक प्रभाव को दर्शाया गया है। सूफीमत एक विश्व-धर्म रहा है क्योकि इसका सार ही विश्व का सार है। इस दिव्य-प्रेम की आड मे सूफीमत ने जो विश्व प्रेम का पाठ पढाया है, वह मानव-समाज के लिये ही नही, प्रत्युत प्राणिमात्र के लिये भी एक वरदान है।

कश्मीर एव भारत के अन्य भागो की सामाजिक, धार्मिक एव राजनीतिक परिस्थितियो के कारण ही सूफीमत का विकास इन स्थानो पर हुआ। कश्मीर मे शैवमत के कारण इसकी भावभूमि पहले से ही तैयार थी और भारत मे भी अद्वैतवाद ने इसके विकास में सहयोग दिया। वास्तव मे भारतीय दर्शन एव बौद्धधर्म का सूफीमत पर पहले ही प्रभाव पड चुका था अत. उन भावो को आत्मसात करके ही वह अपनी यात्रा पर चल पडा था।

जनता ने इस नवीन मत का स्वागत किया। कश्मीर की राजनीतिक परिस्थिति कुछ सुल्तानों की स्वच्छदता के कारण ऊहापोहमय रही अतः तग आई हुई जनता को सूफीमत ने शान्ति का सदेश दिया। कश्मीर के सूफी-केन्द्रो की भाति ही भारत मे भी ऐसे केन्द्र स्थापित हुए और उन केन्द्रो का पारस्परिक आदान-प्रदान चलता रहा। कश्मीर के सूफी-सम्प्रदायो मे से यहा का 'ऋषिया-सम्प्रदाय' अत्यन्त विशिष्ट रहा जिस मे हिन्दुओ की जीवन-पद्धति सुरक्षित रही और हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य की ऐसी मनोरम प्रतिष्ठा हुई जिसका रूप आज भी देखने को मिल रहा है।

कतिपय कश्मीरी सूफी-कवियो ने पजाब की लोक-प्रचलित कथा या दक्खिन की कथाओ का आधार लिया। सैफ-उद्-दीन ने लुधियाना मे रहकर कश्मीर की लोककथा 'हियमाल' की रचना की जिसका प्रणयन उसने हिन्दी सूफी-कवियो से प्रभावित होकर ही किया तथा जिसके नायक एव नायिका दोनो हिन्दू है। अपनी-अपनी भाषा मे लिखे होने पर भी इन प्रबन्ध काव्यो से समवेत स्वर मे एक ही राग निकलता है और वह यह कि साधना पथ पर चलते हुए

ही नायक प्रेम का आधार लेकर अपने साध्य की प्राप्ति कर सकता है। वस्तुत आध्यात्मिकता इस युग की मुख्य एवं मूल शक्ति रही है, अत काव्य उनकी दृष्टि मे साधन था, साध्य नही। कही पर भी उन्होंने अपने काव्य को चमत्कार-पूर्ण बनाने का प्रयत्न नही किया है। उनके प्रबन्ध-काव्य रस कथाए बन गई तथा मुक्तक-काव्य मे भाव-पक्ष के प्राबल्य के कारण ईश्वर-प्रेम ही वैशिष्ट्य रूप धारण कर गया। सूफियो की प्रेम-रस युक्त साधना मे रस-वाद का प्रवेश हो गया है जो श्रोताओ को भी रस-मग्न करने वाला है।

इस तुलनात्मक अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो गई है कि कश्मीरी एव हिन्दी के प्रबन्धकाव्यो मे वैषम्य की अपेक्षा साम्य अधिक है। यह सब-कुछ साधना-स्रोतो के साम्य के कारण ही ऐसा दीखता है, यद्यपि परिस्थितियो एव वातावरण मे पर्याप्त वैषम्य विद्यमान था। वर्ण्य-विषय, पात्रो का चरित्र-चित्रण, प्रेम का परिपाक तथा सूफी-सिद्धान्तो का निर्वाह लगभग दोनो प्रकार के काव्यो मे एक ही तरह से हुआ है। मुक्तक-काव्य मे भी वैषम्य की अपेक्षा साम्य की ही मात्रा अधिक है। वस्तुत दोनो प्रकार के कवि एक ऐसे विश्व-धर्म की स्थापना के इच्छुक प्रतीत होते है जिसमे जाति एव वर्ण के भेद-भाव को कोई स्थान नही। सृष्टि, जीव एव परमात्मतत्व के सम्बन्ध मे इनके विचार समान है। कश्मीरी कवियो ने जिस राजनीतिक भीषणता के कटु यथार्थ का क्रदन किया है, हिन्दी के मुक्तक साहित्य मे वह अनुपलब्ध है।

कश्मीरी एव हिन्दी के सूफी-काव्यो का आदान-प्रदान सूफी केन्द्रो के द्वारा अकबर के समय से ही हुआ। इसी आदान-प्रदान के कारण विश्व-प्रेम की यह भावना परिपुष्ट हो गई।

इस आधार पर कश्मीरी एव हिन्दी-सूफी सतो ने लौकिकता मे जिस अलौकिकता का सदेश दिया है, वह अतुलनीय है। दया, क्षमा, सहानुभूति एव सहकारिता आदि महान् गुण विश्व-प्रेम के ही अनुगामी है। काव्य-रूप की दृष्टि से प्रबन्ध एव मुक्तक दोनो प्रकार की रचनायें प्राप्य है और प्रबन्धकाव्यो की रचना मे प्रत्येक कवि का ध्यान मसनवी शैली की ओर गया है। मुक्तक-काव्य मे अधिकतर सैद्धान्तिक पक्ष को अभिव्यक्ति देने की प्रबलता रही है।

कश्मीर के कवियो ने फारसी छन्दो को अपनाया जबकि हिन्दी के कवियो ने दोहा-चौपाई और कडवक आदि की पद्धति अपनाई। भिन्न-भिन्न प्रतीको को अपनाकर भी इन सूफी-कवियो ने प्रेम तथा सहृदयता से भरी समान प्रचार-प्रणाली अपनाई। उनका भाव-पक्ष प्रबल है किन्तु कला-चमत्कृति के प्रदर्शन की इच्छा कम दिखाई देती है, यद्यपि रूढ़ि-प्राप्त कला-वैशिष्ट्य का उन में अभाव नही दिखाई पडता।

१—कश्मीरी तथा हिन्दी-सूफी प्रबन्धकारों का परिचय

(क) कश्मीरी प्रबन्धकारों का परिचय

१—महमूद गामी

स्थितिकाल—महमूद गामी का जन्म सन् १७६५ ई० मे तहसील अनन्तनाग के शाह-आबाद इलाके मे आरहवारि[1] नाम के गांव में हुआ था जो डूरू से एक मील की दूरी पर स्थित है।[2] वह जीवन-भर वही रहा और मृत्यु होने पर वहीं दफनाया गया जहां आज भी उसकी कबर है। 'तारीख कबीर' के अनुसार कवि की मृत्यु सन् १८५५ ई० में हुई।[3] अपने किसी भी प्रबन्ध-काव्य मे कवि ने आत्मपरिचय नही दिया है।

कवि ने अफगान, सिक्ख तथा डोगरो का शासन देखा।[4] उसके साहित्यिक सहकार वली अल्लाह मतो (सन् १७७९ ई०—सन् १८५९ ईस्वी) ने अपने सूफी प्रबन्ध काव्य 'हियमाल' मे उसकी प्रशंसा इन शब्दों मे की है :

---

१. महमूद गामी के जन्म-स्थान का नाम 'आरहवारि' के स्थान पर 'आडदीदर' भी दिया गया है। इस गांव का नाम अब महमूद-आबाद रखा गया है। मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० २४९।

२. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—महमूद गामी, भूमिका पृ० ६।

३. लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया, ग्रियर्सन, षष्ठ खण्ड, द्वितीय भाग (सन् १९१९ ई०), पृ० २३७।

४. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—महमूद गामी, भूमिका, पृ० ५।

'खसूसन कअशिरयन मज मर्द नामी, छु कम क्या ऐ जमा महमूद गामी।
मे कोरनम तम्य स्यठाह् शाहबादह् दिल शाद, सु ओसय कअशिरयन मज मर्दे उस्ताद।[1]

(कश्मीरी कवियो में इस युग मे महमूद गामी विशेषरूप से क्या कम है। उसने शाह-आबाद मे मेरा दिल बडा प्रसन्न किया। वह कश्मीरी कवियो मे शिरमोर रहा है।)

जाति एवं परिवार—वह मुल्ला वंश से सम्बन्धित था।[2] उसके दो पुत्र थे—हैदरगामी तथा सुल्तान गामी। सुल्तान गामी की मृत्यु पिता के ही जीवन काल मे हुई जबकि हैदर गामी की वंश-परम्परा आगे चलती रही।

रचनाएं—महमूद गामी की सभी रचनाए कश्मीरी भाषा मे है। उसने लैला-मजनू, शीरी-खुसरो, यूसुफ-जुलेखा तथा हासन-रशीद जैसे प्रबन्ध-काव्य फारसी पुस्तको के आधार पर लिखे। उसने कुल मिलाकर नौ मसनविया लिखी जिन मे से यही चार अधिक मुख्य है। 'ये मूल पुस्तको के स्वच्छद अनुवाद तथा सशोधित सस्करण हैं।[3] अप्रौढता के कारण 'लैला-मजनू' कवि का प्रथम प्रयास प्रतीत होता है। इस की रचना का समय अनुल्लिखित है। 'शीरी-खुसरो' दूसरी रचना है जिसका रचनाकाल सन् ११९९ ई० (सन् १७८४ ई०) है।[4] तीसरी मसनवी 'यूसुफ-जुलेखा' जामी के प्रबन्ध-काव्य का एक सक्षिप्त सस्करण है जिसके विषय मे स्वयं महमूद गामी ने कहा है :

'करिथ महमूद व जुलेखा मोख्तसर, दअद्य लदियन आशकन हअज ख्वोश-खबर'[5]
(महमूदगामी ने जुलेखा का सक्षिप्त सस्करण प्रस्तुत कर वियोगी प्रेमियों की गाथा उल्लिखित की।)

यूसुफ-जुलेखा का रचना-काल अनुल्लिखित है। इस प्रबन्ध काव्य की एक हस्तलिखित प्रति उन्नीसवी शताब्दी के अन्त मे कर्नल फ्रेड्रिक अपने साथ जर्मनी ले गए थे और वहा की एक प्रसिद्ध पत्रिका में उन्होने इस पर 'महमूद-

---

१. हियमाल, वली अल्लाह मतो, पृ० ५।
२. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० २४९।
३. वही, पृ० २५२।
४. 'बकश्मीर जबान गुफ़्तीम ख्वशतर, हज़ार दो सद ब बोद अज़ यकी कम, गुज़श्त हिजरत सरदार आलम, ज़ही शीरीं व शीरी मर्दन ओ।' —शीरीं-खुसरो, पृ० १६।
५. यूसुफ-जुलेखा, पृ० २०।

गामी-यूसुफ-जुलेखा' नामक एक लेख सन् १८६५ ई० मे प्रकाशित किया।[1] 'जामी का कलागत अनुकरण न करते हुए उसने इसे चार बह्रो-रमल मुस्मिन, खफीफ मुस्दस, मुतकारिब मुस्मिन, रमल मुस्दस मे लिखा।[2] 'हारुन रशीद' को उसने निजामी के अनुकरण पर लिखा और कवि ने उसे सन् १२५८ हि० (सन् १८४२ ई०) मे समाप्त किया था।[3] उसके 'यूसुफ-जुलेखा तथा 'लैला मज्नू' का उद्देश्य जायसी के पद्मावत की भांति लौकिक प्रेम मे आध्यात्मिक उद्भावना है अर्थात् इश्क मजाजी मे इश्क हकीकी की तर्जुमानी है।[4] इन प्रबन्ध-काव्यो की रचना से उसकी ख्याति अत्यधिक बढ गई और उसे 'गामी' के उपनाम से विभूषित किया गया। प्रबन्ध-काव्यो के अतिरिक्त उसने कश्मीरी बह्रों मे गीतो की भी रचना की।[5]

महमूद गामी ने अपने प्रेमाख्यानो मे किसी गुरु या पीर का उल्लेख नही किया है। वह शाहेवक्त के सम्बन्ध मे भी चुप है जो अफ़गानो के अत्याचार की अतिशयता तथा सिक्खो एवं डोगरो के राज्य मे पडे अकाल के कारण जनता की सामाजिक दुरवस्था का ही प्रमुख कारण हो सकता है। 'शीरी खुसरो' के अन्त में इतना अवश्य सकेत दिया गया है कि उसने इस काव्य की रचना हबीब अल्लाह शाह की आज्ञा के अनुसार की।[6]

कश्मीरी-साहित्य मे उसे सूफी प्रबन्धकाव्य का प्रवर्तक माना जाता है। उसे 'कश्मीर का निजामी' उपाधि से विभूषित किया गया है। कारण, उसका स्वत: यह स्वीकार करना कि कश्मीरी-साहित्य मे उसका वही स्थान है जो फारसी-साहित्य मे निज़ामी का था।[7]

---

१. यूसुफ जुलेखा, प्रकाशक, के० एफ० बुर्कहार्ड, ZDMG. x,/ix,/11i
२. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य, महमूद गामी, भूमिका, पृ० २०।
३. 'हश्त व पजाह साल बाह शथ सन ओस, वओन मे यलि किस्साह ज़ि हिजरत गोमुत ओसा'—हासन रशी, पृ० १६।
४. कश्मीरी भाषा और साहित्य, पृ० १८।
५. द्रष्टव्य—महमूद गामी, संपादक, गुलाम नबी ख्याल, पृ० ८३-१४०।
६. 'बहुक्मे शाह हबीब अल्लाह मुल्के नाम, जि गुफतन वज़ नविशतन याफत तमाम।'
७. 'He is called the Nizami of Kashmir, a title given him, perhaps because of his self asserted claim of holding the same position in Kashmiri literature as is held by Nizami in Persian.

—कशीर, द्वितीय भाग, पृ० ४०५।

२—वली अल्लाह् मतो

स्थितिकाल—वली अल्लाह् मतो का जन्म कब हुआ, यह अभी तक अज्ञात है। इतना अवश्य निश्चित है कि वह प्रबन्धकार महमूद गामी का समकालीन था और उस की मृत्यु सन् १८५९ ई० मे हुई।[१] तहसील बडगाम के वुहन गाव में वह उन्पन्न हुआ था।

उसके विषय मे यह निर्भ्रान्त कहा जा सकता है कि वह महमूद गामी (सन् १७६५ ई०—सन् १८५५ ई०) का साहित्यिक सहकार था। उसके सहवास में उसने काफी दिन व्यतीत किए थे।[२] कश्मीर की लोक-कथा 'हियमाल' को मुफ्ती सदर-उद्-दीन वफाई (मृ० सन् १८०७ ई०)[३] पहले ही फारसी रूप दे चुके थे। इस फारसी मसनवी की ओर स्वय वली अल्लाह् मतो ने अपने सूफी काव्य 'हियमाल' मे यो संकेत किया है।

सदरदीनन फारसी पअठय, छि कअत्याह् आशक हक रब सद्य टअठ्य।[४]
(उसे सदर-उद्-दीन ने फारसी मे लिखा था। परमात्मा के प्यारे कितने ही प्रेमी होते है।)

सदर-उद्-दीन का सम्बन्ध नक्शकन्द सम्प्रदाय से था।[५] वली अल्लाह् मतो ने इसी फारसी 'हियमाल' को अपना मुख्य विषय मानकर कश्मीरी मे उसे सूफी-काव्य का रूप प्रदान किया। यदि मतो ने लगभग ८० वर्ष की आयु भोगी तो उसका स्थितिकाल सन् १७७९ ई० से सन् १८५९ ई० तक ठहरता है।

जाति तथा परिवार—कवि के वंश का परम्परागत सम्बन्ध आखुन पीरजादा वश से था।[६] अपने प्रबन्ध-काव्य 'हियमाल' मे उसने आत्मपरिचय अत्यन्त शालीनता से दिया है।[७] 'जलीलशाह, जमीलशाह तथा गफूर शाह उसके अन्य तीन भाई थे। उसकी अपनी कोई सन्तान न थी।[८] उसने मक्का-मदीना

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य, शीराजा, जुलाई, १९६२, पृ० ६८।
२. मे वाराह शब तमिस निश लग्यमअती छिम, ब्याज़ा अजकरम मजमस दिचअमतम्य—हियमाल, पृ० ५।
३. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—शीराज़ा, जुलाई, १९६२, पृ० ६८।
४. वही, पृ० ५। ५. वही, पृ० ५।
६. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० २७०।
७. न इल्मा न मे अक़्लाह्, न कमालाह्, दितुम दावाह् वोनिम मे हियमाला, वही, पृ० ५।
८. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य, कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० २७०।

की भी यात्रा की थी ।[१]

रचनाएं—जिस समय वली अल्लाह् मतो ने अपना साहित्यिक जीवन आरम्भ किया, उस समय तक महमूद गामी 'लैला-मजनू', 'शीरी-खुसरों' तथा 'यूसुफ जुलेखा' आदि प्रबन्धकाव्यो की रचना कर चका था । कवि को फारसी-कवियो द्वारा गृहीत कथानको की अपेक्षा कश्मीर की लोक प्रचलित कथा को अपनाना ही अधिक रुचिकर प्रतीत हुआ । उसने अरब की 'लैला-मजनू' तथा ईरान की 'खुसरो-शीरी' आदि जैसी कहानियो को नही अपनाया जो सैकडो मील यात्रा करके यहा पहुची थी तथा जिन्होने अपना स्थान बना लिया था ।[२] उसने फिरदौसी या निजामी का अनुकरण करना भी उचित नही समझा । वह फारसी मसनवियो के कथानको की अपेक्षा किसी लोक-प्रचलित कथानक को ही अपने काव्य का विषय बनाने का इच्छुक था । अत उसने कश्मीर मे प्रचलित लोक-कथा 'हियमाल' को ही अपनाया । इस भाव को कवि ने अपने प्रबन्ध-काव्य 'हियमाल' मे भी प्रकट किया है ।[३]

कश्मीर मे 'हियमाल' की लोक-कथा का प्रचार एव महत्व बहुत था ।[४] इस लोक-कथा को सूफी-प्रबन्धकाव्य का रूप प्रदान करते हुए कवि ने अपने दो मित्रो अजीज खा तथा जहीक खां से भी सहायता ली । उन्होने गीतो की रचना की जिन्हे इस प्रबन्धकाव्य मे यथाप्रसग उचित स्थान दिया गया ।[५]

गुरु—प्रभु से एकमेव होने के लिए कवि ने गुरु की महत्ता को प्रमुख स्थान दिया है । उसके पथ-प्रदर्शन के बिना साधक को शैतान पथ-भ्रष्ट करता है ।[६] सुल्तान शेख हम्जा को अपना पीर मानते हुए उसने कहा है ·

'सुहावी नूर त्रअवित सार रम्जह, सु रहबर छुइ चे ह सुल्तान शेख हम्जह'[७]
(जो तुम्हे इस असार संसार मे ईश्वर के सौदर्य का दर्शन करा सकता है, वह

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० २७९ ।

२. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—शीराजा, जुलाई, १९६२, लेख-कश्मीरी लोक अदब, अख्तर मही-उद्-दीन, पृ० २७ ।

३. छना बाकी कथाह काह् आशकानअह्, बकश्मीर जबान कर जन ब्यानह हियमाल, पृ० ४ ।

४. द्रष्टव्य—दलीलह् भूमिका, पृ० २१ ।

५. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० २७१ ।

६. 'छु बेपीरन गुमराह् करान शैतान'—हियमाल, पृ० ६ ।

७. वही, प० ६ ।

सुल्तान शेख हम्जा ही सच्चा गुरु है ।)

३—मौलवी सदीक अल्लाह

स्थितिकाल—मौलवी सदीक अल्लाह की मसनवी 'बहराम व गुल अन्दाम' का रचनाकाल ग्रन्थ के अन्त मे सन् १२७० हि० (सन् १८५३ ई०) दिया गया है ।[1] सिक्खो का शासन कश्मीर पर सन् १८१६ ई० से सन् १८४६ ई० तक रहा और तदनन्तर डोगरो का शासन आरम्भ हुआ । इससे स्पष्ट है कि कवि ने सिक्ख-शासन के समय ही जन्म लिया होगा और जब उसने इस मसनवी की रचना की होगी, वह प्रौढावस्था को प्राप्त हुआ होगा । उसने डोगरा-शासन के भी कुछ वर्ष देखे होगे ।

गुरु या पीर—मौलवी सदीक अल्लाह के गुरु या पीर कौन थे, यह निश्चित रूप से कहा नही जा सकता । इसके विषय मे उसने अपने प्रबन्ध-काव्य मे कोई सकेत नही दिया है ।

माता-पिता—मौलवी सदीक अल्लाह के माता-पिता तथा मित्रादि का कोई उल्लेख नही मिलता । इस ग्रन्थ द्वारा उसके सामाजिक जीवन पर भी कोई प्रकाश नही पडता ।

४—सैफ़-उद्-दीन मंतकी

सैफ़-उद्-दीन तारबली ने अपने प्रबन्धकाव्यो 'वामीक-अजरा' तथा 'हियमाल' मे अपना किंचित्-मात्र परिचय दिया है ।

निवास स्थान—कवि का मूल निवासस्थान तारबल (कश्मीर) था किन्तु अन्न-जल के कारण ही उसे लुधियाना (पजाब) जाना पडा ।[2]

स्थितिकाल—कवि का जन्म अभी अज्ञात है । उसकी मृत्यु सन् १८७४ ई० मे हुई थी ।[3] जीवन का अधिकतर समय उसने लुधियाना (पजाब) मे ही व्यतीत किया ।

जाति अथवा माता-पिता—कवि ने अपने पिता का नाम नसर अल्लाह

---

१. 'कि ऐ अख्यात रा तारीख ऐं अस्त,
हज़ार दो सद व हफताद ऐं अस्त ।' गुल अन्दाम, पृ० १६ ।

२. 'जि अव्वले तारबल असलुक मे खानअह, परन चली रिजकि फल दर लुधियाना', पृ० ८५ ।

३. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य, कश्मीरी ज़बान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ३०७ ।

मगफूर तथा दादा का नाम मीर फज़ल अल्लाह मबरूर बताया है।[1] वह मीर जाति से सम्बन्ध रखता था किन्तु उसने अपने आपको एक फकीर की सज्ञा दी है।[2] वह अत्यन्त विनम्र था। 'वामीक-अजरा' के प्रारम्भ मे उसने अपने उन पापो के लिए क्षमा-याचना की है जिनके द्वारा वह अपना जीवन कुछ मलिन-सा मानता है। अपने इन तथाकथित कुकर्त्तव्यो पर उसने अत्यन्त लज्जा प्रकट की है।[3]

पीर अथवा गुरु—'वामीक अजरा' के अत मे कवि ने अपने पीर का नाम शेख अहमद कश्मीरी बताया है।[4]

रचनाएं—कवि के दो प्रबन्धकाव्य उपलब्ध है—प्रथम 'वामीक अज़रा' तथा द्वितीय 'हियमाल'। 'वामीक अजरा' का रचनाकाल कवि ने काव्य के अन्त मे सन् १२७१ हि० (सन् १८५४ ई०) दिया है।[5] 'हियमाल' का रचनाकाल सन् १२८० हि० (मन् १८६३ ई०) है।[6] दोनों रचनाओ मे कवि ने शाहेवक्त की प्रशंसा नही की है।'वामीक अजरा' की रचना कश्मीर मे हुई तथा 'हियमाल' की रचना लुधियाना (पजाब) मे की गई।[7] अपनी रचनाओ मे उसने 'सैफ' उपनाम का ही उपयोग किया है :

---

१. बपूरे मीर नसर अल्लाह मगफूर, सु नूर मीर फ़ज़ल अल्लाह मबरूर—वामीक अज़रा, पृ० ३६।
२. 'फकीराह छुस तिलक तारहबलुक मीर', वही, पृ० ३६।
३. 'करान छुस तोबह सारिनअय वाहयातन, इल्लाही करतअह आसान मुश्किलातन, बो बन्दअह च्योन शर्मन्दअह गुनाहगार, दिलुक सफहा सियाह कओरमुत तबाह-कार।—वही, पृ० १।
४. 'मुरीद शेख अहमद पीर कश्मीर' —वही, पृ० ३६।
५. 'सन् हिजरी सतत अक प्यठय त बाहशत, रजब ह्यथ जून पछ दिवअह लगि द्वोगन सत—वही, पृ० ३५।
६. 'मुहर्रम गव सफर नोबर शिकालस रम गम बोद अफ प्यव बहरह सालस, पनुन दर साले फारिग मालि इत्माम, फरागे बाले यारान फाले अजाम—वही, पृ० ८४।
   और भी—दर शहर लुधियाना की तसनीफ करदह सन् १२८० हि०—वही, आरभिक पृ०।
७. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ३०४।

'कि' सँफ 'अहले तव्वकुल शुद्ध मुबारक'।[१]

(उस एक प्रभु पर किया गया विश्वास ही वन्दनीय एव पवित्र है।)

५—मक़बूल शाह क्रालवारी

निवासस्थान—मकबूल शाह क्रालवारी का जन्म कस्बा नागाम के उत्तर-पश्चिम मे दूध गगा नहर के तट पर बसे क्रालवारी गाव मे हुआ था।[२] यह गाव श्रीनगर से लगभग पद्रह मील दूर तहसील बडगाम में स्थित है। इस गाव के विस्तृत मैदान तथा छोटी-छोटी पर्वत-श्रृखलायें प्राकृतिक-सौदर्य की अनुपम छटा से परिपूर्ण दीखती है।[३]

जाति तथा परिवार—वे पीरजादा थे।[४] उनकी वशावली से ज्ञात होता है कि वे ख्वाजा अब्दुल कद्दूस के पुत्र थे।[५] उनके परिवार का निर्वाह पीर-मुरीदी पर चलता था किन्तु वे इस व्यवसाय से सन्तुष्ट नही थे। उनका संपूर्ण जीवन कष्ट में ही बीता।[६] उनके पुत्र का नाम पीर अलीशाह था। जब यह केवल छ: मास का था तभी मकबूल शाह की मृत्यु हुई थी। उनकी एक पुत्री भी थी जो श्रीनगर के मुहल्ला कैलाशपुर के किसी पीरजादा वश मे ब्याही गई थी।[७] मकबूल शाह को सूफी-सिद्धान्तो की दीक्षा अपने पिता से मिली थी जो स्वय बहुश्रुत तथा सूफी-सत था।[८]

स्थितिकाल—उनके जन्म तथा मृत्यु के विषय मे निभ्रान्त रूप मे कुछ भी नही कहा जा सकता। इस विषय मे विद्वान मतैक्य नहीं है। प्रो० हामदी ने उनका जन्म सन् १८२० ई० तथा निधन सन् १८५५ ई० माना है।[९] इस

---

१. वामीक अजरा, पृ० २६।

२. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, तीसरा भाग, अब्दुल अहद आज़ाद, जम्मू एण्ड कश्मीर अकादमी आफ आर्ट्स, कल्चर, एण्ड लेंग्वेजिज, श्रीनगर, सन् १९६३ ई०, पृ० ६९।

३. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य—गुलरेज, सम्पादक-मुहम्मद यूसुफ टेग, पृ० ५।

४. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, तीसरा भाग, पृ० ८४।

५. वही, पृ० ६९।

६. वही, पृ० ७०।

७. वही, पृ० ७९।

८. वही, पृ० ६९।

९. वही, पृ० ७९।

आधार पर वे केवल ३५ वर्ष जीवित रहे। किसी विद्वान ने उनका जन्म सन् १८२० ई० तथा निधन सन् १८७१ ई० स्वीकार किया है जिसके अनुसार उन्होने ५१ वर्ष आयु भोगी।[1] श्री अब्दुल अहद आजाद का विचार है कि उनकी मृत्यु सवत् १९३२ वि० (सन् १८७५ ई०) मे हुई और इस प्रकार उन्होंने ५५ वर्ष की आयु भोगी।[2] अवतार कृष्ण रहबर ने कवि का जन्म अन्य विद्वानो के समान ही सन् १८२० ई० माना है। यह वह समय था जब कश्मीर पर सिक्खो का राज्य था। कवि ने अफगान-शासन का अत्याचार भी देख लिया था।[3] इन तर्को के आधार पर यही कहना युक्ति सगत प्रतीत होता है कि उनका जन्म सन् १८२० ई० मे हुआ था और मृत्यु सन् १८७५ ई० में हुई। उन्होने 'गुलरेज' काव्य की रचना सन् १८६९ मे की, जिससे उनकी प्रौढावस्था का ही प्रमाण मिलता है। इस भाति वे अवश्य ५५ वर्ष जीवित रहे होगे।

रचनाएं—मकबूलशाह की सभी रचनाओ मे से उनकी 'गुलरेज़' सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। कवि ने इस काव्य की समाप्ति पर इसका रचना-काल सन् १२८६ हि० (सन् १८६९ ई०) दिया है।[4] यह काव्य छोटो से लेकर बडो तक पुरुषो, अविवाहिता कुमारियो, गृहस्थियो, युवको, ऋषियो तथा प्रौढो आदि सब को मौखिक रूप से स्मरण है।[5] महमूद गामी की यूसुफ जुलेखा, लैला-मजनू तथा शीरी-खुसरो की भाति इसका आधार भी फारसी का एक ग्रन्थ रहा है। फारसी में इस प्रकार के काव्य का प्रणयन सर्वप्रथम जिया-उद्-दीन नख्शबीन ने किया था। नख्शबीन एक स्थान है जो समरकन्द के निकट ही स्थित है।[6] कवि ने कथारम्भ मे पूर्ववती फारसी कवि जिया-उद्-दीन नख्शबीन का उल्लेख इन शब्दो मे किया है :

दलीला बोज दर्द व सोज आमेज, छु थावमुत रअवियन यथ नाव गुलरेज़
यमियुक रायवी ज़ियाई नख्शबी छु, बकोल रास्त फरमावान सही छु।[7]

---

१. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—शीराजा, जुलाई १९६२, पृ० ६९।
२. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीर ज़बान और शायरी, तीसरा भाग, पृ० ८०।
३. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य—गुलरेज़, मासिक पत्रिका, अक ३, वर्ष जनवरी सन् १९६१, प्रकाशक, १, कुमार होटल, कोर्ट रोड, श्रीनगर, कश्मीर, पृ० १३।
४. सन बाह शथ शेह पेठय शीतन बराबर, बहा रस मज़ इ नोस्दवअह वोत ता सिर।—गुलरेज़, सम्पादक, मुहम्मद यूसुफ टेग, २४०।
५. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य—वही, पृ० १५।
६. वही, पृ० २१।
७. वही, पृ० ५४।

(आप गुलरेज की कथा का श्रवण करे जो अत्यन्त करुणाजनक है। इसकी रचना जिया-उद्-दीन नख्शबीन ने की है। उसी के अनुसार यहा उसका सीधे-सादे ढग मे कथन किया जाता है।)

जिया उद्-दीन नख्शबी फारसी का सूफी-कवि था।[१] गुलरेज-बहरीन की एक लोक-कथा रही है और जिया-उद्-दीन ने सर्वप्रथम उसी को फारसी मे उल्लिखित किया। मकबूल शाह की मसनवी 'गुलरेज' मे उसी के आधार पर संक्षिप्त घटनाओ का सविस्तृत वर्णन तथा सविस्तृत घटनाओ का सक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है।[२]

मकबूल शाह के 'गुलरेज' की दो विभिन्न प्रतिया उपलब्ध हुई है। पहली प्रति मुहम्मद यूसुफ टेंग, जम्मू एण्ड कश्मीर अकादमी आफ आर्ट्स, कल्चर एण्ड लेंग्वेजिज (सन् १९६५ ई०) द्वारा प्रकाशित और दूसरी प्रति गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीरगंज, श्रीनगर द्वारा प्रकाशित प्राप्य है। दोनों के पाठ में काफी अन्तर है किन्तु काव्य के अन्त मे रचना-समय सन् १२८६ हि० (सन् १८६९ ई०) एक-जैसा ही दिया गया है।

कवि की अन्य रचनाए इस प्रकार है :—

१—ग्रीस्य नामा, २—बहार नामा, ३—पीरनामा, ४—मंसूर नामा, ५—कुल्यात मकबूल, ६—आब नामा, ७—बेबूझनामा तथा ८—नार नामा।[३]

मकबूल शाह क्रालवारी सूफी साधक था। वह कादिरी तथा कुब्रवी सम्प्रदायो के व्यावहारिक सिद्धान्तों से परिचित था। मौलाना रूम के दीवान का अध्ययन वह अधिकतर यात्रा के समय करता था।[४] अपने पिता से ही कवि ने आध्यात्मिक शिक्षा ग्रहण की थी। अरबी तथा फारसी में निपुण होने के अतिरिक्त वह सुलेख की कला मे भी सिद्धहस्त था।[५] अपनी रचनाओ मे वह मकबूल उपनाम का प्रयोग करता था।[६]

६—वहाब खार

निवास स्थान—वहाब खार का निवासस्थान, ख्रिव शार, तहसील पुलवामा,

---

१. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—वही, पृ० २१।

२. मूल कश्मीरी के लिए द्रष्टव्य—गुलरेज (मासिक पत्रिका), पृ० ७, ८।

३. द्रष्टव्य, गुलरेज, मुहम्मद यूसुफ टेग द्वारा सपादित, पृ० १३-१४।

४. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, तीसरा भाग, पृ० ८२।

५. वही, पृ० ७५।

६. द्रष्टव्य—गुलरेज़, सपादक मुहम्मद यूसुफ टेंग, पृ० २४१।

कश्मीर था।[1]

स्थितिकाल—कवि का जन्म सन् १८४२ ई० मे हुआ था। सत्तर वर्ष की आयु भोगने के पश्चात् उसका परलोक सन् १९१२ ई० मे हुआ।[2] वह अत्यन्त लब्धप्रतिष्ठित कवि था। कहते है कि कश्मीर के महाराजा अमरसिह ने उन्हे तीन सौ रुपये तथा एक घोडा सवारी के लिये भेजा किन्तु उन्होने सब कुछ सम्मानपूर्वक लौटा दिया।[3]

व्यवसाय तथा परिवार—कवि के परिवार का परम्परागत व्यवसाय लुहार बनना था। उसके पिता का नाम हअती (हातफी) लुहार था जो स्वयं भी कवि था।[4] वहाब खार के तीन पुत्र थे—इस्माइल, कमाल तथा लालह लुहार।[5]

वहाब खार का बडा भाई कादिर भी कवि था किन्तु वह शीघ्र ही काल-कवलित हो गया।[6]

गुरु—वहाब खार प्रसिद्ध कलन्दर अहमद साहब मचाम का शिष्य था।[7] वह अनपढ होकर भी पर्याप्त रूप मे अनुभवी था।[8]

काव्य—वहाब खार का मुक्तक-काव्य 'सूफी शअयिर, द्वितीय भाग' मे सग्रहीत है।[9] कवि की मुक्तक कविताओ का एक संग्रह 'बयाजे वहाब खार,' के नाम से भी उपलब्ध है। कवि की गजलो मे से 'माछ तुलअर' (मधु मक्खी) अत्यत प्रसिद्ध है। कवि का लघु प्रबन्ध-काव्य तोतह (तोता) एक विशेष रचना है। इसका कथानक जायसी के 'पद्मावत' के नागमती-सुआ-खण्ड तथा रत्नसेन सुआ-सवाद-खण्ड से कुछ समानता रखता है। कवि ने अपने गीतो तथा गजलो मे अधिकतर 'वहाब' उपनाम का ही उपयोग किया है।[10] कई गजलो तथा गीतो

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० ३९८।

२. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, भूमिका, पृ० ८३।

३. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० ३९९।

४. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० ८३।

५. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० ३९९।

६. वही, पृ० ३९९। ७. वही, पृ० ३९९।

८. वही, पृ० ४००।

९. द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० १४९-१८०।

१०. द्रष्टव्य—वही, पृ० १६७।

पर उर्दू की पूरी छाप है ।[१]

७—पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', योरखुशीपुर

स्थितिकाल—पीर गुलाम मही-उद्-दीन के जन्म तथा मृत्यु के विषय मे अभी तक निर्भ्रान्त रूप से कुछ नही कहा जा सकता । बाह्य-साक्ष्य के आधार पर अब्दुल अहद आजाद का यह मत विचारणीय है कि उनकी मृत्यु सन् १९४७ ई० से लगभग तीस-पैंतीस वर्ष पूर्व हुई ।[२] इस अनुमान के आधार पर उनकी मृत्यु सन् १९१५ ई० मे कल्पित की जा सकती है जैसा कि मुहम्मद यूसुफ टेंग को भी मान्य है ।[३] अन्त. साक्ष्य के आधारस्वरूप स्वय कवि ने अपनी अन्तिम रचना 'सोहनी मेयवाल' के अन्त मे उसका रचना-काल सन् १३०५ हि० (सन् १८८७ ई०) प्रस्तुत किया है ।[४] यदि इस तथ्य को स्वीकार कर लिया जाये कि इस रचना के अनन्तर उन्होने कुछ उपयुक्त होगा । आज़ाद महोदय ने इस बात का समर्थन करते हुए कहा है कि उन्होने 'लम्बी आयु पाई ।[५] कवि ने प्रथम रचना 'लैला-मजनू' का समय सन् १२९३ हि० (सन् १८७६ ई०) दिया है,[६] अत' यह निर्विवाद रूप से स्वीकार किया जा सकता है कि इस रचना का प्रणयन उन्होने लगभग तीस वर्ष की आयु मे किया होगा जिसके अनुसार उन का जन्म समय सन् १८४६ ई० निश्चित करने मे कोई सन्देह नही होना चाहिये । इस कारण यदि उनका स्थिति-काल सन् १८४६ ई० से सन् १९१५ ई० तक निर्धारित किया जाय तो उस के अनुसार वे कुल ६९ वर्ष जीवित रहे होगे ।

---

१. द्रष्टव्य—बयाज़े वहाब खार, प्रथम भाग, प्रकाशक, गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद, महाराज रणवीर गज बाजार, श्रीनगर, पृ० २, ३, ७ ।

२. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, तृतीय भाग, पृ० ३८५ ।

३. रसूल मीर, लेखक मुहम्मद यूसुफ टेंग, प्रकाशक, जम्मू व कश्मीर कल्चरल अकादमी, श्रीनगर (सन् १९६० ई०), पृ० १७ ।

४. अ्वाह् शत पाच प्यठ सन् ओस तोत्ताम,
तपुन किस्सह तसनीफ इतमाम ।—सोहनी मेयवाल, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० ४७ ।

५. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी । तृतीय भाग, पृ० ३८५ ।

६. सन् बाहशत बेयि हश्ता दो शश ओस्मो, मे कओर यि किस्सह इश्क ताजह मजूम ।—लैला मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० ८३ ।

कवि ने अपनी रचना 'जेबा-निगार' का रचना-समय सन् १२६३ हि० (सन् १८७६ ई०) दिया है ।[1] इस मे उन्होने अपने पूर्ववर्ती कवि रसूल मीर शाह आबादी का उल्लेख किया है ।[2] इससे यह स्पष्टतया सिद्ध होता है कि वह उस का परवर्ती कवि था । गुलाम नबी ख्याल ने पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' का स्थितिकाल सन् १८६५ ई० से सन् १६२१ ई० तक माना है,[3] लेकिन उस का यह तर्कहीन अनुमान युक्ति सगत प्रतीत नही होता । वह सिक्ख तथा डोगरा-शासन मे कश्मीरी सूफी-काव्य की अभिवृद्धि करता रहा । उनका कद छोटा, रग सावला तथा दृष्टि अत्यन्त विलक्षण थी । वे एकान्त-प्रेमी थे ।[4] उनका व्यवहार शालीनता-पूर्ण था ।[5]

जन्म-स्थान, परिवार तथा जाति—पीर गुलाम मही-उद् दीन 'मिसकीन' का जन्म मिसकीन-पुर-खुशीपुर, तहसील कुलगाम मे हुआ था । उनके दो पुत्र तथा चार पुत्रिया थी ।[6] वे पीर जाति से सम्बन्ध रखते थे और प्रत्येक वर्ष अपने मुरीदो से मिलने के लिये पजाब तथा पर्वतीय प्रदेशो मे जाया करते थे ।[7]

गुरु या पीर—उन्होने अपने-आपको बगदाद के शाह जीलानी का सेवक मानकर उसे पीर कामिल की उपाधि दी है

छुमै ब ख़ाकसार शाह जीलान, अछयव किन्य लारअह बअह सुइ बगदाद ।[8]
(मै शाह जीलानी का चरण-सेवक हू । मै उनके दर्शनो के लिये बगदाद जाने को उत्सुक हूं ।)

इसके साथ ही कवि ने बा सफा शेख मुस्तफा रफीकी को भी अपना पीर मानते हुए कहा है :

---

१. बाह शत नमित तत ब्ययि त्रे ईजाद, गअमुत अज हिजरत अकदस चह थव याद—जेबा-निगार, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० ८६ ।
२. सु मीरशाह आबअदो दर जमाद, सपुन अव्वल बहर मु इश्तहारा, वही, पृ० ८६ ।
३. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—शीराजा, जुलाई (सन् १९६२ ई०), पृ० ७० ।
४. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, तृतीय भाग, पृ० ३८५-३८६ ।
५ न छुस बो आक़लाह न हुशियारा—ज़ेब निगार, पृ० ८६ ।
६. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, तृतीय भाग, पृ० ३८५ ।
७ वही, पृ० ३८६ ।
८. लैला-मजनू, पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन', पृ० ८३ ।

हम्द अल्लाह मे पीर बा सफा छुम,
तसुन्द इस्मे मुबारक मुस्तफा छुम,
रफीकी रवान्दानुक शहजादह ।[१]

(ईश्वर की कृपा से मेरा गुरु बा सफा है जिनका पूरा नाम मुबारक मुस्तफा है और जो रफीकी वश का राजकुमार है ।)

रचनाएं—कवि की तीन रचनाएं उपलब्ध हैं—लैला मजनू, ज़ेबा-निगार तथा सोहनी-मेयवाल इन रचनाओ में उन्होने अपना उपनाम 'मिसकीन' रखा है ।[२] प्रत्येक कृति के अन्त मे उसका रचना-समय दिया गया है ।[३] किसी भी रचना मे कवि ने शाहेवक्त की प्रशसा नही की है, केवल किंचित्-मात्र आत्म-परिचय अवश्य दिया है ।[४] अन्य सूफी-कवियो की भाति उन्होने सांसारिक बधनों से मुक्ति पाने के लिये इश्क-हकीकी को ही प्रधानता दी है ।

भाषा—कवि की भाषा मे हिन्दी, उर्दू तथा पजाबी के शब्द मिलते है । इसका प्रमुख कारण उनका कश्मीर से बाहर आकर अपने मुरीदो से मिलने के अतिरिक्त और कुछ नही हो सकता ।

८—पीर अज़ीज अल्लाह हक्कानी

जीवन परिचय—हक्कानी का जन्म सन् १२७१ हि० (सन् १८५४ ई०) में कश्मीर के एक प्रतिष्ठित एवं शिक्षित परिवार मे सोअय बुग, तहसील बडगाम में हुआ ।[५] उनके पिता हाफिज शाह मही-उद्-दीन फारसी तथा अरबी के अच्छे ज्ञाता थे ।[६] कवि के परिवार की वंशावली इस प्रकार दी गई है :[७]

---

१. जेबा निगार, पृ० ३ ।

२. द्रष्टव्य—लैला-मजनूं, पृ० ८३ ।
द्रष्टव्य—ज़ेबा-निगार, पृ० ३, ८६ ।
द्रष्टव्य—सोहनी मेयवाल, पृ० ४८ ।

३. द्रष्टव्य—लैला-मजनू, पृ० ८३
द्रष्टव्य—ज़ेबा-निगार, पृ० ८६ द्रष्टव्य—सोहनी-मेयवाल, पृ० ४७ ।

४. गुलाम मही-उद्-दीन छुम जअहिरुक नाव
ब मिसकीनी तखअलुस तत बदल आव—ज़ेबा निगार, पृ० ८६ ।

५. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ४३४ ।

६. हक्कानी, लेखक, मौलाना फितरत कश्मीरी, प्रकाशक, कल्चरल अकादमी, जम्मू-कश्मीर, प्रथम सस्करण (१९५९), पृ० ७-८ ।

७. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७ ।

शाह कासिम हक्कानी
।
शाह कुतुब-उद्-दीन
।
शाह मुहम्मद सिद्दीक
।
शाह मुहम्मद शाहद
।
शाह मोमन
।
शाह फजल
।
शाह मुस्तफा
।
हाफिज़ शाह मही-उद्-दीन
।
अजीज़ अल्लाह हक्कानी

जब वे पच्चीस वर्ष के थे तभी बट्टवारा, श्रीनगर मे आकर रहने लगे थे। यहां वे केवल दो वर्ष रहे और आयु के शेष वर्ष उन्होने यात्रा तथा पीर-मुरीदी मे व्यतीत किये। उन्होंने लद्दाख, यारकन्द तथा भारत के विभिन्न स्थानो की यात्रा की। वे लाहौर मे दातागंज बख्श के मज़ार पर साढे चार वर्ष रहे।[१] वे संगीत प्रेमी थे क्योकि उनके वंश मे तसव्वुफ परम्परा से चला आ रहा था। उन्होने कई पीरो का समागम भी प्राप्त किया था।[२] उन्होने कुल ७५ वर्ष की आयु भोगी तथा सन् १३४६ हि० (सन् १९२७ ई०) मे ये परमधाम को सिधार गए।[३] जिनाजा खानकाह मौला श्रीनगर के प्रागरण में पढ़ा गया जिस मे सहस्रो

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ४३४-४३५।

२. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—हक्कानी, लेखक मौलाना फितरत, पृ० १०।

३. बराय साले वस्ल ओजहन्दग इस्प राइ दिल
१३४६
अनीसन जान गमगीनान सरदशम दादह ईमाई—मुमताज़ बेनज़ीर, पृ० १३५।

लोग सम्मिलित थे।[१] उनका मजार मुहल्ला नरपीरस्तान श्रीनगर मे आज भी विद्यमान है जहा हिन्दू-मुसलमान दोनो क्षमा-याचना के लिये जाते हैं।[२] असद अल्लाह कलाशपुरी ने कवि की रचना 'मुमताज बेनजीर' मे एक क्षेपक मर्सिया (शोकगीत) मे अपना शोक भी प्रकट किया है।[३]

सम्प्रदाय—अपने प्रबन्ध-काव्य 'मुमताज बेनजीर' मे कवि ने अपने सप्रदाय सम्बन्धी विचारो को इस प्रकार प्रकट किया है :[४]

कादिरी छुस गुलाम हल्कह् बगोश, राह कुब्रवी मे रहबरी लो लो
सुहरवर्दी व हसीनुक इरशाद, छुम बराहे कलन्दरी लो लो।

(मुझ पर कादिरी सप्रदाय का प्रभाव पडा हुआ है और मै उसका दास हू। कुब्रवी सम्प्रदाय के मार्ग पर चलने का मुझे पद-प्रदर्शन मिल रहा है। सुहरवर्दी के सिद्धान्तो की आज्ञा मुझ साधक के लिये शिरोधार्य है।)

जिस समय वे लाहौर मे थे, उसी समय वजीराबाद मे काजी अहमद अल्लाह साहब की सगति मे रहने के कारण वे कादिरी सिद्धान्तो से प्रभावित हुए। इसी प्रकार चौमक मीरपुर मे उन्होने हजात सागे शाह साहब से चिश्ती सम्प्रदाय के सिद्धान्तो का ज्ञान प्राप्त किया। शिमला मे हजरत सैयद मुहम्मद सुहरवर्दी से उन्होने सूफी-सिद्धान्तो का ज्ञान प्राप्त किया। कुब्रवी सम्प्रदाय के सिद्धान्तो का ज्ञान कवि को शेख लस्सा साहब पट्टी से पहले ही प्राप्त हुआ था।[५] इसी भाति जब कवि को लगभग तीन वर्ष लद्दाख मे रहने का अवसर मिला, तो उन्हे बौद्ध-सन्तो एव महात्माओ का ससर्ग प्राप्त करके बौद्ध-मत के उद्देश्यो तथा सिद्धातो के ज्ञान चीज है जो काबा मे मौजूद है और मन्दिर मे नही।[६]

कवि के पूर्वज शाह कासिम हक्कानी पीर शम्स-उद्-दीन शाली (गुरु मीर सैयद अली हमदानी) की पाचवी पीढी मे थे। वे निर्भीक होने के कारण ही

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ४३७।

२. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—हक्कानी, लेखक, मौलाना फितरत, पृ० १३।

३. बगुफ्ता सर बर आवरदह दलम बारद गरवसलश
बिहिश्त जाइ अजीज आमद बपाय शाह हक्कानी—मुमताज बेनजीर, पृ० १३४।

४. मुमताज बेनजीर, पीर अजीज अल्लाह हक्कानी, पृ० २६।

५. मूल उर्दू के दिये द्रष्टव्य—हक्कानी, लेखक, मौलाना फितरत कश्मीरी पृ० ६।

६. हेच जाये नेस्त काजा जलवह जानानह नेस्त, चेस्त अन्दर हैरानीम कि दर बुतखानह नेस्त—वही, पृ० ८।

'हक्कानी' नाम से प्रसिद्ध हुए । उन्हे शेख याकूब सर्फी का ससर्ग भी प्राप्त था ।[1] इसी कारण कुब्रवी सम्प्रदाय से अत्यधिक प्रभावित होने के कारण ही कवि पीर अजीज हक्कानी ने अपने दोनो सूफी प्रेमाख्यानो मे सैयद अली हमदानी की प्रशसा की है । कवि ने अन्य सम्प्रदायो के प्रति सम्मान प्रकट करके उनके सिद्धान्तों का भी पालन किया ।

रचनाएं—कवि की निम्नलिखित रचनाए प्राप्य है

जौहरे-इश्क, मुमताज बेनज़ीर, गुलदस्ता बेनजीर, चन्द्रवदन, गुलबने इश्क, मेहरू गुल अन्दाम, जगे इराक, किस्सा दुशनान ।[2]

इन रचनाओ मे से 'मुमताज़ बेनजीर' तथा 'चन्द्रवदन' प्रसिद्ध सूफी-काव्य है जिन मे इश्क-मजाजी की अपेक्षा इश्क हकीक़ी को ही जीवन का लक्ष्य माना गया है । 'चन्द्रवदन' के अन्त मे उसका रचना-काल सन् १३२० हि० (सन् १९०२ ई०) दिया गया है ।[3]

सूफी कवि होने पर भी उसने अपने समय की दुर्दशा जनता की अज्ञानता एव दीनता तथा उनके जीवन-स्तर पर प्रभाव डाला है ।[4] उसकी रचनाओ पर फारसी का प्रभाव भी परिलक्षित होता है ।[5]

९—हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' सरायबली

जीवन-वृत्त—हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' के जीवन-वृत्त के सम्बन्ध मे विद्वानो मे मतभेद है । अभी तक कवि के विषय मे प्रामाणिक रूप से कुछ भी प्रकाश मे नही आया है । कई विद्वानों ने उन्हे तथा पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' योरखुशीपुर को एक ही व्यक्ति मानकर सतोष किया है ।[6] कई लोगो

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ४३४ ।

२. द्रष्टव्य—हक्कानी, लेखक, मौलाना फितरत कश्मीरी, पृ० १४ ।

३. साहस छि त्रेहत तअ वुह ज्यादअह अज सालि हिजरत थव याद—चद्रवदन, पृ० १६ ।

४. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—हक्कानी, ले० मौलाना फितरत कश्मीरी, पृ० १९ ।

५. वही, पृ० १८ ।

६. कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ३८५-३९२ मे आजाद महोदय ने केवल पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' योरखुशीपुर का ही जीवन-वृत्त प्रस्तुत किया है । ऐसा इसी भ्राति के आधार पर हुआ है क्योकि लेखक महोदय ने दोनो को एक ही कवि के रूप मे स्वीकार किया है । हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' सरायबली के प्रति लेखक की उपेक्षा का कारण यही है ।

की यह धारणा है कि हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' के पीर ही पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' थे अतः शिष्य हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' ने गुरु का ही नाम तथा उपनाम ग्रहण करके अपनी रचनाओ का प्रणयन किया।[1] यह धारणा केवल भ्रम-पूर्ण है। वास्तव मे उन दोनो का जन्म-स्थान, पीर तथा सम्प्रदाय आदि सब कुछ एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न था, अतः दोनो को एक ही कवि मानना समीचीन प्रतीत नही होता। वे दोनो पृथक्-पृथक् दो कवि थे।

हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' का जन्म-स्थान सरायबल (निकट कौस मैदान) था जैसा कि उसके नाम के साथ प्रयुक्त सरायबली शब्द से प्रकट होता है। इसके विपरीत पीर गुलाम मही-उद्-दीन का जन्म-स्थान मिसकीनपुर-खुशी-पुर, तहमील कुलगाम था जैसा कि उसके नाम के साथ प्रयुक्त शब्द योरखुशीपुर से प्रतीत होता है। हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' ने अपने प्रबन्ध-काव्य 'यूसुफ-जुलेखा' के अन्त मे कई पारो का उल्लेख करने के साथ ही अपने प्रधान पीर हाजी मौलवी मुहम्मद इहैया का भी वर्णन किया है जिसके लिये कवि ने ईश्वर से उस पर दयालु होने की प्रार्थना की है।[2] कवि कुब्रवी सम्प्रदाय से सम्बन्धित था और इसी कारण उसने अपने दोनो प्रबन्धकाव्यो 'यूसुफ जुलेखा'[3] तथा 'गुलनूर-गुलरेज'[4] मे अमीर कबीर सैयद अली हमदानी की प्रशसा की है। इसके अतिरिक्त प्रकाशक अली मुहम्मद नूर मुहम्मद ने भी पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' की रचनाओं का पृथक् उल्लेख करके उन्हें हाजी पीर मही-उद्-दीन की रचनाओं से भिन्न दिखाया है।[5] साथ ही पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' का गुरु सफ़ा शेख मुस्तफा रफीकी आदि था। इस आधार पर दोनों कविओ को एक बताना युक्ति-सगत प्रतीत नही होता। यह बात भी निराधार सिद्ध होती है कि पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' ही हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' के गुरु थे।

---

१. यह धारणा भी कश्मीर की जनता मे कुछ-कुछ विद्यमान है।

२. सु अक युस मौलवी इहैया छु मशहूर, ख्वदा तस थाविनम मरहूम व मग़फ़ूर।—यूसुफ जुलेखा, पृ० ७९।

३. दितअह फरियाद शाह हमदानस, वन्तअह बेदाद शाह हमदानस
गम विज़ी छुम नाव तिहुन्दुय बस, वन्तअह बेदाद शाह हमदानस।
—वही, पृ० ५।

४. इमदाद कर इमदाद कर, शाह हमदान अक नज़र—गुलनूर-गुलरेज, पृ० ४।

५. द्रष्टव्य—लैला-मजनू, पीर मही-उद्-दीन 'मिसकीन' प्रकाशक, अली मुहम्मद नूर मुहम्मद, मुख पृष्ठ।

'अत. पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' तथा हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' न एक ही व्यक्ति के दो विभिन्न नाम थे और न ही वे केवल एक कवि का बोध कराते है। हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' कई बार लाहौर गए थे। वे विद्वान थे। उनके कई पीरो मे से मौलवी मीर वाइज के दादा हाजी मौलवी मुहम्मद इहैया भी एक पीर थे। उनके साथ ही कवि अठारह वर्ष की आयु मे हज के लिये चले गये थे। उनके एक अन्य पीर का नाम फजल हक़ भी था जो पेशावर से कश्मीर आए थे। वे मक़बूलशाह क्रालवारी के भी समकालीन थे।[1] अपने प्रबन्धकाव्य 'गुलनूर-गुलरेज' में कवि ने जो आत्मपरिचय दिया है, वह यथेष्ठ नही। आत्मपरिचय देते हुए उसने इस काव्य के आरम्भ मे केवल इतना कहा है कि उसे अपने गाव की मस्जिद की अपहृत की गई भूमि के विषय मे तत्कालीन लार्ड से मिलने के लिये कश्मीर से शिमला जाना पडा। वहां से वे भूमि की पुन. प्राप्ति का आश्वासन प्राप्त कर लौटे थे।[2]

स्थितिकाल—इन तथ्यो से हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' के स्थितिकाल के विषय मे अवश्य कुछ सहायता मिलती है। हाजी गुलाम मुहम्मद शाह के कथनानुसार वे १८ वर्ष की आयु (सन् १८७३ ई०) मे हज करने के लिये चले गए थे। इस से यह सिद्ध होता है कि उनका जन्म सन् १८५५ ई० मे हुआ होगा। कवि ने अपने प्रबन्धकाव्य 'गुलनूर-गुलरेज' का रचना-काल सन् १३३२ हि० (सन् १९१३ ई०) दिया है।[3] यदि वे इसके अनन्तर और दस वर्ष जीवित रहे होगे तो उनका मृत्यु समय सन् १९२३ ठहरता है। अतः सन् १८५५ ई० से सन् १९२३ ई० तक जीवित रहकर उन्होने कुल ६८ वर्ष की आयु भोगी होगी। इससे इस बात मे कोई सदेह नही रह पाता कि वे अवश्य मकबूल शाह क्रालवारी

---

१. इन तथ्यो का ज्ञान इस शोध के प्रस्तुतकर्ता को हाजी गुलाम मुहम्मद शाह, सुपुत्र हाजी मही-उद् दीन 'मिसकीन' सरायबली ने कराया जब वह उनके पिता (हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन') के सम्बन्ध मे कुछ ज्ञातव्य बातो के लिये उनसे मिला। इस समय हाजी गुलाम मुहम्मद शाह, ३४९ कुब्रवी मजिल, जवाहर नगर, श्रीनगर (कश्मीर) मे निवास करते है। उनकी आयु लगभग ८० वर्ष है।

२. करन लाटस निशि प्यव दमलअह हमलअह,
जि शिमला तार महाराजस दिचअम मे—वही, पृ० ६।

३ द्रष्टव्य— गुलनूर-गुलरेज़, पृ० ५८।

(सन् १८२० ई०—सन् १८७५ ई०) तथा पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन' (सन् १८४६ ई०—सन् १९१५ ई०) के भी समकालीन रहे होंगे।

कवि हाजी मही उद्-दीन 'मिसकीन' ने शिमला में जिस लार्ड से मिलने का उल्लेख किया है, वह लार्ड कर्जन प्रतीत होता है। 'गुलनूर-गुलरेज़' मे 'कर्जन' शब्द भूल से 'करन' लिखा हुआ मिलता है।[1] लार्ड कर्जन भारत का वायसराय सन् १८९९ ई० से सन् १९०५ तक रहा।[2] इस तथ्य के आधार पर कवि का उसका भी समकालीन होना प्रत्यक्ष रूप से सिद्ध होता है।

रचनाएं—अभी तक हाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन' के दो काव्य-ग्रन्थ प्रकाशित हुए है। पहला प्रबन्धकाव्य 'यूसुफ जुलेखा' है जिसका रचनाकाल सन् १३२७ हि० (सन् १९०३ ई०) दिया गया है।[3] दूसरे प्रबन्धकाव्य 'गुलनूर-गुलरेज' का रचना-काल सन् १३३२ हि० (१९१३ ई०) दिया गया है।[4] उनका तीसरा प्रबन्धकाव्य 'लैला-मजनू' कहा जाता है जो अभी तक अनुपलब्ध है। कवि ने अपनी प्रत्येक रचना मे 'मिसकीन' उपनाम का प्रयोग किया है।

१०—पीर शम्स-उद्-दीन हैरत

जीवन-परिचय—शम्स-उद्-दीन का जन्म सन् १३०८ हि० (सन् १८९० ई०) को जामा मस्जिद के निकट मुहल्ला पान्दान, श्रीनगर मे हुआ। उनके पिता का नाम पीर गुलाम मुहम्मद था। प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता से ही प्राप्त की किन्तु उनके देहावसान के अनन्तर उन्होने अरबी का अध्ययन मौलवी सैफ-उद्-दीन के पास किया।[5] वे फारसी-संगीत से पूर्णतया परिचित थे। साधु स्वभाव का कवि होने के साथ ही वे पीर-मुरीदी पर निर्वाह किया करते थे।

---

१. द्रष्टव्य—गुलनूर-गुलरेज़, पृ० ६।

२. द्रष्टव्य—इडियन हिस्ट्री (सन् १५२६ से वर्तमान समय तक), लेखक विश्वदास, मलहोत्रा ब्रदर्स, ७।१७ दरिया गज, दिल्ली (१९६०), भाग दो, पृ० १६७।

३. त्रुवाह शत तम्र सत्तोवुह साल बेकाल, गग्रमुत अज हिजरत इकदस अली उल्हाल—यूसुफ ज़ुलेखा, पृ० ८०।

४. सन ओसुय द्वयत्रअह तम्र त्रुवाह शत,
गअमुत अज़ इब्तदाई साले हिज्रत।—गुलनूर-गुलरेज, पृ० ५८।

५. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ४७२।

उनका सम्बन्ध पीरजादा वश से था ।[१]

पीर—उनके पीर का नाम मीर गुलाम-उद्-दीन इद्रावी था,[२] किन्तु कुब्रवी सप्रदाय से सम्बन्धित होने के कारण उन्होने अपने सूफी-काव्य 'रैणा व ज़ेबा' मे कुब्रिया हबीब शाह हमदान (अमीर कबीर सैयद अली हमदानी) की महत्ता का दिग्दर्शन कराया है। उन्हे वही महान् पीर परमात्मा के समान मान्य रहे ।[३]

रचनाएं—कवि की अधिकतर रचनाए फारसी मे उपलब्ध है और कश्मीरी मे उन्होने बहुत कम लिखा है। फारसी मे लिखित 'दीवाने हैरत' एक अपूर्व साहित्यिक रचना है। उनकी फारसी मे लिखी मसनविया 'गुलज़ार करामात' 'आईने अलफत' तथा 'कानूने फितात' अत्यन्त प्रौढ रचनाए है।[४] अभी तक कश्मीरी मे उनका 'रैणा व जैबा' प्रबन्धकाव्य ही उपलब्ध हुआ है। इस मे कवि ने 'शम्स' उपनाम का प्रयोग किया है।[५] बाद मे उन्होने 'हैरत' उपनाम का प्रयोग किया।[६] कुछ समय तक उनका उपनाम 'आशिक' भी चलता रहा।[७]

'रैणा व जेबा' का रचना-काल सन् १३०० हि० (सन् १६२१ ई०) है।[८] मकबूल शाह क्रालवारी के 'गुलरेज़' का प्रभाव कवि पर स्पष्ट रूप से पडा हुआ है। दोनो ने वसन्त-ऋतु का जो वर्णन किया है, उसका भाव साम्य देखने योग्य है। मकबूल शाह क्रालवारी ने वसन्त की छटा का जो मनोमुग्धकारी चित्रण

---

१. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ४७३।

२. वही, पृ० ४७३।

३. अय शहशाह विलायत वी हबीब कुब्रिया,
शाह हमदान माह ताबान मुजहरे लतफे खुदा—रैणा व जेबा, पृ० ३।

४. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ४७३।

५. शम्स मिसकीन आव लारान अओश छु हारान सरवरअह—रैणा व जेबा, पृ० ३।

६. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ४७२।

७. वही, पृ० ४७२।

८. बतारीरवश बगुफतम नज़्म दिलकश १३४०—रैणा व जेबा, पृ० ६०।

किया है,[१] शम्स उद्-दीन हैरत ने भी उसी रूप मे उसे अभिव्यक्त किया है।[२]

'कवि की रचनाओ पर' फारसी अदब का गहरा रग चढ गया है। उनके ज़िहन मे जो ख्याल आता है वह फारसी जामा पहनकर आता है। ऐसी सूरत मे उनके लिये कश्मीरी जबान मे कामयाब शेर लिखना नामुमकिन तो नही, किसी हद तक मुश्किल है।[३]

११—अब्दुल कबीर लोन

जीवन-परिचय—कबीर लोन ने अपने प्रबन्धकाव्य 'लैला-मजनू' मे आत्म-परिचय नही दिया है। इस आधार पर हमे केवल बहिर्साक्ष्य पर ही संतोष करना पडता है। उनका जन्म मलयार, ड़लीपुर, श्रीनगर में हुआ था।[४] वह सन् १८७५ ई० मे उत्पन्न हुआ था तथा प्रातःकाल अपने साथ कुछ बकरिया ले जाकर घर-घर चक्कर लगाते हुए उनका दूध बेचा करता था। उसने चार विवाह किये थे किन्तु पुत्र का अभाव उसे सदा सताता रहा। उसने महमूद नाम का एक लडका गोद लिया था। घर मे कवि ने एक अन्न-सत्र भी खोल रखा था। खानयार, श्रीनगर का समद बजाज, ताशवन, श्रीनगर का सिकन्दर, डोंगरपुर (सन्निकट डलीपुर, श्रीनगर) को अहदजरगर उसके प्रमुख शिष्यो मे से थे। इन तीन शिष्यो मे से प्रथम दो का परलोकवास हुआ है, किन्तु तीसरा शिष्य अहदजरगर आज भी सूफी-काव्य मे अभिवृद्धि कर रहा है। कवि की लगभग सन् १९४० ई० मे इहलोक लीला समाप्त हुई।[५]

वह अनपढ़ था। बकरियो का दूध घर-घर बेचने के अतिरिक्त वह सब्जी

---

१. लगन यलि आसअह पोशन वाव आये, हरान अअस्य अत्र बागस जायि जाये खतअई गुल छकान अवर वतन ओस, सपुन मओत बाग सहराये खुतन ओस।—गुलरेज़, पृ० १४६-१४७।

२. अमन दिल नस्तरीन ड़ीशित छि खअरअय, चमन अन्दर तथ्य तिम वअत्य चीरी, खतअई गुल अतअई जामअह पअरित, खता गव नाफये तातात फीग्ति।—रैणा व ज़ेबा, पृ० ५४।

३. कश्मीरी ज़बान और शायरी, द्वितीय भाग, पृ० ४७७।

४. द्रष्टव्य—लैला-मजनू, कबीर लोन, प्रकाशक द्वारा मुख-पृष्ठ पर दिया गया कवि का रेखा-चित्र।

५. कबीर लोन के सम्बन्ध मे यह परिचय उनके एक पड़ौसी अहमद खान, डलीपुर ने इस शोध के प्रस्तुतकर्ता को दिया जब वह कवि-सम्बन्धी कुछ ज्ञातव्य बातों के लिये उसके निवासस्थान पर गया था।

बोया करता था और कभी-कभी आराकशी भी किया करता था। वह एक महान् सूफी-सत था। उसने तीन पीरो से मार्ग-प्रदर्शन प्राप्त किया था। उसका प्रथम पीर ताशबन का मुहम्मद जू सिराज, द्वितीय कावडारा का महमूद जू तथा तृतीय पुछ पुलवामा, कश्मीरी का यूसुफ मुशाहिया था। इन पीरो की कबीर लोन पर अपार कृपा थी और वे सदा उसको अपनी मजिल पर उत्तरोत्तर अग्रसर देखना चाहते थे। द्वितीय पीर महमूद जू लोन ने ही उसे तृतीय पीर यूसुफ मुशाहिया के हाथ ज्ञान-वृद्धि के लिये सौप दिया था। प्रत्येक गुरु की यही उत्कट इच्छा थी कि उनका यह प्रतिभाशाली शिष्य सूफी-सिद्धान्तो मे प्रवीणता प्राप्त करे।[१]

कबीर लोन को कादिरी तथा कुब्रवी सप्रदाय दोनो मान्य थे।[२] अपने काव्य 'लैला-मजनू' मे कवि ने प्रारम्भ मे शाह जीलान (कादिरी सम्प्रदाय) के चरणो पर श्रद्धा के पुष्प अर्पित किये है।[३]

रचनाएं—अभी तक कवि की एक ही रचना 'लैला मजनू' उपलब्ध हुई है। इस का रचना-काल अनुल्लिखित है। कवि ने इस काव्य की रचना मृत्यु मे पद्रह वर्ष पूर्व सन् १९२५ मे की थी।[४] कवि की इस रचना मे सभी सूफी-सिद्धान्तों का सम्यक् रूप से परिपालन किया गया है।

(ख) हिन्दी प्रबन्धकारों का परिचय

१—मौलाना दाऊद

निवास स्थान—वे या तो डलमऊ के निवासी थे अथवा डलमऊ उनका निवास स्थान था।[५] दाऊद ने डलमऊ का वर्णन करके उसे गगा-तट पर बसा बताया है,[६] जो आज भी उत्तर-प्रदेश के रायबरेली जिले का एक प्रसिद्ध कस्बा है।

---

१. इस शोध के प्रस्तुतकर्ता को यह परिचय उनके तीसरे शिष्य सूफी-कवि अहद जरगर ने दिया जब वह उनके निवासस्थान डागरपुर में उनसे मिलने गया था।

२. द्रष्टव्य—लैला-मजनू, कबीर लोन, मुख पृष्ठ।

३. नूरह निशि नूर द्राव नूरन जोनुय, अज यियि सोनुय शाह जीलान,
समितय वअसवअय ह्यमोस वनवुनये, अज यियि सोनुय शाह जीलाना
—वही, पृ० ३।

४. इस शोध के प्रस्तुनकर्ता को यह वृत्तान्त कवि के पड़ोसी, अहमदखान के द्वारा दिया गया।

५. चदायन, डा० परमेश्वरी लाल गुप्त, भूमिका, पृ० १९।

६. डलमऊ नगर बसै नवरगा। ऊपर कोट तले बहि गगा। वही, पृ० ८४।

स्थितिकाल—दाऊद मुल्ला नहीं मौलाना कहे जाते थे तथा चदायन की रचना दिल्ली सुल्तान फीरोजशाह तुगलक के समय (सन् १३५१ ई०—सन् १३८८ ई०) जौनाशाह के मन्त्रित्व काल में सन् ७७२ हि० (सन् १३७० ई०) के बाद किसी समय हुई थी।[१] त्रिलोकी नाथ दीक्षित ने मौखिक परम्परा के आधार पर चदायन का रचना-काल सन् ७७६ हि० (१० मई १३७७—३० अप्रैल १३७८ ई०) दिया है।[२] बीकानेर प्रति मे इससे भिन्न तिथि पाई जाती है :

बरिस सात सै होइ इक्यासी, तिहि जाह कवि सरसेउ भासी।[३]

इसके अनुसार चदायन की रचना सन् ७८१ हि० (सन् १३७६ ईस्वी) मे हुई थी जो अधिक उपयुक्त प्रतीत होती है।

सम्प्रदाय तथा पीर—दाऊद का प्रत्यक्ष सम्बन्ध सूफी-सम्प्रदाय के साधको से था।[४] शेख जनैदी (जैनुद्दीन) उनके पीर थे

सेख जनैदी हो पथिलावा। धरम पन्थ जिह पाप गवावा।
पाप दीन्ह मे गाग बहाई। धरम नाव हौ लीन्ह चढाई।[५]

'शेख् जैनुद्दीन' 'चिराग-ए-दिल्ली' के नाम से प्रसिद्ध चिश्ती सत हज़रत नसीरुद्दीन अवधी की बडी बहन के बेटे थे।[६]

रचनाएं—गजेटियर मे दाऊद की रचना का नाम चन्दैनी या चन्द्रानी दिया गया है। मिश्र-बन्धु ने 'नूरक चदा', हरिऔध ने 'नूरक और चदा' डा० रामकुमार वर्मा ने 'चन्दावन या चन्दावत' तथा अल बदायनी ने 'चदावन' नाम दिया है। प्रो० अस्करी ने इसका नाम 'चदायन' दिया है।[७] अल बदायूनी का कथन है कि यह एक काव्य है दो नही।[८] बीकानेर प्रति में इसे नुस्ख. चदायन (चदायन की हस्तलिखित प्रति) कहा गया है।[९]

२—कुतबन

स्थितिकाल—कवि ने 'मृगावती' का समय सन् ९०९ हि० (सन् १५०३ ई०)

१. वही, भूमिका, पृ० ४।
२. द्रष्टव्य—वही, भूमिका, पृ० २१।
३. वही, पृ० ८४।
४. वही, भूमिका, पृ० ६२।
५. वही, पृ० ८२।
६. वही, भूमिका, पृ० २०।
७. हिन्दी के सूफी-प्रेमाख्यान, पृ० २७।
८. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० १०।
९. चंदायन, डा० परमेश्वरी लाल गुप्त, पृ २१।

दिया है। उसने अपने समसामयिक महादानी, धर्मात्मा तथा ऐश्वर्य-सम्पन्न शाहेवक्त हुसेनशाह का भी वर्णन इस प्रकार किया है :

साहे हुसन आहे बड राजा। छत्र सिंघासन उनको छाजा।
पडित और बुधवत समाना। पढे पुरान अरथ सब जाना।[1]

यह हुसेन शाह कौन है यह विवाद का विषय बना हुआ है। कुतबन के समसामयिक ऐसे दो शासको का पता चलता है जिनका नाम वास्तव मे हुसेनशान था। इन मे से एक हुसेनशान शर्की था जो जौनपुर का शासक था और जिसे बहलोल खा लोदी मृ० स० १५४५ (सन् १४८८ ई०) ने हराया था और दूसरा बंगाल का शासक हुसेनशाह था जिसका राज्यकाल सवत् १५५० (सन् १४९३ ई०) से सवत् १५७६ (सन् १५१९ ई०) तक था। यह दूसरा हुसेनशाह वास्तव मे बहुत योग्य एव धर्म-परायण भी था। सन् १५०३ ई० मे 'मृगावती' की रचना करते समय कुतबन का इस हुसेन शाह का नामोल्लेख करना कोई असभव बात नही थी।[2]

गुरु तथा सम्प्रदाय—कुतबन ने अपने गुरु के विषय मे कहा है .

सेष बुढन जग साचा पीरू। नाम लेत सुध होइ सरीरू[3]

रामचन्द्र शुक्ल का कथन है कि वह चिश्ती वश के शेख बुरहान के शिष्य थे।[4] डा० रामकुमार वर्मा ने भी उसे बुरहान ही कहा है। ऐसा जान पड़ता है कि उनकी दृष्टि मे बूढ़न और बुरहान पर्यायवाची शब्द है। उन्होने भी उसे चिश्तिया शाखा का होना बतलाया है।[5]

कुतबन सुहरवर्दी सम्प्रदाय से सम्बन्धित था अथवा चिश्ती सम्प्रदाय से, इस विषय में स्वय कवि का कथन है :

कुतबन नाउ ले रे पा धरे। सुहरवर्दि जिन्ह जग निरभरे।[6]

इस से स्पष्ट है कि कवि का सम्बन्ध सुहरवर्दी सम्प्रदाय से था चिश्ती सम्प्रदाय से नही।

रचनाएं—कुतबन की रचना का नाम 'मृगावती' वा 'मिरगावति' है। इस

---

१. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० १११।
२. वही, पृ० १११-११२।
३. वही, पृ० ११०।
४. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ९४।
५. बंगला साहित्येर इतिहास, डा० सुकुमार सेन, प्रथम खण्ड (सन् १९५० ई०), कलिकाता, पृ० ५६३।
६. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ६५।

का रचना-काल इस प्रकार दिया गया है .

ही नौ सव नव जब सवत् अही ।[१]

इसके अनुसार इस काव्य की रचना सन् ९०९ हि० (सन् १५०३ ई०) मे हुई थी ।[२]

३—मलिक मुहम्मद जायसी

जन्मकाल तथा निवास स्थान—निर्गुण-भक्ति की प्रेमाश्रयी शाखा के प्रतिनिधि कवि जायसी द्वारा लिखित 'आखिरी कलाम' मे एक अर्द्धाली इस प्रकार है :

भा औतार मोर नौ सदी । तीस बरिख ऊपर कवि बदी ।[३]

'उपर्युक्त' नवसदी का अर्थ लोग हिजरी ९०० लगाते हैं । और कहते है कि तदनुसार वे सन् १४९४ ई० स० १५५१ में जन्मे थे ।

वे जायस के रहने वाले थे और वही पर उन्होंने काव्य-रचना की ।[४]

स्थितिकाल—वे शेरशाह के समकालीन थे ।[५]

मृत्यु—जायसी की कब्र अमेठी के राजा के वर्तमान कोट से पौन के लगभग है ।[६] उनकी मृत्यु का संवत् प्रायः १५९९ बतलाया जाता है जो 'रिज्जब सन् ९४९ हिजरी' (सन् १५४२ ई०)[७] के रूप मे किसी काजी नसीरुद्दीन हुसैन

---

१. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० ११२ ।

२. डा० श्याममनोहर पाण्डेय ने इसका रचनाकाल सन् ९०९ हि० (सन् १५०४ ई०) माना है, द्रष्टव्य—मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ६४ ।
डा० विमलकुमार जैन ने इसका रचनाकाल सन् ९०९ हि० (सन् १५०१ ई०) दिया है । द्रष्टव्य—सूफीमत और हिन्दी साहित्य, पृ० ११४ ।
इन दोनों विद्वानो द्वारा दिया गया पृथक्-पृथक् सन् ई० अशुद्ध है क्योंकि सन् ९०९ हि० (सन् १५०३ ई०) ठहरता है । द्रष्टव्य—कम्परेटिव टेबुल्ज आफ हिजरी एण्ड क्रिश्चयन डेट्स ।

३. जायसी ग्रन्थावली, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ६८८ ।

४. जाएस नगर धरम अस्थान् । तहवा यह कवि कीन्ह बखान् । वही, पृ० १३४ ।

५. सेरसाहि ढिल्ली सुलतान् । चारिउ खड तपइ जस भानू ।
ओही छाज छात औ पाटू । सब राजा भुइ धरहि लिलाटू ।वही, प० १२८ ।

६. जायसी ग्रन्थावली, सम्पादक, रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ७ ।

७. सन् ९४९ हि० तथा सन् १५४२ ई० के लिए द्रष्टव्य—कम्परेटिव टेबुल्ज आफ हिजरी एण्ड क्रिश्चयन डेट्स ।

जायसी की 'याददाश्त' मे दर्ज है और जो, इसी कारण बहुत कुछ प्रामाणिक भी समझा जा सकता है।[1]

गुरु—जायसी ने दो गुरु परम्पराओ का उल्लेख किया है। एक त अनुसार वे उनके पीर सैयद अशरफ थे .

सैयद अशरफ पीर पिआरा, तिन्ह मोहि पन्थ दीन्ह उजिआरा[2]

अखरावट[3] तथा आखिरी कलाम[4] मे भी उन्होने सैयद अशरफ को ही गुरु स्वीकार किया है।

दूसरी परम्परा के अनुसार जौनपुर के सैयद मुहम्मद उनके गुरु थे जिन्होने स्वय को मेहदी घोषित किया था :

गुरु मोहदी खेवक मै सेवा। चलै उत्ताइल जिन्हकर खेवा
अगुआ भएउ सेख बुरहान्। पथ लाइ जेहि दीन्ह निआनू।[5]

इसमे हमारा अनुमान है कि उनके दीक्षा-गुरु तो थे सैयद-अशरफ, पर पीछे उन्होने मुही-उद्-दीन की भी सेवा करके उनमे बहुत-कुछ ज्ञानोपदेश और शिक्षा प्राप्त की,[6] किन्तु यहा मुही-उद्-दीन की कल्पना का कोई आधार नही दीखता। जायसी ने मेहदवी शेख बुरहान की परम्परा को उसी प्रकार स्मरण किया है जिस रूप मे उसने सैयद अशरफ की परम्परा का उल्लेख किया है। इस कारण इससे यह प्रमाणित होता है कि जायसी ने आरम्भ मे एक गुरु से दीक्षा प्राप्त की और तदन्तर दूसरे गुरु से भी लाभ उठाया।

रचनाएं—उनकी चार कृतिया उपलब्ध है ·
(१) पद्मावत (२) अखरावट (३) आखिरी कलाम तथा (४) चित्र रेखा।[7]

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, प० १२१।
२. जायसी ग्रन्थावली, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, प० १३१।
३. वही, पृ० ६६४। ४. वही, पृ० ६६०।
५. वही, पृ० १३३।
६. जायसी ग्रन्थावली, रामचन्द्र शुक्ल, पृ० १०।
७. पद्मावत का रचनाकाल सन नो सं सैतालिस अहै। कथा अरभ बैन कवि कहै।—जायसी ग्रथावली, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १३५।
सन् ६४७ हिजरी मे काव्यारम्भ, सन् १५४० ई०
आखिरी कलाम : नौ सै बरस छत्तीस जो भए। तब एहि कविता आखर कहे।—वही, पृ० ६६१।
सन् ६३६ हि० सन् १५२६ ई०। अखरावट इन दोनो के बीच की रचना है। उसमें पद्मावत के पात्रो का उल्लेख है।

स्थान-स्थान पर जायसी ने अपने आध्यात्मिक और काव्य-सम्बन्धी दृष्टि-कोण की अभिव्यंजना की है।[१]

४—मंझन

जन्म स्थान—'मधुमालती' के ग्रन्थारम्भ मे स्वयं कवि ने कहा है :

गढ अनूप बसि नगरि चर्नाढी। कलिजुग मह लका सो गाढी।
पुरुब दिसा जरगी फिरि आई। उत्तर पच्छिम गग गढ खाई।[२]

डा० माताप्रसाद गुप्त के मतानुसार चर्नाढी चरणाद्रि का अपभ्रंश है और इस समय चुनार के नाम से प्रसिद्ध है।[३] इसी तथ्य को श्याम मनोहर पाण्डेय ने भी स्वीकार करते हुए कहा है कि कवि मझन चुनार के रहने वाले थे।[४]

स्थितिकाल—मंझन ने शाहेवक्त सलीम शाह की प्रशसा इन शब्दो मे की है :

साहि सलेम जगत भी भारी। जेइ भुजी वर मेदिनि सारी।
जौ रे कोंपि पैरी पां चापै। इदर कर इद्रासन कापे॥[५]

यह सलीम शेरशाह सूर का पुत्र था और सन् १५२ हि० (सन् १५४५ ई०) मे शेरशाह के देहान्त के अनन्तर शासक हुआ था।[६] उसी वर्ष मझन ने 'मधु-मालती' का प्रणयन किया था :

सन नौ सै बावन जब भए। सती पुरुख कलि परिहरि गए।
तब हम जिय उपजी अभिलाखा। कथा एक बांधउ रस भाखा।[७]

कवि ने सलीम शाह के अतिरिक्त तत्कालीन ऐतिहासिक व्यक्ति खिज्रखां का भी उल्लेख किया है :

दाहिनि भुजा साहि कै भारी। जेहि दिसि खडा सोइ दिसि गाढ़ी।[८]

इससे ज्ञात होता है कि मझन खिज्रखां के भी कृपा-पात्र थे।

गुरु या पीर—ग्रथारम्भ मे कवि ने अपने गुरु शेख मुहम्मद गौस के विषय में कहा है :

---

१. मूल शोध-प्रबन्ध—मध्यकालीन हिन्दी कवियो का सकेतित और व्यवहृत काव्य, पृ०, ३७२।
२. मधुमालती, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० २०।
३. वही, भूमिका, पृ० १६।
४. मध्ययुगीन प्रेमाख्यान, पृ० ७६।
५. मधुमालती, सम्पादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० ७।
६. वही, भूमिका, पृ० १३।
७. वही, पृ० २३।
८. वही, पृ० १४।

दाता औ गुन गाहक गौस मुहम्मद पीर ।
दुहु कुल निरमल सापुरुस गुरुग्र गरिस्ट गभीर ।[1]

मझन ने उन्हें 'बडे शेख' भी कहा है .

सेख बडे जग विधि पियारा । ग्यान गरुग्र औ रूप अपारा ।[2]

रचनाएं—अभी तक मझन की 'मधुमालती' ही उपलब्ध हुई है। इस मे कवि ने रसराज (शृगार) का वर्णन किया है :

रस अनेग सयसार कर सुनहु रसिक दे कान ।
जो सभ रस मह राउ रस ता कर करौ बखान ।[3]

इस ग्रन्थ की रचना कवि ने प्रेमाभिलाषी पाठको तथा श्रोताओ के लिये की है :

सा सभ कहो सुरस रस भाषी । सुनहु कान दे पेम अभिलाषी ।[4]

इस काव्य का रचनाकाल सन् ९५२ हि० (सन् १५४५ ई०) है ।

५—उसमान

जन्म स्थान तथा माता-पिता—उसमान का जन्मस्थान गाज़ीपुर था। कवि ने स्वय कहा है कि वह एक उत्तम स्थान है तथा ससार मे देव स्थान के नाम से प्रसिद्ध है ।[5]

उनके पिता का नाम शेख हुसैन था ।[6] उसके अन्य चार भाई थे ।[7]

---

१. मधुमालती, सपादक, डा० माताप्रसाद गुप्त, पृ० १० ।
२. वही, पृ० ९ ।
पाठ-भेद के कारण डा० सरला शुक्ल ने 'बडे शेख' को 'शेख बदी' समझकर मझन के दो गुरुओ की कल्पना करते हुए कहा है कि पीर के रूप मे शेख मोहम्मद शेख बदी एव मोहम्मद गौस आदि मे कौन उनका गुरु था, यह स्पष्ट नही होता । द्रष्टव्य—जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३३५ ।
३. वही, पृ० २५ ।
४. वही पृ० २३ ।
५. गाजीपुर उत्तम अस्थाना, देवस्थान आदि जग जाना—चित्रावली सन् १९१२ ई०, पृ० ११ ।
६. कवि उसमान बसै तैहि गांऊ, सेख हुसैन तनै जग नाऊं—वही, पृ० १२ ।
७. पाचा भाइ पाचो बुधि हीये, एक इक भाति सो पांचों लीये ।
वही, पृ० १२ ।

स्थितिकाल—उसमान ने शाहेवक्त जहागीर की प्रशसा की है। जहागीर का पूरा नाम मुज़फ्फर नूरुद्दीन मुहम्मद था जिसने सन् १६६२ ई० से सन, १६८४ ई० तक शासन किया। उसने जिस न्याय-घण्टे की स्थापना की थी कवि ने उसका भी वर्णन किया है।[१]

गुरु अथवा पीर—उसमान ने 'चित्रावली' मे दो गुरुओ का उल्लेख किया है। प्रथम नारनौलि के शाह निज़ाम का तथा दूसरे बाबा हाजी था। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपना मत इस प्रकार किया है कि ये शाह निजामुद्दीन चिश्ती की शिष्य-परम्परा मे हाजी बाबा के शिष्य थे।[२] प० परशुराम चतुर्वेदी का कथन है कि इन बाबा-हाजी का कोई विशेष परिचय नही मिलता और न उनके निवास-स्थान का ही पता चलता है।[३] इस सम्बन्ध मे डा० सरला शुक्ला का कथन है कि शाह निजामुद्दीन चिश्तिया ही, कवि के पीर थे। इनकी कृपा या आशीर्वाद व्यक्ति को जीवन्मुक्त बना देता था। कवि उसमान के दीक्षा-गुरु बाबा हाजी थे। इनके पास हिन्दू मुसलमान सभी अपनी इच्छा-पूर्ति के लिये आते थे। इन्होने एक दिन दया करके उसमान को भी दीक्षा दी थी।[४]

रचनाएं—अभी तक उसमान की 'चित्रावली' ही उपलब्ध है। इसका रचना-काल सन् १०२२ हि० (१६१३ ई०) है :

सन् सहस्त्र बाइस जब अहै तब हम वचन चारि एक कहै।[५]

कवि का उपनाम 'मान' था :

कथा मान कवि गायेउ नई। गुरु परसाद समापत भई।[६]

६—शेख़ नबी

निवास स्थान—कवि ने जौनपुर सरकार के दोसपुर[७] थाने मे स्थित अलदेमऊर नगर को अपना निवास स्थान बताया है :

अलदेमऊ दोसपुर थाना। जाउन पुर सरकार सुजाना।

---

१. नूरुद्दीन महीपति भारी, जाकर आन मही मंह सारी।
पुनि कलि अदल उमसम कीन्हा, घन सो पुरुष जो यह जस लीन्हा।
पुहुमी परै न पावै काटा, हस्ती चापि सकै नहिं चांटा।—पृ० ६, ७।

२. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० १०६।

३. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० १४२।

४. द्रष्टव्य—चित्रावली, पृ० १०।

५. चित्रावली, पृ० १४।

६. वही, पृ० २३६।

७. डा० कमलकुल श्रेष्ठ ने दोसपुर थाने के विषय में कहा है कि अब वह सुलतान पुर में है। द्रष्टव्य—हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० ८१।

स्थितिकाल—शेख नबी ने अपने शाहेवक्त का नाम 'साहि सलीम' देकर उसे ही फिर जहागीर नाम से भी अभिहित किया है :

साहि सलीम छत्रपति छोनी । दल के बार कवल दल दोनी ।
× × ×
मुराददीन दिनपति, जहागीर नित नेम ।
कुल दीपक दुति सकल की, साहेब साहि सलेम ।

रचनाएं—कवि की रचना का नाम 'ज्ञानदीप' है। इस ग्रन्थ की रचना के विषय मे उसने कहा है :

एक हजार सन रहे छबीसा । राज सुलही गनहु बरीसा ।
सवत् सोरह सै छिहतरा । उक्ति गरत कीन्ह अनुसारा ॥

इसके अनुसार इस काव्य का रचना-काल सन् १०२६ हि० (सन् १६१६ ई०) ठहरता है ।[1] इतिहासकारों ने जहागीर का शासन-काल सन् १६०५ ई० से सन् १६२७ ई० तक दिया है,[2] अत यह निश्चित है कि कवि ने ज्ञानदीप की रचना सन् १६१६ ई० मे की क्योकि यह काल उसी के अन्तर्गत आ जाता है ।

कवि ने इस रचना मे वीर, शृगार तथा विरह के आश्रय से जोग का वर्णन किया है :

वीर सिगार विरह किछु पावा । पूरन पद लै जोग सुनावा ।
जोग जुगुति वेद अच्छर दीए । रहि न गवा बिनु परगट कीए ॥

७—हुसैन अली

कवि हुसैन अली के जीवन के विषय मे बहुत कम ज्ञात है। उसने अपनी रचना 'पुहुपावती' में अत्यल्प आत्मपरिचय दिया है ।

उसने अपना उपनाम सदानन्द बताया है। हरिगाव उसका निवासस्थान था ।

वासक ठाव कहौ हरि नाऊ धरौ, सदानन्द कवि निजु नाऊ ।

---

१. डा० सरला शुक्ल ने सन् १०२६ हि० को सन् १६१९ ई० माना है। द्रष्टव्य—जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ४१६ । इसी प्रकार डा० कमलकुल श्रेष्ठ ने भी सन् १०२६ हि० को सन् १६१९ ई० माना है। द्रष्टव्य—हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य, पृ० ८१ । परन्तु सन् १०२६ हि० को सन् १६१६ ई० ठहराया गया है जो शुद्ध है । द्रष्टव्य— कम्परेटिव टेबुल्ज आफ हिजरी एण्ड क्रिश्चयन डेट्स ।

२. द्रष्टव्य—इण्डिया सिन्स १५२५, डा० वी० डी० महाजन, प्रकाशक एस० चद एण्ड क०, दिल्ली, चौथा सस्करण (१९६१), पृ०, ९१ ।

कन्नौज के निवासी केशवलाल कवि के काव्य-गुरु थे। उनके चरणो पर श्रद्धापूर्वक अपना शीश नवाते हुए उसने कहा है :

केशवलाल कैना के वासी काविवेद दे बुद्धि प्रकासी।

बिन पर भारी मोट उठाई, बिनवो गुनी सकल सिर जाई।

कवि ने 'पुहुपावती' का रचना-काल पुहुपावती कथा तब भनी। इस प्रकार 'पुहुपावती' की रचना सन् ११३८ हि० (सन् १७१५ ई०) मे हुई।

८—कासिम शाह

जन्म स्थान—कवि का जन्म अवध सूबे के अन्तर्गत लखनऊ के आसपास 'दरियाबाद' नामक नगर मे हुआ था।[१]

जाति-पांति तथा माता-पिता—कासिम शाह के पिता का नाम इमानुल्लाह था। जाति से उच्च न हो कर वह हीन तथा नीच जाति से सम्बन्ध रखता था।[२]

स्थितिकाल—कवि ने शाहेवक्त मुहम्मद शाह के रूप, सौदर्य, वीरता तथा बुद्धिमता की प्रशसा की है। उस भाग्यशाली के शासनकाल मे निर्धन-धनी सभी प्रसन्न थे। हिन्दू तथा मुसलमान सभी उसके सामने नतमस्तक होते थे।[३]

मुहम्मद शाह का शासन काल सन् १७१६ ई०—सन् १७४८ ई० (स० १७७६-१८०५) के अतर्गत पड़ जाता है।[४] इस कारण कवि का स्थितिकाल मुहम्मदशाह का राजत्व-काल ही निश्चित होता है।

---

१. है लखनऊ अवध मझियारा, दरियाबाद नगर उजियारा—हंस जवाहिर, पृ० ७।

२. दरियाबाद मांझ मम ठांऊ, इमानुल्ला पिता कर नाऊ,
तहवा मोहि जन्म विधि दीना, कासिम नाव जाति का हीना।—वही, पृ० ७।

३. महम्मदशाह ढेहली सुल्तानू, कामी गुण वह कीन बखानू।
छाजै पाट चीर सरताजा, नावहि शीश जगत के राजा।
रूपवन्त दरशन मुहराता, भागवन्त वह कीन विधाता।
द्रव्यवन्त धर्म मुह पूरा, ज्ञानवन्त खरग मह सूरा।
होय बलवन्त कटक कहि चीरा, देशवन्त चित्तवै चहु ओरा।
नावै शीश हिन्दू तुरकाना, काते देश-देश के थाना।
देश-देश तह के अमराऊ, कीन अचल होय करै नियाऊ।
—वही, पृ० ६।

४. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० १७६।

पीर या गुरु—कवि ने पहले अपने पीर करीमशाह की वदना करने के पश्चात् सलीन नगर के पीर मुहम्मद तथा उसके पुत्र पीर अशरफ का गुणगान किया है। उसने पीर अशरफ के पुत्र पीर अता की भी प्रशंसा की है। इन चारो मे से कवि का पीर कौन था, ऐसा स्पष्ट नही होता। डा० सरला शुक्ल के कथनानुसार मुहम्मद अशरफ ही इनके दीक्षा-गुरु ज्ञात होते है .[1]

सुमिरों नाम करीम सो पीरा, जेहि की नाव चढे वही वीरा।
हौ केहि योग जो करौ बखाना, वह न कलक जगत कर भाना।
तेहि ज्योति मे दीपक बारा, पीर मुहम्मद जग उजियारा।
पुनि वहि ज्योति दिये उतारा, जो कहु लाग चला ससारा।
धर्मवन्त निरमल गुरु, अलख दुलारे पीर।
तिन पर दीपक बुध रहा, अशरफ जोत शरीर।
× × ×
है आधार सुमिरन मेरे, महमद अशरफ नाव।
यही मग रस्ता नहि चलत, ज्यहिमा है नहि नाव।
नगर सलोन ढान त्यहि केरा, चहुदिशि जग मारै उजियेरा।
तेहि घर रत्न प्रति तरभला, पीर अता सब पूरण कला।
पीर दुलारे करीम के। अशरफ पीर के नन्द।
निरमल दोऊ जगत मह, निहकलक जस चन्द।[2]

रचनाएं—कासिम शाह की रचना 'हस जवाहिर' एक प्रसिद्ध सूफी प्रेमाख्यान है। कवि ने इसके रचना-काल के सम्बन्ध मे कहा है :

ग्यारह से उनचास जो आजा, तब यह कथा प्रेम कवि साजा।[3]

इसके अनुसार 'हस जवाहिर' का रचना-काल सन् ११४६ हि० (सन् १७३६ ई०) ठहरता है।

६—नूर मुहम्मद

निवास-स्थान—नूर मुहम्मद ने 'इद्रावती' मे आत्मकथा के अन्तर्गत बतलाया है कि जिस स्थान को उसने अपना निवासस्थान बनाया था, वह सवरहद था। कवि 'सवरहद' को अपनी जन्मभूमि नही कहता और न ही उसने किसी अन्य स्थान को अपनी जन्मभूमि ही माना है। 'सवरहद' स्थान की स्थिति का परिचय देते हुए कवि कहता है कि इसकी पूर्व-दिशा मे 'नसीरुदीन'

---

१. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ४३१।
२. हस जवाहिर, पृ० ५-६। ३. वही, पृ० ८।

का स्थान है।[१] 'अनुराग बासुरी' के संपादक की 'बीती बात' से यह ज्ञान होता है कि उनका स्थान सवरहद (शाहगज जौनपुर) था।[२] एक और विचार है कि कवि अपने अन्तिम दिनो मे भादो (फूलपुर, आजमगढ) मे रहने लगे थे। यही आपकी ससुराल थी।[३]

स्थितिकाल—कवि ने 'इद्रावती' मे अपने शाहेवक्त मुहम्मदशाह (सन् १७१६ ई०—सन् १७४८ ई०) की प्रशंसा की है।[४] कवि का रचना-काल सन् ११०७ हि० (सन् १६९५ ई०) से सन् ११९३ हि० (सन् १७७९ ई०) तक ठहरता है।[५] वे लगभग सन् १७८० ई० तक विराजमान थे।[६]

पीर या गुरु—कवि ने अपने ग्रन्थो मे कही भी गुरु-परम्परा का उल्लेख नही किया है। 'इन्द्रावती' मे जिस नसीरुद्दीन का नाम आया है, उसके विषय मे निश्चय रूप से कुछ भी नही कहा जा सकता।

रचनाएं—कवि की तीन रचनाए प्रसिद्ध है

(१) इन्द्रावती, (२) नल दमन तथा (३) अनुराग बासुरी।

'इन्द्रावती' का रचना-काल सन् ११५७ हि० (सन् १७४४ ई०) दिया गया है।[७] 'अनुराग बासुरी' का रचनाकाल कवि ने सन् ११७८ हि० (सन् १७६४ ई०) दिया है।[८] 'नलदमन' इन दोनो काव्यो के बीच की रचना है, जो अभी अप्राप्य है।

१०—निसार

निवास-स्थान—कवि ने अपने निवास स्थान का नाम शेखपुर दिया है :

शेखपुर अति गांव सुहावा शेख निसार जनम तंह पावा।

---

१. कवि अस्थान कीन्ह जेहिं ठाऊ, सोवह ठाऊ सवरहद नाऊ।
पूरब दिस कइलास समाना, अहै नसीरूद्दी को थाना।—इद्रावती, पृ० २।

२. अनुराग-बांसुरी, बीती बात, पृ० ६।

३ जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ४५२।

४ कहौं मुहम्मदसाह बखानूं, है सूरज दिल्ली सुलतानू।
सब काहू पर दाया धरई, धरम सहित सुलतानी करई।

५. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ४५२।

६. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० १८१।

७. सन् ग्यारह सै रहेउ, सत्तावन उपनाह
कहै लगेउ पोथी तबै, पाय तपी कर बांह।

८. यह इग्यारह से अठहत्तर, फेर सुनाएउ वचन मनोहर।

जन्म तथा स्थितिकाल—निसार वस्तुत कवि का एक उपनाम मात्र था और उनका वास्तविक नाम गुलाम अशरफ था।[1] कवि के पिता का नाम गुलाम मोहम्मद था।[2]

उस का जन्म सन् १७३३ ई० मे हुआ था जिसका परिचय 'यूसुफ जुलेखा' की इन पक्तियों से ज्ञात होता है :

हिजरी सन् बारह से पाचा, बरनेउ प्रेम कथा यह साचा।
सत्तावन व्रख बीतै आऊ, तब उपजेउ यह कथा कै चाऊ ॥

इसके अनुसार कवि ने 'यूसुफ जुलेखा' की रचना सन् १२०५ हि० (सन् १७९०. ई०) में की।[3] इस समय तक वह अपनी आयु के ५७ वर्ष बिता चुका था। इसी आधार पर उनका जन्म सन् १७३३ ई० ठहरता है।

निसार शाह आलम का समकालीन था। शाहेवक्त की ओर सकेत करते हुए उसने कहा है :

आलम शाह हिन्द सुलताना। तेहि के राज यह कथा वखाना।

रचनाएं—यूसुफ जुलेखा के अतिरिक्त कवि ने और सात ग्रन्थो का भी उल्लेख किया है .

सात ग्रन्थ अनूप बनाये, हिन्दी औ फारसी सोहाये।
ससकिरत तुर्की मन भाये, समै प्रेमरस भरे सोहाये ॥

११—शाह नजफ अली सलोनी

निवास-स्थान—कवि जिला रायबरेली का निवासी था।[4]

स्थितिकाल—इनका स्थितिकाल वि० स० १८९० (सन् १८३३ ई०) के लगभग ही होगा जो कि इनके आश्रयदाता रीवा नरेश महाराज विश्वनाथ सिह का समय है।[5]

रचनाएं—कवि की दो रचनाएं प्रसिद्ध है : अखरावटी तथा प्रेम चिनगारी।

अखरावटी अभी तक अनुपलब्ध है। प्रेम चिनगारी का रचना-समय इस प्रकार है :

सन् बारह से यकसठ मांहा, कहि यह कथा प्रेम औ गाहा।

अर्थात् सन् १२६१ हि० (सन् १८४५) मे ही कवि ने इस काव्य की रचना की थी।

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० १९८।
२. द्रष्टव्य—जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ ५०८।
३. वही, पृ० ५०९।
४. वही, पृ० ५३२।
५. वही, पृ० ५३२।

२—कश्मीरी तथा हिन्दी के सूफी-मुक्तक कवियों का परिचय

(क) कश्मीरी के मुक्तक कवियों का परिचय

१—लल्लेश्वरी (लल्लद्यद)

निवास-स्थान—वह एक कश्मीरी पडित घराने मे श्रीनगर से छ· मील दूर दक्षिणोत्तर की ओर सिमपुर नामक गाव में उत्पन्न हुई थी और वहा से दो मील के अन्तर पर स्थित प्रसिद्ध कस्बा पापुर मे ब्याही गई थी।[1] उस समय पापुर का नाम पद्मपुर था। शेख़ नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) ने उसके विषय मे कहा है कि पद्मपुर की लल्लेश्वरी धन्य है जिसने लगातार अमृत (मारिफत का मधु) के घूट पी लिंये। उसने इस सृष्टि में व्याप्त उस शिव की खोज की। हे प्रभु ! मुझे भी उस जैसी दृढ़ धारणा तथा एकत्व की अटल भावना से इस हृदय को आपूरित होने का वरदान दे।[2]

स्थितिकाल—इस महान् कवयित्री का जन्म सन् ७३५ हि० (सन् १३३४ ई०) मे हुआ था।[3] यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि वह चौदहवीं शताब्दी मे अमीर कबीर सैयद अली हमदानी की समकालीन थी। सन् १३७६-८० ई० से सन् १३८५-८६ ई० मे कश्मीर-यात्रा करने के समय ही लल्लेश्वरी

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—लल्लद्यद, भूमिका, पृ० ६।

२. तस पदमपुर चि लल्ले, तमि गले अमृत च्यव,
सु सआनिनअय अवतार ल्वोले, तिथय मे वर दितम दिवअह।
—नूरनामा, पृ० ६६।

३. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—कलाम लल्ल आरिफ़, प्रथम भाग, पृ० १५१।

उसके संपर्क मे आकर सूफी-सिद्धान्तो से प्रभावित हुई थी।[१] प्रो० जियालाल कौल के कथनानुसार लल्लद्यद चौदहवी शताब्दी के मध्य मे उत्पन्न हुई थी। ऐतिहासिक आधार पर महत्वपूर्ण इस शताब्दी मे कश्मीर मे इस्लाम के प्रादुर्भाव के साथ-साथ उसका प्रसार भी होने लगा था। कश्मीरी भाषा विचारो की अभिव्यक्ति का साधन बन गई थी अत उस मे साहित्य-रचना होने लगी थी। इसी कारण इस साहित्य के प्रवर्त्तको मे लल्लद्यद का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है।[२] ऐसा भी कहा जाता है कि इस संत-कवयित्री की भेंट कई बार शेख नूर-उद्-दीन (जो चरार शरीफ मे निवास करते थे) से भी हुई थी।[३] सैयद अली हमदानी ने जब प्रथम बार सन् १३७२ ई० मे कश्मीर की यात्रा की, उस समय यहा सुल्तान शहाब-उद्-दीन (सन् १३५४ ई०---सन् १३७३ ई०) का शासन था। इस आधार पर लल्लद्यद का चौदहवी शताब्दी मे होना निश्चित रूप से सिद्ध होता है जिसने अमीर कबीर सैयद अली हमदानी के साथ दूसरी बार कश्मीर आने पर भेंट की थी। 'अनुमानत लल्लेश्वरी का परलोकवास सन् १३८४ ई० से सन् १४०० ई० तक ही निश्चित करना उपयुक्त है।[४]

पारिवारिक जीवन—धनवान जमीदार की पुत्री लल्लेश्वरी की रुचि बचपन से ही रहस्यवाद के प्रति थी।[५] विवाह हो जाने पर वह अपने ससुराल मे सुखी न रह सकी। वहा उसका नाम पद्मावती रखा गया। पति, सास तथा समाज की क्रूरताओ को वह काफी समय तक सहन करती रही और अन्त मे उसने गृह-त्याग किया। अपना जो पृथक् ससार बसाया था, वह उसी मे जीवन-भर ध्यान-मग्न रही। दूसरे शब्दो मे यह कहा जा सकता है कि उसकी विचारधारा उस छोर तक पहुच गई थी जिसे तसव्वुफ या इश्क-हकीकी कहा जा सकता है।[६]

---

१ All that can be affirmed of her is that she certainly existed, and that she lived in the 14th century of the Christian era, being a contemporary of Sayyid Ali Hamdani at the time of his visit to Kashmir, 1379-80 to 1385-86. The doctrine of the Muhamdan sufis she no doubt learnt in her association with Sayyid Ali Hamdani.

—दि वर्ड आफ लल्ल, पृ० १-२।

२. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—लल्लद्यद, भूमिका, पृ० ६०।

३. वही, भूमिका, पृ० ११।

४. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—कअशिरिह अदबअच तअरीख, पृ० १५७।

५. कलामे लल्ल, पृ० २।

६. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० ११६।

गुरु—सिद्ध बायू (श्रीकण्ठ नाथ) नाम का एक विशिष्ट शैव-सन्त लल्लेश्वरी का गुरु अथवा आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक था।[1] उसने कश्मीर के उसी प्रसिद्ध संत सिद्ध श्रीकण्ठ से कश्मीर शैव-धर्म की दीक्षा ली।[2] गुरु-वचन ही उसके लिये सर्वस्व था:

> ग्वरअन वोननम कुनुय वचुन,
> न्यबरअह् द्रोपनम अन्दर अचुन,
> सु गव ललि मे वाख तअ वचुन,
> तवआय ह्युतुम नगअय नचुन।[3]

(गुरु ने मुझे एक यह वाक्य कह दिया कि बाहर की अपेक्षा तू भीतर हृदय मे झाक। मैने इसी बात को उसकी शिक्षा तथा आदेश के रूप मे ग्रहण करके मस्त होकर नगा नाचना आरम्भ किया।)

सूफीमत का प्रभाव—लल्ल हिन्दू-नारी होकर भी सूफी-सिद्धान्तो से प्रभावित थी। वास्तव मे उनके विचार उपनिषदो के ही रूपान्तर मात्र है।[4] सूफी-सत शम्स फकीर के कथानुसार लल्ल ने प्राण तथा आकाश के, एक कर दिया था। वह बहाना करके शुरहयार नामक स्थान पर स्नान करने गई किन्तु वही भव-सागर से पार हो गई। उसने 'नफ़्स' (सासारिक प्रलोभनो) पर विजय प्राप्त की थी। शेख नूर-उद्-दीन (नुदर्योश) को उपदेश देते हुए भक्तों ने उसकी शिक्षा को यथार्थ रूप में ग्रहण किया। लल्लेश्वरी ने शाह हमदान (अमीर कबीर सैयद अली हमदानी) का भी संसर्ग प्राप्त किया था।[5]

---

१. Adopted a famous Kashmiri Shaiva saint, named Sed Bayu, (Sri Kanth Nath), as her Guru or spiritual precepter.
—दि वर्ड आफ लल्ल, पृ० ७।

२. योजना, दिसम्बर, १९५६ अक, पृ० १५।

३. लल्लद्यद, पृ० १२।

४. वही, भूमिका, पृ० ७।

५. कओर ललि इकवअटअह् आकाश प्रानस, जान मिलनाव भगवानस सअत्य,
छलअह् गअयि लल्ल मअच् शुराहयार श्रानस, पल तमि कओर जग तिक-
तार तोरनस,
कलमि तमि चओटनय नफ़्स शेतानस, जान मिलनाव भगवानस सअत्य,
बोपदीश करनि गअयि नुंद रेशानस, रिंदव द्रोपहस ऐन अरफान,
छेपि छेपरस गिन्दुन शाह हमदानस, जान मिलनाव भगवानस सअत्य।
—शम्स फकीर, सपादक, प्रो० शम्स-उद्-दीन अहमद, पृ० ६८-६०।

गृह-त्याग के अनन्तर ही वह लल्लद्यद के नाम से प्रसिद्ध हुई।[1] इसका कारण यह बताया जाता है कि उसके पेट का निचला भाग, जिसे कश्मीरी मे 'लल्ल' कहते है, बढ गया था जो उसके गुप्त स्थान पर पर्दे का कार्य करता था।[2] उसने सारे कश्मीर मे हिन्दुओ, मुसलमानो, निर्धनो, धनवानो, साक्षरो तथा निरक्षरो आदि को समान रूप से प्रभावित किया। उसके उपदेशो का प्रभाव सब वर्गो पर गभीर रूप से पडा।[3] सूफी-सिद्धान्तो से ही प्रभावित होकर उसने कहा :

मायि ह्यु नग्र प्रकाश कुने, लयि ह्यु न तीरथ काह
दयस ह्यु नग्र बान्धव कुने, बयस ह्यु न स्वोख कांह।[4]

(प्रेम जैसा प्रकाश किसी वस्तु मे नही है। इश्क-हकीकी की भावना जैसा कोई तीर्थ नही है। ईश्वर जैसा बान्धव ससार मे कोई भी नही है तथा उसके भय से बढकर और कोई सुख नही है।)

लल्लेश्वरी को शैवमत दायाद रूप मे मिल चुका था अत इस सिद्धान्त का पालन करते हुए उसे शिव की महानता का विश्वास प्राप्त हुआ। उस प्रिय के प्रेम मे 'फ़ना' (निर्वाण) होकर 'बका' (अवस्थिति) की दशा प्राप्त करना ही उस के जीवन का परम लक्ष्य बन गया।[5]

काव्य-रचना—लल्लेश्वरी ने जो 'वाक्य' या 'वाख्य' लिखे उनकी कोई प्रामाणिक प्रति उपलब्ध नही। ये वाक्य या 'वाख्य' एक प्रकार की रुबाई है जिस मे चार चरण होते है।[6] समय-समय पर कतिपय विद्वानो ने उसके 'वाक्यो' को संग्रहीत करने का स्तुत्य प्रयास करके उन्हें प्रकाशित किया। महोदय सर जार्ज ग्रिग्रर्सन की प्रेरणा से महामहोपाध्याय प० मुकुन्द राम शास्त्री सन् १९१४ ई० में 'लल्ल वाक्यानि' की खोज मे गुश गाव चला। वहा के निवासी प० धर्मदास नामक एक वृद्ध ब्राह्मण ने अपने पूर्वजो से मौखिक रूप मे प्राप्त

---

१. मल वोन्दिह गोलुम, जिगर मोरुम,
त्यलि लल्ल नाव द्राम, यलि दग्रल्य त्रग्रवीमस तग्रती।—लल्लद्यद, पृ० ३४।
२. लल्लद्यद, भूमिका, पृ० १०।
३. वही, भूमिका, पृ० १३।
४. वही, भूमिका, पृ० १३५।
५. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० १०७।
६. कग्रशिरिह् ग्रदबग्रच तग्ररीख, पहला भाग, पृ० १९७।

इन वाक्यो को कठस्थ किया था। महामहोपाध्याय प० मुकुन्द राम शास्त्री ने उन्हें उनसे सुनकर लिपिबद्ध किया और बाद में सन् १६२१ ई० मे ग्रियर्सन महोदय ने उन्हे अग्रेजी अनुवाद सहित प्रकाशित किया।[१] ये वाक्य 'तसव्वुफ तथा मारिफत के कोष है। यह इश्क-हकीकी का एक ऐसा सग्रह है जिस मे हकीकत की झलक स्पष्ट रूपेण प्रकट होती है।[२] शैवमत तथा त्रिकदर्शन से प्रभावित लल्लेश्वरी के वाक्य सूफीमत के सम्मिश्रण के कारण आध्यात्मिक मिलन की अमर अभिव्यक्ति के स्त्रोत है।[३] उन 'वाक्यो' का एक सग्रह प्रो जियालाल कौल द्वारा सपादित है तथा उसमे प्रो० नन्दलाल कौल तालिब ने उनका सफल अनुवाद भी उर्दू मे प्रस्तुत किया है।

२—शेख नूर-उद्-दीन (नुंदर्योश)

जीवन परिचय—शेख नूर-उद्-दीन का जन्म कैमुह नामक ग्राम (प्राचीन नाम कटीमुश) मे सन् १३७७ ई० ईद-अल-अजहा के दिन हुआ था। यह गाव बिजिबिहारा से दो मील पश्चिम की ओर है। बिजिबिहारा श्रीनगर से अट्ठाईस मील की दूरी पर दक्षिण-पूर्व मे स्थित है। उसके पिता का नाम शेख सत्तार-उद्-दीन था। माता का नाम सद्र था जिसे सभी सद्रमोजी या सद्रद्यद के सम्मानीय नामो से पुकारते थे।[४] उसके पूर्वक किश्तवार के राजा थे जो अब घाटी मे आकर रहने लगे थे।[५]

बाल्यकाल से ही उसमें आध्यात्मिक विचारों का प्राबल्य था। वह अधिक शिक्षित न था। कश्मीर के ऋषि-संप्रदाय का प्रवर्त्तक उसे ही माना जाता

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—लल्लद्यद, भूमिका, पृ० ३१।

२. द्रष्टव्य—वही, पृ० १४।

३. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—शैवमतुक तऊ तसव्वुफक इम्तज़ाज—रेडियो वार्ता।

४ Shaikh Nur-ud-Din was born in a village called Kaimuh (old name Katimush), two miles to the west of Bijbihara which is 28 miles south-east of Srinagar in 1377 A. D. on the day Id-ul-Azha. His father's name was Shaikh Satar-ud-Din. His mother Sadra, was called Sadra moji or Sadri Deddi.

—कशीर, प्रथम भाग, पृ० ६८।

५. His ancestors belonged to a noble family of Kishtwar and had emigrated to the valley,

—ए हिस्ट्री आफ कश्मीर, पृ० ४८६।

है ।[1] हिन्दू उसे नुदर्योश अथवा सहजानन्द के नाम से पुकारते है ।[2] उसके साधुत्व एव आध्यात्मिक समन्वय की कीर्ति चारो ओर फैली जिसके परिणाम-स्वरूप उसकी एक विशिष्ट शिष्य-मण्डली बनी।

वह विवाहित था। उसका विवाह परगना प्रग के एक गाव सागाम मे जय नामक एक लडकी के साथ हुआ था।[3] उसके पुत्र का नाम तोलद तथा पुत्री का नाम जून था। पिता की मृत्यु होने पर वह परिवार के लालन-पोषण के लिये माता से प्रेरणा प्राप्त कर एक जुलाहे के पास काम सीखने चला गया।[4] ससार के प्रति विरक्त रहने के कारण उसने कैमुह गाव के निकट 'शाहमार टेग' के स्थान पर एक गुफा खुदवाई, जहां वह तपस्या मे लीन हुआ।[5] उसे अपने सभी समसामयिक ऋषियो तथा फकीरो का ससर्ग प्राप्त था।[6] उसने अमीर कबीर सैयद अली हमदानी, उसके पुत्र पीर सैयद अली हमदानी तथा सैयद हुसैन सिमनानी का भी सहवास प्राप्त किया था। लल्लेश्वरी के प्रति भी उसके हृदय मे सम्मान की भावना सन्निहित थी। रोपवन मे सात वर्ष व्यतीत करने के अनन्तर सन् ८४२ हि० (सन् १४३८ ई०) मे वे परमधाम को सिधार गए।[7] इस प्रकार नुंदर्योश (शेख नूरुद्दीन) ने कुल ६१ वर्ष की आयु भोगी। कश्मीर में इस सूफी-सत की दो जियारते प्रसिद्ध है—पहली चरार शरीफ मे है तथा दूसरी द्रय गाम मे स्थिति है।[8]

रचनाएं—शेख नूर-उद्-दीन के श्लोक (स्रुकी) 'नूर नामा' मे सग्रहीत है। इस सूफी-सत की दूसरी रचना का नाम 'ऋषि-नामा' है जिसमे कुछ श्लोक सवाद रूप मे दिये गये है। कवि ने इन श्लोको मे प्रश्न करके उनका उत्तर भी

---

१. Nund-Rishi, the great founder of the order of the Rishis of Kashmir.
—वही, पृ० ४८६।

२. Hindus call the saint Nund Rishi or Sahjanand.
—कशीर, प्रथम भाग, पृ० १००।

३. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० १५७।

४ वही, पृ० १५८।   ५. वही, पृ० १६३।

६. कश्रगिरिह अदबअच तअरीख, पहला भाग, पृ० ,६६।

७. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० १८७।

८. वही, पृ० १७३।

श्लोको मे ही दिया है। कवि के इन श्लोको मे सदाचार तथा तसव्वुफ आदि सब कुछ उपलब्ध है।[१] जैन-उल-आब्दीन (बडशाह) के समय मे कवि के श्लोकों एव सूक्तियो का अनुवाद सस्कृत मे भी हुआ था जो अब प्राप्त नही है।[२]

'नूरनामा' शेख नूर-उद्-दीन की मृत्यु के दो वर्ष उपरान्त बाबा नसीब-उद्-दीन गाजी द्वारा फारसी मे लिखा गया था।[३]

३—स्वच्छ क्राल

जीवन परिचय—स्वच्छ क्राल के जन्म एव मृत्यु के विषय मे बहुत कम ज्ञात है। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि वह महमूद गामी (सन् १७६५ ई०—सन् १८५५ ई०) का समकालीन था।[४] उसका निवासस्थान तहसील पुलवामा के इन्द्र नामक गाव मे था। मृत्यु होने पर उसे वही दफनाया गया। इस गाव में कवि की कबर आज भी सुरक्षित है।

वह जाति से कुम्हार था और गाव वालो के लिये मिट्टी के बर्तन बनाया करता था। कश्मीरी मे क्राल' का अर्थ ही कुम्हार है।

काव्य—स्वच्छ क्राल का मुक्तक काव्य सूफी सिद्धान्तो से भरा पडा है। उस की कविताओ का कोई संग्रह अभी तक पृथक् रूप से प्रकाशित नही हुआ है, केवल कवि की कुछ-एक कविताए सूफी-शाअयिर, प्रथम भाग मे प्रकाशित हुई है।[५] कवि ने अपनी कविताओ मे उपनाम का प्रयोग न करके स्वच्छ क्राल के नाम का ही उपयोग किया है।[६]

४—शाह गफूर

जीवन परिचय—शाह गफूर के व्यक्तिगत जीवन के सम्बन्ध मे कुछ पता नही चलता और न उसके जीवन-काल के विषय मे ही कहीं कोई सकेत मिलता

---

१. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—कअशिरिह अदबअच तअरीख, प्रथम भाग, पृ० १७७।

२. It was written by Baba Nasib-ud-Din Gazi in Persian about two centuries after the death of Shekh-Nur-ud-Din. —कशीर, प्रथम भाग, पृ० १००।

३. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी शाअयिर, प्रथम भाग, पृ० ६१।

४. वही, पृ० ६१।

५. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७६-१०२।

६. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७७, ८०, ८३, ८६, ८८, ९१, ९३, ९५, ९७, ९९, १०२।

है। उसके विषय मे केवल इतना ज्ञात है कि उसका निवासस्थान छुवन, बडगांव मे था और वह महमूद गामी का पूर्ववर्ती कवि था। वह कुछ समय तक उसका समकालीन भी रहा। उसके वश के कुछ लोग अब भी सदरबल मे निवास करते है।[१]

उसके गुरु या पीर का नाम शाह इब्दाल था जो ढाई सौ शिष्यो को साथ लेकर ईरान से कश्मीर आया था। कवि ने उसकी प्रशसा मे कहा है कि शाह इब्दाल पहुचे हुए पीर थे। उन मे ईश्वरीय सौदर्य टपक रहा था और तभी मैंने उस का आंचल पकडा।[२]

काव्य—कवि की प्रमुख कविताए सूफी शअयिर, दूसरा भाग मे प्रकाशित हुई हैं।[३] उनके काव्य पर वेदान्त एव शैवमत का पूर्ण-रूपेण प्रमाद पडा है।[४]

५—महमूद गामी

इस कवि का परिचय कश्मीरी-प्रबन्धकारो के कवि परिचय के अन्तर्गत दिया गया है। द्रष्टव्य—परिशिष्ट, कवि सख्या न० १ (क) १।

६—नग़मा साहब

जीवनपरिचय—इस कवि के जीवन-चरित् के विषय मे अधिक ज्ञात नही है। उसका मूल नाम नईम था और सन् १८०५ ई० से पूर्व ही उसने जन्म लिया होगा। वह चक्राल मुहल्ला, श्रीनगर मे रहा करता था।[५] कहा जाता है कि कश्मीर का सूफी कवि शम्स फकीर उसका पडौसी था। नगमा साहब ज़ैनदार मुहल्ला के एक शाल बनाने वाले कारखाने मे काम किया करता था। जिस समय शम्स फकीर भी उस कारखाने मे काम करने आये, नगमा साहब काफी वयोवृद्ध हो चुके थे।[६]

नगमा साहब के गुरु का नाम स्वच्छ मलयार था जिनकी कब्र करफली

---

१. सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० ७३।

२. पओरुतह क्याह मओस्तह चओट शाह इब्दालन, तअ बरिथ छु सूरे गवहरो, दामान रओटनस शाह गफ़ूरन तअ, वन्तअ लवहे लवहस तअ लो—वही, पृ० १०८।

३ द्रष्टव्य—सूफी शअयिर दूसरा भाग, पृ० ९५-१००।

४. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—फलसफस मज सोन मीरास, रेडियो वार्ता।

५. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी सअयिर, पहला भाग, भूमिका, पृ० ६२।

६. वही, भूमिका, पृ० ६२।

मुहल्ला मे विद्यमान है ।[१]

कवि की मृत्यु सन् १८८० ई० मे हुई और उन्हे नरपीरस्तान मे दफन कर लिया गया ।[२]

काव्य—काव्य की गजले 'सूफी शग्रयिर', पहला भाग मे प्रकाशित की गई है ।[३] उनमे उसने अपना उपनाम 'नगमा' ही प्रयुक्त किया है ।[४]

७—रहमान ड़ार

जीवन-परिचय—'रहमान डार' एक प्रसिद्ध सूफी कवि था और महमूद गामी का समकालीन था । उसका निवासस्थान मुहल्ला सफाकदल, श्रीनगर मे था ।[५]

कवि का पुत्र हबीब डार एक श्रेष्ठ कवि था । उसने भी कई गजलो की रचना की ।[६]

काव्य—कवि का फुटकर काव्य 'सूफी शग्रयिर, पहला भाग' मे सग्रहीत है ।[७] उसकी कविताओ मे से 'माछतुलग्रर' (मधुमक्खी) नामक कविता अत्यन्त प्रसिद्ध है ।[८]

कवि ने अपनी एक गजल 'जानानग्रह् बुछ हर रोग्रय' (प्रेमी को हर ओर देखो) में शाह जीलान (शेख सैयद अब्दुल कादिर जीलानी) की प्रशंसा की है जिस से यह विदित होता हैं कि वह कादिरी सप्रदाय से सम्बन्धित था ·

पीर म्यानि शाह जीलानग्रह्, छुम दिलस स्यठायि आरजुये ।
लारग्रह् बगदाद पानग्रह्, जानानह् बुछ हर रोग्रये ।[९]

८—वहाब खार

इस कवि का परिचय कश्मीरी-प्रबन्धकारो के कवि-परिचय के अन्तर्गत

---

१. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी शग्रयिर, पहला भाग, भूमिका, पृ० ६२।
२. वही, पृ० ६२ । ३. पृ० १०४-१३३ ।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० १०५, १०७, १११, ११४, ११७, ११६, १२१, १२६, १३१, १३३ ।
५. मूल उर्दू के लिए द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० ३३६।
६. वही, पृ० ३३६ ।
७. द्रष्टव्य—सूफी शग्रयिर, पहला भाग, पृ० १३६-१६८ ।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० १६४-१६८ ।
९. द्रष्टव्य—वही, पृ० १५८ ।

दिया गया है। द्रष्टव्य—परिशिष्ट, कवि सख्या न० १ (क) ६।

६—शम्स फकीर

निवास स्थान—कवि का निवास-स्थान चक्काल मुहल्ला, श्रीनगर था।[1]

जन्म—उसका जन्म सन् १२५६ हि० (सन् १८४३ ई०) मे हुआ था। वचपन का नाम मुहम्मद सद्दीक भट्ट था।[2]

पारिवारिक जीवन—कवि के बाल्यकाल के विषय मे कुछ अधिक ज्ञात नही है। निर्धन होने के कारण वह मकतब की शिक्षा से भी वचित रहा। पिता कश्मीरी शाल बनाने का धन्धा किया करता था। उसकी एक बहिन और भाई भी था। आध्यात्मिक शिक्षा का यत्किंचित् ज्ञान उसे घर पर ही माता-पिता द्वारा दिया गया है।[3] यद्यपि पिता ने उसे भी शाल बनाने के कारखाने मे कार्य करने भेज दिया किन्तु उसने उस मे कोई विशेष रुचि नही दिखलाई। जिस कारखाने में वह कार्य करने जाता, वही पर प्रसिद्ध वयोवृद्ध सूफी-कवि नगमा साहव भी काम करता था। उसी के सहवास मे शम्स फकीर ने सूफी-सिद्धान्तो मे प्रवीणता प्राप्त की। एक ही मुहल्ले मे भी रहने के कारण उन दोनों का साथ दृढ रहा।[4] सन् १२८३-८५ हि० (सन् १८६६-६८ ई०) मे जब कवि की आयु चौबीस-पच्चीस वर्ष से अधिक न थी, वह किसी कलन्दर से शिक्षा प्राप्त करने के लिये अमृतसर पहुचा। वहां कुछ वर्ष रहने के अनन्तर जब वह लौटा तो इस्लामाबाद (अनन्तनाग) मे रहने लगा।[5] वहा उसने अजीज भट्ट की पुत्री के साथ विवाह किया।[6] उनसे कवि की दो लडकिया और दो लडके उत्पन्न हुए। छोटी लडकी बाल्यकाल मे ही काल-कवलित हुई।[7]

शम्स फकीर के साहित्यिक सहकार वहाबखार, अहमद बटवारी, वाजह महमूद तथा महमूद सिराज जैसे सूफी-कवि थे।[8] कवि ने काफी समय तक गुफा

---

१. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, तीसरा भाग, भूमिका, पृ० ५६।
२. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—वही, भूमिका, पृ० ५६।
३. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—शम्स फकीर, प्रो० शम्स-उद्-दीन अहमद, पृ० ५।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६। ५. द्रष्टव्य—वही, पृ० ७-८।
६. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, तीसरा भाग, पृ० ६०।
७ मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—शम्स फकीर, प्रो० शम्स-उद्-दीन अहमद, पृ० ५।
८. द्रष्टव्य—वही, पृ० ६।

में जाकर भी तपस्या की।

उसके बड़े भाई का नाम मुहम्मद शेख था जो श्रीनगर के कृषिपुर, तहसील बडगाम मे आकर रहने लगा था। उसने कवि को भी अपने पास यही बुलाया।[१] इसी स्थान पर वह सन् १३२२ हि० (सन् १६०४ ई०) मे परलोक सिधार गया।[२]

गुरु—श्रीनगर मे या श्रीनगर से बाहर कश्मीर में जितने प्रसिद्ध एव प्रख्यात पंडित थे, उन सबका ससर्ग शम्स फकीर को प्राप्त था। बर्जुल के अब्दुर्रहमान, कलाय इन्द्र के अतीक अल्लाह, गुलाब बाग (हजरत बल) के मुहम्मद जमाल-उद्-दीन तथा श्रीनगर के रसूल साहब हाकचर से वह ज्ञान-प्राप्ति करता रहा। तदनन्तर वह ज्ञान-प्राप्ति के लिये अडह् कदल (बाघोर, तहसील बडगाम) मे कमाल-उद्-दीन के चरणो मे बैठ गया।[३]

काव्य—शम्स फकीर के मुक्तक-काव्य के तीन सग्रह उपलब्ध हुए है—(१) शम्स फकीर, सपादक, प्रो० शम्स-उद्-दीन अहमद (२) सूफी शअ्यिर, तीसरा भाग, सपादक, मुहम्मद अमीन कामिल[४] तथा (३) बगाज़े शम्स फकीर, संपादक, मौलवी बद्र-उद्-दीन कादिरी।

१०—अहमद बटवारी

निवास-स्थान—अहमद बटवारी के विषय मे निश्चित रूप से यही ज्ञात होता है कि उसका निवासस्थान श्रीनगर से तीन मील दूर बटवारा नामक स्थान था जैसा कि उसके नाम से ही प्रकट होता है।

जन्म तथा मृत्यु—कवि का जन्म सन् १८४५ ई० मे तथा मृत्यु सन् १६१८ ई० में हुई थी। वह साधु-जीवन व्यतीत करता था तथा अपने-आप को सासारिक बन्धनों से भी दूर रखता था।[५]

काव्य—कवि का मुक्तक-काव्य सूफी शअ्यिर, प्रथम भाग में प्रकाशित हुआ है।[६] 'नय' (बासुरी) कवि की एक प्रसिद्ध गज़ल है।[७] प्रत्येक गज़ल सूफी-

---

१. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी ज़बान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० ३४।
२. शम्स फकीर, प्रो० शम्स-उद्-दीन अहमद, पृ० ६।
३. मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—शम्स फकीर, प्रो० शम्स-उद्-दीन अहमद, पृ० ६।
४. द्रष्टव्य—सूफी शअ्यिर, तीसरा भाग, पृ० ७६-१०४।
५. सूफी शअ्यिर, पहला भाग, पृ० ७२।
६. द्रष्टव्य—सूफी शअ्यिर, पहला भाग, पृ० १०७-२०६।
७. द्रष्टव्य—वही, १७०-१७२।

सिद्धान्तो से पूर्ण है।

११—शाह कलन्दर

कवि का स्थितिकाल सन् १८५० ई० के लगभग माना गया है।[१] उसके जीवन के विषय मे बहुत कम ज्ञात है।

शाह कलन्दर का मुक्तक काव्य 'सूफी शअयिर' दूसरा भाग मे प्रकाशित हुआ है।[२]

१२—असद परे

जन्म तथा मृत्यु—कवि का जन्म सन् १८६२ ई० मे तथा मृत्यु सन् १९२० ई० मे हुई।[३]

निवास-स्थान—उसका निवास-स्थान हाजन गाव था।[४]

काव्य—कवि के काव्य का संग्रह प्रो० मही-उद्-दीन हाजनी ने तीन भागों मे प्रकाशित किया है। इस सग्रह मे कवि की जिन गजलो को स्थान दिया गया है, उन्हे संपादक ने हाजन गाव के किसी निवासी से श्रवण करके लिपिबद्ध किया। कवि की कुछ फुटकर कविताए 'सूफी शअयिर, दूसरा भाग' मे भी प्रकाशित हुई है।[५]

१३—वाजह महमूद

निवास-स्थान—कवि का निवास-स्थान नवाब बाज़ार, श्रीनगर था।[६]

जन्म तथा मृत्यु—प्रो० मही-उद्-दीन हाजनी ने कवि का जन्म सन् १८३४ ई० तथा निधन सन. १९२४ ई० मे माना है।[७] आजाद महोदय ने कहा है कि कवि का परलोकवास सन् १९१६ ई०—सन् १९१८ ई० के बीच हुआ। अभी तक कवि के जन्म तथा मृत्यु के विषय मे निश्चित रूप से कुछ ज्ञात नही हुआ है।

---

१ मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, दूसरा भाग, पृ० ८१।
२. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३५-१४६।
३. द्रष्टव्य—वही, भूमिका, पृ० ८६।
४. हाजनुक असद गजल खानै, साहब.दिल नियी वनानथ—वही, पृ० १८९।
५. द्रष्टव्य—वही, पृ० १८३-२०४।
६ मूल उर्दू के लिये द्रष्टव्य—कश्मीरी जबान और शायरी, दूसरा भाग, पृ० ४०७।
७. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—सूफी शअयिर, तीसरा भाग, भूमिका, पृ० ६१।

काव्य—कवि की मुक्तक कविताए सूफी-शग्रयिर तीसरा भाग मे सग्रहीत है।[१] अधिकतर उसने गीत एव गजलो की ही रचना की है।

१४—अहमद राह

निवास-स्थान—डलगेट, श्रीनगर ही कवि का निवास-स्थान था।[२]

जन्म तथा मृत्यु—कवि के जीवन तथा मृत्यु के विषय मे कुछ ज्ञात नही है। वह साधु प्रकृति का व्यक्ति था तथा चर्च मिशन स्कूल के बोटो की निगरानी करता था।[३]

काव्य—उनका मुक्तक काव्य 'सूफी शग्रयिर, तीसरा भाग' में सग्रहीत है।[४]

(ख) हिन्दी के मुक्तक-कवियों का परिचय

१—अमीर खुसरो

जीवन-परिचय—अमीर खुसरो का मूल नाम अबुल हसन था। उसका जन्म एटा जिला के पटियाली ग्राम मे सवत् १३१० (सन १२५३ ई०) मे हुआ था।[५] अपने जीवन-काल मे उसने राजनीतिक हलचलों का जितना अधिक अनुभव किया था, उतना हिन्दी के किसी भी कवि ने नही किया। उसने गुलाम वश के पतन से लेकर तुगलक वंश का आरम्भ तक देखा था।' उसकी मृत्यु सवत् १३८१ (सन् १३३४ ई०) मे हुई।[६] मरणोपरान्त उसे निजामुद्दीन औलिया की कब्र के निकट ही दफन किया गया।

गुरु—वे प्रसिद्ध सूफी पीर निजामुद्दीन औलिया के मुरीद थे।[७]

रचनाएं—अरबी, फारसी, तुर्की और हिन्दी भाषाओं मे कुल मिलाकर उन्होंने ९९ ग्रन्थों की रचना की थी जिस मे से इस समय केवल २२ ही उपलब्ध है। उन मे से भी उनकी मसनवियो की सख्या अधिक है। उनकी हिन्दी रचनाओं

---

१. मूल कश्मीरी के लिये द्रष्टव्य—वही, पृ० ११४-१३६।
२. द्रष्टव्य—वही, भूमिका, पृ० ६४।
३. द्रष्टव्य—वही, भूमिका, पृ० ६४।
४. द्रष्टव्य—वही, पृ० १३८-१५२।
५. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३०१।
६. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० ५३।
७. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २२३।

के विषय अधिकतर दैनिक अनुभवो से सम्बन्ध रखते है।[1] फारसी का विद्वान होते हुए भी उनको खडी बोली का सर्वप्रथम कवि माना जाता है। उन्होंने अपनी 'आशिका' नामक रचना मे हिन्दी की बडी प्रशसा की है।[2] उसकी कविता पहेलियो, मुकरियो, ढकोंसलो तथा फुटकल पद्यो तथा गीतो के रूप मे उपलब्ध है।

२—अब्दुल कद्दूस गंगोही

निवास-स्थान—कवि का निवास-स्थान मूलत रूदौली (जि० बाराबाकी) था। कुछ वर्ष उपरान्त जब वे गगोह (जिला सहारनपुर) मे आकर रहने लगे, वे गगोही कहे जाने लगे।[3]

स्थितिकाल—'गंगोही' का जन्म सन् ८६० हि० (सन् १४५५ ई०) मे हुआ था।[4] वे एक धर्मनिष्ट व्यक्ति थे और बाल्यकाल मे सदा मस्जिदो मे जाकर वहां पर आए हुए लोगों के जूते सभाला करते थे। इन मे सिकन्दर लोदी, बाबर, हुमायू जैसे बडे-बडे बादशाह तक उपदेश ग्रहण करते थे। इनका देहान्त सन् ६४४ हि० (सन् १५३७ ई०) मे हुआ था जब वे ८० वर्ष की अवस्था से भी अधिक के हो चुके थे।[5]

रचनाएं—कवि की अधिकतर रचनाए फारसी मे उपलब्ध है। कुछ उन के दोहे भी मिलते है। 'इनकी पुस्तक' (मुर्शिदनामा) मे हिन्दी रचनाए भी सग्रहीत है।[6]

३—मलिक मुहम्मद जायसी

इस कवि का परिचय हिन्दी प्रबन्धकारो के कवि परिचय के अन्तर्गत दिया गया है। द्रष्टव्य—परिशिष्ट, कवि सख्या—१ (ख) ३।

---

१ सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २२३।

२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३०२।

३. वही, २२५।

४. वही, पृ० २२५। सन् ८६० हि० (सन् १४५३ ई०) के लिये द्रष्टव्य—कम्परेटिव टेबुल्ज आफ हिजरी एण्ड क्रिश्चयन डेट्स।

५. वही, पृ० २२६, प० परशुराम चतुर्वेदी ने सन् ८६० हि० (सन् १४५६ ई०) माना है, जो ठीक नही बैठता। द्रष्टव्य—कम्परेटिव टेबुल्ज आफ हिजरी एण्ड क्रिश्चयन डेट्स।

६. वही, पृ० २२६।

४—शेख़ फरीद

जन्म-स्थान—शेख फरीद का जन्म खोतवाल (कोठीवाल) गाव में हुआ था, जो दीपालपुर के सन्निकट है।[१]

जीवन-परिचय—उनके जन्म समय का कोई पता नही चलता है। वे 'प्रसिद्ध बाबा फरीद के वशधर थे जिनको शेख फरीदुद्दीन चिश्ती वा शकरगज स० १५३०-१६२२ (सन् १४७३ ई०—सन् १५६५ ई०) भी कहा जाता है। इनके भी कई अन्य नाम जैसे 'फरीद सानी', 'शेख ब्रह्म साहब', 'सलीम फरीद', तथा 'शेख इब्राहीम' आदि सुने जाते है।[२] उनके पिता का नाम जलालुद्दीन मुलेमान था।[३] डा० मैकालिफ ने खुलासातुत्तवारीख के आधार पर उनकी मृत्यु २१ वी रज्जब हिजरी ६६० अर्थात् सन् १५५३ ई० मे निश्चित की है।[४] उनकी भेंट दो बार गुरु नानक देव से हुई थी और दोनो बार सतसग भी हुआ था। इस समय उनकी गद्दी पाक-पटन मे चलती है।[५] उनके शिष्यो मे शेख सलीम चिश्ती फतेहपुरी का नाम प्रसिद्ध है।[६]

गुरु व हज-यात्रा—फरीद जी उन्नीस वर्ष की आयु मे अपने गुरु सैयद नज़ीर अहमद और माता-पिता के साथ काबा हज करने गए। उस समय वहा पाक कुतुबुद्दीन गौस और शेख अब्दुल कादिर जीलानी भी गए हुए थे। उनका दर्शन करके भी फरीद जी कृतार्थ हुए। हज से वापसी पर वे अजमेर गए जहा उन्होने फकीर ख्वाजा गरीब नेवाज के भी दर्शन किए।[७]

रचनाएं—बाबा फरीद का मुक्तक-काव्य आदि ग्रन्थ मे सग्रहीत है। इन मे से कुछ सलोक तथा पद है। इनकी एक सटीक वाणी भी उपलब्ध है।[८]

---

१. मूल पजाबी के लिये द्रष्टव्य—बाबा फरीद दर्शन, प्रो० दीवान सिह, प्रकाशक, सिक्ख पब्लिशिग हाऊस, कनाट प्लेस, नई दिल्ली, पृ० ५।
२. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० २३४।
३. मूल पंजाबी के लिये द्रष्टव्य—बाबा फ़रीद दर्शन, पृ० ५।
४. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३०२। सन् ९६० हि० सन् १५५२ ई० ठहरता है, सन् १५५३ ई० नही। द्रष्टव्य—कम्परेटिव टेबुल्ज़ आफ हिजरी एण्ड क्रिश्चयन डेट्स।
५ मूल पजाबी के लिये द्रष्टव्य—बाबा फरीद दर्शन, पृ० ४।
६ सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० २३५।
७. मूल पजाबी के लिये द्रष्टव्य—बाबा फरीद दर्शन, पृ० ७।
८. मूल पंजाबी के लिये द्रष्टव्य—शेख़ फरीद जी दी वाणी।

उनके पदो और सलोको मे उनके कोमल हृदय तथा गहन अनुभव का विशेप परिचय मिलता है।

५—यारी साहब

जीवन-परिचय—यारी साहब का मूल नाम यार मुहम्मद था,[१] और उनके पूर्वज दिल्ली के शाही घराने से सम्बन्ध रखते थे। ये पहले सूफी-सप्रदाय के अनुयायी थे। किन्तु पीछे बावरी साहिबा के शिष्य बीरू साहब के प्रभाव मे आ गये।[२] उन्होने ही चेताकर इन्हे शब्द मार्ग का रहस्य बताया। आज भी उनकी बानिया प्रचलित एव लोक-प्रिय है।

इनका जीवन-काव्य विक्रम की १८ वी शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे पडता है और इनकी गद्दी दिल्ली मे इस समय भी वर्तमान है। इनके मुरीदो मे केसोदास, सूफी शाह, शेखनशाह, हस्त मुहम्मद और बूला साहब अधिक प्रसिद्ध है।[३]

रचनाएं—'रत्नावली' के नाम से उनका एक छोटा-सा सग्रह वेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद से प्रकाशित हुआ है। उन्होने भजन, कवित्त, सारवी तथा झूलने आदि के अतिरिक्त 'अलिफनामा' भी लिखा है जो इस समय काशी नागरी प्रचारिणी सभा के हस्तलिखित ग्रन्थो मे प्राप्त है।

६—पमी

जीवन परिचय—कवि का मूल नाम बर्कन अल्लाह था।[४] पेमी उसका उपनाम था। उसके द्वारा रचित 'पेमपरकाश' नाम की पुस्तक मे 'पेमी' नाम का उल्लेख कई स्थानो पर आता है। उस मे अपना परिचय देते हुए कवि ने केवल इतना कहा है कि मै श्रीनगर का निवासी हू और मेहरा (जिला एटा) ऐसे नगर मे आ बसा जहा न तो 'साह' रहते है न 'चोर' ही। वह अपने को 'पूरब' का 'पुरबिया' भी कहता है जिसकी 'जातपात' कोई नही पूछा करता और इस परिचय मे कोई आध्यात्मिक सकेत भी हो सकता है।[५]

गुरु—उसने किसी शाह महीउद्दीन की प्रशसा की है। हो सकता है कि ये शाह मुहीउद्दीन चिश्ती ही हो।[६]

---

१. सूफी काव्य-संग्रह, पृ० २३६।
२. वही, पृ० २३६।
३ वही, पृ० २३६।
४ वही, पृ० २३८।
५ वही, पृ० २३६।
६. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, ०पृ ३१०।

रचनाएं—'पेम प्रकाश 'मै' रचना-काल सन् ११०६ हि० (सन् १६६७ ई०) दिया गया हैं। उसने लिखा है कि वह 'औरंगजेब के राज्य' में निर्मित की गई है। इस रचना मे कवित्त, छप्पय तथा पदो के अतिरिक्त राग-रागिनियों का भी समावेश है।

७—बुल्लेशाह

जीवन-परिचय— बुल्लेशाह का जन्म लाहौर जिले के पडोल नामक गाव मे संवत् १७७३ (सन् १७१६ ई०) मे हुआ था। उनके पिता का नाम मुहम्मद दरवेश था।[४] वे आजन्म ब्रह्मचारी रहकर कुसूर नामक स्थान मे साधना मे रत रहे। 'उनकी मृत्यु स० १८१० (सन् १७५३ ई०) मे हुई[१] और उनकी कब्र इस समय कुसूर गाव मे विद्यमान है।

गुरु—वे सूफी इनायत शाह को अपना पथ-प्रदर्शक पीर स्वीकृत करते थे और कादिरी शत्तारी सप्रदाय के अनुयायी थे।[३]

रचनाएं—उसकी रचनाओं मे सहिर्फी अटवारा, बारामासा, काफ़ी तथा दोहरे आदि विशेष रूप से प्रसिद्ध है।[८] उसकी काफियों का सग्रह (काफिया बुल्लेशाह) के नाम से प्रकाशित हुआ है। रचनाओ का विषय अधिकतर उपदेश-परक है। भाषा पर पजाबीपन का प्रभाव अधिक है।

८—दीन दरवेश

जीवन-परिचय—दीन दरवेश का समय उन्नीसवी सदी का पूर्वार्द्ध बताया गया है।[५] वे विक्रम की उन्नीसवी शताब्दी का पूर्वार्द्ध समाप्त होते होते मर गये थे।[६]

वे गुजरात प्रान्त के पालनपुर राज्य के अन्तर्गत किसी गाव के रहने वाले एक साधारण लोहार थे। वे कुछ दिनो ईस्ट इडिया कपनी की सेना के साथ मिस्त्री का काम करते रहे और गोले से एक हाथ कट जाने के कारण उस नौकरी से अलग हुए। बेकार बनकर भ्रमण करते समय उन्होंने अनेक

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २४१।
२. वही, पृ० २४१।
३. वही, पृ० २४१।
४. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३११।
५. वही, पृ० ३११।
६. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० २४४।

साधुओ और सूफियों के साथ सत्सग किया जिसके प्रभाव मे वे विरक्त हो गए। वे अत मे काशी आकर रहने लगे थे और समय-समय पर उपदेश-भरी रचनाएं किया करते थे।[1]

रचनाएं—उनके दो ग्रन्थो 'दीन प्रकाश' तथा 'भजन भडाका' का उल्लेख मिलता है किन्तु वे अप्राप्य है। उन्होने कुडलियो की भी रचना की थी। उनका जो कुछ भी काव्य उपलब्ध है उस मे अनुभूति की गभीरता एवं हृदय की उदारता के दर्शन होते है। वे भाव-मुक्तक की कोटि मे रखे जा सकते है।

६—नज़ीर

निवास-स्थान—नज़ीर के पिता दिल्ली के रहने वाले मुहम्मद फारूक थे। ये आगरा अर्थात् अकबराबाद मे बाद मे आ बसने के कारण अकबराबादी नाम से प्रसिद्ध हुए।[2]

जन्म तथा मृत्यु—इनका जन्म सन् १७४० ई० के लगभग हुआ था।[3] इनका देहान्त सवत १८८७ (सन् १८३० ई०) के लगभग हुआ था।[4]

काव्य रचना—ये अरबी तथा फारसी के अच्छे ज्ञाता थे। धार्मिक उदारता के साथ इन मे सूफी-विचारधारा का भी प्राबल्य था जिसके प्रति वे जीवन के अन्तिम दिनो मे आकर्षित हुए थे। इनकी भाषा अपनी सादगी और चुटीलेपन मे अद्वितीय है।[5] इन्होने अपना काव्य फारसी वज़नो के अनुसार लिखा।

१०—अब्दुल समद

निवास-स्थान—इनके पूर्वज सभवतः अफगानिस्तान से आये थे।[6] इनकी जन्मभूमि कोरा जहानाबाद फतेहपुर हसवा जिला कही गई है।[7]

जन्म—कवि का जीवन-काल सन् १८१० ई०-सन् १८६३ ई० अर्थात् सवत् १८६७-१६२० बतलाया जाता है।[8] चौदह वर्ष की आयु मे इन्होने तहसील

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २४३।
२. वही, पृ० २४५।
३ जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३१२।
४. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २४५।
५. वही, पृ० २४५।
६. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३१७।
७. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २५२।
८ वही, पृ० २५२।

साहाबाद ज़िला मथुरा मे एक चपरासी की नौकरी कर ली। नौकरी को शीघ्र त्याग देने के पश्चात् इन्होंने 'तजकिय नफ़्स' (आत्मशुद्धि) तथा 'तरके लज्जात' (सुखों का त्याग) करके ईश्वर-चिन्तन मे ध्यान लगाया। कुछ दिनो पश्चात ये जगल चले गये जहां चिन्तन मे रत होकर इन्होने नाना प्रकार की कठिनाइया झेल ली। ये 'बाबा साहब' नाम से भी प्रसिद्ध थे।[१]

काव्य—अब्दुल सयद साहब या बाबा साहब के दो ग्रन्थ 'तुहफतुल आशकीन' एव 'मसाकुल' आरफीन प्रकाशित है। अभी हाल मे एक ग्रन्थ 'मक्तुबाते समदिया' मिला है जिस में आपके लिखे छः पत्र भिन्न व्यक्तियो के नाम हैं।[२]

११—वजहन

वजहन के व्यक्तिगत जीवन तथा जीवन-काल के सम्बन्ध मे अधिक ज्ञात नही है। हैदराबाद (दक्षिण) के श्रीराम शर्मा ने इस 'वजहन' और प्रसिद्ध मुल्ला वजही को एक और अभिन्न माना है।[३] मुल्ला वजही ने 'कुतुबमुश्तरी' और 'सबरस' प्रेमाख्यानों की रचना की। 'कुतुबमुश्तरी' की रचना सन् १०१८ हि० (सन् १६०६ ई०) मे हुई :

तमाम इस किया दीस बारा मने, सन् यक हज़ार हौर अठारह मने।[४]

दूसरी कृति 'सबरस' मुख्यतः गद्य मे है और इसकी रचना सन् १६३६ ई० में पूर्ण हुई। 'कुतुबमुश्तरी' का रचयिता गोलकुण्डा के इब्राहीम कुतुबशाह के दरबार का एक कवि है।[५] इन दोनों रचनाओ मे मुल्ला वजही ने कही पर भी अपने आपको 'वजहन' नही कहा है। अतएव सभव है कि दोनो दो व्यक्ति ही हो।[६]

रचनाएं—वजहन कवि की एक रचना 'अलिफ वाए' नाम से 'नवलकिशोर प्रेस' द्वारा प्रकाशित एक संग्रह मे सग्रहीत है और वह फारसी लिपि मे है।[७]

---

१. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २५२।
२. जायसी के परवर्ती हिन्दी-सूफी कवि और काव्य, पृ० ३१८।
३. सूफी-काव्य-संग्रह, पृ० २५४।
४. कुतुब-मुश्तरी, दक्षिणी प्रकाशन समिति, हैदराबाद, पृ० ८।
५. सबरस, सपादक, श्रीराम शर्मा, प्रस्तावना, पृ० १।
६. सूफी-काव्य-सग्रह, पृ० २५४।
७. वही, पृ० २५४-२५५।

३—कतिपय अरबी, फारसी एवं सूफी पारिभाषित शब्द

शब्द	अर्थ
अक्ल	बुद्धि
अनल्हक	सोऽहम्
अब्द	कृति
अबूदिया	एकनिष्ठा
अब्र	भौह
अल्लाह	परमात्मा
अवराद	नित्य प्रार्थना
आबिद	उपासक
आरिफ	ज्ञानी, प्रज्ञा सम्पन्न
आसव	मदिरा
इमाम	गुरु
इलाहियत	ईश्वरीय गुण
इल्म	बौद्धिक ज्ञान
इश्क	प्रेम
इश्क मजाजी	सांसारिक प्रेम
इश्क हकीक़ी	ईश्वरीय प्रेम
इहलाम	देव वाणी
उबूदियत	मानवीय गुण
औलिया	पहुचे हुए मुस्लिम संत
कमाल	अद्भुत शक्ति, पूर्णतः गुणशील
क़यामत	निर्णय का दिन

शब्द	अर्थ
कल्ब	हृदय
कामिल	पूर्ण मानव
कुन	हो जा
खफी	उपलब्धि शक्ति, जिक्र का एक भेद, मनन एव चिन्तन।
खानकाह	आश्रम
खिलवत	एकान्त
खैरे महज़	परम कल्याण
गज़ल	एक छन्द
चश्म	नेत्र
जकात	दान
जबरूत	ऐश्वर्य लोक, विकास की तृतीय स्थिति
जमाल	सौदर्य गुण
जलाल	शक्ति, गौरव गुण
जली	ज़िक्र का एक भेद, उच्च स्वर से नामोच्चारण
ज़हद	स्वेच्छा त्याग
जात	स्वभाव, मूल सत्ता
जाम	चषक, प्याला
जाहिद	संन्यासी, एकात प्रेमी
जिक्र	स्मरण
ज़ुहद	विरति
जहाद	पतनोन्मुख प्रवृत्तियों से लडना
तजरीद	बाह्य व्यापार
तज़ किय नफ्स	आत्म शुद्धि
तनजुल	अवतरण
तफरीद	आन्तरिक असगता
तरके लज्जात	सुखो का त्याग
तरके तर्के	त्याग का भी त्याग
तरीकत	उपासना, अनुभव
तव्वकुल	कृपा पर पूर्ण विश्वास
तसलीम	स्वीकृति

शब्द	अर्थ
तसव्वुफ़	सूफ़ीमत
तोबा	अनुताप, पश्चात्ताप
तौहीद	एक ईश्वर पर विश्वास
दरगाह	मक़बरा
दरवेश	फकीर
दुई	द्वैत भाव
नफ़्स	वासनापूर्ण आत्मपक्ष
नमाज़	प्रार्थना, भजन
नासूत	नरलोक, विकास की प्रथम स्थिति
नूर	ज्योति
पीर	गुरु
फना	निर्वाण, लय
फनाकिल हकीक़त	अभीप्सित
फिक्र	चिन्तन
फिराक	वियोग
बका	परमात्मरूप, अवस्थिति
मलकूत	देवलोक, विकास की द्वितीय स्थिति
मसनवी	एक छन्द, कथा-काव्य
मारिफ	साधक चतुष्टय सम्पन्न
मारिफ़त	पूर्ण ज्ञान
माशूक	प्रियतम
मुकामात	सोपान
मुकराबिन	ईश्वर के मित्र
मुराकबा	ध्यान
मुरीद	शिष्य
मुशाहिदा	प्रभु की विभूति के दर्शन
मुर्शिद	गुरु
मोमिन	सालिक से पूर्व की स्थिति
रजा	भगवान् की आज्ञा
रब	कर्ता
रमज़ान	वह मास जिस में महमूद साहब को ईश्वरीय प्रेरणा मिली थी

शब्द	अर्थ
रसूल	पैगम्बर
रूह	आत्मा
लाइल्लाह इल्लल्लाह	ईश्वर के अतिरिक्त दूसरा कोई नही
लाहूत	माधुर्य लोक, विकास की चतुर्थ स्थिति
वज्द	उन्मादना, आत्म-विस्मृति, सहजानन्द
वस्ल	ईश्वर मिलन
वहदानिया	परमात्मा का एकत्व
वजूद	अस्तित्व
वली	औलिया
वहदतुल वजूद	ईश्वर से भिन्न कुछ नही
शुक्र	धैर्य एव कृतज्ञता
शरीयत	विधि-विधान
शुहूद	चेतना
शेख	धर्म गुरु
सफ	पक्ति
सफ़ा	पवित्र
सब्र	सन्तोष
समा	कीर्तन
सलात	प्रार्थना
साकी	मधुबाला
सालिक	साधक
सिफात	गुण
सिर्र	ज्ञान शक्ति, हृदय का अन्तस्थल
हकीकत	सत्य की उपलब्धि
हक विश्वास	ब्रह्मज्ञानी
हकीक़	परम ज्ञान
हज	तीर्थ-यात्रा
हर्फ़	शब्द-ब्रह्म
हाल	ईश्वर में तन्मयता
हाहूत	विकास की अन्तिम स्थिति, सत्यलोक
हुस्न	सौंदर्य

सहायक ग्रन्थ-सूची

१—संस्कृत

१ छान्दोग्योपनिषद्
२ तैत्तिरीयोपनिषद्
३ तन्त्रसार (अभिनवगुप्त)—स० महामहोपाध्याय
४. प्रत्यभिज्ञाहृदमम्—क्षेमेन्द्र
५. मुण्डकोपनिषद्
६. राजतरंगिणी—कल्हण
७. साहित्य-दर्पण—विश्वनाथ

२—हिन्दी

१. अनुराग बासुरी—हि० सा० सम्मेलन, प्रयाग, स० २००२।
२. इन्द्रावती (पूर्वार्द्ध)—का० ना० प्र० सभा, सन् १९०६ ई०।
३ खड़ी बोली हिन्दी-साहित्य का इतिहास—ब्रजरत्नदास।
४. चंदायन—डा० परमेश्वरी लाल गुप्त।
५. चन्द्रवदन व माहियार कथा—स० मुहम्मद अकबरुद्दीन सद्दिकी।
६. चित्रावली—का० ना० प्रा० सभा, सन् १९१२ ई०।
७. चित्ररेखा (जायसी)—डा० शिवसहाय पाठक।
८. जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी कवि और काव्य—डा० सरला शुक्ल।
९. जायसी-ग्रन्थावली—डा० माताप्रसाद गुप्त।
१०. जायसी-ग्रन्थावली—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।
११. तसव्वुफ अथवा सूफीमत—श्री चन्द्रबली पांडे।
१२. बुल्लाशाह की सीहर्फी—श्री खेमराज श्री कृष्णदास, बम्बई, सन् १९६४ ई०।
१३. भारतीय प्रेमाख्यान काव्य—डा० हरिकान्त श्रीवास्तव।

१४. भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा—प० परशुराम चतुर्वेदी।
१५. मधुमालती—डा० माताप्रसाद गुप्त।
१६ मध्ययुगीन प्रेमाख्यान—डा० श्याम मनोहर पाडेय।
१७. मध्ययुगीन भारत—पी० सरन।
१८ मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य—डा० शिवसहाय पाठक।
१९ मिश्रबन्धु विनोद—मिश्रबन्धु।
२०. यारी साहब की रत्नावली—वे० प्रे० प्रयाग, सन् १९१० ई०।
२१. सबरस—वजही।
२२. सूफीमत और हिन्दी-साहित्य—डा० विमलकुमार जैन।
२३. सूफी-काव्य-सग्रह—प० परशुराम चतुर्वेदी।
२४. सूफी महाकवि जायसी—डा० जयदेव।
२५. सूफीमत साधना और साहित्य—प० रामपूजन तिवारी।
२६. हस जवाहिर—नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, सन् १९३७ ई०।
२७ हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यान—प० परशुराम चतुर्वेदी।
२८ हिन्दी भाषा और उसके साहित्य का इतिहास—हरिऔध।
२९. हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य—डा० कमल कुलश्रेष्ठ।
३०. हिन्दी भाषा और साहित्य—श्यामसुन्दर दास।
३१. हिन्दी-साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—डा० रामकुमार वर्मा।
३२. हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।
३३. हिन्दी साहित्य-कोश (पहला भाग)—प्रधान सपादक धीरेन्द्र वर्मा।
३४. हिन्दी-साहित्य का वृहत् इतिहास—डा० राजबली पाडेय।
३५. हिन्दी साहित्य : युग और प्रवृत्तिया—प्रो० शिवकुमार।

३—(क) कश्मीरी

१. अहमद बटवारी—प्रकाशक गुलाम मुहम्मद-नूर-मुहम्मद।
२. कअशिरिह अदबअच तअरीख—अवतार कृष्ण।
३. कअशिर शायरी—प्रो० मही-उद-दीन हाजनी।
४. कलाम लल्ल आरिफ—काजी निजामुद्दीन खानयारी।
५. कलाम शेख-उल-आलम—हाफ़िज मुहम्मद नियामत (प्रथम भाग) अल्लाह वाइज।
६. गुलरेज—जम्मू कश्मीर शाह मकबूल क्रालवारी अकादमी, श्रीनगर।
७. गुलरेज़—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद (मकबूलशाह क्रालवारी)।
८. चदवदन—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद (मकबूलशाह क्रालवारी)।

९ जेब्रा-निगार—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद (मकबूलशाह क्रालवारी)।
१०. तारक माल—अब्दुल अहद बख्शी।
११. दलीलह्—पुष्कर भान।
१२. तोतह्—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद।
१३. नूरनामा—मुहम्मद अमीन कामिल।
१४. बयाजे शम्स फकीर—बद्र-उद्-दीन।
१५. बयाजे वहाबखार (प्रथम भाग)—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद।
१६. बहराम व गुल अन्दाम—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद।
१७. महमूद गामी—गुलाम नबी ख्याल।
१८. मुमताज बेनजीर—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद।
१९. यूसुफ-जुलेखा (गामी)—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद।
२०. यूसुफ जुलेखा—(दाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन')।
२१. रैणा व जेबा—(दाजी मही-उद्-दीन 'मिसकीन')।
२२. लैला-मजनू (गामी)—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद।
२३ लैला-मजनू—पीर गुलाम मही-उद-दीन 'मिसकीन'।
२४ लैला-मजनू (कबीर लोन)—पीर गुलाम मही-उद-दीन 'मिसकीन'।
२५. वामीक अजरा (कबीर लोन)—पीर गुलाम मही-उद्-दीन 'मिसकीन'।
२६. शम्स फकीर—शम्स-उद्-दीन अहमद।
२७ शीरी-खुसरो—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद।
२८. सोहनी मेयवाल—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद।
२९. सूफी शअ्अिर (तीन भाग) स० मुहम्मद अमीन कामिल।
३०. हारुन रशीद—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद।
३१ हियमाल (वली अल्लाह मतो)—गुलाम मुहम्मद नूर मुहम्मद।

३—(ख) प्राचीन कश्मीरी (अपभ्रंश)

१. महानय प्रकाश—सं० महामहोपाध्याय मुकुन्दराम शास्त्री
शितिकण्ठ

४—अंग्रेजी

१. आईने अकबरी—ब्लाचमैन।
२. इडियन हिस्ट्री—बिशन दास।
३. इंडिया सिन्स १५२६ (चतुर्थ सस्करण)—डा० वी० डी० महाजन।
४. एनसैक्लोपीडिया ब्रिटेनिका—आर० फ्लिण्ट।
(दसवा संस्करण, भाग तेईसवा)

५. एन एडवान्सड हिस्ट्री आफ इंडिया—मजूमदार, राय चौधरी, काली किंकर दत्त ।
६. ए लिट्रेरी हिस्ट्री आफ पर्शिया—ब्राउन ।
७ ए हिस्ट्री आफ कश्मीर—पृथ्वीनाथ कौल ।
८. ए हिस्ट्री आफ सिक्खस—कनिंघम ।
९. ए हिस्ट्री आफ संस्कृत लिट्रेचर—ए० बी कीथ ।
१०. कलासिकल पर्शियन लिट्रेचर—जार्ज एलन ।
११. कशीर (दो भाग)—जी० एम० डी० सूफी ।
१२. कश्मीर—जे० पी० फर्गूसन ।
१३. कश्मीर अण्डर दि मुल्तांज—मह्बीबुल हसन ।
१४ कश्मीर—यंग हसबंड ।
१५. कश्मीर अण्डर दि सिक्खस—आनन्द कौल बामजई ।
१६. कश्मीरी लिट्रेचर । (रीप्रिंटेड़ फ्राम काण्टेम्पोरेरी प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प इंण्डियन लिट्रेचर) ।
१७. किंग्स आफ कश्मीर—जे० सी० दत्त ।
१८. दि वर्ड आफ लल्ल—आर० सी० टेम्पुल ।
१९ दि ग्लोरियस कुरान—एम० पिकथाल ।
२०. यूसुफ जुलेखा—ग्रिफिथ ।
२१. लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया—ग्रियर्सन ।
२२. वैली आफ कश्मीर—लारेंस ।
२३. हिस्ट्री आफ कश्मीर—आनन्द कौल ।
२४. हातिम्ज़ टेल्ज़ (कश्मीरी स्टोरीज़ एण्ड सांग्स)—स्टाइन एण्ड ग्रियर्सन ।

५—उर्दू

१. ए लिट्रेरी हिस्ट्री आफ पर्शियन लिट्रेचर—(अनुवादक) एस० बाह्य-उद्-दीन अहमद । इन मार्डन टाइम्ज सन् १५०० ई०-सन् १९२४ ई० ।
२. कम्परेटिव टेबुल्ज़ आफ हिजरी तथा क्रिश्चयन डेट्स (तकवीम हिजरी व ई०)—ए० एम० खालिदी ।
३. कश्मीरी ज़बान और शायरी (तीन भाग)—अब्दुल अह्द आज़ाद ।
४. तारीख रियासत जम्मू व कश्मीर—हसन शाह ।
५. नूर नामा—अमीन कामिल ।
६. मकबूल कालवारी—प्रो० हामदी ।
७. मुख्तसर तारीख कश्मीर—एम० एं० पण्डित ।

८. रसूलमीर—मुहम्मद यूसुफ टेंग ।
९ लल्लद्यद—प्रो० जियालाल कौल, अनुवादक, प्रो० नन्दलाल कौल तालिब ।
१०. वाहब परे—प्रो० मही-उद् दीन हाजनी ।
११. शम्स फकीर—शम्स-उद्-दीन अहमद ।
१२. हक्कानी—मौलाना फितरत कश्मीरी ।

६—पंजाबी

१. बाबा फरीद दर्शन—प्रो० दीवान सिंह ।
२. शेख़ फरीद जी दी वाणी स्टीक—श्री साहब सिंह ।
३. काफिया बुल्लेशाह—भाई मेहर सिंह एण्ड सन्ज़, अमृतसर ।

७—फारसी

१. कश्फुल-महजूब—हुज्वेरी ।
२. खुसरो-शीरीं—निज़ामी ।
३. जामी—तालीफ अली असग़र हिकमत ।
४. तारीख-ए-हरुन (पर्शियन पोएटस इन कश्मीर) चौथा भाग—पीर गुलाम हरुन खुयहामी
५. दीवान ख्वाजा गरीब नेवाज—अहमद निज़ामी ।
६. लैला मजनूं—निज़ामी
७. यूसुफ जुलेखा—जामी ।

८—हस्तलिखित ग्रन्थ

१—हिन्दी

१. इन्द्रावती (पूर्वार्द्ध)—ना० प्र० सभा काशी ।
२. पुहुपावती (हुसैन अली)—श्री गोपाल चन्द्र सिन्हा ।
२. प्रेम चिनगारी—अख्तर हुसेन निज़ामी ।
४. मृगावती—ना० प्र० सभा काशी ।
५. यारी साहब के पद एवं अलिफनामा—ना० प्र० सभा काशी
६. यूसुफ जुलेखा—श्री गोपाल चन्द्र सिन्हा ।

२—कश्मीरी

१. ह्यिमाल—सैफ-उद्-दीन ।

३—फारसी

१. पज-गज—शेख़ याक़ूब सर्फी ।

९--पत्र-पत्रिकादि, लेख

१—हिन्दी

१. मासिक पत्रिका 'योजना,' दिसम्बर, ५६, वही, अगस्त सितम्बर, ५७, दिसम्बर, १९६०, वही, अप्रैल-मई १९६१-अंक ।

२. विश्लेषण—पंजाब हिन्दी साहित्य अकादमी (वर्ष पहला, अंक पहला) कुरुक्षेत्र ।

२—कश्मीरी

१. गुलरेज़ (मासिक पत्रिका) (जनवरी, १९६१)—कुमार होटल, कोर्ट रोड, श्रीनगर ।

३—अंग्रेजी

१. जम्मू व कश्मीर यूनिवर्सिटी रिव्यू (जून १९६०)

२. जर्नल बिहार रिसर्च सोसाइटी (दिसम्बर सन् १९५५ ई०)

३. डिस्कोरसिज़ (जुलाई सन् १९६०) सानि अदबअच ज़ान—श्री प्रताप कालेज, श्रीनगर ।

४—उर्दू

१. शीराजा—जम्मू एण्ड कश्मीर अकादमी, जिल्द १, सख्या ४, जुलाई १९६२ ।

लेख

चतुर्दश भाषा निबन्धावली मे प्रकाशित लेख—कश्मीरी भाषा और साहित्य—प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प ।

१०—प्रसारित रेडियो वार्ताएं

१—कश्मीरी

१. शैवमतुक तअ तसव्वुफुक इम्तज़ाज—प्रो० पृथ्वीनाथ पुष्प ।

२. फलसफस मंज़ सोन मीरास—डा० शम्स-उद्-दीन ।

२—अंग्रेजी

१. कश्मीरी शैवज़िम—प० लक्ष्मण जू ।

११—मूल शोध प्रबन्ध

१. मध्यकालीन हिन्दी कवियों का संकेतित और व्यवहृत काव्य-सिद्धान्तों का अध्ययन, डा० छविनाथ त्रिपाठी ।

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ संख्या	पंक्ति	अशुद्ध शब्द	शुद्ध शब्द
१	१७	कश्मीर	कश्मीरी
४	१	लडाईया लडी	लडाइयाँ लडी
५	१८	उसके प्रसन्नार्थ	उसकी प्रसन्नाता-हेतु
८	११	आपके	आपने
११	१०	बाधकर	बाँधकर
१४	५	कि	की
१५	२२	आधा जाता	आधा लिया जाता
४७	२४	अध्यात्मक	अध्यात्म
४८	१६	मंसूर का	मसूर वा
६५	१	खानकारो	खानकाहो
७३	२	मजाजो	मजाजी
८७	२०	जन-उल-आब्दीन	जैन-उल्-आब्दीन
११५	२६	ने	के
१२८	८	ईश्वरोन्मुख के	ईश्वरोन्मुख प्रेम के
१८३	६	प्रम तत्व	प्रेम तत्व
१८५	१७	हुआ	हुआ है
२७६	२१	त	तो
२७६	२८	वहाँ	कहाँ
२८५	२०	सरीता	सरिता
३०८	११	इल्लामी	इस्लामी
३१६	१०	अभास	आभास
३२५	१७	ठिनाइयो	कठिनाइयो
३३६	५	रण	स्मरण
३४१	१	पृथक	पृथक्
३४१	१८	पद्यति	पद्धति

		मख़भूर	मख़मूर
३४४	३	कायनातंम	कायनातम
३५५	१८	को को	को
३७१	८-९	बीच	बीज
३९१	१९	तभी	तमी
३९९	२५	तमसीले	तफ़सील
४१५	७	मामाजिक जर्जरित	सामाजिक अवस्था जर्जरित
४२३	१-२		
४२३	३	किलष्टता	क्लिष्टता
४३०	१	सूफीयों	सूफियों
४६६	१३	पौन	पौन मील
४७९	२२	चला	गए
४९५	२	पारिभाषित	पारिभाषिक